भारत की सांविधानिक विधि

दुर्गा दास बसु



भारत की सांविधानिक विधि

डा. (न्यायमूर्ति) दुर्गादास बसु

सरस्वती, विद्यावारिधि, प्रज्ञाभारती, न्यायरत्नाकर, नीतिभास्कर
एम ए, एलएल डी (कलकत्ता), डी लिट (बर्दवान),
डी लिट (रवीन्द्र भारती)

सेवानिवृत्त न्यायाधीश, कलकत्ता उच्च न्यायालय
पूर्व सदस्य, सघ लोक सेवा आयोग,
टैगोर ला प्रोफेसर, आशुतोष लेक्चरर, कलकत्ता विश्वविद्यालय
मानद आचार्य, काशी हिंदू विश्वविद्यालय,
पद्मभूषण के राष्ट्रीय अलकरण से विभूषित,
भारत के राष्ट्रीय अनुसधान आचार्य

अनुवादक

ब्रजकिशोर शर्मा
एलएल.एम.,
अपर सचिव, विधायी विभाग, भारत सरकार

प्रेंटिस-हाल आफ इंडिया प्राइवेट लिमिटेड
नई दिल्ली - 110001

भारत की सांविधानिक विधि
दुर्गादास बसु

PRENTICE-HALL INTERNATIONAL, INC., Englewood Cliffs.
PRENTICE-HALL INTERNATIONAL (UK) LIMITED, London.
PRENTICE-HALL OF AUSTRALIA PTY. LIMITED, Sydney.
PRENTICE-HALL CANADA, INC., Toronto.
PRENTICE-HALL HISPANOAMERICANA, S.A., Mexico.
PRENTICE-HALL OF JAPAN, INC., Tokyo.
SIMON & SCHUSTER ASIA PTE. LTD., Singapore.
EDITORA PRENTICE-HALL DO BRASIL, LTDA., Rio de Janeiro.

Published by Prentice-Hall of India Private Limited, M-97, Connaught Circus, New Delhi-110001 and Printed by Jay Print Pack Private Limited, New Delhi-110015.

विषय सूची

अनुच्छेद पृष्ठ

भाग 5
संघ
अध्याय 1 — कार्यपालिका
राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति

मंत्रिपरिषद्

भारत का महान्यायवादी

संसद् और उसके सदस्यों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां

विधायी प्रक्रिया

वित्तीय विषयों के संबंध में प्रक्रिया

साधारणतया प्रक्रिया

अध्याय 3 — राष्ट्रपति की विधायी शक्तियां

अध्याय 4 — संघ की न्यायपालिका

अध्याय 5 — भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक

भाग 6

राज्य

अध्याय 1 — साधारण

अध्याय 2 — कार्यपालिका

राज्यपाल

मंत्रिपरिषद्

राज्य का महाधिवक्ता

सरकारी कार्य का संचालन

अध्याय 3 — राज्य का विधान मंडल

साधारण

अनुच्छेद पृष्ठ

अध्याय 5 — राज्यों के उच्च न्यायालय

अध्याय 6 — अधीनस्थ न्यायालय

भाग 7

पहली अनुसूची के भाग ख के राज्य

अनुच्छेद पृष्ठ

भाग 8

संघ राज्यक्षेत्र

भाग 9

पहली अनुसूची के भाग घ के राज्यक्षेत्र और अन्य राज्यक्षेत्र जो उस अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं

भाग 10

अनुसूचित और जनजाति क्षेत्र

भाग 11

संघ और राज्यों के बीच संबंध

अध्याय 1 — विधायी संबंध

विधायी शक्तियों का वितरण

संघ और राज्यों के बीच राजस्वों का वितरण

प्रकीर्ण वित्तीय उपबंध

अनुच्छेद पृष्ठ

अध्याय 2 — उधार लेना

अध्याय 3 — संपत्ति, संविदाएं, अधिकार, दायित्व, बाध्यताएं और वाद

अध्याय 4 — संपत्ति का अधिकार

भाग 13

भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर व्यापार, वाणिज्य और समागम

अनुच्छेद . पृष्ठ

भाग 14
संघ और राज्यों के अधीन सेवाएं
अध्याय 1 — सेवाएं

अध्याय 2 — लोक सेवा आयोग

भाग 14क
अधिकरण

भाग 15
निर्वाचन

भाग 16

कुछ वर्गों के संबंध में विशेष उपबंध

भाग 17

राजभाषा

अध्याय 1 — संघ की भाषा

पृष्ठ

अध्याय 2 — प्रादेशिक भाषाएं

अध्याय 3 — उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

अध्याय 4 — विशेष निदेश

भाग 18

आपात उपबंध

भाग 22

संक्षिप्त नाम, प्रारंभ, हिन्दी में प्राधिकृत पाठ और निरसन

अनुसूचियां

निर्णय सूची

अ

आ

ई

उ

ऊ

ए

क

ख

ग

घ

च

छ

ज

ट

ठ

ड

ढ

त

थ

द

ध

न

प

फ

ब

भ

म

य

र

ल

व

श

स

ह

उद्देशिका

उद्देशिका ।

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1]*संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य* **बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :**

सामाजिक, आर्थिक, और राजनैतिक *न्याय,*

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की *स्वतंत्रता,*

प्रतिष्ठा और अवसर की *समता*

प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सबमें

व्यक्ति की गरिमा और [1]*राष्ट्र की एकता और अखंडता* **सुनिश्चित करने वाली** *बंधुता* **बढ़ाने के लिए**

दृढ़संकल्प होकर *अपनी इस संविधान सभा में* **आज तारीख 26 नवम्बर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ला सप्तमी, संवत् दो हजार छह विक्रमी) को** *एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं ।*

उद्देशिका इसलिए बनाई जाती है कि अधिनियम को समझने के लिए जिन तथ्यों का स्पष्टीकरण आवश्यक है उन्हें स्पष्ट रूप से प्रस्तुत कर दिया जाए । संक्षेप मे, इसमें उन तथ्यों का या विधि की स्थिति का उल्लेख होता है जिनके कारण अधिनियम बनाने का प्रस्ताव है । इसमें विधायन का उद्देश्य और नीति दी जाती है । उन बुराइयों या रिष्टियों का कथन होता है जिनको दूर करने के लिए उपचार किया जा रहा है । जब कुछ रिष्टियों का कथन किया जाता है, सब का नहीं, तो इससे उन बातों का अपवर्जन नहीं होता जिनके लिए कानून के अधिनियमित भाग मे व्यवस्था की गई है । अतएव यदि अधिनियमित की गई धाराएं स्पष्ट और असंदिग्ध हैं तो उद्देशिका अधिनियमिति को काट नहीं सकती या छोटा नहीं कर सकती ।

संक्षेप में न्यायालय उद्देशिका में बताए गए अधिनियम के उद्देश्य और नीति पर तभी दृष्टिपात कर सकता है जब उसके मस्तिष्क में यह संदेह उत्पन्न हो कि क्या इसकी भाषा का संकीर्ण निर्वचन किया जाए या उदार । यह प्रश्न भी तभी उठेगा जब भाषा इस प्रकार की हो कि दोनों प्रकार का निर्वचन संभव हो । उद्देशिका की सहायता लेने के लिए अनावश्यक रूप से संदिग्धता की संरचना करना या कल्पना करना अनुचित है क्योंकि इससे अधिनियमिति का ध्येय ही विफल हो जाएगा ।[2]

गोपालन बनाम *मद्रास राज्य*[2] में यह तर्क प्रस्तुत किया गया था कि हमारे संविधान की उद्देशिका में भारत को एक प्रजातांत्रिक संविधान दिया गया है । यह बात निर्वचन के लिए मार्गदर्शक है । अतएव, यदि कोई विधि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के विपरीत है तो उसे अनुच्छेद 21 के अधीन शून्य घोषित किया जाना चाहिए । यदि ऐसा नहीं किया गया तो प्राण और दैहिक स्वतंत्रता के मूल अधिकार को संरक्षण नहीं मिलेगा । उच्चतम न्यायालय ने बहुमत से इस तर्क को अस्वीकार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 21 में विधि का अर्थ है "राज्य द्वारा निर्मित विधि", "नैसर्गिक न्याय" नहीं । अनुच्छेद 21 के शब्दों के अर्थ को उद्देशिका के प्रति निर्देश करते हुए उपांतरित नहीं किया जा सकता ।[2]

1. ये शब्द 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित किए गए ।

2. *गोपालन* बनाम *मद्रास राज्य,* (1950) एस.सी.आर. 88 (*120, 198*); *भीम* बनाम *भारत संघ,* ए. 1981 एस.सी. 234 (*71*) ।

दूसरे शब्दों में, उद्देशिका से संविधान के विभिन्न उपबंधों के पीछे का प्रयोजन प्रकट होता है । किंतु यह किसी अधिष्ठायी शक्ति,[3] प्रतिषेध या मर्यादा का स्रोत नहीं है ।[4]

केशवानंद के वाद[5] में पूर्ण न्यायपीठ ने बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया कि उद्देशिका मे विनिर्दिष्ट लक्ष्य से हमारे संविधान की आधारिक संरचना प्रकट होती है । इस संरचना को संविधान के अनुच्छेद 368 के अधीन शक्ति का प्रयोग करके बदला नहीं जा सकता [देखिए आगे अनुच्छेद 368] ।

उच्चतम न्यायालय के *गोपालन* के बाद के विनिश्चयों से यह दिखाई पड़ता है कि न्यायालय का झुकाव उद्देशिका को अधिक महत्व देने का है क्योंकि इसमें हमारे समाज का आदर्श स्थापित किया गया है । मूल अधिकारों[5] और निदेशक तत्वों[6] की परिधि निश्चित करने के लिए उद्देशिका का प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि अधिनियमित उपबंधों में समाजवाद,[6क] पंथनिरपेक्षता और प्रजातंत्र के आदर्शों को स्थूल रूप दिया गया है ।[3, 7]

'समाजवाद' और 'पंथनिरपेक्ष' शब्दों के रखने का प्रभाव — संविधान की उद्देशिका में 'समाजवाद' और 'पंथनिरपेक्ष' शब्दों को अंतःस्थापित करने से संविधान में कल्पनातीत उलझनें पैदा हो गई हैं । 42वें संशोधन के प्रणेताओं ने इन दो शब्दों से जो भी अर्थ प्रकट करने का आशय रखा हो यह तो स्पष्ट ही है कि ये दोनों शब्द अस्पष्ट हैं । जनता सरकार ने इन शब्दो की विशाल परिधि को अनुच्छेद 366 में परिभाषाओं के माध्यम से सीमित करने का प्रयत्न किया था किंतु वह प्रयत्न असफल रहा । संविधान 45वें सशोधन विधेयक, 1978 के सुसंगत खंडों को, जिनको पारित करके परिवर्तन किया जाना था, राज्यसभा में कांग्रेस के संयुक्त विपक्ष ने अस्वीकार कर दिया ।

I. मूल संविधान में कहीं भी यह नहीं कहा गया था कि इसमें जो प्रणाली बनाई गई है वह 'समाजवादी' है । इसके विपरीत 1949 के संविधान में अनुच्छेद 19(1)(च) में व्यक्ति के संपत्ति के अधिकार और अनुच्छेद 31(2) के अधीन राज्य की प्रतिकर संदाय करने की बाध्यता का समाजवाद और राज्य के स्वामित्व से कोई मेल नहीं है । इसी कारण पंडित नेहरू ने भी 'समाजवाद' शब्द से बचते हुए 'समाजवादी प्रणाली का समाज' अभिव्यक्ति का प्रयोग किया जिसका यह अर्थ था कि प्रत्येक व्यक्ति की प्रगति के लिए 'समान अवसर' होगा ।[8] संविधान के भाग 4 में राज्य को सम्बोधित कुछ निदेश थे जिनका झुकाव समाजवाद की ओर था । यद्यपि यहां भी अनुच्छेद 39क में यह विवक्षा है कि आर्थिक प्रणाली मूल रूप से व्यक्तिपरक होगी किंतु राज्य यह उपबंध करेगा कि इससे धन और उत्पादन के साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी सकेन्द्रण न हो । व्यक्तिवाद के स्थान पर समाजवाद लाने का कोई उद्देश्य कदापि नहीं था । लक्ष्य इतना ही था कि व्यक्तिगत स्वामित्व की प्रणाली में से पूंजीवाद के दुर्गुण दूर कर दिए जाएं । दूसरे, मूल संविधान में निदेशक तत्वों और मूल

3. *बेरूबारी यूनियन का मामला*, ए. 1960 एस.सी. 845 ।

4. *इन्दिरा* बनाम *राज नारायण*, ए. 1975 एस.सी. 2299 (पैरा 666) ।

5. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 (पैरा 292, 599, 682, 1164, 1437) [*इन्दिरा गांधी* बनाम *राज नारायण* के मामले में पांच न्यायाधीशों में से तीन न्यायाधीशों ने "आधारभूत संरचना" के सिद्धात को दुहराया], ए. 1975 एस.सी. 2299 [पैरा 251-52 (न्या. खन्ना); 664, 665, 691 (न्या. चंद्रचूड); 557, 575 (न्या. बेग)] । इसकी पुष्टि *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 1789 (पैरा 21-26) और *सांबमूर्ति* बनाम *राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 663: (1987) 1 एस.सी.सी. 362 में की गई ।

6. *चन्द्र भवन* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 2042 (पैरा 13) ।

6क. *एक्सल वियर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एस.सी. 25 ।

7. तुलना कीजिए, *केरल राज्य* बनाम *थामस*, ए. 1976 एस.सी. 490 (*531*); *बामन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 271 (पैरा 5); *बचन* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1982 एस.सी. 1325 (पैरा 9) ।

8. *हिन्दुस्तान टाइम्स*, नई दिल्ली, 17-5-1958, पृष्ठ 7 ।

अधिकारों के बीच संघर्ष होने पर अधिमान मूल अधिकार को मिलता था । किंतु संविधान 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा यथासंशोधित अनुच्छेद 31ग के अधीन सभी निदेशक तत्वों को अनुच्छेद 14, 19 और 31 में दिए गए मूल अधिकारों पर अभिभावी बना दिया गया । अब इन बातों के साथ-साथ उद्देशिका में यह कथन सम्मिलित किया गया है कि राज्य का उद्देश्य समाजवाद है । इसस संविधान के और संशोधन होंगे ।[9] उन सभी उपबंधों को समाप्त किया जाएगा जिनसे व्यक्तिवाद की गंध आती है । न्यायालय भी न्यायिक पुनर्विलोकन की और अधिनियमों के निर्वचन की अपनी शक्ति के प्रयोग में उद्देशिका के इस महत्वपूर्ण परिवर्तन को अपनी दृष्टि से ओझल नहीं कर सकते ।

लेखक ने इस पुस्तक के अंग्रेजी के पहले संस्करण में पृष्ठ 3 पर कुछ आशंकाएं प्रकट की थीं । उच्चतम न्यायालय के समक्ष *एक्सल वियर* के वाद में[10] जब उद्देशिका में किए गए परिवर्तन पर बहस की गई तो ये आशंकाएं सच हो गईं । यह कहा गया कि संविधान में संपत्ति और कारबार के निजी स्वामित्व की संकल्पना की गई है किंतु भाग 4 के निदेशक तत्वों के साथ उद्देशिका को पढ़ने पर न्यायालयों को उद्योगों के राष्ट्रीयकरण और संपत्ति के राज्य स्वामित्व के पक्ष में अधिकाधिक झुकना होगा । यह 'समाजवाद' शब्द के अंतःस्थापित किए जाने के कारण है ।

उपर्युक्त वाद मे उच्चतम न्यायालय के मस्तिष्क में उद्योग और कारबार के निजी स्वामित्व के विषय में कुछ सशय रहे होंगे किंतु उन्हें सितंबर 1978 में हटा दिया गया । यह कार्य कांग्रेस ने नहीं जनता पार्टी ने किया । संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा संविधान से अनुच्छेद 19(1)(च) और 31(2) को मिटाकर यह संशोधन 1 जून, 1979 को प्रवृत्त हुआ । समग्र दृष्टि से यही कहा जा सकता है कि 1979 के पश्चात् संविधान "मिश्रित आर्थिक व्यवस्था" के पक्ष में नहीं बल्कि उत्पादन और वितरण के राज्य स्वामित्व के पक्ष मे है ।[11] अब कोई न्यायालय किसी विस्थापित स्वामी का इस आधार पर किया गया परिवाद ग्रहण नहीं कर सकता कि बिना प्राधिकार के संपत्ति हरने वाला विधान या राष्ट्रीयकरण[12] असांविधानिक है क्योंकि वह संपत्ति के मूल अधिकार का उल्लंघन करता है ।

"सामाजिक न्याय" अभिव्यक्ति का उत्तम पहलू यह है कि वह न्यायालयों को ऐसे विधानों को विधिमान्य ठहराने का उचित आधार प्रदान करता है जो

(क) आर्थिक असमानताएं दूर करने के लिए है,[13]
(ख) कर्मकारों को उच्च जीवन प्रदान करने के लिए है,[14]
(ग) समाज के दुर्बल वर्गों के हित की रक्षा के लिए है ।[15]

9. चवालीसवे सशोधन विधेयक पर, जो बयालीसवां संशोधन अधिनियम बना, विचार-विमर्श के दौरान, प्रधानमत्री श्रीमती गाधी ने स्पष्ट करते हुए कहा कि उद्देशिका में "समाजवादी" शब्द केवल समान अवसर या समाजार्थिक सुधार के उद्देश्य से अतःस्थापित किया जा रहा है न कि समष्टिवाद या राज्य समाजवाद की प्राप्ति के उद्देश्य से [*स्टेट्समैन*, 31-5-1976, पृष्ठ 1; 25-10-1976, पृष्ठ 1] । किंतु यदि ऐसा था तो यह समझ से परे है कि उनके दल ने जनता सरकार के "समाजवादी गणराज्य" को "ऐसा गणराज्य जो सभी प्रकार के सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक शोषण से मुक्त है" के रूप में परिभाषित करने वाले संशोधन का विरोध क्यों किया था ।

10. *एक्सल वियर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एस.सी. 25 (पैरा 24) ।

11. *तमिलनाडु राज्य* बनाम *आबू*, ए. 1984 एस.सी. 326 (पैरा 92, 96); *मधुसूदन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1984 एस.सी. 374 (पैरा 18, 21) ।

12. तुलना कीजिए, *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *बसंतीबाई*, (1986) 2 एस.सी.सी. 516 (पैरा 15) ।

13. *लिंगप्पा* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1985 एस.सी. 389 (पैरा 14, 16, 18, 20) ।

14. *नकारा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1983 एस.सी. 130 (पैरा 33-34) ।

15. *साधूराम* बनाम *पुलिन*, ए. 1984 एस.सी. 1471 (पैरा 29, 70, 73) ।

उद्देशिका में 'समाजवादी' शब्द सम्मिलित करने का यह अर्थ कदापि नहीं है कि वह संविधान के अन्य उपबंधों का या विधियों का अध्यारोहण करेगा ।[15क]

II. "पंथनिरपेक्ष" शब्द रखने के विषय में यह कहा जा सकता है कि अनुच्छेद 25-30 के बारे में अब तक यही समझा गया था कि उनका लक्ष्य "पंथनिरपेक्षता" है । किंतु विधि की दृष्टि में "पंथनिरपेक्ष" शब्द स्पष्ट अर्थ नहीं देता है । अनुच्छेद 25-30 के उपबंध धार्मिक स्वतंत्रता और उदारवाद के विभिन्न पहलुओं पर स्पष्ट रूप से बल देते हैं । "पंथनिरपेक्ष" सामान्य बोलचाल का शब्द है । उपर्युक्त उपबंधों को स्पष्ट करने के स्थान पर इस अपारिभाषिक शब्द का न्यायालयों में प्रयोग दुखद और भ्रामक है । इसे उद्देशिका में समाविष्ट करने से कोई सुधार नहीं हुआ ।[16]

15क. *सदन बनाम एन.डी.एम.सी*, (1989) IV एससी.सी 155 (पैरा 22) ।

16. लेखक ने इस पुस्तक के पहले अंग्रेजी संस्करण में 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा अतःस्थापित 'पंथनिरपेक्ष' शब्द की अस्पष्टता या उसके संदिग्धार्थ होने के कारण कुछ आशंकाएं अभिव्यक्त की थीं । बाद में सांविधानिक विकास ने जो दिशा अपनाई उससे आशंकाएं सही निकलीं ।

जनता सरकार ने पूर्वोक्त शब्दों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए 45वें संशोधन विधेयक, 1978 के खंड 44 में यह उपबंध किया था:

"इस संविधान की उद्देशिका में, —

(1) "पंथनिरपेक्ष" विशेषण के साथ युक्त होने पर "गणराज्य" से ऐसा गणराज्य अभिप्रेत है जिसमें सभी धर्मों के प्रति समान आदर का भाव है; .

इस खंड 44 को श्रीमती गांधी के दल (कांग्रेस-I) ने नामंजूर कर दिया । यह दल सत्ता में नहीं था किंतु राज्यसभा में बहुमत में था । केवल राजनीतिज्ञ ही समझ सकते हैं कि प्रस्तावित स्पष्टीकरण का विरोध क्यों किया गया क्योंकि "सब धर्मों के प्रति समान आदर" (या सर्वधर्मसमभाव) संविधान के अनुच्छेद 25 से अनुच्छेद 30 तक के उपबंधों का सही सार संक्षेप है ।

यह आशा की जा सकती है कि उच्चतम न्यायालय अपना वह विनिश्चय याद रखेगा जिसमें यह कहा गया है कि उद्देशिका का अवलंब किसी शक्ति या मर्यादा के अधिष्ठायी स्रोत के रूप में नहीं किया जा सकता । उनका स्रोत तो कोई उपबंध ही हो सकता है । अतएव अनुच्छेद 25-30 के पाठ में कुछ जोड़कर 'पंथनिरपेक्ष' शब्द का अर्थविस्तार नहीं किया जा सकता ।

भाग 1

संघ और उसका राज्यक्षेत्र

संघ का नाम और राज्यक्षेत्र ।

1. (1) भारत, अर्थात् इंडिया, राज्यों का संघ होगा ।

[1]*(2) राज्य और उसके राज्यक्षेत्र वे होंगे जो पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं ।*

(3) भारत के राज्यक्षेत्र में —

(क) राज्यों के राज्यक्षेत्र,

[1]*(ख) पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट संघ राज्यक्षेत्र, और*

(ग) ऐसे अन्य राज्यक्षेत्र जो अर्जित किए जाएं,

समाविष्ट होंगे ।

संघ की सदस्यता और भारत का राज्यक्षेत्र — संविधान का विस्तार उस समस्त राज्यक्षेत्र पर होगा जो इस अनुच्छेद के खंड 3 में यथापरिभाषित "भारत का राज्यक्षेत्र" अभिव्यक्ति के अन्तर्गत है ।

"भारत का राज्यक्षेत्र" तीन प्रकार के राज्यक्षेत्रों से मिलकर बनता है :

(क) वे राज्यक्षेत्र जो पहली अनुसूची के भाग 1 में सम्मिलित हैं "राज्य" कहलाते हैं । ये खंड (1) में निर्दिष्ट "राज्यों के संघ" के सदस्य हैं,

(ख) पहली अनुसूची के भाग 2 में विनिर्दिष्ट संघ राज्यक्षेत्र,

(ग) कोई अन्य राज्यक्षेत्र जो भारत किसी भी समय अर्जित करे ।

खंड (3)(ग) — उपखंड (ग) भारत को राज्यक्षेत्रों का अर्जन करने की शक्ति नहीं देता । यह शक्ति तो प्रभुत्व के कारण प्रत्येक प्रभुत्वसंपन्न राज्य को स्वतः प्राप्त होती है ।[2] यह खंड केवल यह उपबंध करता है कि भारत द्वारा अर्जित क्षेत्र अपने आप भारत के राज्यक्षेत्र में आमेलित और एकरूप हो जाएंगे । इस प्रकार जो विदेशी राज्यक्षेत्र भारत के राज्यक्षेत्र बन जाते हैं वे या तो संघ में प्रवेश पा सकते हैं या उन्हें अनुच्छेद 2 के अधीन नया राज्य बनाया जा सकता है या अनुच्छेद 3(क) या (ख)[2] के अधीन विद्यमान राज्य में सम्मिलित किया जा सकता है या संघ राज्यक्षेत्र बनाया जा सकता है ।[3]

नए राज्यों का प्रवेश या स्थापना ।

2. संसद्, विधि द्वारा, ऐसे निबंधनों और शर्तों पर, जो वह ठीक समझे, संघ में नए राज्यों का प्रवेश या उनकी स्थापना कर सकेगी ।

सिक्किम का संघ के साथ सहयुक्त किया जाना ।

2क. संविधान (छत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 की धारा 5 द्वारा (26-4-1975 से) निरसित ।

नए राज्यों का निर्माण और वर्तमान राज्यों के क्षेत्रों, सीमाओं या नामों में परिवर्तन ।

3. संसद्, विधि द्वारा —

(क) किसी राज्य में से उसका राज्यक्षेत्र अलग करके अथवा दो या अधिक राज्यों को या राज्यों के भागों को मिलाकर अथवा

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा 1-11-1956 से परिवर्तन किए गए ।
2. बेरूबारी यूनियन का मामला, ए. 1960 एस.सी. 845 (856) ।
3. जैसा गोवा, दमण और दीव के मामले में, तारीख 20-12-1961 से [तुलना कीजिए, *जोस डा कोस्टा* बनाम *बासकोरा*, ए. 1975 एस.सी 1843 (पैरा 24)] ।

किसी राज्यक्षेत्र को किसी राज्य के भाग के साथ मिलाकर नए राज्य का निर्माण कर सकेगी;

(ख) किसी राज्य का क्षेत्र बढ़ा सकेगी;

(ग) किसी राज्य का क्षेत्र घटा सकेगी;

(घ) किसी राज्य की सीमाओं में परिवर्तन कर सकेगी;

(ङ) किसी राज्य के नाम में परिवर्तन कर सकेगी :

[4][*परंतु इस प्रयोजन के लिए कोई विधेयक राष्ट्रपति की सिफारिश के बिना और जहां विधेयक में अंतर्विष्ट प्रस्थापना का प्रभाव* [5]*** **राज्यों में से किसी के** *क्षेत्र, सीमाओं या नाम पर पड़ता है वहां जब तक उस राज्य के विधान मंडल द्वारा उस पर अपने विचार, ऐसी अवधि के भीतर जो निर्देश में विनिर्दिष्ट की जाए या ऐसी अतिरिक्त अवधि के भीतर जो राष्ट्रपति द्वारा अनुज्ञात की जाए, प्रकट किए जाने के लिए वह विधेयक राष्ट्रपति द्वारा उसे निर्देशित नहीं कर दिया गया है और इस प्रकार विनिर्दिष्ट या अनुज्ञात अवधि समाप्त नहीं हो गई है, संसद् के किसी सदन में पुरःस्थापित नहीं किया जाएगा ।*]

[5क]**स्पष्टीकरण** 1 — *इस अनुच्छेद के खंड (क) से खंड (ङ) में "राज्य" के अंतर्गत संघ राज्यक्षेत्र है, किंतु परंतुक में "राज्य" के अंतर्गत संघ राज्यक्षेत्र नहीं है ।*

स्पष्टीकरण 2 — *खंड (क) द्वारा संसद् को प्रदत्त शक्ति के अंतर्गत किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के किसी भाग को किसी अन्य राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के साथ मिलाकर नए राज्य या संघ राज्यक्षेत्र का निर्माण करना है ।*

राज्यक्षेत्र का अध्यर्पण करने की शक्ति — अनुच्छेद 3 का खंड (ग) अन्तरराज्य समायोजन के लिए है । यह किसी विदेशी राज्य के पक्ष में राज्यक्षेत्र के अध्यर्पण को लागू नहीं होता ।[2] अतएव, यदि किसी करार से किसी विदेशी राज्य के पक्ष में भारत के राज्यक्षेत्र का कोई भाग अध्यर्पित किया जाता है तो ऐसे करार को इस अधिनियम के अधीन विधि पारित करके लागू नहीं किया जा सकता ।[2] इसके लिए संविधान का संशोधन करना आवश्यक होगा ।[6] किंतु यदि सीमा विवाद का समझौते के द्वारा निपटारा किया जाता है तो इसे राज्यक्षेत्र का अध्यर्पण नहीं समझा जाएगा[6] :

परंतुक — राज्य को निर्देश करने मात्र से ही परंतुक की शर्त पूरी हो जाएगी । राज्य के विधान मंडल के मत के अनुसार कार्य करने के लिए राज्य सभा आबद्ध नहीं है ।[7]

पहली अनुसूची और चौथी अनुसूची के संशोधन तथा अनुपूरक, आनुषंगिक और पारिणामिक विषयों का उपबंध करने के लिए अनुच्छेद 2 और अनुच्छेद 3 के अधीन बनाई गई विधियां ।

4. (1) **अनुच्छेद 2 या अनुच्छेद 3 में निर्दिष्ट किसी विधि में पहली अनुसूची और चौथी अनुसूची के संशोधन के लिए ऐसे उपबंध अंतर्विष्ट होंगे जो उस विधि के उपबंधों को प्रभावी करने के लिए आवश्यक हों तथा ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध भी (जिनके अंतर्गत ऐसी विधि से प्रभावित राज्य या राज्यों के संसद् में और विधान मंडल या विधान मंडलों में प्रतिनिधित्व के बारे में उपबंध हैं) अंतर्विष्ट हो सकेंगे जिन्हें संसद् आवश्यक समझे ।**

(2) **पूर्वोक्त प्रकार की कोई विधि अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जाएगी ।**

4. संविधान (पांचवां संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा कोष्ठक में दिए गए शब्द ऐसी समय-सीमा निर्धारित करने के लिए प्रतिस्थापित किए गए थे जिसके भीतर अनुच्छेद 3 के अधीन राज्यों को निर्दिष्ट पुनर्गठन संबंधी किसी प्रस्ताव पर अपने विचार व्यक्त करने होंगे ।

5. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा कुछ शब्दों और अक्षरों का लोप किया गया ।

5क. संविधान (अठारहवां संशोधन) अधिनियम, 1966 द्वारा तारीख 27-8-1966 से स्पष्टीकरण 1 और 2 जोड़े गए थे ।

6. *मगनभाई* बनाम *भारत संघ,* ए. 1969 एस.सी. 783 (*798*) ।

7. *बाबूलाल* बनाम *मुंबई राज्य,* ए. 1960 एस.सी. 51 (*54*) ।

भाग 2

नागरिकता

संविधान के प्रारंभ पर नागरिकता ।

5. इस संविधान के प्रारंभ पर प्रत्येक व्यक्ति जिसका भारत के राज्यक्षेत्र में अधिवास है और —

(क) जो भारत के राज्यक्षेत्र में जन्मा था, या

(ख) जिसके माता या पिता में से कोई भारत के राज्यक्षेत्र में जन्मा था, या

(ग) जो ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले कम से कम पांच वर्ष तक भारत के राज्यक्षेत्र में मामूली तौर से निवासी रहा है, भारत का नागरिक होगा ।

पाकिस्तान से भारत को प्रव्रजन करने वाले कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार ।

6. अनुच्छेद 5 में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति जिसने ऐसे राज्यक्षेत्र से जो इस समय पाकिस्तान के अंतर्गत है, भारत के राज्यक्षेत्र को प्रव्रजन किया है, इस संविधान के प्रारंभ पर भारत का नागरिक समझा जाएगा —

(क) यदि वह अथवा उसके माता या पिता में से कोई अथवा उसके पितामह या पितामही या मातामह या मातामही में से कोई (मूलरूप में यथाअधिनियमित) भारत शासन अधिनियम, 1935 में परिभाषित भारत में जन्मा था; और

(ख) (i) जबकि वह व्यक्ति ऐसा है जिसने 19 जुलाई, 1948 से पहले इस प्रकार प्रव्रजन किया है तब यदि वह अपने प्रव्रजन की तारीख से भारत के राज्यक्षेत्र में मामूली तौर से निवासी रहा है; या

(ii) जबकि वह व्यक्ति ऐसा है जिसने 19 जुलाई, 1948 को या उसके पश्चात् इस प्रकार प्रव्रजन किया है तब यदि वह नागरिकता प्राप्ति के लिए भारत डोमिनियन की सरकार द्वारा विहित प्ररूप में और रीति से उसके द्वारा इस संविधान के प्रारंभ से पहले ऐसे अधिकारी को, जिसे उस सरकार ने इस प्रयोजन के लिए नियुक्त किया है, आवेदन किए जाने पर उस अधिकारी द्वारा भारत का नागरिक रजिस्ट्रीकृत कर लिया गया है :

परंतु यदि कोई व्यक्ति अपने आवेदन की तारीख से ठीक पहले कम से कम छह मास भारत के राज्यक्षेत्र का निवासी नहीं रहा है तो वह इस प्रकार रजिस्ट्रीकृत नहीं किया जाएगा ।

अनुच्छेद 5-11 का प्रविषय — संविधान में भारतीय राष्ट्रिकता या नागरिकता के बारे में स्थायी विधि अधिकथित नहीं की गई है । यह विषय, विधान बनाकर तय करने के लिए संसद् पर ही छोड़ दिया गया [अनुच्छेद 11] । किंतु ऐसा विधान बनाए जाने तक संविधान में यह बताया गया कि संविधान के प्रारंभ पर कौन से व्यक्ति भारत के नागरिक समझे जाएंगे । विधाम बन जाने पर वह विधान ही लागू होगा, संविधान के अनुच्छेद नहीं ।

वे व्यक्ति जो संविधान के प्रारंभ पर भारत के नागरिक थे — निम्नलिखित व्यक्ति संविधान के प्रारंभ की तारीख को अनुच्छेद 5-8 के अधीन भारत के नागरिक होंगे :

I. वह व्यक्ति जो भारत के राज्यक्षेत्र में जन्मा था और जिसका उसमें अधिवास है [देखिए पीछे अनुच्छेद 1(3)] — चाहे उसके माता या पिता की राष्ट्रिकता कुछ भी रही हो [अनुच्छेद 5(क)] ।

II. भारत के राज्यक्षेत्र में अधिवासित कोई व्यक्ति जिसके माता या पिता में से कोई भारत के राज्यक्षेत्र में जन्मा था – चाहे उसके माता या पिता की राष्ट्रिकता कुछ भी रही हो अथवा ऐसे व्यक्ति का जन्म कहीं भी हुआ हो [अनुच्छेद 5(ख)] ।

III. कोई व्यक्ति जो स्वयं या जिसका पिता भारत में जन्मा नहीं था किंतु जिसका (क) भारत के राज्यक्षेत्र में अधिवास है और जो (ख) संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले कम से कम पांच वर्ष तक भारत के राज्यक्षेत्र में मामूली तौर से निवासी रहा है । इस दशा में भी उस व्यक्ति के माता-पिता की राष्ट्रिकता तात्विक नहीं है । उदाहरणार्थ, पुर्तगाली या फ्रांसीसी बस्ती की प्रजा जो संविधान के प्रारंभ से पूर्ववर्ती 5 वर्षों तक भारत में निवास कर रही थी, और जिसका आशय भारत में स्थायी रूप से निवास करना था, संविधान के प्रारंभ पर भारत की नागरिक हो जाएगी [अनुच्छेद 5(ग)] ।

IV. पाकिस्तान से भारत को प्रव्रजन करने वाला व्यक्ति, परंतु तब जबकि,

(i) यदि वह या उसके माता या पिता में से कोई अथवा उसके पितामह या पितामही या मातामह या मातामही में से कोई (मूलरूप में यथाअधिनियमित) भारत शासन अधिनियम, 1935 में परिभाषित भारत में जन्मा था, और –

(ii) (क) यदि उसने 19 जुलाई, 1948 के पहले प्रव्रजन किया है तब वह प्रव्रजन की तारीख से भारत के राज्यक्षेत्र में मामूली तौर से निवासी रहा है [देखिए पीछे अनुच्छेद 1(3)] । (इस दशा में प्रव्रजनकर्ता का नागरिकता पाने के लिए रजिस्ट्रीकरण आवश्यक नहीं है), या

(ख) यदि वह ऐसा व्यक्ति है जिसने 19 जुलाई, 1948 को या उसके पश्चात् प्रव्रजन किया है तब यदि वह नागरिकता पाने के लिए संविधान के प्रारंभ के पूर्व भारत सरकार द्वारा नियुक्त अधिकारी को आवेदन करता है और उस अधिकारी का यह समाधान हो जाने पर कि वह आवेदन की तारीख से ठीक पहले कम से कम छह मास भारत के राज्यक्षेत्र में निवासी रहा है, उस अधिकारी ने उसे रजिस्टर किया है [अनुच्छेद 6] ।

V. कोई व्यक्ति जिसने भारत से पाकिस्तान को 1 मार्च, 1947 के पश्चात् प्रव्रजन किया है किंतु जो बाद में ऐसी अनुज्ञा लेकर वापस आया है जो किसी विधि के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन दी गई है । किंतु उसे अनुच्छेद 6(ख)(ii) के अधीन दी गई रीति में स्वयं को रजिस्टर कराना होगा [अनुच्छेद 7] ।

VI. कोई व्यक्ति जो या जिसके माता या पिता में से कोई अथवा पितामह या पितामही या मातामह या मातामही में से कोई (मूलरूप में यथाअधिनियमित) भारत शासन अधिनियम, 1935 में परिभाषित भारत में जन्मा था और जो इस प्रकार परिभाषित भारत के बाहर किसी देश में मामूली तौर से निवास कर रहा है यदि वह नागरिकता प्राप्ति के लिए भारत के राजनयिक या कौंसलीय प्रतिनिधि को उस देश में जहां वह तत्समय निवास कर रहा है आवेदन करके (चाहे संविधान के प्रारंभ के पूर्व हो या पश्चात्) स्वयं को भारत के नागरिक के रूप में रजिस्टर करा लेता है [अनुच्छेद 8]। इस अनुच्छेद के अधीन भारतीय माता-पिता से जन्मा व्यक्ति जो मलाया या दक्षिण अफ्रीका में निवास कर रहा है उस देश में भारतीय दूतावास में रजिस्ट्रीकरण मात्र से ही संविधान के अधीन भारत की नागरिकता प्राप्त कर सकता है ।

अधिवास – अधिवास वह स्थान है जहां किसी व्यक्ति का निवास निश्चित है और जहां से निवास बदलने का उसका वर्तमान में कोई आशय नहीं है ।[1] प्रत्येक व्यक्ति का जन्म पर एक अधिवास होता है जिसे उद्‌भव का अधिवास कहते हैं । जब तक वह नया अधिवास नहीं प्राप्त कर ले तब तक यह चलता है । अवयस्क का अधिवास वही होता है

1. *सेंट्रल बैंक आफ इंडिया बनाम राज नारायण*, ए. 1955 एस.सी. 36 ।

जो उसके जन्म के समय उसके पिता का था ।[2] उद्भव का अधिवास तब तक नहीं बदलता जब तक कि वह व्यक्ति आशय और तथ्य से दूसरा अधिवास न बना ले । यह किसी अन्य देश में वास्तव में बसने और वहां स्थायी रूप से बसने का आशय रखने से होता है ।[1-2] जब तक ऐसा नहीं होता तब तक उद्भव का अधिवास बना रहता है चाहे उसने अपने उद्भव का देश छोड़ दिया हो और कभी भी वापस न आने का आशय हो ।[1-2] किसी व्यक्ति ने उद्भव का अधिवास बदल दिया है, यह साबित करने का भार उसी पर होता है ।[3] इस प्रयोजन के लिए तात्विक समय के पूर्व और पश्चात् का उसका आचरण सुसंगत होता है ।[3]

संविधान के प्रारंभ पर भारत के राज्यक्षेत्र में अधिवास — भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 की धारा 1 द्वारा भारत और पाकिस्तान की दो डोमिनियनों के सृजन के फलस्वरूप वह व्यक्ति जिसका 15-8-1947 के पहले 'ब्रिटिश इंडिया' में अधिवास था, अपने आप ही उस तारीख को भारत का या पाकिस्तान का अधिवास प्राप्त कर लेगा । बस, उस दशा में नहीं जहां उसने अपनी इच्छा से ब्रिटिश भारत की परिधि के बाहर किसी अन्य देश का अधिवास प्राप्त कर लिया है । वह भारत में अधिवासी तभी होगा जब वह साधारणतः ब्रिटिश भारत के उस भाग में निवास करता है जो भारत डोमिनियन में सम्मिलित हो गया है और उसका वहां स्थायी रूप से निवास करने का आशय है, अन्यथा नहीं । कोई व्यक्ति जो पाकिस्तान में रहता है और वहां कारबार चलाता है अपने कुटुंब को भारत भेज देने मात्र से भारत में अधिवासी नहीं हो जाएगा क्योंकि वह स्वयं तो भारत से बाहर ही निवास कर रहा है ।[1] यदि इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है कि पुत्र जब अवयस्क था तो पिता पाकिस्तान प्रव्रजन कर गया था तो इसी नियम से अवयस्क का अधिवास अवधारित होगा ।[4]

राज्य के लिए पृथक् अधिवास नहीं — भारत के संविधान के अधीन एक ही अधिवास है अर्थात् भारत का अधिवास । राज्य के लिए पृथक् अधिवास नहीं है । राज्यों में अलग-अलग अधिवास नहीं हैं ।[5]

पाकिस्तान को प्रव्रजन करने वाले कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार ।

7. **अनुच्छेद 5 और अनुच्छेद 6 में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति जिसने 1 मार्च, 1947 के पश्चात् भारत के राज्यक्षेत्र से ऐसे राज्यक्षेत्र को, जो इस समय पाकिस्तान के अंतर्गत है, प्रव्रजन किया है, भारत का नागरिक नहीं समझा जाएगा :**

परंतु इस अनुच्छेद की कोई बात ऐसे व्यक्ति को लागू नहीं होगी जो ऐसे राज्यक्षेत्र को, जो इस समय पाकिस्तान के अंतर्गत है, प्रव्रजन करने के पश्चात् भारत के राज्यक्षेत्र को ऐसी अनुज्ञा के अधीन लौट आया है जो पुनर्वास के लिए या स्थायी रूप से लौटने के लिए किसी विधि के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन दी गई है और प्रत्येक ऐसे व्यक्ति के बारे में अनुच्छेद 6 के खंड (ख) के प्रयोजनों के लिए यह समझा जाएगा कि उसने भारत के राज्यक्षेत्र को 19 जुलाई, 1948 के पश्चात् प्रव्रजन किया है ।

अनुच्छेद 7 : पाकिस्तान को प्रव्रजन — इस अनुच्छेद में यह कहा गया है कि यदि कोई व्यक्ति 1-3-1947 के पश्चात् भारत से अपना स्थायी निवास पाकिस्तान बदलकर ले जाने के आशय से भारत के राज्यक्षेत्र से उस राज्यक्षेत्र में चला गया है जो अब पाकिस्तान का भाग है तो वह भारत की नागरिकता, जो उसे अनुच्छेद 5 के द्वारा मिली थी, खो देगा ।

2. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य,* ए. 1973 एस.सी. 1461 ।
3. *केदार* बनाम *नारायण,* ए. 1966 एस.सी. 160 (*163-64*) ।
4. *भारत संघ* बनाम *रशीद,* (1969) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 52.(*55*)
5. *प्रदीप* बनाम *भारत संघ,* ए. 1984 एस.सी. 1420 (पैरा 8-9) ।

इस अनुच्छेद में निर्दिष्ट प्रव्रजन 1-3-1947 और 26-1-1950 के बीच किया गया प्रव्रजन है । उस तारीख के पश्चात् किया गया प्रव्रजन इसमें नहीं आता । उसको नागरिकता अधिनियम, 1955 लागू होगा ।[6]

प्रव्रजन — प्रव्रजन शब्द में अधिवास या स्थायी निवास की संकल्पना नहीं है । यदि भारत से पाकिस्तान संचरण (जाना) होता है और यह किसी विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए या लघु या सीमित अवधि के लिए नहीं है तो यह संचरण अनुच्छेद 7 के अधीन प्रव्रजन होगा ।[6] इसका अर्थ हुआ कि यह अभिनिर्धारित किया जा सकता है कि अवयस्क या विवाहित स्त्री ने प्रव्रजन किया है चाहे उसने वैकल्पिक अधिवास प्राप्त किया हो या नहीं ।[7]

नियोजन या श्रम के लिए भारत से पाकिस्तान को अनिश्चित अवधि के लिए जाना प्रव्रजन माना जाएगा ।[6] जिस सरकारी कर्मचारी ने पाकिस्तान जाने का विकल्प दिया था उसका पाकिस्तान जाना अनुच्छेद 7 के अर्थान्तर्गत प्रव्रजन है ।[8] प्रव्रजन के प्रश्न के अवधारण के लिए यह तथ्य सुसंगत नहीं है कि किसी व्यक्ति ने वहां कोई संपत्ति अर्जित नहीं की जबकि भारत में उसकी बहुत संपत्ति थी अथवा यह कि वह अपने माता-पिता को नहीं ले गया ।[8]

किंतु यदि कोई भारत का नागरिक किसी काम से या अन्यथा अस्थायी रूप से पाकिस्तान जाता है तो इससे उसकी नागरिकता नहीं समाप्त होगी ।[9] किंतु वह व्यक्ति जो पाकिस्तान जाकर[7] अस्थायी परमिट[10] या पाकिस्तानी पासपोर्ट[11] लेकर भारत आता है और स्वयं को पाकिस्तानी राष्ट्रिक बताता है, यह दावा नहीं कर सकता कि वह पाकिस्तान अस्थायी रूप से गया था[7] या वह भारत का अधिवासी हो गया है ।[11]

भारत के बाहर रहने वाले भारतीय उद्भव के कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार ।

8. अनुच्छेद 5 में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति जो या जिसके माता या पिता में से कोई अथवा पितामह या पितामही या मातामह या मातामही में से कोई (मूलरूप में यथाअधिनियमित) भारत शासन अधिनियम, 1935 में परिभाषित भारत में जन्मा था और जो इस प्रकार परिभाषित भारत के बाहर किसी देश में मामूली तौर से निवास कर रहा है, भारत का नागरिक समझा जाएगा, यदि वह नागरिकता प्राप्ति के लिए भारत डोमिनियन की सरकार द्वारा या भारत सरकार द्वारा विहित प्ररूप में और रीति से अपने द्वारा उस देश में, जहां वह तत्समय निवास कर रहा है, भारत के राजनयिक या कौंसलीय प्रतिनिधि को इस संविधान के प्रारंभ से पहले या उसके पश्चात् आवेदन किए जाने पर ऐसे राजनयिक या कौंसलीय प्रतिनिधि द्वारा भारत का नागरिक रजिस्ट्रीकृत कर लिया गया है ।

विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित करने वाले व्यक्तियों का नागरिक न होना ।

9. यदि किसी व्यक्ति ने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित कर ली है तो वह अनुच्छेद 5 के आधार पर भारत का नागरिक नहीं होगा अथवा अनुच्छेद 6 या अनुच्छेद 8 के आधार पर भारत का नागरिक नहीं समझा जाएगा ।

विदेशी राज्य — जो व्यक्ति 1-3-1947 के पश्चात् पाकिस्तान प्रव्रजन कर गए और

6. *कुलाथिल* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1614 (*1619*) ।
7. *बिहार राज्य* बनाम *अमर सिंह*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1259 (*1265*) ।
8. *असम राज्य* बनाम *जिलकादर*, ए. 1972 एस.सी. 2166 (*2169*) ।
9. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *खादर*, ए. 1961 एस.सी. 1468 (*1470*) ।
10. *अब्दुस समद* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 505 (*506*) ।
11. *अब्दुल सत्तार* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 810 (*813*) ।

जिन्होंने पाकिस्तान की राष्ट्रिकता प्राप्त कर ली वे भारत के नागरिक होने का दावा नहीं कर सकते ।[11]

"अर्जित कर ली है" — इसका अर्थ है 26-1-1950 के पूर्व विदेशी नागरिकता अर्जित करना ।[11] यदि किसी व्यक्ति ने संविधान के प्रारंभ के पूर्व विदेशी नागरिकता अर्जित कर ली है तो वह अनुच्छेद 5 का लाभ नहीं उठा सकता । 26-1-1950 के पश्चात् होने वाले प्रव्रजन के मामले अनुच्छेद 9 के अधीन नहीं आते । वे नागरिकता अधिनियम, 1955 के उपबंधों से शासित होंगे । यदि कोई व्यक्ति स्वेच्छा से उस तारीख के पश्चात् किसी विदेशी राज्य को प्रव्रजन करता है तो वह नागरिकता अधिनियम की धारा 9 के उपबंधों के अधीन भारत की नागरिकता खो देगा ।[6, 12]

केन्द्रीय सरकार इस प्रश्न का अवधारण करेगी कि किसी व्यक्ति ने विदेशी नागरिकता अर्जित कर ली है या नहीं ।[9] यह प्रश्न अनुच्छेद 226[13] या अनुच्छेद 32[14] के अधीन याचिका पर या वाद द्वारा[12] अवधारित नहीं किया जा सकता । यदि ऐसी कार्यवाही में यह प्रश्न उपस्थित होता है तो न्यायालय कार्यवाही रोक देगा तथा पक्षकारों को अनुमति देगा कि वे केन्द्रीय सरकार से अवधारण करा लें ।[13] देश से निकालने[15] या अभियोजन[16] करने के लिए आदेश की पुष्टि में इतना ही पर्याप्त नहीं है कि उस व्यक्ति ने विदेशी पासपोर्ट प्राप्त कर लिया है । इसके लिए नागरिकता अधिनियम की धारा 9(2)[15] के अधीन केन्द्रीय सरकार का विनिश्चय आवश्यक है । धारा 9(2) के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा की जाने वाली जांच न्यायिककल्प होगी ।[17]

नागरिकता के अधिकारों का बना रहना ।

10. **प्रत्येक व्यक्ति, जो इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में से किसी के अधीन भारत का नागरिक है या समझा जाता है, ऐसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, जो संसद् द्वारा बनाई जाए, भारत का नागरिक बना रहेगा।**

संसद् द्वारा नागरिकता के अधिकार का विधि द्वारा विनियमन किया जाना ।

11. **इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों की कोई बात नागरिकता के अर्जन और समाप्ति के तथा नागरिकता से संबंधित अन्य सभी विषयों के संबंध में उपबंध करने की संसद् की शक्ति का अल्पीकरण नहीं करेगी ।**

नागरिकता से संबंधित विधि — संविधान में भारत की नागरिकता से संबंधित स्थायी और विस्तृत विधि अधिकथित करने का कोई आशय नहीं है । इसकी विधि अधिकथित करने की शक्ति संसद् को सौंपी गई है ।

उक्त शक्ति के प्रयोग में संसद् ने नागरिकता अधिनियम, 1955 अधिनियमित किया है और 26-1-1950 को या उसके पश्चात् नागरिकता के अर्जन और अवसान के बारे में विस्तृत विधि बनाई है । इस अधिनियम के अनुसार कोई व्यक्ति भारत का नागरिक पांच प्रकार से बन सकता है —

12. *उत्तर प्रदेश राज्य* ब नाम *शाह*, ए. 1969 एस.सी. 1234 (*1237*) ।

13. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *पीर मोहम्मद*, ए. 1968 एस.सी. 646 (*647*) ।

14. *इज़हार अहमद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1052 ।

15. *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *सैयद मोहम्मद*, ए. 1962 एस.सी. 778; *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *रोशन*, (1969) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 232 ।

16. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *रहिमत-उल्लाह*, ए. 1971 एस.सी. 1382; *गुजरात राज्य* बनाम *इब्राहीम*, ए. 1974 एस.सी. 645 (पैरा 8) ।

17. *अय्यूब खान* बनाम *पुलिस आयुक्त*, (1965) 2 एस.सी.आर. 884; *मोहनुददीन* बनाम *भारत सरकार*, (1967) 2 एस.सी.आर. 401 ।

(क) *जन्म से नागरिकता* – प्रत्येक व्यक्ति जिसका जन्म 26-1-1950 को या उसके पश्चात् भारत में हुआ है जन्म से भारत का नागरिक होगा ।

(ख) *विरासत से नागरिकता* – साधारणतः 26-1-1950 को या उसके पश्चात् भारत के बाहर जन्मा व्यक्ति विरासत से भारत का नागरिक होगा यदि उसके जन्म के समय उसका पिता भारत का नागरिक है ।

(ग) *रजिस्ट्रीकरण से नागरिकता* – कुछ वर्ग के व्यक्ति (जिन्होंने अन्य रूप में भारत की नागरिकता अर्जित नहीं की है) विहित प्राधिकारी के समक्ष स्वयं को रजिस्टर करवा कर भारत की नागरिकता प्राप्त कर सकते हैं । जैसे, भारतीय उद्‌भव के व्यक्ति जो सामान्यतः भारत में निवास करते हैं और जो रजिस्ट्रीकरण के लिए आवेदन करने के ठीक पहले छह मास तक इस प्रकार निवासी रहे हैं; वे स्त्रियां जिनका विवाह भारत के नागरिकों से हुआ है ।

(घ) *देशीयकरण से नागरिकता* – कोई भी विदेशी भारत सरकार को देशीयकरण के लिए आवेदन करके भारत की नागरिकता अर्जित कर सकता है ।

(ङ) *राज्यक्षेत्र के समावेश से नागरिकता* – यदि कोई नया राज्यक्षेत्र भारत का भाग बन जाता है तो भारत सरकार यह विनिर्दिष्ट कर सकती है कि कौन से व्यक्ति भारत के नागरिक होंगे ।

भाग 3

मूल अधिकार

साधारण

परिभाषा ।

12. इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, "राज्य" के अंतर्गत भारत की सरकार और संसद् तथा राज्यों में से प्रत्येक राज्य की सरकार और विधान मंडल तथा भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन सभी स्थानीय और अन्य प्राधिकारी हैं ।

भारत के संविधान में मूल अधिकारों की भूमिका — किसी भी भारत शासन अधिनियम में मूल अधिकार नहीं थे क्योंकि वे सभी इंग्लैंड में मान्य संसद् के प्रभुत्व के सिद्धांत पर आधारित थे जो व्यक्ति के अधिकारों को संरक्षण देने के लिए संसद् के प्राधिकार पर परिसीमा लगाने के विरुद्ध है । इसी कारणवश साइमन आयोग ने मूल अधिकारों की घोषणा करने के विचार को अस्वीकार करते हुए यह कहा था कि वे बेकार हैं । किंतु नेहरू रिपोर्ट के समय से ही हमारे राष्ट्र ने इस मत का समर्थन किया था कि अधिकार विलेख बनाया जाए । ब्रिटिश राज में हमें यह अनुभव हुआ था कि चाटुकार विधान मंडल व्यक्ति की स्वतंत्रता को रौंदने में कार्यपालिका की सहायता कर सकता है ।

अतएव भारत के संविधान के भाग 3 में कुछ मूल अधिकार समाविष्ट किए गए । इनका उपयोग कार्यपालिका के विरुद्ध तो हो सकता है साथ ही ये विधान मंडल की शक्तियों को भी सीमित करते हैं । इसका नमूना संयुक्त राज्य अमरीका से लिया गया है किंतु भारत का संविधान पूरी तरह से अमरीका की नकल नहीं करता है । इस विषय में संसद् की प्रभुता और न्यायिक सर्वोच्चता के बीच मध्यम मार्ग अपनाया गया है । एक तो भारत की संसद् इंग्लैंड की संसद् के समान सर्वशक्तिमान नहीं है । हमारी संसद् का सृजन लिखित संविधान से हुआ है जो उसकी सीमाएं बांधता है । हमारी संसद् संविधान द्वारा अधिरोपित परिसीमाओं और प्रतिषेधों के अधीन रहते हुए ही विधान बना सकती है । उदाहरण के लिए, मूल अधिकारों के या विधायी शक्तियों के वितरण के अधीन रहते हुए ।

दूसरी ओर यदि न्यायपालिका अत्यधिक अवरोध उत्पन्न करती है तो संसद् विशेष बहुमत से संविधान के बहुत बड़े अंश का संशोधन कर सकती है ।

भारत के संविधान की यह विशेषता है कि संघ की संसद् विधायी निकाय ही नहीं संविधान निर्मात्री निकाय भी है । वह इस रूप में मूल अधिकार सहित संविधान के किसी भाग का संशोधन करने के लिए, अनुच्छेद 368 द्वारा यथाअपेक्षित विशेष बहुमत से कार्य करती है ।

उच्चतम न्यायालय ने *गोलकनाथ*[1] वाले प्रसिद्ध वाद में बहुमत से यह निर्णय किया था कि संसद् को मूल अधिकारों का संशोधन करने की शक्ति नहीं है । उस वाद में यह अभिनिर्धारित हुआ कि अनुच्छेद 368 के अधीन पारित संविधान संशोधन अधिनियम अनुच्छेद 13(2) की परिधि में आने वाली 'विधि' है । परिणामतः मूल अधिकारों का, जिन्हें संविधान निर्माताओं ने उच्च आसन पर सुशोभित कर दिया है, संशोधन या उल्लंघन नहीं हो सकता ।

1. *गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1643 ।

किंतु इस मत को संविधान (24वां संशोधन) अधिनियम, 1971 से अतिष्ठित कर दिया गया। उसके द्वारा यह साफ कर दिया गया कि अनुच्छेद 368 के अधीन पारित विधि अनुच्छेद 13 द्वारा शासित नहीं होगी [देखिए आगे अनुच्छेद 13(2)]। बाद में उच्चतम न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने *केशवानंद भारती*[2] के वाद में संविधान संशोधन अधिनियम को विधिमान्य ठहराया और *गोलकनाथ*[1] को उलट दिया। *केशवानंद* में सर्वसम्मत निर्णय यह है कि अनुच्छेद 368 के अधीन संशोधन से मूल अधिकारों को उन्मुक्ति नहीं है। *केशवानंद* में बहुमत से यह तो कहा गया कि संविधान के कुछ आधारिक लक्षण ऐसे हैं जिनका अनुच्छेद 368 की शक्ति का प्रयोग करके संशोधन नहीं किया जा सकता किंतु आश्चर्य इस बात का है कि आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि मूल अधिकार उन आधारिक लक्षणों में नहीं आते।

जैसा ऊपर बताया जा चुका है "आधारिक लक्षण" के सिद्धांत को संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा विनष्ट करने का प्रयत्न किया गया। इस अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 368 में खंड (5) अंतःस्थापित करके यह उपबंध किया गया कि "संविधान के उपबंधों का . . . . संशोधन करने के लिए संसद् की संविधायी शक्ति पर किसी प्रकार का निर्बन्धन नहीं होगा"। उच्चतम न्यायालय ने "आधारिक लक्षण" के अपने सिद्धांत के अनुसार कार्य करते हुए इस उपबंध को अविधिमान्य ठहराया है।[3]

अतएव वर्तमान स्थिति इस प्रकार है —

(क) मूल अधिकारों को अनुच्छेद 368 में अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार संविधान संशोधन अधिनियम पारित करके निरसित या संक्षिप्त किया जा सकता है।

(ख) सभी मूल अधिकार ऐसे नहीं हैं कि उनका संशोधन न किया जा सके। यदि उच्चतम न्यायालय यह विनिर्धारित करता है कि वह विशिष्ट अधिकार या उसका कोई भाग जिसे संशोधन द्वारा निकाल दिया गया है, संविधान का आधारिक लक्षण है तो उस अधिकार का संशोधन अकृत (शून्य) होगा।[3-4]

(ग) जब तक कोई विशिष्ट मूल अधिकार संविधान के संशोधन द्वारा समाप्त नहीं किया जाता तब तक वह संसद् और राज्य विधान मंडलों की विधायी शक्ति पर परिसीमा के रूप में होता है, और यदि कोई विधान मंडल ऐसे मूल अधिकार के उल्लंघन में कोई विधि बनाता है तो उसे उच्चतम न्यायालय शून्य घोषित करेगा।[5] यदि उस विधि को संविधान द्वारा स्वयं संरक्षण प्रदान किया गया है तो ऐसा नहीं होगा। उदाहरणार्थ, अनुच्छेद 31क, अनुच्छेद 31ख के साथ पठित नवीं अनुसूची, अनुच्छेद 31ग।[6]

भाग 3 में 'राज्य' :

अ. भाग 3 और 4 के लागू होने के प्रयोजन के लिए निम्नलिखित को 'राज्य' अभिनिर्धारित किया गया है :

(i) संघ और राज्य की कार्यपालिका और विधायी अंग।[5-8]

---

2. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461।

3. *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 1789।

4. तुलना कीजिए, *वामन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 271 (पैरा 15)।

5. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 225; *महेन्द्रा* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1019।

6. विडंबना यह है कि 1951 के प्रारंभ से ही जब अनुच्छेद 31क अंतःस्थापित किया गया था, संविधान के उत्तरोत्तर संशोधनों द्वारा ऐसे अपवादों की संख्या बढ़ाई जा रही है और मूल अधिकारों के प्रवर्तन के अवसर को सीमित किया जा रहा है।

7. *बीड़ी सप्लाई कंपनी* बनाम *भारत संघ*, (1965) एस.सी.आर. 267 (*277*); *बशेसर* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1969 एस.सी. 149 (*158*)।

8. उदाहरणार्थ, रेल बोर्ड [*रेल बोर्ड* बनाम *आबजर्वर पब्लिकेशन्स*, ए. 1972 एस.सी. 1792]।

(ii) *भारत सरकार या राज्य सरकार[7] का कोई विभाग या अंग ।*

(iii) कोई स्थानीय प्राधिकारी,[8] जैसे पंचायत,[9] पत्तन ट्रस्ट,[10] *या नगरपालिका ।*[11]

(iv) प्रत्येक लोक प्राधिकारी जिसका सृजन अधिनियम द्वारा हुआ है[12] और जो कानूनी शक्तियों का प्रयोग करता है[13] चाहे ऐसी शक्तियां शासकीय हों[14] या शासकीय कल्प हों[13] या अशासकीय हों और चाहे ऐसा प्राधिकारी सरकार के नियंत्रण में हो या नहीं हो[15] और चाहे वह ऐसे क्रियाकलाप में लगा हो जो व्यापार या वाणिज्य की प्रकृति का है,[13] उदाहरण के लिए, —

सड़क परिवहन निगम[12] या जीवन बीमा निगम[12] जैसे कानूनी निगम[12] जिन्हें विधि का बल रखने वाले नियम, उपविधियां या विनियम बनाने की या कानूनी नियुक्तियां करने की शक्ति है,[16] केन्द्रीय जल परिवहन निगम,[16क] पत्तन न्यास अधिनियम के अधीन स्थापित पत्तन न्यास,[16ख] राज्य व्यापार निगम,[16ग] राष्ट्रीयकृत बैंक[16घ] ।

(v) सरकार का उपकरण या अधिकरण चाहे वह व्यष्टि हो या प्राइवेट निकाय हो[17] या कंपनी हो[18] या सोसाइटी अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत सोसाइटी हो,[19] प्रादेशिक ग्रामीण बैंक अधिनियम, 1976 द्वारा स्थापित प्रादेशिक ग्रामीण बैंक,[19क] सैनिक स्कूल सोसाइटी ।[19ख]

कोई निगम या सोसाइटी सरकार का अभिकरण है या नहीं इसका अवधारण करने के लिए अनेक बातें सुसंगत हैं, जैसे (क) वित्तीय सहायता, (ख) निगम के प्रबंध और नीतियों का नियंत्रण,[12] (ग) राज्य द्वारा प्रदत्त एकाधिकार, (घ) क्या उसके कृत्य सरकार द्वारा किए जा सकते हैं,[17, 19] (ङ) क्या सरकारी विभाग के कृत्य उस निगम को अंतरित किए गए हैं ।[20]

आ यह अभिनिर्धारित हुआ है कि निम्नलिखित अनुच्छेद 12 के अधीन 'राज्य' *नहीं है*

9 *अजीत सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1967 एस सी 355 (*866*) ।

10 *मद्रास पिंजरापोल* बनाम *श्रम न्यायालय*, ए 1961 मद्रास 234 (*239*) ।

11 तुलना कीजिए, *रशीद अहमद* बनाम *म्यूनिसिपल बोर्ड*, (1960) एस सी आर (*566*) ।

12 *सुखदेव* बनाम *भगतराम*, ए 1975 एस सी 1331, *मैसूर एस आर टी सी* बनाम *देवराज*, ए 1976 एस सी 1027 (पैरा 14); *सभाजीत* बनाम *भारत संघ*, ए 1975 एस सी 1329, *सोम* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस सी 212, *सूर्य* बनाम *बी एस ई बोर्ड*, ए 1985 एस सी 941 (पैरा 5) ।

13 *राजस्थान राज्य विद्युत बोर्ड* बनाम *मोहन लाल*, ए 1967 एस सी 1856 ।

14 *राज्य व्यापार निगम* बनाम *सी टी ओ*, ए 1963 एस सी 1811 (*1823*) ।

15 *राममूर्ति* बनाम *मुख्य आयुक्त*, ए 1963 एस सी 1464 ।

16 *राजस्थान राज्य विद्युत बोर्ड* बनाम *मोहन लाल*, ए 1967 एस सी 1856 ।

16क *सी जे डब्ल्यू टी कारपोरेशन* बनाम *ब्रोजो*, ए 1986 एस सी 1571 ।

16ख *द्वारकादास* बनाम *बोर्ड आफ ट्रस्टीज*, (1989) 3 एस सी सी 293 (पैरा 22) ।

16ग *सांबा इंडस्ट्रीज* बनाम *भारत संघ*, (1991) 2 एस सी सी 407 ।

16घ *हैदराबाद कमर्शियल्स* बनाम *इंडियन बैंक*, ए 1991 एस सी 247 ।

17 *रामन* बनाम *आई ए ए*, ए 1979 एस सी 1628 (पैरा 15-16); *गुजरात राज्य विद्युत निगम* बनाम *लोटस होटल्स*, ए 1983 एस सी 848, *कालरा* बनाम *पी एंड ई कारपोरेशन*, ए 1984 एस सी 1361, *कर्मकार* बनाम *भारतीय खाद्य निगम*, ए 1985 एस सी 670 (पैरा 17) ।

18 *सोम प्रकाश* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस सी 212 (पैरा 36) [*भारत पेट्रोलियम कारपोरेशन*], *सी आई डब्ल्यू टी सी* बनाम *ब्रोजो*, ए 1986 एस सी 1571 (पैरा 69) ।

19 *अजय* बनाम *खालिद*, ए 1981 एस सी 487 (पैरा 7, 11, 15); *मिनहास* बनाम *भारतीय सांख्यकीय संस्थान*, ए 1984 एस सी 363 (पैरा 20) ।

19क *चेयरमैन* बनाम *विजयकुमार*, ए 1989 एस सी 1976 (पैरा 7) ।

19ख *ए आई एस एस ई* बनाम *रक्षा मंत्री*, ए 1989 एस सी 88 (पैरा 9-10) ।

20 *उत्तर प्रदेश भांडागारण निगम* बनाम *विजय*, ए 1980 एस सी 840 ।

(i) कोई असांविधिक निकाय जो कानूनी शक्तियों का प्रयोग नहीं करता है,[21] जैसे

कोई कंपनी[12] जब तक कि वह सरकार का अभिकरण न हो ।[17]

(ii) कोई न्यायिक या न्यायिककल्प प्राधिकारी ।[22]

(iii) प्राइवेट निकाय जिन्हें कोई कानूनी शक्ति नहीं है[23] या जिन्हें किसी राज्य अधिनियम से समर्थन प्राप्त नहीं होता है[5] या जो राज्य के अभिकरण नहीं हैं ।[17]

ङ. अनुच्छेद 12 में दी गई परिभाषा केवल भाग 3 और भाग 4 के प्रयोजन के लिए ही है [देखिए आगे अनुच्छेद 36] । भाग 14 में दी गई राज्य की परिभाषा से यह प्रभावित नहीं होती है ।[24] भाग 3 और 4 से भिन्न अन्य भागों में जहां 'राज्य' शब्द आता है वहां उसके निर्वचन में यह परिभाषा लागू नहीं होगी,[19] जैसे अनुच्छेद 311 ।[25]

मूल अधिकारों से असंगत या उनका अल्पीकरण करने वाली विधियां ।

13. (1) इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त सभी विधियां उस मात्रा तक शून्य होंगी जिस तक वे इस भाग के उपबंधों से असंगत हैं ।

(2) राज्य ऐसी कोई विधि नहीं बनाएगा जो इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को छीनती है या न्यून करती है और इस खंड के उल्लंघन में बनाई गई प्रत्येक विधि उल्लंघन की मात्रा तक शून्य होगी ।

(3) इस अनुच्छेद में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, —

(क) "विधि" के अंतर्गत भारत के राज्यक्षेत्र में विधि का बल रखने वाला कोई अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम, विनियम, अधिसूचना, रूढ़ि या प्रथा है;

(ख) "प्रवृत्त विधि" के अंतर्गत भारत के राज्यक्षेत्र में किसी विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा इस संविधान के प्रारंभ से पहले पारित या बनाई गई विधि है जो पहले ही निरसित नहीं कर दी गई है, चाहे ऐसी कोई विधि या उसका कोई भाग उस समय पूर्णतया या विशिष्ट क्षेत्रों में प्रवर्तन में नहीं है ।

[26]*(4) इस अनुच्छेद की कोई बात अनुच्छेद 368 के अधीन किए गए इस संविधान के किसी संशोधन को लागू नहीं होगी ।*

खंड (1) : विद्यमान विधियां जो संविधान से असंगत हैं — इस खंड में यह उपबंध है कि संविधान के प्रारंभ पर प्रवृत्त सभी विधियां जो संविधान के भाग 3 में प्रवृत्त मूल अधिकारों के प्रयोग में अवरोध पहुंचाती हैं, उस विस्तार तक शून्य होंगी ।[27] किंतु इसके कारण मूल अधिकारों से असंगत विद्यमान विधियां प्रारंभ से ही शून्य नहीं हो जातीं । संविधान का समस्त भाग 3 जिसमें अनुच्छेद 13(1) भी है, भविष्यलक्षी है । इसलिए विद्यमान विधियां,

21. *देवदास* बनाम *के.ई. कालेज*, ए. 1964 राज. 6 (*11*) ।

22. *नरेश* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1 (*11*); *परभानी टी.सी.एस.* बनाम *आर.टी.ए.*, ए. 1960 एस.सी. 801 ।

23. तुलना कीजिए, *शामदासानी* बनाम *सेंट्रल बैंक आफ इंडिया*, (1952) एस.सी.आर. 391 (*394*) ।

24. *रामाराव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 564 (*570*) ।

25. *अग्रवाल* बनाम *हिंदुस्तान स्टील*, ए. 1970 एस.सी. 1150 ।

26. खंड (4), संविधान (24वां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा 5-11-1971 से अंतःस्थापित किया गया था । इसका उद्देश्य *गोलकनाथ* बनाम *पंजाब राज्य* में बहुमत की ओर से दिए गए मुख्य न्या. सुब्बाराव के निर्णय को उलटना था । इस निर्णय में यह कहा गया था कि अनुच्छेद 368 के अनुसार पारित संविधान संशोधन अधिनियम अनुच्छेद 13 के अर्थान्तर्गत 'विधि' है और इसलिए यदि वह मूल अधिकार का उल्लंघन करती है तो शून्य होगी । पूर्ण न्यायपीठ ने *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 में इस संशोधन की विधिमान्यता की पुष्टि की ।

27. *केशवन* बनाम *मुंबई राज्य*, (1951) एस.सी.आर. 228 ।

जो भाग 3 के उपबंधों से असंगत हैं, संविधान के प्रारंभ से ही शून्य होंगी । संविधान ने ही पहली बार मूल अधिकारों का सृजन किया है ।[28-29]

इसका यह अर्थ नहीं है कि यदि संविधान के पूर्व के किसी अधिनियम में कोई असांविधानिक प्रक्रिया अधिकथित है तो लंबित कार्यवाहियों की बाबत या संविधान के पूर्व के अधिकारों या दायित्वों की बाबत संस्थित नई कार्यवाहियों के संबंध में उस प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा । संविधान की तारीख के पहले अर्जित या उद्भूत अधिष्ठायी अधिकार और दायित्व प्रवर्तनीय बने रहते हैं, किंतु कोई व्यक्ति यह दावा नहीं कर सकता कि उस तारीख के पश्चात् उन अधिकारों या दायित्वों को उस विशिष्ट प्रक्रिया के अनुसार प्रवृत्त किया जाए, जो उस तारीख के पश्चात् संविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारों के विरुद्ध है, जैसे अनुच्छेद 14 द्वारा प्रत्याभूत समान संरक्षण के अधिकार के विरुद्ध होना ।[30]

जहां संविधान के पूर्व के किसी आदेश द्वारा कोई अधिकार छीना गया है तो यह स्थिति तो अनुदिन बनी रहेगी । इसलिए संविधान के प्रवृत्त होते ही वह आदेश शून्य हो जाएगा क्योंकि वह मूल अधिकार का उल्लंघन करता है ।[31] जहां कोई संविधि जो संविधान के पूर्व की है, संविधान के प्रारंभ के पश्चात् प्रवृत्त की जाती है तो संविधान के पूर्व की संविधि की विधिमान्यता पर आक्षेप किए बिना ही कार्यपालिका की कार्यवाही की विधिमान्यता पर आक्षेप किया जा सकता है ।[32]

खंड (2) : संविधान के पश्चात् की जो विधियां असंगत हैं वे आरंभ से ही शून्य होंगी — इस खंड में यह उपबंध है कि संविधान के प्रारंभ के पश्चात् किसी विधान मंडल या अन्य अधिकारी द्वारा बनाई गई विधि जो संविधान के भाग 3 में सम्मिलित मूल अधिकारों में से किसी का उल्लंघन करती है, उस विस्तार तक जहां तक वह उल्लंघन करती है, शून्य होगी । खंड (1) और खंड (2) में यह भेद है कि खंड (2) असंगत विधियों को आरंभ से ही शून्य बना देता है । ऐसी असांविधानिक विधियों के अधीन की गई दोषसिद्धियां भी अपास्त की जाएंगी । असांविधानिक विधि के अधीन की गई कोई बात चाहे समाप्त हो गई हो, पूर्ण हो गई हो या अपूर्ण हो, पूर्णतः अवैध होगी और ऐसी असांविधानिक विधि से प्रभावित व्यक्ति को किसी न किसी रूप में अनुतोष दिया जाना चाहिए ।[33]

'असंगतता या उल्लंघन की मात्रा तक' — न्यायालय प्रश्नगत विधि के केवल विरोधी उपबंध को ही शून्य मानेंगे संपूर्ण अधिनियम को नहीं । यह कथन पृथक्करण के सिद्धांत के अधीन है । संक्षेप में, पृथक्करण का सिद्धांत यह है कि जब किसी अधिनियम का कोई विशेष उपबंध किसी सांविधानिक मर्यादा का उल्लंघन करता है किंतु वह उपबंध (अर्थात् वह धारा या खंड) संपूर्ण अधिनियम से पृथक् किया जा सकता है तो न्यायालय केवल उसी उपबंध को शून्य घोषित करेगा समग्र अधिनियम को नहीं ।[34] पृथक्करणीयता का परीक्षण यह है —

"क्या जिस भाग को अविधिमान्य घोषित किया गया है वह शेष भाग से इस प्रकार बंधा हुआ है

28. *नाभिराजय्या* बनाम *मैसूर राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 744 ।

29. *पन्नालाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी. 397 (*412*); *रवीन्द्र* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 470 (*479*) ।

30. *लछमनदास* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1952 एस.सी. 235 (*245*), न्या. दास ।

31. *शांतिस्वरूप* बनाम *भारत संघ*, ए. 1955 एस.सी. 624 ।

32. तुलना कीजिए, *जिला परिषद्* बनाम *के.एस. मिल्स*, ए. 1968 एस.सी. 98 (*100*) ।

33. *दीपचंद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 648; *महेन्द्र* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1019 ।

34. *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए. 1952 एस.सी. 252 (*277*); *जालान ट्रेडिंग कंपनी* बनाम *मिल मजदूर सभा*, ए. 1967 एस.सी. 691 (*711*) ।

कि उसे पृथक् करने पर शेष भाग स्वतंत्र रूप से विद्यमान नहीं रह सकता । *या संपूर्ण विषय पर समग्र दृष्टि से विचार करने पर यह उपधारणा की जा सकती है कि विधान मंडल उस भाग को जो बचा हुआ है, अवैध घोषित भाग के साथ ही अधिनियमित करता उसके बिना नहीं* ।"[34]

इसके विपरीत, यदि एक ही उपबंध है (एक-दूसरे से जुड़े अनेक उपबंध नहीं हैं) और वह वैध और अवैध दोनों उद्देश्यों को लागू होता है जिन्हें उस उपबंध की भाषा में परिवर्तन किए बिना पृथक् नहीं किया जा सकता है (यह कार्य न्यायालय की अधिकारिता के बाहर होता है) तथा उसका उपयोग वैध और अवैध दोनों ही प्रयोजनों के लिए किया जा सकता है तो वह उपबंध अविधिमान्य होगा । वैध प्रयोजनों के लिए भी उसका उपयोग नहीं किया जा सकता ।[35]

अनुच्छेद 13 के अपवाद – 1. कोई भी निष्पक्ष समीक्षक यह अवश्य कहेगा कि भारत के संविधान के निर्माताओं ने[36] जिन सिद्धांतों के आधार पर व्यष्टि के न्यूनतम अधिकारों को मूल अधिकारों के रूप में प्रत्याभूत किया था और जो विधान मंडल की शक्तियों पर मर्यादाओं के रूप में थे उन्हें संविधान के प्रारंभ के दूसरे वर्ष से ही लगातार संशोधन करके क्षीण कर दिया गया है ।

2. मूल अधिकारों का यह क्रमिक अवमूल्यन कई प्रकार से हुआ है –

(क) यह उपबंध करके कि अनुच्छेद 13 की कोई बात विनिर्दिष्ट प्रवर्ग की विधियों को इस आधार पर अविधिमान्य नहीं करेगी कि वे सभी या किन्हीं विशिष्ट मूल अधिकारों से असंगत हैं, अर्थात् :

(i) अनुच्छेद 31क जिसे 1951 में अंतःस्थापित किया गया और 1955 तथा 1964 में परिवर्धित किया गया ।

(ii) अनुच्छेद 31ख जिसे 1951 में अंतःस्थापित किया गया । इसे नवीं अनुसूची के साथ पढ़ा जाता है । इसमें 1955, 1964, 1974, 1975, 1976, 1989 और 1990 में परिवर्धन किए गए जिससे कुल 257 अधिनियम आक्षेप की परिधि से बाहर कर दिए गए ।

(iii) अनुच्छेद 31ग जिसे 1971 में अंतःस्थापित किया गया और 1976 में परिवर्धित किया गया ।

(iv) 1976 में (42वें संशोधन द्वारा) अनुच्छेद 31घ अंतःस्थापित किया गया । इसका प्रयोजन उन विधियों को संरक्षण प्रदान करना था जो (क) राष्ट्र विरोधी गतिविधियों, (ख) राष्ट्र विरोधी संगमों की रचना या ऐसे संगमों के दमन के लिए बनाई जाएं । [अनुच्छेद 31घ को संविधान (43वां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा निरसित कर दिया गया ।]

(ख) अनुच्छेद 31ग का परिवर्धन करके (42वें संशोधन द्वारा) यह उपबंध करके कि भाग 4 के किसी निदेश[37] को प्रभावी करने के लिए बनाई गई विधि इस आधार पर असांविधानिक नहीं होगी कि वह अनुच्छेद 14, 19 और 31 का उल्लंघन करती है । इसके साथ ही निदेशों की सूची भी बढ़ा दी गई । 42वें संशोधन द्वारा अनुच्छेद 39(च) का प्रतिस्थापन किया गया और अनुच्छेद 39क, 43क, 48क जोड़े गए ।

(ग) संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 19(1)(च) और अनुच्छेद 31 का निरसन किया गया ।

(घ) भाग 4क (अनुच्छेद 51क) अंतःस्थापित करके नागरिकों के दस कर्तव्यों को

35. *अधीक्षक* बनाम *राम मनोहर*, ए. 1960 एस.सी. 633 (*642*); *रमेश थापर* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.जे. 418 (*424*); *केसबुक (I)*, पृष्ठ 184 ।

36. आगे देखिए, दुर्गादास बसु की पुस्तक "*टैगोर ला लैक्चर्स आन लिमिटेड गवर्नमेंट एंड जुडिशियल रिव्यू*", पृष्ठ 161-62 ।

37. भाग 4 के सभी निदेशों को अनुच्छेद 31ग का संरक्षण प्रदान करने का जो प्रयास किया गया था उसे *मिनर्वा मिल्स* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1789 में उच्चतम न्यायालय ने बहुमत से विफल कर दिया । फलस्वरूप अनुच्छेद 31ग अब 1976 के पूर्व की स्थिति में आ गया है । अर्थात् उन्हीं विधियों को उन्मुक्ति है जो अनुच्छेद 39(ख) और (ग) को प्रभावी करने के लिए हैं [देखिए आगे अनुच्छेद 31ग] ।

उनका मूल कर्तव्य घोषित किया गया जिससे न्यायालय मूल अधिकारों का अर्थ लगाते समय मूल कर्तव्यों से समन्वय रखे [देखिए आगे अनुच्छेद 31क-31ग और 51क] ।

किसी विधि को अविधिमान्य घोषित करने की न्यायालय की शक्ति और कर्तव्य — प्रक्रिया संबंधी उपबंधों के अधीन रहते हुए हमारा संविधान न्यायालयों को अभिव्यक्त रूप से न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्रदान करता है । इस अनुच्छेद ने मूल अधिकारों के संबंध में न्यायालय को सजग प्रहरी की भूमिका दी है । न्यायालय, विधान मंडल के विवेक को बहुत सम्मान देते हैं किंतु आक्षेपित अधिनियम की सांविधानिकता का अंतिम रूप से अवधारण करने के अपने कर्तव्य का त्याग नही कर सकते ।[38]

जब एक बार उच्चतम न्यायालय का प्रथमदृष्ट्या यह समाधान हो जाता है कि उसके समक्ष याची का कोई मूल अधिकार है जिसका राज्य की कार्यवाही से हनन हुआ है या होने वाला है तो हस्तक्षेप करना उसका कर्तव्य हो जाता है । मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए उच्चतम न्यायालय में समावेदन करने का अधिकार भी प्रत्याभूत अधिकार है । न्यायालय इस आधार पर याचिका को टाल नहीं सकता कि उचित रिट की मांग नहीं की गई है या याची को आनुकल्पिक अनुतोष मिल सकता है ।[38]

न्यायालय किसी विधि की सांविधानिकता का प्रश्न कब अवधारित करेगा ? — यदि न्यायालय के समक्ष प्रकरण को किसी अन्य आधार पर निपटाया जा सकता है और पक्षकारों के अधिकार अवधारित किए जा सकते हैं तो न्यायालय विधि की सांविधानिकता के प्रश्न पर विचार नहीं करेगा । उच्च न्यायालय अपने समक्ष अन्य विवाद्यकों पर पहले विचार करेगा और तब आवश्यकता हुई तो उस मामले में अंतर्वलित अधिनियम की विधिमान्यता पर विचार करेगा ।[39-40]

असांविधानिकता का परीक्षण — किसी अधिनियम की सांविधानिकता के प्रश्न का अवधारण करने में न्यायालय इस बात पर ही ध्यान देगा कि विधान मंडल उसे बनाने के लिए सक्षम था या नहीं, विधान मंडल के विवेक या हेतु पर नहीं ।[41] न्यायालय का कर्तव्य संविधान के सुसंगत उपबंधों के प्रकाश में अधिनियम के उपबंधों की परीक्षा करना है (जैसे भाग 3) । इस पर ध्यान नहीं दिया जाता है कि वे किस प्रकार प्रशासित किए जा रहे हैं या किए जा सकते हैं ।

(क) अधिनियम के दुरुपयोग की संभावना के कारण ही वह अविधिमान्य नहीं हो जाता ।[42]

(ख) इसके विपरीत, यदि कोई कानून संविधान का उल्लंघन करता है तो उसे केवल इस आधार पर विधिमान्य नहीं किया जा सकता कि उसे इस प्रकार प्रशासित किया जा रहा है जिससे सांविधानिक अपेक्षाओं से संघर्ष न हो ।[42]

(ग) जब किसी विधि की सांविधानिकता पर इस आधार पर आक्षेप किया जाता है कि वह मूल अधिकार का अतिलंघन करती है तो न्यायालय ऐसी विधि के प्रत्यक्ष और अवश्यंभावी प्रभाव पर ही विचार करेगा ।[43]

---

38. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 725 (*730*); *मद्रास राज्य* बनाम *राव*, (1952) एस.सी.आर. 597 (*605*); *देवीलाल* बनाम *एस.टी.ओ.*, ए. 1965 एस.सी. 1150 (*1152*) ।

39. *बिहार राज्य* बनाम *हरवंस मिल्स*, ए. 1960 एस.सी. 378 ।

40. *सगीर अहमद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 728 (*742*) ।

41. *स्वरूप सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 860 (*894*); *रहमान* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1 (*6*); *नागराज* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1985 एस.सी. 551 (पैरा 31) ।

42. *सीमाशुल्क कलक्टर* बनाम *संपत्तु*, ए. 1962 एस.सी. 316 (*332*) ।

43. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 (पैरा 66); *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 578; *कूपर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 564 ।

सांविधानिकता की उपधारणा — सदैव यही उपधारणा होती है कि प्रत्येक अधिनियम सांविधानिक है । जो व्यक्ति आक्षेप करता है उस पर यह भार होता है कि वह दिखाए कि सांविधानिक सिद्धांतों का स्पष्ट अतिक्रमण हुआ है ।[44] सांविधानिक अविधिमान्यता के लिए अपेक्षित सभी तथ्यों को साबित करने का भार उस व्यक्ति पर होता है जो सांविधानिकता पर आक्षेप करता है ।[44] इस उपधारणा के कारण, आक्षेपित विधि की विधिमान्यता पर विचार करते समय न्यायालय प्रत्यर्थी के अभिवचनों की सीमा में बंधा नहीं रहेगा । न्यायालय अपना यह समाधान करने के लिए स्वतंत्र है कि उस विधि को संविधान के किसी अन्य उपबंध के आधार पर वैध ठहराया जा सकता है ।[45]

विधि की सांविधानिकता पर कौन आक्षेप कर सकता है? — (i) विधि की सांविधानिकता का प्रश्न वही उठा सकता है जिसके अधिकारों पर विधि का सीधा प्रभाव पड़ता है ।[46] यदि वह उस वर्ग में नहीं आता जिसे उस कानून से क्षति पहुंचती है तो उसे परिवाद का अधिकार नहीं है ।[47]

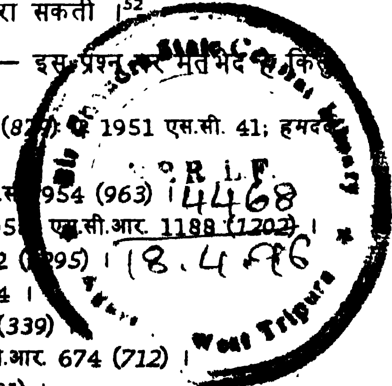
(ii) वह व्यक्ति जिसे स्वयं कोई मूल अधिकार नहीं मिला है इस आधार पर किसी विधि की विधिमान्यता पर आक्षेप नहीं कर सकता है कि वह मूल अधिकार से असंगत है ।[48]

(iii) यदि कोई अधिनियम संविदा के आधार पर प्रवृत्त होता है तो संविदा का कोई भी पक्षकार अधिनियम की विधिमान्यता पर आक्षेप कर सकता है ।[49]

(iv) कानून की विधिमान्यता पर आक्षेप करने वाला व्यक्ति यह बताएगा कि उस कानून के प्रवर्तन के परिणामस्वरूप उसे कोई प्रत्यक्ष क्षति हुई है या क्षति होने की आसन्न आशंका है तथा क्षति ऐसी है जिसका न्यायालय से निर्णय हो सकता है ।[50] ऐसे भी प्रकरण हो सकते हैं जिनमें अधिनियम के प्रवृत्त होने मात्र से व्यक्ति के मूल अधिकार के प्रयोग पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । जहां कोई अधिनियम प्रवृत्त होते ही व्यक्ति के मूल अधिकारों का हनन करता है या उन्हें क्षीण करता है वहां व्यथित व्यक्ति तुरंत न्यायालय जा सकता है । उसे इस बात की प्रतीक्षा करने की आवश्यकता नहीं कि राज्य कोई ऐसी कार्यवाही करे जिससे मूल अधिकारों के अतिलंघन का खतरा उत्पन्न हो ।[51]

(v) निगम का अस्तित्व अपने अंशधारकों से भिन्न है । इसलिए निगम स्वयं किसी कानून की विधिमान्यता पर आक्षेप कर सकेगी या अंशधारक ऐसा कर सकेंगे यह इस प्रश्न पर आधारित होगा कि आक्षेपित अधिनियम से किसके अधिकारों पर प्रभाव पड़ रहा है, निगम के या अंशधारकों के ।[44] यह भी हो सकता है कि कोई अधिनियम जो कंपनी के अधिकारों का अतिलंघन करता है, वह अंशधारकों के हितों को भी प्रभावित करता हो । ऐसा होने पर अंशधारक उस अधिनियम की सांविधानिकता पर आक्षेप कर सकते हैं[44, 52] चाहे कंपनी को याचिका में सहयाची के रूप में संयुक्त किया गया हो । कंपनी नागरिक नहीं होती इसलिए वह मूल अधिकार का प्रवर्तन नहीं करा सकती ।[52]

क्या मूल अधिकार का अधित्यजन किया जा सकता है? — इस प्रश्न पर मतभेद है किंतु



---

44. *चिरंजीतलाल* बनाम *भारत संघ*, (1950) एस.सी.आर. 869 (879): ए. 1951 एस.सी. 41; *हमदर्द दवाखाना* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी. 554 (*561*) ।
45. *बाराकार कोयला कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1961 एस.सी. 954 (*963*) ।
46. तुलना कीजिए, *राव बहादुर* बनाम *विंध्य प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1188 (*1202*) ।
47. *हंस मुल्लर* बनाम *अधीक्षक*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1282 (*1295*) ।
48. *नाभिराजय्या* बनाम *मैसूर राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 744 ।
49. *बाम्बे डाईंग* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 328 (*339*) ।
50. *द्वारकादास* बनाम *शोलापुर स्पिनिंग कंपनी*, (1954) एस.सी.आर. 674 (*712*) ।
51. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 725 (*731*) ।
52. *बैनेट कोलमैन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1973 एस.सी. 106 (*115*): केसबुक (*I*), पृष्ठ 249 ।

इस विषय पर सभी एकमत हैं कि मूल अधिकार राज्य को संबोधित निषेध हैं जिन्हें लोकनीति के आधार पर संविधान में रखा गया है । इनमें से किसी का भी कोई भी व्यक्ति अधित्यजन नहीं कर सकता । यद्यपि वे व्यक्ति के ही लाभ के लिए बनाए गए हैं ।[53]

विधि को असांविधानिक घोषित करने का परिणाम — हमारे संविधान का अनुच्छेद 141 यह घोषित करता है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर सभी न्यायालयों पर आबद्धकर होगी । इसलिए जब उच्चतम न्यायालय किसी विधि को असांविधानिक घोषित करता है तो यह विनिश्चय भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर सभी न्यायालयों पर आबद्धकर हो जाता है । इसका वास्तविक प्रभाव यह होता है कि उसके पश्चात् जो लोग भारत में किसी न्यायालय में अनुतोष पाने के लिए आते हैं उनके लिए वह सर्वबंधी निर्णय होता है । पश्चात्वर्ती कार्यवाही में यह आवश्यक नहीं होगा कि असांविधानिक विधि से प्रभावित व्यक्ति उसकी असांविधानिकता फिर से साबित करे । न्यायालय इस बात के लिए बाध्य है कि वह उच्चतम न्यायालय द्वारा अविधिमान्य घोषित विधि की अवहेलना करे मानो वह कभी विद्यमान थी ही नहीं ।

यह सिद्धांत वहां भी लागू होता है जहां कोई विधि भागतः असांविधानिक घोषित की गई है (उदाहरणार्थ, जहां किसी धारा का कोई भाग अविधिमान्य घोषित किया गया है) । उपर्युक्त सिद्धांतों को लागू करने में, विधायी अक्षमता के आधार पर अविधिमान्य घोषित विधि के मामले में और मूल अधिकार के उल्लंघन के आधार पर अविधिमान्य घोषित विधि के मामले में कोई अंतर नहीं किया जा सकता ।[54] हमारे संविधान के अनुच्छेद 245(1) में यह विशेष रूप से अधिकथित है कि सभी विधायी शक्ति, चाहे संघ की हो या राज्य की, संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन है । इसका परिणाम यह है कि जब कोई विधान मंडल किसी मूल अधिकार का उल्लंघन करने वाली कोई विधि बनाता है तो स्थिति ठीक वैसी ही होती है मानो उसे विधान के विषय पर विधि बनाने की शक्ति हो ही नहीं । दोनों प्रकार के मामलों में जब उच्चतम न्यायालय किसी विधि को अविधिमान्य घोषित करता है तो इसका अर्थ विधायी शक्ति का अभाव ही होता है ।[54-55]

विधि के असांविधानिक घोषित कर दिए जाने पर विधान मंडल की शक्ति — जब कोई न्यायालय किसी कानून को अविधिमान्य घोषित कर देता है तो विधान मंडल उस विनिश्चय का सीधे-सीधे अध्यारोहण नहीं कर सकता और यह उद्घोषित नहीं कर सकता कि कानून विधिमान्य होगा और उसके अधीन की गई कोई बात निर्णय की तारीख को विधिमान्य होगी । विधान मंडल ऐसी नवीन विधि बना सकता है जो असांविधानिकता के दोष से मुक्त हो और यह उपबंध कर सकता है कि आक्षेपित विधि के अधीन की गई कोई बात नई विधि के अधीन की गई समझी जाएगी और उसके उपबंधों के अधीन होगी ।[55-56]

खंड (3)(क) : 'विधि' — 1. इस अनुच्छेद में विधि से अभिप्रेत है विधान मंडल द्वारा निर्मित विधि और इसके अंतर्गत शक्ति की सीमा के भीतर बनाए गए कानूनी आदेश हैं,[57]

---

53. *बहराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 128 (मुख्य न्या. महाजन, न्या. मुखर्जी, बोस और हसन); *बशेसर* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1959 एस.सी. 149 (न्या. भगवती और सुब्बाराव) ।

54. *दीपचंद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 648; *महेन्द्रा* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1019 ।

55. *सदाशिव* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1956) एस.सी.आर. 43 ।

56. *पृथ्वी काटन मिल्स* बनाम *बड़ौच नगरपालिका*, (1969) 2 एस.सी.सी. 283 (*285*) ।

57. *बीड़ी सप्लाई कंपनी* बनाम *भारत संघ*, (1956) एस.सी.आर. 267 (*277*); *एडवर्ड मिल्स* बनाम *अजमेर राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 735 ।

कानूनी नियमों द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में दिए गए आदेश हैं,[58] किंतु वे प्रशासनिक आदेश नहीं है जिनका कानूनी आधार नहीं है ।[59] कानूनी स्कीम भी 'विधि' है ।[60]

2. इसका यह अर्थ नहीं है कि मूल अधिकार की अवहेलना करने वाला प्रशासनिक आदेश इस कारण विधिमान्य रहेगा कि वह अनुच्छेद 13(3) के अर्थान्तर्गत 'विधि' नहीं है ।[58]

3. इसी प्रकार विधि का बल रखने वाली रूढ़ि भी 'विधि' है ।[61]

4. इस परिभाषा के अनुसार यदि कोई अधिनियम संविधान का उल्लंघन नहीं करता है तो भी उसके अधीन बनाए गए नियम, आदेश या अधिसूचना इस कारण अविधिमान्य हो सकते हैं कि वे मूल अधिकारों का उल्लंघन करते हैं ।[57, 62] ऐसा उस दशा में भी हो सकता है जहां अधिनियम की विधिमान्यता पर आक्षेप नहीं किया जाता है,[62] या अधिनियम को अनुच्छेद 31ख जैसे किसी सांविधानिक उपबंध का संरक्षण प्राप्त है ।[63] संक्षेप में हमारे संविधान में 'आनुवंशिक उन्मुक्ति' नहीं है ।[63]

कोई भी विधि अनुच्छेद 13(2) से अपवर्जित नहीं है — अब यह सुस्थिर है कि अनुच्छेद 245-246 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के आधार पर संसद् या राज्य विधान मंडल द्वारा पारित विधि (संविधान में वर्णित अपवादों को छोड़कर) अनुच्छेद 13 के अधीन होती है । इसमें ये सभी आ जाते हैं, —

(i) कराधान अधिनियम,[64]

(ii) ऐसी विधि जिसके बनाने के लिए संविधान के किसी विनिर्दिष्ट अनुच्छेद में उपबंध किया गया है, उदाहरणार्थ अनुच्छेद 105(3),[65] 194(3) ।[65]

उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जब संविधान के अनुच्छेद 245-246 से भिन्न किसी विनिर्दिष्ट अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में कोई विधि बनाई जाती है तो यह अर्थान्वयन नहीं किया जाना चाहिए कि यह विधि अनुच्छेद 13(2) में सम्मिलित है क्योंकि ऐसा करने पर संविधान का वह स्वतंत्र उपबंध जो अनुच्छेद 13 के समान स्तर का है निष्प्रभावी हो जाएगा ।[66] इस तर्क के आधार पर न्यायालय ने अनुच्छेद 358-359 के अधीन आपात की उद्घोषणा को मूल अधिकारों की परिधि से बाहर कर दिया[66] और अपने एक पूर्ववर्ती विनिश्चय को उलट दिया ।[67] 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 352(5), 356(5), 360(5) के अंतःस्थापन से इस स्थिति को बल प्राप्त हुआ, किंतु 44वें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अंतिमता प्रदान करने वाले इन खंडों का लोप कर दिया गया है (देखिए आगे) ।

(iii) *शंकरी प्रसाद* बनाम *भारत संघ*[68] और *सज्जन सिंह* बनाम *राजस्थान*[69] में उच्चतम

---

58. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *मंडावर*, (1954) एस.सी.आर. 599 (*604*) ।
59. *द्वारकानाथ* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 249 (*253*) ।
60. *नारायणप्पा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1073 (*1079*) ।
61. *भाऊ राम* बनाम *बैजनाथ*, ए. 1962 एस.सी. 1476 ।
62. *रामकृष्ण* बनाम *तेंदुलकर*, ए. 1958 एस.सी. 538; *मधुभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1961 एस.सी. 21 (*25*) ।
63. *प्राग आईस मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एस.सी. 1296 (पैरा 44-45)—5:2 का बहुमत ।
64. *हरिकृष्ण* बनाम *भारत संघ*, ए. 1966 एस.सी. 619 (*623*) ।
65. संविधान के अनुच्छेद 148 के अधीन निर्देश, ए. 1965 एस.सी. 745 (*761*) ।
66. *याकूब* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 765 ।
67. *गुलाम सरवर* बनाम *भारत संघ*, (1967) 2 एस.सी.आर. 271 ।
68. *शंकरी प्रसाद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1951 एस.सी. 458 ।
69. *सज्जन सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 845 ।

न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में पारित संशोधन अधिनियम अनुच्छेद 13(2) के अर्थान्तर्गत 'विधि' नहीं है । किंतु *गोलकनाथ*[70] में बहुमत ने इस मत को अस्वीकार कर दिया ।[70]

गोलकनाथ में[70] बहुसंख्यक न्यायाधीशों के मत को संविधान (24वां संशोधन) अधिनियम, 1971 के अनुच्छेद 13 में खंड (4) अंतःस्थापित करके और अनुच्छेद 368 में खंड (1) अंतःस्थापित करके अतिष्ठित कर दिया है । इसके परिणामस्वरूप अनुच्छेद 368 के अनुसार पारित संविधान का संशोधन अनुच्छेद 13 के अर्थान्तर्गत 'विधि' नहीं होगा और संविधान संशोधन अधिनियम की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जा सकेगी कि वह मूल अधिकार को छीनता है या प्रभावित करता है । इस संशोधन को विधिमान्य ठहराया गया है और *गोलकनाथ* के विनिश्चय को उच्चतम न्यायालय की पूर्ण पीठ ने *केशवानंद* के वाद में उलट दिया है।[71]

समता का अधिकार

14. **राज्य, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा ।**

विधि के समक्ष समता ।

समान संरक्षण का क्या अर्थ है — (i) समानता के सिद्धांत का यह अर्थ नहीं है कि सभी विधियां सभी को लागू हों[1] उन्हें भी जो प्रकृति, गुण या परिस्थितियों से एक सी स्थिति में नहीं हैं । विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों की विभिन्न आवश्यकताओं के अनुसार उनके साथ पृथक् व्यवहार की अपेक्षा होती है ।

(ii) यह सिद्धांत राज्य को विधिमान्य प्रयोजनों के लिए व्यक्तियों के वर्गीकरण की शक्ति से वंचित नहीं करता है ।[2]

(iii) प्रत्येक वर्गीकरण से किसी सीमा तक असमानता उत्पन्न होती है किंतु असमानता का उत्पन्न होना अपने आप में कोई दोष नहीं है ।[2]

(iv) यदि कोई विधि एक सुनिश्चित वर्ग के सदस्यों से समान व्यवहार करती है, और अनुचित नहीं है तो उसके विरुद्ध समान संरक्षण से वंचित करने का आरोप इस आधार पर नहीं लगाया जा सकता कि वह अन्य व्यक्तियों को लागू नहीं होती है ।[2]

(v) युक्तियुक्त वर्गीकरण किया जा सकता है । ऐसा वर्गीकरण वास्तविक और पर्याप्त विभेद पर आधारित होना चाहिए और अधिनियम के उद्देश्य से उसका युक्तियुक्त और उचित संबंध होना चाहिए । वर्गीकरण मनमाना या बिना पर्याप्त आधार के नहीं हो सकता ।[2]

(vi) समानता की प्रत्याभूति अधिकारों के लिए भी है और विशेषाधिकारों के लिए भी ।[3]

वर्गीकरण के युक्तियुक्त होने की उपधारणा — (i) सदैव यही उपधारणा की जाती है कि प्रत्येक अधिनियम सांविधानिक है । यह माना जाता है कि विधान मंडल जनता की आवश्यकता को समझता है और उसका सही अधिमूल्यन करता है । वह जो विधि बनाता

70. *गोलकनाथ* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1643 (*1659, 1670, 1718*) ।

71. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 (पैरा 759, 850, 1574, 1582, 1595, 1840, 1916, 2079) ।

1. *केदार नाथ* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1953 एस.सी. 404 (*406*) ।

2. *चिरंजीत लाल* बनाम *भारत संघ*, (1950) एस.सी.आर. 869; *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, (1951) एस.सी.आर. 682 (*708-09*) ।

3. *रामन* बनाम *आई.ए.ए.*, ए. 1979 एस.सी. 1628 (पैरा 11); *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *नंदलाल*, ए. 1987 एस.सी. 251 (पैरा 32-33) ।

है वे अनुभव से प्रकट होने वाली समस्याओं के प्रति उन्मुख होती है और उनमें विभेद के लिए पर्याप्त आधार होता है ।[4]

(ii) कुछ मामलों में यह उपधारणा यह दर्शा कर विखंडित की जा सकती है कि कानून में कोई वर्गीकरण है ही नहीं और किसी व्यक्ति या वर्ग में कोई ऐसा विशिष्ट गुण नहीं है जो किसी अन्य व्यक्तित्व या वर्ग में नहीं है और वह विधि एक विशेष व्यक्ति या वर्ग के हितों के विरुद्ध है ।[4]

(iii) यह सत्य है कि सदैव यह उपधारणा होनी चाहिए कि विधान मंडल जनता की आवश्यकता को समझता है और उसका सही मूल्यांकन करता है और उसके द्वारा किए विभेदों का पर्याप्त आधार होता है । किंतु यह उपधारणा इस सीमा तक नहीं ले जाती कि सदैव यह मान लिया जाए कि कुछ व्यक्तियों या निगमों को प्रतिकूल और विभेदात्मक विधान के अधीन करने के लिए अदृश्य और अज्ञात कारण हैं । यदि ऐसा किया गया तो यह संरक्षण एक छायामात्र हो जाएगी जो राज्य की कार्यवाही को रोक नहीं सकेगी । यदि विभेद के लिए उचित हेतुक विधि में ही नहीं बता दिया जाता तो कानून को असांविधानिक घोषित करना होगा । "उचित हेतुक" एक वस्तुपरक तत्व है जिसका विधान के उद्देश्य से वास्तविक और पर्याप्त संबंध होना चाहिए । कानून में उस वर्गीकरण के लिए माप या मानदंड होना चाहिए । विधि को किस प्रकार लागू करना है यह कार्यपालिका के विवेक पर नहीं छोड़ा जा सकता ।[5] किंतु कानून में प्रथम दृष्ट्या यह दिखलाई पड़ता है कि विधान मंडल ने वर्गीकरण करने का कोई प्रयास नहीं किया है और एक विशिष्ट व्यक्ति या वर्ग को जिस व्यक्ति या वर्ग का कोई विशेष गुण नहीं है चुनकर उनके लिए विधि बनाई है तो विधान मंडल के पक्ष में युक्तियुक्तता की जो उपधारणा है वह तुरंत विखंडित हो जाती है और जो व्यक्ति अधिनियम पर आक्षेप कर रहा है उससे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह अपने भार के निर्वहन के लिए अतिरिक्त या बाह्य साक्ष्य प्रस्तुत करे ।[6]

सबूत का भार और अभिवचन — यह साबित करने का भार कि वर्गीकरण मनमाने और अयुक्तियुक्त आधार पर किया गया है उस व्यक्ति पर होता है जो विधि पर यह कहते हुए आक्षेप करता है कि वह समान संरक्षण की प्रत्याभूति का उल्लंघन करता है ।[7] यदि युक्तियुक्त रूप से ऐसे तथ्यों की संकल्पना की जा सकती है जिनसे वर्गीकरण उचित ठहराया जा सकता है तो विधि के अधिनियमित किए जाने के समय उन तथ्यों की विधिमान्यता की उपधारणा की जाएगी ।[8] याची को यह दर्शित करना होगा कि विधान मंडल ने जिन व्यक्तियों या उद्देश्यों के बीच विभेद किया है उनकी स्थिति समान है ।[9]

कौन सा वर्गीकरण युक्तियुक्त है — अनुच्छेद 14 वर्ग विधायन का प्रतिषेध करता है, विधान के प्रयोजन के लिए युक्तियुक्त वर्गीकरण का नहीं ।[10] यदि विधान मंडल सावधानी बरतते हुए विधायी प्रयोजनों के लिए व्यक्तियों का युक्तियुक्त वर्गीकरण करता है और यदि

4. *प्रभुदास* बनाम *भारत संघ*, ए. 1966 एस.सी. 1044; *रामकृष्ण* बनाम *तेंदुलकर*, ए. 1958 एस.सी. 538: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 109 ।

5. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *अनवर अली*, (1952) एस.सी.आर. 284 (*335*); *रामप्रसाद* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 215 (*220*) ।

6. *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, (1951) एस.सी.आर. 682 (*708*); *राजस्थान राज्य* बनाम *मनोहर*, (1954) एस.सी.आर. 996 ।

7. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *करतार सिंह*, ए. 1964 एस.सी. 1135 ।

8. *हरनाम सिंह* बनाम *आर.टी.ए.*, ए. 1954 एस.सी. 190 ।

9. *श्रीकिशन* बनाम *राजस्थान राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 531; *उत्तर प्रदेश इलैक्ट्रिक कंपनी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 21 (*24*) ।

10. *बुधन* बनाम *बिहार राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1045 (*1049*) ।

ऐसे अभिनिश्चित वर्ग के सभी व्यक्तियों से समान रूप से व्यवहार करता है तो उस पर इस आधार पर समान संरक्षण से वंचित करने का आरोप नहीं लगाया जा सकता कि वह विधि अन्य व्यक्तियों को लागू नहीं होती ।[11]

अनुज्ञेय वर्गीकरण के परीक्षण में सफल होने के लिए दो शर्तें पूरी होनी चाहिए, अर्थात् — (i) वर्गीकरण बोधगम्य भिन्नता पर आधारित होना चाहिए जिसमें एक समूह में रखे गए व्यक्तियों या वस्तुओं की उस समूह से बाहर वाले व्यक्तियों से भिन्नता है, और (ii) विभेद के आधार का प्रश्नगत अधिनियम के उद्देश्य से तर्कसंगत संबंध होना चाहिए ।[10-12] यह आवश्यक है कि वर्गीकरण के आधार और विचाराधीन अधिनियम के उद्देश्य में निकट का संबंध हो ।[10-11]

(क) अनुच्छेद 14 में इस बात पर बल नहीं दिया गया है कि विधायी वर्गीकरण वैज्ञानिक रूप से संपूर्ण या तार्किक दृष्टि से पूर्ण होना चाहिए ।[13]

(ख) जो विभिन्नता युक्तियुक्त वर्गीकरण का आधार हो वह बहुत बड़ी विभिन्नता हो यह आवश्यक नहीं । अपेक्षा केवल इतनी है कि वह वास्तविक और पर्याप्त हो और विधान के उद्देश्य से उसका उचित और युक्तियुक्त संबंध हो ।[14-15]

जब किसी विधान पर यह आक्षेप किया जाता है कि वह समान संरक्षण से वंचित करता है तो न्यायालय के सामने यह प्रश्न नहीं होता है कि क्या उसके परिणामस्वरूप असमानता हुई है । प्रश्न यह होता है कि क्या कोई ऐसी विभिन्नता है जिसका विधान के उद्देश्य से उचित और युक्तियुक्त संबंध है ।[15] केवल भेद करने से या व्यवहार में असमानता से ऐसा विभेद उत्पन्न नहीं होता जो समान संरक्षण के खंड द्वारा प्रतिषिद्ध है । इस खंड के प्रवर्तन के लिए यह आवश्यक है कि यह दिखलाया जाए कि चयन या भेद अयुक्तियुक्त है ।

वर्गीकरण का युक्तियुक्त आधार — उन सभी परिस्थितियों या कसौटियों का उल्लेख करना संभव नहीं है जिनसे सभी मामलों में वर्गीकरण का युक्तियुक्त आधार निर्धारित हो सके । यह विधान के उद्देश्य पर निर्भर होगा । और जिस बात का विधान के उद्देश्य या प्रयोजन से युक्तियुक्त संबंध होगा वही उस अधिनियम की परिधि के अधीन आने वाले विषयों के वर्गीकरण के लिए युक्तियुक्त आधार होगा । उदाहरणार्थ, —

(क) वर्गीकरण का आधार भौगोलिक हो सकता है ।[16] परन्तु अधिनियम के उद्देश्य और राज्यक्षेत्र के आधार पर किए गए वर्गीकरण के बीच संबंध होना चाहिए ।[17]

(ख) वर्गीकरण के लिए औचित्य ऐतिहासिक हो सकता है ।[18]

(ग) वर्गीकरण समय में अंतर के आधार पर हो सकता है ।[19]

---

11 *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *अनवर अली*, (1952) एस.सी.आर. 284 ।

12. *हनीफ* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 731; *तुलसीपुर शुगर कंपनी* बनाम *उत्तर प्रदेश सरकार*, ए. 1987 एस.सी. 443 (पैरा 10, 12) ।

13. *केदारनाथ* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 30 ।

14. *अमीरुन्निसा* बनाम *महबूब*, (1953) एस.सी.आर. 404 ।

15. *सूरज मल* बनाम *विश्वनाथ*, ए. 1953 एस.सी. 545; *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *अनवर अली*, ए. 1952 एस.सी. 75 ।

16. *जोशी* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1215; *नागालैंड राज्य* बनाम *रतन सिंह*, ए. 1967 एस.सी. 212 (*224*); *गोपाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1864 (*1868*) ।

17. *पुरषोत्तम* बनाम *देसाई*, (1955) 2 एस.सी.आर. 887 (*902*); *जियालाल* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1962 एस.सी. 1781 (*1784*) ।

18. *मोहन लाल* बनाम *मान सिंह*, ए. 1962 एस.सी. 73; *भैयालाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 981; *लछमन* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 223 (*233*); *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *भोपाल शुगर इंडस्ट्रीज*, ए. 1964 एस.सी. 1179 ।

19. *रामजीलाल* बनाम *आय-कर अधिकारी*, (1951) एस.सी.आर. 127 ।

यह निर्णय केवल विधान मंडल ही करेगा कि किस (सिविल) विधि को किस तारीख से प्रवृत्त किया जाएगा । उस विधि पर विभेदकारी होने का आक्षेप इस आधार पर नहीं लगाया जा सकता कि वह पूर्ववर्ती संव्यवहारों को प्रभावित नहीं करती है,[20-21] अथवा लम्बित कार्यवाहियों को लागू नहीं होती है । किंतु ऐसी विधि तभी विधिमान्य होगी जब वह उसकी परिधि में आने वाले सभी व्यक्तियों को उसके प्रवृत्त होने की तारीख से समान रूप से लागू होती है और समय का चयन मनमाने ढंग से नहीं किया गया है ।[22]

(घ) विधायन के कुछ विषयों के उद्देश्य के संबंध में आयु भी विवेकपूर्ण आधार हो सकती है । जैसे उन व्यक्तियों को संविदा करने में असमर्थ घोषित किया जा सकता है जो अवयस्क हैं ।[23] ऐसे बंदियों को जिन्हें मृत्यु दंड दिया गया है अन्य बंदियों से पृथक् रखा जा सकता है ।[24]

(ङ) वर्गीकरण व्यक्ति, व्यापार, आजीविका या व्यवसाय की प्रकृति में अन्तर पर भी आधारित हो सकता है । यह इस पर निर्भर होगा कि विधान किसे विनियमित कर रहा है जैसे, शिक्षा संस्था में प्रवेश,[23] सिनेमा का सेंसर किया जाना और अभिव्यक्ति के अन्य माध्यमों से इसका विलग किया जाना,[25] दक्षता के अपेक्षित मानक सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए लोकसेवकों की भर्ती या प्रोन्नति के लिए नियम बनाना,[26] विभिन्न उद्योगों की आर्थिक और स्थानीय दशाओं को ध्यान में रखते हुए उन उद्योगों के लिए न्यूनतम मजदूरियां तय करना,[27] स्वर्ण नियंत्रण के प्रयोजन के लिए अनुज्ञप्ति प्राप्त ब्योहारी और प्रमाणित स्वर्णकार के बीच अंतर,[28] राज्य के पिछड़ेपन को देखते हुए ऋणी कृषकों के प्रति पृथक् व्यवहार किया जाना ।[29]

(च) युक्तियुक्तता का निर्णय विधान के उद्देश्य के प्रति निर्देश से किया जाएगा नैतिक आधार पर नहीं ।[29क] किंतु ऐसे मामले हो सकते हैं जिनमें किसी विधान के घोर अनैतिक होने के कारण उसे मनमाना या विवेक रहित घोषित किया जाए ।[29क]

एक व्यक्ति का वर्गीकरण और तदर्थ विधान — एक ही व्यक्ति को वर्ग मान लेने पर भी वर्गीकरण युक्तियुक्त होगा यदि उस व्यक्ति को लागू होने वाली कुछ विशेष परिस्थितियां या कारण ऐसे हैं जो दूसरों को लागू नहीं होते हैं ।[30] जब कोई विधि साधारण रूप से लागू होती है तो इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता कि इस अधिनियम का उद्देश्य

20. *इंदर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 510; *हाथीसिंग मैन्यूफैक्चरिंग कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी. 923 (*931*) ।

21. *जैन ब्रदर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 778 (*784*) ।

22. *जालान ट्रेडिंग कंपनी* बनाम *मिल मजदूर*, ए. 1967 एस.सी. 691 (*711*); *नकारा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1983 एस.सी. 130 (पैरा 49, 64) ।

23. *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1823 (*1831*) ।

24. *सुनील* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1978 एस.सी. 1675 (पैरा 229) ।

25. *अब्बास* बनाम *भारत संघ*, ए. 1971 एस.सी. 481 (*489*) ।

26. *गंगाराम* बनाम *भारत संघ*, (1970) 1 एस.सी.सी. 377; *रूप* बनाम *डी.डी.ए.*, (1989) सप (1) एस.सी.सी. 116 (पैरा 24) ।

27. *चंद्रा बोर्डिंग* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 2042 (*2050*); *भीकूसा* बनाम *कामगार यूनियन*, (1963) सप. (1) एस.सी.आर. 524 ।

28. *हरकचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 1453 (*1467*) ।

29. *पथुम्मा* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1978 एस.सी. 771 (पैरा 42) ।

29क. *गर्ग* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 2138 (पैरा 17) (बेयरर बांड केस) ।

30. *रामकृष्ण डालमिया* बनाम *तेंदुलकर*, ए. 1958 एस.सी. 538; *गोविंदलालजी* बनाम *राजस्थान राज्य*, (1964) 1 एस.सी.आर. 561 (*618*); *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *गुलाम मोहम्मद*, ए. 1967 एस.सी. 122 (*131*); *मित्तल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1983 एस.सी. 1 (पैरा 165, 179) ।

एक विशेष व्यक्ति को लाभ पहुंचाना है ।[31] विधान मंडल एक व्यक्ति का भी वर्गीकरण कर सकता है यदि ऐसे व्यक्ति के वास्तविक और पर्याप्त अभिलक्षण हैं जो अन्य व्यक्तियों से भिन्न हैं और प्रश्नगत विधान के उद्देश्य से संबंधित है । किंतु अनुच्छेद 14 किसी एक नामित व्यक्ति या व्यक्तियों के विरुद्ध विभेदकारी विधान की अनुमति नहीं देगा यदि वह *बिल आफ अटेंडर* (व्यक्ति विशेष को दंड देने के लिए बनाया गया अधिनियम) के समान है[32] और विधान से वर्गीकरण का कोई युक्तियुक्त आधार प्रकट नहीं होता है । आसपास की परिस्थितियों से भी ऐसे किसी आधार का पता नहीं चलता है और न ही ऐसे विषय की कोई सामान्य[33] जानकारी है ।

प्रक्रिया विधि से भी समान संरक्षण से वंचित किया जा सकता है — समान संरक्षण की प्रत्याभूति जैसी अधिष्ठायी विधि के विरुद्ध है वैसे ही प्रक्रिया विधि के भी ।[34] प्रक्रिया विधि के दृष्टिकोण से इसका अर्थ है कि ऐसे सभी वादकारी जो एक सी स्थिति में हैं अनुतोष के लिए और प्रतिरक्षा के लिए बिना किसी विभेद के एक जैसे प्रक्रियात्मक अधिकार प्राप्त करेंगे । यदि अंतर सूक्ष्म और अपर्याप्त है और उसके कारण प्रभावित व्यक्ति या व्यक्तियों के हित पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ा है तो यह माना जाएगा कि उनको समान संरक्षण से वंचित नहीं किया गया है ।[35]

यदि विधान के उद्देश्य और उसके पीछे की भूमिका को देखते हुए विभेद युक्तियुक्त वर्गीकरण पर आधारित है तो विशिष्ट वर्ग के व्यक्तियों के लिए सामान्य विधि से भिन्न प्रक्रिया अधिकथित की जा सकती है ।[36] यदि भिन्न प्रक्रियाएं जिन्हें लागू होती हैं वे अपराध भी भिन्न-भिन्न हैं[37] या यदि दो अधिनियमों के उद्देश्य और प्रविषय भिन्न हैं अर्थात् एक साधारण अधिनियम है और दूसरा विशेष अधिनियम तो विभेद सुआधारित माना जाएगा ।[38]

विशेष न्यायालयों के लिए उपबंध : क्या अनुच्छेद 14 के विरुद्ध है — 1. उच्चतम न्यायालय ने बहुत से मामलों में इस विषय पर विचार किया है ।[39-40] उनसे प्रकट होने वाली स्थिति इस प्रकार है :

कोई विधि जो विशेष न्यायालयों द्वारा या सामान्य प्रक्रिया से पर्याप्त भिन्न किसी अन्य प्रक्रिया द्वारा किसी मामले के विचारण का प्राधिकार देती है और उससे अभियुक्त पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तो वह विधि अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करती है । किंतु यदि विधान मंडल किसी विशेष न्यायालय द्वारा या किसी विशेष प्रक्रिया से कुछ विशेष अपराधों

31. *एटलस साईकिल कंपनी* बनाम *कर्मकार*, (1962) सप. (3) एस.सी.आर. 89 (*104*); तुलना कीजिए, *उड़ीसा राज्य* बनाम *भूपेन्द्र*, (1962) सप. (2) एस.सी.आर. 380 (*392*) ।

32. *राम प्रसाद* बनाम *बिहार राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 1129 (*1135*); केसबुक (*I*), पृष्ठ 96, पैरा 6 ।

33. *रामकृष्ण* बनाम *तेंदुलकर*, (1959) एस.सी.आर. 279 ।

34. *लछमनदास* बनाम *मुंबई राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 710 (*726*) ।

35. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *अनवर अली*, (1952) एस.सी.आर. 284 ।

36. *गुरबचन* बनाम *मुंबई राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 737 (*744*); *चंद्र भवन* बनाम *मैसूर राज्य*, (1969) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 750 (*762*) ।

37. *बलय्या* बनाम *रंगाचारी*, ए. 1969 एस.सी. 701 (*706*) ।

38. *रामतनु* बनाम *राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 1771 (*1777*) ।

39. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *अनवर अली*, (1952) एस.सी.आर. 284 (*314, 328, 352*); *उड़ीसा राज्य* बनाम *धीरेन्द्र*, ए. 1961 एस.सी. 1715; *काठी रानिंग* बनाम *सौराष्ट्र राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 435; *पन्नालाल* बनाम *भारत संघ*, (1957) एस.सी.आर. 233; *कनसारी हालदार* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 457; *केदारनाथ* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 30 ।

40. विशेष न्यायालय विधेयक, 1978, ए. 1979 एस.सी. 478 (पैरा 74, 78, 80-84, 87, 89) के मामले में ।

के या अपराधों के वर्ग के विचारण के लिए उपबंध करता है तो इस अनुच्छेद का अतिलंघन नहीं होता और विधान के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए ऐसा वर्गीकरण युक्तियुक्त होगा ।[40]

विशेष न्यायालय विधेयक, 1978 का उद्देश्य (जिसे अनुच्छेद 143 के अधीन उच्चतम न्यायालय की राय के लिए निर्देशित किया गया था), आपात उद्घोषणा के पर्दे के पीछे उच्च अधिकारियों या लोक अधिकारियों द्वारा किए गए अपराधों का शीघ्र अवधारण करना था जिससे भारत के संविधान के अधीन संसदीय लोकतंत्र सुचारू रूप से कार्य करता रहे । विधेयक में उन अपराधों को सम्मिलित करना युक्तियुक्त था जो उस समय किए गए थे जब आपात की उद्घोषणा प्रवृत्त थी । उन अपराधों को सम्मिलित न करना भी युक्तियुक्त था जो उद्घोषणा की तारीख से पूर्व किए गए थे ।[40]

2. प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम द्वारा स्थापित प्रशासनिक अधिकरण उच्च न्यायालय के स्थान पर है । इससे अनुच्छेद 323क के आधार पर उच्च न्यायालय के अनुच्छेद 226-227 की अधिकारिता का अपवर्जन किया गया है । तदनुसार अधिकरण इस बात के लिए सक्षम है कि वह अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियमों को संविधान के अनुच्छेद 14, 16(1) आदि के उल्लंघन के आधार पर शून्य घोषित करे ।[41]

कार्यपालिका को विवेक शक्ति प्रदान करने वाली विधि — ऐसा विधान जिसमें ऐसा कोई उपबंध नहीं है जो प्रत्यक्ष रूप से विभेदकारी हो, समान संरक्षण की प्रत्याभूति के विरुद्ध हो सकता है यदि वह विधि के लागू करने के विषय में कार्यपालिका या प्रशासनिक प्राधिकारियों को बिना मार्गदर्शन के या अनियंत्रित विवेकाधिकार प्रदान करती है ।[42] जब किसी बात को प्रशासनिक प्राधिकारी के आत्यंतिक और अनियंत्रित विवेक पर छोड़ दिया जाता है और उसके कार्य का मार्गदर्शन करने के लिए कोई संकेत नहीं है तो व्यवहार में जो भेद किया जाएगा वह ऐसे प्राधिकारी के अकेले और मनमाने चयन पर आधारित होगा ।[43] जैसे, —

(क) कोई विधि जो कार्यपालिका को विशेष व्यवहार के लिए मामलों का चयन करने के लिए[44] या बिना किसी निश्चित मार्गदर्शन के उनके प्रवर्तन से छूट देने के लिए[45] या व्यवहार में अंतर के लिए कोई मानक बताए बिना प्राधिकृत करती है तो ऐसी विधि स्पष्टतः विभेदकारी होगी ।

(ख) यदि विधान मंडल किसी विशेष समस्या के लिए विशेष विधि बनाते समय कार्यपालिका को, अपने विकल्प पर, यह प्राधिकार देता है कि वह किसी व्यक्ति के विरुद्ध या तो विशेष विधि के अधीन कार्यवाही करे या उस साधारण विधि के अधीन कार्यवाही करे जो अन्यथा लागू होती है[42] तो कार्यपालिका को ऐसी मनमानी शक्ति का दिया जाना जिससे वह अपनी इच्छानुसार विशेष विधि के कठोर उपबंध लागू कर सकती है, समान संरक्षण के विरुद्ध उपबंध माना जाएगा ।[44-46]

यदि किसी विधि में उसको बनाने के पीछे क्या नीति थी यह बताया गया है[47] और बताई गई नीति के अनुसार कार्यपालिका को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप नए उद्देश्यों को उसके उपबंधों का विस्तार करने और विधि को लागू करने की शक्ति[48] देती है तो ऐसी

---

41. *चोपड़ा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी. 357 ।
42. *सूरजमल* बनाम *आई.टी.आई. आयुक्त*, ए. 1954 एस.सी. 545 ।
43. *सतवंत* बनाम *ए.पी.ओ.*, ए. 1967 एस.सी. 1836 (*1845*) ।
44. *सगीर अहमद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 707 ।
45. *मीनाक्षी मिल्स* बनाम *विश्वनाथ*, ए. 1955 एस.सी. 13 ।
46. *बालम्माल* बनाम *मद्रास राज्य*, (1968) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 435 (*442*) ।
47. *रायला कारपोरेशन* बनाम *निदेशक*, ए. 1970 एस.सी. 494 (*499*) ।
48. *उड़ीसा राज्य* बनाम *धीरेन्द्र*, ए. 1961 एस.सी. 1715; *काठी रानिंग* बनाम *सौराष्ट्र राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 435 ।

विधि से अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं होगा चाहे उसमें विषयवस्तु का संपूर्ण और प्रमित वर्गीकरण नहीं किया गया हो ।[49] उल्लंघन तब होगा जब नीति विभेदकारी हो ।[50]

समान संरक्षण और कराधान — कराधान विधि समान संरक्षण के सिद्धांत का अपवाद नहीं है ।[51-52]

यदि वर्गीकरण के पीछे कोई युक्तियुक्त आधार नहीं है[53] तो कराधान विधि को अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करने के आधार पर निष्प्रभाव घोषित कर दिया जाएगा । उदाहरण के लिए यदि एक ही वर्ग के करवंचकों के बीच केवल इस आधार पर अंतर किया जा रहा है कि अपवंचन का पता विभिन्न तरीकों से लगाया गया है[53] या समान रूप से स्थित एक ही वर्ग की संपत्ति पर असमान कराधान किया गया है ।[54] यदि वर्गीकरण का कोई युक्तियुक्त आधार नहीं है तो विधि अमान्य होगी ।[55] यद्यपि यह साबित करना आवश्यक न होगा कि यह कर जानबूझकर एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के बीच अंतर करने के आशय से अधिरोपित किया गया है ।[55] जहां संपत्ति कर, एक सपाट दर से उद्गृहीत किया जाता है और विभिन्न प्रकार की संपत्तियों का या उनसे प्राप्ति का विचार नहीं किया जाता है तो वहां वर्गीकरण का अभाव होगा ।

किंतु — (क) यदि कराधान से एक विशेष प्रकार और विस्तार की संपत्ति के प्रति निर्देश से कराधान के समान आधार पर सभी पर समान भार अधिरोपित किया जा रहा है तो विधि पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता कि कराधान का परिणाम विभिन्न व्यक्तियों पर असमान भार डालना है ।[56] (ख) अन्य विधियों के समान ही कराधान विधि में यदि वर्गीकरण का युक्तियुक्त आधार है,[56] या कर विभिन्न अधिनियमों द्वारा अधिरोपित है[57] तो अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं होता ।[57]

उदाहरण के लिए, (i) विक्रय कर अधिरोपित करने वाली किसी विधि में —

(क) राज्य यह विचार कर सकता है कि छोटे व्यापारियों द्वारा किए जाने वाले विक्रय पर कर लगाना प्रशासनिक रूप से लाभदायक नहीं है क्योंकि उनके पास ऐसी सुविधाएं नहीं हैं कि वे क्रेता से कर संग्रह करके सरकार को दे सके । प्रत्येक राज्य इस प्रकृति का कर अधिरोपित करने में अपनी सीमाएं तय करता है जिसके नीचे कर अधिरोपित करना प्रशासनिक रूप से संभव नहीं होगा या लाभदायक नहीं होगा ।[58]

(ख) यदि किसी राज्य में किसी विशेष वस्तु के कुछ विशेष लक्षण हैं (उदाहरणार्थ — कच्चा चमड़ा और खालें) तो विधान मंडल उस वस्तु के क्रेताओं पर कर लगा सकता है जबकि अन्य वस्तुओं के विक्रय पर कर विक्रेता पर लगाया जाता है ।[59]

49. *रामकृष्ण* बनाम *तेंदुलकर*, (1959) एस.सी.आर. 279: *केसबुक (I)* पृष्ठ 107, पैरा 13 ।

50. *भीकूसा* बनाम *कामगार यूनियन*, (1963) सप. (1) एस.सी.आर. 524; *नागपुर इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट* बनाम *विठ्ठल*, ए. 1970 एस.सी. 689 (*694*) ।

51. *खानदीगे* बनाम *एग्रिकल्चरल आई.टी.ओ.*, ए. 1963 एस.सी. 591 (*594*) ।

52. *कुन्नाथत* बनाम *केरल राज्य*, (1961) 3 एस.सी.आर. 77 ।

53. *एन.एम.सी.एस. मिल्स* बनाम *केरल राज्य*, (1961) 3 एस.सी.आर. 77; *एन.एम.सी.एस. मिल्स* बनाम *नगर निगम*, (1967) 2 एस.सी.आर. 679 (*693*) ।

54. *आई.टी.ओ.* बनाम *लारेंस*, ए. 1968 एस.सी. 658 (*661*); *केरल राज्य* बनाम *कुट्टी*, ए. 1969 एस.सी. 378 ।

55. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *नल्ला राजा*, (1967) 3 एस.सी.आर. 28; *केरल राज्य* बनाम *हाजी*, ए. 1969 एस.सी. 378 ।

56. *रवि वर्मा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1969 एस.सी. 1094; *वेंकटरामन* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 508 (*512*) ।

57. *नजीरिया मोटर सर्विस* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 1864 (*1868*) ।

58. *मुंबई राज्य* बनाम *यूनाइटेड मोटर्स*, (1953) एस.सी.आर. 1069 ।

59. *सईद मोहम्मद* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1117 ।

(ii) आय-कर विधि में, विधान मंडल, कर संदाय करने की क्षमता के अनुसार कर की दर को सोपान क्रम में रख सकता है ।[60]

न्यायालय कराधान विधि की दशा में विधान मंडल को अपने विवेकानुसार कार्य करने में अधिक मात्रा में छूट देता है ।[61] राज्य, कर के मामलों में जिला, उद्देश्य, रीति और कर की दर भी चुन सकता है ।[62] किंतु यह युक्तियुक्त वर्गीकरण होना चाहिए । उदाहरणार्थ (क) जहां कर के निर्धारण की एक से अधिक रीतियां हैं और विधान मंडल उनमें से एक चुनता है तो न्यायालय उस विधि को इस आधार पर अमान्य नहीं कर सकता कि विधान मंडल को दूसरी रीति अपनाना था क्योंकि न्यायालय की राय में वह अधिक युक्तियुक्त है । वह तभी अमान्य कर सकता है जब उसकी यह धारणा बन जाए कि जो रीति अपनाई गई है वह मनमानी, न्यायविरुद्ध, इच्छा पर आधारित और सिद्धांतहीन है ।[63]

(ख) इसी प्रकार कराधान के प्रयोजन के लिए बड़े और छोटे विनिर्माताओं के बीच[64] या आयातित और देशी तंबाकू के बीच,[65] वर्गीकरण, विक्रय कर से छूट के लिए स्वर्णकारों का दो वर्गों में विभाजन, एक तो वे जो अपने श्रम से आभूषण बनाते हैं या जो कारीगरों से बनवाते हैं और दूसरे वे जो कमीशन लेकर कारीगरों द्वारा बनाए गए आभूषण बेचते हैं,[66] युक्तियुक्त ठहराया गया है ।

(ग) कराधान में नमनीयता की आवश्यकता को देखते हुए कार्यपालिका को दी गई विशेष माल को छूट प्रदान करने की शक्ति विधिमान्य ठहराई गई है ।[67] जहां कानून में नीति अधिकथित की गई है और अधीनस्थ प्राधिकारी (जैसे नगरपालिका) से यह अपेक्षा है कि वह दर अवधारण करने में न्यायिक कल्प प्रक्रिया का अनुसरण करे वहां कर की दर अवधारण करने की शक्ति का प्रत्यायोजन उचित माना गया है ।[68] इसी प्रकार प्रशासनिक प्राधिकारी को प्रत्यायोजित यह शक्ति भी उचित है कि वह कर के संग्रहण की सुविधा और अपवंचन के निवारण को ध्यान में रखकर व्यक्तियों के किसी एक प्रवर्ग को चुन ले ।[69]

(घ) कौन सी वस्तुओं पर कर लगाया जाए यह नीति का प्रश्न है । कोई व्यक्ति इस आधार पर परिवाद नहीं कर सकता कि विधान मंडल ने कुछ वस्तुओं पर कर लगाने का निर्णय किया है शेष पर नहीं ।[70] इसी सिद्धांत के अनुसार वर्गीकरण के प्रयोजन के लिए स्थानीय क्षेत्रों का वर्गीकरण[71] या जनसंख्या की कसौटी को लागू करना[72] अयुक्तियुक्त नहीं होगा ।

किंतु यदि एक जैसी (समरूप) वस्तुओं पर असमान रूप से कर लगाया जाता है तो

---

60. *स्टीलसवर्थ* बनाम *असम राज्य*, (1962) सप. (2) एस.सी.आर. 589; *गंगा शुगर* बनाम *उत्तर प्रदेश*, ए. 1980 एस.सी. 286 ।

61. *खाडिगे* बनाम *एग्रिकल्चरल आई.टी.ओ.*, ए. 1963 एस.सी. 591 (*594*); *अश्वत्थ नारायण* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1989 एस.सी. 100 (*118*) ।

62. *खैरबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 925 (*941*) ।

63. *शामभट्ट* बनाम *एग्रिकल्चरल आई.टी.ओ.*, ए. 1963 एस.सी. 591 (*596*) ।

64. *ब्रिटिश इंडिया कारपोरेशन* बनाम *कलक्टर*, ए. 1963 एस.सी. 104 (*107*) ।

65. *ईस्ट इंडिया टोबैको कंपनी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1733 (*1735*) ।

66. *इपारी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1964) 7 एस.सी.आर. 185 ।

67. *ओरियंट वीविंग मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 98 (*103*); *राम बख्श* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 351 ।

68. *रतन* बनाम *असेसिंग अथारिटी*, ए. 1970 एस.सी. 1742 (*1749*) ।

69. *इपोह* बनाम *सी.आई.टी.*, ए. 1968 एस.सी. 317 ।

70. *वेणुगोपाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1969 एस.सी. 1094; *केरल होटल* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1990 एस.सी. 913 (पैरा 34) ।

71. *ई.आई. टोबैको कंपनी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1963) 1 एस.सी.आर. 404 (*409*) ।

72. *कर्नाटक राज्य* बनाम *हंसा कारपोरेशन*, ए. 1981 एस.सी. 463 (पैरा 17) ।

न्यायालय हस्तक्षेप करेगा ।[72क] विलास कर की सांविधानिकता पर विचार करने के लिए अन्य प्रकार के करों से संबंधित दृष्टांत सुसंगत नहीं है ।[72ख]

विधि को लागू करने में समान संरक्षण से वंचित किया जा सकता है — 1. समान संरक्षण से वंचित किया जाना विधान द्वारा भी हो सकता है और विधि के प्रशासित किए जाने में भी । प्रशासनिक कार्य पर आक्षेप करते समय जो सिद्धांत लागू किए जाते हैं वे उनसे भिन्न हैं जो तब लागू होते हैं जब उस विधि पर ही आक्षेप किया जाता है जिसके अधीन प्रशासनिक कार्य का किया जाना तात्पर्यित है ।

2. जब कोई कानून युक्तियुक्त आधार के बिना विभेद करता है तो कानून को ही इस कारण अविधिमान्य किया जाएगा कि वह समान संरक्षण खंड के विरुद्ध है । उसका वास्तव में किस प्रकार कार्यकरण हो रहा है यह बात विचार के लिए तात्विक हो यह आवश्यक नहीं है । यदि कानून विभेदकारी नहीं है और समान संरक्षण के उल्लंघन का आरोप उस अधिकारी के विरुद्ध है जिसको उसे प्रवृत्त करने का कर्तव्य सौंपा गया है और अधिकारी ने सद्भावपूर्वक, अधिनियम की परिसीमाओं के भीतर तथा अधिनियम के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए शक्ति का प्रयोग किया है तो यह आरोप विफल हो जाएगा । यदि वह व्यक्ति जो यह कहता है कि विभेद किया गया है यह साबित करने में सफल हो जाता है कि यह कदम उसे क्षति पहुंचाने के लिए साशय उठाया गया था या दूसरे शब्दों में उसके विरुद्ध किया गया शत्रुतापूर्ण कार्य है तो कार्यपालिका का परिवादित कार्य अकृत किया जाना चाहिए[73] यद्यपि कानून स्वयं विभेदकारी नहीं है । संक्षेप में, यदि अधिनियम ऋजु और उचित है तो उसे प्रशासित करने वाले अधिकारी को साधारण संरक्षण मिलेगा । इस नियम का एक अपवाद है जो तब लागू होगा जब इस बात का साक्ष्य है कि अधिनियम लागू करने में दुर्भावपूर्ण व्यवहार किया गया ।[74]

3. अनुच्छेद 14 राज्य की मनमानी कार्यवाही पर प्रहार करता है । जो मनमाना है वह समान हो ही नहीं सकता ।[75] किंतु अनुच्छेद 14 ऐसे विभेद का ही नाश करेगा जो जानबूझकर किया गया है । अकस्मात या भूल से हुआ विभेद, जिसे राज्य सुधारने के लिए तैयार है,[76] प्रहार योग्य नहीं होता ।

4. सभी प्रशासनिक कार्यवाही में 'ऋजु व्यवहार' का परीक्षण लागू होगा किंतु इसका भी ध्यान रखा जाएगा कि प्रशासक को कार्य करने की छूट हो ।[76क]

5. जहां आक्षेपित कार्यवाही के कुछ सिविल परिणाम भी होते हैं वहां 'मनमाना न होने' का यह अर्थ होगा कि नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन किया गया है ।[76ख]

6. किंतु जिस मामले में किसी व्यक्ति का कोई विधिक अधिकार नहीं है वहां वह केवल इस कारण विभेद किए जाने का परिवाद नहीं कर सकता है कि प्राधिकारी ने अपने विधिसम्मत विवेकाधिकार का प्रयोग किया है ।[76ग]

72क. *आयुर्वेद फार्मेसी* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, (1989) 2 एस.सी.सी. 285 (पैरा 6) ।

72ख. *स्पेंसेस होटल* बनाम *पश्चिमी बंगाल*, (1991) 2 एस.सी.सी. 154 ।

73. तुलना कीजिए, *ईरानी* बनाम *मद्रास राज्य*, (1962) 2 एस.सी.आर. 169 ।

74. *रामकृष्ण* बनाम *तेंदुलकर*, ए. 1958 एस.सी. 538 ।

75. *रायप्पा* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 555; *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597; *रामन* बनाम *आई.ए.ए.आई.*, (1979) 3 एस.सी.आर. 1014 (*1042*); *अजय* बनाम *खालिद*, ए. 1981 एस.सी. 487 (पैरा 16) ।

76. *विष्णुदास* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1636 (पैरा 7) ।

76क. *फजीह* बनाम *दूरदर्शन*, (1989) 1 एस.सी.सी. 89 (पैरा 5-6); *श्रीलेखा विद्यार्थी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1991 एस.सी. 537 ।

76ख. *मेहन* बनाम *भारत संघ*, (1989) 1 एस.सी.सी. 765 (पैरा 11-13) ।

76ग. *स्टेट बैंक* बनाम *जगमोहन*, (1989) सप. (1) एस.सी.सी. 221 (पैरा 9) ।

7. यदि लोक विधि के क्षेत्र में राज्य कोई कार्यवाही करता है और न्यायालय को कारण नहीं बताता है तो राज्य की कार्यवाही मनमानी समझी जाएगी ।[77] किंतु इसके अपवाद हैं, —

(क) कार्यवाही राजनीतिक है या प्रभुत्वसंपन्नता का कार्य है, या

(ख) कार्यवाही संविदा या अपकृत्य से उद्‌भूत बाध्यता से संबंधित है,[77क] या

(ग) कार्यवाही प्राइवेट विधि के क्षेत्र में आती है जैसे राज्य सामान्य अंशधारक के रूप में निगमों के संसार में प्रवेश करता है ।[77]

असांविधिक प्रशासनिक कार्य द्वारा समान संरक्षण से वंचित किया जाना — 1. अनुच्छेद 12 में दी गई "राज्य" की परिभाषा में विनिर्दिष्ट रूप से सरकार सम्मिलित है इसलिए समान संरक्षण की यह प्रत्याभूति सरकार के उन शुद्ध रूप से कार्यपालक या प्रशासनिक आदेशों को भी लागू होगी जो किसी कानून पर आधारित नहीं हैं ।[78]

2. इसका यह अर्थ हुआ कि सरकार अपनी असांविधिक नीति, नियम या आदेश को किसी भी समय बदल सकती है किंतु बदलने पर नई नीति या नियम उन सभी कर्मचारियों पर जो समान रूप से स्थित हैं समान रूप से आबद्धकर होगा । वह मनमाना नहीं हो,[79] छिपे हुए उद्देश्य से प्रेरित न हो और सभी संबद्ध व्यक्तियों को उसकी जानकारी हो ।[80]

सेवा संबंधी विषयों में समान संरक्षण से वंचित किया जाना — देखिए आगे अनुच्छेद 309 ।

शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश के विषय में विभेद — 1. उच्चतर या तकनीकी शिक्षा के लिए सर्वोत्तम विद्यार्थी चुनने की दृष्टि से, प्राधिकारियों द्वारा प्रवेश के लिए नियम बनाना विधि सम्मत होगा किंतु इन नियमों का इस उद्देश्य से युक्तियुक्त संबंध होना चाहिए ।[81]

आयुर्विज्ञान महाविद्यालय में विश्वविद्यालयों के अनुसार स्थान का वितरण युक्तियुक्त वर्गीकरण माना गया[82] किंतु जिलावार[83-84] या इकाईवार[84] आधार पर किया गया चयन दूषित माना गया क्योंकि गुणों के आधार पर चयन के उद्देश्य से उसकी संगति नहीं थी ।

2. राज्य यह विहित कर सकती है कि किन स्रोतों से आने वाले प्रत्याशी वृत्तिक महाविद्यालयों में प्रवेश के पात्र होंगे । किंतु जब एक सामान्य परीक्षा ली गई है तो उसी के आधार पर चयन किया जाना चाहिए । ऐसे में कुछ प्रतिशत स्थानों को विशेष वर्ग के प्रत्याशियों के लिए आरक्षित करना विभेदकारी होगा क्योंकि इसका अपने लक्ष्य से, अर्थात् सर्वोत्तम विद्यार्थियों को वृत्तिक महाविद्यालयों में प्रवेश देने से, कोई युक्तियुक्त संबंध नहीं है ।[85]

3. साक्षात्कार के आधार पर चयन विभेदकारी नहीं है परंतु यह तब जबकि

77. *जीवन बीमा निगम* बनाम *एस्कोर्ट्स*, ए. 1986 एस.सी. 1370 (पैरा 101-102) ।

77क. संविदात्मक व्यवहार में भी राज्य मनमानी कार्यवाही नहीं कर सकता [*द्वारकादास* बनाम *मुंबई पोर्ट ट्रस्ट*, (1989) 3 एस.सी.सी. 293 (पैरा 22, 27)] ।

78. *बीड़ी सप्लाई कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1956 एस.सी. 479; *सतवंत* बनाम *ए.पी.ओ.*, ए. 1967 एस.सी. 1636 ।

79. *सचदेव* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 411 (पैरा 12); *पद्मनाभन* बनाम *डी.पी.आई.*, ए. 1981 एस.सी. 64 (पैरा 12) ।

80. *संगवान* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 1545 (पैरा 4) ।

81. *चित्रा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 36; *वसुंधरा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1439 (*1443*) ।

82. *चंचला* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1971 एस.सी 1762; *केरल राज्य* बनाम *रोशन*, ए. 1979 एस.सी. 765 (पैरा 20); *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 820; *मिनी* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 838 ।

83. *राजेन्द्रन* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 1012 ।

84. *पेरियाकुरुप्पन* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, (1971) 2 एस.सी.आर. 430 ।

85. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *बलराम*, ए. 1972 एस.सी. 1375 (*1387*) ।

साक्षात्कार लेने वालों के मार्गदर्शन के लिए सुसंगत वस्तुपरक परीक्षण अधिकथित किए जाते हैं,[84, 86] वे परीक्षण विभेदकारी नहीं हैं[87] तथा उनमें प्रत्याशी के विद्या संबंधी गुणों की उपेक्षा नहीं की जाती है ।[88] जहां विभिन्न शीर्षों के अधीन मूल्यांकन करना था वहां यदि एकमुश्त अंक दिए जाते हैं तो यह विभेदकारी होगा । यदि साक्षात्कार की कुछ बातों का सर्वोत्तम विद्यार्थी के चयन से कोई संबंध नहीं था तो भी यह विभेदक होगा ।[84]

यदि कुल अंकों का बहुत बड़ा भाग मौखिक परीक्षा को आबंटित किया जाता है तो साक्षात्कार परीक्षा अयुक्तियुक्त और परिणामतः अमान्य होगी ।[89]

यदि किसी प्रकरण में चयन की शक्ति का दुरुपयोग किया गया है तो साक्षात्कार अपास्त कर दिया जाएगा ।[81]

4. इसी सिद्धांत के अनुसार यदि वर्गीकरण विवेकपूर्ण और बोधगम्य भिन्नता पर आधारित है तो विभिन्न वर्गों के विद्यार्थियों के लिए स्थानों का आरक्षण असांविधानिक नहीं होगा ।[81] उदाहरणार्थ — पिछड़े क्षेत्रों के विद्यार्थियों के प्रवेश को सुकर बनाना, स्थानांतरण पर आए सरकारी सेवकों के प्रतिपाल्य, कोलंबो योजना अध्येता, आदि,[81] किंतु विशिष्ट शिक्षा संस्थाओं के कर्मचारियों के बच्चों के लिए नहीं,[90] भारत वापस आने वालों (प्रत्यावर्ती) के बीच उनके पुनर्वास के लिए भारत में रहने की अवधि के आधार पर अंतर हो सकता है ।[91]

5. यह भी है कि —

(क) उच्चतम तकनीकी पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए, अर्थात् 'अतिविशेषज्ञताओं' के लिए, आरक्षण नहीं होना चाहिए ।[92-93]

(ख) ऐसा वर्गीकरण जो धूमिल (अस्पष्ट)[92] या मनमाना है[94] या किसी सामग्री पर आधारित नहीं है या ऐसी सामग्री पर आधारित है जो प्रकट नहीं की गई है, अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करेगा ।

न्यायिक निर्वचन से अनुच्छेद 14 का विस्तार — मूलतः यह विचार था कि यदि न्यायालय को आक्षेपित राज्य अधिनियम के द्वारा किए गए तथाकथित विभेद के पीछे युक्तियुक्त वर्गीकरण मिल जाता है तो अनुच्छेद 14 में दिए गए समान संरक्षण की प्रत्याभूति की संतुष्टि हो जाएगी । इसका स्थान अब विधिमान्यता के एक विस्तृत परीक्षण ने ले लिया है जो अनुच्छेद 14, 19 और 21 के संयुक्त अर्थान्वयन पर आधारित है । परिणामस्वरूप अनुच्छेद 14 के अधीन आक्रमण से बचने के लिए आक्षेपित राज्य अधिनियम को विभेदहीन तो होना ही चाहिए साथ ही वह मनमाना नहीं हो,[95] अयुक्तियुक्त या

---

86. *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, (1964) 6 एस.सी.आर. 368 ।

87. तुलना कीजिए, *मद्रास राज्य* बनाम *चंपाकम*, (1951) एस.सी.आर. 525 ।

88. *सुभाष* बनाम *प्रधानाचार्य*, ए. 1967 जम्मू-कश्मीर 106 ।

89. *आरती* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1007 (पैरा 11); *हाशिया* बनाम *खालिद*, ए. 1981 एस.सी. 487 (15% से अधिक); *निशि* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1975 ।

90. *उमेश* बनाम *प्रधानाचार्य*, आई.एल.आर. 46 पटना 616 ।

91. *रीता* बनाम *भारत संघ*, ए. 1973 एस.सी. 1050; *सुरेन्द्र* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1985 एस.सी. 87 (पैरा 1) भी देखिए ।

92. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *प्रदीप*, ए. 1975 एस.सी. 563; *राजस्थान राज्य* बनाम *अशोक*, ए. 1989 एस.सी. 177 (पैरा 3); *मीनाक्षी* बनाम *विश्वविद्यालय*, ए. 1989 एस.सी. 1568 (पैरा 4) ।

93. *फजल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1989 एस.सी. 48 (पैरा 2) ।

94. *निशि* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1975 ।

95. *रामन* बनाम *आई.ए.ए.आई.*, ए. 1979 एस.सी. 1628 (*1650, 2001*); *नकारा* बनाम *भारत संघ*, (1983) यू.जे.एस.सी. 217 (पैरा 13-14); *अजय* बनाम *खालिद*, (1981) 2 एस.सी.आर. 79; *के.एस.टी.डी.सी.* बनाम *आर.एस.टी.ए.टी.*, ए. 1986 एस.सी. 2039 (पैरा 7) ।

अऋजु नहीं हो (अधिष्ठायी रूप से और प्रक्रिया में भी)[95-96] और लोकहित के अनुरूप हो ।[97]

अनुच्छेद 14 के अपवाद — जैसा पहले बताया गया है, 42वें संशोधन अधिनियम तक विभिन्न संशोधनों द्वारा मूल अधिकारों के अपवादों में वृद्धि की गई है । मूल अधिकारों के उल्लंघन के आधार पर विधियों की सांविधानिकता पर आक्रमण को अवरुद्ध किया गया है । अनुच्छेद 14 के संबंध में ये उपबंध हैं —

(i) अनुच्छेद 31क-31ग ।[98]

(ii) अनुच्छेद 312क(3), भारतीय सिविल सेवा के सदस्यों के संबंध में ।

(iii) अनुच्छेद 371घ(10) आंध्र प्रदेश की सेवाओं के संबंध में प्रशासनिक अधिकरण के संबंध में, अब अनुच्छेद 323क(2)(च) में के नए उपबंध के अधीन ।

(iv) संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रशासनिक अधिकरणों से संबंधित एक नया भाग 14क प्रविष्ट किया गया है । इससे यह उपबंध किया गया है कि इस अनुच्छेद के उपबंध संविधान के अन्य उपबंधों का अध्यारोहण करेंगे [अनुच्छेद 323क(3), 323ख(4)] । परिणामस्वरूप इन अधिकरणों के विनिश्चयों से व्यथित कोई व्यक्ति (अन्य बातों के साथ-साथ) इस आधार पर अनुच्छेद 14 का संरक्षण पाने का हकदार नहीं होगा कि उसके विवाद का देश के सामान्य न्यायालयों से हटाकर प्रशासनिक अधिकरण से न्याय-निर्णयन विभेदकारी है । ऐसे अधिकरणों की सूची काफी लंबी है, देखिए आगे अनुच्छेद 323क(1), 323ख(1)-(2) ।[99]

(v) अनुच्छेद 359 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा किए गए आदेश द्वारा अनुच्छेद 14 पूर्ण रूप से निलंबित किया जा सकता है ।

अनुच्छेद 14 का निलंबन — देखिए आगे अनुच्छेद 359 ।

धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध ।

15. **(1) राज्य, किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा ।**

(2) कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर —

(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश, या

(ख) पूर्णतः या भागतः राज्य-निधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग,

के संबंध में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निर्बंधन या शर्त के अधीन नहीं होगा ।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को स्त्रियों और बालकों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी ।

[100]*(4) इस अनुच्छेद की या अनुच्छेद 29 के खंड (2) की कोई बात राज्य को सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिकों के किन्हीं वर्गों की उन्नति के लिए या अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए कोई विशेष उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी ।*

खंड (1) का प्रविषय : विभेद का प्रतिषेध — इस खंड का प्रविषय विस्तृत है । इसका लक्ष्य नागरिक[1] अधिकारों के विरुद्ध राज्य की कार्यवाही को रोकना है, अधिकार चाहे

---

96. *मेनका बनाम भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597; *सुमन बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य*, (1983) यू.जे.एस.सी. 897 (पैरा 6-7) ।

97. *कस्तूरी बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1992 (*2000*) ।

98. *संजीव कोक बनाम भारत कोकिंग*, ए. 1953 एस.सी. 239 (पैरा 17) ।

99. *चोपड़ा बनाम भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी. 357 ।

100. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा जोड़ा गया ।

1. *दशरथ बनाम आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 564 (*569*) ।

राजनैतिक हों, सिविल हों या कोई अन्य ।[2] जाति के अनुसार पृथक् निर्वाचक मंडलों के आधार पर सांप्रदायिक प्रतिनिधित्व[2] इस खंड के विरुद्ध होगा और संविधान के प्रारंभ के पश्चात् ऐसी विधि के अनुसरण में किया गया निर्वाचन शून्य होगा ।

इस खंड द्वारा प्रदत्त मूल अधिकार नागरिकों को व्यक्ति के रूप में प्रदान किए गए हैं और नागरिक के रूप में उसके अधिकार, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियों के विषय में विभेद के विरुद्ध प्रत्याभूति है ।[2]

धर्म, मूलवंश या जाति — पुलिस अधिनियम, 1861 की धारा 15(5) के अधीन एक अधिसूचना के द्वारा एक क्षेत्र में अतिरिक्त पुलिस बल रखने का खर्चा उद्गृहीत किया गया क्योंकि उस स्थान के लोग डाकुओं को प्रश्रय देते थे और दंगे करते थे । इसमें उस क्षेत्र के हरिजनों और मुसलमानों को छूट दी गई । यह अभिनिर्धारित हुआ कि इस तथ्य के अभाव में हरिजनों और मुसलमानों में सभी लोग विधि का पालन करने वाले थे तथा उस क्षेत्र के निवासी अन्य समुदायों में कोई व्यक्ति विधि का पालन करने वाला नहीं था अधिसूचना स्पष्टतः धर्म या जाति के आधार पर अन्य संप्रदायों के व्यक्तियों के विरुद्ध विभेद करती थी और अनुच्छेद 15(1) के प्रतिकूल थी ।[3]

जहां पिछड़े वर्गों के पक्ष में विभेद है वहां भी विभेद यदि जाति के विचार से किया गया है,[4] आर्थिक या सामाजिक पिछड़ेपन के विचार से नहीं[5] तो ऐसा विभेद शून्य होगा । किंतु यदि किसी जाति के सभी लोग सामाजिक या आर्थिक दृष्टि में पिछड़े हुए हैं तो अनुच्छेद 15(4) के अधीन उस जाति के पक्ष में आरक्षण असांविधानिक नहीं होगा ।[6]

इसका दूसरा पक्ष यह है कि धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान से भिन्न किसी आधार पर विभेद का प्रतिषेध नहीं है । राज्य की शिक्षा संस्था में प्रवेश के लिए यह अपेक्षा करना कि आवेदक राज्य का निवासी हो अवैध होगा ।[7]

खंड (3) : स्त्रियों और बालकों के लिए विशेष उपबंध — कल्याणकारी राज्य में बालकों[8] (और स्त्रियों[9]) का कल्याण, राज्य के लिए प्राथमिक महत्व का है । उनके संरक्षण या उत्थान के लिए बनाया गया विशेष उपबंध विभेद निवारण की गारंटी के विपरीत नहीं होगा । दिल्ली भाटक नियंत्रण अधिनियम में विधवा के लिए विशेष अधिकार विधिमान्य है ।[9क]

खंड (4) का प्रविषय : पिछड़े वर्गों के लिए विशेष उपबंध — इस खंड का उद्देश्य लोक शिक्षा संस्थाओं में, पिछड़े वर्ग के नागरिकों और अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए राज्य द्वारा स्थानों के आरक्षण को सांविधानिक स्वीकृति देना है । इसी के कारण उनकी प्रगति के लिए अन्य विशेष उपबंध किए जा सकते हैं, जैसे इन वर्गों के लिए आवास सुविधा ।[10] इस संशोधन का तात्कालिक उद्देश्य *मद्रास राज्य* बनाम *चंपाकम*[11] के विनिश्चय का अध्यारोहण

2. *नैनसुख बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* (1953) एस.सी.आर. 1184 ।
3. *राजस्थान राज्य* बनाम *प्रताप सिंह*, ए. 1960 एस.सी. 1208 ।
4. *बालाजी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 649; *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *सागर*, ए. 1968 एस.सी. 1379 ।
5. *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1823 ।
6. *राजेन्द्रन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1968) 2 एस.सी.आर. 786 (*791*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 136, पैरा 4 ।
7. *वसुंधरा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1439 ।
8. *लक्ष्मी कांत* बनाम *भारत संघ*, ए. 1984 एस.सी. 469 (पैरा 6) ।
9. *यूसफ* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 321 (*322*) ।
9क. *ई.एम.सी. स्टील* बनाम *भारत संघ*, (1991) 2 एस.सी.सी. 101 ।
10. *बी.एस.एच.के.पी.* बनाम *भारत संघ*, (1985) 2 एस.सी.सी. 644 ।
11. *मद्रास राज्य* बनाम *चंपाकम*, (1951) एस.सी.आर. 525 ।

करना था । इस निर्णय में यह कहा गया था कि अनुच्छेद 46 से अनुच्छेद 29(2) को नियंत्रित नहीं किया जा सकता और संविधान का यह आशय नहीं था कि शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश के विषय में पिछड़े वर्गों के हितों का संरक्षण किया जाए । इस संशोधन से पिछड़े वर्ग तथा अनुसूचित जाति और जनजाति के लिए आरक्षण विधिमान्य हो गया किंतु इससे समुदाय के आधार पर स्थानों का वितरण नहीं किया जा सकता क्योंकि उससे जो वर्ग पिछड़े नहीं हैं उनमें आपस में विभेद होगा । संक्षेप में यह संशोधन किसी सांप्रदायिक आदेश को समर्थन नहीं देता ।

खंड (4) अपवादस्वरूप है इसलिए उसका इस प्रकार अर्थ नहीं लगाया जा सकता जिससे खंड (1) विनष्ट हो जाए या छाया मात्र रह जाए । खंड (4) के अधीन आरक्षण तभी विधिमान्य हो सकता है जब वह इतना अतिरेकी न हो कि व्यवहार में अन्य समुदाय के सदस्यों को नियोजन के युक्तियुक्त अवसर मिलने ही बंद हो जाएं ।[4-12]

पिछड़े वर्ग — यह ध्यान देने योग्य है कि अनुच्छेद 16(4) में पिछड़े हुए नागरिकों के वर्ग का उल्लेख है किंतु अनुच्छेद 15(4) में इस अभिव्यक्ति के विशेषण हैं "सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से" ।[12] यदि वह वर्ग सामाजिक रूप से पिछड़ा नहीं है तो केवल शैक्षिक पिछड़ापन पर्याप्त नहीं है । ऐसे ही शैक्षिक पिछड़ेपन के साथ सामाजिक दृष्टि से पिछड़ापन भी आवश्यक है ।[12] कौन से वर्ग पिछड़े हैं इसकी कोई परिभाषा संविधान में नहीं है । अनुच्छेद 12 में परिभाषित "राज्य" पर यह छोड़ दिया गया है कि वह तय करे कि पिछड़े वर्ग कौन से हैं ।[12] यह धारणा उचित नहीं है कि यह शक्ति अनुच्छेद 340 के अधीन केवल राष्ट्रपति को ही है ।[12] किंतु राज्य की यह शक्ति न्यायिक पुनर्विलोकन के अधीन है ।[12]

अंतिम निष्कर्ष यही है कि सामाजिक पिछड़ेपन का कारण निर्धनता ही है ।[12] दरिद्रता के कारण जो सामाजिक पिछड़ापन आता है उसे जाति संबंधी विचार और भी गहरा बना देते हैं किंतु पिछड़ेपन का वर्गीकरण केवल जाति के आधार पर नहीं किया जा सकता ।[12] किसी विशेष राज्य में बहुत से ऐसे समुदाय पिछड़े हो सकते हैं जो जाति को नहीं मानते हैं, जैसे मुसलमान या ईसाई । लोगों के व्यवसाय[12] या निवासस्थान का भी प्रभाव पिछड़ेपन पर पड़ता है (जैसे, ग्रामवासी नगर निवासियों की अपेक्षा अधिक पिछड़े होते हैं) । पिछड़ेपन के अवधारण में जाति एक सुसंगत परिस्थिति है किंतु यदि किसी समूह को अन्य सुसंगत बातों पर विचार करके पिछड़े वर्ग में रखा गया है तो इस वर्गीकरण को इस आधार पर अविधिमान्य नहीं माना जा सकता कि ऐसा करते समय जाति पर विचार नहीं किया गया है ।[13]

न्यायालय तब हस्तक्षेप करेगा जब किसी समुदाय को 'सामाजिक या आर्थिक दृष्टि से पिछड़े' वर्ग में रखने के पीछे कोई सिद्धांत नहीं है या अपनाया गया सिद्धांत मनमाना है[12] जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में साधारण निर्धनता के आधार पर राज्य की 80 प्रतिशत जनसंख्या के लिए आरक्षण किया गया है ।[14]

लोक नियोजन के विषय में अवसर की समता ।

16. (1) **राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति से संबंधित विषयों में सभी नागरिकों के लिए अवसर की समता होगी ।**

(2) राज्य के अधीन किसी नियोजन या पद के संबंध में केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, उद्भव, जन्मस्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर न तो कोई नागरिक अपात्र होगा और न उससे विभेद किया जाएगा ।

---

12. *त्रिलोकीनाथ* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, (1969) 1 एस.सी.डब्ल्यू.आर. 489; *वसंत* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1985 एस.सी. 1495 (सी.बी.) ।

13. *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1823 (*1827*) ।

14. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *प्रदीप*, ए. 1975 एस.सी. 563 ।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात संसद् को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो[15]*[किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार के या उसमें के किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन वाले किसी वर्ग या वर्गों के पद पर नियोजन या नियुक्ति के संबंध में ऐसे नियोजन या नियुक्ति से पहले उस राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के भीतर निवास विषयक कोई अपेक्षा विहित करती है]* ।

(4) इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को पिछड़े हुए नागरिकों के किसी वर्ग के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नहीं है, नियुक्तियों या पदों के आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगी ।

(5) इस अनुच्छेद की कोई बात किसी ऐसी विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी जो यह उपबंध करती है कि किसी धार्मिक या सांप्रदायिक संस्था के कार्यकलाप से संबंधित कोई पदधारी या उसके शासी निकाय का कोई सदस्य किसी विशिष्ट धर्म का मानने वाला या विशिष्ट संप्रदाय का ही हो ।

अनुच्छेद 16 का प्रविषय — खंड (1) और (2) सभी नागरिकों को राज्य के अधीन किसी पद पर नियोजन या नियुक्ति में समता की प्रत्याभूति देते हैं । अवसर की समता के इस नियम के अपवाद हैं खंड (3)-(5) ।

खंड (1) : नियुक्ति के विषय में समता — 1. अनुच्छेद 16(1) सभी नागरिकों को राज्य के अधीन नियोजन के लिए आवेदन करने के अवसर की समता प्रत्याभूत करता है ।[16] यह केवल संगठित लोक सेवाओं और संविदा के आधार पर धारित काडर बाह्य पदों तक ही सीमित नहीं है बल्कि ग्रामों के उन रूढ़िगत पदों को भी लागू होता है जिनकी नियुक्ति राज्य करता है और जो पद राज्य के अधीन धारण किए जाते है ।[17] यह राज्य के अधीन उन सभी "नियोजनों" को लागू होता है जहां किसी पद पर तो नियुक्ति नहीं होती है किंतु स्वामी और सेवक का संबंध होता है और राज्य के अधीन होने का तत्व भी विद्यमान होता है । अतएव यह सरकार को वस्तुओं के प्रदाय की संविदा को नहीं लागू होगा ।[17]

2. अनुच्छेद 16(1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार में निम्नलिखित सम्मिलित है, —

(क) सरकार के अधीन किसी पद के लिए आवेदन करने का अधिकार ।[16]

(ख) जिस पद के लिए आवेदन किया गया है उस पद के लिए गुणों के आधार पर विचार किए जाने का अधिकार ।[18]

इसका दूसरा पक्ष यह भी है कि —

(i) अनुच्छेद 16 का यह अर्थ नहीं है कि सरकार, उन प्रत्याशियों में से चयन नहीं कर सकती जो सरकार के अधीन नियोजन के लिए स्वयं को प्रस्तुत करते हैं । वह भी अन्य नियोजकों के समान ही चयन कर सकती है ।[19] नियुक्ति करने वाला प्राधिकारी सेवा की ऐसी पूर्वनिश्चित शर्तें भी रख सकता है जो सरकारी सेवकों में उचित अनुशासन रखने के लिए सहायक हों ।[19]

(ii) अनुच्छेद 14, 15 और 16 सांविधानिक प्रत्याभूतियों के भागरूप हैं ।[20] अतएव विभिन्न स्थितियों वाले कर्मचारियों से असम व्यवहार हो सकता है । जो अलग-अलग प्रकार के नियोजन चाहते हैं उनसे भी अलग-अलग व्यवहार हो सकता है ।[21]

15. कोष्ठक में दिए गए शब्द संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित किए गए थे ।

16. *कृष्ण चंद्र* बनाम *सेंट्रल ट्रेक्टर आर्गेनाइजेशन*, ए. 1962 एस.सी. 602 (*604*) ।

17. *रामा राव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 564 (*570*) ।

18. *उच्च न्यायालय* बनाम *अमल कुमार*, ए. 1962 एस.सी. 1704 ।

19. *बनारसीदास* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1956) एस.सी.आर. 357 (*361-62*) ।

20. *महाप्रबंधक* बनाम *रंगाचारी*, ए. 1962 एस.सी. 36 (*41*) ।

21. *आल इंडिया स्टेशन मास्टर्स एसोसिएशन* बनाम *महाप्रबंधक*, ए. 1960 एस.सी. 384 ।

3. दूसरे शब्दों में युक्तियुक्त वर्गीकरण के अपवाद का स्थान अनुच्छेद 16(1) के लागू होने में भी है ।[22] उदाहरण के लिए, —

जहां किसी सेवा या पद के लिए भर्ती विभिन्न स्रोतों से है, जैसे प्रत्यक्ष भर्ती, निचले पदों से प्रोन्नति, तो सरकार उस पद की उपेक्षा और आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए यह अवधारित करेगी कि विभिन्न स्रोतों के बीच कौन सा अनुपात पर्याप्त और साम्यापूर्ण होगा ।[12] यदि अनुपात इतना अयुक्तियुक्त नहीं है कि वह विभेदकारी गिना जाए तो न्यायालय न तो उसे विनष्ट कर सकेगा और न यह सुझाव दे सकेगा कि अनुपात क्या हो ।[23]

(क) यदि राज्य अपने अधीन किसी पद या नियोजन के लिए शर्तें और अर्हताएं अधिकथित करता है तो ये शर्तें सभी नागरिकों को लागू होनी चाहिए[18] [अनुच्छेद 16 के खंड (3)-(5) इसके अपवाद होंगे] ।

(ख) नियोजन के लिए राज्य द्वारा अधिकथित शर्तों और अर्हताओं का उस पद या साधारणतः लोक सेवा में नियोजन के लिए उपयुक्तता से युक्तियुक्त संबंध होना चाहिए । उदाहरणार्थ — अनुशासन के हित में ।[19]

(ग) यदि लोक सेवा के हित और विहित परीक्षण के बीच कोई सुसंगत संबंध नहीं है तो सरकार द्वारा अपनाया गया परीक्षण या शर्त अनुच्छेद 16 का उल्लंघनकारी होगा ।[19]

(घ) जहां भिन्न व्यवहार करने के लिए कोई भी कारण नहीं बताए जाते हैं[24] वहां विभेद समाप्त कर दिया जाएगा ।[25]

(iii) अनुच्छेद 16(1) द्वारा प्रत्याभूत अवसर की समता आत्यंतिक गुण नहीं है ।[19] यह किसी नियोजन या किसी पद के लिए नियुक्ति के लिए चयन के लिए युक्तियुक्त नियम बनाने का प्रतिषेध नहीं करती ।[19] नियुक्ति करने वाला प्राधिकारी नियुक्ति के लिए ऐसी पूर्व शर्तें रख सकता है जो सरकारी कर्मचारियों में दक्षता या समुचित अनुशासन रखने के लिए सहायक हों ।[19]

4. जो व्यक्ति अनुच्छेद 16(1) के उल्लंघन का परिवाद करता है उसे यह दिखाना होगा कि वह प्राधिकारी द्वारा विहित सभी परीक्षण और शर्तें पूरी करता है[26] और फिर भी उसे अवसर की समता से वंचित किया गया है । वह प्राधिकारी के दोषपूर्ण आदेशों का अवलंब नहीं ले सकता चाहे ऐसे आदेश दूसरे मामलों में अनेक बार हुए हों ।[27]

'नियुक्ति' के अंतर्गत प्रोन्नति है — 'नियोजन या नियुक्ति' शब्द इतने व्यापक हैं कि इसके अंतर्गत प्रोन्नति के मामले भी आ जाएंगे । चयन पदों के लिए प्रोन्नति भी इसमें सम्मिलित होगी ।[20]

अनुच्छेद 16(1) का वहां अतिलंघन होगा जहां एक ही ग्रेड में या एकीकृत ग्रेड में, जो विभिन्न स्रोतों से भर्ती किए गए और एक काडर में समामेलित किए गए लोगों से बना है,[28] विभिन्न पद धारण करने वाले सरकारी सेवकों को प्रोन्नति के अवसर की समता से वंचित किया जाता है ।[29] यदि व्यथित कर्मचारी अलग-अलग वर्गों के हैं[30] या एकीकरण

---

22. *भारत संघ* बनाम *मोरे*, ए. 1962 एस.सी. 630 ।

23. *गोविंद* बनाम *मुख्य नियंत्रक*, ए. 1967 एस.सी. 839 (*843*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 166, पैरा 12; *मर्विन* बनाम *सीमा-शुल्क कलक्टर*, (1966) 3 एस.सी.आर. 600 (*605*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 159 ।

24. *गवर्नमेंट ब्रांच प्रेस* बनाम *बेलिअप्पा*, ए. 1979 एस.सी. 429 (पैरा 21-22) ।

25. *जनार्दन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1983 एस.सी. 769 (पैरा 38) ।

26. *अमृतलाल* बनाम *कलक्टर*, ए. 1975 एस.सी. 538 ।

27. *भाटे* बनाम *भारत संघ*, ए. 1976 एस.सी. 363 (पैरा 8, 10) ।

28. *किशोरी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1139; *इलैक्ट्रीसिटी बोर्ड* बनाम *मोहन लाल*, ए. 1967 एस.सी. 1857 (*1861*) ।

29. *रोशनलाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1889 (*1893*) ।

30. *श्याम सुंदर* बनाम *भारत संघ*, (1969) 1 एस.सी.डब्ल्यू.आर. 294 (*298*) ।

पूरा नहीं हुआ है तो उल्लंघन नहीं होगा ।[31] यदि जिस वर्ग के कर्मचारियों की प्रोन्नति हुई है उसी वर्ग के किसी कर्मचारी पर विचार नहीं किया गया है तो इस अनुच्छेद का उल्लंघन होगा ।[32]

यह सरकारी सेवा में विभिन्न ग्रेड बनाने से मना नहीं करता । राज्य, प्रोन्नति के प्रयोजन के लिए कर्मचारियों का वर्गीकरण कर सकता है ।[33] ऐसी दशा में, न्यायालय तभी हस्तक्षेप कर सकता है जब भर्ती किए गए दो समूहों के बीच अंतर इतना नहीं है कि एक को दूसरे पर पूर्विकता दी जाए या दूसरे शब्दों में ऐसे अंतर और जिन पदों के लिए भर्ती की जा रही है उनकी प्रकृति में कोई युक्तियुक्त संबंध नहीं है ।[33]

जब विभिन्न स्रोतों से भर्ती किए गए व्यक्तियों का एक काडर में एकीकरण किया जाता है तब प्रोन्नति के विषय में उनके बीच इस आधार पर अंतर नहीं किया जा सकता कि वे भिन्न स्रोतों से लिए गए थे ।[29, 34] किंतु अन्य किसी आधार पर अंतर किया जा सकता है जैसे शैक्षिक अर्हता ।[35-36]

यह अनुच्छेद सरकार को सर्वोत्तम सेवा सुनिश्चित करने के लिए[36] या प्रोन्नति की पात्रता के लिए दक्षता की शर्तें[36] या अन्य अर्हताएं अधिकथित करने से रोकता नहीं है । यदि पद तकनीकी है तो भी साधारण शैक्षिक अर्हता की शर्त रखी जा सकती है ।[36]

यदि चयन ग्रेड या चयन पद पर प्रोन्नति गुणागुण और ज्येष्ठता के आधार पर की जानी है तो श्रेणी सूची में ज्येष्ठता के आधार पर प्रोन्नति का कोई अधिकार नहीं मिल जाता ।[37] ज्येष्ठता को तभी देखा जाएगा जब दोनों अधिकारियों के गुणागुण समान हैं । चयन पद या श्रेणी में प्रोन्नति के विषय में ज्येष्ठ अधिकारी परिवाद तभी कर सकता है जब उसके मामले पर अन्य पात्र प्रत्याशियों के साथ विचार नहीं किया गया है[38] अथवा सरकार का कार्य दुर्भाव से प्रेरित है ।[39]

जहां सुसंगत सांविधिक नियमों के अधीन कनिष्ठ अधिकारी नियुक्त होने पर केवल ज्येष्ठता के आधार पर उच्चतर पद पर प्रोन्नति का अधिकार प्राप्त कर लेता है वहां स्थिति भिन्न होगी ।[40]

'नियुक्ति' के अन्तर्गत सेवा की समाप्ति भी है — 1. अनुच्छेद 16 में नियुक्ति या नियोजन के अंतर्गत सेवा की समाप्ति है ।[41-42] जहां किसी कर्मचारी की सेवा समाप्त करने में मनमाना विभेद किया गया है वहां ऐसे नियोजन की समाप्ति को अनुच्छेद 16(1) लागू होगा । राज्य के अधीन नियोजन प्रसादपर्यन्त होता है — यह नियम इसके लागू होने के मार्ग में बाधा नहीं है ।[41] उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति का नियोजन इस आधार पर समाप्त किया गया

31. *केरल राज्य* बनाम *कृष्णन*, ए. 1978 एस.सी. 747 (पैरा 8-10) ।
32. *शिव दयाल* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1543 (पैरा 8) ।
33. *गोविंद* बनाम *मुख्य नियंत्रक*, ए. 1967 एस.सी. 839 (*842*) *केसबुक (I)*, पृष्ठ 165-66 ।
34. *मर्विन* बनाम *कलक्टर*, (1966) 3 एस.सी.आर. 600 (*607*) *केसबुक (I)*, पृष्ठ 161 ।
35. *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *त्रिलोकीनाथ*, ए. 1974 एस.सी. 1 (*12*) ।
36. *मैसूर राज्य* बनाम *नरसिंह राव*, ए. 1968 एस.सी. 349 ।
37. *सक्सेना* बनाम *भारत संघ*, ए. 1968 एस.सी. 754 (*759*); *भारत संघ* बनाम *जयराम*, ए. 1970 एस.सी. 2092; *प्रभाकर* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, (1969) 3 एस.सी.सी. 134 ।
38. *संतराम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1910 (*1914-15*) ।
39. *जय नारायण* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1318 ।
40. *वधवा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 423; *भारत संघ* बनाम *वसंत*, (1970) 3 एस.सी.सी. 658 ।
41. *कुंज बिहारी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 518 (*527*) ।
42. *गवर्नमेंट ब्रांच प्रेस* बनाम *बेलिअप्पा*, ए. 1979 एस.सी. 429 (पैरा 23, 24, 26); *जरनैल* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1986 एस.सी. 1626 (पैरा 33, 35) ।

है कि उसका विशेष रंग या ऊंचाई है या वह किसी अन्य राज्य का है या राजनीति में जिन्होंने कष्ट उठाया है उनके लिए स्थान बनाना है । ये सभी सेवा के लिए पूर्णतः असंगत अपेक्षाएं हैं ।

2. यदि कर्मचारी की इसलिए छंटनी की गई है कि वह निवारक निरोध विधि के अधीन निरुद्ध किया गया था[43] या वह विध्वंसकारी कार्यों में लगा था[44] तो यह मनमाना या विभेदकारी नहीं है । यह तभी हो सकता है जब यह दर्शित किया जाए कि जिन्हें सेवा में बने रहने दिया गया है वे भी इसी प्रकार के हैं ।[43] यह सिद्धांत वहां भी लागू होगा जहां कर्मचारियों के विभिन्न वर्गों को सेवानिवृत्ति की विभिन्न आयु लागू होती है ।[44क]

3. अनुच्छेद 16 की कोई बात सरकारी कर्मचारियों के स्थायी और अस्थायी कर्मचारियों के रूप में वर्गीकरण को और अस्थायी कर्मचारियों की सेवा की समाप्ति के लिए अलग ढंग उपबंधित करना प्रतिषिद्ध नहीं करती है ।[45] किंतु स्थायी कर्मचारी को सूचना तामील करके सेवोन्मुक्त करना अनुच्छेद 16 का उल्लंघन होगा ।[46]

4. अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन तब होगा जब सरकार सेवा से हटाने की सूचना या अनुपयुक्तता या आचरण का असंतोषजनक होना आदि का अवलंब न लेकर किसी अस्थायी सेवक की सेवा बिना कोई कारण दिए समाप्त कर देती है और इस बात पर बल देती है कि उसे ऐसा करने का अधिकार है तथा परिस्थिति ऐसी नहीं है जिसकी अनुच्छेद 311(2) के परंतुक (ग) से कोई समानता हो ।[42]

खंड (3) : निवास संबंधी अर्हता — खंड (1) और (2) में समता और विभेद के अभाव की जो प्रत्याभूति दी गई है उसका अपवाद खंड (3) है । यह सोचकर कि कभी कभी ऐसी स्थिति आ सकती है कि विकसित राज्यों के लोगों की अविकसित राज्यों में भरमार को रोकना, अविकसित राज्यों के हित में हो सकता है, संसद् को खंड (3) द्वारा यह शक्ति दी गई है कि वह किसी विशिष्ट राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में नियुक्ति के लिए निवास विषयक अर्हता विहित कर सकती है । किंतु इस शक्ति का प्रयोग संसद् द्वारा चुने गए संपूर्ण राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की बाबत ही किया जा सकता है । उसके किसी भाग के लिए नहीं जैसे, एक जिले, गांव आदि के लिए नहीं ।[47]

खंड (4) का प्रविषय : पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण — खंड (4) अपवाद है खंड (1) और (2) का ।[48] किंतु इसका विस्तार खंड (1) और (2) द्वारा आच्छादित समस्त क्षेत्र पर नहीं है ।[49] नियोजन से संबंधित कुछ ऐसे विषय जिनके बारे में खंड (1) और (2) में अवसर की समता की प्रत्याभूति दी गई है खंड (4) के प्रभाव क्षेत्र में नहीं आते हैं । उदाहरणार्थ, नियोजन की शर्तों के बारे में अर्थात् वेतन, वेतनवृद्धि, उपदान, पेंशन, अधिवर्षिता की आयु के संबंध में, नागरिकों के पिछड़े वर्गों के लिए भी कोई अपवाद नहीं हो सकता । खंड (4) एक ही बात के विषय में है और वह है पिछड़े वर्ग के नागरिकों के लिए नियोजन में आरक्षण ।[50]

---

43. *भारत संघ* बनाम *पांडुरंग*, ए. 1962 एस.सी. 630 ।

44. *बालकोटय्या* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 232 (*238*) ।

44क. *जीवन बीमा निगम* बनाम *श्रीवास्तव*, ए. 1987 एस.सी. 1527 (पैरा 25, 32, 34, 36) ।

45. *चंपकलाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1854 (*1860*) ।

46. *भंडारी* बनाम *आई.टी.डी.सी.*, ए. 1987 एस.सी. 111 (पैरा 4); *सी.जे.डब्ल्यू.टी.सी* बनाम *ब्रोजो*, ए. 1986 एस.सी. 1571 ।

47. *नरसिंह* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 422 (*425*) ।

48. *महाप्रबंधक* बनाम *रंगाचारी*, ए. 1962 एस.सी. 36 (*42*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 139; *देवदासन* बनाम *भारत संघ*, (1964) 4 एस.सी.आर. 680: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 154 ।

49. *राजेन्द्रन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1968 एस.सी. 507 (*511*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 168 ।

50. *त्रिलोकीनाथ* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1283 (*1285*) ।

खंड (4) अपवाद है अतएव उसका अर्थान्वियन कठोर होगा और इस प्रकार किया जाएगा कि जिससे खंड (1) द्वारा दी गई प्रत्याभूति व्यर्थ न हो जाए । जैसे, राज्य के पिछड़े वर्ग के नागरिकों के हित में राज्य की सभी या अधिकांश[48] नियुक्तियां, अर्थात् 50% से अधिक, आरक्षित नहीं की जा सकतीं ।[51] दूसरे शब्दों में अवसर की समता के सिद्धांत [खंड (1)] का पिछड़े वर्गों के पक्ष में [खंड (4)] इस प्रकार समन्वय किया जाना चाहिए कि पिछड़े वर्गों का हितसाधन भी हो और समता की घोषणा भी बनी रहे, समाप्त न हो ।[50]

इसका अर्थ यह है कि संपूर्ण राज्य में प्रश्नगत सेवा के काडर के लिए साधारण जन के नियोजन के अवसर, विभिन्न समुदायों की सदस्य संख्या, पिछड़ेपन की मात्रा आदि को ध्यान में रखते हुए जहां आरक्षण का प्रतिशत अयुक्तियुक्त है वहां ही न्यायालय हस्तक्षेप करेगा ।[50] अयुक्तियुक्त साबित करने का भार उस व्यक्ति पर है जो आरक्षण को चुनौती देता है और उसका कर्तव्य है कि वह न्यायालय के समक्ष उचित सामग्री प्रस्तुत करे ।[52] पिछड़े वर्ग के पक्ष में किए गए आरक्षण पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता कि जिनके पक्ष में आरक्षण किया गया है वे अत्यधिक लाभान्वित हो जाएंगे ।

अनुच्छेद 16(4) के निर्वचन के समय अनुच्छेद 335 भी पृष्ठभूमि में होना चाहिए ।[49] अनुच्छेद 16(4) एक समर्थकारी उपबंध है जो राज्य को यह विवेकशक्ति प्रदान करता है कि वह पिछड़े वर्ग के ऐसे नागरिकों के पक्ष में, जिसका उसकी राय में राज्य की सेवा में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है, नियुक्तियों का आरक्षण करे ।[49] यह पिछड़े वर्ग के सदस्यों को कोई सांविधानिक अधिकार प्रदान नहीं करता है और न ही भर्ती या प्रोन्नति के प्रक्रम पर उनके लिए आरक्षण करने का कर्तव्य राज्य पर डालता है । उच्चतर पदों के लिए, जिनमें अधिक मात्रा में दक्षता चाहिए, प्रोन्नति में आरक्षण का प्रतिषेध अनुच्छेद 16(4) का उल्लंघन नहीं है ।[49] जब पिछड़े वर्ग के प्रोन्नति से भर्ती किए गए लोगों के लिए प्रशिक्षण और कक्षाओं का प्रबन्ध किया जाता है ताकि वे दूसरों के समकक्ष स्तर पर आ सकें तब न्यायालय प्रोन्नति के लिए दक्षता की अपेक्षा के शिथिलीकरण को उचित मानेगा ।[53]

अस्पृश्यता का अंत ।

17. **"अस्पृश्यता" का अंत किया जाता है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया जाता है । "अस्पृश्यता" से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा ।**

उपाधियों का अंत ।

18. **(1) राज्य, सेना या विद्या संबंधी सम्मान के सिवाय और कोई उपाधि प्रदान नहीं करेगा ।**

(2) भारत का कोई नागरिक किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि स्वीकार नहीं करेगा ।

(3) कोई व्यक्ति, जो भारत का नागरिक नहीं है, राज्य के अधीन लाभ या विश्वास के किसी पद को धारण करते हुए किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि राष्ट्रपति की सहमति के बिना स्वीकार नहीं करेगा ।

(4) राज्य के अधीन लाभ या विश्वास का पद धारण करने वाला कोई व्यक्ति किसी विदेशी राज्य से या उसके अधीन किसी रूप में कोई भेंट, उपलब्धि या पद राष्ट्रपति की सहमति के बिना स्वीकार नहीं करेगा ।

51. *ए.बी.एस.के. संघ* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 298 (पैरा 110-14) ।
52. *पंजाब राज्य* बनाम *हीरालाल*, ए. 1971 एस.सी. 1777 ।
53. *ए.बी.एस.के. संघ* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 298 (पैरा 84) ।

स्वातंत्र्य-अधिकार

वाक्-स्वातंत्र्य आदि विषयक कुछ अधिकारों का संरक्षण ।

19. (1) सभी नागरिकों को —

(क) वाक्-स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य का,

(ख) शांतिपूर्वक और निरायुध सम्मेलन का,

(ग) संगम या संघ बनाने का,

(घ) भारत के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र अबाध संचरण का,

(ङ) भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग में निवास करने और बस जाने का, [1]*[और]*

* * * [1]

(छ) कोई वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारबार करने का,

अधिकार होगा ।

[2]*(2) खंड (1) के उपखंड (क) की कोई बात उक्त उपखंड द्वारा दिए गए अधिकार के प्रयोग पर* [3]*[भारत की प्रभुता और अखंडता], राज्य की सुरक्षा, विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों, लोक व्यवस्था, शिष्टाचार या सदाचार के हितों में अथवा न्यायालय-अवमान, मानहानि या अपराध-उद्दीपन के संबध में युक्तियुक्त निर्बन्धन जहां तक कोई विद्यमान विधि अधिरोपित करती है वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या वैसे निर्बन्धन अधिरोपित करने वाली कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी ।*

(3) उक्त खंड के उपखंड (ख) की कोई बात उक्त उपखंड द्वारा दिए गए अधिकार के प्रयोग पर [3]*[भारत की प्रभुता और अखंडता या]* **लोक व्यवस्था के हितों में युक्तियुक्त निर्बन्धन जहां तक कोई विद्यमान विधि अधिरोपित करती है वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या वैसे निर्बन्धन अधिरोपित करने वाली कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी ।**

(4) उक्त खंड के उपखंड (ग) की कोई बात उक्त उपखंड द्वारा दिए गए अधिकार के प्रयोग पर [3]*[भारत की प्रभुता और अखंडता या]* **लोक व्यवस्था या सदाचार के हितों में युक्तियुक्त निर्बन्धन जहां तक कोई विद्यमान विधि अधिरोपित करती है वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या वैसे निर्बन्धन अधिरोपित करने वाली कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी ।**

(5) उक्त खंड के [1]*[उपखंड (घ) और उपखंड (ङ)]* **की कोई बात उक्त उपखंडों द्वारा दिए गए अधिकारों के प्रयोग पर साधारण जनता के हितों में या किसी अनुसूचित जनजाति के हितों के संरक्षण के लिए युक्तियुक्त निर्बन्धन जहां तक कोई विद्यमान विधि अधिरोपित करती है वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या वैसे निर्बन्धन अधिरोपित करने वाली कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी ।**

(6) उक्त खंड के उपखंड (छ) की कोई बात उक्त उपखंड द्वारा दिए गए अधिकार के प्रयोग पर साधारण जनता के हितों में युक्तियुक्त निर्बन्धन जहां तक कोई विद्यमान विधि अधिरोपित करती है वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या वैसे निर्बन्धन अधिरोपित करने वाली कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी और विशिष्टतया [2]*[उक्त उपखंड की कोई बात]—*

---

1. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 19(1) के उपखंड (च) का लोप किया गया है । परिणामस्वरूप भारत के नागरिक को संपत्ति के अर्जन, धारण और व्ययन का कोई प्रत्याभूत सांविधानिक अधिकार नहीं है । न्यायालयों को यह शक्ति नहीं है कि संपत्ति के मूल अधिकार के उल्लंघन के परिणामस्वरूप किसी विधि को असांविधानिक घोषित करें । अनुच्छेद 19(1) के उपखंड (च) का लोप कर दिया गया है इसलिए इसके साथ ही उस अनुच्छेद के खंड (5) में उपखंड (4) के प्रति निर्देश का भी लोप किया गया ।

अनुच्छेद 31 का संविधान के भाग 3 से लोप किया गया । इस लोप का क्या परिणाम हुआ इस पर आगे अनुच्छेद 31 में विचार किया जाएगा ।

2. अनुच्छेद 19 के खंड (2) और खंड (6) का संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा संशोधन किया गया था ।

3. ये शब्द संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा 6-10-1963 से अंतःस्थापित ।

(i) कोई वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारबार करने के लिए आवश्यक वृत्तिक या तकनीकी अर्हताओं से, या

(ii) राज्य द्वारा या राज्य के स्वामित्व या नियंत्रण में किसी निगम द्वारा कोई व्यापार, कारबार, उद्योग या सेवा, नागरिकों का पूर्णतः या भागतः अपवर्जन करके या अन्यथा, चलाए जाने से,

जहां तक कोई विद्यमान विधि संबंध रखती है वहां तक उसके प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या इस प्रकार संबंध रखने वाली कोई विधि बनाने से राज्य को निवारित नहीं करेगी ।

अनुच्छेद 19(1) का उद्देश्य : राज्य की कार्यवाही के विरुद्ध प्रत्याभूति — अनुच्छेद 19(1) कुछ मूल अधिकार प्रत्याभूत करता है । यह प्रत्याभूति उन अधिकारों के प्रयोग पर निर्बन्धन अधिरोपित करने की राज्य की शक्ति के अध्ययीन है । इस अनुच्छेद का उद्देश्य राज्य की ऐसी कार्यवाही के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करना है जो लोकहित में प्राइवेट अधिकारों का विनियमन करने की शक्ति के वैध प्रयोग में नहीं की गई है । यदि कोई प्राइवेट व्यक्ति मूल अधिकार का उल्लंघन करता है तो उसका कार्य इस अनुच्छेद की परिधि में नहीं आएगा ।[4] किंतु जब राज्य की कार्यवाही को चुनौती दी जाती है तब उस आक्षेपित अधिनियम से लाभान्वित प्राइवेट व्यक्तियों को भी साथ में जोड़ा जा सकता है ।[5]

अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों की प्रकृति — अनुच्छेद 19 सिविल अधिकारों तक ही सीमित है । राजनैतिक अधिकारों को नहीं छूता । राजनैतिक अधिकार के उदाहरण हैं — मतदान का अधिकार[6] या राजनैतिक पद धारण करने का अधिकार ।

अनुच्छेद 19 उन अधिकारों से जुड़ा है जिन्हें नैसर्गिक या *कामन लॉ* अधिकार कहते हैं । ये उन अधिकारों से भिन्न है जिनकी सृष्टि संविधि से होती है । जो अधिकार किसी संविधि से जन्मता है उसका प्रयोग उस संविधि में अधिरोपित शर्तों के अधीन ही किया जा सकता है । उनके मामले में मूल अधिकारों के अतिलंघन का प्रश्न उपस्थित नहीं होता ।[7]

अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत अधिकार और संविदाजात अधिकारों में भी भेद करना चाहिए ।[8] कोई कारबार चलाने, या संपत्ति धारण करने और उस अधिकार की अनुषंगी संविदा करने का अधिकार मूल अधिकार है [तुलना कीजिए अनुच्छेद 19(1)(छ)] किंतु संविदा से उद्‌भूत होने वाले अधिकारों के लिए संविधान प्रत्याभूति नहीं देता है ।[8] ये अधिकार विधान द्वारा सीमित या अतिष्ठित किए जा सकते हैं ।[8]

अनुच्छेद 19(1) में सम्मिलित अधिकारों की परिधि — 1. हमारे संविधान में अव्यक्त या आरक्षित अधिकारों का उस प्रकार कोई उल्लेख नहीं है जैसा अमरीका के संविधान में है । फिर भी हमारे उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है[9] कि यदि याची ने जिस अधिकार का दावा किया है वह अनुच्छेद 19(1) के उपखंडों में विनिर्दिष्ट रूप से उल्लिखित नहीं है तो इस तथ्य से यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि वह हमारे संविधान के अधीन मूल अधिकार है ही नहीं :

---

4. *शामदासानी* बनाम *सेंट्रल बैंक आफ इंडिया*, ए. 1952 एस.सी. 59; *विद्या वर्मा* बनाम *शिवनारायण*, (1956) एस.सी.आर. 357 ।

5. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 725 (*730*) ।

6. *पुन्नुस्वामी* बनाम *रिटर्निंग आफिसर*, ए. 1952 एस.सी. 64 ।

7. *जमुना प्रसाद* बनाम *लच्छी राम*, (1955) 1 एस.सी.आर. 608; *देवता सिंह* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, ए. 1962 एस.सी. 201 ।

8. *रघुबर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1952 एस.सी. 263 (*274*); *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए. 1952 एस.सी 252; *कुरियाकोस* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 1509 (पैरा 6) ।

9. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 (पैरा 77) ।

(क) प्रत्येक क्रियाकलाप, जिसका स्रोत कोई उल्लिखित मूल अधिकार है या जो उस अधिकार के प्रयोग को सुकर बनाता है, अपरिहार्य रूप से मूल अधिकार नहीं है ।[9]

(ख) यदि जिस अतिरिक्त अधिकार का याची ने दावा किया है वह उल्लिखित मूल अधिकार का अभिन्न अंग है या उस मूल अधिकार के और उसकी मूल प्रकृति और अभिलक्षण एक ही जैसे हैं जिससे दावा किए गए अधिकार का प्रयोग वास्तव में और सारवान रूप से उल्लिखित मूल अधिकार के प्रयोग का ही उदाहरण है तो अव्यक्त अधिकार का अनुच्छेद 19(1) में उल्लिखित अधिकार के अनुषंग के रूप में दावा किया जा सकता है ।[9]

2. अनुच्छेद 19(1) में दी गई मूल अधिकारों की सूची में से संपत्ति के अधिकार का लोप कर दिया गया है ।[1] अब यह प्रत्याशा की जा सकती है कि कोई चतुर अधिवक्ता इस "अभिन्न अंग" वाले सिद्धांत का सदुपयोग करेगा ।

क्या अनुच्छेद 19 के अर्थान्तर्गत कोई निगम भी नागरिक हो सकता है — अनुच्छेद 19 द्वारा प्रदत्त अधिकार उन प्रकृत व्यक्तियों के लिए ही हैं[10] जो नागरिक है । अतएव निगम उस अनुच्छेद में सम्मिलित किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकता क्योंकि वह नागरिक नहीं है[11] चाहे उसके अंशधारक नागरिक हों ।[11] यद्यपि कोई कंपनी अनुच्छेद 19 का आश्रय नहीं ले सकती किंतु उसके अंशधारक किसी विधि की मान्यता को इस आधार पर चुनौती दे सकते हैं कि उस विधि द्वारा अनुच्छेद 19 के अधीन उनके मूल अधिकार का अतिलंघन हुआ है । कंपनी को उपयुक्त अभिवचन करके[12] कार्यवाही में संयुक्त किया जा सकता है ।[13]

इन्हीं कारणों से विदेशी नागरिक अनुच्छेद 19 के अधीन अधिकार का दावा नहीं कर सकता ।[14]

खंड (2)-(6) का उद्देश्य — कोई भी स्वतंत्रता आत्यंतिक या अनियंत्रित अथवा सर्वथा बंधनमुक्त नहीं हो सकती । यदि ऐसा हुआ तो अराजकता और अव्यवस्था उत्पन्न हो जाएगी । सभी अधिकारों की प्राप्ति और उपभोग ऐसी युक्तियुक्त शर्तों के अधीन होते हैं जो देश का शासन, समुदाय की सुरक्षा, स्वास्थ्य, शांति, साधारण व्यवस्था और नैतिकता के लिए आवश्यक समझे । साधारणतः प्रत्येक व्यक्ति को यह स्वतंत्रता है कि वह अपना जीवन जैसा चाहे वैसा चलाए । वह जो चाहे कहे, जहां चाहे जाए, अपनी इच्छा से कोई व्यापार, व्यवसाय या वृत्ति अपनाए और जो भी वह विधिसम्मत रूप से कर सकता है करे । इसमें कोई व्यक्ति बाधा या अवरोध नहीं खड़ा कर सकता । किंतु दूसरा पक्ष यह है कि इन अधिकारों के संरक्षण के लिए समाज को कुछ शक्तियां ग्रहण करनी चाहिए । संविधान लोगों के अधिकार घोषित करते समय व्यक्ति की स्वतंत्रता और सामाजिक नियंत्रण में संतुलन करता है । संविधान का अनुच्छेद 19 व्यक्ति की स्वतंत्रताओं की सूची प्रस्तुत करता है और विभिन्न खंडों में यह बताता है कि उन पर विधि द्वारा क्या-क्या निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं जिससे उनका लोक कल्याण या साधारण नैतिकता से संघर्ष न हो ।[15]

किसी विधि ने अनुच्छेद 19 के खंड (2)-(6) में विनिर्दिष्ट परिसीमाओं का अतिक्रमण किया है या नहीं यह अभिनिश्चित करना न्यायालय का कार्य है । यदि न्यायालय का यह मत है कि विधि द्वारा जो निर्बन्धन लगाए गए हैं वे खंड (2) से खंड (6) तक के खंडों द्वारा,

---

10. *अमृतसर नगरपालिका* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1100 (*1106*) ।

11. *बेरियम कैमिकल्स* बनाम *कंपनी लॉ बोर्ड*, ए. 1967 एस.सी. 295 (*305*); *टाटा इंजिनीयरिंग कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 40 (*48*) ।

12. *बैनेट कोलमैन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1973 एस.सी. 106· *केसबुक (I)*, पृष्ठ 206 ।

13. *डी.एफ.ओ.* बनाम *विश्वनाथ टी कंपनी*, ए. 1981 एस.सी. 1369 (पैरा 7) ।

14. *अनवर* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 337 (*388*) ।

15. *गोपालन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 88 (*253-54*), न्या. मुखर्जी; न्या. दास; *केसबुक (I)*, पृष्ठ 447 ।

जो भी लागू हो, अनुमत निर्बन्धनों से अधिक है तो वह उस विधि के अनुच्छेद 13 के अधीन उन्हें शून्य घोषित करेगा । यदि न्यायालय संवीक्षा करने के बाद यह पाता है कि विधि सांविधानिक परिसीमाओं के बाहर नहीं गई है तो न्यायालय उस विधि को मान्य ठहराएगा चाहे वह विधि को पंसद करे या नहीं ।[15]

खंड (2)-(6) के निर्बन्धन खंड निःशेषकारी हैं और इनका अर्थान्वयन कठोर होना चाहिए ।[16] खंड (1) के विभिन्न उपखंडों द्वारा घोषित मूल अधिकार खंड (2)-(6) के सुसंगत उपबंधों के अतिरिक्त किसी आधार पर काटे नहीं जा सकते ।[17]

आक्षेपित विधान और उससे संगत विनिर्दिष्ट आधारों के बीच विवेकपूर्ण[17] और निकट का[18] संबंध होना चाहिए । खंड (2)-(6) में से प्रत्येक में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "के हित में"[19] का भी यही प्रभाव है । जब निर्बन्धनकारी विधान और अनुज्ञेय आधार के बीच संबंध विवेकयुक्त है तब विधान मंडल को यह विवेकाधिकार है कि वह यह देखे कि किस प्रक्रम पर निर्बन्धन लगाना समीचीन होगा । विधान मंडल आशंकित या आसन्न क्षति के विरुद्ध भी कार्य कर सकता है । वास्तविक क्षति होने तक प्रतीक्षा करना आवश्यक नहीं है ।[20]

जहां निर्बन्धन विधिसम्मत है अर्थात् खंड (2)-(6) के अंतर्गत है वहां भी यदि अपनाया गया साधन असांविधानिक है तो निर्बन्धन अयुक्तियुक्त हो जाएगा ।[16]

सबूत का भार — 1. जब यह अभिनिर्धारित हो जाता है कि अनुच्छेद 19 लागू होता है और उसमें प्रगणित मूल अधिकार छीना गया है तो वह विधि सांविधानिक अविधिमान्यता से तभी बच सकती है जब वह अनुच्छेद 19 के खंड (2) से (6) में बताए गए अपवादों में आती हो ।[21] निर्बन्धनकारी अधिनियम को खंड (2)-(6) के उपबंधों से संरक्षा मिलती है यह दर्शाने का भार राज्य पर है ।[22]

2. यदि प्रत्यर्थी यह दर्शाता है कि आक्षेपित विधि निर्बन्धन के अनुज्ञेय आधारों में से किसी के अन्तर्गत आती है, जैसे, साधारण जनता का हित, लोक व्यवस्था आदि तो निर्बन्धन को अयुक्तियुक्त साबित करने का भार याची पर अंतरित हो जाएगा । इस कथन में इतना उपांतर करना होगा कि यदि निर्बन्धन प्रथमदृष्ट्या अयुक्तियुक्त प्रतीत होता है तो उसकी युक्तियुक्तता साबित करने के लिए अधिष्ठायी साक्ष्य की आवश्यकता नहीं होगी ।[23] इसके विपरीत तब राज्य को प्रतिग्रहणीय साक्ष्य देकर यह साबित करना होगा कि निर्बन्धन लोकहित में है और युक्तियुक्त है ।[20, 24]

3. खंड (2)-(6) के अधीन निर्बन्धन तभी वैध होंगे जब विधान मंडल द्वारा अधिरोपित किए गए हों । विधि का बल जिन्हें नहीं है ऐसे कार्यकारी आदेश या अनुदेश से लगाए गए निर्बन्धन कभी वैध नहीं हो सकते ।[25]

---

16. *सकाल पेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1962 एस.सी. 305 (*315*) *केसबुक (I)*, पृष्ठ 247, पैरा 31; *पी टी.आई.* बनाम *भारत संघ*, ए 1974 एस.सी. 1044 (पैरा 8) ।

17. *घोष* बनाम *जोसेफ*, ए. 1963 एस.सी. 812 (*814*) *केसबुक (I)*, पृष्ठ 324 [किंतु "निर्बन्धनों" को "अपवादों" से सुभिन्न दिखाना चाहिए, जो आगे अनुच्छेद 31क-31ग में अंतर्विष्ट हैं] ।

18. *सोढी शमशेर* बनाम *पेप्सू राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 276 ।

19. *अधीक्षक* बनाम *राम मनोहर*, ए. 1960 एस.सी. 633 ।

20. *वीरेन्द्र* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1957 एस.सी 896 (*899*) *केसबुक (I)*, पृष्ठ 187; *रामजीलाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1957) एस.सी.आर. 860 ।

21. *सगीर अहमद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 728 ।

22. *ब्रजलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 129 (*135*) ।

23. *चिंतामनराव* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 759: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 389 ।

24. *लक्ष्मी खांडसारी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 872 (पैरा 14) ।

25. *विजय* बनाम *केरल राज्य*, (1986) 3 एस.सी.सी. 615 (पैरा 14-17) ।

निर्बन्धन क्या है ? — जब किसी विधि पर यह आक्षेप किया जाता है कि वह मूल अधिकार पर निर्बन्धन लगाती है तब न्यायालय को विधान से क्या आभास होता है उसकी ओर ध्यान न देकर उसके सारतत्व की परीक्षा करनी होगी ।[26] विधान मंडल अप्रत्यक्ष रीति अपनाकर सांविधानिक प्रतिषेध की अवहेलना नहीं कर सकता ।[27]

विधान का प्रभाव इस प्रयोजन के लिए वहीं तक सुसंगत है जहां तक वह विधान का प्रत्यक्ष[28] और अपरिहार्य परिणाम है या जिनके बारे में यह कहा जा सकता है कि वे परिणाम विधान मंडल के ध्यान में थे । दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 19(1) का अवलंब तभी लिया जा सकता है जब कोई विधि मूल अधिकार का सीधे सीधे अतिलंघन करती है ।[28] किसी मूल अधिकार पर किसी विधि के संभावित, अप्रत्यक्ष या दूरवर्ती प्रभाव उस पर निर्बन्धन के रूप में है यह कहना उचित नहीं है ।[23] यदि कोई विधि किसी मूल अधिकार पर विधिमान्य निर्बंधन लगाती है और आनुषंगिक रूप से किसी अन्य अधिकार के प्रयोग में हस्तक्षेप करती है तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह उस अधिकार पर निर्बन्धन के समान है ।[26]

"प्रत्यक्ष और अपरिहार्य प्रभाव" की इस कसौटी पर जाचने के बाद यह नहीं कहा जा सकता कि विदेश जाने का अधिकार अभिव्यक्ति की स्वतत्रता या व्यवसाय की स्वतत्रता में सम्मिलित है [अनुच्छेद 19(1)(क)-(छ)] । किंतु यदि किसी विशिष्ट व्यक्ति को पासपोर्ट देने से इंकार करने का आदेश दिया जाता है तो यह आदेश इन मूल अधिकारों में से किसी का उल्लघन करेगा यदि ऐसा व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करने के लिए या अपनी वृत्ति के संबंध में विदेश जाना चाहता है ।[29]

यदि कोई अवरोध लगाया जाता है तो वह अनुच्छेद 19 के अर्थ में "निर्बन्धन" तभी होगा जब वह विधि द्वारा अधिरोपित किया जाता है और नागरिक को उसका पालन अनिवार्यतः करना है । यदि अवरोध अपने ही द्वारा लगाए गए हैं जैसे नागरिक ने अपनी इच्छा और विकल्प से कोई संविदा की है जिसके कारण कोई विधि लागू होती है तो वह विधि के अयुक्तियुक्त होने का परिवाद नहीं कर सकता ।[30]

"युक्तियुक्त" निर्बन्धन क्या है ? — "युक्तियुक्त निर्बन्धन" अभिव्यक्ति अनुच्छेद 19(1) के उपखंडों द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता और खंड (2) से (6) द्वारा अनुज्ञात सामाजिक नियंत्रण के बीच संतुलन स्थापित करने के लिए है ।[31] इसका अभिप्राय यह है कि किसी व्यक्ति के अधिकार के उपभोग पर लगाई गई परिसीमा न तो मनमानी हो और न लोकहित में जितनी आवश्यक है उससे अधिक हो । निर्बन्धन युक्तियुक्त तभी होगा जब इसका विधान के उद्देश्य से युक्तियुक्त संबंध हो और वह उद्देश्य की सीमा से अतिरेक न करे ।[23, 31]

निर्बन्धन अधिष्ठायी और प्रक्रियात्मक दोनों दृष्टि से युक्तियुक्त होना चाहिए । आसपास की सभी परिस्थितियों पर विचार किया जाना चाहिए । निर्बन्धन की अंतर्वस्तु को उनके अधिरोपित करने की रीति से या उनके व्यवहार में लाने के ढंग से विलग नहीं किया जा सकता ।[32]

जहां भी युक्तियुक्तता का परीक्षण विहित है वहां वह उसी अधिनियम पर लागू किया जाएगा जिस पर आक्षेप किया गया है । युक्तियुक्तता का कोई काल्पनिक मानक या

---

26. *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 578 (*619*) *केसबुक (I)*, पृष्ठ 220-22 ।

27. *हमदर्द दवाखाना* बनाम *भारत संघ*, ए 1960 एस.सी. 554: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 400 ।

28. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, (1960) 3 एस.सी.आर. 887 (*914*); *बैनेट कोलमैन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1973 एस.सी. 109: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 249 ।

29. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 (पैरा 82) ।

30. *खड़क सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी 1295 (*1299*) ।

31. *पोथुमा* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1978 एस.सी. 771 (पैरा 8, 14-15, 18, 20, 22, 24-25) ।

32. *डॉ. खरे* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 519: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 337; *गुरबचन* बनाम *मुंबई राज्य*, (1952) एस.सी आर. 737 (*742*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 343 ।

साधारण नमूना नहीं बताया जा सकता जो सभी मामलों को लागू हो ।[31] न्यायिक निर्णय में इन सभी बातों पर विचार होना चाहिए — उस अधिकार की प्रकृति जिसका अभिकथित अतिलंघन हुआ है, जो निर्बन्धन लगाए गए हैं उनके पीछे का प्रयोजन, जिस दोष को विधान द्वारा दूर किया जा रहा है उसका विस्तार और आसन्नता, निर्बन्धन का अनुपात से अधिक होना और तत्समय विद्यमान परिस्थितियां ।[33]

वह विधि, जो किसी रिष्टि का निवारण करने के लिए बनाई गई है उस रिष्टि से बहुत अधिक मात्रा में निर्बन्धन लगाती है, अधिष्ठायी दृष्टि से अयुक्तियुक्त होगी ।[34-35] निर्बन्धन की युक्तियुक्तता का अवधारण करने में न्यायालय को लोकहित पर और इस बात पर भी ध्यान देना होगा कि यदि अधिकार पर अंकुश नहीं लगाया गया तो क्या इससे कोई खतरा या क्षति हो सकती है । जो निर्बन्धन जनता की रक्षा की आवश्यकता के अनुपात में है वह अत्यधिक या अयुक्तियुक्त नहीं हो सकता[36] चाहे उससे किसी व्यक्ति का संपत्ति का अधिकार समाप्त हो जाता हो[36] या कुछ मामलों में[37] या छोटे व्यापारियों को उससे कष्ट होता हो ।[38]

संक्षेप में निर्बन्धन की युक्तियुक्तता का निर्णय करते समय न्यायालय को केवल नागरिक के दृष्टिकोण से ही नहीं देखना चाहिए बल्कि यह भी देखना चाहिए कि विधान मंडल के सामने समस्या क्या थी और विधि का उद्देश्य क्या है ।[31] जब विधि का आशय समाज कल्याण को संरक्षण देना है तो न्यायालय को विद्यमान सामाजिक मूल्यों की ओर दृष्टिपात करना चाहिए और यह भी देखना चाहिए कि जब निर्बन्धन अधिरोपित किए जा रहे थे उस समय क्या परिस्थितियां थीं ।[39]

भाग 4 के निदेशों को क्रियान्वित करने के लिए अधिरोपित निर्बन्धन युक्तियुक्त माने जाएंगे । यदि निर्बन्धन किसी निदेश के विपरीत हैं तो उन्हें युक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता ।[40]

विधान मंडल यह अंतिम या निश्चायक रूप से तय नहीं कर सकता कि अमुक निर्बन्धन उचित है । विधान मंडल का निर्णय न्यायालय के अधीक्षण के अधीन है ।[35] संविधान के भाग 4 में सम्मिलित राज्य की नीति के निदेशक तत्वों में से अधिकांश द्वारा इंगित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए लगाए गए निर्बन्धन अब अनुच्छेद 31-31ग अंतःस्थापित करके अनुच्छेद 19 के संरक्षण के बाहर कर दिए गए हैं ।[40]

अधिष्ठायी और प्रक्रियात्मक युक्तियुक्तता

(अ) अधिष्ठायी — अधिष्ठायी युक्तियुक्तता के अवधारण के लिए न्यायालय को कई बातों पर विचार करना होगा, जैसे जिस अधिकार के अतिलंघन का अभिकथन है उसकी प्रकृति, निर्बन्धन का प्रयोजन, जिस समस्या को दूर किया जा रहा है उसकी निकटता और विस्तार, निर्बन्धन का असमानुपाती होना, तत्समय प्रवृत्त दशाएं ।[33]

अनुच्छेद 19(1) द्वारा प्रदत्त किसी एक अधिकार पर लगाए गए निर्बन्धन की

---

33. *मद्रास राज्य* बनाम *राव*, (1952) एस.सी.आर. 597 (*607*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 308; *हरकचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 1453 (*1463*); *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *हिम्मतभाई*, ए. 1970 एस.सी. 1157 (*1163*) ।

34. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *बलदेव*, ए. 1961 एस.सी. 293 (*298*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 355; *अब्बास* बनाम *भारत संघ*, ए. 1971 एस.सी. 481 (*496*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 276 ।

35. *चिंतामनराव* बनाम *मध्य प्रदेश*, (1950) एस.सी.आर. 759: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 389 ।

36. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *राव*, ए. 1971 एस.सी. 1157 (*1163*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 308 ।

37. *शिवराजन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1959 एस.सी. 556 (*559*) ।

38. *कर्नाटक राज्य* बनाम *हंसा कारपोरेशन*, ए. 1981 एस.सी. 463 (पैरा 21) ।

39. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *कौशल्या*, ए. 1964 एस.सी. 416 (*422*) ।

40. *लक्ष्मी खांडसारी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 372 (पैरा 33-34) ।

युक्तियुक्तता के बारे में न्यायालय का विनिश्चय किसी दूसरे अधिकार पर अधिरोपित निर्बन्धन की विधिमान्यता का निर्णय करने में पूर्वदृष्टांत के रूप में कोई महत्व नहीं रखता क्योंकि युक्तियुक्तता तो प्रत्येक मामले के अलग-अलग तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करेगी ।[33] इसी प्रकार जो अस्थायी अधिनियम में युक्तियुक्त माना जा सकता है वह हो सकता है कि स्थायी अधिनियम में युक्तियुक्त न हो ।

कोई विधि जो इतनी अस्पष्ट और अनिश्चित है कि वह किसी व्यक्ति को यह नहीं बताती है कि कौन सा कार्य या आचरण उसका उल्लंघन होगा, अधिष्ठायी दृष्टि से अयुक्तियुक्त होगी ।[34]

खतरनाक या घृणोत्पादक व्यापार, उपजीविका या कारबार को प्रतिषिद्ध करना "युक्तियुक्त निर्बन्धन" होगा । उदाहरणार्थ, शराब का उत्पादन और व्यापार[41] या अपमिश्रित खाद्य पदार्थ[42] या मनःप्रभावी पादपों की खेती या स्त्रियों का दुर्व्यापार[37] या दलाली (टाउट) का काम[43] या इनामी चिटें ।[44] आवश्यक वस्तुओं के कारबार के विषय में भी यही स्थिति है ।[45]

किंतु —

(i) सामान्य व्यापार या जीविका की दशा में अभिव्यक्त प्रतिषेध अयुक्तियुक्त होगा । यदि किसी निर्बन्धन का व्यवहार में प्रभाव उसे पूर्ण रूप से बंद करना है तो वह भी अयुक्तियुक्त होगा ।[46]

(ii) वाक् और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर लगाया गया पूर्ण प्रतिषेध प्रथमदृष्ट्या असांविधानिक होगा ।[47]

(iii) विधि की युक्तियुक्तता का अवधारण करने के लिए उसका भूतलक्षी प्रभाव भी विचारणीय तत्व है किंतु वह केवल इस कारण ही अयुक्तियुक्त नहीं हो जाएगी कि उसका प्रभाव भूतलक्षी है ।[48] यदि कोई विधि भविष्य में प्रवृत्त होती है तो उसे सिर्फ इसीलिए भूतलक्षी नहीं कहा जा सकता कि वह सभी विद्यमान अधिकारों पर लागू होती है ।[49]

(आ) प्रक्रियात्मक पहलू — 1. निर्बन्धन अधिरोपित करने की रीति[50] और उसे प्रवृत्त करने के लिए उपबंधित प्रक्रिया इस पहलू में आते हैं । निर्बन्धन युक्तियुक्त हो तब भी न्यायालय यह देखेगा कि उसे अधिरोपित करने की रीति भी युक्तियुक्त है या नहीं ।[50]

यह सब विधियां प्रक्रिया के दृष्टिकोण से अयुक्तियुक्त है, — कोई विधि जो व्यक्तिपरक समाधान के आधार पर कार्यपालिका को किसी संगम पर प्रतिबंध लगाने की,[51] या किसी व्यक्ति के स्वामित्व के अधिकारों का उपभोग करने पर[52] या कारबार[53] पर निर्बन्धन लगाने की शक्ति देती है ।[50]

2 यदि अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से कहा गया है कि कोई अधिकारी किस

---

41. *कुंवरजी* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, (1944) एस.सी.आर. 873; *नाशिरवार* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 360 (पैरा 35) ।

42. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *करतार सिंह*, (1964) 6 एस.सी.आर 679 (*687*) ।

43. संत राम का मामला, (1960) 3 एस.सी.आर 499 ।

44. *श्रीनिवास इंटरप्राइसेज* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 504 (पैरा 12-13) ।

45. *नरेन्द्र* बनाम *भारत संघ*, (1960) 2 एस.सी.आर. 375 ।

46. *रशीद अहमद* बनाम *म्यूनिसिपल बोर्ड*, (1950) एस.सी.आर. 566; *यासिन* बनाम *शहर क्षेत्र समिति*, (1952) एस.सी.आर. 572 ।

47. *वीरेन्द्र* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 896 (*899*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 187 ।

48. *हीरालाल* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए. 1973 एस.सी. 1034 (*1039*) ।

49. *त्र्यंबक* बनाम *आसाराम*, ए. 1966 एस.सी. 1758 ।

50. *खरे* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 519: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 337 ।

51. *मद्रास राज्य* बनाम *राव*, (1952) एस.सी.आर. 597, पृष्ठ 308 ।

52. *रघुबीर* बनाम *प्रतिपाल्य अधिकरण* (कोर्ट आफ वार्ड्स), (1953) एस.सी.आर. 1049 ।

53. *हरिचंद* बनाम *मिजो जिला परिषद*, ए. 1967 एस.सी. 829 ।

नीति के अनुसार[54] या किस प्रयोजन से[51] किसी विवेकशक्ति का प्रयोग करेगा तो यह शक्ति अनिर्बन्धित या अविनियमित नहीं है ।[54]

3. न्यायालय सरकार के नीति विषयक निर्णय में हस्तक्षेप नहीं करेगा (जैसे, निर्यात नियंत्रण) । वह तभी हस्तक्षेप करेगा जब वह स्पष्ट रूप से अयुक्तियुक्त या मनमाना है । किंतु यदि न्यायालय की पुनर्विलोकन की शक्ति पर प्रतिबंध लगाया जाता है तो यह स्वयमेव अयुक्तियुक्त होगा ।[55]

अनुच्छेद 21-22 के अधीन विधियों की युक्तियुक्तता — देखिए आगे अनुच्छेद 21 ।

अनुच्छेद 265 के अधीन विधियों की युक्तियुक्तता — अनुच्छेद 265 के अधीन आने वाली कराधान विधि[56] को भी अनुच्छेद 17 के खंड (5) और खंड (6) के अधीन युक्तियुक्तता के परीक्षण में उत्तीर्ण होना पड़ेगा [देखिए, आगे अनुच्छेद 265] ।

पृथक्करणीयता का सिद्धांत : जब निर्बन्धन अयुक्तियुक्त हो तो क्या यह सिद्धांत लागू होगा ? — जब कोई विधि किसी मूल अधिकार पर निर्बन्धन अधिरोपित करती है और उन निर्बन्धनों की भाषा इतनी व्यापक है कि संविधान द्वारा अनुज्ञेय सीमा के बाहर के निर्बन्धन भी उसकी व्याप्ति में आ जाते हैं तो यह कहकर उसे सांविधानिक करार नहीं दिया जा सकता कि वह सांविधानिक सीमा के भीतर ही लागू होंगे । जब तक इस बात की संभावना रहती है कि निर्बन्धन ऐसे प्रयोजनों को भी लागू हो सकते हैं जो संविधान द्वारा अनुज्ञात नहीं किए गए हैं तो उस विधि को पूर्णतः असांविधानिक और शून्य घोषित करना होगा ।[57]

हम यह मानकर चल रहे हैं कि अवचारी उपबंध पृथक् नहीं किए जा सकते हैं । किंतु यदि विधान मंडल ने ही उन उपबंधों को विभाजित कर दिया है तो यह अवधारणा लागू नहीं होगी । जहां विधान मंडल ने "सभी एल्कोहलयुक्त द्रव पदार्थों" को कब्जे में रखने का या उनके विक्रय का प्रतिषेध किया है जिससे ऐसी औषधीय और प्रसाधन निर्मितियों की बाबत अनुच्छेद 19(1)(च) का अतिलंघन होता है जिनमें एल्कोहल है वहां यदि विधान मंडल ने एल्कोहाली लिकर के विषय में विभिन्न प्रवर्गों मे विचार किया है तो यह निर्बन्धन औषधीय और प्रसाधन निर्मितियों की बाबत ही शून्य होगा, अन्य एल्कोहाली द्रव्यों की बाबत नहीं ।[58]

अनुच्छेद 19 के अपवाद — इसकी सूची वही है जो अनुच्छेद 19 के अधीन दी गई है ।

मूल अधिकारों पर मूल कर्त्तव्यों का अप्रत्यक्ष नियंत्रण — जैसा कि पहले बताया जा चुका है संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा एक नया भाग 4क [अनुच्छेद 51क] अंतःस्थापित किया गया है जिसका शीर्षक है "मूल कर्त्तव्य" । ये कर्त्तव्य अपने आप पूरे नहीं हो सकते । इसके उल्लंघन के लिए संविधान में किसी दंड का उपबंध भी नहीं है । किंतु संविधान में उनके सम्मिलित किए जाने के परिणामस्वरूप न्यायालय उन कर्त्तव्यों को अधिकारों के साथ पढ़कर उनका समन्वयकारी निर्वचन करेंगे । जैसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मानते हुए कोई न्यायालय किसी व्यक्ति को राष्ट्रध्वज या राष्ट्रधुन का अनादर या

---

54. *हरिशंकर* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 465; *ओरिएंट वीविंग मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 98 ।

55. *भारत संघ* बनाम *दमाणी*, ए. 1980 एस.सी. 1149 (पैरा 13-14, 20) ।

56. *बालाजी* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1962 एस.सी. 123; *जगन्नाथ* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 148; *कुन्नाथात* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 552 केसबुक (*I*), पृष्ठ 111 ।

57. *चिंतामनराव* बनाम *मध्य प्रदेश*, (1950) एस.सी.आर. 759; *रमेश थापर* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 594 ।

58. *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, (1951) एस.सी.आर. 682; *अधीक्षक* बनाम *राम मनोहर*, ए. 1960 एस.सी. 633 (*642*) ।

वाणिज्यिक उपयोग नहीं करने देगा । इसी प्रकार कोई व्यक्ति धार्मिक आधार पर सैनिक सेवा में इंकार नहीं कर सकता या महिलाओं की प्रतिष्ठा के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकता । यदि विधान मंडल कोई विधि बनाता है जिसमें इन कर्तव्यों के किसी विनिर्दिष्ट उल्लंघन को दंडित किया जाता है तो न्यायालयों को अनिवार्य रूप से यही अर्थान्वयन करना होगा कि यह निर्बन्धन युक्तियुक्त है । अनुच्छेद 31ग के अंतःस्थापन के पहले भी निदेशक तत्वों को क्रियान्वित करने के लिए बनाए गए विधानों को इसी प्रकार विधिमान्य ठहराया गया था [देखिए आगे अनुच्छेद 51क] ।

आपात के दौरान अनुच्छेद 19 का निलंबन — देखिए आगे अनुच्छेद 358-359 ।

खंड (1)(क) : वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य — इस स्वतंत्रता का अर्थ है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचार और मत पूर्णतया अभिव्यक्त करने का अधिकार है । वह चाहे बोलकर, लिखकर, मुद्रण से, चित्र द्वारा या किसी अन्य रीति से करे (चक्षु या कर्ण के माध्यम से) । इसमें प्रैस की स्वतंत्रता तो सम्मिलित है ही, साथ ही किसी भी दृश्य निरूपण द्वारा भावभंगिमा से, अपने विचार अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता है । अभिव्यक्ति में एक दूसरे पक्षकार की उपधारणा होती है जिसे विचार संप्रेषित किया जा रहा है । संक्षेप में, अभिव्यक्ति में "प्रकाशन"[59] का तत्व सम्मिलित है । सामान्य हित के विषयों पर विचार और सूचना ग्रहण करने और प्राप्त करने का अधिकार भी इसी के अंतर्गत है ।[60]

वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य के निर्बन्धन के आधार — संशोधन के बाद अनुच्छेद 2 विधान मंडल को निम्नलिखित आधारों पर वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर निर्बन्धन अधिरोपित करने की शक्ति देता है —*

(i) राज्य की सुरक्षा, (ii) विदेशी राज्यों के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध, (iii) लोक व्यवस्था, (iv) शिष्टाचार या सदाचार, (v) न्यायालय-अवमान, (vi) मानहानि, (vii) अपराध उद्दीपन, (viii) भारत की प्रभुता और अखंडता ।

(i) **'राज्य की सुरक्षा'** — राज्य की सुरक्षा से अभिप्रेत है गम्भीर और उग्र लोक अव्यवस्था का अभाव । यह लोक सुरक्षा या लोक व्यवस्था के साधारण भंग से भिन्न है जिसमें राज्य को कोई खतरा उत्पन्न नहीं होता । उदाहरण के लिए, राज्य की सुरक्षा को ऐसे हिंसात्मक अपराधों से खतरा होता है जिनका आशय सरकार को पलटना[61] सरकार के विरुद्ध युद्ध और विद्रोह करना, बाह्य आक्रमण या युद्ध है । किंतु लोक व्यवस्था या प्रशांति के छोटे-मोटे भंग से जैसे विधि विरुद्ध जमाव, दंगा, बल्वा, उतावलेपन से वाहन चलाना, दो वर्गों के बीच शत्रुता फैलाना आदि से राज्य की सुरक्षा को खतरा नहीं होता ।[60] पर हत्या जैसे हिंसक अपराधों के लिए उद्दीपन करना राज्य की सुरक्षा को आघात पहुंचा सकता है ।[62]

आज की सभी दुरव्यवस्थाओं के लिए क्रांतिकारी समाजवाद को एकमात्र औषधि के रूप में प्रतिपादित करना इसमें नहीं आएगा जब तक कि हिंसा के प्रयोग पर बल न दिया जाए ।[62]

(ii) **'विदेशी राज्यों से मैत्रीपूर्ण संबंध'** — वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य से इस अपवाद का उद्देश्य विदेशी राज्यों के विरुद्ध अपमान वचन रोकना है जिससे उनके साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बने रहें ।

---

59. *रोमेश थापर बनाम मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 594 ।
60. *हमदर्द दवाखाना बनाम भारत संघ*, (1960) 2 एस.सी.आर. 671 ।
61. *संतोख सिंह बनाम दिल्ली प्रशासन*, ए. 1973 एस.सी. 1091 (*1093*) ।
62. *बिहार राज्य बनाम शैलबाला*, (1952) एस.सी.आर. 654 (*658*) ।

(iii) **'लोक व्यवस्थाएं'** — वर्तमान संदर्भ में लोक व्यवस्था का अर्थ है 'लोक शांति, सुरक्षा और प्रशांति' ।[63]

इसका यह अर्थ हुआ कि —

(अ) लोक व्यवस्था के हित में राज्य निम्नलिखित पर निर्बन्धन लगा सकता है —

(क) (i) सरकारी कर्मचारियों को लोक सुरक्षा के लिए अथवा सामुदायिक जीवन के लिए आवश्यक सेवाओं को बनाए रखने के लिए आवश्यक नियोजन में लगे हुए व्यक्तियों पर सेवाएं विधारित करने का उद्दीपन ।[64]

(ii) ऊपर निर्दिष्ट वर्ग के कर्मचारियों में अनुशासन भंग करने का उद्दीपन ।[64]

(iii) समुदाय के विभिन्न वर्गों के बीच शत्रुता या घृणा के भाव फैलाना अथवा उनकी धार्मिक भावनाओं का अपमान करना ।[65]

(ख) ध्वनि विस्तारक का प्रयोग — जहां यह संभाव्यता है कि उससे लोक न्यूसेंस होगा, या मकानों में रहने वाले या अस्पतालों के और इसी प्रकार के अन्य आवासियों के स्वास्थ्य पर प्रभाव पड़ेगा ।[66]

(आ) किंतु इस बात के लिए उकसाने पर कि सरकार को कर आदि न दिए जाएं, लोकहित के आधार पर निर्बन्धन नहीं लगाया जा सकता जब तक कि हिंसा के प्रयोग के लिए न उकसाया जाए ।[63]

(iv) **'शिष्टाचार या सदाचार'** — इस अपवाद का प्रयोजन उन भाषणों और प्रकाशनों पर निर्बन्धन लगाना है जो नैतिकता पर आघात करते हों ।[66]

कोई कथन शिष्टाचार या सदाचार के विरुद्ध है या नहीं इस प्रश्न का अवधारण इस बात से होगा कि जिन लोगों को वह संबोधित है, उन पर उसका आगे प्रभाव होना अधिसंभाव्य है ।[67] श्रोताओं की आयु, संस्कृति और इसी प्रकार की अन्य बातें तात्विक महत्व की हो जाती हैं । किंतु यदि केवल गाली-गलौच की भाषा का प्रयोग किया जाता है और जिन व्यक्तियों की उपस्थिति में वे दी जाती हैं उनके प्रति कोई अश्लीलता नहीं की जाती है तो यह कार्य इस आधार के अंतर्गत नहीं आएगा ।[68]

अश्लीलता के विरुद्ध बनाई गई विधि को इस खंड से संरक्षण प्राप्त होगा ।[65] अश्लील से अभिप्रेत है शील या शिष्टाचार के विरुद्ध; अभद्र, गंदा, घृणोत्पादक ।[65] किंतु यदि कोई प्रतिरूपण लोकहित में किसी विचार या सूचना के प्रसारण के लिए है तो शिष्टाचार या सदाचार के हित में उसे युक्तियुक्त रूप से निर्बन्धित नहीं किया जा सकता जैसे आयुर्विज्ञान की पुस्तकों में दिए गए प्रतिरूपण ।[67] साधारणतया जो विचार सामाजिक महत्व के हैं उन्हें प्रथमदृष्टया संरक्षण प्रदान नहीं किया जाएगा जब तक कि अश्लीलता इतनी मुखर न हो और इतनी स्पष्ट न हो कि लोकहित में उसे रोकना आवश्यक हो । अश्लीलता का प्रश्न मात्रा का प्रश्न है और संबंधित समुदाय के नैतिक स्तर के अनुसार बदलता रहता है ।[67]

अश्लीलता की कसौटी यह है कि क्या उस समूचे प्रकाशन को पढ़ने पर वह ऐसे लोगों को पतित और भ्रष्ट होने की दिशा में ले जाने वाला है जिन पर ऐसा अनैतिक प्रभाव

---

63. *अधीक्षक* बनाम *राम मनोहर*, ए. 1960 एस.सी. 633; *मधु लिमये* बनाम *उपखंड मजिस्ट्रेट*, ए. 1971 एस.सी. 2486 ।

64. *दलबीर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1106 ।

65. *वीरेन्द्र* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 896; *रामजी लाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 620 ।

66. *राजस्थान राज्य* बनाम *चावला*, (1959) सप. (1) एस.सी.आर. 904 ।

67. *रणजीत* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 881 (*885*) : (1965) 1 एस.सी.आर. 65 (*69, 74, 75*) जिसमें 'लेडी चैटरलीज लवर' को अश्लील माना गया ।

68. *करतार सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1956 एस.सी. 541 ।

पड़ सकता है और जिनके हाथों में वह प्रकाशन पहुंच सकता है । प्रत्येक कृति की पृथक् रूप से परीक्षा की जानी चाहिए । किसी अन्य अशिष्ट या अश्लील पुस्तक से उसकी तुलना करने से उसकी गुणवत्ता में सुधार नहीं होगा । जहां अश्लीलता और कला मिश्रित हैं वहां उस कृति के संरक्षण के लिए यह आवश्यक है कि कला का पलड़ा इतना भारी हो कि अश्लीलता पीछे चली जाए या अश्लीलता इतनी अल्प मात्रा में हो कि उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता हो और उसकी उपेक्षा की जा सकती हो ।[69]

वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य तथा लोक शिष्टाचार और नैतिकता के बीच संतुलन रखा जाना चाहिए । किंतु जहां शिष्टाचार और नैतिकता का पर्याप्त रूप से उल्लंघन होता है वहां स्वतंत्रता पर निर्बन्धन लगाया जा सकेगा ।[67] हमारे देश में, हमारे समाज की परंपराओं को ध्यान में रखते हुए यह परीक्षण स्वयं करना होगा और यदि सामाजिक प्रयोजन प्रबल नहीं है तो अश्लीलता को वाक् स्वातंत्र्य का सांविधानिक संरक्षण नहीं मिलेगा ।[69]

(v) **'न्यायालय का अवमान'** — वाक् स्वातंत्र्य और अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य के अधिकार का प्रयोग करते हुए कोई भी व्यक्ति न्याय के कार्य में हस्तक्षेप नहीं कर सकता[70] या किसी न्यायालय की आलोचना करने का दिखावा करते हुए न्यायालय की प्रतिष्ठा या प्राधिकार को नीचा नहीं कर सकता ।[71]

किंतु इस अधिकारिता का प्रयोग बहुत कम अवसरों पर किया जाना चाहिए क्योंकि यह अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर निर्बन्धन के रूप में है ।[72]

(vi) **'मानहानि'** — जिस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी प्रतिष्ठा का भी अधिकार है । यह अधिकार सम्पत्ति समझा जाता है । अतएव कोई भी व्यक्ति अपनी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग दूसरे व्यक्ति की प्रतिष्ठा को क्षति पहुंचाने के लिए नहीं कर सकता । जो विधियां मानहानि के लिए दंडित करने के लिए बनाई गई हैं वे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अतिलंघन नहीं करती हैं ।[70]

(vii) **'अपराध उद्दीपन'** — हत्या जैसे गम्भीर अपराध के उद्दीपन को दंडित या निवारित करने के लिए विधान इसी आधार पर बनाए जा सकते हैं । यही नहीं, किसी भी अपराध को करने के लिए उद्दीपन को दंडित या निवारित करने के लिए विधान बनाए जा सकते हैं । साधारण खंड अधिनियम के अनुसार 'अपराध' से ऐसा कोई कार्य या लोप अभिप्रेत है जो तत्समय प्रवृत्त किसी विधि द्वारा दंडनीय है । अतएव किसी भी व्यक्ति को कोई भी ऐसा कार्य करने के लिए नहीं उकसाया जा सकता जिसे करना किसी विधि द्वारा प्रतिषिद्ध है या दंडनीय है ।[71]

(viii) **'भारत की प्रभुता और अखंडता'** — संविधान के 16वें संशोधन द्वारा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन के आधार पर इस धारा को जोड़ा गया है । इसका उद्देश्य दक्षिण में द्रविड़ मुन्नेत्र कषगम और कश्मीर में जनमत मोर्चा जैसे संगठनों द्वारा देश के विभाजन की मांग को और उसके अनुसरण में किए गए कार्यकलाप को रोकना था । यह समझा जाता था कि संभवतः 'राज्य की सुरक्षा' अभिव्यक्ति के अन्तर्गत ये क्रियाकलाप नहीं आते हैं ।

संविधान के अधीन केवल अप्रीति को दंडित नहीं किया जा सकता : राजद्रोह की विधि — किसी भी दल की सरकार की आलोचना ऐसा आधार नहीं है जिस पर अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को निर्बन्धित किया जा सके । ऐसा तभी किया जा सकेगा जब उसका आशय राज्य की सुरक्षा

69. *अब्बास बनाम भारत संघ*, ए. 1971 एस.सी. 481 (*498*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 273, 288 ।
70. *नम्बूदिरीपाद बनाम नम्बियार*, ए. 1970 एस.सी. 2015 (*2019*) ।
71. *दफ्तरी बनाम गुप्ता*, ए. 1971 एस.सी. 1132 (*1145*) ।
72. *रामदयाल बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1978 एस.सी. 921 (पैरा 11) ।

या लोक व्यवस्था को क्षति पहुंचाना है या किसी अपराध का उद्दीपन करना है ।[73] राजद्रोह अर्थात् सरकार के विरुद्ध अप्रीति या बुरी भावनाएं उत्पन्न करना अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को निर्बन्धित करने का अनुच्छेद 19(2) के अधीन कोई आधार नहीं है ।[73-74]

केदारनाथ बनाम *बिहार राज्य*[73] में उच्चतम न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 124क का संकीर्ण निर्वचन करके उसे असांविधानिक होने से बचा लिया है । उच्चतम न्यायालय ने यह कहा है कि इस धारा के अधीन कोई कथन तभी दंडनीय होगा जब उसकी प्रवृत्ति अव्यवस्था उत्पन्न करने की या हिंसा का सहारा लेकर लोक शांति भंग करने की है । उच्चतम न्यायालय ने यह भी संप्रेक्षण किया है कि 'विधि द्वारा स्थापित सरकार' अभिव्यक्ति को उन व्यक्तियों से पृथक् करके समझा जाना चाहिए जो उस समय प्रशासन चला रहे हैं । विधि द्वारा स्थापित सरकार' राज्य का मूर्त प्रतीक है । धारा 124क के अधीन सत्तारूढ़ सरकार की आलोचना दंडनीय नहीं हो सकता । चाहे आलोचना कितनी भी कठोर क्यों न हो । किंतु ऐसे कथन दंडनीय होंगे जिनकी प्रवृत्ति या आशय हिंसा द्वारा विद्यमान सरकार का तख्ता पलटने की है ।

हड़ताल और पिकेट करने का अधिकार — संविधान के अनुच्छेद 19(1) के किसी भी उपखंड में हड़ताल करने का कोई मूल अधिकार नहीं है ।[75]

निर्बन्धनों की युक्तियुक्तता — अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर लगाए गए निर्बन्धन की युक्तियुक्तता अवधारित करते समय हमारे संविधान द्वारा उपबंधित लोकतंत्र की सरकार में स्वतंत्रता की आवश्यकता और अव्यवस्था तथा अराजकता को रोकने के सामाजिक हित के बीच सतुलन स्थापित करना होगा ।[76]

जब कोई व्यक्ति आदेशानुसार निरुद्ध किया जाता है तब भी उसका पढ़ने का मूल अधिकार बना रहता है ।[77] किंतु उसे ऐसा साहित्य पढ़ने से निवारित किया जा सकता है जो राज्य की सुरक्षा के या अनुच्छेद 19(2) में विनिर्दिष्ट अन्य सामाजिक हितों के प्रतिकूल हो ।[78]

प्रेस की स्वतंत्रता — हमारे संविधान के अधीन प्रेस की स्वतंत्रता की कोई पृथक् प्रत्याभूति नहीं है । सभी नागरिकों को जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी गई है उसी में यह व्यवस्था है ।[79-80] हमारे संविधान के अधीन प्रेस की स्वतंत्रता सामान्य नागरिक की स्वतंत्रता से उच्चतर नहीं है ।[79] इस पर वे सभी मर्यादाएं लगाई जा सकती हैं जो अनुच्छेद 19(2) द्वारा अधिरोपित हों । किंतु इसके अतिरिक्त और कोई मर्यादाएं नहीं लगाई जा सकतीं ।[80] उदाहरणार्थ, प्रेस को निम्नलिखित से कोई उन्मुक्ति नहीं है —

(क) साधारण कराधान ।[81]

(ख) औद्योगिक संबंधों की साधारण विधि का लागू होना ।[71, 81]

(ग) कर्मचारियों की सेवाओं की शर्तों का विनियमन ।[81]

(घ) न्यायालय अवमान की विधि ।[82]

73. *केदारनाथ* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 955 ।

74. *रोमेश थापर* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 594 (*602*) ।

75. *आल इंडिया बैंक एम्प्लाईज़ एसोसिएशन* बनाम *राष्ट्रीय औद्योगिक अधिकरण*, ए. 1962 एस.सी. 171 (*181*), *कामेश्वर* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1962 एस.सी 1166 ।

76. *संतोख सिंह* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1973 एस.सी. 1091 (*1094*) ।

77. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *प्रभाकर*, ए. 1966 एस.सी. 424 ।

78. *नारायणन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 केरल 97 (99) ।

79. *वीरेन्द्र* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 986 ।

80. *सकल पेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 305: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 242 ।

81. *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 578 (*614*) ।

82. *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण*, ए. 1959 एस.सी. 395 (*402*) ।

(ङ) अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप किए बिना समाचार की वाणिज्यिक गतिविधियों का विनियमन ।[83]

(च) मानहानि की विधि, सिविल और दांडिक ।[84]

प्रेस की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन क्या है — 1. कोई भी निर्बन्धन जो प्रकाशन, सूचना प्रसारित करने के या परिचालित करने के,[80-81] अधिकार को प्रभावित करता है प्रेस की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन है । प्रकाशन के अधिकार में न केवल अपने विचार प्रकाशित करने का अधिकार है बल्कि अन्य संवाददाताओं के विचारों का प्रकाशन भी है ।[79] परिचालन के अधिकार में विषय-वस्तु का परिचालन भी है और परिचालन की मात्रा भी है ।[80, 83]

2. समाचारपत्र से यह अपेक्षा करना कि वह विज्ञापनों के लिए स्थान को कम करे, उसके परिचालन को प्रत्यक्षतः प्रभावित करेगा क्योंकि उसकी कीमत में वृद्धि हो जाएगी ।[80, 83]

3. अधिकतम पृष्ठ संख्या या कीमत का स्तर तय करने से भी परिचालन की मात्रा पर प्रभाव पड़ेगा ।

4. समाचारपत्र को आबंटित कागज के उपयोग पर निर्बन्धन लगाने से उसके उत्पादन या परिचालन की मात्रा पर प्रभाव पड़ेगा ।

प्रेस की स्वतंत्रता पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन — राज्य के लिए निम्नलिखित कार्य करना वैध नहीं होगा :

(क) प्रेस को ऐसी विधियों के अध्यधीन करना जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को छीनती हैं या कम करती हैं या जिनसे परिचालन में कमी होगी, सूचना के प्रसारण की परिधि सीमित हो जाएगी या इस अधिकार के प्रयोग के लिए सत्य चुनने की उसकी स्वतंत्रता पर मर्यादाएं लग जाने से उसकी स्वतंत्रता समाप्त हो जाएगी क्योंकि उसे सरकार की सहायता लेनी पड़ेगी ।[81, 83]

(ख) प्रेस को अलग करके उस पर अत्यधिक और प्रतिषेधात्मक भार डालने से उसका परिचालन निर्बन्धित हो जाएगा । प्रेस को अपने उपकरणों को चुनने के अधिकार पर या आनुकल्पिक माध्यम चुनने के अधिकार पर शास्ति अधिरोपित करना ।[81, 83]

(ग) प्रेस पर कोई विनिर्दिष्ट कर जानबूझकर यह सोचकर लगाना कि उससे सूचना के परिचालन की सीमा बंध जाएगी ।[81]

(घ) प्रेस और पुस्तक रजिस्ट्रीकरण अधिनियम की घोषणा को प्रभावित व्यक्ति को सुनवाई का अवसर दिए बिना रद्द कर देना ।[85]

(ङ) समाचारपत्रों से यह अपेक्षा करना कि वे या तो अपनी पृष्ठ संख्या कम करें या राज्य द्वारा विहित अनुसूची के अनुसार अपनी कीमत बढ़ाएं ।[81, 83] इस अपेक्षा का आधार खंड (2) से असंबद्ध था अर्थात् समाचार पत्रों में प्रतियोगिता समाप्त करना ।[80, 83]

(च) प्रेस को कानूनी मजदूरी संरचना के अधीन करना जिसका वेतन संदाय करने की क्षमता से कोई संबंध नहीं है और जो उसकी वित्तीय क्षमता से बाहर है ।[86]

(छ) किसी भवन को गिराने का आशय यह है कि उस भवन में स्थित समाचारपत्र का कारबार ठप्प हो जाए ।[87]

पूर्वसेंसर की सांविधानिकता — 1951 में संविधान में जो पहला संशोधन किया गया था उसके पहले अनुच्छेद 19(2) में "युक्तियुक्त निर्बन्धन" शब्द नहीं थे ।[88]

1951 के संशोधन द्वारा न्यायालय को इस बात के लिए सशक्त किया गया कि वह अनुच्छेद 19(1)(क) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार द्वारा अधिरोपित निर्बन्धन की युक्तियुक्तता का

83. *बेनेट कोलमैन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1973 एस.सी. 106 (*124-25*: *केसबुक (I)*, पृष्ठ 259-64 ।

84. *सेवकराम* बनाम *करजिया*, ए. 1981 एस.सी. 1514 (पैरा 11) ।

85. *गोपाल दास* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, ए. 1973 एस.सी. 213 (*215*) ।

86. *पी.टी.आई.* बनाम *भारत संघ*, ए. 1974 एस.सी. 1044 (पैरा 25) ।

87. *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, (1986) 1 एस.सी.सी. 133 (पैरा 73-76) ।

88. *रमेश थापर* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 594; *बृज भूषण* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 605 ।

निर्णय करे और ऐसा निर्बन्धन तभी शून्य किया जा सकेगा जब वह अयुक्तियुक्त हो । अतएव यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि, —

आपात की परिस्थितियों में पूर्वानुमान के आधार पर की गई कार्यवाही युक्तियुक्त होगी । उदाहरणार्थ, — शांति भंग का निवारण करने के लिए ।[89] किसी परिस्थिति में कोई निर्बन्धन युक्तियुक्त होगा या नहीं यह अवधारित करने के लिए विभिन्न परीक्षण करने होंगे जैसे आवश्यकता, अवधि, प्रभावित प्रकाशनों की प्रकृति, आदि ।[90] उदाहरणार्थ —

(i) आपात की अवधि के दौरान शांति भंग का निवारण करने के लिए (जैसे साम्प्रदायिक आंदोलन) किसी समाचारपत्र में किसी विनिर्दिष्ट वर्ग के विषय के प्रकाशन पर अस्थायी निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं किंतु यह तब जबकि नैसर्गिक न्याय के नियमों का अनुपालन किया जाता है ।[90]

(ii) यदि कोई प्रैस जनता में गम्भीर अपराध करने के लिए उद्दीप्त करता है तो उससे प्रतिभूति की माग करना अयुक्तियुक्त नही होगा ।[90]

(iii) प्रक्रियात्मक रक्षोपायों के अधीन रहते हुए सिनेमा फिल्मों का सेंसर किया जाना विधिमान्य है ।[91]

(iv) यदि कार्यवाही स्थायी है तो वह तभी विधिमान्य होगी जब उसमें युक्तियुक्त रक्षोपाय किए गए हैं ।[92]

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और मूल कर्तव्य — अनुच्छेद 51क (देखिए आगे) द्वारा अंतःस्थापित मूल कर्तव्यों के कारण कोई भी व्यक्ति अभिव्यक्ति या प्रैस की स्वतंत्रता के प्रयोग में निम्नलिखित में से कोई कार्य नहीं कर सकता[93] —

(क) सविधान और उसकी आदर्श सस्थाए, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान का अनादर,
(ख) भारत की प्रभुता, एकता और अखडता को क्षति पहुंचाना,
(ग) सभी लोगों में समान भ्रातृत्व की भावना को समाप्त करना,
(घ) भारत की सामासिक सस्कृति की गौरवशाली परंपरा का अपमान करना ।

सरकारी सेवकों को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता — देखिए आगे अनुच्छेद 309 ।

खंड (1)(ख) : सम्मेलन की स्वतंत्रता — 1 इस खंड में नागरिकों को एक दूसरे से मिलने की स्वतंत्रता दी गई है । बस इतना ही है कि यह (क) शांतिपूर्ण और (ख) निरायुध होना चाहिए ।[94] अन्य अधिकारों के समान यह अधिकार भी आत्यंतिक नहीं है । लोक व्यवस्था के हित में इस पर 'युक्तियुक्त निर्बन्धन' लगाए जा सकते हैं ।[92] सार्वजनिक सभा करने का या शोभा यात्रा (जुलूस) निकालने का अधिकार संविधान में विनिर्दिष्ट रूप से नहीं दिया गया है किंतु सम्मेलन के अधिकार में ये भी समाहित है ।[83, 89] उदाहरणार्थ,

दड प्रक्रिया संहिता की धारा 144(1) यह प्राधिकार देती है कि शांति के आसन्न भंग को निवारित करने के लिए सभाओं और जुलूसों को प्रतिबद्ध करने के अस्थायी आदेश दिए जा सकते हैं । यह इस स्वतंत्रता का युक्तियुक्त निर्बन्धन है ।[81, 95] इसी धारा की उपधारा (6) को इस आधार पर अविधिमान्य ठहराया गया है कि उसके अधीन किया गया आदेश स्थायी भी हो सकता है और उसमें कोई भी प्रक्रियात्मक रक्षोपाय नहीं है ।[92]

2. शोभा यात्रा निकालने का अधिकार, यातायात नियंत्रण के विनियमों के अधीन

---

89. *बाबूलाल* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1961 एस.सी 884 (*891*); *मधु लिमये* बनाम *उपखंड मजिस्ट्रेट*, ए. 1971 एस.सी. 746 (*758*) *केसबुक (I)*, पृष्ठ 303 ।

90. *वीरेन्द्र* बनाम *पंजाब राज्य*, (1958) एस.सी.आर. 308 (*320*): *केसबुक (I)*, पृष्ठ 193 ।

91. *अब्बास* बनाम *भारत सघ*, ए. 1971 एस.सी. 481 (*495*); *रंगराजन* बनाम *जगजीवन*, (1989) 2 एस.सी.सी. 574 (पैरा 10) ।

92. *बिहार राज्य* बनाम *मिश्रा*, (1970) 3 एस.सी.सी. 337 (*344-45*) ।

93. बयालीसवें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा लगाई गई अन्य परिसीमा, अर्थात् अनुच्छेद 31घ का तैंतालीसवें संशोधन अधिनियम, 1977 द्वारा लोप कर दिया गया है ।

94. *हिम्मतलाल* बनाम *पुलिस आयुक्त*, ए. 1973 एस.सी. 87 (*95*) ।

95. *मधु लिमये* बनाम *उपखंड मजिस्ट्रेट*, (1970) 3 एस.सी.सी. 746 (*758*) ।

है ।[94, 96] किंतु इस संबंध में पुलिस[94] या कार्यपालिका को अबाध और मनमाना अधिकार देना अयुक्तियुक्त निर्बन्धन होगा ।[94]

3. प्राइवेट संपत्ति पर सभा करने का कोई मूल अधिकार नहीं है ।[94] सरकारी संपत्ति पर भी सभा करने का कोई अधिकार नहीं है चाहे सभा करने वाले सभी सरकारी कर्मचारी ही क्यों न हों ।[97]

सम्मेलन की स्वतंत्रता और मूल कर्त्तव्य — सम्मेलन के अधिकार का प्रयोग करते समय व्यक्ति को अनुच्छेद 51क में दिए गए मूल कर्तव्यों का उल्लंघन नहीं करना चाहिए, जैसे, लोक संपत्ति का विनाश नहीं करना चाहिए ।

सरकारी सेवकों को सम्मेलन का अधिकार — देखिए आगे अनुच्छेद 309 ।

खंड (1)(ग) : संगम की स्वतंत्रता — इस खंड द्वारा प्रत्याभूत अधिकार एक सामान्य अधिकार है जो सभी नागरिकों को संगम बनाने के लिए प्राप्त है । यदि किसी विशेष अधिनियम द्वारा किसी निकाय के सदस्य के रूप में कार्य करने का अधिकार दिया गया है तो यह अधिनियम द्वारा प्रदत्त अधिकार है, सांविधानिक अधिकार नहीं ।[98]

'बनाने' में संगम को प्रारंभ करना भी है और उसे चालू रखना भी ।[98-99] इसी में संगम के सदस्य बनने से इंकार करने का अधिकार भी है ।[100] इसमें यह अधिकार भी है कि किसी सोसाइटी का गठन इस प्रकार नहीं बदला जाएगा कि वे लोग भी सदस्य बना दिए जाएं जो स्वेच्छा से सोसाइटी बनाने के लिए सदस्य नहीं बने थे ।[99] सरकार ऐसी शर्त नहीं लगा सकती जिससे विवश होकर किसी व्यक्ति को सदस्यता छोड़नी पड़े ।[1] किंतु यदि किसी सोसाइटी द्वारा स्थापित महाविद्यालय को अनिवार्य रूप से किसी विश्वविद्यालय से सहयुक्त किया जाता है तो यह इस अधिकार का हनन नहीं होगा ।[2]

संगम और संघ बनाने के अधिकार में सभी विधिसम्मत प्रयोजनों के लिए संगम बनाने का अधिकार है; जैसे, व्यवसाय संघ (ट्रेड यूनियन) ।[3] सरकारी सेवकों को भी यह संरक्षण प्राप्त है ।[1]

संघ बनाने का अधिकार सभी कर्मचारियों को है अतएव प्रत्येक कर्मकार को यह अधिकार है कि वह अपनी इच्छानुसार कोई संघ बनाए या यदि वह चाहे तो किसी भी संघ का सदस्य नहीं बने ।[1] इसी प्रकार कोई संघ यह दावा नहीं कर सकता कि उसे एकाधिकार है या यदि कुछ कर्मकार दूसरा कोई संघ बनाते हैं तो पुराने संघ को परिवाद करने का अधिकार नहीं है ।[4]

किन्तु —

(क) जहां किसी सरकारी सेवक की सेवाएं इस आधार पर समाप्त की जाती हैं कि वह साम्यवादी दल का सदस्य है तो इससे संगम बनाने के मूल अधिकार का अतिलंघन नहीं

---

96. तुलना कीजिए, *पीर बख्श* बनाम *कालन्दी*, ए. 1970 एस.सी. 1885 (*1888*) ।

97. *रेल बोर्ड* बनाम *निरंजन*, ए 1969 एस.सी 966 ।

98. *कुलकर्णी* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1954 एस सी 73 ।

99. *दमयंती* बनाम *भारत संघ*, ए. 1971 एस.सी. 966 ।

100. *सीतारामाचारी* बनाम *ज्येष्ठ उपनिरीक्षक*, ए. 1958 ए.पी. 78; *टीकारामजी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1956 एस.सी. 676 (*709*) में एक इतरोक्ति यह है कि नकारात्मक अधिकार मूल अधिकार नहीं हो सकता ।

1. *ओ.के. घोष* बनाम *जोसेफ*, ए. 1963 एस.सी. 812 (*815*) ।

2. *डी.ए.वी. कालेज* बनाम *पंजाब राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 269 (*281*) ।

3. *आल इंडिया बैंक एम्प्लाईज़ एसोसिएशन* बनाम *राष्ट्रीय औद्योगिक अधिकरण*, ए. 1962 एस.सी. 171 (*179*) ।

4. *आर.आर.डब्ल्यू. यूनियन* बनाम *रजिस्ट्रार*, ए. 1967 कलकत्ता 507 (*508*) ।

होता क्योंकि समाप्ति के आदेश से वह साम्यवादी दल का सदस्य बने रहने से निवारित नहीं होता । उसकी सेवाएं सरकार के प्रसाद पर है । सेवाओं में बने रहने का कोई मूल अधिकार नहीं है ।[5]

(ख) उपखंड (ग) द्वारा प्रत्याभूत संगम बनाने की प्रत्याभूति में यह प्रत्याभूति नहीं है कि इस प्रकार बनाए गए संगम के उद्देश्यों और प्रयोजनों में खंड (4) में विनिर्दिष्ट आधारों पर ही हस्तक्षेप किया जाएगा अन्यथा नहीं अर्थात् केवल लोक व्यवस्था और नैतिकता के आधार पर ।[3]

(ग) किसी संगम की रचना के पश्चात् उसके अधिकार उन नागरिकों से भिन्न नहीं हो सकते जिनसे मिलकर वह बना है ।[5] कारण यह है कि अनुच्छेद 19 नागरिकों को अधिकार प्रदान करता है । कोई संगम उस अनुच्छेद के अधीन अधिकार का दावा इसी आधार पर कर सकता है कि वह नागरिकों का समूह है ।[3] संघ बनाने का अधिकार खंड (ग) में है । संघ के सदस्यों के सम्मेलन करने का अधिकार खंड (ख) में मिलेगा । उनके एक स्थान से दूसरे स्थान को जाने का अधिकार खंड (घ) से प्राप्त होगा । यदि इस प्रकार अभिनिर्धारित नहीं किया जाए तो इसका यह अर्थ होगा कि नागरिकों को जो व्यापार या कारबार करने का अधिकार खंड (1) के उपखंड (ज) द्वारा दिया गया है उस पर लगाए गए निर्बन्धनों की विधिमान्यता का निर्णय खंड (6) में विहित कसौटी पर किया जाएगा । यदि कोई नागरिक किसी से मिलकर वही कार्य भागीदारी या कंपनी के रूप में चलाता है तो उसके अधिकार व्यापक हो जाएंगे क्योंकि तब निर्बन्धनों के परीक्षण का मानक भिन्न होगा । अर्थात् खंड (4) में अधिकथित होगा । यह निर्वचन उचित नहीं है ।[3]

(घ) संगम बनाने के अधिकार में सामूहिक समझौते या हड़ताल करने का अधिकार सम्मिलित नहीं है ।[3,6] यह अधिकार कारबार, वृत्ति या उपजीविका की स्वतंत्रता से उत्पन्न होता है जिसकी प्रत्याभूति उपखंड (छ) में दी गई है । इस पर खंड (6) में बताए गए आधारों पर निर्बंधन लगाया जा सकता है अर्थात् साधारण जनता के हित में ।[6]

(ङ) इस अनुच्छेद द्वारा प्रत्याभूत, संगम बनाने के अधिकार में, उस संगम के लिए सरकार की मान्यता प्राप्त करने का अधिकार नहीं है ।[7] मान्यता देने के लिए सरकार ने जो शर्तें लगाई हैं उन्हें इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि वे संगम बनाने की स्वतंत्रता पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन हैं ।[7-8]

खंड (4) : अधिकार पर निर्बंधन — खंड (1)(ग) द्वारा प्रत्याभूत संगम बनाने के अधिकार पर निर्बन्धन खंड (4) में विनिर्दिष्ट आधार पर ही लगाए जा सकते हैं । अर्थात् भारत की प्रभुता और अखंडता या लोक व्यवस्था[9] या सदाचार[99, 9] के हितों में ।

निर्बंधनों की युक्तियुक्तता

(अ) अधिष्ठायी पक्ष — (i) इस अधिकार के प्रयोग पर ऐसा कोई निर्बन्धन नहीं लगाया जा सकता जो उसके प्रयोग पर पूर्व निर्बन्धन के रूप में हो या जो प्रशासनिक सेंसर के रूप में हो ।[10]

(ii) सरकार अपने कर्मचारियों को इस बात के लिए बाध्य नहीं कर सकती कि प्रत्येक कर्मचारी सरकार द्वारा प्रायोजित संगम का सदस्य बने ।[11]

5. *बालाकोटय्या बनाम भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 232 ।
6. *कामेश्वर बनाम बिहार राज्य*, (1962) सप. (3) एस.सी.आर. 369 ।
7. *रघुबर बनाम भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 263 (*270*) ।
8. *कुलकर्णी बनाम मुंबई राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 73 ।
9. *दिल्ली पुलिस संघ बनाम भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी. 379 (पैरा 8) ।
10. *ओ.के. घोष बनाम जोसेफ*, ए. 1963 एस.सी. 812 (*815*) ।
11. *सीतारामाचारी बनाम ज्येष्ठ उपनिरीक्षक*, ए. 1958 ए.पी. 78 ।

(iii) इस अधिकार पर अनिश्चित काल के लिए कार्यपालिका की इच्छानुसार लगाया गया निर्बन्धन अयुक्तियुक्त होगा ।[12]

(आ) प्रक्रिया पक्ष — अनुच्छेद 19(1)(ग) द्वारा प्रत्याभूत संगम या संघ बनाने का अधिकार इतना व्यापक और अनेकरूपी है कि इसके प्रयोग और उस पर लगाए गए नियंत्रण का धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक क्षेत्रों में इतना प्रभाव पड़ता है कि यदि सरकार को निर्बन्धन अधिरोपित करने का अधिकार दिया जाता है किंतु निर्बन्धन के आधार उपदर्शित नहीं किए जाते हैं और निर्बन्धनों के तथ्यात्मक और विधिक पक्षों का न्यायिक जांच द्वारा सम्यक् रूप से परीक्षण करने का अवसर नहीं है तो अनुच्छेद 12(1)(ग) के अधीन मूल अधिकार पर लगाए निर्बन्धन युक्तियुक्त है या नहीं, यह अवधारण करने में इन सब बातों पर विचार किया जाएगा । कम से कम सुनवाई का अवसर तो होना ही चाहिए ।[13]

सरकारी सेवकों को संगम की स्वतंत्रता — देखिए आगे अनुच्छेद 307 ।

खंड (1)(घ) : संचरण की स्वतंत्रता — 1 अनुच्छेद 19(1) के उपखंड (घ) में प्रयुक्त "भारत के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र" शब्द "संचरण की स्वतंत्रता" के अर्थ को स्पष्ट करते हैं । इसमें "दैहिक स्वतंत्रता" के प्रति निर्देश नहीं है । दैहिक स्वतत्रता अनुच्छेद 21 का विषय है ।[14] पश्चात्वर्ती निर्णयों से यह स्थापित हो गया है कि अनुच्छेद 19(1)(घ) और 21 परस्पर व्यापी हैं [देखिए आगे अनुच्छेद 21][15] ।

2. इस उपखंड द्वारा प्रत्याभूत निर्बाध संचरण का अधिकार साधारण आने-जाने के अधिकार से संबंधित नहीं है । यह भारत के राज्यक्षेत्र में एक स्थान को, राज्यों के बीच या एक ही राज्य के विभिन्न भागों मे बिना किसी विभेदकारी बंधन के सचरण का अधिकार है ।[14] यदि किसी नागरिक के एक राज्य से दूसरे राज्य को जाने या राज्य के भीतर आने-जाने पर निर्बन्धन लगाए जाते हैं तो ऐसे निर्बन्धन अनुच्छेद 19(6) द्वारा खींची गई रेखा के भीतर ही होने चाहिए । जैसे, लोक राजमार्ग के उपयोग पर या उन पर वाहन चलाने का निर्बन्धन ।[16]

3 अनुच्छेद 19(1) के उपखंड (घ) से जिस अधिकार को सुरक्षा प्रदान की गई है वह निर्बाध संचरण के अधिकार का एक विनिर्दिष्ट और सीमित पक्ष है । अनुच्छेद 21 के अधीन प्रदत्त दैहिक स्वतंत्रता से ही आने-जाने का साधारण अधिकार प्राप्त हो जाता है किंतु यह अधिकार एक स्वतंत्र और अतिरिक्त अधिकार है ।[17]

4. यह उपखंड संचरण का भौतिक अधिकार प्रत्याभूत करता है । यदि पुलिस किसी संदिग्ध व्यक्ति के आने-जाने पर निगरानी रखती है तो यह अनुच्छेद 19(1)(घ) में दिए गए अधिकार का उल्लंघन नहीं है । किंतु यदि पुलिस रात्रि में उसके घर पर जाती है जिससे उसकी निद्रा भंग होती है तो वह अनुच्छेद 21 के अधीन उसकी दैहिक स्वतंत्रता पर प्रहार होगा ।[18] यदि अपराधी आभ्यासिक है तो यह निर्बन्धन अयुक्तियुक्त नहीं होगा ।[19]

---

12. *मद्रास राज्य* बनाम *राव*, (1952) एस.सी आर 597 (*607*) ।

13. *बिहार राज्य* बनाम *मिश्रा*, ए 1971 एस सी 1667, *मधु लिमये* बनाम *उपखंड मजिस्ट्रेट*, ए 1971 एस.सी. 2486 ।

14. *गोपालन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर 88 (न्या मुखर्जी के अनुसार) ।

15. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 (पैरा 54); *कूपर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 564; *हरधन* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2154 ।

16. *सगीर अहमद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 707 ।

17. *खरे* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 519 [तथापि देखिए ऊपर पाद-टिप्पण 15 में मामले] ।

18. *खड़क सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी 1295 (*1303*) ।

19. *गोविन्द* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1278 ।

5. अपराध के निवारण के लिए निगरानी करना वैध भी है और आवश्यक भी । यह प्रक्रिया गोपनीय होनी आवश्यक है इसलिए किसी व्यक्ति का नाम निगरानी रजिस्टर में रखने के पहले उसे सुनवाई का अवसर देना या उसके आधार बताना आवश्यक नहीं है ।[20] किंतु न्यायालय निम्नलिखित परिस्थिति में हस्तक्षेप कर सकेगा –

(क) जहां अपराध का पता लगाने से भिन्न किसी प्रयोजन के लिए निगरानी का उपयोग किया जाता है ।[20]

(ख) जहां निगरानी इतनी अधिक है कि नागरिकों के सभी मूल अधिकार समाप्त हो जाते हैं या व्यक्ति की गरिमा के विरुद्ध है ।[20]

जहां रजिस्टर में प्रविष्टि पर दुर्भावपूर्ण होने के आधार पर आक्षेप किया जाता है तो पुलिस का यह कर्तव्य होगा कि वह न्यायालय का यह समाधान करे कि यह विश्वास करने का युक्तियुक्त आधार है कि वह व्यक्ति आभ्यासिक अपराधी है ।[20]

6 किसी स्थान से बाहर निकालने का (निष्कासन) या निरुद्ध करने का आदेश इस अधिकार के उल्लंघन का उदाहरण है ।[18]

7 यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुच्छेद 19(1)(घ) में, अनुच्छेद 21 के साथ पढ़े जाने पर, पर्वतीय क्षेत्रों में रहने वालों को यह अधिकार है कि उनके लिए पहुंच मार्ग बनवाए जाएं क्योंकि यह उनके "प्राण की स्वतंत्रता" के उपयोग के लिए आवश्यक है ।[21]

निर्बन्धनों की युक्तियुक्तता

(अ) अधिष्ठायी पक्ष – विधान के उद्देश्य को देखते हुए यदि निर्बन्धन आवश्यकता से अधिक कठोर है[22] या जिस व्यक्ति पर उसे लागू किया जा सकता है उसके लिए कोई वस्तुपरक परीक्षण नहीं है तो वह निर्बन्धन अयुक्तियुक्त होगा ।

निर्बन्धन की युक्तियुक्तता का अवधारण करने में निष्कासन की अवधि पर विचार करना सुसंगत होगा ।[23] सामान्यतया संचरण की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन तभी युक्तियुक्त माना जाएगा जब वह अस्थायी हो । किंतु अवधि के प्रश्न पर विचार करते समय आसपास की परिस्थितियों पर ध्यान देना चाहिए,[17] जैसे विधान का उद्देश्य, वह व्यक्ति जिस पर प्रतिबंध लगाए गए हैं, आदि । यदि कोई आदेश अनिश्चित अवधि के लिए निष्कासन का उपबंध करता है तो वह प्रथमदृष्टया अयुक्तियुक्त निर्बन्धन होगा । किंतु यदि अधिनियम ही अस्थायी है तब ऐसा नहीं होगा ।[17] क्योंकि उनके अधीन किया गया आदेश अधिनियम के अवसान के पश्चात् प्रभावी नहीं रहेगा ।

कोई विधि जिसके अधीन किसी व्यक्ति पर यह निर्बन्धन लगाया जाता है कि वह अपने निवास स्थान के बाहर न जाए युक्तियुक्त हो सकती है । किंतु ऐसी कोई विधि जो कार्यपालिका को यह शक्ति देती है कि वह किसी व्यक्ति से यह उपेक्षा करे कि वह अपने सामान्य निवास स्थान से भिन्न किसी विनिर्दिष्ट स्थान पर निवास करे, अयुक्तियुक्त निर्बन्धन लगाती है क्योंकि हो सकता है कि उस व्यक्ति को विनिर्दिष्ट स्थान पर रहने का कोई स्थान न मिले या जीविका उपार्जन का साधन प्राप्त न हो ।[24]

भारत का नागरिक भी विदेश से लौटना चाहता है तो उसे भारत के राज्यक्षेत्र में पुनः प्रवेश के लिए अनुज्ञापत्र या पासपोर्ट प्राप्त कर लेना चाहिए । बिना पासपोर्ट के अवैध प्रवेश करने पर उसे दंड दिया जा सकता है ।[24] यह अनुच्छेद 19(1)(घ)-(ङ) के अधीन संचरण

---

20. *मलक बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 760 (पैरा 7, 9, 10) ।
21. *हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम उमेद*, (1986) 2 एस.सी.सी 68 (पैरा 11, 13) ।
22 *मध्य प्रदेश राज्य बनाम बलदेव*, ए. 1961 एस.सी. 293 (*298*) ।
23. *गुरबचन बनाम मुंबई राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 737 ।
24 *मध्य प्रदेश राज्य बनाम भरत*, ए. 1967 एस.सी. 1170 (*1172*) ।

के और निवास करने के उसके अधिकार पर युक्तियुक्त निर्बन्धन होगा । किंतु अवैध प्रवेश के लिए भारत से हटाया जाना अनुच्छेद 19(1)(ङ) के अधीन उसके अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन होगा ।[25]

(आ) प्रक्रिया पक्ष — साधारण नियम यह है कि यदि संचरण की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के प्रतिकूल है तो वह प्रक्रिया की दृष्टि से अयुक्तियुक्त होगा । जैसे, यदि जिस व्यक्ति के विरुद्ध निष्कासन का आदेश दिया जाता है उसे अपनी प्रतिरक्षा में सुने जाने का, या अपने विरुद्ध किए गए आदेश के आधार या आरोपों को जानने का अथवा यह दर्शित करने का अधिकार नहीं है कि वह उस अधिनियम की परिधि में नहीं आता है तो यह निर्बन्धन अविधिमान्य होगा ।[23]

खंड (1)(ङ) : निवास की स्वतंत्रता — 1. इस खंड का उद्देश्य वही है जो खंड (घ) का है । भारत में और भारत के अंगभूत राज्यों में आने-जाने पर रोक समाप्त करना । इसी परिप्रेक्ष्य में खंड (1)(ङ) में दी गई स्वतंत्रता का अर्थान्वियन करना चाहिए अर्थात् 'भारत के राज्यक्षेत्र में' शब्दों के संदर्भ में ।[14]

2. अनुच्छेद 19 के अधीन अधिकार केवल नागरिकों को ही उपलभ्य है इसलिए यदि किसी व्यक्ति की नागरिकता संसद् द्वारा अनुच्छेद 11 के अधीन बनाई गई विधि द्वारा समाप्त कर दी गई है तो वह व्यक्ति इस उपखंड के अधीन अधिकार के अतिलंघन के विरुद्ध परिवाद नहीं कर सकता ।[14]

3. जब तक वास्तविक (शारीरिक) हस्तक्षेप नहीं किया जाता तब तक इस अधिकार का अतिलंघन नहीं होता ।[18, 26]

निर्बन्धनों की युक्तियुक्तता

(अ) अधिष्ठायी

(i) विदेश से भारत में प्रवेश करने पर पासपोर्ट विनियम भारत के नागरिकों पर लागू करना युक्तियुक्त होगा ।[24]

(ii) वेश्याओं से यह अपेक्षा की जाती है कि वे विशेष क्षेत्रों में ही निवास करें या उन्हीं में जाकर रहें ।[27]

(आ) प्रक्रिया

भारत के किसी नागरिक का कार्यपालिका के व्यक्तिपरक समाधान पर, सुनवाई का अवसर दिए बिना भारत से हटाया जाना, अनुच्छेद 19(1)(ङ) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन है ।[28]

अनुच्छेद 19(1)(च) : संपत्ति की स्वतंत्रता — लोप किया गया ।

44वें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 19(1)(च) का लोप किए जाने के परिणामस्वरूप नागरिक का संपत्ति के अर्जन, धारण और व्ययन करने का अधिकार मूल अधिकार नहीं रहा है । अतएव इसके उल्लंघन के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन उच्च न्यायालय में याचिका नहीं दी जा सकती ।

यदि नए अनुच्छेद 300क (देखिए आगे) के अधीन सक्षम न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित करने के लिए कोई विधि बनाई जाती है तो वह ऐसी विधि द्वारा अधिरोपित निर्बन्धनों की युक्तियुक्तता को प्रश्नगत करने का हकदार नहीं होगा [अनुच्छेद 19(5) के साथ पठित खंड (1)(च)] ।

---

25. *अब्दुल रहीम बनाम मुंबई राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1315 ।
26. *जान मोहम्मद बनाम गुजरात राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 385 (*393*) ।
27. *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम कौशल्या*, ए. 1964 एस.सी. 416 (*423*) ।
28. *इब्राहीम बनाम मुंबई राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 993 ।

खंड (1)(छ) : वृत्ति, व्यापार और कारबार की स्वतंत्रता ।

(अ) 1. इस स्वतंत्रता का अर्थ है कि प्रत्येक नागरिक को यह चुनने का अधिकार है कि वह कौन सा नियोजन लेगा या कौन सा व्यापार करेगा या जीविका का साधन अपनाएगा । राज्य, लोक कल्याण के हित में या खंड (6) में उल्लिखित अन्य आधारों पर इस स्वतंत्रता को मर्यादित कर सकेगा ।[29]

2. हमारा संविधान ऐसे किसी कारबार के अधिकार को मान्यता नहीं देता जो राज्य पर आश्रित हो या ऐसे कारबार हों जो विशेष रूप से राज्य द्वारा नियंत्रित होते हों । हमारे संविधान के अधीन कोई भी नागरिक साधिकार कोई भी ऐसा कारबार कर सकता है जो 'कामन लॉ' को ज्ञात है । राज्य को भी यह अधिकार है कि वह खंड (6) में विनिर्दिष्ट आधारों पर किसी भी कारबार को निर्बंधित या नियंत्रित करे ।[29] उदाहरण के लिए, प्रत्येक नागरिक को यह अधिकार है कि वह बाजार में सब्जी बेचे,[29] या लोक मार्ग पर परिवहन का कारबार करे ।[30] इस अधिकार पर अनुच्छेद 19(6) के अनुसार ही निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं ।

3. कारबार करने के अधिकार में कारबार नहीं करने का अधिकार भी है । किसी भी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध कोई कारबार करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता ।[31]

4. यह अधिकार अधित्यजन से या राज्य से अभिव्यक्त करार करके भी समाप्त नहीं किया जा सकता ।[32]

(आ) 1. इस उपखंड में जो अधिकार प्रत्याभूत किया गया है वह विधान बनने या राज्य द्वारा अनुमत किए जाने के पूर्व सभ्य समाज का सदस्य होने के नाते प्रत्येक नागरिक को प्राप्त नैसर्गिक अधिकार है कि वह कोई व्यापार, वृत्ति या आजीविका अपना सकता है ।[30] जैसे,

(i) राजमार्ग पर परिवहन का कारबार करना,[30]
(ii) बाजार में अपना माल बेचना,[31]
(iii) अपनी भूमि पर बाजार लगाना ।[33]

2. जहां कोई अधिनियम किसी वृत्ति को अपनाने का अधिकार देता है वहां वह अधिकार उस कानून द्वारा अधिरोपित शर्तों और निर्बन्धनों के अधीन होगा । इन शर्तों और निर्बन्धनों से किसी मूल अधिकार का हनन नहीं होगा । जैसे, न्यायालय या किसी अधिकरण के समक्ष विधि व्यवसाय करने का अधिकार ।[34] इसी सिद्धांत पर यह निर्णय हुआ है कि किसी नगरपालिका के निर्वाचन में प्रत्याशी के रूप में खड़े होने का कोई मूल अधिकार नहीं है । यदि विधान मंडल यह अधिकथित करता है कि वह व्यक्ति जो निर्वाचन के लिए प्रत्याशी होगा, नगरपालिका द्वारा विधि व्यवसायी के रूप में नियोजित नहीं होगा या नगरपालिका के विरुद्ध विधि व्यवसायी के रूप में कार्य नहीं करेगा तो इससे मूल अधिकार का हनन नहीं होता ।[35]

3. कोई भी ऐसा कार्य करने का मूल अधिकार नहीं होगा जो किसी अनुदान या संविदा से ही प्राप्त हो सकता है । जैसे,

---

29. *सगीर अहमद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर 707 (*717*) ।
30. *रशीद अहमद* बनाम *म्यूनिसिपल बोर्ड*, (1950) एस.सी.आर 566 ।
31. *हाथी सिंग मैन्युफैक्चरिंग कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी 924 (*928*) ।
32. *राजस्थान राज्य* बनाम *व्यास*, (1971) यू.जे.एस.सी. 222 (*223*) ।
33. *गणपति* बनाम *अजमेर राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1065 ।
34. *देवता सिंह* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, ए. 1962 एस.सी. 201 ।
35. *सखावंत* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1952-54) 2 एस.सी. 155; ए. 1955 एस.सी. 166 ।

(i) किसी दूसरे व्यक्ति की भूमि पर जाकर मछली पकड़ने और ले जाने का अधिकार ।[36] जहां संविदा से स्वत्वाधिकार का सृजन होता है वहां स्थिति भिन्न होगी, उदाहरण के लिए, भूमि की मृदा हटाने या उस पर भवन बनाने का अधिकार ।[37]

(ii) सरकार द्वारा पाठ्यपुस्तकों के प्रकाशक के रूप में मान्यता प्राप्त करने का भी कोई मूल अधिकार नहीं है ।[38]

4. नागरिक को उसकी इच्छानुसार कोई भी कारबार करने का मूल अधिकार है किंतु ऐसा कारबार करने का अधिकार नहीं है जो समाज के लिए हानिकारक हो ।[39] ऐसे कारबार को पूर्णतः प्रतिषिद्ध किया जा सकता है या राज्य की अनुज्ञा के अधीन ही चलाने की अनुमति दी जा सकती है — जैसे, शराब का कारबार ।[40]

5. किसी भी नागरिक को यह अधिकार नहीं है कि वह जहां चाहे वहां कारबार चलाए (जैसे सड़क पर)[41-42] या जब चाहे चलाए । उसके अधिकार पर लोक सुविधा के हित में कार्यपालिका द्वारा युक्तियुक्त निर्बन्धन अधिरोपित किए जा सकते हैं ।[42]

6. विद्यमान व्यापारियों को यह मूल अधिकार नही है कि वे नए व्यापारियों की प्रतियोगिता से मुक्त रहें ।[43]

7. कोई विशिष्ट कार्य करने या पद धारण करने का कोई अधिकार नहीं है ।[44]

8. अनुच्छेद 19(1)(घ) किसी व्यष्टि या संगम को कोई व्यापार या कारबार करने का एकाधिकार नहीं देता । यदि राज्य की कार्यवाही से किसी व्यापार में प्रतियोगिता प्रारंभ हो जाती है तो विद्यमान व्यापारी जिसका पहले एकाधिकार था यह परिवाद नहीं कर सकता कि उसके मूल अधिकार का अतिलंघन हुआ है ।[43]

9. तीन समानार्थी अभिव्यक्तियों का प्रयोग करके — वृत्ति, उपजीविका, व्यापार या कारबार — इस प्रत्याभूत अधिकार को यथासंभव व्यापक बनाया गया है जिससे इसमें वे सभी मार्ग और ढंग आ जाएं जिनसे कोई व्यक्ति अपनी जीविकोपार्जन करता है । असामाजिक क्रियाकलाप इसमें नहीं आएंगे जैसे जुआ, स्त्रियों का दुर्व्यापार और इसी प्रकार के अन्य कार्य ।[45]

सरकार से व्यापार — 1. नागरिक को यह मूल अधिकार है कि वह व्यापार या कारबार करे किंतु उसे यह मूल अधिकार नहीं है कि वह सरकार[42] या किसी व्यक्ति को विवश करे कि वे उससे ही व्यापार करें । प्रत्येक व्यक्ति और साथ ही सरकार को यह अधिकार है कि वह किसी व्यक्ति से करार करे या यह तय करे कि किन व्यक्तियों से वह व्यवहार करेगी । किसी नागरिक को यह मूल अधिकार नहीं है कि वह इस बात पर बल दे कि सरकार उसके साथ कारबार करे ।[46] उचित मामलों में व्यक्ति को यह अधिकार है कि सामान्य विधि के अधीन संविदा के विनिर्दिष्ट अनुपालन या भंग होने पर नुकसानी के लिए वाद लाए ।[46]

2. इसी कारण सरकार की अनुज्ञप्ति के लिए नीलामी में सबसे ऊंची बोली लगाने

---

36. *आनन्द* बनाम *उडीसा राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 919; ए. 1955 एस.सी. 17 ।

37. *महादेव* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 735 ।

38. *राम जवाया* बनाम *पंजाब राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 225 (*240*) ।

39. *कुवरजी* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, (1954) एस.सी.आर. 873 ।

40. *नाशिरवार* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 360 (3 न्यायाधीश); *हरिशंकर* बनाम *उपायुक्त*, ए. 1975 एस.सी. 1121 (5 न्यायाधीश); *लखनलाल* बनाम *उडीसा राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 722 ।

41. *प्यारेलाल* बनाम *दिल्ली नगरपालिका*, ए. 1968 एस.सी. 133 (*138*) ।

42. *इब्राहीम* बनाम *आर.टी.ए.*, (1953) एस.सी.आर. 290 (*299*) ।

43. *हरनामसिंह* बनाम *आर.टी.ए.*, (1954) एस.सी.आर. 371 ।

44. तुलना कीजिए, *नागर चावल मिल्स* बनाम *एन.टी.जी. ब्रदर्स*, ए. 1971 एस.सी. 246 (*250*); *उर्वरक निगम यूनियन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 344 (पैरा 14) ।

45. *सोडन* बनाम *एन.डी.एम.सी.*, (1989) 4 एस.सी.सी. 155 (पैरा 28) ।

46. *अच्युतन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 490 ।

वाले को कोई अधिकार नहीं निहित हो जाता[47] और सरकार को यह अधिकार है कि वह नीचे की बोली लगाने वाले को अधिमान दे ।[48] किंतु यदि सबसे ऊंची बोली नामंजूर की जाती है तो यह ऋजुतापूर्ण रीति से होना चाहिए । उसके विरुद्ध जो आरोप हैं उनका उत्तर देने का उसे अवसर दिया जाना चाहिए और यह गुप्त रूप से नहीं होना चाहिए ।[49]

3. सरकार की संपत्तियों या अधिकारों में कारबार करने का कोई मूल अधिकार नहीं है ।[47]

कारबार बंद करने का अधिकार — 1. जिस प्रकार अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन कारबार चलाने के अधिकार में कारबार नहीं चलाने का अधिकार सम्मिलित है, उसी में चलते कारबार को बंद करने का अधिकार भी है ।[50]

2 इन दोनों नकारात्मक अधिकारों की प्रकृति और परिधि एक सी नहीं हैं ।[50] कारबार प्रारंभ न करने का अधिकार आत्यंतिक है । किसी भी परिस्थिति में किसी व्यक्ति को कारबार चलाने के लिए विवश नहीं किया जा सकता ।[50] किंतु लोक हित में, जैसे बेरोजगारी रोकने के लिए, अनुचित, न्यायविरुद्ध या दुर्भावपूर्ण कामबंदी रोकने के लिए अयुक्तियुक्त निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं ।[50] जहां प्रबंधकों ने यह पाया कि हानि उठाने के कारण उनके लिए कारबार चलाना या श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी देना भी असंभव है तो यह सद्भावपूर्वक कामबंदी है । इस पर निर्बंधन लगाना अयुक्तियुक्त होगा ।[50] ऐसी स्थिति में उससे यह कहना सर्वथा अनुचित और अयुक्तियुक्त होगा कि वह काम बंद नहीं करे ।[50]

3 नियोजक के कारबार बंद करने से कर्मचारियों का उपजीविका चलाने के, अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन मूल अधिकार का अतिलंघन नहीं होता । कारण यह है कि यदि उनकी छंटनी होगी तो वे औद्योगिक विधि के अधीन अनुतोष पा सकते हैं और कोई अन्य नियोजन प्राप्त कर सकते हैं ।[51]

क्या निर्बन्धन में प्रतिषेध आता है — 1 जैसा पहले बताया जा चुका है इस प्रश्न का सीधा उत्तर हां या नहीं में नहीं दिया जा सकता कि युक्तियुक्त निर्बन्धन में पूर्ण प्रतिषेध आता है या नहीं । यह कारबार की प्रकृति पर और विधान मंडल जिस रिष्टि का उपचार करना चाहता है उस पर निर्भर होगा ।[39] जैसे, —

(क) जहां कोई कारबार या व्यापार स्वयमेव खतरनाक है[39] वहां पूर्ण प्रतिषेध भी युक्तियुक्त होगा । उदाहरण के लिए —

(i) मादक द्रव्य बनाने और बेचने का कारबार समाज के लिए खतरनाक है । उसे पूर्णतया प्रतिषिद्ध किया जा सकता है या ऐसी शर्तों के अधीन अनुज्ञात किया जा सकता है कि उसकी बुराइयों पर अधिकाधिक अकुंश लगाया जा सके ।[39]

(ii) विस्फोटकों जैसे खतरनाक पदार्थों का, अपमिश्रित खाद्य पदार्थों का व्यापार या स्त्रियों का दुर्व्यापार[52] या जुआ[53] पूर्णतया प्रतिषिद्ध किया जा सकता है ।

(ख) आवश्यक वस्तुओं के व्यापार को भी यही सिद्धांत लागू होता है ।[54]

---

47. *उड़ीसा राज्य* बनाम *हरिनारायण*, ए. 1972 एस.सी 1816 ।

48 *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *विजय*, ए. 1982 एस.सी. 1234 ।

49. *राम और श्याम* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1985 एस.सी 1147 (पैरा 13-14) ।

50. *एक्सेल वियर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एस.सी. 25 (पैरा 20) ।

51. *उर्वरक निगम यूनियन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी 344 (पैरा 14) ।

52. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *करतार सिंह*, ए 1964 एस.सी 1135 ।

53. *मुंबई राज्य* बनाम *आर.एम.डी.सी.*, ए. 1957 एस.सी 699 ।

54. *एम.बी. काटन एसोसिएशन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1954 एस.सी 634; *नरेन्द्र* बनाम *भारत संघ*, (1960) 2 एस.सी.आर. 375 ।

(ग) कर की वसूली के लिए प्रपीड़क अधिशास्ति को उचित ठहराने के लिए यही सिद्धांत लागू किया गया है ।[55]

2. इन आपवादिक प्रवर्गों को छोड़कर किसी कारबार को चलाने के अधिकार को पूर्णतया प्रतिषिद्ध करना अयुक्तियुक्त निर्बन्धन होगा ।[56-57] जितना अधिक निर्बन्धन होगा उतनी ही कठोरता से न्यायालय संवीक्षा करेगा । अधिकार का प्रयोग पूर्णतया प्रतिषिद्ध करना लोकहित में आवश्यक है यह साबित करने का भार राज्य पर ही होगा ।[57]

कारबार की स्वतंत्रता के संबंध में अनुज्ञप्ति (लाइसेंस) और अनुज्ञा पत्र (परमिट)

(अ) 1. जब कोई आपवादिक परिस्थितियां हों तभी संविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकार का प्रयोग प्रशासनिक प्राधिकारी के विवेक पर निर्भर करेगा ।[57-58] यदि कोई विधि किसी प्रशासनिक प्राधिकारी को यह शक्ति देती है कि वह कोई कारबार चलाने के लिए स्वविवेकानुसार परमिट दे, या विधारित करे या उसे प्रतिसंहृत करे[59] तो विधि द्वारा अधिरोपित यह निर्बन्धन अयुक्तियुक्त होगा ।[60] ऐसे व्यापार या कारबार की दशा में प्राधिकारी को अधिकार देना उचित हो सकता है जो स्वयमेव खतरनाक है[57] या जिसे पूर्णतया प्रतिषिद्ध करने का राज्य को हक है या जिसे राज्य ऐसी शर्तों के अधीन करने की अनुमति दे सकता है जिनसे उसकी बुराइयां सीमित हो जाएं । इसी प्रकार आपात के समय[60] जब समुदाय के लिए आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन, प्रदाय और वितरण पर नियंत्रण करना जरूरी हो गया है या ऐसे व्यापार या कारबार की बाबत जिसका प्रभाव राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर पड़ता हो, जैसे आयात[61] निर्यात,[62] यह अधिकार प्रशासन को दिया जा सकता है ।

2. किसी कानून में अधिकथित विवेकाधिकार को आत्यंतिक या अनियमित नहीं कहा जा सकता यदि कानून में वह नीति अधिकथित है जिसके अनुसार विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाएगा ।[59-60] यदि प्राधिकारी, कानून में घोषित नीति के अनुसार विवेकशक्ति का प्रयोग नहीं करता है तो उसका आदेश शक्ति के दुरुपयोग के कारण दूषित हो जाएगा और न्यायालय उसे शक्ति बाह्य होने के आधार पर अपास्त कर सकेगा ।[39]

3. चालू परमिट को सुनवाई का अवसर दिए बिना रद्द या प्रतिसंहृत नहीं किया जा सकता है ।[63] यह तभी हो सकता है जब व्यापार या आजीविका स्वयमेव खतरनाक हो जिसे चलाने का किसी व्यक्ति को 'कामन लॉ' में अधिकार नहीं है[39] या उन वस्तुओं की दशा में हो सकता है जो समाज के लिए आवश्यक हैं ।[64]

(आ) लाइसेंस देने के लिए विनियम बनाने की शक्ति, परमिट पद्धति से भिन्न है । परमिट का उद्देश्य यह होता है कि वे लोग कारबार में प्रवेश नहीं कर सकते हैं जिन्हें प्रशासनिक प्राधिकारियों के विवेक पर परमिट नहीं मिला है । लाइसेंस का उद्देश्य यह होता

55. *रहमान* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी 1471 ।

56. *चिंतामनराव* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 759 ।

57. *फारूक* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1970 एस.सी. 93 (96) ।

58. *मद्रास राज्य* बनाम *वी.जी राव*, (1952) एस.सी आर 597 (*608*); *द्वारका प्रसाद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 803 ।

59. *गणपति* बनाम *अजमेर राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 188 (*190*) ।

60. *हरिशंकर* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 380 ।

61. *ग्लास चेटान्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1961 एस.सी. 1514 ।

62. *दया* बनाम *संयुक्त मुख्य नियंत्रक*, ए 1962 एस.सी. 1796 (*1804*); *शिवराजन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1959 एस.सी. 556 (*588*) ।

63. *फेडको* बनाम *बिलग्रामी*, (1960) एस.सी.जे. 235 (*249*); *सुखनंदन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 902 (पैरा 23) ।

64. *नरेन्द्र* बनाम *भारत संघ*, (1960) 2 एस.सी.आर. 375 ।

है कि जो व्यक्ति कारबार चलाना चाहेगा उसे लाइसेंस की शर्तों के अधीन रहते हुए अपना कारबार करना होगा ।

राज्य को लोक हित में यह अधिकार है कि वह युक्तियुक्त शर्तें अधिकथित करे जिनके अधीन रहते हुए कोई कारबार चलाया जाएगा ।[64क] यदि विधान मंडल किसी प्रशासनिक प्राधिकारी को यह शक्ति देता है कि वह विधान मंडल द्वारा अधिकथित शर्तों को[65] ध्यान में रखते हुए और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार न्यायिक कल्प रीति से,[66] मनमाने ढंग से नहीं, लाइसेंस प्रदान करे या देने से इंकार करे तो ये निर्बन्धन अयुक्तियुक्त नहीं कहे जा सकते ।

किंतु —

(क) यदि अधिनियम में लाइसेंस प्रदान करने, रद्द करने,[65] या देने से इंकार करने[67] के विषय में लाइसेंस देने वाले प्राधिकारी के पथप्रदर्शन के लिए सिद्धांत नहीं बताए गए हैं तो यह कारबार की स्वतंत्रता पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन होगा ।[68] "आवेदक की उपयुक्तता" या "लोक हित" धूमिल अभिव्यक्तियां हैं । इनसे लाइसेंसदाता प्राधिकारी को कोई मार्गदर्शन नहीं मिलता ।[69] विधि द्वारा रचित मानक वस्तुपरक होना चाहिए ।[69]

(ख) लाइसेंस द्वारा लगाई गई शर्तें इतनी अतिरेकी या मनमानी नहीं होनी चाहिए कि लाइसेंस लेने वाले का कारबार चल ही न सके । ऐसा हुआ तो वह कारबार चलाने के मूल अधिकार का हनन होगा ।[70] किंतु वह इस आधार पर परिवाद नहीं कर सकता कि निर्बन्धन के कारण उसकी कारबार से होने वाली आय घट गई है ।[70क]

(ग) यदि कोई अधिनियम किसी प्राधिकारी को यह विवेकशक्ति देता है कि वह किसी व्यक्ति को लाइसेंस देने से इंकार करे[63] या विद्यमान लाइसेंस को रद्द करे[65] तो आपवादिक परिस्थितियां न होने पर (जैसे, व्यापार की स्वयमेव खतरनाक प्रकृति या आपात में आवश्यक वस्तुओं की आवश्यकता) इस विधि को अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बंधन होने के आधार पर शून्य घोषित किया जाएगा ।

(घ) जहां विधि में लाइसेंस देने वाले प्राधिकारी के पथप्रदर्शन के लिए वस्तुपरक शर्तें और सिद्धांत बनाए गए हैं वहां न्यायालय किसी मामले में लाइसेंस देने या देने से इंकार करने के मामले में हस्तक्षेप नहीं कर सकता । हस्तक्षेप तभी हो सकेगा जब विवेकाधिकार का दुरुपयोग हुआ है या शक्ति का अनुचित प्रयोग हुआ है या प्राधिकारी ने ऐसे आधार पर कार्य किया है जो असंगत है ।[71]

4. जहां राज्य किसी हानिकारक व्यापार को पूर्णतः प्रतिषिद्ध करने या अपने पास एकाधिकार रखने के स्थान पर जनता को वह कारबार चलाने का अधिकार देने का निर्णय करता है तो राज्य के लिए अनुच्छेद 14 के उपबंधों का अनुपालन करना आवश्यक है ।[72] राज्य अनुज्ञप्ति प्रदान करने के लिए कोई भी ऐसी नीति अपना सकती

64क. *आल दिल्ली रिक्शा यूनियन* बनाम *नगर निगम*, ए. 1987 एस.सी. 648 (पैरा 5) ।

65. *मिनरल डेवलपमेंट कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 468 (*472*) ।

66. *चतुरभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी. 424 ।

67. *द्वारका प्रसाद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 803; *हरिचंद* बनाम *मिजो जिला परिषद्*, ए. 1967 एस.सी. 823 (*833*) ।

68. *पन्ना लाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी. 397 (*410*) ।

69. *बांठिया* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 1453 ।

70. *शेषाद्रि* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, (1955) 1 एस.सी.आर. 686 ।

70क. *मिनर्वा टाकीज* बनाम *कर्नाटक राज्य*, (1988) सप. एस.सी.सी. 176 (पैरा 12) ।

71. *खतकी* बनाम *लिंबि नगरपालिका*, ए. 1979 एस.सी. 418 ।

72. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *नंदलाल*, ए. 1987 एस.सी. 251 (पैरा 4, 32, 33) ।

है जो स्वेच्छाचारी या विभेदकारी न हो या दुर्भावपूर्ण न हो । यदि ऐसा हुआ तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकेंगे ।

'साधारण जनता का हित' — 1. यह एक व्यापक अभिव्यक्ति है[64क] और इसमें सार्वजनिक स्वास्थ्य और नैतिकता का हित,[73-74] देश की आर्थिक स्थिरता,[61] आवश्यक वस्तुओं का उचित कीमत पर वितरण,[64, 75] सार्वजनिक जीवन में शुद्धता बनाए रखना,[76] कपट का निवारण,[63] किसानों[77] या कर्मकारों[78] की दशा में सुधार, जोतने वाले के लिए भूमि आरक्षित करना[79] आते हैं ।

2. यदि सरकार प्राइवेट व्यापारियों के स्थान पर सरकारी उपक्रमों को अभिदाय के लिए आदेश देती है तो सरकार का यह कार्य लोकहित में समझा जाएगा ।[80]

निर्बन्धनों की युक्तियुक्तता

(अ) *अधिष्ठायी पक्ष* — अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार पर लगाए गए निर्बंधनों की युक्तियुक्तता का निर्णय करने के लिए न्यायालय को उस कारबार की प्रकृति[81] और उसमें विद्यमान दशाओं की ओर भी ध्यान देना होगा ।[82]

I. अयुक्तियुक्त निर्बन्धनों के उदाहरण

1. मध्य प्रदेश बीडी विनिर्माण अधिनियम (1948 का 64) की धारा 4 द्वारा उपायुक्त को यह शक्ति दी गई थी कि वह ऐसे गावो में जो उसके आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाए, कृषि कार्य के मौसम में बीडी के विनिर्माण को प्रतिषिद्ध कर दे । उद्देशिका मे यह कहा गया था कि अधिनियम का उद्देश्य है "बीडी विनिर्माण वाले क्षेत्र में कृषिक प्रयोजनों के लिए पर्याप्त श्रमिक उपलब्ध करने के लिए अध्युपाय करना ।" इसमें यह अभिनिर्धारित हुआ कि उपर्युक्त उपबंध और उसके अधीन किया गया उपायुक्त का आदेश जिसमें कुछ गावों में रहने वाले सभी लोगों को बीडी बनाने का काम करने से प्रतिषिद्ध किया गया था, शून्य हैं क्योंकि वे सविधान के अनुच्छेद 19(1)(छ) का उल्लघन करते हैं । इस अधिनियम के उद्देश्य की प्राप्ति इस प्रकार हो सकती थी कि कृषिक मजदूरों पर कृषि के मौसम में बीडी बनाने के काम में नियोजित करने पर रोक लगा दी जाती या बीडी बनाने के काम के समय को विनियमित किया जाता । इस विनिर्माण पर पूर्ण प्रतिबध लगाने से बीडी बनाने के विधिपूर्ण व्यवसाय पर अयुक्तियुक्त और अत्यधिक निर्बन्धन लगाया जाता है । यह अधिनियम उन लोगों को जो कृषि कार्य कर सकते हैं, कोई दूसरा कार्य, अर्थात् बीडी बनाने का कार्य करने से रोकता है । साथ ही जिन लोगों का कृषि कार्य से कोई सबध नहीं है, उन्हें भी बीड़ी बनाने का काम न करने के लिए विवश करता है और इस प्रकार वे अपने जीविकोपार्जन के लिए असमर्थ हो जाते हैं । इसका दूसरा पक्ष यह है कि यह बीड़ी के विनिर्माता को विनिर्दिष्ट क्षेत्र में उस क्षेत्र के बाहर से श्रमिक लाकर भी अपना कारबार करने से रोकता है ।[83]

2. चलचित्र अधिनियम, 1919 की धारा 8 के अधीन जिला मजिस्ट्रेट ने अपीलार्थी को, जो एक सिनेमा का स्वामी थी, दिए गए लाइसेंस मे अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित शर्तें लगाईं :

(क) लाइसेंस धारक प्रत्येक प्रदर्शन में ऐसी लबाई की एक या अधिक अनुमोदित फिल्में दिखलाएगा और इतने समय के लिए दिखलाएगा जो प्रातीय या केंद्रीय सरकार निर्दिष्ट करे ।

73. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *हिम्मतभाई*, ए 1970 एस.सी. 1157 ।
74. *असम राज्य* बनाम *सृष्टिकार*, ए 1957 एस सी. 414 ।
75. *भारत संघ* बनाम *भानमल*, (1960) 2 एस.सी आर. 627 ।
76. *सखावंत* बनाम *उडीसा राज्य*, ए. 1954 एस सी. 166 ।
77. *जान मोहम्मद* बनाम *गुजरात राज्य*, (1966) 1 एस सी.आर. 505 (*515*) ।
78. *रामधनदास* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1961 एस.सी. 1559 ।
79. *श्री कालीमाता* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 1030 (पैरा 19) ।
80. *शेर सिंह* बनाम *भारत संघ*, ए. 1984 एस.सी. 200 (पैरा 7); *विकलाद कोयला मर्चेंट* बनाम *भारत संघ*, ए. 1984 एस.सी 95 (पैरा 18-19) ।
81. *कुंवरजी* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, (1954) एस.सी.आर. 873 ।
82. *एस.जी.टी.* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1983 एस.सी. 1246 (पैरा 18-19) ।
83. *चिंतामनराव* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 759 ।

(ख) लायसेंसधारक प्रदर्शन के प्रारंभ होने पर एक या अधिक अनुमोदित फिल्मों के कम से कम 2,000 फुट दिखलाएगा ।

यह अभिनिर्धारित हुआ कि अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन अपीलार्थी को प्रत्याभूत मूल अधिकार पर दोनों उपर्युक्त शर्तें अयुक्तियुक्त निर्बंधन हैं और तदनुसार शून्य हैं । (क) पहली शर्त, सरकार को आत्यंतिक और अनियंत्रिक विवेक शक्ति देती है । इसमें इस बात की कोई सीमा नहीं है कि वह फिल्म जिसे लाइसेंसधारी को प्रदर्शित करना अनिवार्य होगा किस प्रकार की होगी या कितनी अवधि तक दिखाई जाएगी । इसमें इस बात को भी कोई मार्गदर्शन नहीं प्रतीत होता कि सरकार किस प्रकार अपनी विवेक शक्ति का प्रयोग करेगी । (ख) दूसरी शर्त भी ऐसी ही है क्योंकि इसमें अनुमोदित फिल्म की न्यूनतम लंबाई बताई गई है, अधिकतम नहीं । अतएव, इसके संबंध में भी प्राधिकारी की विवेक शक्ति उतनी ही अनियंत्रित है जैसी कि शर्त (क) के संबंध में ।[70]

3. कोई विधि जो प्रांतीय सरकार के विवेक पर यह छोड़ देती है कि वह किसी वस्तु के स्टाक को उसके द्वारा तय की गई किसी भी दर पर ले ले और फिर उस स्टाक को किसी भी दर पर बेच दे, अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन स्वामी के अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन है ।[84]

II युक्तियुक्त निर्बन्धनों के उदाहरण

(i) आपात की अवधि के दौरान आवश्यक वस्तुओं के उत्पादन प्रदाय और वितरण के लिए बनाया गया अस्थायी विधान अयुक्तियुक्त नहीं कहा जा सकता ।[85] इस सिद्धांत को प्रसामान्य समय में भी ऐसी आवश्यक वस्तु के लिए लागू किया गया है जिसका प्रदाय अपर्याप्त है, जैसे दूध,[86] चीनी ।[87]

(ii) विपणन से संबंधित ऐसा विधान जिसके द्वारा उत्पादकों को वस्तु की उचित कीमत दिलाने का प्रयत्न किया जाता है और बिचौलियों को हटाकर विनियमित बाजार की व्यवस्था की जाती है, नागरिकों के कारबार करने के अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन नहीं है । अयुक्तियुक्त निर्बन्धन तभी होगा जब यह स्पष्ट रूप से साबित किया जाए कि ये उपबंध बहुत कठोर हैं और अपनी परिधि के उद्देश्य से बहुत आगे चले गए हैं ।[88] यह सिद्धांत थोक और फुटकर दोनों प्रकार के व्यापार को लागू होता है ।[77] बाजार के नियंत्रण के लिए ऐसे विधान को प्रभावी करने के लिए विधान मंडल व्यापारियों के बीच सव्यवहार को नियंत्रित कर सकता है । ऐसा नियंत्रण युक्तियुक्त होगा । इसी प्रकार यदि बाजार के क्षेत्र में कोई ऐसा उत्पाद बेचा जाता है जो उस क्षेत्र के बाहर उत्पादित है तो उसे भी युक्तियुक्त रूप से नियंत्रित किया जा सकता है ।[89]

(iii) जहां किसी वस्तु के प्रदाय में कमी होने के कारण उपभोक्ता के हित के संरक्षण के लिए किसी आवश्यक वस्तु की कीमत तय करना आवश्यक है, वहां ऐसे निर्बंधन को इस आधार पर अयुक्तियुक्त नहीं ठहराया जा सकता कि इससे बिचौलिये समाप्त हो जाएंगे क्योंकि उनके लिए नियत दर पर कारबार चलाना[90] अलाभदायक होगा ।[91] यदि विद्यमान व्यापारियों के बीच प्रतियोगिता बढ़ जाती है या उनका लाभ समाप्त हो जाता है[92] तो इस आधार पर यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि विनियमकारी विधि अयुक्तियुक्त है । ऐसा तभी किया जा सकता है जब कीमत तय करने के लिए जो आधार निश्चित किया गया है वह इतना अयुक्तियुक्त है कि वह कीमत तय करने की शक्ति से बहुत आगे निकल जाता है,[93] अथवा उद्योग को उचित लाभ सुनिश्चित करने के बारे में कानूनी बाध्यता है ।[94]

(iv) राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में किसी कारबार के महत्व को ध्यान में रखते हुए राज्य उस कारबार में प्रवेश के लिए शर्तें लगा सकता है, जैसा वायदा बाजार की सदस्यता ।[95]

(v) यदि कर की मात्रा बहुत अधिक है तो केवल इसी आधार पर उसे अयुक्तियुक्त नहीं कहा जा

---

84. *हरिचंद* बनाम *मिजो जिला परिषद्*, ए 1967 एस सी. 829; *राजस्थान राज्य* बनाम *नाथूमल*, (1954) एस सी आर. 982 (*987*) ।

85. *हरिशंकर* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस सी आर. 380 ।

86. *अजीत सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1967 एस सी. 856 ।

87. *पी.पी. इंटरप्राइजेज* बनाम *भारत संघ*, ए 1982 एस.सी. 1016 ।

88. *अरुणाचल* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1959 एस सी. 300 ।

89. *पोरवल* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1127 (पैरा 11) ।

90. *नरेन्द्र* बनाम *भारत संघ*, (1960) 2 एस.सी.आर. 375 ।

91. *प्राग आइस मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस सी 1296 (पैरा 55, 58-59) ।

92. *नजीरिया मोटर सर्विस* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए 1970 एस.सी 1864 (*1867*) ।

93. *सरस्वती औद्योगिक सिंडिकेट* बनाम *भारत संघ*, ए. 1975 एस.सी 460 ।

94. *पानीपत को-आपरेटिव शुगर मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1973 एस सी. 537; *अंकापल्ले सहकारी सोसाइटी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1973 एस.सी. 734 ।

95. *मधुभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1961 एस.सी. 21 (*26*) ।

सकता, विशेष रूप से तब जबकि वह कर राज्य द्वारा दी जाने वाली सेवाओं के प्रतिफल के रूप में है, जैसे सड़क का अनुरक्षण ।[96]

(vi) किसी विधि में कर का संदाय सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए किसी व्यवहारी के रजिस्ट्रीकरण को रद्द करने के बारे में उपबंध किया जा सकता है, चाहे इस निर्बन्धन के परिणामस्वरूप उसका कारबार समाप्त ही क्यों न हो जाए ।[97]

(vii) लोक स्वास्थ्य के लिए हानिकर पदार्थ में व्यापार पर, जैसे विष बेचने पर, निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं ।[97क]

(आ) *प्रक्रिया पक्ष*

I. युक्तियुक्त निर्बन्धनों के दृष्टांत

1. जहां अधिकरण के विनिश्चय से अपील का उपबंध किया जाता है और उस पर न्यायिककल्प रूप से कार्य करने की बाध्यता है वहां उस विधि की युक्तियुक्तता पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता है कि उसमें विनिर्दिष्ट रूप से सूचना देने या सुनवाई करने की व्यवस्था नहीं की गई थी ।[98] प्रशासनिक विनिश्चयों का न्यायिक पुनर्विलोकन सभी मामलों में युक्तियुक्तता की अनिवार्य शर्त नहीं है ।[99]

2. कीमत तय करना विधायी कृत्य है ।[100] अतएव किसी आवश्यक वस्तु की कीमत तय करने वाली विधि या आदेश को इस आधार पर अयुक्तियुक्त नहीं ठहराया जा सकता कि कीमत तय करने में नैसर्गिक न्याय के नियम का अनुपालन नहीं किया गया है ।[100]

II. अयुक्तियुक्त निर्बन्धनों के दृष्टांत

लायसेंस देने या वितरित करने अथवा वस्तुओं की कीमत तय करने की शक्ति लोक अधिकारियों या निकायों को ही दी जा सकती है और उन्हें इस विषय में कुछ न कुछ विवेकाधिकार देना पड़ता है । किंतु वह विधि या आदेश जो सामान्यतः उपलब्ध वस्तुओं के व्यापार या कारबार को विनियमित करने के विषय के बारे में कार्यपालिका को मनमानी और अनियंत्रित शक्ति देता है, अयुक्तियुक्त माना जाएगा ।[1]

खंड 6(i) : वृत्तिक या तकनीकी अहर्ताएं — इस खंड में 1951 में किए गए संशोधन के परिणामस्वरूप यह स्पष्ट कर दिया गया है कि यदि राज्य किसी व्यापार या कारबार में प्रवेश के लिए कोई वृत्तिक या तकनीकी अर्हता अधिकथित करता है तो व्यथित व्यक्ति ऐसे निर्बंधन पर यह आक्षेप नहीं लगा सकता कि वह अयुक्तियुक्त है ।

खंड (6)(ii) : राज्य द्वारा व्यापार — अनुच्छेद 19(1)(छ) यह घोषित करता है कि प्रत्येक नागरिक को कोई भी व्यापार या कारबार चलाने का अधिकार है । इसलिए यदि राज्य, किसी व्यापार से पूर्णतः या भागतः प्राइवेट व्यापारियों को निकाल कर स्वयं व्यापार या कारबार चलाता है तो यह उक्त अधिकार का हनन होगा । मूलतः अधिनियमित खंड (6) के अधीन राज्य के इस कार्य को तभी न्यायोचित ठहराया जा सकता था जब वह युक्तियुक्त हो ।

1951 के संशोधन से राज्य को युक्तियुक्तता की शर्त से छूट दे दी गई है । यह अधिकथित किया गया है कि राज्य द्वारा कोई व्यापार, कारबार, उद्योग या सेवा चलाए जाने को इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा कि यह अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार का अतिलंघन है । चाहे विधि द्वारा राज्य ने उस व्यापार या कारबार से नागरिकों को पूर्णतः या भागतः अपवर्जित कर दिया हो ;[2] अतएव अब राज्य प्राइवेट व्यापारियों के साथ प्रतियोगिता करने या अपने पक्ष में एकाधिकार का सृजन करने के लिए स्वतंत्र होगा । उसे न्यायालय में अपनी कार्यवाही की युक्तियुक्तता को न्यायोचित ठहराना आवश्यक

---

96. *मदार* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 1804 (*1807*) ।
97. *रहमान* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1471 ।
97क. *गुडविल पेंट* बनाम *भारत संघ*, (1992) सप. (1) एस.सी.सी. 16, 21 ।
98. *चतुरभाई* बनाम *भारत संघ*, (1960) 2 एस.सी.आर. 362 ।
99. *बिजय काटन मिल्स* बनाम *अजमेर राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 460 ।
100. *सरस्वती औद्योगिक सिंडिकेट* बनाम *भारत संघ*, ए. 1975 एस.सी. 460 ।
1. *द्वारका प्रसाद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 221; *शेषाद्रि* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, (1955) 1 एस.सी.आर. 686 ।
2. *नारायणप्पा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1073 (*1078*) ।

नहीं होगा ।[3] किंतु राज्य के पक्ष में एकाधिकार का सृजन करने वाली विधि में के ऐसे अनुषंगी उपबंध,[4] जो राज्य के एकाधिकार से प्रत्यक्ष रूप से संपृक्त नहीं हैं, तभी विधिमान्य होंगे जब वे युक्तियुक्त हैं और लोकहित में हैं ।[5] उपखंड (ii) अपवाद है इसलिए उसका निर्वचन कठोरता से किया जाएगा । परिणामतः राज्य द्वारा व्यापार चलाने के लिए एकाधिकार का सृजन करने वाली विधि को युक्तियुक्तता की शर्त से तभी उन्मुक्ति मिलेगी जब वह एकाधिकार के सृजन से अनिवार्यतः सम्बद्ध हो ।[4]

राज्य प्राइवेट व्यापारियों को भागतः या पूर्णतः हटाकर कोई भी व्यापार या उद्योग चला सकता है । यह प्रशासनिक नीति के कारण हो सकता है, जैसे, नमक या अल्कोहाल विनिर्माण, प्रतियोगिता से उत्पन्न दोषों को कम करने के लिए या उत्पाद की कीमत या क्वालिटी के बेहतर नियंत्रण के लिए, या लोक उपयोगी सेवाओं के प्रशासन के लिए । इसका उद्देश्य प्राइवेट व्यापारी के समान लाभ कमाना भी हो सकता है, जैसे मोटर परिवहन का कारबार चलाना ।[6-7] जहां राज्य प्रतियोगी व्यापारी के रूप में प्रवेश करता है वहां अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन प्रत्याभूत अधिकार का अतिलंघन नहीं होता ।[7] राज्य की अपने पक्ष में एकाधिकार स्थापित करने की शक्ति पर कोई मर्यादा नहीं है ।[8] अतएव, इस प्रकार की विधि किसी सेवा से सभी या कुछ नागरिकों को अपवर्जित करने का उपबंध कर सकती है । वह संपूर्ण राज्य में या उसके विनिर्दिष्ट भाग में ही कारबार कर सकती है ।[9]

इस संशोधन के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 14 के उल्लंघन के आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता ।[10] ऐसी विधि को अनुच्छेद 301 भी लागू नहीं होता [देखिए आगे अनुच्छेद 305] ।

खंड (6) में 'विधि' का वही अर्थ है जो अनुच्छेद 13(3)(क) में है । अतएव उपखंड (ii) के अनुसार, अधिनियम द्वारा एकाधिकार स्थापित किया जा सकता है साथ ही किसी कानूनी नियम, उपविधि, स्कीम आदि के द्वारा भी ऐसा करना संभव है ।[2]

यदि राज्य के एकाधिकार के पर्दे में कुछ विशेष वर्ग के व्यक्तियों को व्यक्तिगत फायदा पहुंचाया जा रहा है तो इस कार्य को उपखंड (ख)(i) का संरक्षण नहीं मिलेगा ।[11] यदि विधि में कुछ ऐसे अनुषंगी उपबंध हैं जो एकाधिकार संरक्षण के अविभाज्य अंग नहीं हैं तो उन उपबंधों की युक्तियुक्तता की परीक्षा खंड (6) के अधीन की जाएगी ।[12]

क्या राज्य भी किसी विशिष्ट व्यक्ति या व्यक्तियों के पक्ष में एकाधिकार का सृजन कर सकता है — संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा खंड (6) का संशोधन करके न्यायालय को उस विधि की युक्तियुक्तता के प्रश्न पर विचार करने से निवारित कर दिया गया है जो राज्य के पक्ष में या राज्य के स्वामित्व या नियंत्रण में किसी निगम के पक्ष में कोई कारबार चलाने के एकाधिकार का सृजन करती है । किंतु जहां यह अधिकार किसी विशिष्ट व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को दिया जाता है और अन्य व्यक्तियों का अपवर्जन किया जाता है वहां इस प्रकार के मामले में अधिरोपित निर्बन्धन की युक्तियुक्तता को

3. *नगरपालिका समिति* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1100 ।
4. *एन.बी. बीड़ी लीव्स* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 679 (पैरा 28) ।
5. *अकादसी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1047 (*1055*) ।
6. तुलना कीजिए, *रामचंद्र* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 28 ।
7. *रामजवाया* बनाम *पंजाब राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 225 ।
8. *कुंडल राव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम*, ए. 1961 एस.सी. 82 ।
9. *सत्यनारायण मूर्ति* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम*, (1961) 1 एस.सी.आर. 643 (*649*) ।
10. *पी.टी.सी.एस.* बनाम *आर.टी.ए.*, ए. 1960 एस.सी. 801 (*806*) ।
11. *रासबिहारी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1081 ।
12. *कूपर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 564 (पैरा 60) ।

न्यायालय में प्रश्नगत किया जा सकता है । इसका कारण यह है कि ऐसे मामले को खंड (6) लागू नहीं होता ।

ऐसी दशा में युक्तियुक्तता का अवधारण प्रश्नगत व्यापार या कारबार से संबंधित परिस्थितियों के प्रति निर्देश से करना होगा । जैसे, —

(क) कुछ व्यापार स्वतः ही इतने खतरनाक हैं कि यदि राज्य सभी व्यक्तियों को वह व्यापार करने देगा तो इससे समाज के अस्तित्व को खतरा पहुंचेगा (उदाहरणार्थ, मादक द्रव्य से संबंधित कारबार[13]) । ऐसे मामलों में राज्य के प्रभावी नियंत्रण के प्रयोजन के लिए किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के पक्ष में एकाधिकार का सृजन युक्तियुक्त होगा ।[11, 14]

(ख) किंतु जहां कारबार की प्रकृति में ऐसी कोई खतरनाक बात नहीं है, जैसे सब्जी बेचने का कारबार[15] वहां सभी व्यक्तियों को व्यापार करने से प्रतिषिद्ध करना और एक व्यक्ति के पक्ष में एकाधिकार का सृजन युक्तियुक्त नहीं ठहराया जा सकता ।[16]

जहां किसी विशिष्ट व्यापारी को एकाधिकार नहीं दिया गया है और किसी भी व्यक्ति को कारबार चलाने से अभिव्यक्त रूप से प्रतिषिद्ध नहीं किया गया है वहां कारबार की स्वतंत्रता पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन नहीं होगा यदि नगरपालिका के लाइसेंस फीस लेने का यह प्रभाव होता है कि सभी कारबार रुक जाते हैं ।[17] यदि किसी नए उद्योग की स्थापना को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से किसी विशिष्ट उद्यमी को थोक में प्रदाय के आदेश दे दिए गए हैं तो इससे एकाधिकार का जन्म नहीं होता ।[18]

सरकारी सेवकों की कारबार की स्वतंत्रता — देखिए आगे अनुच्छेद 309 ।

अनुच्छेद 19(1)(छ) और 21 — कुछ पूर्ववर्ती मामलों में[19] यह अभिनिर्धारित किया गया था कि अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीविकोपार्जन नहीं है । बाद में सांविधानिक पीठ ने इसके प्रतिकूल निर्णय दिया है [देखिए आगे अनुच्छेद 21] ।

अनुच्छेद 19(1)(छ) और 31ख — नवीं अनुसूची में किसी अधिनियम को सम्मिलित करने से उस पर अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रत्याभूत कारबार या वृत्ति की स्वतंत्रता का उपबंध लागू नहीं होता । इस स्वतंत्रता से संबंधित बहुत से अधिनियम नवीं अनुसूची में डाल दिए गए हैं, जैसे, एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम, 1969 (मद 91) [देखिए आगे अनुच्छेद 31ख] ।

अनुच्छेद 19(1)(छ) और 31ग — जब किसी आक्षेपित विधि और अनुच्छेद 39(ख)-(ग) के उद्देश्यों के बीच संबंध होने की बात साबित हो जाती है तब उसे अनुच्छेद 31ग का संरक्षण प्राप्त हो जाता है और अनुच्छेद 19(1)(छ) के माध्यम से उस पर आक्रमण नहीं किया जा सकता ।[20]

---

13. *चक्रवर्ती* बनाम *उत्पाद-शुल्क कलक्टर*, (1972) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 430 (*443-44*); *उड़ीसा राज्य* बनाम *हरिनारायण*, (1972) I एस.सी.डब्ल्यू.आर 832 (*842-43*) ।

14. *कुवरजी* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, (1954) एस.सी.आर 873 ।

15. *रशीद अहमद* बनाम *म्यूनिसिपल बोर्ड*, (1950) एस.सी.आर 568 ।

16. *राजस्थान राज्य* बनाम *व्यास*, (1971) यू.जे.एस.सी. 222 (*223*); *हरिचंद* बनाम *मिजो जिला परिषद्*, (1967) 1 एस.सी.आर. 1012; *रासबिहारी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए 1969 एस.सी. 1081; *कलक्टर* बनाम *इब्राहीम*, ए. 1970 एस.सी. 1275 ।

17. *यासिन* बनाम *शहर क्षेत्र समिति*, ए. 1952 एस.सी. 115 ।

18. *बृज भूषण* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, (1986) 2 एस.सी.सी. 354 (पैरा 5-6); *कस्तूरी* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1992 ।

19. *ओल्गा* बनाम *मुंबई निगम*, ए 1986 एस.सी. 180 (पैरा 32), जिसमें *संत राम*, ए. 1960 एस.सी. 932 (*935*) से विभेद किया गया है ।

20. *तमिलनाडु राज्य* बनाम *आबू*, ए. 1984 एस.सी. 326 (पैरा 19, 23-25, 29) ।

अनुच्छेद 19(1)(छ) और 301 — देखिए आगे अनुच्छेद 301 ।

अपराधों के लिए दोषसिद्धि के संबंध में संरक्षण ।

20. (1) **कोई व्यक्ति किसी अपराध के लिए तब तक सिद्धदोष नहीं ठहराया जाएगा, जब तक कि उसने ऐसा कोई कार्य करने के समय, जो अपराध के रूप में आरोपित है, किसी प्रवृत्त विधि का अतिक्रमण नहीं किया है या उससे अधिक शक्ति का भागी नहीं होगा जो उस अपराध के किए जाने के समय प्रवृत्त विधि के अधीन अधिरोपित की जा सकती थी ।**

(2) **किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक अभियोजित और दंडित नहीं किया जाएगा ।**

(3) **किसी अपराध के लिए अभियुक्त किसी व्यक्ति को स्वयं अपने विरुद्ध साक्षी होने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा ।**

अनुच्छेद 20 का प्रविषय — यह अनुच्छेद नागरिकों से भिन्न व्यक्तियों को भी लागू होता है ।[21]

खंड (1) : भूतलक्षी दांडिक विधि के विरुद्ध प्रतिषेध — 1 प्रभुतासंपन्न विधा को यह शक्ति है कि वह भविष्यलक्षी और भूतलक्षी, दोनों ही प्रकार की, विधियां बना सकता है [देखिए अनुच्छेद 24] । यह अनुच्छेद भारत के प्रत्येक विधायी प्राधिकारी की विधि बनाने की शक्ति पर दांडिक विधान के संबंध में दो मर्यादाएं लगाता है । इसके अनुसार दो बातों का प्रतिषेध है — (i) कार्योत्तर दांडिक विधि नहीं बनाई जा सकती, अर्थात् यह नहीं हो सकता कि किसी कार्य को पहली बार अपराध बनाया जाए और उस विधि को भूतलक्षी प्रभाव दिया जाए;[22] (ii) उस शास्ति से अधिक शास्ति अधिरोपित नहीं की जा सकती जो अपराध के किए जाने के समय प्रवृत्त विधि के अधीन अधिरोपित की जा सकती थी ।[23] इस खंड द्वारा जो प्रतिषेध लगाया गया है वह केवल भूतलक्षी विधि पारित करने के विरुद्ध ही नहीं है बल्कि ऐसी विधि के अधीन दोषसिद्धि के विरुद्ध भी है ।[22]

2. किंतु इस खंड में ऐसी कोई बात नहीं है जिससे किसी विशेष प्रक्रिया के लिए निहित अधिकार का सृजन हो ।[24] अतएव कोई अभियुक्त अनुच्छेद 20(1) का अवलंब लेकर यह नहीं कह सकता कि उसका अपराध के किए जाने के समय लागू प्रक्रिया के अनुसार ही विचारण किया जाए ।[25]

3. यह अनुच्छेद उस विधि को लागू नहीं होता जो दांडिक विधि की कठोरता को कम करती है ।[26] यह खंड सिविल दायित्व को भी लागू नहीं होता । यदि ऐसे दायित्व के निर्वहन में असफलता को अपराध बनाया जाता है तो उस विधि को यह लागू होगा ।[27]

'सिद्धदोष नहीं ठहराया जाएगा' — खंड (1) में कार्योत्तर विधि के अधीन दोषसिद्धि या दंडादेश का प्रतिषेध है, उसके विचारण का नहीं । अतएव अपराध करने के समय प्रचलित

---

21. *अनवर* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 337 (*342*) ।

22. *शिव बहादुर* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 118; *सोनी देवराजभाई* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1991 एस.सी. 2173 ।

23. *केदार नाथ* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1953 एस.सी. 404 ।

24. *भारत संघ* बनाम *सुकुमार*, ए. 1966 ,एस.सी. 1206 ।

25. *नय्यर* बनाम *राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 602 (पैरा 7) ।

26. *रतन लाल* बनाम *पंजाब राज्य*, (1964) 7 एस.सी.आर. 676 (*681*); *कन्हैया लाल* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1975 एस.सी. 255 (पैरा 6) ।

27. तुलना कीजिए, *ज्वाला राम* बनाम *पेप्सू राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1246 ।

विधि से भिन्न प्रक्रिया के अधीन अथवा उस समय सक्षम न्यायालय से भिन्न किसी न्यायालय द्वारा विचारण असांविधानिक नहीं होगा । किसी अपराध के अभियुक्त को किसी विशिष्ट न्यायालय या विशिष्ट प्रक्रिया द्वारा विचारण का मूल अधिकार नहीं है । समता या किसी अन्य मूल अधिकार के उल्लंघन के आधार पर सांविधानिकता का आक्षेप किया जा सकता है ।[22] संक्षेप में इस खंड के अधीन प्रतिषेध ऐसी विधियों को लागू नहीं होता जो केवल प्रक्रियात्मक है ।[21] यदि किसी प्रक्रियात्मक विधि को भूतलक्षी प्रभाव दिया जाता है तो इतनी सी बात से अनुच्छेद 20(1) का उल्लंघन नहीं होगा ।[22]

यह प्रतिषेध भूतलक्षी प्रभाव से न्यायिक दंड के विरुद्ध है । किसी सिविल या राजस्व प्राधिकार द्वारा किसी अन्य शास्ति के प्रवर्तन के विरुद्ध यह नहीं है, जैसे किसी कारबार का समाप्त किया जाना या किसी सम्पत्ति का समपहरण ।[28]

'उससे अधिक शास्ति का भागी नहीं होगा जो अपराध के किए जाने के समय प्रवृत्त विधि के अधीन अधिरोपित किया जा सकता था' — इन शब्दों में दूसरा प्रतिषेध समाहित है । किसी व्यक्ति को वे ही शास्तियां अधिरोपित की जा सकती हैं जो उस अपराध के किए जाने के समय प्रवृत्त विधि में विहित थीं जिसके लिए उसे दंड दिया जा रहा है । यदि अपराध के किए जाने के पश्चात् किसी विधि द्वारा कोई अतिरिक्त शास्ति लगाई गई है[23] तो वह प्रशासनिक अपराध के संबंध में उसके विरुद्ध लागू नहीं होगी ।

किंतु यदि उस शास्ति के स्थान पर ऐसी शास्ति रखी जाती है जो उससे उच्चतर या बड़ी नहीं है तो यह अनुच्छेद उसका प्रतिषेध नहीं करता ।[29] जहां साधारण विधि में असीमित जुर्माने का उपबंध था और पश्चात्वर्ती विशिष्ट विधि में एक न्यूनतम रकम विनिर्दिष्ट कर दी गई जिससे कम का जुर्माना नहीं किया जा सकता तो यह अभिनिर्धारित हुआ कि बाद वाली विधि में शास्ति बढ़ाई नहीं गई है ।[29]

'शास्ति' — 1. 'शास्ति' से अभिप्रेत है अपराध के लिए दंड ।[23] इसके अंतर्गत उस रिष्टि को हटाने के लिए किया गया उपचार नहीं आएगा । उदाहरण के लिए, जल के अप्राधिकृत उपयोग की दशा में बढ़ी हुई जल दर से संदाय करने का सिविल दायित्व ।[27] गबन किए गए धन को वसूल करने के लिए संपत्ति का समपहरण ।[28]

2. इसके विपरीत इस अनुच्छेद के प्रयोजन के लिए निम्नलिखित 'शास्ति' हैं —

अपराध का विचारण करने वाले न्यायालय द्वारा आदेश देकर भारतीय दंड संहिता की धारा 53 के अधीन संपत्ति का समपहरण ।[28] पश्चिम बंगाल दंड विधि संशोधन (विशेष न्यायालय) अधिनियम, 1949 की धारा 9(1) के अधीन प्रतिकरात्मक जुर्माना ।[23]

3. जब तक विधि अपराध से संबंधित न हो तब तक यह प्रतिषेध लागू नहीं होगा । जैसे कराधान विधि में अधिरोपित शास्ति को यह लागू नहीं होता ।[30]

खंड (2) : दोहरे दंड से उन्मुक्तता — इस खंड में यह प्रत्याभूति है कि किसी भी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए एक बार से अधिक अभियोजित और दंडित नहीं किया जाएगा । यहां पर "और" का उपयोग सामान्य संयोजक के रूप में किया गया है ।[31] अतएव अनुच्छेद 20(2) के द्वारा दूसरा अभियोजन तभी वारित किया जाता है जब अभियुक्त को उस अपराध के लिए पहले अभियोजित और दंडित किया गया हो ।[31]

---

28. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *एस.के. घोष*, ए. 1963 एस.सी. 255 ।

29. *सतवंत* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 266; *माया* बनाम *आय-कर आयुक्त*, (1986) 1 एस.सी.सी. 445 (पैरा 11-12) ।

30. तुलना कीजिए, *धन-कर आयुक्त* बनाम *सुरेश*, ए. 1981 एस.सी. 1106 (पैरा 11) ।

31. *वेंकटरमण* बनाम *भारत संघ*, (1954) एस.सी.आर. 1150 ।

इस खंड में अंतर्विष्ट "दोहरे दंड" का सिद्धांत "विवाद्यक विबंध" के सिद्धांत से सुभिन्न है ।[32]

खंड (2) के लागू होने की शर्तें — खंड (2) के लागू होने की शर्तें हैं, —

(क) किसी न्यायालय या न्यायिक प्राधिकरण के समक्ष पूर्ववर्ती कार्यवाही होनी चाहिए ।[33]

(ख) व्यक्ति का पूर्ववर्ती कार्यवाही में अभियोजन हुआ हो ।[33]

(ग) उसे पूर्ववर्ती कार्यवाही में दंडित किया गया हो ।[31]

(घ) दूसरी कार्यवाही की विषयवस्तु के रूप में जो अपराध है वह वही अपराध है जो पहली कार्यवाही में था और जिसके लिए उसे अभियोजित और दंडित किया गया है ।[34]

(ङ) अपराध ऐसा अपराध होना चाहिए जिसकी परिभाषा साधारण खंड अधिनियम की धारा 3(38) में दी गई है,[34] अर्थात् "ऐसा कोई कार्य या लोप अभिप्रेत होगा जो किसी तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा दंडनीय किया गया है" ।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अभियोजन ऐसी विधि के अधीन हो जो अपराध का सृजन करती है और दंड भी उस विधि के अनुसार दिया गया हो ।

(च) पश्चात्वर्ती कार्यवाही एक नई कार्यवाही होनी चाहिए जिसमें उसे दोबारा उसी अपराध के लिए अभियोजित और दंडित किया जा रहा है । अतएव यह खंड उस परिस्थिति मे लागू नहीं होता जहां पश्चात्वर्ती कार्यवाही पूर्ववर्ती कार्यवाही के ही आगे का प्रक्रम है, जैसे दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील ।[35] इस खड में अधिकथित प्रतिषेध तभी लागू होता है जब सभी शर्तें पूरी हो जाएं ।[31-35] उदाहरण के लिए, यदि किसी अपराध के लिए कार्यवाही की जाती है किंतु उन कार्यवाहियों से अभियोजन नहीं होता है तो अनुच्छेद 2(20) लागू नहीं होगा ।[36]

"अभियोजित और दंडित" — इन शब्दों से यह उपदर्शित होता है कि दोनों कार्यवाहियां किसी न्यायालय या न्यायिक अधिकरण के समक्ष कार्यवाहियां होनी चाहिएं ।[31]

इस संदर्भ में अभियोजन से अभिप्रेत है किसी न्यायालय या न्यायिक प्राधिकरण के समक्ष किसी अधिनियम में जो अपराध का सृजन और दंड का विनियमन करता है विहित प्रक्रिया के अनुसार दांडिक प्रकृति की किसी कार्यवाही का प्रारंभ किया जाना ।[33] निम्नलिखित कार्यवाहियां अनुच्छेद 20(2) के अर्थान्तर्गत अभियोजन नहीं है : सीमाशुल्क अधिनियम के अधीन माल के अधिहरण या जुर्माने की कार्यवाही[36-37] — चाहे शास्ति अधिरोपित करते समय यह बाध्यता हो कि कलक्टर न्यायिककल्प रूप से कार्य करेगा ।[38]

"दंडित" — इस खंड में दंडित किए जाने का अर्थ है दांडिक न्यायालय द्वारा न्यायिक शास्ति, कानूनी प्राधिकारी द्वारा नहीं ।[36] इसमें अन्य शास्ति नहीं आती, जैसे लोकसेवकों की दशा में अनुशासनिक कार्यवाही [जिसके अंतर्गत लोक सेवक (जांच) अधिनियम, 1850 की

---

32. *प्यारा सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1961 (*1964*); *सहायक सीमा शुल्क कलक्टर* बनाम *मेलवानी*, ए. 1970 एस.सी. 962 ।

33. *मकबूल* बनाम *मुंबई राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 730; *थामस दाना* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 375 ।

34. *मुंबई राज्य* बनाम *आप्टे*, ए. 1961 एस.सी. 578 (*583*); *बिहार राज्य* बनाम *मुराद*, (1989) क्रि.ला.ज. 1005 (पैरा 8) ।

35. *कलावती* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 546; *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *वीरेश्वर*, ए. 1957 एस.सी. 592 ।

36. *थामस दाना* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 375 (*383*); *नारायणलाल* बनाम *मिस्त्री*, ए. 1961 एस.सी. 29 ।

37. *सहायक कलक्टर* बनाम *मेलवानी*, ए. 1970 एस.सी. 962 (*965*) ।

38. *लियो राय* बनाम *अधीक्षक जिला जेल*, ए. 1958 एस.सी. 118 (*121*) ।

धारा 22 के अधीन अधिरोपित शास्ति है]; या जेल के अनुशासनिक नियमों के अधीन जेल के अपराधों के लिए शास्तियां[33] या सीमाशुल्क अधिनियम के अधीन शास्तियां ।[33, 38]

"एक ही अपराध" — किसी एक अपराध (जैसे उपहति) के लिए प्रवृत्त दोषसिद्धि से किसी पृथक् और सुभिन्न अपराध के लिए (जैसे बल्वा) पश्चात्वर्ती विचारण और दोषसिद्धि पर प्रतिबंध नहीं है चाहे दोनों अपराध एक ही तथ्यों से उत्पन्न हुए हों[39] और दोनों परिवादों में अभिकथन भी एक से हों ।[34]

खंड (3) : अभियुक्त को अपने विरुद्ध साक्ष्य देने के लिए विवश करने से उन्मुक्ति — यह खंड किसी व्यक्ति को —

(i) जो किसी अपराध के लिए अभियुक्त है,

(ii) अपने विरुद्ध,

(iii) साक्षी होने के लिए बाध्य करने के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करता है ।

"व्यक्ति" — उच्चतम न्यायालय ने यह उपधारणा की है कि इस खंड का संरक्षण निगमों को भी मिलेगा ।[40]

"अपराध के लिए अभियुक्त" — ये शब्द यह दिखलाते हैं कि इस खंड का संरक्षण न्यायालय या किसी अन्य अधिकरण के समक्ष दांडिक कार्यवाही या उसी प्रकार की किसी अन्य कार्यवाही तक ही सीमित है ।[33] अर्थात् ऐसे प्राधिकारी के सामने जिसके समक्ष साधारण खंड अधिनियम की धारा 3(13) में परिभाषित अपराध के लिए किसी व्यक्ति को अभियुक्त बनाया जा सकता है । यह कार्य भारतीय दंड संहिता या किसी विशिष्ट या स्थानीय विधि के अधीन दंडनीय कार्य हो सकता है ।[40-41] यह सिविल कार्यवाहियों को या दांडिक कार्यवाही से भिन्न कार्यवाहियों में पक्षकारों और साक्षियों को लागू नहीं होगा । ऐसी कार्यवाहियों में कोई व्यक्ति इस आधार पर उत्तर देने से इंकार नहीं कर सकता है कि उसके कारण भविष्य में वह किसी दांडिक अभियोजन में फंस सकता है ।[41]

दांडिक कार्यवाहियों में भी यह संरक्षण अभियुक्त को मिलता है, साक्षियों को नहीं । सह अपराधी के साक्ष्य को भी संरक्षण प्राप्त है ।[42]

अवमानकर्ता के विरुद्ध अवमान की सूचना देने या कार्यवाही लंबित होने से खंड (3) लागू नहीं होता क्योंकि जिन्हें सूचना दी गई है वे अभियुक्त नहीं हैं ।[42क]

उन्मुक्ति किस चरण में मिलेगी — यह संरक्षण उस व्यक्ति को मिलता है जो किसी अपराध के लिए अभियुक्त है । विचारण के दौरान न्यायालय में दिए जाने वाले साक्ष्य के लिए ही नहीं बल्कि यदि उसके विरुद्ध कोई अभियोग लगाया गया है जिसका सामान्य परिणाम अभियोजन हो सकता है तो इससे पहले के चरण में भी उसे उन्मुक्ति प्राप्त होगी ।[43]

उपयुक्त कथन से यह निष्कर्ष निकलता है कि यह संरक्षण —

(क) उस व्यक्ति को मिलेगा जिसके विरुद्ध अभियोग लगाया गया है,[44]

(ख) यह अभियोग किसी अपराध के किए जाने के संबंध में है जिसका सामान्य परिणाम अभियोजन हो सकता है ।[43]

अ. प्ररूपिक अभियोजन — इस खंड में यह अपेक्षा नहीं है कि किसी न्यायालय द्वारा

---

39. *शार्दूल सिंह* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, (1964) 2 एस.सी.आर. 378 (*395*) ।
40. *शर्मा* बनाम *सतीश*, (1954) एस.सी.आर. 1077 ।
41. *नारायणलाल* बनाम *मानेक*, ए. 1961 एस.सी. 29 (*38-39*) ।
42. *चोरड़िया* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 938 (*947*) ।
42क. *दिल्ली जुडिशियल सर्विस* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1991 एस.सी. 406 ।
43. *मुंबई राज्य* बनाम *काठी कालू*, ए. 1961 एस.सी. 1808 (*1816*) ।
44. *दस्तगीर* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 756 (*761*) ।

आदेशिका निकालकर प्ररूपिक अभियोजन किया गया हो । उन्मुक्ति उस क्षण प्रारंभ हो जाती है जब किसी व्यक्ति का नाम प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में या परिवाद में दिया जाता है[41-45] जिसके सामान्य प्रक्रम में परिणाम अभियोजन होगा जैसे विदेशी मुद्रा विनियम के अधीन कारण बताने के लिए नोटिस दिया जाना ।[33] यदि किसी व्यक्ति का नाम ऐसे अधिकारियों द्वारा दिया जाता है जो उसके विरुद्ध अभियोजन प्रारंभ करने के लिए सक्षम हैं और यह कहा जाता है कि उसने अपराध किया है तो वह व्यक्ति इस खंड के अर्थान्तर्गत अपराध का अभियुक्त है ।[40]

आ. *अभियोग जिसका परिणाम सामान्यतः अभियोजन है* — यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी व्यक्ति को अभियुक्त बनाने के लिए यह अनिवार्य शर्त नहीं है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की गई हो या कोई परिवाद किया गया हो । ऐसे भी मामले हो सकते हैं जिसमें सारवान रूप से आरोप लगाया गया हो ।[43] इसके विपरीत यह भी अधिकथित हुआ है[43] कि यह उपबंध उन कार्यवाहियों में लागू नहीं होता जिनमें साधारण अन्वेषण हो रहा है । साधारण अन्वेषण और विनिर्दिष्ट व्यक्ति के विरुद्ध अभियोग में भिन्नता है । साधारण अन्वेषण के परिणामस्वरूप कुछ व्यक्तियों के विरुद्ध विनिर्दिष्ट अभियोग लगाए जा सकते हैं जिन्हें साधारण अन्वेषण के प्रारंभ पर साक्षी बनने के लिए विवश किया गया था । उदाहरण के लिए कंपनी अधिनियम, 1956 की धारा 235, 240 के अधीन कार्यवाहियां,[41] बीमा अधिनियम की धारा 33(3) के अधीन अन्वेषणकर्ता के समक्ष कथन,[46] या बैंककारी कंपनी अधिनियम, 1949 की धारा 45छ(6) के अधीन उच्च न्यायालय में किया गया कथन,[47] या सीमा-शुल्क अधिनियम, 1962 की धारा 108 के अधीन कार्यवाही[48] या रेल सम्पत्ति (विधि विरुद्ध कब्जा) अधिनियम, 1966 की धारा 6 के अधीन कथन ।[49]

संक्षेप में, अनुच्छेद 20(3) नहीं लागू होगा जहां कार्यवाही का प्रारंभ अभियोग लगाने से होता है[48] और जो व्यक्ति इस धारा का संरक्षण चाहता है उसे जब कथन करने के लिए विवश किया जा रहा है तब वह पहले से ही अभियुक्त है ।[44]

निष्कर्ष यह निकलता है कि किसी व्यक्ति का स्वयं को अपराध में फंसाने के विरुद्ध अधिकार, पुलिस पूछताछ के प्रक्रम से प्रारम्भ होता है, अन्वेषण के दौरान भी बना रहता है और यह उन्मुक्ति जिस अपराध के लिए अन्वेषण या विचारण किया जा रहा है उससे भिन्न अपराधों के लिए भी प्राप्त होती है चाहे अन्वेषण या विचारण लम्बित हो या आसन्न । किसी भी कारण से जहां अपराध में फंसाने वाली किसी बात को वह स्वेच्छा से प्रकट नहीं करना चाहता है ।[45]

"बाध्य नहीं किया जाएगा" — 1. इस खंड का एक आवश्यक अंग है बाध्य किया जाना ।[31] यह खंड बिना किसी उत्प्रेरणा, धमकी या वचन के स्वेच्छा से की गई स्वीकृति या संस्वीकृति को प्रतिषिद्ध नहीं करता चाहे उस संस्वीकृति को बाद में वापस ले लिया गया हो ।[50] यह खंड वहां भी लागू नहीं होता जहां कोई विधि अभियुक्त को साक्ष्य के कटघरे में जाने का विकल्प देती है ।[51]

2. इस संदर्भ में बाध्य किया जाने का अर्थ है विवश किया जाना । बाध्य किया गया था यह बात साबित करना आवश्यक है ।[52] बाध्यता के कई रूप हो सकते हैं, यह

45. *नन्दिनी* बनाम *दाणी*, ए. 1978 एस.सी. 1025 (पैरा 39) ।
46. *आर.के. डालमिया* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1962 एस.सी. 1821 (*1870*) ।
47. *जोसेफ* बनाम *नारायण*, ए. 1964 एस.सी. 1552 (*1556*) ।
48. *वीरा* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 1167 (पैरा 9) ।
49. *बालकिशन* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 379 (पैरा 70) ।
50. *कलावती* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 546 ।
51. *गावकर* बनाम *शुक्ला*, ए. 1968 एस.सी. 1050 ।
52. *मुंबई राज्य* बनाम *काठी कालू*, ए. 1961 एस.सी. 1808 (*1816*) ।

शारीरिक भी हो सकती है और मानसिक भी ।[53] बाध्यता होने पर किसी भी व्यक्ति द्वारा किया गया कथन अस्वैच्छिक हो जाएगा ।[52]

(अ) जहां किसी व्यक्ति को भूखा रखा जाता है या पीटा जाता है वहां यह अभिनिर्धारित हुआ कि उसे बाध्य किया गया ।[53]

(आ) निम्नलिखित परिस्थितियों में इस खंड के अर्थान्तर्गत बाध्यता का अभाव है, —

(क) केवल यह कारण कि जब किसी व्यक्ति ने कथन किया तब वह पुलिस की अभिरक्षा में था,[36]

(ख) जहां किसी व्यक्ति ने स्वेच्छा से और स्वतंत्र रूप से कोई बातचीत की और उसकी जानकारी के बिना उस बातचीत को टेपरिकार्डर पर अभिलिखित कर लिया गया,[53]

(ग) जहां कोई व्यक्ति विधि के अधीन किसी प्रश्न का उत्तर देने के लिए या कोई दस्तावेज पेश करने के लिए आबद्ध नहीं है,[44]

(घ) जहां अभियुक्त ने पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए सीमा-शुल्क निरीक्षक के सामने यह स्वीकृति दी कि वह चोरी से माल का परिवहन कर रहा था और उसे यह जानकारी थी कि माल अवैध रूप से आयात किए गए हैं । इस परिस्थिति में केवल इस कारण कि निरीक्षक ने उसे यह चेतावनी दी थी कि यदि वह सच्ची बात नहीं बताएगा तो उस पर झूठी गवाही देने का अभियोजन किया जा सकता है, कोई साक्ष्य बाध्यता के अधीन दिया गया साक्ष्य नहीं है,[54]

(ङ) उत्तर देने से इंकार करने या सत्यतापूर्ण उत्तर न देने के कारण जो विधिक शास्ति दी जाएगी उसके कारण अनुच्छेद 20(3) के अर्थान्तर्गत बाध्यता नहीं होती । किंतु यदि पुलिस बार बार यह धमकी देती है कि उत्तर नहीं देने पर अभियोजन किया जाएगा तो यह अनुच्छेद 20(3) की प्रत्याभूति का उल्लंघन हो जाएगा ।[43]

3. *शर्मा* बनाम *सतीश*[55] में उच्चतम न्यायालय ने इन दो बातों के बीच अन्तर माना — किसी कार्य को करने के लिए विवश किया जाना और किसी व्यक्ति से उसकी इच्छाशक्ति को प्रभावित किए बिना उससे कोई वस्तु प्राप्त करना । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 20(3) में दी गई उन्मुक्ति विवश किए जाने वाले मामले में ही मिलती है दूसरे मामले में नहीं । इस सिद्धांत के आधार पर न्यायालय ने आगे यह कहा कि यह उन्मुक्ति अभियुक्त को तब मिलती है जब कोई बाध्यतापूर्ण आदेशिका या सूचना निकाल कर उसे यह निदेश दिया जाए कि वह कोई दस्तावेज पेश करे नहीं तो उसे शास्ति झेलनी पड़ेगी । किंतु जब कोई पुलिस अधिकारी अभियुक्त से कोई कार्य कराए बिना तलाशी में उससे कोई दस्तावेज प्राप्त करता है तो यहां उन्मुक्ति नहीं मिलेगी ।[55]

4. बाद के निर्णयों से[41, 52] यह प्रकट होता है कि अन्वेषण के प्रारम्भ पर या न्यायालय के बाहर किए गए सभी प्रयत्नों को अनुच्छेद 20(3) के संरक्षण से बाहर समझा जाता है । संरक्षण तभी मिलेगा जब किसी व्यक्ति को बाध्य करके कोई कथन करने के पहले कोई परिवाद या प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज हो चुकी हो ।

5. यह खंड वहां नहीं लागू होता जहां कोई बाध्यता नहीं है अर्थात् जहां किसी दाण्डिक विचारण में कोई अभियुक्त स्वेच्छा से स्वयं साक्षी हो कर अपनी प्रतिरक्षा करता है,[41] या जहां अपने विरुद्ध दाण्डिक कार्यवाहियों के लम्बित रहने के दौरान वह उसी अधिनियम के अधीन शास्ति की कार्यवाहियों में साक्षी के रूप में उपस्थित होता है, या किसी व्यक्ति के विरुद्ध उसकी जानकारी के बिना टेलीफोन टेप करके साक्ष्य एकत्रित किया जाता है ।[53]

---

53. *यूसुफ अली बनाम महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 147 (*150*) ।
54. *वीरा इब्राहीम बनाम मुंबई राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 1167 ।
55. *शर्मा बनाम सतीश*, (1954) एस.सी.आर. 1077 (*1088*) ।

"स्वयं अपने विरुद्ध साक्षी होने के लिए" — 1. अभियुक्त किसी सुसंगत प्रश्न का उत्तर देने से अयुक्तियुक्त आशंका या धूमिल संभावना के आधार पर इंकार नहीं कर सकता। जहां अपराध में कार्यवाही के लिए कोई स्पष्ट संभावना नहीं है वहां उसे उत्तर देना आवश्यक है। यदि उसके उत्तर से उस कार्यवाही में या किसी अन्य वास्तविक या आसन्न अभियोजन की किसी कार्यवाही में उसका दोष प्रकट होने की युक्तियुक्त संभावना है तो वह अपना मुंह बंद रखने का हकदार है चाहे उस अन्वेषण से उसका कोई संबंध नहीं है।[45]

2. अनुच्छेद 20(3) संस्वीकृति तथा अपराध में फंसाने वाले कथन, दोनों पर ही प्रहार करता है। यदि अपराधी, अपराध गठित करने वाले सभी तथ्यों को या सारवान रूप से सभी तथ्यों को स्वीकार कर लेता है तो उसे संस्वीकृति कहते हैं। किंतु यदि उसमें कुछ ऐसे कथन हैं जिनसे वह अपने को निर्दोष साबित करना चाहता है तो यह संस्वीकृति नहीं होगी किंतु यदि उससे अभियुक्त को बांधने वाली साक्ष्य की कोई स्पष्ट श्रृंखला दिखलाई पड़ती है जिससे अभियुक्त को दोष प्रकट होता है तो उसे अपराध में फंसाने वाला साक्ष्य समझा जाएगा।[45]

3. ऐसे कथन जो न तो सस्वीकृति के रूप में हैं और न अपराध में फसाने वाले हैं अनुच्छेद 20(3) के संरक्षण का दावा नहीं कर सकते।[45] जहां अपराध में फंसाने की आशंका दूरवर्ती या काल्पनिक है वहां किसी प्रश्न का उत्तर देने से इंकार करने का अधिकार नहीं है। यह आशंका युक्तियुक्त है या दूरवर्ती यह संपूर्ण परिस्थितियों पर और संदर्भ पर आधारित होगा किंतु यदि युक्तियुक्त संदेह है तो उसका लाभ अभियुक्त को मिलेगा और उसे चुप रहने का अधिकार होगा।[45]

दस्तावेजी साक्ष्य पेश करने से उन्मुक्ति — अब यह सुस्थापित हो चुका है कि[52] "साक्षी होना" में मौखिक रूप से साक्षी होना भी है और लिखित साक्ष्य देना भी है।

शर्मा के वाद में[55] इसे व्यापक शब्दों में अभिव्यक्त किया गया था कि इसके अन्तर्गत अभियुक्त द्वारा दिए गए लिखित कथन भी हैं और ऐसे दस्तावेजी साक्ष्य भी हैं जिन्हें पेश करने के लिए उसे बाध्य किया गया है। उसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि यदि किसी अपराध के लिए अभियुक्त व्यक्ति को साक्ष्य स्वरूप दस्तावेज पेश करने के लिए बाध्य करते हुए आदेशिका निकलती है तो यह संविधान के अनुच्छेद 20(3) का उल्लंघन होगा। किंतु इसके लिए आवश्यक है कि दस्तावेज ऐसे हों जो युक्तियुक्त रूप से उस व्यक्ति के विरुद्ध अभियोजन का साधारण आधार बन जाएं।[55] किंतु *शर्मा* के बाद में जो प्रस्थापना की गई थी कि अनुच्छेद 20(3) का संरक्षण सभी दस्तावेजी साक्ष्य को मिलेगा उसे बाद में *मुम्बई* बनाम *काठी कालू*[56] के बाद में संकीर्ण कर दिया गया। इसे उस लिखित कथन तक सीमित कर दिया गया जिसमें उसके विरुद्ध आरोप से संबंधित उसकी व्यक्तिगत जानकारी है।[56] अभियुक्त को ऐसा दस्तावेज पेश करने के लिए विवश नहीं किया जा सकता। किंतु किसी अन्य दस्तावेज को पेश करने के विरुद्ध संरक्षण नहीं मिलता। जैसे, कोई दस्तावेज जो उसकी अभिरक्षा में है और जिसमें अन्य व्यक्तियों के कथन हैं[56] या स्वयं अभियुक्त द्वारा लिखा हुआ कोई दस्तावेज जिससे उसका हस्तलेख प्राप्त होता है या जिसमें ऐसे कथन हैं जिनसे आरोप के संबंध में उसकी व्यक्तिगत जानकारी नहीं मिलती है।

क्या यह उन्मुक्ति तात्विक साक्ष्य, लिखावट का नमूना आदि को भी लागू होती है — *शर्मा* के वाद में[55] उच्चतम न्यायालय ने यह बताया कि इसमें साक्षी 'होने के लिए' अभिव्यक्ति का प्रयोग है। साक्षी के रूप में "उपस्थित होना" अभिव्यक्ति का प्रयोग नहीं किया गया है इसलिए इस खंड में जो उन्मुक्ति दी गई है वह ऐसे सभी प्रकार के साक्ष्य के लिए विवश किए जाने के लिए है जिसके आधार पर उसके विरुद्ध अभियोजन चलाए जाने की युक्तियुक्त

---

56. *मुंबई राज्य बनाम काठी कालू*, ए. 1961 एस.सी. 1808 (*1813-16*)।

संभावना है ।[55] *मुम्बई* बनाम *काठी कालू*[56] के पश्चात्वर्ती वाद में उच्चतम न्यायालय ने *शर्मा* के वाद के घेरे को छोटा कर दिया और यह अधिकथित किया कि यह संरक्षण सभी प्रकार के साक्ष्य को नहीं है किंतु केवल ऐसे कथन के लिए है जो अभियुक्त को अपराध में फंसाने वाले हैं (मौखिक और लिखित दोनों) । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुच्छेद 20(3) अभियुक्त को निम्नलिखित संरक्षण नहीं देता, —

(क) कोई तात्विक वस्तु पेश करने के लिए विवश करने से ।[57]

(ख) अभियुक्त को उसके शिनाख्त के प्रयोजन के लिए अपने शरीर को प्रदर्शित करने के लिए विवश करने के विरुद्ध प्रतिषेध नहीं है[57] या संदिग्ध व्यक्तियों के शिनाख्त की कार्यवाही करने के विरुद्ध नहीं है या उनके फोटो लेने या उनके शरीर पर कपड़े आदि पहनाकर देखने के विरुद्ध भी नहीं है ।[58] अभियुक्त के पास से खून से सने कपड़े या अन्य[59] वस्तुएं प्राप्त करना भी उसे साक्षी होने के लिए विवश करना नहीं है । अभियुक्त की चिकित्सीय परीक्षा या परीक्षा के प्रयोजन के लिए उसके शरीर से उसकी सम्मति के बिना रक्त लिया जाना[55] इसी कारण उचित है ।

(ग) हस्तलेख या हस्ताक्षर का नमूना देने[60] या पैर या हथेली या उंगलियों की छाप देने के लिए विवश करने से संरक्षण नहीं है ।[61]

इसलिए यह बात तात्विक नहीं कि ये सब चीजें (नमूने, छाप आदि) अभियुक्त से पुलिस की अभिरक्षा में ली गई थी या न्यायालय के निष्कर्षों के अधीन ली गई थी या शारीरिक बल का प्रयोग किया गया था अथवा नहीं ।

अनुच्छेद 20(3) के उल्लंघन का प्रभाव — निर्णयों से निम्नलिखित प्रस्थापनाएं प्राप्त होती हैं :

(i) यदि अभियुक्त व्यक्ति को अन्वेषण के दौरान विवश करके उससे प्राप्त साक्ष्य के आधार पर कोई आरोप या दांडिक अभियोजन किया जाता है तो ऐसा आरोप या कार्यवाही अभिखंडित की जा सकती है ।[45]

(ii) यदि अभियुक्त को प्रश्नों का उत्तर देने से इंकार करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 179 के अधीन अभियोजित किया जाता है और प्रश्न अपराध में फंसाने वाले थे जिनके अधीन अनुच्छेद 20(3) का संरक्षण प्राप्त है तो यह अभियोजन अभिखंडित किया जाएगा ।[45]

प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण ।

21. **किसी व्यक्ति को, उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।**

अनुच्छेद 21 का उद्देश्य : दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण — अनुच्छेद 21 का उद्देश्य कार्यपालिका द्वारा दैहिक स्वतंत्रता में हस्तक्षेप को रोकना है । कार्यपालिका विधि के अनुसार और विधि के उपबंधों का पालन करके स्वयं यह स्वतंत्रता छीन सकती है ।[62] किसी व्यक्ति को प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से वंचित करने से पहले विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया का कठोरता से पालन किया जाना चाहिए और उस प्रक्रिया से ऐसा कोई विचलन नहीं होना चाहिए

---

57. *दस्तगीर* बनाम *मद्रास राज्य,* (1960) 3 एस.सी.आर. 116 ।
58. *राम स्वरूप* बनाम *राज्य,* ए. 1958 इलाहाबाद 119 (*126*) ।
59. पलानी का मामला, ए. 1955 मद्रास 495 ।
60. *सुबय्या* बनाम *रामास्वामी,* ए. 1970 मद्रास 85 ।
61. *पखार सिंह* बनाम *राज्य,* ए. 1958 पंजाब 294 (*298*) ।
62. *गोपालन* बनाम *मद्रास राज्य,* (1950) एस.सी.आर. 88 ।

जो प्रभावित व्यक्ति के लिए अहितकर हो ।[63] जब भी व्यक्ति की स्वतंत्रता का प्रश्न उत्पन्न होता है, चाहे वह दांडिक विधि के अधीन हो या निवारक निरोध विधि के, न्यायालय का यह परम कर्तव्य हो जाता है कि वह अपना यह समाधान कर ले कि विधि द्वारा जो रक्षोपाय बनाए गए हैं उनका सही-सही अनुपालन हुआ है ।[64] इस अनुच्छेद का संरक्षण नागरिकों के लिए भी है और अन्य व्यक्तियों के लिए भी । जो दोषसिद्ध व्यक्ति जेल में है उसे भी इसका संरक्षण मिलेगा । विधि के अधीन किसी व्यक्ति के दोषसिद्ध हो जाने पर जो परिसीमाएं बन जाती हैं उनके अधीन रहते हुए ऐसा होगा ।[65]

अनुच्छेद 21 का प्रविषय – "विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार" शब्दों से ऐसा प्रकट होता है कि अनुच्छेद 21 वहां नहीं लागू होगा जहां किसी व्यक्ति को किसी प्राइवेट व्यष्टि ने निरुद्ध करके रखा है, अर्थात् जो निरोध राज्य के द्वारा या राज्य के प्राधिकार के अधीन नहीं है । प्राइवेट व्यष्टि के निरोध से मूलाधिकार का अतिलंघन नहीं होगा । इसलिए ऐसे मामलों में अनुच्छेद 32 की सहायता नहीं ली जा सकती ।[62] [किंतु अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका दी जा सकती है, देखिए आगे ।] सरकार द्वारा किए गए निवारक निरोधों को यह अनुच्छेद लागू होता है ।[66]

'वंचित' – 1. *गोपालन* के वाद[62] में यह अभिनिर्धारित हुआ कि अनुच्छेद 21 तभी लागू होगा जब अधिकार से "वंचित किया गया हो" । अर्थात् पूरा अधिकार ही समाप्त हो गया हो । अतएव यदि अबाध रूप से आने-जाने के अधिकार पर निर्बन्धन हुआ हो तो यह धारा लागू नहीं होगी, तब वह अनुच्छेद 19(1)(घ) के अधीन आएगा ।[62]

2. *गोपालन* में अभिव्यक्त उक्त मत को पश्चात्वर्ती निर्णयों में बदल दिया गया है । अब स्थिति यह है कि दैहिक स्वतंत्रता पर निर्बंधन के लिए भी विधि का प्राधिकार आवश्यक है । उदाहरण के लिए –

(i) किसी व्यक्ति के अपने घर में रहने की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप, जैसे रात्रि को पुलिस द्वारा उसके घर पर गश्त[67] या अत्यधिक निगरानी ।[68]

(ii) जेल में किसी कैदी के जेल के बाहर पुस्तक प्रकाशित करने के अधिकार में हस्तक्षेप ।[69]

(iii) जेल में रहते हुए लगाया गया ऐसा कोई निर्बन्धन जिसके लिए विधि का प्राधिकार नहीं है ।[69]

'प्राण' – 1. प्राण के अधिकार का अर्थ मानव की गरिमा और सभ्यता के अनुसार जीवन जीने का अधिकार है ।[70] सुरक्षा गृह या कारागार में भी यह अधिकार है ।[70]

2. इसके अंतर्गत वह सब आ जाएगा जो किसी मनुष्य के जीवन को सार्थक बनाता है । जैसे, उसकी परंपरा, संस्कृति, विरासत और उस विरासत को पूर्ण संरक्षण ।[70क] जब कोई व्यक्ति अनुच्छेद 21 के भंग के लिए अनुतोष प्राप्त करना चाहता है तो उसे ऐसा कार्य दिखाना होगा जो प्रत्यक्ष, स्पष्ट और मूर्त हो और जिससे जीवन की पूर्णता संकटापन्न हो गई है ।[70क]

---

63. *बशीरा* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1969) 1 एस.सी.आर. 32 (*40*) ।

64. *नरेन्द्र* बनाम *गुजरात*, ए. 1979 एस.सी. 420 ।

65. *भुवन* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2092 (पैरा 6); *सुनील* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1978 एस.सी. 1675 (पैरा 53, 57, 164, 212) ।

66. *बालचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 297 ।

67. *खड़क सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1295 (*1300*) ।

68. *मलक* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 760 (पैरा 6) ।

69. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *प्रभाकर*, ए. 1966 एस.सी. 424 (*426*) ।

70. *सुनील* बनाम *दिल्ली प्रशासन (I)*, ए. 1978 एस.सी. 1675; *विक्रम* बनाम *बिहार*, (1988) सप. एस.सी.सी. 734 (पैरा 2) ।

70क. *रामशरण* बनाम *भारत संघ*, (1989) सप. (1) एस.सी.सी. 251 (पैरा 13-14) ।

3. कुछ पूर्ववर्ती निर्णयों में[71] यह अभिनिर्धारित हुआ था कि अनुच्छेद 21 की परिधि में प्राण के अधिकार के अंतर्गत जीविकोपार्जन का अधिकार नहीं है । किंतु बाद में एक सांविधानिक पीठ ने[72] इसके प्रतिकूल निर्णय लिया है । किसी व्यक्ति को विधि द्वारा स्थापित ऋजु और न्यायोचित प्रक्रिया के अनुसार ही जीविकोपार्जन के अधिकार से वंचित किया जा सकता है । अन्यथा यह अनुच्छेद 21 के प्रतिकूल होगा । इससे यह निष्कर्ष भी निकलता है कि साधारणतया संपत्ति से वंचित किए जाने पर अनुच्छेद 21 लागू नहीं होता । फिर भी जहां संपत्ति के छीने जाने के परिणामस्वरूप उस व्यक्ति के प्राण की स्वतंत्रता या जीविकोपार्जन ही समाप्त हो जाएगा वहां अनुच्छेद 21 लागू होगा ।[73]

4. अनुच्छेद 21 के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि किसी व्यक्ति को व्यापार या कारबार इस प्रकार करने का अधिकार है कि उस पर अनुच्छेद 19(6) के अधीन युक्तियुक्त निर्बंधन न हो ।[73क]

5. अनुच्छेद 21 राज्य पर यह बाध्यता डालता है कि वह प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की रक्षा करे चाहे वह दोषी हो या निर्दोष । प्रत्येक रोगी को तुरत चिकित्सीय सहायता मिलनी चाहिए । इस बाध्यता के निर्वहन में यदि प्रक्रियात्मक विधियों से बाधा पड़ती है तो उसकी अवहेलना की जानी चाहिए ।[73ख]

6. प्रदूषणरहित जल और वायु के उपभोग का अधिकार भी अनुच्छेद 21 मे है ।[73ग]

दैहिक स्वतंत्रता — 1. *गोपालन* के पूर्ववर्ती निर्णय में यह कहा गया था कि अनुच्छेद 21 में दैहिक स्वतंत्रता का अर्थ है जेल में रखने या अन्य प्रकार से शारीरिक निर्बन्धन से मुक्ति ।[62]

2. किंतु *गोपालन* के मामले में शारीरिक बंधन के अभाव के रूप में 'दैहिक स्वतंत्रता' का जो नकारात्मक परीक्षण स्वीकार किया गया था उसे *मेनका* के मामले[74] में त्याग दिया गया है । उसके पश्चात् उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 21 में अंतर्विष्ट स्वतंत्रता की संकल्पना में कई नए पहलू जोड़े हैं ।[75]

3. आज यह प्राख्यान किया जाता है कि इसमें वे सभी विभिन्न प्रकार के अधिकार सम्मिलित हैं जिनसे मिलकर किसी व्यक्ति की दैहिक स्वतंत्रताएं बनती हैं और जो उन स्वतंत्रताओं से भिन्न है जो अनुच्छेद 19 के खंडों मे गिनाई गई हैं,[67] जैसे,

(क) आवागमन का अधिकार, अनुच्छेद 19(1)(घ) में जितना सम्मिलित है उसे छोड़कर ।[76]

(ख) विदेशी यात्रा का अधिकार, भारत से बाहर जाने का[76] और भारत लौटकर आने का ।[76]

(ग) एकांतता का अधिकार ।[77]

(घ) बंदी का शिष्टता के न्यूनतम मानक का अधिकार । किंतु इसमें किसी महाविद्यालय मे प्रवेश पाने का अधिकार सम्मिलित नहीं है ।[78]

---

71. *बापी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए 1983 एस.सी 1073 (पैरा 22); *नाचाने* बनाम *भारत संघ*, ए 1982 एस.सी. 1126 ।

72. *ओल्गा* बनाम *मुंबई निगम*, ए 1986 एस.सी 180 (पैरा 32) ।

73. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *बसंती बाई*, (1986) 2 एस.सी.सी 516 (पैरा 16) ।

73क. *सोडन* बनाम *एन.डी.एम.सी.*, (1989) एस.सी.सी 155 (पैरा 21); *नगर निगम* बनाम *गुरनाम*, (1989) 1 एस.सी.सी. 101 (पैरा 13) ।

73ख. *परमानंद* बनाम *भारत संघ*, (1989) एस.सी.सी. 286 (पैरा 7-8) ।

73ग. *सुभाष कुमार* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1991 एस.सी 420 ।

74. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए 1978 एस.सी. 597 ।

75. *संतोष* बनाम *भारत संघ*, (1979) एस.सी तारीख 31-10-1979; *किरीट* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 1621 (पैरा 10) ।

76. *सतवंत* बनाम *ए.पी.ओ.*, ए. 1967 एस.सी. 1836 (*1844-45*) ।

77. *गोविंद* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1378; *खड़क सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1295 ।

78. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *लाबू*, (1971) 1 एस.सी.सी. 607 (*615*) ।

'विधि द्वारा प्रस्थापित प्रक्रिया' — 1. इस अनुच्छेद के निर्वचन में हमारे उच्चतम न्यायालय ने न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का खूब जमकर उपयोग किया है । अनुच्छेद की भाषा से न्यायालय बंधा हुआ नहीं रहा । इसका परिणाम यह है कि यह अनुच्छेद प्रारंभ में जैसा था उसका अब उल्टा हो गया है ।

I. सबसे प्रारंभ के प्रक्रम पर न्यायालय का यह दृष्टिकोण था कि 'विधि' का प्रयोग राज्य निर्मित विधि या अधिनियमित विधि के रूप में किया गया है । विधि का अर्थ नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को समाविष्ट करने वाले नियमों के रूप में किसी अमूर्त या साधारण अर्थ में नहीं किया गया ।[62, 79] अतएव 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' अभिव्यक्ति का अर्थ है राज्य द्वारा विधि द्वारा विहित प्रक्रिया । अमरीकी संविधान में 'सम्यक् विधि प्रक्रिया' अभिव्यक्ति का जो अर्थ दिया गया है उसके प्रकाश में इसका अर्थान्वयन करना उचित नहीं होगा ।[62] संसद् को विधि बनाकर या उसका संशोधन करके प्रक्रिया में परिवर्तन करने की शक्ति है । जब इस प्रकार परिवर्तन होगा तो परिवर्तित प्रक्रिया ही 'विधि द्वारा प्रस्थापित प्रक्रिया' हो जाएगी ।[80-81]

II. न्यायालय ने इस बात को स्वीकार किया कि इस अनुच्छेद के प्रविषय के अधीन ऐसी ही विधि आएगी जो मान्य विधि है । मान्य विधि वही होगी जो सक्षम विधान मंडल द्वारा बनाई गई हो और जो संविधान में घोषित अन्य मूल अधिकारों का उल्लंघन न करती हो, जैसे अनुच्छेद 14[82] या अनुच्छेद 19 ।[83] अतएव अनुच्छेद 21 के होते हुए भी दैहिक स्वतंत्रता को वंचित करने वाली विधि की सांविधानिकता पर निम्नलिखित आधार पर प्रहार किया जा सकता है —

(क) कि वह सक्षम विधान मंडल द्वारा अधिनियमित नहीं है,

(ख) कि इस विधि में अत्यधिक प्रत्यायोजन का दोष है,[84]

(ग) यह विधायी शक्ति का आभासी प्रयोग है,[84]

(घ) यदि विधि अधीनस्थ विधान है तो वह शक्ति बाह्य है या यदि वह आदेश है तो विद्वेषपूर्ण है,[84]

(ङ) कि वह अनुच्छेद 21 से भिन्न किसी अन्य मूलाधिकार का उल्लंघन करती है ।[84]

(च) जीविकोपार्जन के अधिकार से वंचित करने वाली प्रक्रिया न्यायपूर्ण, ऋजु और युक्तियुक्त नहीं है ।[84क]

III. *गोपालन* के मत की पुष्टि करते हुए यह कहा गया कि युक्तियुक्तता का परीक्षण यहां लागू नहीं हो सकता क्योंकि जो मामला अनुच्छेद 21 के अधीन नहीं आता है वह अनुच्छेद 19(1)(घ) के अधीन नहीं आता । किंतु *कूपर*[85] के वाद में यह संप्रेक्षण किया गया कि अनुच्छेद 19 तथा 21-22 एक दूसरे से बिल्कुल पृथक् नहीं रखे जा सकते । इसके प्रकाश में पहली अभिव्यक्ति शिथिल पड़ गई है ।

IV. *गोपालन* के मामले में[62] न्यायालय ने अपने को सीमा में बांध रखा है । *मेनका गांधी* के मामले में[86] *गोपालन* के मामले को उल्टे बिना ही उस बंधन को दो आधारों पर

79. *राम चन्द्र* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1629 ।

80. *कृष्णन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1951) एस.सी.आर. 621 (न्या. महाजन और दास) ।

81. *रतिलाल* बनाम *सहायक सीमाशुल्क कलक्टर*, ए. 1967 एस.सी. 1639 (*1642*) ।

82. *शिव बहादुर* बनाम *विंध्य प्रदेश राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 1188 (*1200*) ।

83. *राम कृष्ण* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 708 (*715*) ।

84. *मखनसिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 381; *सुनील* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1978 एस.सी. 1675 (पैरा 164) ।

84क. *दिल्ली ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन* बनाम *डी.टी.सी. मजदूर*, ए. 1991 एस.सी. 101 ।

85. *कूपर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 564 (पैरा 48, 64) ।

86. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 (पैरा 56); *सीता राम* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 745 (पैरा 29) ।

तोड़ दिया गया है (अनुच्छेद 19 और 22 के बीच सीमा के प्रश्न पर विचार किए बिना) । ये आधार हैं :

(क) यदि प्रक्रिया स्वेच्छाचारी, तानाशाही या मनमानी है तो वह कोई प्रक्रिया नहीं है । जैसे, कोई पाशविक प्रक्रिया, उदाहरणस्वरूप 'सार्वजनिक फांसी' ।[86क]

(ख) यदि प्रक्रिया अयुक्तियुक्त है तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह अनुच्छेद 14 के अनुरूप है क्योंकि उस अनुच्छेद में युक्तियुक्तता की संकल्पना पूरी तरह से लागू होती है ।[86]

V. जब युक्तियुक्तता का परीक्षण स्वीकार कर लिया जाता है तो उसके साथ ही नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत भी आ जाते हैं और यह मांग हो जाती है कि उस दांडिक विधि से प्रभावित होने से पहले व्यक्ति को अपना पक्ष प्रस्तुत करने का युक्तियुक्त अवसर दिया जाना चाहिए ।[86]

मेनका गांधी के मामले में[86] न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया कि अनुच्छेद 21 में यह विवक्षा है कि नैसर्गिक न्याय की अपेक्षाओं का पालन किया जाएगा और यदि कोई दांडिक विधि (जैसे पासपोर्ट अधिनियम) प्रभावित करने के पहले सुनवाई करने का अवसर नहीं देती है तो न्यायालय यह विवक्षा करेगा कि इस प्रकार की अपेक्षा है जिससे विधि द्वारा विधिक प्रक्रिया युक्तियुक्त हो, स्वेच्छाचारी नहीं ।

अब यह कहना कठिन है कि अनुच्छेद 21 के पाठ में "सम्यक् प्रक्रिया" के सिद्धांत को समाविष्ट नहीं किया गया है ।

VI. इस अनुच्छेद का तब और भी विस्तार हो गया जब यह कहा गया कि यदि प्रक्रिया ऋजु नहीं है तो वह युक्तियुक्त नहीं हो सकता[86-87] चाहे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का हनन न हुआ हो । विशेष न्यायालय विधेयक, 1978 के बारे में यह कहा गया कि उसमे ऋजुता की कमी थी[87] और इसके निम्नलिखित कारण दिए गए —

(i) विशेष न्यायालय से किसी भी आधार पर किसी वाद को अंतरित करने के लिए कोई उपबंध नहीं था ।

(ii) उसका पीठासीन व्यक्ति उच्च न्यायालय का सेवानिवृत्त न्यायाधीश था जिसकी नियुक्ति सरकार की इच्छा पर कभी भी समाप्त की जा सकती थी ।

(iii) ऐसे न्यायाधीश के चयन में भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श लिया जाना था किंतु उसकी सहमति आवश्यक नहीं थी । परिणामस्वरूप अभियुक्त का विचारण ऐसे न्यायाधीश द्वारा होगा जिसे सरकार नामनिर्दिष्ट करेगी । सरकार के प्रसाद पर ही उसकी सेवाएं निर्भर होंगी । इसलिए वह स्वाधीन नहीं होगा ।[87]

इस नवीन सिद्धांत को मानते हुए कि यदि दांडिक प्रक्रिया युक्तियुक्त, ऋजु और न्यायोचित नहीं है तो उसे विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया नहीं कहा जा सकता,[88] न्यायालय ने निम्नलिखित आधारों पर अभियुक्त या दोषसिद्ध बंदी को मुक्त कर दिया है :

(क) कि अभियुक्त को विधिक सेवा उलब्ध कराने की कोई व्यवस्था नहीं की गई । अभियुक्त इतना गरीब है कि वह वकील नहीं कर सकता और इसलिए विचारण में उसे कोई विधिक सहायता नहीं मिलेगी ।[89-92]

86क. *ए.जी. बनाम लछमा*, (1989) सप. (1) एस.सी.सी. 264 ।

87. विशेष न्यायालय विधेयक, 1978 का मामला, ए. 1979 एस.सी. 478 — सात न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ (पैरा 94-98, 145, 147, 156, 161, 167) ।

88. *ओल्गा बनाम मुंबई निगम*, ए. 1986 एस.सी. 180 (पैरा 39); *फ्रांसिस बनाम प्रशासक*, ए. 1981 एस.सी. 746 (*750*); *कस्तूरी बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1992 (*2000*) ।

89. *होस्कोट बनाम महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1978 एस.सी. 1548; *सुक बनाम संघ राज्यक्षेत्र*, (1986) 2 एस.सी.सी. 401 (पैरा 5-6) ।

90. *शेरसिंह बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1983 एस.सी. 465 (पैरा 16) ।

91. *हुसैनआरा बनाम बिहार राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 1369 (पैरा 6); *हुसैनआरा बनाम बिहार राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 1377 (पैरा 6) ।

92. *कादरा बनाम बिहार राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 939 (पैरा *2*) ।

(ख) कि विचाराधीन बंदी को जेल में जिस अवधि तक रखा गया है वह उस अधिकतम अवधि से लंबी है जिसके लिए उसे दोषसिद्ध ठहराए जाने पर सजा दी जा सकती थी ।[91-93]

(ग) कि विधि में शीघ्र विचारण की व्यवस्था नहीं है ।[91-92, 94]

(घ) कि जेल के नियम असम्यक् रूप से कठोर हैं । वे मनुष्य की गरिमा के विपरीत हैं । दोषसिद्ध बंदी को भी मानवीय गरिमा बनाए रखने का अधिकार है ।[92-95]

(ङ) कि दोषसिद्ध व्यक्ति को अपील प्रस्तुत करने के भीतर निर्णय की प्रति देने से इंकार किया गया ।[89]

(च) कि मृत्युदंड के निष्पादन में अत्यधिक विलंब हुआ है ।

VII. निम्नलिखित परिस्थितियों में न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं हुआ है :

(i) दांडिक विधि में समाज विरोधी अपराध के लिए न्यूनतम दंड का विधान किया गया है जिसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जा सकता ।[96]

(ii) कारागार के नियमों में बंदियों का सामान्य और खतरनाक तथा मृत्युदंड का आदेश पाए हुए बंदियों के रूप में वर्गीकरण किया गया ।[95]

(iii) केवल शीघ्र विचारण के अभाव से ही दोषसिद्धि को अभिखंडित नहीं किया जा सकता । अभियुक्त को यह साबित करना होगा कि इसका उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है ।[97]

(iv) किसी न्यायाधीश की नियुक्ति असांविधानिक या अवधि घोषित किए जाने के पहले जो दोषसिद्धियां उसने की थीं उन्हें कायम रखा जाएगा ।[98] यहां "वास्तव मे घटित" हो जाने का सिद्धात लागू किया जाएगा ।

(v) रस्से से लटकाकर मृत्यु दंडादेश के निष्पादन करने का आदेश ।[99]

VIII. अनुच्छेद 21 के अनुसार ऋजु प्रक्रिया की अपेक्षा में 'शीघ्र विचारण' का अधिकार है । अभियुक्त के जीवन की अंतिम सांस तक प्रत्येक प्रक्रम पर इस अधिकार की रक्षा होनी चाहिए । इस अधिकार का विस्तार अनुच्छेद 72 के अधीन क्षमा याचिका पर भी होगा ।[99क]

IX. संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अब 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' का अर्थ विधान मंडल द्वारा अधिनियमित प्रक्रिया नहीं है । अनुच्छेद 21 की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए प्रक्रिया युक्तियुक्त, ऋजु और न्यायोचित होनी चाहिए ।[86, 100] अनुच्छेद 39क के साथ पढ़े जाने पर इससे यह अर्थ निकलता है कि निर्धन अभियुक्त और बंदी को विधिक सहायता उपलब्ध होगी ।[100]

2. 'विधि' के अंतर्गत कार्यपालिका के या विभागीय ऐसे अनुदेश नहीं आते हैं जिनका कोई कानूनी आधार नहीं है[84] जैसे उत्तर प्रदेश पुलिस विनियम ।[1] कानूनी नियम और विनियम इसके अंतर्गत आते हैं ।[2]

3. अनुच्छेद 21 में जिस ऋजुता की संकल्पना को स्थान दिया गया उसे अनुच्छेद 22(3) में भी सम्मिलित कर लिया गया है । यह अभिनिर्धारित किया गया है कि —

(क) निरुद्ध व्यक्ति को अधिवक्ता के माध्यम से उपस्थित होने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है ।

93 *हुसैनआरा* बनाम *गृह सचिव*, ए. 1979 एस.सी. 1819 ।

94 *हुसैनआरा* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1979 एस.सी 1360 (पैरा 5) ।

95. *चार्ल्स शोभराज* बनाम *अधीक्षक*, ए 1978 एस.सी. 1514 (पैरा 15); *सुनील* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1978 एस.सी. 1675 ।

96. *इन्द्रजीत* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 1867 (पैरा 5, 7) ।

97. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *चम्पालाल*, ए. 1981 एस.सी. 1675 (पैरा 2) ।

98. *गोकाराजु* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1473 (पैरा 17) ।

99. *दीना* बनाम *भारत संघ*, ए. 1983 एस.सी. 1155 (पैरा 64, 81-82) ।

99क *त्रिवेणी बेन* बनाम *गुजरात राज्य*, (1989) 1 एस.सी.सी. 678 (पैरा 60, 74) ।

100. *गोपालनचारी* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 674 (पैरा 6) ।

1. *खड़क सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1295 (*1299*) ।

2. *गोविन्द* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1378 ।

किंतु यदि वह सलाहकार बोर्ड से इस प्रकार का अनुरोध करता है तो बोर्ड को चाहिए कि प्रत्येक मामले के तथ्यों को देखते हुए ऋजु सुनवाई सुनिश्चित करने के लिए उसके अनुरोध पर विचार करे ।[3]

(ख) कारागार का विनियम जो निरुद्ध व्यक्ति को अपने नातेदारों या मित्रों या वकील से मिलने के अवसर से मनमाने ढंग से वंचित करता है असांविधानिक होगा ।[4]

बंदियों को अनुच्छेद 19 का लागू होना — 1. यदि कारावास विधिमान्य अधिनियम के अधीन और विधि द्वारा अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार दिया गया है तो अनुच्छेद 19(1)(घ) द्वारा भारत के राज्यक्षेत्र में निर्बाध संचरण की स्वतंत्रता समाप्त हो जाती है ।[5] अतएव जब तक *गोपालन* के वाद को[62] अभिव्यक्त रूप से उलटा नहीं जाता[6] तब तक दांडिक विधि पर यह आक्षेप नहीं लगाया जा सकता कि वह अनुच्छेद 19(1)(घ) पर अयुक्तियुक्त निर्बंधन है । कोई दोषसिद्ध व्यक्ति यह प्रश्न नहीं उठा सकता कि उसको भागने से रोकने के लिए पुलिस गार्ड या उच्च वोल्टता वाले बिजली के उपकरण क्यों लगाए गए हैं ।[5, 7]

2. पूर्वगामी मर्यादा के अधीन रहते हुए अनुच्छेद 14, 19 और 21 कारागार में भी लागू होते हैं क्योंकि बंदी या निरुद्ध व्यक्ति नागरिक भी है और मनुष्य भी ।[8]

जेल की सलाखों के अदर भी, कारागार की परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, दोषसिद्ध व्यक्ति अन्य मूल अधिकारों का उपभोग कर सकता है । जैसे, उसकी अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, पुस्तक लिखने की[9] या उसे जेल अधिकारियों के माध्यम से प्रकाशक[9] को भेजने की स्वतंत्रता । इस विस्तार तक दांडिक विधि की युक्तियुक्तता पर अनुच्छेद 19 के प्रति निर्देश से प्रश्न चिह्न लगाया जा सकता है (देखिए पीछे पृष्ठ 80-83) ।

आपात में अनुच्छेद 21 का निलंबन — 1 संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम, 1978 से अनुच्छेद 359(1) का संशोधन करके इससे संबंधित विधि को बदल दिया गया है [देखिए आगे अनुच्छेद 359] ।

2. 1976 के पूर्व उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था[10] कि अनुच्छेद 21 के निलंबित होते हुए भी बंदी या निरुद्ध व्यक्ति ऐसे आदेश पर आक्षेप कर सकता है । बस, आक्षेप का आधार अनुच्छेद 21 के अतिरिक्त कुछ भी हो । जैसे, आदेश शक्ति बाह्य है (विधिक प्राधिकार के बिना है, या ऐसे प्राधिकार के आधिक्य में है) या दुर्भावपूर्ण है या बाह्य बातों पर आधारित है ।

3 उच्चतम न्यायालय ने उक्त मत को अतिष्ठित करते हुए[10] और 7 उच्च न्यायालयों के निर्णयों को उलटते हुए (इलाहाबाद, मुंबई, दिल्ली, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, पजाब और राजस्थान) बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया कि[11] संविधान के अंगीकार किए जाने के पश्चात् प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का एकमात्र उद्गम अनुच्छेद 21 है । अतएव यदि अनुच्छेद 21

---

3. *कविता* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1641 (पैरा 6); *कमला* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 814 (पैरा 5) ।

4 *फ्रांसिस* बनाम *दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र*, (1981) क्रिमिनल ला जरनल 306 (पैरा 6-8) एस.सी. ।

5. *भुवन* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए 1974 एस.सी 556 (पैरा 6) ।

6. देखिए सातवीं अनुसूची 163-164 ।

7. अनुच्छेद 22 के अधीन निवारक निरोध की विधि को अनुच्छेद 19 लागू होता है यह उपधारणा अनेक मामलों में की गई है जैसे, *शंभू* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए 1973 एस.सी 1425; *खुदीराम* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 550; *शालिनी* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस.सी 431 (पैरा 4) ।

8. *सुनील बतरा* बनाम *दिल्ली प्रशासन (I)*, ए. 1978 एस.सी. 1675; *किशोर* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 625 (पैरा 10) ।

9. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *प्रभाकर*, ए. 1966 एस.सी. 424 (*426*) ।

10. *मखनसिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी 381, *जयचंद* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 483 ।

11. *अपर जिला मजिस्ट्रेट* बनाम *शुक्ला*, ए. 1976 एस.सी. 1207 (पैरा 65, 127) ।

निलंबित रहता है तो कारावास या निरोध के किसी आदेश पर इस आधार पर प्रहार नहीं किया जा सकता है कि वह विधि के प्राधिकार के बिना है या उसके आधिक्य में है या दुर्भावपूर्ण है या उसके आधार बाहरी हैं या वह विधि सम्मत शासन के सिद्धांत के विपरीत है ।

4. 44वें संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 21 को अनुच्छेद 359 की परिधि के बाहर निकाल दिया गया है इसलिए यह निर्णय[11] अब लागू नहीं होगा ।

कुछ दशाओं में गिरफ्तारी और निरोध से संरक्षण ।

22. (1) किसी व्यक्ति को जो गिरफ्तार किया गया है, ऐसी गिरफ्तारी के कारणों से यथाशीघ्र अवगत कराए बिना अभिरक्षा में निरुद्ध नहीं रखा जाएगा या अपनी रुचि के विधि व्यवसायी से परामर्श करने और प्रतिरक्षा कराने के अधिकार से वंचित नहीं रखा जाएगा ।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को, जो गिरफ्तार किया गया है और अभिरक्षा में निरुद्ध रखा गया है, गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायालय तक यात्रा के लिए आवश्यक समय को छोड़कर ऐसी गिरफ्तारी से चौबीस घंटे की अवधि में निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाएगा और ऐसे किसी व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के प्राधिकार के बिना उक्त अवधि से अधिक अवधि के लिए अभिरक्षा में निरुद्ध नहीं रखा जाएगा ।

(3) खंड (1) और खंड (2) की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को लागू नहीं होगी जो —

(क) तत्समय शत्रु अन्यदेशीय है; या

(ख) निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन गिरफ्तार या निरुद्ध किया गया है ।

[12]*(4) निवारक निरोध का उपबंध करने वाली कोई विधि किसी व्यक्ति का तीन मास से अधिक अवधि के लिए तब तक निरुद्ध किया जाना प्राधिकृत नहीं करेगी जब तक कि —*

(क) ऐसे व्यक्तियों से, जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश हैं या न्यायाधीश रहे हैं या न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए अर्हित हैं, मिलकर बने सलाहकार बोर्ड ने तीन मास की उक्त अवधि की समाप्ति से पहले यह प्रतिवेदन नहीं दिया है कि उसकी राय में ऐसे निरोध के लिए पर्याप्त कारण हैं :

परंतु इस उपखंड की कोई बात किसी व्यक्ति का उस अधिकतम अवधि से अधिक अवधि के लिए निरुद्ध किया जाना प्राधिकृत नहीं करेगी जो खंड (7) के उपखंड (ख) के अधीन संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा विहित की गई है; या

(ख) ऐसे व्यक्ति को खंड (7) के उपखंड (क) और उपखंड (ख) के अधीन संसद् द्वारा बनाई गई विधि के उपबंधों के अनुसार निरुद्ध नहीं किया जाता है ।

(5) निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन किए गए आदेश के अनुसरण में जब किसी व्यक्ति को निरुद्ध किया जाता है तब आदेश करने वाला प्राधिकारी यथाशक्य शीघ्र उस व्यक्ति को यह संसूचित करेगा कि वह आदेश किन आधारों पर किया गया है और उस आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने के लिए उसे शीघ्रातिशीघ्र अवसर देगा ।

(6) खंड (5) की किसी बात से ऐसा आदेश, जो उस खंड में निर्दिष्ट है, करने वाले प्राधिकारी के लिए ऐसे तथ्यों को प्रकट करना आवश्यक नहीं होगा जिन्हें प्रकट करना ऐसा प्राधिकारी लोकहित के विरुद्ध समझता है ।

(7) संसद् विधि द्वारा विहित कर सकेगी कि —

---

12. खंड (4), संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था; तथापि, धारा 3 अभी तक प्रवृत्त नहीं हुई है [देखिए उपाबंध 1] ।

[13](क) किन परिस्थितियों के अधीन और किस वर्ग या वर्गों के मामलों में किसी व्यक्ति को निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन तीन मास से अधिक अवधि के लिए खंड (4) के उपखंड (क) के उपबंधों के अनुसार सलाहकार बोर्ड की राय प्राप्त किए बिना निरुद्ध किया जा सकेगा;

[13](ख) किसी वर्ग या वर्गों के मामलों में कितनी अधिकतम अवधि के लिए किसी व्यक्ति को निवारक निरोध का उपबंध करने वाली किसी विधि के अधीन निरुद्ध किया जा सकेगा; और

(ग) खंड (4) के उपखंड (क) के अधीन की जाने वाली जांच में सलाहकार बोर्ड द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया क्या होगी ।

अनुच्छेद 21-22 — 1. निवारक निरोध से संबंधित सभी सांविधानिक रक्षोपाय अनुच्छेद 22 में नहीं हैं । जिन बातों के बारे में अनुच्छेद 22 में उपबंध है वे अनुच्छेद 21 से नियंत्रित नहीं होतीं । जहां प्रक्रिया के बारे में अनुच्छेद 22 में अभिव्यक्त रूप से या अनिवार्य विवक्षा द्वारा कोई व्यवस्था नहीं की गई है उन स्थलो पर अनुच्छेद 21 लागू होगा । परिणामस्वरूप निवारक निरोध के मामले में जिस विधि के अधीन निरुद्ध किया गया है उसमें विहित प्रक्रिया का कठोरता से अनुसरण किया जाना चाहिए । यदि ऐसा नहीं किया जाता तो निरुद्ध व्यक्ति न्यायालय द्वारा मुक्त कर दिया जाएगा ।[14]

2. यह ध्यान में रखते हुए कि निरोध प्रभावी हो निवारक निरोध मे रखे गए व्यक्ति पर न्यूनतम निर्बन्धन लगाए जाने चाहिए ।[15]

3. अनुच्छेद 22(5) में अपेक्षित प्रक्रिया का इस प्रकार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जिससे वह "युक्तियुक्त, ऋजु और न्यायोचित" बने । वैसी ही जैसा कि अनुच्छेद 21 में है ।[15]

खंड (1)-(2) का प्रविषय — ये खंड वह प्रक्रिया अधिकथित करते हैं जिसका किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करते समय अनुसरण किया जाएगा ।[14] इस प्रक्रिया में चार बातें सुनिश्चित की जाती हैं[14] — (क) गिरफ्तारी के आधार की सूचना पाने का अधिकार, (ख) अपनी इच्छानुसार विधि व्यवसायी से परामर्श करने और प्रतिरक्षा कराने का अधिकार, (ग) 24 घंटों के भीतर मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किए जाने का अधिकार, (घ) मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना 24 घंटे से अधिक के लिए निरुद्ध न किए जाने का अधिकार ।[14] ये अपेक्षाएं आज्ञापक हैं और इनका अनुपालन नहीं किए जाने पर बंदी प्रत्यक्षीकरण याचिका द्वारा मुक्त किए जाने का अधिकार उत्पन्न हो जाता है ।[14]

खंड (1) : गिरफ्तारी के विरुद्ध रक्षोपाय — इस अनुच्छेद के खंड (1) और (2) की भाषा से यह प्रतीत होता है कि यह अनुच्छेद ऐसी गिरफ्तारी के विरुद्ध संरक्षण देता है जो इस अभिकथन या अभियोग के आधार पर कि गिरफ्तार व्यक्ति ने कोई आपराधिक या अपराध-कल्प कार्य अथवा लोकहित या राज्यहित के प्रतिकूल कोई गतिविधि की है, किसी न्यायालय द्वारा निकाले गए वारंट के अधीन की गई गिरफ्तारी से भिन्न है ।[16]

'गिरफ्तार और निरुद्ध' का निर्वचन यह किया गया है कि वह आपराधिक या आपराधिक-कल्प कार्य के लिए न्यायिकेतर अधिकारी द्वारा गिरफ्तारी या निरोध है । सिविल

---

13. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा उपधारा (7) के उपखंड (क) का लोप किया गया और उपखंड (ख) और (ग) में पारिणामिक परिवर्तन किए गए हैं । इस सशोधन को अभी तक प्रवृत्त नहीं किया गया है । उच्चतम न्यायालय ने इसके प्रवृत्त नहीं किए जाने की आलोचना की है । देखिए *राय* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 710 (पैरा 52, 113) ।

14. *गोपालन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी आर. 88 ।

15. *कमला* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 814 (पैरा 5, 7); *सम्पत* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1153; *फ्रांसिस* बनाम *संघ राज्यक्षेत्र*, ए 1981 एस.सी. 146 (पैरा 3) ।

16. मधु लिमये का मामला, ए. 1969 एस.सी. 1014 (*1019*) ।

विधि के किसी उपबंध को क्रियान्वित करने के प्रयोजन के लिए की गई गिरफ्तारी इसकी परिधि के बाहर है ।[17] यह माना गया है कि निम्नलिखित इस अनुच्छेद के अधीन 'गिरफ्तारी और निरोध' नहीं है, अर्थात् :

(i) मद्रास रेवेन्यू रिकवरी आफ एरियर्स आफ इंकमटैक्स अधिनियम की धारा 48 के अधीन सिविल कारागार में निरोध के लिए गिरफ्तारी ।[17]

(ii) विदेशी को वापस भेजना ।[18]

विधानसभा के अध्यक्ष के आदेश के अधीन अवमान के लिए गिरफ्तारी को इस खंड का संरक्षण प्राप्त होगा ।[19] खंड (1)-(2) न्यायालय के वारंट के अधीन गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को लागू नहीं होता है । कारण यह है कि न्यायालय के वारंट के अधीन गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तार करने के पहले गिरफ्तारी के आधार बता दिए जाते हैं ।[20]

खंड (3) से खंड (1)-(2) का अपवर्जन किया गया है अतएव निवारक निरोध के अधीन गिरफ्तार व्यक्ति खंड (1)-(2) के अधीन अधिकारों का हकदार नहीं है ।[21]

आधारों की सूचना पाने का अधिकार — 1. इस रक्षोपाय का उद्देश्य यह है कि गिरफ्तारी के आधार जानने के बाद गिरफ्तार व्यक्ति समुचित न्यायालय में जमानत के लिए आवेदन कर सकेगा या बंदी प्रत्यक्षीकरण के लिए न्यायालय में समावेदन कर सकेगा । सूचना पाने पर वह विचारण में अपने प्रतिवाद की तैयारी भी कर सकेगा । यह आवश्यक नहीं है कि प्राधिकारी अपराध का पूरा ब्यौरा दें फिर भी इतनी पर्याप्त विशिष्टियां दी जानी चाहिए जिससे गिरफ्तार व्यक्ति यह जान सके कि उसे क्यों गिरफ्तार किया गया है ।[16] उनके साथ ही उन दस्तावेजों की प्रतियां भी दी जानी चाहिए जो निरोध के आधार की रचना करती हैं ।[22] किंतु जिन दस्तावेजों का अवलंब नहीं लिया गया है उन्हें देना आवश्यक नहीं है ।[23]

2. आधार में वे सभी 'आधारभूत तथ्य और सामग्री' सम्मिलित हैं जिन पर प्राधिकारी का समाधान आधारित है । यह 'और विशिष्टियों' से भिन्न है,[24] जैसे, आधारिक तथ्यों का ब्यौरा ।[24]

विधि व्यवसायी से परामर्श का अधिकार — 1. गिरफ्तार व्यक्ति को गिरफ्तार होते ही अपनी इच्छानुसार विधिक सलाहकार से परामर्श करने का अधिकार है । उसे अपने अधिवक्ता से ठीक से बातचीत करने का अधिकार है । बातचीत इस प्रकार हो कि पुलिस वाले सुन न सकें चाहे वे उपस्थित रहें । यह अधिकार उन सभी व्यक्तियों को है जो गिरफ्तार किए गए हैं चाहे गिरफ्तारी असाधारण विधि के अधीन हो या विशेष विधि के ।

2. गिरफ्तार व्यक्ति को अपनी इच्छानुसार अधिवक्ता से परामर्श करने और प्रतिरक्षा कराने का अधिकार विचारण के पूर्व के चरण में भी है और न्यायालय या किसी अधिकरण के समक्ष किसी अपराध के विचारण के समय भी । फिर अपराध ऐसा हो जिसका दंड मृत्यु

---

17. *मालाबार कलक्टर* बनाम *हाजी*, (1957) एस.सी.आर. 970; *पुरुषोत्तम* बनाम *देसाई*, (1955) 2 एस.सी.आर. 887 ।

18. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *अब्दुल समद*, ए. 1962 एस.सी. 1506 ।

19. *गणपति* बनाम *नफीसुल*, ए. 1954 एस.सी. 636 । अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश, ए. 1965 एस.सी. 745 (766) ।

20. *पंजाब राज्य* बनाम *अजायब सिंह*, (1953) एस.सी.आर. 254 ।

21. *हंस मुलर* बनाम *अधीक्षक*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1284 ।

22. *रामचन्द्र* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 765; *मंगलभाई* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 510 ।

23. *उम्मू* बनाम *गुजराल*, ए. 1981 एस.सी. 1191 ।

24. *हंसमुख* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 28 (पैरा 17); *शालिनी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 431 (पैरा 9) ।

हो, कारावास हो या कुछ और ।[25] प्रतिरक्षा के अधिकार में गिरफ्तारी के विरुद्ध प्रतिरक्षा ही नहीं बल्कि आरोप के विरुद्ध प्रतिरक्षा भी है ।[25] यदि जिस व्यक्ति का विचारण किया जा रहा है उसे जमानत पर छोड़ दिया जाता है तो इससे उसका उपर्युक्त अधिकार समाप्त नहीं होता ।[25]

3. गिरफ्तारी के पश्चात् विचारण में इस अधिकार का होना इस पर निर्भर करेगा कि विचारण किस बात के लिए किया जा रहा है । यदि अपराध के लिए है तो अधिकार बना रहेगा, अन्यथा नहीं । जैसे दोषपूर्ण अतिचार के लिए नुकसानी की कार्यवाही में उसे यह अधिकार नहीं होगा ।

विधि व्यवसायी द्वारा प्रतिरक्षा का अधिकार — 1. पहले यह मत था कि इस अनुच्छेद में यह अधिकार नहीं है कि राज्य द्वारा वकील दिया जाएगा । यह अधिकार है कि वकील करने का अवसर दिया जाएगा ।[26] अतएव यदि कोई व्यक्ति समुचित प्राधिकारी से अधिवक्ता द्वारा उपस्थित होने के लिए अनुमति के लिए अनुरोध नहीं करता है और अनुरोध नामंजूर नहीं होता है तो वह यह नहीं कह सकता कि उसके अधिकार का अतिलंघन हुआ है । उसकी दोषसिद्धि भी समाप्त नहीं होगी ।[25]

2. संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अनुच्छेद 39क अंतःस्थापित करके राज्य को यह निदेश दिया गया है कि वह निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करे । इसके पश्चात् न्यायालय ने अपना दृष्टिकोण बदल दिया है । *हुसैन आरा*[27] में यह अभिनिर्धारित हुआ कि प्रत्येक ऐसे अभियुक्त को जो अपने खर्चे से वकील नहीं कर सकता है यह अधिकार है कि उसे राज्य द्वारा वकील कर दिया जाए या राज्य के खर्चे पर वकील दिया जाए । अनुच्छेद 39क को क्रियान्वित करने के लिए विधान बनाने की आवश्यकता होगी किंतु उच्चतम न्यायालय का यह कहना था कि विधान के बिना भी यदि यह देखने में आता है कि किसी निर्धन अभियुक्त को अपनी प्रतिरक्षा करने का युक्तियुक्त अवसर नहीं मिला है क्योंकि वह वकील नहीं कर सकता था और राज्य ने उसकी प्रतिरक्षा के लिए वकील करके निःशुल्क विधिक सहायता नहीं दी है तो अभियुक्त की दोषसिद्धि, अनुच्छेद 21 के उल्लंघन के आधार पर, विखंडित की जा सकती है । न्यायालय ने युक्तियुक्तता और ऋजुता की संकल्पना का अनुच्छेद 21 में समावेश किया है ।[27] बाद में यह भी कहा गया है कि अभियुक्त को राज्य के खर्चे पर वकील पाने का एकमात्र अधिकार वही है जो दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 304(1) में है ।[28]

खंड (2) : निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किए जाने का अधिकार — इस खंड में दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 57 में प्रदत्त अधिकार की पुष्टि करके उसे और समृद्ध किया गया है ।[19]

यदि इस खंड की अपेक्षाओं का पालन नहीं किया गया है और 24 घंटे बीत चुके हैं तो गिरफ्तार व्यक्ति इस बात का हकदार होगा कि उसे तुरंत मुक्त कर दिया जाए ।[29]

खंड (3)-(7) : निवारक निरोध और उससे संबंधित सांविधानिक रक्षोपाय — 'निवारक निरोध' से किसी व्यक्ति का बिना विचारण के ऐसी परिस्थितियों में निरोध अभिप्रेत है जिसमें प्राधिकारियों के पास जो साक्ष्य है वह विधिक आरोप के लिए या विधिक सबूत के आधार

---

25. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *शोभाराम*, ए. 1968 एस.सी. 1910 (*1917*) ।
26. *जनार्दन* बनाम *हैदराबाद राज्य*, (1951) एस.सी.आर. 344 ।
27. *हुसैनआरा* बनाम *गृह सचिव*, ए. 1979 एस.सी. 1377 (पैरा 6); *खत्री* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 928 (पैरा 4-5) ।
28. *रंजन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1983 एस.सी. 624 (पैरा 13) ।
29. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *अब्दुल समद*, ए. 1962 एस.सी. 1506 ।

पर निरुद्ध की दोषसिद्धि के लिए पर्याप्त नहीं है किंतु उसको निरुद्ध करने के औचित्य के लिए पर्याप्त है । दांडिक निरोध का उद्देश्य होता है किसी व्यक्ति को उसके द्वारा किए गए कार्य का दंड देना । निवारक निरोध का उद्देश्य है उसे ऐसा कार्य करने से निवारित करना जो सूची 1 की प्रविष्टि 3 या सूची 3 की प्रविष्टि 3 में आता है । निवारक निरोध का उद्देश्य किसी व्यक्ति को किसी कार्य को करने से रोकना भी है और किसी विशिष्ट उद्देश्य की प्राप्ति से निवारित करना भी । इसमें न तो कोई आरोप लगाया जाता है, न कोई अपराध साबित किया जाता है । इसका औचित्य संदेह पर आधारित होता है या युक्तियुक्त अधिसंभाव्यता पर, दांडिक दोषसिद्धि नहीं । वह तो विधिक साक्ष्य पर ही आधारित हो सकती है ।[30]

I. संविधान के निर्माताओं ने निवारक निरोध को संविधान में स्थान इसलिए दिया कि वे निवारक निरोध की आवश्यकता को पहचानते थे साथ ही यह भी चाहते थे कि शक्ति के दुरुपयोग को रोकने के लिए कुछ रक्षोपाय किए जाने चाहिए । अनुच्छेद 22 में जितनी भी प्रक्रिया संबंधी अपेक्षाएं हैं वे सभी आज्ञापक हैं । उनमें से एक का भी अनुपालन नहीं हुआ तो निरोध अविधिमान्य हो जाएगा ।

II. 1969 में निवारक निरोध अधिनियम, 1950 व्यपगत हो गया । तब निवारक निरोध की केन्द्रीय विधि दो नए अधिनियमों में समाविष्ट हो गई — (क) आंतरिक सुरक्षा अधिनियम, 1971 और (ख) विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, 1974 । ये दोनों ही स्थायी अधिनियम हैं । संविधान (39वां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा इन दोनों को नवीं अनुसूची में स्थान दिया गया है (मद 19, 104) [अनुच्छेद 32 के साथ पठित] । अतएव उन पर किसी भी मूल अधिकार के उल्लंघन का आक्षेप नहीं लगाया जा सकता । न्यायालय इनके किसी उपबंध को इस आधार पर अविधिमान्य घोषित नही कर सकता कि निरुद्ध व्यक्ति को अपने निरुद्ध किए जाने के आधारों की सूचना पाने का जो अधिकार है उसका उल्लंघन किया गया है [अनुच्छेद 22(5)] या इससे अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता केवल नाम के लिए रह गयी है, जैसा *गोपालन* में हुआ था ।[14]

III. 27-6-1975 को अनुच्छेद 359 के अधीन निकाले गए राष्ट्रपति आदेश से अनुच्छेद 21-22 को पूर्णतया निलंबित कर दिया गया था ।

IV. ऊपर पैरा II में उल्लिखित दोनों अधिनियमों में जो रक्षोपाय है उन्हें भी आपात की घोषणा के प्रवर्तन के दौरान निलंबित कर दिया गया । इसके लिए 1971 के अधिनियम में धारा 16क और 1974 के अधिनियम में धारा 12क अंत:स्थापित की गईं ।[31]

V. जनता शासन में आंतरिक सुरक्षा अधिनियम, 1971 को अगस्त, 1978 में 1978 के अधिनियम 27 से निरसित किया गया किंतु 1974 के अधिनियम को बने रहने दिया गया । अनुच्छेद 22 में दिए गए रक्षोपाय उक्त अधिनियम को, चोरबाजारी निवारण और आवश्यक वस्तु प्रदाय अधिनियम, 1980 को तथा राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980[31-32] को भी लागू होते हैं । ये श्रीमती गांधी की दूसरी सरकार ने अधिनियमित किए थे ।

खंड (5) : अभ्यावेदन का अधिकार — 1 अनुच्छेद 22(5) निरुद्ध को अभ्यावेदन करने का अधिकार देता है, स्वतंत्र अधिकरण से सुनवाई का नहीं ।[14] इसमें यह अधिकार भी सम्मिलित है कि सरकार अभ्यावेदन पर विचार करेगी चाहे वह उसके मामले मे सलाहकार बोर्ड द्वारा पुष्ट किए जाने के पहले किया गया हो या उसके पश्चात् ।[33] यह बाध्यता सरकार

---

30. *अलीजान* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, ए. 1983 एस.सी. 1130 (पैरा 10-11) ।
31. *खातून* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 1077 (पैरा 6) ।
32. *पंजाब राज्य* बनाम *जगदेव*, ए. 1984 एस.सी. 444 (पैरा 8, 16-17) ।
33. *पंकज* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 97 (99) ।

की उस बाध्यता से भिन्न है जिसके अधीन सरकार का यह कर्तव्य है कि वह बोर्ड का गठन करे और अभ्यावेदन बोर्ड को भेजे ।[33] *यह भी सरकार का कर्तव्य है कि वह निरुद्ध के* अभ्यावेदन पर अविलंब विचार करे ।[34] सलाहकार बोर्ड को भेजने के पहले और यदि बोर्ड की रिपोर्ट निरुद्ध के विरुद्ध है[35] तो उसके आ जाने के बाद भी उस पर विचार होना चाहिए ।[34] अभ्यावेदन पर उदारमन से विचार होना चाहिए केवल खानापूरी नहीं की जानी चाहिए ।[36]

2. जहां निवारक निरोध को प्राधिकृत करने वाली विधि में अनुच्छेद 22(5) में समाविष्ट रक्षोपाय नहीं लिखे गए हैं वहां भी उस अधिनियम को सांविधानिक बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि उन रक्षोपायों को उस अधिनियम का अंग माना जाए ।[37]

3. *मेनका* के निर्णय के बाद से[38] अनुच्छेद 22(5) की अपेक्षाओं का उदार निर्वचन होना चाहिए जिससे कि प्रक्रिया 'उचित, ऋजु और न्यायोचित' हो ।[39] अभ्यावेदन का अवसर प्रभावशील, वास्तविक और सार्थक होना चाहिए ।[39]

4. यदि इस खंड की अपेक्षाओं का कठोरता से पालन नहीं किया जाता है तो निवारक निरोध अविधिमान्य हो जाएगा ।[32, 39] जैसे, यदि आदेश के आधारों का आदेश से कोई संबंध नहीं है या उन परिस्थितियों से कोई संबंध नहीं है जिनमें निवारक निरोध किया जा सकता है[14] या आधार इतने अस्पष्ट हैं कि अभ्यावेदन नहीं किया जा सकता[14] अथवा सरकार उसके अभ्यावेदन पर यथासंभव शीघ्र विचार नहीं करती है[40] या निरोध आदेश की पुष्टि के पहले विचार नहीं करती है ।[41]

यदि याची को निरुद्ध करने का आदेश सुसंगत सामग्री पर आधारित है, असंगत या अयुक्तियुक्त नहीं है[42] या दुर्भावपूर्ण नहीं है[43] तो न्यायालय निरोध करने वाले अधिकारी के निरुद्ध करने की आवश्यकता के समाधान में हस्तक्षेप नहीं करेगा ।

5. निरुद्ध को दो सुभिन्न रक्षोपाय हैं :[41]

(क) यदि उसे दो मास से अधिक के लिए निरुद्ध किया जाना है तो मामले को सलाहकार बोर्ड को भेजकर उसकी राय ली जाएगी ।

(ख) उसे निरुद्ध आदेश के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का अवसर शीघ्रातिशीघ्र दिया जाएगा[44] और निरोधक अधिकारी निरोध की पुष्टि करने के पहले यथासंभव शीघ्र उस अभ्यावेदन पर विचार करेगा ।[41]

दोनों रक्षोपाय अलग-अलग हैं और निरोधक अधिकारी दोनों का ही पालन करेगा ।[41] यदि सलाहकार बोर्ड ने अपने प्रतिवेदन में यह कहा है कि निरोध के लिए पर्याप्त आधार हैं तो भी सरकार उस राय से आबद्ध नहीं होगी और यदि वह चाहे तो अभ्यावेदन पर विचार करके निरोध आदेश की पुष्टि करने से इंकार करके निरुद्ध को मुक्त कर दे ।[41, 45]

---

34. *जयनारायण* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 675 ।

35. *उड़ीसा राज्य* बनाम *मणिलाल*, ए 1976 एस.सी. 457 (पैरा 3) ।

36. *बालचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 297 ।

37. *नरेन्द्र* बनाम *गुजराल*, ए. 1979 एस.सी. 420; *विमल* बनाम *प्रधान*, ए 1979 एस.सी. 1501 (पैरा 3) ।

38. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 ।

39. *कमला* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 814 (पैरा 5) ।

40. *अशोक* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, (1981) क्रिमिनल ला जरनल 439 (एस.सी.) ।

41. *विमल* बनाम *प्रधान*, ए. 1979 एस.सी 1501 (पैरा 3) ।

42. *राजकुमार* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1986 एस.सी. 2173 (पैरा 12) ।

43. *साहिब* बनाम *भारत संघ*, ए. 1966 एस.सी. 340; *दुलाल* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, ए. 1975 एस.सी. 1508; *विजय* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1984 एस.सी. 1334; *विनोद* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, ए. 1986 एस.सी. 2090 (पैरा 7) ।

44. *अब्दुल* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1028 ।

45. *सैरुल* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, (1969) 2 एस.सी.डब्ल्यू.आर. 529 ।

अतएव निरोधक अधिकारी का यह कर्तव्य है कि वह निरुद्ध के अभ्यावेदन पर स्वयं विचार करे और सभी तथ्यों और परिस्थितियों को दृष्टि में रखते हुए अपना निर्णय करे कि आदेश की पुष्टि की जाए या निरुद्ध को छोड़ दिया जाए ।[41]

6. जब निवारक निरोध के आदेश पर इस आधार पर आक्षेप किया जाता है कि वह अनुच्छेद 22(5) का उल्लंघन करता है तब न्यायालय द्वारा अवधारण के लिए यह प्रश्न नहीं होता कि याची पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है या नहीं, प्रश्न तो यह होता है कि उसके सांविधानिक रक्षोपायों का उल्लंघन हुआ है या नहीं । निवारक निरोध, वैयक्तिक स्वतंत्रता का गंभीर उल्लंघन है । शक्ति के प्रयोग के विरुद्ध संविधान ने जो भी थोड़े बहुत रक्षोपाय किए हैं उनकी न्यायालय द्वारा सतर्कता से रक्षा की जानी चाहिए और उन्हें प्रवृत्त किया जाना चाहिए ।[46]

7. निरुद्ध को जो विशिष्टियां दी गई हैं वे पर्याप्त हैं या नहीं, इस प्रश्न का खंड (5) के अधीन न्यायालय निर्णय करता है । इसमें देखा यह जाता है कि वे प्रभावी अभ्यावेदन के लिए पर्याप्त हैं या नहीं ।[47]

8. इस खंड के पूर्व भाग में आधार संसूचित करने की जो अपेक्षा है वह इसलिए है कि निरुद्ध अभ्यावेदन कर सके । अभ्यावेदन के अधिकार की प्रत्याभूति इस खंड के उत्तर भाग में है । इस संदर्भ में संसूचना से अभिप्रेत है निरोध आदेश के आधारभूत तथ्यों और परिस्थितियों की पर्याप्त और प्रभावी जानकारी निरुद्ध को देना ।[48] जब निरुद्ध व्यक्ति को अंग्रेजी भाषा का ज्ञान नहीं है और निरुद्ध को निरोध के आधार पर अंग्रेजी भाषा में दिए गए और देते समय हिंदी भाषा में मौखिक स्पष्टीकरण दिया गया तब न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि यह इस खंड का पर्याप्त अनुपालन नहीं है । यद्यपि अंग्रेजी राजभाषा के रूप में चल रही है तो भी इस संसूचना से निरुद्ध प्रभावी रूप से अभ्यावेदन नहीं कर पाएगा । जब किसी व्यक्ति को अंग्रेजी भाषा का ज्ञान नहीं है तो उसे निरोध के आदेश उस भाषा में लिखकर दिए जाने चाहिए जो वह समझता है ।[48]

9. विशिष्टियां प्रदाय करने की अपेक्षा का खंड (6) में एक अपवाद है । प्राधिकारी ऐसी विशिष्टियां देने से इंकार कर सकते हैं जिन्हें देना लोक हित के विरुद्ध होगा । इसका यह अर्थ नहीं है कि प्राधिकारी उनको छोड़कर सभी तथ्य प्रकट करें जिनको प्रकट करना खंड (6) के अधीन विधारित किया जा सकता है । प्राधिकारी का कर्तव्य है कि वे सभी विशिष्टियां दे जिनके बिना प्रभावशील अभ्यावेदन नहीं हो सकता । इसमें वे तथ्य सम्मिलित होंगे जिनसे प्रभावित होकर प्राधिकारी ने निरोध आदेश दिया है ।[49]

10. निरुद्ध को निरोध के आधार देने में या उससे संबंधित आधारिक दस्तावेज देने में[50] या उसके अभ्यावेदन पर विचार करने में[51] अयुक्तियुक्त या अकारण विलंब होने पर[52] निरोध दूषित हो जाएगा और निरुद्ध मुक्ति पाने का हकदार होगा ।

अस्पष्ट आधार क्या है ? — 'असंगत' आधार ऐसा आधार है जिसका प्राधिकारी के समाधान से कोई संबंध नहीं है । 'अस्पष्ट' आधार ऐसा आधार है जो निरुद्ध व्यक्ति द्वारा प्रभावी अभ्यावेदन किए जाने के लिए पर्याप्त नहीं है ।[53]

---

46. *राम कृष्ण* बनाम *दिल्ली राज्य,* (1953) एस.सी.आर. 708 ।
47. *शिब्बन लाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य,* (1954) एस.सी.आर. 418 ।
48. *हरि किशन* बनाम *महाराष्ट्र राज्य,* ए. 1962 एस.सी. 911 ।
49. *गोलाम* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य,* ए. 1976 एस.सी. 754 ।
50. *रामचन्द्र* बनाम *भारत संघ,* ए. 1980 एस.सी. 765 ।
51. *हरीश* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य,* ए. 1981 एस.सी. 1126 (पैरा 3); *क्यूबिक* बनाम *भारत संघ,* ए. 1990 एस.सी. 605 (पैरा 15); *असलम* बनाम *भारत संघ,* ए. 1989 एस.सी. 1403 (पैरा 11-12) ।
52. *वीरेन्द्र* बनाम *महाराष्ट्र राज्य,* (1981) क्रिमिनल ला जरनल 1283(2) एस.सी. ।
53. *तारापद* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य,* (1951) एस.सी.आर. 212 (*218*) ।

जो आधार बताए गए हैं वे अस्पष्ट हैं या नहीं इस प्रश्न का उत्तर प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर विचार करके अवधारित किया जाएगा ।[53] इसकी कसौटी यह है कि जो आधार दिए गए हैं उनका अवलंब लेकर निरुद्ध अभ्यावेदन कर सकता है या नहीं ।[54]

(अ) ऐसी संसूचना अस्पष्ट है जिसे साधारण व्यक्ति बिना विधिक सहायता के नहीं समझ सकता ।[55] जो व्यक्ति अंग्रेजी नहीं समझ सकता उसे अंग्रेजी में दी गई सूचना अविधिमान्य है ।[48]

(आ) (i) यदि दिए गए आधार पढ़ने पर समझे जा सकते हैं[48] और इतने सुनिश्चित हैं कि उनकी सहायता से निरुद्ध व्यक्ति निरोध के विरुद्ध अभ्यावेदन कर सकता है तो उन्हें अस्पष्ट नहीं कहा जा सकता ।[56]

(ii) जहां आधार के कथन में कोई प्रकट भूल है या शाब्दिक गलती है तो इसे अस्पष्ट नहीं माना जा सकता ।[57] यदि बाद में तुरंत संसूचना निकालकर अस्पष्टता दूर कर दी गई है तो आदेश दोषरहित हो जाएगा ।[58]

(iii) यह तो निश्चित रूप से बताया जा सकता है कि भूतकाल में क्या घटनाएं हुई हैं किंतु भविष्य में किसी व्यक्ति द्वारा कौन सी बातें किए जाने की आशंका है उनकी विशिष्टिया देना संभव नहीं है ।[48] यदि निरुद्ध व्यक्ति के भाषणों का समय, स्थान और उनकी प्रकृति और प्रभाव का कथन किया गया है तो आक्षेपणीय अंश बताना आवश्यक नही है ।[59]

असंगत आधार क्या है ? — निवारक निरोध को प्राधिकृत करने वाली विधि के अधीन निरोध जिन परिस्थितियों में किया जाता है यदि उनसे आधार की कोई संगति नहीं है तो आधार असंगत है ।[60]

जब आधारों में से एक असंगत या अस्पष्ट है — खंड (5) की सांविधानिक अपेक्षा का पालन, निरुद्ध को दिए गए प्रत्येक आधार की बाबत होना चाहिए । खंड (6) के अधीन इसका अपवाद हो सकता है ।[55, 58, 61] यदि समाधान का कोई भी आधार या कारण असंगत है तो निरोध अविधिमान्य होगा चाहे अन्य आधार सुसंगत हों क्योंकि यह पता नहीं लगाया जा सकता कि दूषित कारणों का प्राधिकारी पर कितना प्रभाव पड़ा या यदि केवल एक या दो अच्छे कारण ही होते तो क्या प्राधिकारी निरोध आदेश देता ।[58, 62-63] कोई आधार असंगत या अस्पष्ट है या नहीं इसका निर्णय करने के पहले उन्हें एक साथ पढ़ना चाहिए ।[61]

इस बात पर 'असंगत' और 'अस्पष्ट' आधारों में कोई अंतर नहीं है ।[57, 62] उपर्युक्त नियम वहां लागू नहीं होता जहां नामंजूर किए गए आधार अमहत्वपूर्ण और अनावश्यक हैं जिससे यह युक्तियुक्त रूप से कहा जा सकता है कि उनका निरोधक प्राधिकारी के व्यक्तिगत समाधान पर प्रभाव नहीं पड़ा होगा । जहां पश्चात्वर्ती संसूचना से अस्पष्टता का दोष दूर कर दिया जाता है जिससे शीघ्र अभ्यावेदन करने की अपेक्षा पूरी हो जाती है वहां भी यह नियम लागू नहीं होगा ।[63]

अस्पष्ट आधार बताने का प्रभाव — जब याची को आदेश के साथ दिए गए आधार इतने

---

54 *रामेश्वर* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1968 एस.सी. 1303 ।
55. *रामकृष्ण* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1953) एस.सी.आर. 708 ।
56. *मुंबई राज्य* बनाम *आत्माराम*, (1951) एस.सी.आर 167 (*184*) ।
57. *पूरणलाल* बनाम *भारत संघ*, (1958) एस.सी.आर. 460 ।
58. *द्वारकादास* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, (1956) एस.सी.आर. 948 ।
59. *राम सिंह* बनाम *दिल्ली राज्य*, ए. 1951 एस.सी. 270 ।
60. *गोपालन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 88 (*223*) ।
61. *शामराव* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट, थाणा*, (1952) एस.सी.आर 683 (*695*) ।
62. *पुष्कर* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 852 ।
63. *शिब्बन लाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर 418 ।

अस्पष्ट हैं कि (तकनीकी दोषों को छोड़ दें तो भी) निरुद्ध अभ्यावेदन नहीं कर सकता है तो निरुद्ध व्यक्ति का अभ्यावेदन करने के लिए शीघ्र अवसर पाने के सांविधानिक अधिकार का अतिलंघन हो जाता है [अनुच्छेद 22(5)] और परिणामस्वरूप निरोध आदेश प्रारंभ से ही शून्य हो जाता है ।[56-57]

अतएव यदि दिए गए आधार अस्पष्ट हैं तो निरोध आदेश असफल हो जाएगा । इससे अंतर नहीं पड़ेगा कि निरुद्ध व्यक्ति ने और विशिष्टियां मांगी थीं या नहीं ।[64] किंतु जहां आधार अस्पष्ट नहीं है किंतु विशिष्टियां अपर्याप्त हैं वहां निरुद्ध यह परिवाद नहीं कर सकता कि पर्याप्त विशिष्टि के अभाव में उसे अभ्यावेदन करने का युक्तियुक्त अवसर नहीं मिला है । ऐसा वह तभी कर सकता है जब उसने विशिष्टियों की मांग की हो ।

अनुच्छेद 22 के अधीन प्रक्रिया को अनुच्छेद 19 का लागू होना — *मेनका* के वाद[65] (पृष्ठ 86 पीछे) के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 21 के अधीन प्रक्रिया में ऋजुता की अपेक्षा की जाती है । अनुच्छेद 19 के अधीन इसी ऋजुता की अपेक्षा अनुच्छेद 22(5) के अधीन प्रक्रिया में भी है ।[66]

निरुद्ध के अन्य मूल अधिकार — जैसा दांडिक निरोध में है वैसा ही निवारक निरोध में भी व्यक्ति को उन मूल अधिकारों से वंचित नहीं किया जाता है जो उसे व्यक्ति होने या नागरिक होने के नाते मिले हुए हैं ।[67]

शोषण के विरुद्ध अधिकार

मानव के दुर्व्यापार और बलात्श्रम का प्रतिषेध ।

23. (1) **मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार का अन्य बलात्श्रम प्रतिषिद्ध किया जाता है और इस उपबंध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा ।**

(2) **इस अनुच्छेद की कोई बात राज्य को सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए अनिवार्य सेवा अधिरोपित करने से निवारित नहीं करेगी । ऐसी सेवा अधिरोपित करने में राज्य केवल धर्म, मूलवंश, जाति या वर्ग या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा ।**

'बलात् श्रम' — इसके अन्तर्गत वह सब श्रम आता है जो कोई व्यक्ति, विवशता में करता है, स्वेच्छा से नहीं । इसका महत्व नहीं है कि उसके लिए पारिश्रमिक या अन्य प्रतिफल दिया जाता है या नहीं ।[68] यह भी तात्विक नहीं है कि कोई संविदा की गई है या विवशता आर्थिक कारणों से है या विधिक उपबंधों के कारण है ।[68]

अनुच्छेद 23 द्वारा प्रत्याभूत अधिकार राज्य के विरुद्ध और राज्य के विभागों और अन्य उपकरणों के विरुद्ध प्रवृत्त किया जा सकता है ।[68]

कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध ।

24. **चौदह वर्ष से कम आयु के किसी बालक को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिए नियोजित नहीं किया जाएगा या किसी अन्य परिसंकटमय नियोजन में नहीं लगाया जाएगा ।**

---

64. *भंवरलाल* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 544 ।
65. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 (पैरा 56) ।
66. *शालिनी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 431 (पैरा 4) ।
67. *फ्रांसिस* बनाम *संघ राज्यक्षेत्र*, ए. 1981 एस.सी. 746 (पैरा 4) ।
68. *पीपुल्स यूनियन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 1473 (पैरा 14-15); *संजीत* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1983 एस.सी. 328 (पैरा 4) ।

लागू होना — अनुच्छेद 23 के समान ही यह उपबंध राज्य के विरुद्ध लागू होता है । जब कभी राज्य के लिए नियोजन होता है, चाहे वह प्राइवेट ठेकेदार द्वारा ही क्यों न हो, तब यह अनुच्छेद लागू होगा ।[69]

धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार

अंतःकरण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता ।

25. (1) **लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य तथा इस भाग के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, सभी व्यक्तियों को अंतःकरण की स्वतंत्रता का और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण करने और प्रचार करने का समान हक होगा ।**

(2) **इस अनुच्छेद की कोई बात किसी ऐसी विद्यमान विधि के प्रवर्तन पर प्रभाव नहीं डालेगी या राज्य को कोई ऐसी विधि बनाने से निवारित नहीं करेगी जो —**

(क) धार्मिक आचरण से संबद्ध किसी आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक या अन्य लौकिक क्रियाकलाप का विनियमन या निर्बन्धन करती है;

(ख) सामाजिक कल्याण और सुधार के लिए या सार्वजनिक प्रकार की हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं को हिंदुओं के सभी वर्गों और अनुभागों के लिए खोलने का उपबंध करती है ।

स्पष्टीकरण 1 — **कृपाण धारण करना और लेकर चलना सिख धर्म के मानने का अंग समझा जाएगा ।**

स्पष्टीकरण 2 — **खंड (2) के उपखंड (ख) में हिंदुओं के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उसके अंतर्गत सिख, जैन या बौद्ध धर्म के मानने वाले व्यक्तियों के प्रति निर्देश है और हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं के प्रति निर्देश का अर्थ तदनुसार लगाया जाएगा ।**

अनुच्छेद 25 : **अंतःकरण और धर्म की स्वतंत्रता** — इस अनुच्छेद में जो निर्बन्धन लगाए गए हैं उनके अधीन रहते हुए, हमारे संविधान के अधीन प्रत्येक व्यक्ति को यह मूल अधिकार है कि वह अपने अंतःकरण के विचार के अनुसार धार्मिक विश्वास रखे और उन धार्मिक आस्थाओं और विश्वासों को ऐसे आचारों के द्वारा प्रकट करे जिन्हें धर्म की स्वीकृति है तथा अन्य व्यक्तियों के ज्ञानवर्द्धन के लिए अपने धार्मिक विचारों का प्रचार करे ।[1]

खंड (1) : 'लोक व्यवस्था, नैतिकता या स्वास्थ्य के अधीन रहते हुए' — धार्मिक स्वतंत्रता, लोक हित के अध्यधीन है । अन्य किसी वर्ग की भावनाओं का जानबूझकर अनादर करने की अनुमति नहीं दी गई है ।[2] ये शब्द हानिकारक रूढ़ियों को प्रतिषिद्ध करने की सक्षम विधान मंडल की शक्ति को प्रभावित नहीं करते हैं । उदाहरण के लिए, धर्म के नाम पर मनुष्य की बलि देने पर रोक लगाई जा सकती है ।[3]

'इस भाग के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए' — खंड (1) द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता इस अनुच्छेद के खंड (ख) द्वारा राज्य को प्रदत्त शक्ति के अधीन है ।[4] इस अनुच्छेद द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता भाग 3 के अन्य उपबंधों के अधीन है इसलिए अनुच्छेद 31(2) के अधीन राज्य के सर्वोपरि अधिकार से इस अनुच्छेद ने धार्मिक संपत्ति को कोई छूट नहीं दी है ।[5] धार्मिक संपत्ति अनुच्छेद 19(2)-(6) के अधीन सामूहिक हित के लिए लगाए गए निर्बन्धनों

---

69. *श्रमिक* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1984 एस.सी. 177 (पैरा 6-7) ।
1. *रतिलाल* बनाम *मुंबई राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1055 ।
2. तुलना कीजिए, *रामजी लाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 620 ।
3. *सैफुद्दीन* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 853 (*863*) ।
4. *वेंकटरमन* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 255 (*267*) ।
5. *सूर्यपाल सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 1056 (*1090*) ।

के और अनुच्छेद 19(1) के विभिन्न उपखंडों द्वारा अन्य नागरिकों को प्रत्याभूत अधिकारों के अधीन रहेगी ।[6]

सभी व्यक्ति — इस अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त धार्मिक स्वतंत्रता भारत के नागरिकों तक ही सीमित नहीं है इसका विस्तार सभी व्यक्तियों पर है, विदेशियों पर भी[7] और व्यक्तिशः या संस्थाओं के माध्यम से अपने अधिकार का प्रयोग करने वाले व्यष्टियों पर भी ।[7] अतएव किसी धार्मिक संस्था का प्रमुख इस अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त अधिकार के अतिलंघन का परिवाद कर सकता है ।[7] यदि मठाधिपति के विरुद्ध दुर्विनियोजन आदि के आरोपों के विरुद्ध जांच के लंबित रहने के दौरान मठ के दैनंदिन कार्य के लिए कोई प्रशासक नियुक्त किया जाता है तो इससे मठाधिपति के अधिकार का अतिलंघन नहीं होता ।[8]

'मानना और आचरण करना' — यदि आस्था को निर्बाध रूप से शब्द या कार्य द्वारा अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता न हो तो अंतःकरण की स्वतंत्रता अर्थहीन हो जाएगी । अंतःकरण के विषय राज्य के संपर्क में तभी आते हैं जब वे अभिव्यक्ति बन जाते हैं । मानने की स्वतंत्रता का अर्थ है कि आस्थावान व्यक्ति अपनी निष्ठा सार्वजनिक रूप से प्रकट कर सकता है । आचरण की स्वतंत्रता का अर्थ है उसे व्यक्तिगत और सार्वजनिक अर्चना के रूप में प्रकट करना ।[7]

'प्रचार करना' — अपने धर्म का प्रचार करने का अर्थ है कि अपनी आस्था दूसरे व्यक्ति को प्रकट करना या अपने धर्म के सिद्धांत प्रकाशित करना ।[9] किंतु इसमें दूसरे व्यक्ति को अपने धर्म में धर्मान्तरित करने का अधिकार नहीं है[9] क्योंकि दूसरे व्यक्ति को भी अंतःकरण की स्वतंत्रता का समान हक है । हां यदि दूसरा व्यक्ति चाहे तो अपनी अंतरात्मा के अनुसार स्वेच्छा से कोई अन्य धर्म स्वीकार कर सकता है । परंतु यदि वह स्वेच्छा से ऐसा नहीं करता है तो किसी भी व्यक्ति को उसे अन्य धर्म में लाने का कोई मूल अधिकार नहीं है ।

'धर्म' — अनुच्छेद 25 और 26 में केवल आस्था या विश्वास के विषयों पर ही आचरण करने या उनका प्रचार करने की स्वतंत्रता नहीं है बल्कि वे सभी धार्मिक कृत्य और संस्कार करने की स्वतंत्रता है जिन्हें किसी धर्म के अनुयायी धर्म का अंग मानते हैं ।[7] धर्म आस्था का विषय है । ईश्वर के अस्तित्व में विश्वास करना भी धर्म में आवश्यक नहीं है । भारत के विख्यात बौद्ध और जैन धर्म ईश्वरवादी नहीं हैं । प्रत्येक धर्म का आधार कुछ विश्वास और सिद्धांत होते हैं जिनके बारे में उस धर्म के अनुयायी यह मानते हैं कि इनसे आध्यात्मिक उत्कर्ष होता है । किंतु यह धारणा करना उचित नहीं है कि धर्म भी विश्वास मात्र ही है ।[7] धार्मिक आचार या धार्मिक विश्वास के अनुसरण में किए गए कृत्य धर्म के अंग हैं । इसी प्रकार विशिष्ट सिद्धांतों पर आस्था या विश्वास भी धर्म के भाग हैं ।[7]

धर्म का सारवान भाग क्या है यह प्राथमिक रूप से धर्म के सिद्धांतों से ही ज्ञात किया जाता है ।[7] इस प्रयोजन के लिए न्यायालय उनका विश्लेषण कर सकता है ।[10] उदाहरण, —

(क) इस्लाम में गाय की बलि देना अनिवार्य कर्तव्य के रूप में प्रतिपादित नहीं किया गया है ।[11]
(ख) गुरुद्वारे की संपत्ति के प्रशासन के लिए समिति के सदस्यों का निर्वाचन करना केवल सिक्खों का कार्य

---

6. *नरेन्द्र बनाम गुजरात राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2098 (पैरा 25) ।
7. *एच.आर.ई. आयुक्त बनाम लक्ष्मीन्द्र*, (1954) एस.सी.आर. 1005 ।
8. *दिग्यादर्शन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 181 (*188*) ।
9. *स्टैनिस्लास बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 908 ।
10. *रामानुज बनाम तमिलनाडु राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 1586 ।
11. *कुरैशी बनाम बिहार राज्य*, (1959) एस.सी.आर. 629 ।

नहीं हो सकता ।[12] *(ग) किसी न्यास के रचयिता की इच्छाओं के अनुसार कार्य करने के लिए न्यासी को निर्देश देने के लिए या न्यास के बजट को उपांतरित करने के लिए धार्मिक न्यास बोर्ड को शक्ति दी गई थी । यह शक्ति संपृक्त मठ या मंदिर के धार्मिक आचारों के सम्यक् रूप से सपन्न करने की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं है ।*[13]

ऐसी सोसाइटी या संगठन (जैसे अरविंद सोसाइटी) जिसका उद्देश्य किसी दर्शन का प्रचार करना है अनुच्छेद 25-26 का संरक्षण नहीं ले सकता ।[14]

खंड (2)(क) : राज्य विनियम का प्रविषय — खंड (2) के उपखंड (क) में धार्मिक आचारों को विनियमित करने का प्रयत्न नहीं किया गया है । इन आचारों को हस्तक्षेप से तब तक संरक्षण दिया जाता है जब तक कि वे लोक स्वास्थ्य या नैतिकता के विरुद्ध न हों । जो क्रियाकलाप धार्मिक आचार से संबद्ध तो हैं किंतु वास्तव में आर्थिक, सामाजिक या राजनैतिक हैं, उनका विनियमन किया जा सकता है ।[1] इस उपखंड को लागू करने के लिए यह आवश्यक है कि धार्मिक आचारों का वर्गीकरण किया जाए — वे जो सारवान रूप से धार्मिक हैं और वे जो इस प्रकार के नहीं हैं ।[15] अनुच्छेद 26(ख) का संरक्षण उन्हीं आचारों को मिलता है जिन्हें उस धर्म में अभिन्न और आवश्यक अंग माना जाता है ।[16] कोई धार्मिक आचार धर्म का अभिन्न अंग है या नहीं यह प्रश्न न्यायालय द्वारा वस्तुनिष्ठ रूप से अवधारित किया जाएगा । उस धार्मिक संप्रदाय का मत अंतिम नहीं है ।[16]

न्यायालय के अंतिम निर्णय के अधीन रहते हुए, प्रत्येक संप्रदाय को यह तय करने की पूरी छूट है कि कौन से संस्कार और उत्सव उस धर्म की मान्यताओं के अनुसार आवश्यक हैं । विधायिका और कार्यपालिका इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती ।[10]

खंड (2)(ख) : सामाजिक सुधार — 'सामाजिक सुधार' से अभिप्रेत है ऐसे व्यवहार या मान्यताओं को मिटाना जो देश की प्रगति में बाधा पहुंचाते हैं और धर्म के अभिन्न अंग नहीं हैं । राज्य हिंदुओं में द्विविवाह का प्रतिषेध कर सकता है क्योंकि यदि पहली पत्नी से पुत्रप्राप्ति न हो तो पुत्र पाने के लिए दूसरा विवाह करना हिंदू धर्म की अनिवार्य मान्यता नहीं है । दत्तक पुत्र लेकर भी प्रयोजन सिद्ध हो सकता है । "सती" या "देवदासी" जैसी कुप्रथाओं को रोकने का औचित्य भी इसी खंड में है ।[15]

उच्चतम न्यायालय ने बहुमत से यह अभिनिर्धारित किया है कि केवल धार्मिक आधार पर जाति से जो निष्कासन किया जाता है उस पर प्रतिबंध लगाने से सामाजिक सुधार या कल्याण नहीं होता । निष्कासन का अधिकार अनुच्छेद 26(ख) के अधीन धार्मिक संप्रदाय का अधिकार है । जहां धार्मिकेतर आधार पर, जैसे किसी अभद्र सामाजिक नियम या रीति के भंग के आधार पर[15] या देशीय विधि के अधीन दंडनीय किसी अपराध के लिए, निष्कासन का विधि द्वारा प्रतिषेध किया जाता है तो ऐसी विधि सांविधानिक है ।[15]

'हिंदू धार्मिक संस्थाओं का सबके लिए खुला होना' — इस खंड द्वारा प्रदत्त यह अधिकार आत्यंतिक नहीं है । हिंदू समाज के प्रत्येक सदस्य को सार्वजनिक मंदिर में पूजा करने के लिए प्रवेश करने का अधिकार है । इसका यह अर्थ नहीं है कि मंदिर दिन-रात खुला रहे या प्रत्येक हिंदू को वे सब सेवाएं करने दी जाएं जो मंदिर की अर्चना विधि के अनुसार केवल विशेष दीक्षित लोग ही कर सकते हैं ।[17] अनुच्छेद 25(2)(ख) को अनुच्छेद 26(ख) के साथ

12. *स्वरूप बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 860 (*866*) ।
13. *मोतीदास बनाम साही*, ए. 1959 एस.सी. 942 (949) ।
14. *मित्तल बनाम भारत संघ*, ए. 1983 एस.सी. 1 (पैरा 119, 122, 123) ।
15. *सैफुद्दीन बनाम मुंबई राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 853 (*864*) ।
16. *दरगाह समिति बनाम हुसैन*, ए. 1961 एस.सी. 1402 (*1415*) ।
17. *यज्ञपुरुषदास जी बनाम मूलदास*, ए. 1966 एस.सी. 1119 (*1127*) ।

पढ़ा जाना चाहिए और इस प्रकार निर्वचन होना चाहिए जिससे अनुच्छेद 26(ख) निरर्थक न हो जाए ।[18]

यह खंड सार्वजनिक संस्थाओं को ही लागू होता है । जैसा कि अनुच्छेद 26 में निर्देश है, हिंदुओं के विशेष संप्रदाय के लाभ के लिए बनाए गए मंदिर भी इसमें आते हैं । अनुच्छेद 26(ख) के अधीन किसी हिंदू संप्रदाय के न्यासियों को यह अधिकार है कि वे अपने मंदिर की संस्कार विधि के अनुसार अन्य संप्रदाय के लोगों को अपवर्जित कर दें किंतु राज्य इस खंड के अधीन विधि अधिनियमित करके उस अधिकार का अध्यारोहण कर सकता है ।[18]

स्पष्टीकरण 2 — खंड (2) के उपखंड (ख) में हिंदुओं के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उसके अंतर्गत सिख, जैन या बौद्ध धर्म के मानने वाले व्यक्तियों के प्रति निर्देश है और हिंदुओं की धार्मिक संस्थाओं के प्रति निर्देश का अर्थ तदनुसार लगाया जाएगा ।[19]

धार्मिक कार्यों के प्रबंध की स्वतंत्रता ।

26. **लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य के अधीन रहते हुए, प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय या उसके किसी अनुभाग को —**

(क) धार्मिक और पूर्त प्रयोजनों के लिए संस्थाओं की स्थापना और पोषण का,

(ख) अपने धर्म विषयक कार्यों का प्रबंध करने का,

(ग) जंगम और स्थावर संपत्ति के अर्जन और स्वामित्व का, और

(घ) ऐसी संपत्ति का विधि के अनुसार प्रशासन करने का,

अधिकार होगा ।

अनुच्छेद 25-26 — अनुच्छेद 25 का विस्तार सभी व्यक्तियों पर है । किंतु अनुच्छेद 26 केवल धार्मिक संप्रदायों को ही अपनी परिधि में लेता है । इसलिए इस तथ्य में कोई विचित्रता नहीं है कि अनुच्छेद 25-26 दोनों के अधिकार "लोक व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य" के अधीन है, किंतु अनुच्छेद 25 भाग 3 के अन्य उपबंधों के भी अधीन है । अनुच्छेद 26 भाग 3 के अधीन नहीं है ।[20]

अनुच्छेद 26 : **धार्मिक संप्रदायों के अधिकार** — संप्रदाय से साधारणतः अभिप्रेत है व्यक्तियों का एक समूह जिसे एक नाम से वर्गीकृत किया जाता है, कोई धार्मिक पंथ या निकाय जिसकी समान आस्था और संगठन हो और जिसे एक सुभिन्न नाम से जाना जाता हो ।[21] इस अनुच्छेद में न केवल धार्मिक संप्रदाय का ध्यान रखा गया है बल्कि उसके अनुभाग का भी । अतएव अनुच्छेद 26 के अर्थ में मठ भी धार्मिक संप्रदाय होगा ।[21] इसी प्रकार आनन्द मार्गी[22] भी संप्रदाय हैं किंतु अरविंद सोसाइटी नहीं है ।[23] इस अनुच्छेद से धार्मिक संप्रदाय की संपत्ति का अर्जन करने के राज्य के अधिकार पर प्रभाव नहीं पड़ता ।[24] अर्थात् राज्य सरकार उनकी संपत्ति का अर्जन कर सकती है ।

जब किसी धार्मिक पंथ को धार्मिक संप्रदाय मान लिया जाता है (जैसे शैव) तो वह पृथक् धर्म होने का दावा नहीं कर सकता ।[22]

---

18. *वेंकटरमन* बनाम *मैसूर राज्य,* (1958) एस.सी.आर. 895; ए 1958 एस.सी. 255 ।
19. *पंजाबराव* बनाम *मेशराम,* ए. 1965 एस.सी. 1179 (*1184*) ।
20. *नरेन्द्र* बनाम *गुजरात राज्य,* ए. 1974 एस.सी 2098 ।
21. *एच.आर.ई. आयुक्त* बनाम *लक्ष्मीन्द्र,* (1954) एस.सी.आर 1005; *मित्तल* बनाम *भारत संघ,* ए. 1983 एस.सी. 1 (*20-21*) ।
22. *जगदीश्वरानंद* बनाम *पुलिस आयुक्त,* ए. 1984 एस.सी. 51 (पैरा 8-9) ।
23. *मित्तल* बनाम *भारत संघ,* ए. 1983 एस.सी. 1 (पैरा 123-25) ।
24. *खाजा मियां एस्टेट्स* बनाम *मद्रास राज्य,* ए. 1971 एस.सी 161 (*165*) ।

खंड (क) : धार्मिक संस्थाओं की स्थापना और पोषण का अधिकार — 'स्थापना' और 'पोषण' शब्दों को मिलाकर पढ़ा जाना चाहिए । पोषण के अधिकार में उस संस्था का प्रशासन चलाने का अधिकार भी सम्मिलित है । किंतु यह अधिकार तभी उत्पन्न होगा जब किसी धार्मिक संप्रदाय ने किसी संस्था की स्थापना की हो या उसे जन्म दिया हो ।[25]

खंड (ख) : अपने धर्म विषयक कार्यों का प्रबंध करने का अधिकार — इस खंड में प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय को धर्म से संबंधित विषयों का प्रबंध करने के अधिकार की प्रत्याभूति दी गई है । इन मामलों मे राज्य तभी हस्तक्षेप कर सकेगा जब संप्रदाय अपने अधिकार का इस प्रकार उपयोग करता है कि लोक व्यवस्था, नैतिकता या स्वास्थ्य में हस्तक्षेप होता है । अनुच्छेद 26(ख) के अधीन अधिकार पर दूसरी परिसीमा यह है कि वह अनुच्छेद 17,[15] 25(2)(ख) के अधीन है, अर्थात् सभी हिंदुओं के सार्वजनिक मंदिरों में प्रवेश का अधिकार ।[17-18] इनके अतिरिक्त संविधान ने और कोई मर्यादाएं नहीं लगाईं । अतः अनुच्छेद 26(ख) के अधीन किसी धार्मिक संप्रदाय का धार्मिक आधार पर किसी सदस्य को बहिष्कृत करने के अधिकार को इस आधार पर नहीं छीना जा सकता या निर्बंधित नहीं किया जा सकता कि उससे ऐसे सदस्य के सिविल अधिकारों पर प्रभाव पड़ेगा ।[18]

खंड (घ) के अधीन संपत्ति के प्रशासन के अधिकार को विधि द्वारा विनियमित किया जा सकता है । किंतु खंड (ख) के अधीन धार्मिक विषयक कार्य के प्रबंध करने के अधिकार को विधान मंडल द्वारा लोक व्यवस्था, नैतिकता या स्वास्थ्य के आधार पर न्यास के प्रयोजनों को प्रवृत्त करने के लिए ही विनियमित किया जा सकता है और किसी कारण नहीं ।[26]

प्रबंध के अधिकार में न्यास संपत्ति या उसकी आय का धर्म के लिए और धार्मिक प्रयोजनों के लिए, संस्थापक द्वारा बताए गए उद्देश्यों के लिए या किसी विशिष्ट संस्था में प्रथा के अनुसार चले आए उद्देश्यों के लिए खर्च करने का अधिकार है । न्यास संपत्ति या निधि को किसी अन्य प्रयोजन के लिए व्यय करना इस खंड द्वारा धार्मिक संस्था को प्रत्याभूत अधिकार का अवांछनीय उल्लंघन होगा, चाहे संस्थापक के मूल उद्देश्य ऐसा करके भी पूरे किए जा सकते हैं ।[27]

जहां कोई विधि न्यास के प्रयोजनों को क्रियान्वित करने के लिए और न्यासी द्वारा कुप्रबंध तथा अपव्यय रोकने के लिए है वहां उस विधि से खंड (ख) का उल्लंघन नहीं होता ।[26]

'धर्म विषयक' — इस संदर्भ में धर्म का अर्थ केवल धार्मिक विश्वास नहीं है । उसमें वे आचार भी सम्मिलित हैं जो उस संप्रदाय द्वारा अपने धर्म के भाग माने जाते हैं[12, 26-28] (देखिए पृष्ठ 95) और इसमें खान-पान और वेशभूषा भी आ जाते हैं ।[29] प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय या संगठन को इस बात की पूरी छूट है कि वह यह निश्चित करे कि कौन से संस्कार और समारोह उसके धर्म के तत्वों के अनुसार आवश्यक हैं ।[12] किंतु न्यायालय को यह अवधारण करने का अधिकार है कि कोई विशेष संस्कार या आचार किसी विशिष्ट धर्म के तत्वों के अनुसार आवश्यक समझा जाता है या नहीं ।[22, 26-30]

निम्नलिखित के बारे में यह अभिनिर्धारित हुआ है कि वे सुसंगत धर्म में आवश्यक नहीं समझे जाते हैं :

(i) मुस्लिम धर्म में गाय की कुरबानी ।[26]

---

25. *अजीज बनाम भारत संघ*, ए. 1968 एस.सी. 662 (*674*) ।
26. *मोतीदास बनाम साही*, ए 1959 एस.सी. 942 (*950*) ।
27. *रतिलाल बनाम मुंबई राज्य*, (1954) एस.सी आर. 1055 ।
28. *गोविन्दलालजी बनाम राजस्थान राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 1638 ।
29. *एच.आर.ई. आयुक्त बनाम लक्ष्मीन्द्र*, ए. 1954 एस.सी. 282 ।
30. *दरगाह समिति बनाम हुसैन*, ए. 1961 एस.सी. 1402 (*1415*) ।

(ii) सिख गुरुद्वारे के प्रबंध के लिए बोर्ड में प्रतिनिधित्व का ढंग ।[12] तब बोर्ड में सिख संप्रदाय का प्रतिनिधित्व किए जाने का अधिकार आवश्यक है ।[12]

(iii) आनंद मार्गियों का सार्वजनिक रूप से तांडव नृत्य करने का अधिकार । इसका कारण यह दिया गया कि जब आनंद मार्ग की स्थापना हुई तब यह उसका आवश्यक धार्मिक आचार नहीं माना गया । इसे बाद में अपनाया गया ।[31]

निम्नलिखित धर्म के विषय हैं :

(i) धर्म से संबंधित समारोह विधि के अनुसार वे व्यक्ति जो मंदिर में पूजा के लिए प्रवेश कर सकते हैं[32] वे किस स्थान पर खड़े होने के हकदार हैं,[32] किस समय पर जनता को प्रवेश दिया जाएगा और किस प्रकार पूजा की जाएगी,[33] ये सभी धर्म के विषय हैं ।

(ii) अनुच्छेद 26(ख) से प्राप्त अधिकार के अधीन धार्मिकेतर आधार पर जाति से निष्कासित करने के अधिकार का दावा नहीं किया जा सकता । किंतु धार्मिक आधार पर जाति से निष्कासन करना साविधानिक होगा यदि वह किसी संप्रदाय के तत्वों का सर्वसाधारण अंग है जैसे दाऊदी बोहरा संप्रदाय के दाई की शक्ति ।[34]

खंड (ग) : संपत्ति के स्वामित्व का अधिकार — इस खंड के अनुसार प्रत्येक धार्मिक संप्रदाय को संपत्ति के अर्जन और स्वामित्व का अधिकार है । इसका यह अर्थ नहीं है कि किसी धार्मिक निकाय की संपत्ति को विधि के प्राधिकार से अर्जित नहीं किया जा सकता ।[33] किंतु यह अवश्य ध्यान रखा जाएगा कि ऐसे अर्जन से धार्मिक संस्था का अस्तित्व ही न समाप्त हो जाए ।[35]

इस खंड द्वारा प्रत्याभूत अधिकार आत्यंतिक नहीं है । उसे राज्य युक्तियुक्त रूप से विनियमित कर सकता है । शर्त यह है कि अधिकार का सार प्रभावित नहीं होना चाहिए ।[20] सामाजिक कल्याण के हित में विनियमित करने की राज्य की शक्ति भाग 4 के निदेशक तत्वों से प्राप्त होती है [अनुच्छेद 37] । न्यायालय का कर्तव्य है कि वह परस्पर प्रतियोगी विभिन्न हितों में संतुलन बनाए रखे ।[20] इसलिए धार्मिक संप्रदाय की संपत्ति को कृषि सुधार की दृष्टि से अनुच्छेद 31क(1)(क) के अधीन अर्जित किया जा सकता है ।[20] उदाहरण के लिए, जहां सुसंगत विधि द्वारा विहित धार्मिक सीमा से अधिक भूमि कब्जे मे है या भाग 4 के निदेशों के क्रियान्वयन के लिए । किंतु इस बात का ध्यान रखना होगा कि धर्म के आवश्यक अंग में हस्तक्षेप न हो ।[20]

खंड (घ) : संपत्ति के प्रशासन का अधिकार — वर्तमान खंड के अधीन धार्मिक संप्रदाय को यह अधिकार है कि वह अपने समर्पण के प्रयोजनों के लिए संपत्ति को स्वामित्व में रखे, अर्जन करे और उस पर प्रशासन करे ।[34] यह सब विधि के अनुसार होना चाहिए । इसका यह अर्थ हुआ कि राज्य न्यास संपत्ति का प्रशासन वैध रूप से बनाई गई विधि के अनुसार ही विनियमित कर सकता है । किंतु राज्य द्वारा बनाई गई विधि के अनुसार संपत्ति पर प्रशासन करने का अधिकार धार्मिक संप्रदाय को रहेगा । यदि कोई विधि धार्मिक संप्रदाय की संपत्ति के प्रशासन के अधिकार को छीन लेती है और उसे किसी लौकिक प्राधिकारी को देती है तो यह संविधान के अनुच्छेद 26(घ) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार का उल्लंघन होगा ।[27-29] यदि मठाधिपति के विरुद्ध दुर्विनियोग और इस प्रकार के अन्य आरोपों की जांच के लंबित रहने

31. *रामानुज* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 1586 ।
32. *कुरैशी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 731 ।
33. *सूर्यपाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 1056 ।
34. *सैफुद्दीन* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 853 (*869-74*) ।
35. *राम* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1576 (पैरा 3); *नरेन्द्र* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2092 (पैरा 26, 30) ।

के दौरान मठ के दिन-प्रतिदिन प्रशासन के लिए कोई नियुक्ति की जाती है तो इससे अधिकार का उल्लंघन नहीं होगा ।[36]

राज्य द्वारा जो विनियमन किया जाता है उसमें धर्म के आवश्यक अंग में हस्तक्षेप नहीं हो सकता ।[27]

(क) धर्म कोई राय या विश्वासमात्र ही नहीं है । इसकी बाह्य अभिव्यक्ति भी होती है । धार्मिक विश्वास के अनुसरण में धार्मिक कृत्य या व्यवहार, धार्मिक विश्वास या आस्था के अनिवार्य अंग हैं । किसी बाहरी प्राधिकारी को यह कहने का अधिकार नहीं है कि विशेष समय पर या विशेष रीति से किए जाने वाले धार्मिक संस्कार और समारोह धर्म के आवश्यक अंग नहीं हैं । राज्य न्यास संपदा के प्रशासन के पर्दे में उन्हें निर्बन्धित या प्रतिषिद्ध नहीं कर सकता । इन धार्मिक कृत्यों के संबंध में कितना व्यय किया जाए यह धार्मिक संस्था की संपत्ति के प्रशासन का विषय है । यदि इन पर होने वाले व्यय से विन्यास संपत्तियों का क्षय हो जाएगा या संस्था का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा तो राज्य के अभिकरण विधि के अनुसार उचित नियंत्रण कर सकते हैं । संविधान के अनुच्छेद 26(घ) से इस विस्तार तक संरक्षण दिया गया है ।[27]

(ख) राज्य अनुच्छेद 26 का प्रयोग करते हुए ऐसी विधि नहीं बना सकता जिसमें संप्रदाय की संपत्ति का ऐसे व्यक्तियों के लिए उपयोग करने का उपबंध किया जाए जिन्हें धर्म के आधार पर संप्रदाय से निकाल दिया गया है ।[34]

खंड (ख) और (घ) — 1. खंड (ख) धर्म विषयक कार्यों के संबंध में है, जैसे धार्मिक संस्कार समारोह, उत्सव, आदि मनाना । किंतु यह संप्रदाय की संपत्ति के प्रशासन से संबंधित नहीं है । उसके बारे में खंड (घ) में उपबंध है ।

2. इसलिए संप्रदाय के प्रशासन के विनियमन को खंड (ख) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार के उल्लंघन के रूप में चुनौती नहीं दी जा सकती ।[37] किंतु वे विषय जो खंड (ख) के अधीन धर्म विषयक कार्य समझे जाते हैं विधि द्वारा विनियमित नहीं किए जा सकते ।[38-39]

खंड (ग)-(घ) — 1. ये खंड किसी संप्रदाय को वे अधिकार प्रदान नहीं करते जो उसके पास पहले से नहीं हैं । ये केवल उस संप्रदाय के अधिकारों के बने रहने की प्रत्याभूति देते हैं और उनकी रक्षा करते हैं । यदि संप्रदाय की संपत्ति का प्रशासन करने का अधिकार उसमें कभी निहित नहीं था या इस अधिकार का संप्रदाय ने अभ्यर्पण कर दिया था या वह अधिकार सदा के लिए छिन गया है तो इन खंडों का लाभ नहीं उठाया जा सकता ।[30] दूसरे शब्दों में यदि किसी अल्पसंख्यक संप्रदाय ने भी किसी धार्मिक संस्था की स्थापना की हो तो वह भी कुछ परिस्थितियों में अपनी संपत्ति के प्रशासन का अधिकार खो देगा ।[36] यदि विन्यास के निर्बन्धनों में या जहां निर्बन्धन उपलब्ध नहीं है वहां विन्यास के इतिहास से यह स्पष्ट हो जाता है कि संपत्ति का प्रशासन सदैव ऐसे अधिकारियों के हाथ में रहा है जो राज्य द्वारा नियुक्त किया जाता था और राज्य के प्रति उत्तरदायी था तो संप्रदाय यह नहीं कह सकता कि उसे प्रबंध करने का अधिकार अनुच्छेद 26(ग)-(घ) के अधीन प्राप्त हो गया है ।[30]

2. साधारण कराधान से या भू-राजस्व के निर्धारण से इस खंड के अधीन प्रदत्त अधिकार का उल्लंघन नहीं होता । ये कर सभी व्यक्तियों पर लगाए जाते हैं । किसी विशेष धार्मिक संप्रदाय पर विशेष भार नहीं होता ।[40]

---

36. *दिग्यदर्शन* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य,* ए. 1970 एस.सी. 181 (*188*) ।
37. *अजीज* बनाम *भारत संघ,* ए. 1968 एस.सी. 662 (*670*) ।
38. *गोविन्दलालजी* बनाम *राजस्थान राज्य,* ए 1963 एस.सी 1638 (*1661*) ।
39. *राजस्थान राज्य* बनाम *सज्जन लाल,* ए. 1975 एस.सी. 706 ।
40. *तमिलनाडु सरकार* बनाम *अहोबिला,* ए. 1987 एस.सी. 245 (पैरा 2) ।

27. किसी भी व्यक्ति को ऐसे करों का संदाय करने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा जिनके आगम किसी विशिष्ट धर्म या धार्मिक संप्रदाय की अभिवृद्धि या पोषण में व्यय करने के लिए विनिर्दिष्ट रूप से विनियोजित किए जाते हैं ।

किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि के लिए करों के संदाय के बारे में स्वतंत्रता ।

अनुच्छेद 27 : धर्म के प्रयोजनों के लिए कोई कराधान नहीं — इस अनुच्छेद द्वारा किसी विशिष्ट धार्मिक संप्रदाय के उन्नयन या पोषण के लिए व्यय के संदाय के लिए कर के विनियोजन का प्रतिषेध किया गया है । इसके पीछे जो कारण है वह सुस्पष्ट है । हमारा राज्य धर्मनिरपेक्ष है । संविधान में धार्मिक स्वतंत्रता की प्रत्याभूति दी गई है जो व्यक्तियों के लिए भी है और समूहों के लिए भी । हमारे संविधान की नीति के यह विरुद्ध है कि लोक निधि से किसी विशिष्ट धर्म या विशिष्ट धर्म के संप्रदाय के उन्नयन या पोषण के लिए धन खर्च किया जाए ।[41]

किंतु राज्य धार्मिक संस्थाओं के लौकिक प्रशासन को विनियमित करने के लिए खर्च के लिए फीस लगा सकता है । ऐसे मामलों में अनुच्छेद 27 नहीं लागू होता क्योंकि ऐसे फीस लगाने से किसी विशिष्ट धर्म या धार्मिक संप्रदाय का कोई पक्षपात नहीं होता ।[42]

28. (1) राज्य-निधि से पूर्णतः पोषित किसी शिक्षा संस्था में कोई धार्मिक शिक्षा नहीं दी जाएगी ।

कुछ शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के बारे में स्वतंत्रता ।

(2) खंड (1) की कोई बात ऐसी शिक्षा संस्था को लागू नहीं होगी जिसका प्रशासन राज्य करता है किंतु जो किसी ऐसे विन्यास या न्यास के अधीन स्थापित हुई है जिसके अनुसार उस संस्था में धार्मिक शिक्षा देना आवश्यक है ।

(3) राज्य से मान्यताप्राप्त या राज्य-निधि से सहायता पाने वाली शिक्षा संस्था में उपस्थित होने वाले किसी व्यक्ति को ऐसी संस्था में दी जाने वाली धार्मिक शिक्षा में भाग लेने के लिए या ऐसी संस्था में या उससे संलग्न स्थान में की जाने वाली धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के लिए तब तक बाध्य नहीं किया जाएगा जब तक कि उस व्यक्ति ने, या यदि वह अवयस्क है तो उसके संरक्षक ने, इसके लिए अपनी सहमति नहीं दे दी है ।

संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार

29. (1) भारत के राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी अनुभाग को, जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति है, उसे बनाए रखने का अधिकार होगा ।

अल्पसंख्यक-वर्गों के हितों का संरक्षण ।

(2) राज्य द्वारा पोषित या राज्य-निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर वंचित नहीं किया जाएगा ।

अनुच्छेद 29-30 का प्रविषय — इन दो अनुच्छेदों से चार सुभिन्न अधिकार प्राप्त होते हैं :[1]

(i) नागरिकों के किसी अनुभाग को अपनी भाषा, लिपि या संस्कृति बनाए रखने का अधिकार [अनुच्छेद 29(1)] ।

---

41. *आयुक्त, एच.आर.ई. बनाम लक्ष्मीन्द्र,* (1954) एस.सी.आर 1005 ।

42. *मोतीदास* बनाम *साही,* ए. 1959 एस.सी. 942 (*950*); *बीर किशोर* बनाम *उडीसा राज्य,* ए 1964 एस.सी. 1501 (*1510*) ।

1. *सेंट जेवियर महाविद्यालय* बनाम *गुजरात राज्य,* ए. 1974 एस.सी 1389 (पैरा 6, 73, 124) ।

(ii) सभी धार्मिक या भाषिक अल्पसंख्यकों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार [अनुच्छेद 30(1)] ।

(iii) शिक्षा संस्थाओं का यह अधिकार कि राज्य उनसे इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह अलपसंख्यक वर्ग के प्रबंध में है [अनुच्छेद 30(2)] ।

(iv) नागरिकों का यह अधिकार कि उसे राज्य द्वारा पोषित या राज्य से सहायता पाने वाली किसी शिक्षा संस्था में धर्म, मूलवंश, जाति या भाषा के आधार पर वंचित नहीं किया जाएगा [अनुच्छेद 29(2)] ।

खंड (1) : अल्पसंख्यकों के संस्कृति संबंधी अधिकार का संरक्षण — इस खंड का यह अभिप्राय है कि यदि कोई सांस्कृतिक अल्पसंख्यक हैं जो अपनी भाषा, लिपि और संस्कृति बनाए रखना चाहते है तो राज्य उन पर कोई दूसरी संस्कृति अधिरोपित नहीं करेगा, चाहे वह स्थानीय हो या अन्यथा । जहां किसी राज्य विधान मंडल द्वारा पारित विधि का विस्तार समस्त राज्य पर है वहां उस पूरे राज्य की जनसंख्या के प्रति निर्देश से यह अवधारित किया जाएगा कि अल्पसंख्यक कौन है ।[2] अल्पसंख्यक समुदाय अपनी भाषा आदि को शिक्षा संस्था के माध्यम से ही [illegible] । खंड (1) द्वारा प्रदत्त अधिकार का आवश्यक अनुषंग यह है कि उस संप्रदाय को अपनी रुचि की शिक्षा सस्था स्थापित करने और चलाने का अधिकार हो । यदि ऐसी संस्था को राज्य से सहायता प्राप्त होती है तो वह खंड (2) द्वारा लगाई गई परिसीमा के अधीन होगा ।[2] भाषा को बनाए रखने के अधिकार में उस भाषा के संरक्षण के लिए आंदोलन चलाने का अधिकार भी है । यह आंदोलन राजनैतिक भी हो सकता है ।[3] खंड (1) द्वारा प्रदत्त अधिकार आत्यंतिक है । अनुच्छेद 19(1) में उल्लिखित अधिकारों के समान इस पर युक्तियुक्त निर्बंधन नहीं लगा सकते । इसलिए नागरिकों के किसी वर्ग द्वारा अपनी भाषा को बनाए रखने के लिए चलाए गए राजनैतिक आंदोलन को लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा 123(3) के अर्थान्तर्गत "भ्रष्ट आचार" नहीं बनाया जा सकता•।[3]

खंड (2) का उद्देश्य — खंड (1) नागरिकों के एक अनुभाग को संरक्षण प्रदान करता है । किंतु खंड (2) नागरिकों को दिया गया व्यक्तिगत अधिकार है । यह किसी समुदाय के सदस्य के रूप में नहीं दिया गया । यह खंड ऐसे व्यथित व्यक्ति को उपचार प्रदान करता है जिसे प्रवेश देने से इंकार उसके धर्म के आधार पर किया गया है । यदि प्रवेश पाने के इच्छुक नागरिक को इस आधार पर प्रवेश नहीं दिया गया है कि उसके पास आवश्यक शैक्षिक अर्हताएं नहीं हैं तो वह यह नहीं कह सकता कि अनुच्छेद 29(2) के अधीन उसके अधिकार का अतिलंघन हुआ है । किंतु यदि उसके पास शैक्षिक अर्हताएं है फिर भी उसे केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर प्रवेश देने से इंकार किया जाता है तो इस खंड के अधीन उसके अधिकारों का स्पष्ट रूप से हनन हो जाता है ।[4] दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि वह धर्म, जाति, लिंग या जन्म से भिन्न किसी आधार पर आरक्षण को वारित नहीं करता । उदाहरणार्थ, विदेश स्थित भारतीय दूतावासों के सरकारी कर्मचारियो के बच्चों के लिए ।[5]

यह खंड सभी नागरिकों को संरक्षण प्रदान करता है चाहे वे बहुसंख्यक वर्ग के हों या अल्पसंख्यक वर्ग के ।[6]

'केवल धर्म, मूलवंश, जाति, भाषा' — 1. इन शब्दों से यह प्रकट होता है कि शिक्षा संस्थाएं ऐसी शर्तें या मर्यादाएं लगा सकती हैं जो इस खंड में विनिर्दिष्ट नहीं हैं । जैसे, पूर्व

---

2. केरल शिक्षा विधेयक का मामला, ए. 1958 एस.सी. 956 ।
3. *जगदेव सिंह बनाम प्रताप सिंह*, ए. 1965 एस.सी. 183 (*188*) ।
4. *मद्रास राज्य बनाम चंपकम*, (1951) एस.सी.आर 525 ।
5. *चित्रा घोष बनाम भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 35 ।
6. *मुंबई राज्य बनाम बांबे एजुकेशन सोसाइटी*, (1955) 1 एस.सी.आर. 568 ।

प्रशिक्षण, शारीरिक क्षमता, टीका लगा होना, क्षतिकारक संगमों के प्रभाव में न होना, अनुशासन,[7] आदि ।[5]

2. यह अनुच्छेद किसी संस्था का अनुशासन आदि के आधार पर प्रवेश देने से इंकार करने का या छात्र को निष्कासित करने का अधिकार नहीं छीनता ।[7] बस विवेकशक्ति का दुरुपयोग नहीं होना चाहिए ।

3. यह अनुच्छेद ऐसा कोई मूल अधिकार नहीं प्रदान करता कि उच्च शिक्षा संस्थाओं में जैसे आयुर्विज्ञान में प्रवेश की परीक्षा हिंदी में होनी चाहिए ।[7क]

अनुच्छेद 15(1) और 29(2) — अनुच्छेद 15(1) विभेद के विरुद्ध साधारण संरक्षण है जबकि अनुच्छेद 29(2) विशेष प्रकार के दोष के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करता है । वह है राज्य द्वारा सहायता प्राप्त या वित्तपोषित शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश देने से इंकार करना ।[6] अनुच्छेद 15(1) तो केवल राज्य के विरुद्ध उपलब्ध है किंतु अनुच्छेद 29(2) राज्य के विरुद्ध भी है और ऐसे अन्य व्यक्ति के विरुद्ध जो उसके द्वारा प्रदत्त अधिकार प्राप्त करने में बाधा डालता है ।[6]

अनुच्छेद 15(4) और 29(2): पिछड़े वर्गों का शिक्षा संस्थाओं में प्रवेश पाने का अधिकार — 1. अनुच्छेद 15(4) के अधीन राज्य को यह हक है कि वह, अनुच्छेद 29(2) के होते हुए भी, पिछड़े वर्ग के सदस्यों के लिए न्यूनतम स्थान आरक्षित रखे ।[8]

2. इस आरक्षण की मात्रा इतनी अधिक नही होनी चाहिए कि वह अयुक्तियुक्त हो जाए ।

3. यह अधिकथित करना आरक्षण नही है कि किन-किन स्रोतों से चयन किया जाएगा ।

शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यक-वर्गों का अधिकार ।

30. (1) **धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक-वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा ।**

[9]*(1क) खंड (1) मे निर्दिष्ट किसी अल्पसंख्यक-वर्ग द्वारा स्थापित और प्रशासित शिक्षा सस्था के अनिवार्य अर्जन के लिए उपबंध करने वाली विधि बनाते समय, राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि ऐसी संपत्ति के अर्जन के लिए ऐसी विधि द्वारा नियत या उसके अधीन अवधारित रकम इतनी हो कि उस खंड के अधीन प्रत्याभूत अधिकार निर्बंधित या निराकृत न हो जाए ।*

(2) **शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में राज्य किसी शिक्षा संस्था के विरुद्ध इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक-वर्ग के प्रबंध में है ।**

खंड (1) : शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करने का अल्पसंख्यकों का अधिकार — 1. खंड (1) में यह विवक्षा है कि प्रत्येक अल्पसंख्यक समुदाय को यह अधिकार है कि वह अपने समुदाय के बालकों को अपने द्वारा चलाई जाने वाली शिक्षा संस्थाओं में, अपनी भाषा में शिक्षा प्रदान करे । यदि इस अधिकार का अतिलंघन होता है तो उस समुदाय की शिक्षा संस्था मूल अधिकार के उल्लंघन के विरुद्ध उपचार की मांग कर सकती है ।[10]

---

7. *देवा सिंह* बनाम *कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय*, ए. 1971 पी. एंड एच. 340 (345) ।

7क. *हिंदी समिति* बनाम *भारत संघ*, ए. 1990 एस.सी. 851 (पैरा 6) ।

8. *चंचला* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1762 (पैरा 42-43); *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *बलराम*, ए. 1972 एस.सी. 1375 (पैरा 80) ।

9. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा खंड (1क)-अंतःस्थापित किया गया ।

10. *मुंबई राज्य* बनाम *बाम्बे एजुकेशन सोसाइटी*, ए. 1954 एस.सी. 561 ।

2. हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा है । अनुच्छेद 351 में उसके प्रोन्नयन के लिए राज्य को विशेष निदेश दिया गया है । फिर भी इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अनुच्छेद 29 या 30 द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों का उल्लंघन नहीं किया जा सकता ।[10] राज्य का शिक्षा का माध्यम क्या हो यह तय करने का अधिकार, अल्पसंख्यक समुदाय के अपनी भाषा में शिक्षा देने के अधिकार के सामने झुक जाएगा ।[10]

3. इसमें ये अधिकार दिए गए हैं — (क) संस्था स्थापित करने का अधिकार[11] और (ख) संस्था का प्रकाशन करने का अधिकार[12] । पहले अधिकार का अर्थ है संस्था की रचना का अधिकार[11] और दूसरे का यह अर्थ है कि संस्था के क्रियाकलाप के प्रबंध में बाहरी हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए जिससे कि संस्था के जन्मदाता या उनके द्वारा नामनिर्दिष्ट व्यक्ति संस्था को वैसा बना सकें जैसा वे ठीक समझें और जो उनके विचार में समुदाय के और संस्था के हित में सर्वोच्च हो ।[13]

4. न्यायालय यह अवधारित करने के लिए सक्षम है कि कोई संस्था अल्पसख्यकों द्वारा संस्थापित की गई है या नहीं और उसका वास्तविक उद्देश्य अल्पसंख्यको के हित की रक्षा करना है अथवा अल्पसंख्यकों के नाम पर धनोपार्जन करना है ।[14]

खंड (1) के लागू होने की शर्त — अनुच्छेद 30(1) का लाभ उठाने के लिए समुदाय को यह दर्शित करना होगा कि (क) वह धार्मिक या भाषिक अल्पसख्यक है, और (ख) उसने संस्था की स्थापना की थी । इन दो शर्तों को पूरा किए बिना वह उसका प्रशासन चलाने के अधिकार का दावा नहीं कर सकता ।[11] यदि ये दो शर्तें पूरी हो जाती है तो इस अधिकार का विस्तार उन संस्थाओं पर भी होता है जिनकी स्थापना सविधान के पूर्व हुई थी और उन पर भी जो संविधान के पश्चात् की हैं ।[12] ऐसी संस्था की स्थापना करने के अधिकार का प्रयोग संविधान के प्रारंभ के पश्चात् ही किया जा सकता है ।[12]

यदि शिक्षा संस्था की स्थापना धार्मिक अल्पसख्यक वर्ग ने नहीं की है तो वह उसके प्रशासन के अधिकार का दावा नहीं कर सकता चाहे वह सविधान के प्रारभ के पूर्व उस संस्था का प्रशासन चलाता रहा हो ।[11] स्थापना और प्रशासन चलाना ये दोनों क्रियाएं एक साथ होंगी । यदि दोनों शर्तें एक साथ नहीं हैं तो विधि पर यह आक्षेप नहीं हो सकता कि वह अनुच्छेद 30(1) का उल्लंघन करती है ।[11]

खंड (1) में आने वाले दोनों अधिकारों की दशा में यह आवश्यक नहीं है कि शिक्षा संस्था अनन्य रूप से अल्पसंख्यकों के फायदे के लिए हो और गैर अल्पसंख्यक वर्ग के एक भी सदस्य को उसमें प्रवेश नहीं दिया गया हो ।[12-13]

खंड (1) द्वारा प्रदत्त अधिकार की परिधि — इस खंड का अर्थ समझने की कुंजी है इसमें प्रयुक्त अभिव्यक्त "अपनी रुचि की" । इस खंड की अंतर्वस्तु उतनी ही व्यापक है जितनी कि उस समुदाय विशेष की रुचि ।[12] इस खंड द्वारा प्रदत्त अधिकार का दावा करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि उस संस्था का पाठ्यक्रम केवल धर्म की शिक्षा या अल्पसंख्यक समुदाय की भाषा तक ही सीमित रहे । ऐसी संस्था मे पढ़ाए जाने वाले विषयो पर कोई मर्यादा नहीं है । ऐसी संस्था में साधारण शिक्षा देने पर कोई प्रतिबध नहीं है ।[12-13, 15]

खंड (1) के अधीन अधिकार की परिसीमा — प्रकटतः तो अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रदत्त

---

11. *अजीज* बनाम *भारत संघ*, ए. 1968 एस.सी. 662 (*670*) ।

12. केरल शिक्षा विधेयक पर निर्देश, ए. 1958 एससी 956; *रेवरेंड फादर* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 404 ।

13. *केरल राज्य* बनाम *मदर प्राविन्शियल*, ए 1970 एस.सी. 2079 (*2082*) ।

14. *ए.पी. क्रिश्चियन सोसाइटी* बनाम *आंध्र प्रदेश सरकार*, (1986) 2 एस.सी.सी. 667 (पैरा 8-9) ।

15. *सेंट जेवियर महाविद्यालय* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1975 एससी 1389 (पैरा 6) [नौ न्यायाधीश] ।

अधिकार पर कोई मर्यादा नहीं है । किंतु यह अधिकार आत्यंतिक नहीं हो सकता । अर्थात् ऐसा नहीं हो सकता कि राज्य को अल्पसंख्यकों द्वारा स्थापित संस्थाओं के प्रशासन को विनियमित करने का कोई अधिकार ही न हो । कुछ मर्यादाएं तो अधिकार में ही अंतर्निहित होती हैं । प्रशासन के अधिकार में कुप्रशासन का अधिकार नहीं है ।[12] ऐसा होने पर अनुच्छेद का उद्देश्य ही विफल हो जाएगा । क्योंकि उद्देश्य तो है शिक्षा के क्षेत्र में अल्पसंख्यक संस्थाओं की गुणवत्ता का विस्तार ।[16]

राज्य, अनुच्छेद 30(1) के अधीन आने वाली संस्था को सहायता या मान्यता देने की शर्त के रूप में, स्वच्छता, शिक्षकों की क्षमता, अनुशासन आदि सुनिश्चित करने के प्रयोजनों के लिए युक्तियुक्त विनियम अधिरोपित कर सकता है ।[12] इसी प्रकार शिक्षा का *मानक*[16] भी प्रबंध का भाग नहीं है ।[13] किंतु विनियम इतना नहीं हो सकता कि व्यवहार में अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार समाप्त ही हो जाए ।[12, 15] राज्य ऐसे विनियम लागू नहीं कर सकता जो शिक्षा संस्था के रूप में उस संस्था के हित से संबंधित न हो चाहे वे साधारण लोकहित में क्यों न हों ।[17]

अनुच्छेद 337 में प्रदत्त अधिकार के सिवाय राज्य की सहायता पाने का और कोई सांविधानिक अधिकार नहीं है । यदि राज्य शिक्षा संस्थाओं को वस्तुत: सहायता प्रदान करता है तो वह सहायता के साथ ऐसी शर्तें नहीं लगा सकता जिससे धार्मिक या भाषिक समुदाय के सदस्य अनुच्छेद 30(1) के अधीन अपने अधिकार से वंचित हो जाए । राज्य को युक्तियुक्त शर्त अधिरोपित करने का अधिकार है किंतु वह ऐसी शर्त नही लगा सकता जिनसे अल्पसंख्यकों को अनुच्छेद 30(1) द्वारा दिया गया अधिकार व्यवहार में नष्ट हो जाए । राज्य की सहायता की कीमत के रूप में मूल अधिकार नहीं छीने जा सकते ।[12] राज्य यह नहीं विहित कर सकता कि यदि कोई संस्था [वह संस्था भी जिसे अनुच्छेद 30(1) का संरक्षण प्राप्त है] राज्य की सहायता पाना चाहती है तो उसे वह शर्त स्वीकार करनी होगी कि कुछ दशाओं में राज्य उस संस्था का प्रबंध ग्रहण या अर्जन कर सकेगा । ऐसी शर्त उस समुदाय के संस्था का प्रशासन चलाने के अधिकार को विनष्ट कर देगी ।[2]

किसी संस्था को राज्य से मान्यता पाने का सांविधानिक या अन्य अधिकार नहीं है । राज्य मान्यता प्राप्त करने के लिए युक्तियुक्त शर्तें अधिरोपित कर सकता है । जैसे, संस्था द्वारा नियोजित शिक्षकों की अर्हताएं या वेतन[18] या शासी निकाय की संरचना ।[19] राज्य ऐसी शर्तें अधिरोपित नहीं कर सकता जिनसे अल्पसंख्यक समुदाय को अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार व्यवहारिक रूप से समाप्त ही हो जाएं ।[17] उदाहरणार्थ, राज्य मान्यता देने के लिए यह शर्त नहीं लगा सकता कि वह संस्था प्राथमिक कक्षाओं के लिए कोई फीस नहीं ले । यदि राज्य की विधि या विनियम में इस बात की कोई व्यवस्था नहीं है कि इस वित्तीय हानि को कैसे पूरा किया जाएगा तो जो संस्थाएं प्राथमिक कक्षाओं की फीस पर ही पूर्णतया या प्रमुख रूप से निर्भर हैं, उनका तो अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा । ऐसी शर्त अनुच्छेद 30(1) के उल्लंघन के आधार पर शून्य हो जाएगी ।[17] संक्षेप में अनुच्छेद 30(1) से सुसंगत होने के लिए किसी अल्पसंख्यक संस्था पर राज्य द्वारा लगाया गया विनियम (क) युक्तियुक्त होना चाहिए और (ख) संस्था के शिक्षा वाले पक्ष का विनियम करने वाला तथा अल्पसंख्यक समुदाय या अन्य व्यक्तियों को जो वहां शिक्षा पाने के लिए आते हैं शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रभावशाली संस्था बनाने की दृष्टि से होना चाहिए ।[17]

---

16. *आल सेंट्स स्कूल* बनाम *आंध्र प्रदेश सरकार*, ए. 1980 एस.सी. 1042 (पैरा 12, 65) ।
17. *सिद्धराजभाई* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 540 ।
18. *फ्रैंक एंथोनी एसोसिएशन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी. 311 (पैरा 13, 15-17) ।
19. *जी.एफ. महाविद्यालय* बनाम *आगरा विश्वविद्यालय*, ए. 1975 एस.सी. 1820 ।

ये सिद्धांत अल्पसंख्यक संस्था को विश्वविद्यालय से सहबद्ध करने के लिए शर्त लगाने की विश्वविद्यालय की शक्ति को लागू किए गए हैं ।[16]

'अल्पसंख्यक' — संविधान में अल्पसंख्यक की परिभाषा नहीं दी गई है । इस शब्द के साधारण अर्थ में इसका तात्पर्य है कोई भी ऐसा समुदाय जो राज्य की जनसंख्या के पचास प्रतिशत से कम है । जब अनुच्छेद 30 का उल्लंघन करने वाली विधि राज्य विधि हो और सम्पूर्ण राज्य के राज्यक्षेत्र में लागू होती हो तब पूरे राज्य की दृष्टि से देखना होगा । यह कहना उचित नहीं है कि अल्पसंख्यक वर्ग में वह समुदाय आता है जो उस विशिष्ट क्षेत्र या प्रदेश में जिसमें वह शिक्षा संस्था स्थित है संख्या की दृष्टि से कम है ।[2] कोई समुदाय अल्पसंख्यक है या नहीं यह आक्षेपित विधान के प्रति निर्देश से अवधारित किया जाएगा ।[20] भाषिक अल्पसंख्यक होने के लिए उस समुदाय की अपनी बोलचाल की भाषा होनी चाहिए । यह आवश्यक नहीं है कि अलग लिपि भी हो ।[20] पंजाब में आर्यसमाजी धार्मिक अल्पसंख्यक माने जा सकते हैं । यद्यपि वे हिंदू समाज में आते हैं किंतु उन्होंने स्मृतियों के बहुत से सिद्धांतों को छोड़ दिया है । संविधान के पश्चात् स्थापित संस्थाओं की दशा में अल्पसंख्यक भारत में निवासी व्यक्ति होना चाहिए ।[21] किंतु इस अनुच्छेद का सरक्षण उन संस्थाओं को भी मिल सकता है जो संविधान के प्रारंभ के पूर्व अनिवासी व्यक्तियों द्वारा भारत में अल्पसंख्यक समुदाय के फायदे के लिए स्थापित की गई हैं ।[21]

'स्थापना और प्रशासन करने का अधिकार' — इस अभिव्यक्ति का निर्वचन अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त अधिकार के सार के साथ समन्वय करते हुए किया जाना चाहिए । अनुच्छेद 29(1) अल्पसंख्यक समुदाय को अपनी भाषा या संस्कृति का सरक्षण करने का अधिकार देता है । अनुच्छेद 30(1) धार्मिक या भाषिक अल्पसंख्यकों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्था स्थापित करने का अधिकार प्रदान करता है क्योंकि बच्चों की शिक्षा के द्वारा ही समूह की संस्कृति को अक्षुण्ण रखा जा सकता है । अनुच्छेद 30(1) का प्रविषय और उद्देश्य संस्कृति और लिपि के संरक्षण से अधिक व्यापक है । यह "रुचि" शब्द से इंगित होता है । यह अधिकार ऐसी संस्था स्थापित करने का अधिकार है जिनसे समुदाय की आवश्यकताओं की पूर्ति होगी और ऐसी संस्था में जाने वाले विद्वानों को सहायता मिलेगी । यदि ऐसी सस्थाओं के विद्वानों को उच्च शिक्षा या सार्थक जीवनयापन के अवसर से वंचित कर दिया जाए तो यह अधिकार मृतप्राय हो जाएगा ।[20] अल्पसंख्यकों का अपनी शिक्षा संस्था का प्रशासन चलाने के अधिकार का उल्लंघन हो जाता है यदि (क) संस्था के प्रधानाचार्य के चयन के विषय में संस्था के शासी निकाय के निर्णय का वीटो करने की शक्ति विश्वविद्यालय को दी जाती है,[20] या (ख) शासी निकाय की अनुशासन की शक्तियां विश्वविद्यालय को अन्तरित कर दी जाती है ।[22]

खंड (1क) — 44वां संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 31 का निरसन करके संपत्ति के अधिकार को समाप्त कर दिया गया है । किंतु अनुच्छेद 31(2) के दूसरे परन्तुक को अनुच्छेद 30 का खंड (1क) बना दिया गया है ।[23]

इसका अर्थ यह हुआ कि प्रकारान्तर से सभी नागरिकों को जिसमें बहुसंख्यक समुदाय द्वारा चलाई जाने वाली शिक्षा संस्थाएं भी सम्मिलित हैं, राज्य द्वारा संपत्ति के अनिवार्य अर्जन के लिए प्राधिकार पाने का सांविधानिक अधिकार नहीं है । किंतु अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थाओं की संपत्ति के अर्जन की दशा में ऐसे प्राधिकार का अधिकार प्रत्याभूत किया गया है जिससे अल्पसंख्यक समुदाय उस शिक्षा संस्था को चला सके । स्पष्ट है कि ऐसा समुदाय तभी संतुष्ट होगा जब कि उसे पूरा प्रतिकर दिया जाए ।

---

20. *डी.ए.वी. कालेज बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1731, 1737 (*1742, 1744*) ।
21. *एस.के. पात्रो बनाम बिहार राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 259 ।
22. *केरल राज्य बनाम मदर प्राविन्शियल*, ए. 1970 एस.सी. 2079 (*2084-85*) ।
23. देखिए, *कांस्टीट्यूशनल लॉ आफ इंडिया*, प्रथम संस्करण, पृष्ठ 95 ।

अनुच्छेद 31क के दूसरे परन्तुक के अधीन प्रतिकर पाने के मूल अधिकार का जो कुछ अवशेष बचा है वह भूमि को वास्तव में जोतने वाले उस व्यक्ति के पक्ष में है जिसके पास अधिकतम सीमा से कम भूमि है ।

अनुच्छेद 30(1) और 19 — 1 अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रदत्त अधिकार अनुच्छेद 19 से नियंत्रित नहीं होते ।[24]

2. राज्य को यह शक्ति है कि दक्षता, अनुशासन, स्वास्थ्य, स्वच्छता, नैतिक या लोक व्यवस्था आदि बातों के हित में अल्पसंख्यक समुदाय की संस्था का प्रशासन चलाने के अधिकार को विनियमित करे । यह विनियम अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार पर निर्बंधन के रूप में नहीं होने चाहिए ।[24]

अनुच्छेद 30(1) और 28(3) — यदि किसी अल्पसंख्यक संस्था को राज्य से सहायता या मान्यता मिलती है तो वह किसी विद्यार्थी या उसके संरक्षक की अनुमति के बिना किसी विद्यार्थी को धार्मिक शिक्षा नहीं दे सकती या उसे कोई धार्मिक अर्चना में उपस्थित होने के लिए विवश नहीं कर सकती ।[25]

अनुच्छेद 30(1) और 29 — 1 अनुच्छेद 30 के खड (1) द्वारा दिए गए अधिकार अनुच्छेद 29 के खंड (1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकार के पूरक हैं क्योंकि कोई भी अल्पसंख्यक समुदाय अपनी भाषा की रक्षा तभी कर पाएगा जब उसे अपनी रुचि की शिक्षा संस्था स्थापित करने का अधिकार हो ।[26]

2 अनुच्छेद 30(1) का अधिकार एक पृथक् अधिकार है[26-27] जो अनुच्छेद 29(1) के अधीन विचारणीय बातों से सर्वथा भिन्न है ।[28] इस अधिकार का दावा अल्पसख्यक समुदाय द्वारा स्थापित कोई संस्था कर सकती है चाहे उसका उद्देश्य अल्पसंख्यक समुदाय की भाषा, लिपि या संस्कृति के संरक्षण तक ही सीमित क्यों न हो । अनुच्छेद 30(1) की व्यापकता को अनुच्छेद 29(1) की अन्तर्वस्तु से काटकर छोटा नही किया जा सकता ।[26-27]

3. अनुच्छेद 30(1) द्वारा प्रदत्त अधिकार, अनुच्छेद 29(2) द्वारा अधिरोपित मर्यादाओं के अधीन है । अतएव यदि किसी अल्पसंख्यक सस्था को राज्य से सहायता मिलती है तो वह धर्म, जाति आदि के आधार पर अल्पसंख्यक समुदाय के बाहर के किसी व्यक्ति को ऐसी संस्था में प्रवेश देने से इंकार नहीं कर सकती ।[26]

4. राज्य से सहायता पाने वाली अल्पसंख्यक संस्था, अनुसूचित जातियों या जनजातियों या पिछड़े वर्ग के सदस्यों को प्रवेश देने से इंकार नहीं कर सकती यदि राज्य अनुच्छेद 15(4) के अधीन उनके लिए विशेष उपबंध करता है ।[27]

5. अनुच्छेद 29 के अधीन अधिकार का दावा केवल नागरिकों द्वारा ही किया जा सकता है । किंतु अनुच्छेद 30 के अधीन अधिकारों का दावा करने के लिए नागरिक होना आवश्यक नहीं है ।[21] इसलिए किसी विदेशी मिशनरी सोसाइटी द्वारा भारत में स्थापित स्कूल को अनुच्छेद 30(1) का संरक्षण प्राप्त हो सकता है ।[21]

6. अनुच्छेद 29(1) एक साधारण उपबंध है जिसके अधीन अल्पसंख्यक अपनी भाषा, लिपि या संस्कृति का संरक्षण कर सकते हैं । अनुच्छेद 30(1) अल्पसंख्यकों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं का संरक्षण और प्रशासन चलाने का विशेष अधिकार देता है । यह विकल्प

---

24. *सिद्धराजभाई* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1963 एस.सी 540 (पैरा 10) ।

25. *सेंट जेवियर महाविद्यालय* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1974 एस.सी 1389 (पैरा 257-58) ।

26. *रेवरेंड फादर* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 465 ।

27. *सेंट जेवियर महाविद्यालय* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 1389 (पैरा 6-8, 73-74, 240-44, 256-58) ।

28. *डी.ए.वी. कालेज* बनाम *पंजाब राज्य (II)*, ए. 1971 एस.सी. 1737 (पैरा 6) ।

भाषा आदि की संरक्षा करने वाली संस्थाओं तक ही सीमित है । यदि अल्पसंख्यक समुदाय अपनी रुचि की शिक्षा संस्था स्थापित करने के बाद उसमें अन्य समुदाय के व्यक्तियों को प्रवेश देता है तो इससे अधिकार समाप्त नहीं होता ।[26]

7 अल्पसंख्यक संस्थाओं को चाहिए कि कम से कम 50% स्थान अन्य समुदायों के सदस्यों को उपलब्ध कराएं ।[28क]

अनुच्छेद 30(1) और निदेशक तत्व — अल्पसंख्यक समुदाय के अपनी रुचि की संस्थाओं की स्थापना करने और प्रशासन चलाने के अधिकार का राज्य के अनुच्छेद 41, 45 और 46 में दिए गए अनुदेशों के अधीन शिक्षा का प्रसार करने और निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने के कार्य से तालमेल बैठाया जाना चाहिए ।[29]

राज्य का यह परम कर्तव्य है कि वह निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रारंभ करे । राज्य के लिए यह संभव है कि वह यह कार्य राज्य के स्वामित्वाधीन या राज्य की सहायता प्राप्त पाठशालाओं द्वारा पूरा करे । अनुच्छेद 45 यह अपेक्षा नहीं करता कि यह कार्य अल्पसंख्यक समुदायों को हानि पहुंचाकर पूरा किया जाएगा और इसके लिए अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा स्थापित पाठशालाओं का अर्जन किया जाएगा या उनका प्रबन्ध लिया जाएगा ।[29]

* * *[30]

यह ध्यान देने योग्य है कि संशोधन के बाद भी अनुच्छेद 31ग, अनुच्छेद 14 और 19 को छोड़कर, अन्य मूल अधिकारों का अध्यारोहण नहीं करता (देखिए आगे) ।[30]

संपत्ति का अनिवार्य अर्जन । 31 *संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से निरसित ।*

44वें संशोधन का संपत्ति के अधिकार पर प्रभाव — 1 प्रारंभ में ही यह कह देना चाहिए कि 44वें संशोधन से संपत्ति के संबंध में जो परिवर्तन लाए गए हैं वे कुरूप और जटिल हैं । संपत्ति के अधिकार के उत्सादन के पक्ष में प्रमुख तर्क यह दिया गया कि वह प्रगतिशील और समाजवादी समाज के मार्ग में रोड़ा है । अनुच्छेद 19(1)(च) और 31 का उत्सादन करने के पश्चात् अनुच्छेद 31क को पुनः रखने का कोई कारण दिखलाई नहीं पड़ता । यह अनुच्छेद संपत्ति के अधिकार के अपवाद के रूप में अंतःस्थापित किया गया था । यह ठीक है कि अनुच्छेद 14 और अनुच्छेद 19(1)(छ) का अपवाद अनुच्छेद 31क है किंतु इस प्रयोजन के लिए अनुच्छेद 31ख के साथ पठित नवीं अनुसूची के अधीन विशिष्ट अधिनियमों को सुरक्षा प्रदान की जा सकती है । अनुच्छेद 31ग को बनाए रखने के औचित्य के भी यही कारण दिए जा सकते हैं ।

2 सामान्यतया परन्तुक मुख्य उपबंध के अपवाद के रूप में होता है । इसलिए जब अधिष्ठायी उपबंध का निरसन हो जाता है तो वह भी बना नहीं रहता । किंतु अनुच्छेद 31(2) के निरसन के पश्चात् भी उसका परन्तुक जीवित है और उसका स्थान बदल कर उसे अनुच्छेद 30 के नए खंड (1क) के रूप में रखा गया है । अनुच्छेद 31(2) का परन्तुक 25वें संशोधन अधिनियम, 1971 द्वारा अंतःस्थापित किया गया था जिससे अल्पसंख्यकों को शांत किया जा सके । कारण यह है कि उस अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 31(2) में जो परिवर्तन किए गए थे उनके कारण विधान मंडल द्वारा दिए गए प्रतिकर की मात्रा को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती थी । किंतु उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि

28क *सेंट स्टीफन्स कालेज* बनाम *दिल्ली विश्वविद्यालय*, जेटी 1991 (4) एससी 548 ।

29 केरल शिक्षा विधेयक का मामला, (1959) एससीआर 995 (*1062*) ।

30 अनुच्छेद 30 और अनुच्छेद 31 के पश्चात् आने वाले उपशीर्ष 'संपत्ति का अधिकार' का संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा लोप किया गया ।

ऐसे संशोधन के पश्चात् भी यदि प्रतिकर दिखावा मात्र है तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकेंगे । 44वें संशोधन के पश्चात् सभी लोगों का प्रतिकर पाने का सांविधानिक अधिकार छिन गया । इसलिए अल्पसंख्यक समुदाय द्वारा चलाई जाने वाली संस्थाओं के लिए इस अधिकार को बनाए रखना एक विसंगति है । *मानो बहुसंख्यक संस्थाओं द्वारा दी जाने वाली* शिक्षा का देश के लिए कोई मूल्य ही नहीं । बहुसख्यक समुदाय के इस स्पष्ट विभेद के पीछे कोई औचित्य नही है । यह अल्पसंख्यको के मत पाने के लिए राजनीतिक चाल है ।

3 अनुच्छेद 31 के खड (1) के उपबंध को बनाए रखा गया है किंतु बिल्कुल भिन्न रूप में । यह अब मूल अधिकार नहीं है । इसे अनुच्छेद 300क मे रखा गया है । इसमें अन्तर यह होगा कि यदि कार्यपालिका या पुलिस बिना विधि के प्राधिकार के किसी व्यक्ति की सम्पत्ति छीन लेती है तो उसे अनुच्छेद 32 के अधीन सीधे उच्चतम न्यायालय में जाने का अधिकार नहीं होगा ।

यदि अनुच्छेद 300क के अधीन सम्पत्ति से वचित करने का प्राधिकार देने वाली कोई विधि है तो चतुर अधिवक्ता उस विधि पर आक्षेप करने के लिए अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 19(1)(छ) को अपना अस्त्र बना लेगा (क्योकि सभी विधिया अनुच्छेद 13 के अधीन है) और इस प्रकार वह मामला उच्चतम न्यायालय के समक्ष चला जाएगा । जहा कोई विधि नही है और कार्यपालिका के विधिविरुद्ध आचरण के परिणामस्वरूप सम्पत्ति से वंचित किया जाता है तो व्यथित व्यक्ति को अनुच्छेद 32 के अधीन उपचार नहीं मिलेगा । यह भी एक विसगति ही है ।

उच्चतम न्यायालय के समक्ष तत्काल उपचार न मिलना एक बहुत बडी हानि है जो इस नए प्ररूप के परिणामस्वरूप हुई है [देखिए आगे अनुच्छेद 300क] ।

[1]कुछ विधियों की व्यावृत्ति

[2]31क [3][(1) *अनुच्छेद 13 मे अतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, —*

सपदाओं आदि के अर्जन के लिए उपबध करने वाली विधियों की व्यावृत्ति ।

(क) किसी सपदा के या उसमे किन्ही अधिकारो के राज्य द्वारा अर्जन के लिए या किन्ही ऐसे अधिकारो के निर्वापन या उनमें परिवर्तन के लिए, या

(ख) किसी संपत्ति का प्रबध लोकहित मे या उस सपत्ति का उचित प्रबध सुनिश्चित करने के उद्देश्य से परिसीमित अवधि के लिए राज्य द्वारा ले लिए जाने के लिए, या

(ग) दो या अधिक निगमो को लोकहित मे या उन निगमो मे से किसी का उचित प्रबध सुनिश्चित करने के उद्देश्य से समामेलित करने के लिए, या

(घ) निगमो के प्रबध अभिकर्ताओ, सचिवों और कोषाध्यक्षो, प्रबध निदेशको, निदेशकों या प्रबधको के किन्ही अधिकारों या उनके शेयरधारकों के मत देने के किन्ही अधिकारों के निर्वापन या उनमे परिवर्तन के लिए, या

(ङ) किसी खनिज या खनिज तेल की खोज करने या उसे प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए किसी करार, पट्टे या अनुज्ञप्ति के आधार पर प्रोद्भूत होने वाले किन्ही अधिकारों के निर्वापन या उनमें परिवर्तन के लिए या किसी ऐसे करार, पट्टे या अनुज्ञप्ति को समय से पहले समाप्त करने या रद्द करने के लिए,

उपबध करने वाली विधि इस आधार पर शून्य नही समझी जाएगी कि वह [अनुच्छेद 14

---

1 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा उपशीर्ष अंतःस्थापित ।

2 यह अनुच्छेद सर्वप्रथम सविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा अतःस्थापित किया गया था ।

3 संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा खंड (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

या अनुच्छेद 19][4] *द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी से असंगत है या उसे छीनती है या न्यून करती है :*

परंतु जहां ऐसी विधि किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि है वहां इस अनुच्छेद के उपबंध उस विधि को तब तक लागू नहीं होंगे जब तक ऐसी विधि को, जो राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखी गई है, उसकी अनुमति प्राप्त नहीं हो गई है :]

[5]*[परंतु यह और कि जहां किसी विधि में किसी संपदा के राज्य द्वारा अर्जन के लिए कोई उपबंध किया गया है और जहां उसमें समाविष्ट कोई भूमि किसी व्यक्ति की अपनी जोत में है वहां राज्य के लिए ऐसी भूमि के ऐसे भाग को, जो किसी तत्समय प्रवृत्त विधि के अधीन उसको लागू अधिकतम सीमा के भीतर है, या उस पर निर्मित या उससे अनुलग्न किसी भवन या संरचना को अर्जित करना उस दशा के सिवाय विधिपूर्ण नहीं होगा जिस दशा में ऐसी भूमि, भवन या संरचना के अर्जन से संबंधित विधि उस दर से प्रतिकर के संदाय के लिए उपबंध करती है जो उसके बाजार-मूल्य से कम नहीं होगी ।]*

(2) इस अनुच्छेद में, —

[6]*[(क) "संपदा" पद का किसी स्थानीय क्षेत्र के संबंध में वही अर्थ है जो उस पद का या उसके समतुल्य स्थानीय पद का उस क्षेत्र में प्रवृत्त भू-धृतियों से संबंधित विद्यमान विधि में है और इसके अंतर्गत —*

(i) कोई जागीर, इनाम या मुआफी अथवा वैसा ही अन्य अनुदान और [7]*[तमिलनाडु] और केरल राज्यों में कोई जन्मम् अधिकार भी होगा;*

(ii) रैयतवाड़ी बंदोबस्त के अधीन धृत कोई भूमि भी होगी;

(iii) कृषि के प्रयोजनों के लिए या उसके सहायक प्रयोजनों के लिए धृत या पट्टे पर दी गई कोई भूमि भी होगी, जिसके अंतर्गत बंजर भूमि, वन भूमि, चरागाह या भूमि के कृषकों, कृषि श्रमिकों और ग्रामीण कारीगरों के अधिभोग में भवनों और अन्य संरचनाओं के स्थल हैं];

(ख) "अधिकार" पद के अंतर्गत, किसी संपदा के संबंध में, किसी स्वत्वधारी, उप-स्वत्वधारी, अवर स्वत्वधारी, भू-धृतिधारक, [8]*[रैयत, अवर रैयत] या अन्य मध्यवर्ती में निहित कोई अधिकार और भू-राजस्व के संबंध में कोई अधिकार या विशेषाधिकार होंगे ।*

अनुच्छेद 31क का उद्देश्य — संक्षेप में संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा अनुच्छेद 31क पुरःस्थापित करने का उद्देश्य जमींदारी के अर्जन को विधिमान्यता देना था और न्यायालयों के हस्तक्षेप के बिना स्थायी बन्दोबस्त का उत्सादन करना था । इसमें यह उपबंध किया गया कि कोई विधि (भूतकालिक या भावी) जो किसी संपदा में किसी मध्यवर्ती धारक या स्वामी के अधिकारों को प्रभावित करती है इस आधार पर शून्य नहीं होगी कि वह संविधान के भाग 3 में सम्मिलित मूल अधिकारों में से किसी से असंगत है । दूसरे शब्दों में ऐसी विधि पर इस आधार पर प्रहार नहीं किया जा सकता कि उसमें प्रतिकर की कोई व्यवस्था नहीं की गई है[7] या कोई लोक प्रयोजन नहीं है

---

4. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा "अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 19 या अनुच्छेद 31" शब्दों के स्थान पर "अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 19" शब्द प्रतिस्थापित ।

5. संविधान (सत्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1964 द्वारा दूसरा परंतुक अंतःस्थापित किया गया ।

6. खंड (2)(क), पहले संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा संशोधित किया गया था । संविधान (सत्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1964 द्वारा इसे भूतलक्षी प्रभाव से उपरोक्त रूप में प्रतिस्थापित किया गया ।

7. *जादव बनाम हिमाचल प्रदेश प्रशासन*, ए. 1960 एस.सी. 1008 (*1012*) । [खंड (1) का दूसरा परंतुक इसका अपवाद है] ।

8. *बिहार राज्य बनाम कामेश्वर*, ए. 1952 एस.सी. 252 (*236*) ।

या वह भाग 3 के किसी अन्य उपबंध का उल्लंघन करती है, जैसे अनुच्छेद 14(8) या अनुच्छेद 19 ।[9]

संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा आगे किए गए संशोधन का उद्देश्य जमींदारी उत्सादन से संबंधित विधियों के साथ-साथ कृषि सुधार और सामाजिक कल्याण के अन्य विधानों को जो किसी स्वत्वधारी के अधिकारों को प्रभावित करती है अनुच्छेद 14, 19 और 31 की परिधि से बाहर निकालना था । इसके पश्चात् अनुच्छेद 31क कृषि सुधार तक ही सीमित नहीं रहा ।[10]

संविधान (सत्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1964 द्वारा किए गए संशोधन का उद्देश्य — देखिए आगे खंड (1) के दूसरे परंतुक के नीचे ।

संशोधनकारी अधिनियमों को संरक्षण — अनुच्छेद 31क का संरक्षण उन अधिनियमों को तो उपलब्ध है ही जो स्पष्टत उसके अधीन होते हैं । यह संरक्षण उन संशोधनकारी अधिनियमों को भी मिलता है जिनके द्वारा संपत्ति की नई मदें सम्मिलित की गई हैं । शर्त यह है कि ऐसे संशोधनकारी अधिनियमों के लिए राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त कर ली गई हो ।[11]

खंड (1) : 'अनुच्छेद 13 में किसी बात के होते हुए भी' — संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा किए गए संशोधन के पूर्व अनुच्छेद 31(1) में ये शब्द थे — "इस भाग के पूर्ववर्ती उपबधों मे किसी बात के होते हुए भी" । यह परिवर्तन शाब्दिक है । दोनों ही अभिव्यक्तियो से विनिर्दिष्ट अनुच्छेदों द्वारा प्रदत्त मूल अधिकार का लागू होना अपवर्जित हो जाता है । अर्थात् अनुच्छेद 14[12] और 19[8] (इसके अन्तर्गत लोक प्रयोजन का प्रश्न भी है)[13-14] ।

जो विधि अनुच्छेद 31क या 31ग के अधीन आती है उस पर आभासी विधान होने के आधार पर या अधिहरणकारी होने के आधार पर आक्षेप नही किया जा सकता ।

किंतु अन्य अनुच्छेदो के उल्लंघन के आधार पर आक्षेप हो सकता है जैसे मठ की संपदा के राज्य द्वारा प्रबन्ध को प्राधिकृत करने वाली विधि के कुछ उपबंध अनुच्छेद 25-26 का अतिलंघन करते थे ।[14]

उपखंड (क) : 'किसी संपदा के या उसमें किन्हीं अधिकारों के राज्य द्वारा अर्जन के लिए उपबंध करने वाली विधि' — यह उपखंड निम्नलिखित दशाओं में लागू होता है — (क) राज्य द्वारा किसी संपदा का अर्जन,[15] या (ख) अर्जन किए बिना संपदा के अधिकारों का निर्वापन या उपान्तरण ।[16] यह उस समय लागू नहीं होगा जब किसी धारक के अधिकार न तो अर्जित किए जाते हैं, न समाप्त किए जाते हैं और न उपान्तरित किए जाते हैं जैसे, जहां संपदा का प्रबन्ध राज्य द्वारा ग्रहण कर लिए जाने के कारण अधिकार निलम्बित हो जाते हैं ।[16]

---

9 *कालका देवी संस्थान* बनाम *एम आर टी*, ए. 1970 एस सी 439 (*442*) ।

10 *हरियाणा राज्य* बनाम *चानन*, ए 1967 एस.सी 1654 (पैरा 34) । यथासंशोधित अनुच्छेद 31क की सांविधानिकता की *वामन राव* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस सी. 271 के मामले मे पुष्टि की गई ।

11. *महंत* बनाम *उडीसा राज्य*, ए 1967 एस सी. 59 (*62*) [यह उसके प्रतिकूल है जो अनुच्छेद 31ख में अभिनिर्धारित किया जा चुका है, देखिए अनुच्छेद 31ख के नीचे] ।

12. *महेन्द्रन* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1990 एस.सी. 404 ।

13. अनुच्छेद 31 का चवालीसवें संशोधन अधिनियम द्वारा लोप किए जाने पर, उस अनुच्छेद के निर्देश का भी अनुच्छेद 31क के खंड (क) से लोप किया गया (देखिए ऊपर पादटिप्पण 4) ।

14. *आयुक्त, एच.आर.ई.* बनाम *लक्ष्मीन्द्र*, (1954) एस.सी.आर. 1005 ।

15. *अजीत सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 856 (*859-60*) ।

16. *हमनलाल* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 168 (*175*) ।

यह आवश्यक नहीं है कि अधिनियम में यह अभिव्यक्त रूप से कथन किया गया हो कि संपदा या उसमें के अधिकार राज्य को अन्तरित और उसमें निहित किए गए हैं ।[16] यदि अधिनियम के उपबंधों से यह प्रकट होता है कि राज्य द्वारा अर्जन किया गया है तो यही पर्याप्त होगा ।[16] अर्जन तुरंत हो यह भी आवश्यक नहीं है । अर्जन धीरे-धीरे भी हो सकता है या किसी मध्यवर्ती व्यक्ति की प्रेरणा से भी हो सकता है जैसे भूधारी की प्रेरणा पर । यदि संपदा के अधिकार की समाप्ति राज्य द्वारा प्रतिकर के संदाय से होती है तो यह विधिमान्य होगा । दूसरे शब्दों में यह खंड उस दशा में भी प्रवृत्त होगा जहां संपदा के स्वामी के सभी अधिकार राज्य को अन्तरित हो जाते हैं और उस दशा में भी जहां कुछ ही अधिकार अन्तरित होते हैं ।[16]

किसी संपदा में अधिकारों का अर्जन और उन अधिकारों के निर्वापन या उपान्तरण के बीच अन्तर यह है कि अर्जन में हितग्राही राज्य होता है किंतु अन्य मामलों में नहीं ।[16-17] जहां पट्टेदार के अधिकार समाप्त हो जाते हैं वहां यदि पट्टा राज्य के अधीन है तो यह अर्जन होगा किंतु यदि पट्टा किसी प्राइवेट व्यक्ति से लिया गया है तो यह निर्वापन होगा ।[16] यदि किसी जागीर के अनुदान की किसी शर्त को भंग किया जाता है और परिणामस्वरूप जागीर ले ली जाती है तो यह अर्जन नहीं है । किंतु यदि लोक प्रयोजन के लिए राज्य किसी जागीरदार की संपत्ति ले लेता है तो यह अनुच्छेद 31क के अर्थान्तर्गत अर्जन होगा ।[18] दूसरी ओर किसी भूस्वामी को शोध्य (जो अभी प्राप्त नहीं हुआ है) भाटक के बकाया का अर्जन संपदा का अर्जन नहीं है और न ही अनुच्छेद 31क के अर्थान्तर्गत उसमे से किसी अधिकार का अर्जन है । यह धन का अर्जन है जो अनुच्छेद 31क(1)(क) के प्रविषय के बाहर है ।[19]

अनुषंगी अध्युपाय सम्मिलित किए जा सकते हैं — संपदा के अर्जन की विधि को केवल इस कारण अनुच्छेद 31क(1) के संरक्षण से वंचित नहीं किया जा सकता कि उसमें कोई अनुषंगी उपबंध भी हैं ।[17] उदाहरण के लिए, —

(i) उन संपत्तियों से अनुलग्न भूमि के अर्जन का उपबंध ।

(ii) जमींदारी के उत्सादन के लिए अधिनियम बनाए जाने के ठीक पहले अधिनियम के उपबंधों को विफल करने के उद्देश्य से कपटपूर्ण अन्तरणों के अन्वेषण और उनकी शिकायत करने के लिए उपबंध ।[20] ऐसे उपबंध संपदा के अर्जन की विधि में भूतलक्षी प्रभाव से भी जोड़े जा सकते हैं ।[21]

(iii) मध्यवर्तियों के समाप्त किए जाने के पश्चात् भूमि को स्वयं जोतने को प्रोत्साहित करने के लिए उपबंध ।[22]

(iv) खाली और बंजर भूमि का विकास ।[23]

संपदा — देखिए खंड (2)(क) के नीचे ।

उसमें के अधिकार — खंड (1)(क) वहीं लागू होता है जहां संपदा में कोई अधिकार है । व्यक्तिगत अधिकार इसके अधीन नहीं आते जैसे विक्रय से उत्पन्न होने वाला पूर्व कार्य का अधिकार ।[24]

---

17. *भगतराम* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 927 (*928*) ।

18. *अमर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 303 ।

19. *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए. 1952 एस.सी. 252; *कुंजुकुट्टी* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 2097 (*2103*) ।

20. *गजपति* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1; *कामाख्या नारायण* बनाम *कलक्टर*, (1955) एस.सी.ए. 494 (*499*) ।

21. *रघुबीर* बनाम *अजमेर राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 476 (*477*) ।

22. *के.जे. कोल कंपनी* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1960 कलकत्ता 646 (*662*) ।

23. *रणजीत सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 632 ।

24. *बालाभाऊ* बनाम *बापूजी*, *ए. 1957 मुंबई 233 एफ.बी.* ।

इस अभिव्यक्ति में किसी भूधृति के बन्धकदार[25] का हित होता है, किसी संपत्ति में भूमिगत खनिज अधिकारों के पट्टेदार या उपपट्टेदारों का हित होता है[26] या अपनी भूमि में बाजार या मेला लगाने का अधिकार होता है जो कि भूमि में अन्तरणीय हित है,[27] पूर्ण निर्धारण और वास्तविक भाटक के बीच अन्तर को अपने पास रखने का "इनामदार" का हित इसमें आता है ।[28]

'अधिकारों पर निर्वापन' — इस अभिव्यक्ति में संपदा के अधिकार का ऐसा निर्वापन होता है जिसमें राज्य द्वारा अर्जन की प्रक्रिया नहीं होती ।[29] किंतु इसमें किसी संपदा का प्रबन्ध ग्रहण नहीं होता ।[16] इसलिए यदि संपत्ति का अन्तरण किसी कृषि सुधार की स्कीम का भाग है तो एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को अन्तरण का उपबंध करने वाला विधान भी इस अनुच्छेद का संरक्षण पाएगा ।[30] कृषि सुधार के एक अधिनियम में भूस्वामी की धृति की अधिकतम सीमा तय की गई थी जो वह अपनी व्यक्तिगत जोत में रख सकता था । जो भूमि अधिक पाई गई उसे भूधारियों को अन्तरित कर दिया गया । इस खंड को संरक्षण मिलेगा ।[29-31]

यदि उद्देश्य कृषि सुधार नहीं है तो अनुच्छेद 31क(1)(क) राज्य को यह शक्ति नहीं देता कि वह किसी संपदा के स्वत्वधारी की सपत्ति किसी अन्य व्यक्ति में निहित कर दे ।[30-31] उदाहरण के लिए आवास या गंदी बस्ती की सफाई के लिए ।[32]

कोचुन्नी के दूसरे वाद के पश्चात्[30] कृषि सुधार का उदार निर्वचन किया गया है । इसके अन्तर्गत निम्नलिखित हैं :

(i) ग्रामीण अर्थ व्यवस्था के विकास का उपबंध[23] जिसमें चकबन्दी सम्मिलित है ।[23]

(ii) नगर और ग्राम के क्षेत्रों की समुचित योजना ।[32] इसमें गंदी बस्ती की सफाई भी है ।[32]

(iii) भूमि के कुछ थोडे से स्वामियों के हाथों में संकेन्द्रण रोकने के लिए भूस्वामी और अभिधारी के बीच भूमि का साम्यापूर्ण वितरण ।[28]

(iv) कृषि भूमि की अधिकतम सीमा लागू करना और अधिक पाई गई भूमि का भूमिहीनों या समाज के दुर्बल वर्गों में वितरण ।[33-34]

(v) कृषि सुधार के अनुषंगी उपबंध,[16] उदाहरण के लिए कृषि सुधार की विधि को विफल करने के लिए किए गए अंतरणों का शून्य घोषित किया जाना ।[34]

पूरे देश में कृषि सुधार का रूप एक ही नहीं हो सकता । स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार, अधिक भूमि की उपलब्धि, कृषि के आधुनिक तरीकों आदि के अनुसार इसका रूप भिन्न होगा ।[35] यदि किसी विधि का उद्देश्य कृषि उत्पादन[36] या कृषकों के बीच भूमि का साम्यापूर्ण वितरण करना और किसानों का कल्याण करना है, तो ऐसी विधि कृषि सुधार की विधि कहलाएगी ।

---

25 *सुरपत* बनाम *पश्चिमी बंगाल*, (1959) 68 सी.डब्ल्यू.एन. 571 (*576*) ।

26 *बिहार राज्य* बनाम *उमेश*, ए 1962 एस.सी. 50 (*51*) ।

27. *बिहार राज्य* बनाम *रामेश्वर*, ए 1961 एस.सी. 1649 (*1654*) ।

28. *गगाधर* बनाम *मुंबई राज्य*, ए 1961 एस.सी. 288, *श्रीनिवास* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 1518 (पैरा 7) ।

29 *श्रीराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 459 (*470*) ।

30. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य (II)*, ए 1960 एस.सी. 1080 ।

31. *सोनापुर टी कंपनी* बनाम *आयुक्त*, ए. 1962 एस.सी. 137 ।

32. *वज्रवेलु* बनाम *विशेष उपायुक्त*, ए. 1965 एस.सी 1017 ।

33. *नंदलाल* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 2097 (पैरा 6) ।

34. *अम्बिका* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1762 (पैरा 6, 13) ।

35. *फिदा अली* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 1522 (पैरा 17) ।

36. *केरल राज्य* बनाम *सिल्क मैन्यूफैक्चरिंग कंपनी*, ए. 1973 एस.सी. 2734 (पैरा 19, 30) ।

न्यायालय को यह अवधारित करने के लिए कि किसी विधि में कृषि सुधार की स्कीम है या नहीं उस अधिनियम के उपबंधों की समग्र रूप से परीक्षा करनी होगी । विधान मंडल द्वारा दिया गया नाम निश्चायक नहीं होगा ।[35]

जब तक सभी अधिकार समाप्त नहीं हो जाते तब तक अधिकारों का निर्वापन नहीं होता । अधिकार का निलम्बन ही पर्याप्त नहीं है ।

'ऐसे अधिकारों का उपान्तरण' — अनुच्छेद 31क के संदर्भ में उपान्तरण शब्द से अभिप्रेत है किसी नागरिक की संपत्ति के अधिकारों मे सारवान उपान्तरण । इसे निर्वापन शब्द के संदर्भ में समझा जाना चाहिए । यदि कोई भूस्वामी अपनी संपत्ति का प्रबन्ध करने के लिए अनर्ह है तो उस प्रबन्ध के अधिकार का निलम्बन, उपान्तरण में नहीं आएगा ।[37] इसका स्वामित्व के अधिकार के निलम्बन से भेद किया जाना चाहिए ।[38]

निम्नलिखित के बारे में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि वह इस उपबंध के अर्थ में उपान्तरण है —

(i) भूस्वामी के हक का अभिधारी को अन्तरण ।[39]

(ii) कोई विधि जो भूस्वामी के अपनी भूमि का व्यवस्थापन करने और उसे अपनी इच्छानुसार किसी व्यक्ति को देने के अधिकार का उपान्तरण करती है ।[37]

(iii) कोई विधि जो किसी भूस्वामी के अपनी संपदा के अधिकतम सीमा मे अधिक वाले क्षेत्र को जोतने के अधिकार का उपान्तरण करती है ।[39]

(iv) कोई विधि जो भूस्वामी के अपनी भूमि का अन्तरण करने के अधिकार का उपान्तरण करती है ।[39]

(v) कोई विधि जो सीमित अवधि के लिए स्वामी के अधिकार को निलम्बित करती है ।[39]

'संपदा में अधिकारों का निर्वापन या उपान्तरण' — इन शब्दों का यह अर्थ लगाया गया है कि वे ऐसी विधि के प्रति निर्देश करते हैं जो कृषि अर्थव्यवस्था मे भूधृति की प्रणाली या भूस्वामी और अभिधारी के परस्पर अधिकारों को प्रभावित करके परिवर्तन लाना चाहती है ।[40] जिस विधि में कृषि सुधार के प्रति कोई निर्देश नही है उसे यह अनुच्छेद संरक्षण प्रदान नही करेगा,[40] जैसे, —

संपदा के अधिकारों को यथावत रखते हुए और कृषि सुधार के उद्देश्य से काम न करते हुए किसी संपदा के स्वत्वधारी को विनिहित करके उसकी कुटुम्ब के कनिष्ठ सदस्यों में (जो अभिधारी नहीं हैं) संपदा निहित करना ।[40]

निम्नलिखित कृषि सुधार के लिए किए गए अध्युपायो के उदाहरण है, —

(i) कोई विधि जो किसी मध्यवर्ती या किसी अन्य धारक की भूधृति पर अधिकतम सीमा लगाती है,[41] अधिक पाई गई भूमि को लेकर उन्हें वास्तविक कृषकों को देती है[29] चाहे ऐसे व्यवस्थापन में कृषको से यह अपेक्षा की जाती हो कि वे अधिक पाई गई भूमि के अर्जन के लिए राज्य द्वारा मध्यवर्ती को दिए जाने वाले प्रतिकर के लिए युक्तियुक्त अभिदाय करें ।[31]

(ii) कोई विधि जो कुछ भूमि को ग्राम समाज के फायदे के लिए किसी प्राधिकृत निकाय मे निहित करती है जैसे ग्राम पंचायत में ।[41]

यह अवधारित करने के लिए कि विधि का उद्देश्य कृषि सुधार है अन्य अधिनियमों के प्रति निर्देश किया जा सकता है जो आक्षेपित अधिनियम के साथ मिलकर सुधार की संपूर्ण योजना बनाते हैं ।[41]

---

37. *रघुबीर* बनाम *प्रतिपाल्य अधिकरण*, (1953) एस सी आर 1049 ।
38. *बाराकार कोल कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए 1961 एस सी 954 (*962*) ।
39. *आत्माराम* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस सी 519 ।
40. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य (II)*, ए. 1960 एस.सी. 1080 (*1086-87*); *उपायुक्त* बनाम *दुर्गानाथ*, ए. 1968 एस.सी. 394 ।
41. *इन्दर सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस सी 1776 (*1778*) ।

उपखंड (ख) : संपत्ति का प्रबन्ध ग्रहण करना — यह उपखंड *शोलापुर* के दो वादों के प्रभाव को समाप्त करने के आशय से बनाया गया है ।[42]

यह ध्यान देने योग्य है कि उपखंड (ख) केवल औद्योगिक उपक्रमों तक ही सीमित नहीं है । इसका विस्तार सभी प्रकार की संपत्ति पर है ।[43] राज्य सीमित अवधि के लिए स्थावर या जंगम किसी भी संपत्ति का प्रबन्ध ग्रहण कर सकता है । उसे अनुच्छेद 14, 19 या 31 के प्रति निर्देश से न्यायालय में अपनी कार्यवाही का औचित्य दिखाने की आवश्यकता नहीं है ।

उपखंड (ख) निम्नलिखित दशाओं में लागू होता है, —

(क) संपत्ति सीमित अवधि के लिए ली गई हो[43] अनिश्चित अवधि के लिए नहीं और उसके द्वारा कब्जे के अधिकार का अन्तरण नहीं होना चाहिए ।[44] यदि इस बात की संभावना है कि भूमि स्वामी को लौटा दी जाएगी तो केवल इतने से यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि प्रबन्ध सीमित अवधि के लिए लिया गया है ।[43]

(ख) संपत्ति लोकहित में या उचित प्रबन्ध सुनिश्चित करने के लिए ली जा सकती है । किंतु ये दो बातें वस्तुपरक रीति से साबित की जानी चाहिए । लोकहित के उदाहरण हैं — अभिधारियों के अधिकारों के अतिलंघन को रोकना,[43] कृषि के लिए भूमि का पूरा और बेहतर उपयोग,[37] जीवन बीमा पालिसियों के धारकों के हित की रक्षा ।[42, 45] जहां संपत्ति का लिया जाना अधिकारी के व्यक्तिपरक समाधान पर निर्भर करता है वहां यह शर्त पूरी नहीं होती ।[43]

(ग) संपत्ति राज्य द्वारा ली जानी चाहिए ।[43]

(घ) यदि उपरोक्त शर्त पूरी हो जाती हैं तो जो अनुषंगी अध्युपाय हैं उन्हें भी संरक्षण प्राप्त होगा ।

उपखंड (ग) : निगमों का समामेलन — इस खंड का उद्देश्य एक ही क्षेत्र में काम करने वाले प्रतिस्पर्धी उद्यमियों के बीच हानिकर प्रतियोगिता समाप्त करना है जहां ऐसा करना लोकहित में हो । इस खंड के कारण यह आक्षेप नहीं किया जा सकता कि विद्यमान कंपनियों का समामेलन अनुच्छेद 19(1)(च) द्वारा प्रत्याभूत अंशधारकों के साथ अयुक्तियुक्त निर्बन्धन है ।

उपखंड (घ) : निदेशकों या अंशधारकों के अधिकारों का निर्वापन या उपान्तरण आदि — *चिरंजीत लाल* के वाद में यह प्रश्न उठाया गया था कि क्या किसी कंपनी में अंशधारक का मतदान करने का अधिकार "संपत्ति" है या साम्पत्तिक अधिकार से उत्पन्न होने वाला एक व्यक्तिगत विशेषाधिकार है । इस संशोधन द्वारा ऐसे प्रश्न से बचने के लिए यह उपबंध किया गया है कि यदि किसी विधि द्वारा अंशधारियों के मत देने के अधिकार प्रभावित होते हैं तो इससे अनुच्छेद 19(1)(च) या 31 का उल्लंघन नही होगा । प्रबन्ध अभिकर्ता, सचिव और कोषाध्यक्षों तथा प्रबन्धक निदेशक या प्रबन्धकों के अधिकारों के बारे में भी ऐसा ही उपबंध हुआ है । खंड (घ), एक प्रकार से खंड (ख) को बल प्रदान करता है किंतु इसकी परिधि बहुत अधिक व्यापक है । जहां राज्य प्रबन्ध ग्रहण नहीं करता है किंतु ऐसी विधि बनाता है जिससे निर्दिष्ट व्यक्तियों के अधिकारों का निर्वापन या उपान्तरण हो जाता है वहां ऐसी विधि पर उपर्युक्त आधारों पर आक्षेप नहीं किया जा सकेगा ।

---

42. *चिरंजीतलाल* बनाम *भारत संघ*, (1950) एस.सी आर. 869; *द्वारकादास* बनाम *शोलापुर स्पिनिंग एंड वीविंग कंपनी*, (1954) एस.सी. 674 (*583*) ।
43. *रमनलाल* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 168 (*176*) ।
44. *केरल राज्य* बनाम *मदर प्रोविन्शियल*, ए. 1970 एस.सी. 2079 (*2085*) ।
45. *ट्रोपिकल इंश्योरेंस कंपनी* बनाम *भारत संघ*, (1955) 2 एस.सी.आर. 517 (*519*) ।

उपखंड (ङ) : खनन पट्टों के अधीन अधिकारों का निर्वापन या उपान्तरण — कुछ मामलों में, खान और खनिज (विनियमन और विकास) अधिनियम, 1948 के अधीन बनाए गए खनन रियायत नियम की युक्तियुक्तता पर आक्षेप किया गया था क्योंकि उसमें लाइसेंस देने और रद्द करने के विषय में कार्यपालिका को कुछ विवेकाधिकार दिए गए थे । इस उपखंड के अंतःस्थापन के फलस्वरूप अनुच्छेद 19 के उल्लंघन के आधार पर आक्षेप नहीं हो सकेगा ।[46]

विद्यमान पट्टे या लाइसेंस के रद्द या उपान्तरित किए जाने के कारण अनुच्छेद 31(2) के अधीन संदेय प्रतिकर की मांग भी अब नहीं हो सकती ।[47] इस संशोधन का प्रभाव बहुत व्यापक है । इसमें लाइसेंस के अतिरिक्त करार और पट्टे भी आते हैं । संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, राज्य को यह शक्ति देता है कि वह अनुच्छेद 14, 19 या 21 का अनुपालन किए बिना ही खनिज विकास से संबंधित संविदाजात अधिकारों को प्रभावित कर सकता है ।[47]

निर्वापन या उपान्तरण में किसी खान के स्वामी या पट्टेदार के अधिकारों का सीमित अवधि तक निलम्बन (प्रबन्ध के अधिकार सहित)[38] और राष्ट्रीयकरण भी है ।[48]

पहला परन्तुक — परन्तुक में अनुच्छेद 31(3) के अन्तर्गत भी उपबंध बनाए गए हैं जिसके कारण यह निर्णय किया जा सकता है कि राज्य विधि में अनुच्छेद 31(2) की अपेक्षाएं पूरी की गई हैं या नहीं । अन्तर यह था कि उन व्यक्तियों को जिनकी संपदाएं अनुच्छेद 31क में दी गई संपदा की परिभाषा में आती हैं अनुच्छेद 32 के उपचार से वंचित किया गया था । राष्ट्रपति ही इस बात के एकमात्र निर्णायक थे कि क्या संपदा का अर्जन करने वाली राज्य विधि में अनुच्छेद 31(2) की अपेक्षाओं का पालन किया गया है या नहीं ।[49] अब अनुच्छेद 31(2) का लोप कर दिया गया है । यह परन्तुक अनुच्छेद 31क(1) के अधीन विधि की विधिमान्यता के लिए एक पृथक् अपेक्षा के रूप में है ।

यह परन्तुक अनुच्छेद 31क(1) के अधीन आने वाले मूल विधेयक को भी लागू होता है और ऐसे अधिनियम का संशोधन करने वाले विधेयक को भी ।[50]

दूसरा परन्तुक — दूसरा परन्तुक 17वें संशोधन अधिनियम, 1964 द्वारा अंतःस्थापित किया गया । उसी संशोधन द्वारा खंड (2)(क)(ii) अंतःस्थापित करके रैयतवाड़ी को अनुच्छेद 31क(1)(क) के अधीन लाया गया । अनुच्छेद 31क(1)(क) का मूल उद्देश्य उन जमींदारों और मध्यवर्तियों की भूमि का अर्जन करना था जो केवल लगान प्राप्त करते थे और ऐसी भूमियों के अनिवार्य अर्जन की विधियों को अनुच्छेद 19(1)(च) या 31(2) के अधीन सांविधानिकता के आक्षेप से बचाना था । किंतु शीघ्र ही यह अनुभव हुआ कि जहां रैयतवाड़ी पद्धति के अधीन अभिधारी बड़ी मात्रा में भूमि धारित करता है वहां ऐसे क्षेत्रों में भूमि सुधार की कोई स्कीम तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक कि ऐसे अभिधारी की व्यक्तिगत जोत की अपेक्षाओं से अधिक मात्रा की भूमि का अर्जन करके राज्य उसे भूमिहीनों में वितरित न कर दे । इसलिए ऐसी भूमि को अनुच्छेद 31(1)(क) के अधीन लाया गया । किंतु रैयतवाड़ी पद्धति के अधीन भूमि धारण करने वाला अभिधारी मध्यवर्ती नहीं था । वह स्थायी व्यवस्थापन के अधीन भू-स्वामी था । इसलिए दूसरे परन्तुक में यह उपबंध किया गया कि (सीमा के भीतर) उनकी भूमि के अर्जन के लिए विधि को अनुच्छेद 31(1)(क) का संरक्षण नहीं मिलेगा जब तक कि उनको उनसे ली गई भूमि का पूरा बाजार मूल्य न दे दिया जाए ।[31]

इस परन्तुक में "संपदा का अर्जन" अभिव्यक्ति का वही अर्थ है जो खंड (1)(क) में

46. *बिहार माइन्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1967 एस.सी. 847 ।
47. *गुजरात पोटरी वर्क्स* बनाम *सूद*, ए. 1967 एस.सी. 964 (*968*) ।
48. *तारा प्रसाद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 1682 ।
49. *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए. 1952 एस.सी. 252 (*310*) ।
50. *संकर्षण* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 59 (*62*) ।

है ।[51] इस परन्तुक को लागू होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि हक का अर्जन किया जाए । इस परन्तुक के पीछे भावना यह है कि यदि कोई व्यक्ति अधिकतम सीमा के भीतर भूमि को इस समय जोत रहा है और वह उसके जीवनयापन का स्रोत है तो उसे अनुच्छेद 31क के अधीन आने वाली किसी विधि के द्वारा उसकी भूमि से वंचित नहीं किया जाना चाहिए जब तक कि उसे बाजार भाव से प्रतिकर न दे दिया जाए ।[51] यदि राज्य ने अपने प्रयोजन के लिए उस भूमि के सारवान रूप से सभी अधिकार अर्जित कर लिए हैं परंतु हक स्वामी के ही पास हैं तो इस शर्त का पालन किया जाना चाहिए । यदि अर्जन का फायदा राज्य को नहीं मिलता तो यह परन्तुक लागू नहीं होगा ।[51]

अनुच्छेद 12 में दी गई राज्य की परिभाषा के अन्तर्गत पंचायत है । पंचायत की आय के लिए भूमि का आरक्षण अनुच्छेद 31क(1) के दूसरे परन्तुक के अर्थान्तर्गत अर्जन है ।[52] किंतु मार्ग, खेलने की जगह आदि के सामान्य प्रयोजन के लिए भूमि का आरक्षण अर्जन नहीं है क्योंकि इसका फायदा राज्य को नहीं मिलता ।[51]

'प्रवृत्त विधि' — कोई विधि तब तक प्रवृत्त नहीं होती है जब तक कि उसे विधायी अधिनियमिति द्वारा प्रवृत्त न किया जाए या उसे किसी प्रत्यायोजित प्राधिकार के प्रयोग द्वारा प्रवृत्त न किया जाए ।[53] दूसरे परन्तुक का संरक्षण तभी मिलेगा जब कि अर्जन की तारीख को अधिकतम सीमा विहित करने वाली विधि प्रवृत्त थी ।[53]

खंड (2)(क) : 'संपदा' — यह जानने के लिए कि कोई विशिष्ट हित इस अनुच्छेद के अर्थ में संपदा है या नहीं हमें उस क्षेत्र में प्रवृत्त भूधृति संबंधी विद्यमान विधि के प्रति निर्देश करना होगा ।[54] दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 31क(1) न केवल संपदा के प्रति निदेश करता है बल्कि उसके स्थानीय समतुल्य शब्द के प्रति भी ।[31] रैयतवाड़ी क्षेत्रों में "संपदा" का गठन करने के लिए यह आवश्यक नहीं था कि जमींदार या अन्य मध्यवर्ती विद्यमान हो ।[55]

संपदा शब्द में मूल संकल्पना यह है कि संपदा का धारण करने वाला व्यक्ति भूमि का स्वत्वधारी हो और उसका राज्य से सीधा संबंध हो । यह राज्य को भू-राजस्व देता हो, उन अपवादात्मक स्थितियों को छोड़कर जहां संपूर्ण भू-राजस्व या उसके भाग की माफी दी गई है ।[55-56] यह व्यक्ति भूधृति से संबंधित विधि के अनुसार भूमि धारण करता है ।

उपखंड (i) : 'जागीर या अन्य इसी प्रकार का अनुदान' — जागीर शब्द का अर्थ सेवा के लिए दिए गए अनुदान तक ही सीमित नहीं है । इसका सामान्य अर्थ किया जाना चाहिए जिससे इसके अन्तर्गत उन व्यक्तियों को जो कृषक नहीं थे, दिए गए सभी अनुदान आ जाएंगे जिनसे भू-राजस्व से संबंधित अधिकार प्रदान किया गया था ।[57]

उपखंड (iii) — 'बंजर भूमि', 'वन भूमि' आदि उपखंड के अधीन संपदा की परिभाषा के अन्तर्गत तभी आएंगी जब वे कृषि से अनुषंगी प्रयोजनों के लिए धारित हैं या भाटक पर दिए गए हैं ।[58]

खंड (2)(ख) : संपदा से संबंधित अधिकार — इस परिभाषा का उदार निर्वचन किया

---

51. *अजीत सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1967 एस.सी. 856 (*860-62*) ।
52. *भगतराम* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 927 (*928*) ।
53. *उड़ीसा राज्य* बनाम *चन्द्रशेखर*, ए. 1970 एस.सी. 398 (*401*) ।
54. *श्रीराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 459 (*468*) ।
55. *पुरुषोतमन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 694 (*704-05*) ।
56. *गुल्ला भाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1110 (*1115*) ।
57. *अमर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 303 (*352*) ।
58. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *आनन्द*, ए. 1967 एस.सी. 661 (*664*); *गुल्ला भाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1110 (*1115-16*) ।

जाना चाहिए ।[31] संपदा से अनुलग्न भूमि पर मेला लगाने का अधिकार भी इसके अन्तर्गत है ।[59]

'अन्य मध्यवर्ती' — संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा संपदा की परिभाषा में 'रैयत' और 'अवर रैयत' शब्द जोड़े गए । रैयत और अवर रैयत वे व्यक्ति हैं जो कृषि के प्रयोजन के लिए किसी स्वत्वधारी या अभिधारी के अधीन भूमि धारण करते हैं और मध्यवर्ती नहीं हैं । रैयत और अवर रैयत शब्द परिभाषा में इसलिए रखे गए जिससे वे व्यक्ति जो मध्यवर्ती नहीं थे उसमें आ जाएं । इस खंड में आने वाला पद "या अन्य मध्यवर्ती" रैयत और अवर रैयत शब्दों को लागू होकर उनके विशेषण का काम नही करता ।

परिणामस्वरूप जब भी कोई भूमि 'संपदा' के अन्तर्गत आती है तो ऐसी भूमि का अर्जन खंड (2)(ख) के अन्तर्गत आएगा ।

अनुच्छेद 31क-31ग — इन तीन अनुच्छेदों का एक प्रमुख लक्षण यह है कि वे वर्णसंकर हैं । यद्यपि इन दोनों का समान उद्देश्य है मूल अधिकारों का भागतः या पूर्णतः अपवाद गठित करना ।

(क) अनुच्छेद 31क और 31ख, जैसे वे 1951 में अतःस्थापित किए गए थे, संपत्ति की विधियों से संबंधित थे ।[60] इसलिए उन्हें अनुच्छेद 31 के ठीक बाद में रखा गया था (अनुच्छेद 31 में संपत्ति के अधिकार की प्रत्याभूति थी) । ये दोनों अनुच्छेद एक प्रकार से अनुच्छेद 31 के अपवाद थे । अनुच्छेद 31क में यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि ये संपदा के अर्जन की विधियों के संरक्षण के लिए है । नवीं अनुसूची मे जिसमें अनुच्छेद 31ख की परिधि को स्पष्ट किया गया था, 1951 में केवल 13 मदें थी जो सभी भूमि सुधार के संबंध में थीं ।

अनुच्छेद 31क-31ख का सादापन 1955 मे समाप्त हो गया जब इसमें अनेक खड जोड़े गए जिनका संबध कारबार के अधिकार से था । उदाहरण के लिए किसी खनिज को प्राप्त करने के लिए किसी करार पट्टे या लाइसेंस से संबंधित विधि ।[61] इसी संशोधन द्वारा 1955 में नवीं अनुसूची में 7 नई मदें जोडी गई । इनमें से कुछ कारबार से संबंधित थी जैसे बीमा कारबार था या ऐसे उद्योग जिनका केन्द्र द्वारा विनियमन आवश्यक था । इसके बाद यह नहीं कहा जा सकता कि अनुच्छेद 31ख संपत्ति से संबंधित विधि तक ही सीमित था ।

संविधान 39वें संशोधन अधिनियम, 1975 और 40वें संशोधन अधिनियम, 1976 के पश्चात् अनुच्छेद 31ख का आरंभिक स्वरूप बिल्कुल नष्ट हो गया । इनके द्वारा नवीं अनुसूची में 101 अधिनियम जोडे गए । इनमे से कुछ का संपत्ति या कारबार के अधिकार से कोई संबंध नहीं है । वे मूल अधिकारों पर निर्बन्धन लगाते हैं । उदाहरण के लिए *आक्षेपणीय प्रकाशन निवारण अधिनियम*, 1976[62] अभिव्यक्ति स्वातंत्र्य पर निर्बन्धन था, *आंतरिक सुरक्षा अधिनियम*, 1971 दैहिक स्वतंत्रता पर निर्बन्धन था । कुछ अधिनियम ऐसे भी हैं जिनका किसी विशिष्ट मूल अधिकार से कोई संबंध नहीं है जैसे संघ लेखा विभागीकरण (कार्मिक अंतरण) अधिनियम, 1976 (मद 133), लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951, निर्वाचन विधि (संशोधन) अधिनियम 1975 (मद 87) ।[62क] अब यह स्पष्ट हो गया है कि अनुच्छेद 31ख का उपयोग किसी भी विधि को मूल अधिकारों से बचाने

---

59. *बिहार राज्य बनाम रामेश्वर*, ए. 1961 एस.सी. 1649 (*1654*) ।
60. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 के उद्देश्यों और कारणों का कथन देखिए (पैरा 1-2) ।
61. तुलना कीजिए, *हरियाणा राज्य* बनाम *चानन मल*, ए 1976 एस.सी. 1654 (पैरा 34) ।
62. यह अब निरसित हो गया है और नवीं अनुसूची से इसका लोप कर दिया गया है ।
62क. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा प्रविष्टि 87 का 20-6-1979 से लोप कर दिया गया ।

के लिए किया जाएगा । इसके लिए उस विधि को नवीं अनुसूची में प्रविष्ट करना पर्याप्त होगा ।[63]

(ख) अनुच्छेद 31क और 31ग ऐसे विधान को अनुमति प्रदान करते हैं जो केवल अनुच्छेद 14, 19 और 31 द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारों पर प्रहार करता है । अनुच्छेद 31ख भाग 3 में दिए गए सभी मूल अधिकारों के विरुद्ध पूरा कवच प्रदान करता है ।

कुछ अधिनियमों और विनियमों का विधिमान्यकरण ।

[64]**31ख.** *अनुच्छेद 31क में अंतर्विष्ट उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, नवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट अधिनियमो और विनियमों में से और उनके उपबंधों में से कोई इस आधार पर शून्य या कभी शून्य हुआ नहीं समझा जाएगा कि वह अधिनियम, विनियम या उपबध इस भाग के किन्हीं उपबंधों द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी से असंगत है या उसे छीनता है या न्यून करता है और किसी न्यायालय या अधिकरण के किसी प्रतिकूल निर्णय, डिक्री या आदेश के होते हुए भी, उक्त अधिनियमों और विनियमों में से प्रत्येक, उसे निरसित या संशोधित करने की किसी सक्षम विधान मंडल की शक्ति के अधीन रहते हुए, प्रवृत्त बना रहेगा ।*

अनुच्छेद 31ख का उद्देश्य — अनुच्छेद 31ख को अतिशय सावधानी के रूप में अंतःस्थापित किया गया है जिससे इस बात के होते हुए भी कि किसी न्यायालय या अधिकरण के विनिश्चय के अनुसार कोई अधिनियम मूल अधिकार का उल्लंघन करने के कारण शून्य घोषित किया गया है संविधान की नवीं अनुसूची में सम्मिलित अधिनियमो को संरक्षण प्राप्त होगा । अनुच्छेद 31ख की कोई बात अनुच्छेद 31क के प्रविषय को कम नहीं करेगी ।[65]

अनुच्छेद 31ख, अनुच्छेद 31क में अन्तर्विष्ट नियम का उदाहरण नहीं है । यह एक स्वतंत्र अनुच्छेद है ।[66] इसके द्वारा नवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट कुछ अधिनियमों को विधिमान्य किया गया है, उदाहरण के लिए *मध्य प्रदेश स्वत्वधारी अधिकार उत्सादन अधिनियम* (1951 का 1) । उच्चतम न्यायालय ने इस अधिनियम को विधिमान्य ठहराया यद्यपि यह तर्क दिया गया था कि प्रतिकर अवास्तविक और अपर्याप्त है ।[67]

अनुच्छेद 31ख का प्रविषय — अनुच्छेद 31ख का सरक्षण पाने के हकदार केवल अधिनियम हैं । उन अधिनियमों द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में निकाले गए आदेश या अधिसूचनाओं को संरक्षण नहीं मिलता ।[68] पूर्ववर्ती मामलों में "व्युत्पन्न उन्मुक्ति" का सिद्धांत प्रतिपादित किया गया था किंतु विनिश्चय में उसे नहीं माना गया ।[69,70] इस प्रस्तावित सिद्धांत के अनुसार जब किसी अधिनियम या विनियम को नवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट किया जाता है तब सब अधीनस्थ विधान जो अधिकार के अन्तर्गत हैं नवीं अनुसूची का संरक्षण पाने के हकदार हो जाते हैं । नवीं अनुसूची में सम्मिलित अधिनियमों का निर्वचन उनके शब्दों को सामान्य अर्थ प्रदान करते हुए किया जाना चाहिए । इस विषय में किसी पूर्वग्रह से काम

---

63 जब कोई व्यक्ति किसी अधिवक्ता के पास किसी अधिनियम की सांविधानिकता पर आक्षेप कराने के लिए पहुंचता है तो अधिवक्ता को सबसे पहले यह देखना चाहिए कि क्या वह अधिनियम नवी सूची में सम्मिलित अधिनियमों की लंबी सूची में तो उल्लिखित नहीं है ।

64. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा जोडा गया ।

65. *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, (1952) एस.सी.आर 889 ।

66. *जयवंतसिंहजी* बनाम *गुजरात राज्य*, (1962) सप. (2) एस.सी.आर. 411 ।

67. *विशेश्वर* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 1020 ।

68. *प्राग आइस मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 1296 (पैरा 44-45, 5:2 का बहुमत) ।

69. *वेंकटगिरि* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 32 ।

70. *लताफत* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 2070 ।

नहीं करना चाहिए ।[69] अनुच्छेद 31ख किसी विधि को भाग 3 में सम्मिलित मूल अधिकारों में से किसी से भी असंगत होने से बचा लेता है जैसे अनुच्छेद 19(1)(च),[69-70] 31(2),[71] या अनुच्छेद 31क(1) का तीसरा परन्तुक,[72] या यदि वह संविधान के पहले की विधि है तो भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 299(2) उस उल्लंघन के आधार पर अविधिमान्य होने से बचा लेता है ।[73]

इस तर्क का कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि आक्षेपित विधि किसी निदेशक तत्व को लागू नहीं करती और इसलिए उसे अनुच्छेद 31ख का संरक्षण नहीं दिया जा सकता ।[74]

नवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट अधिनियम और विनियम आदि — 1. अनुच्छेद 31ख का उद्देश्य नवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विधियों को संरक्षण प्रदान करना है । नवीं अनुसूची में संशोधन किया जा सकता है इसलिए अनुच्छेद 31ख की परिधि इस बात से मापी जाएगी कि नवीं अनुसूची में कितने अधिनियम सम्मिलित हैं ।[75]

2. अनुच्छेद 31ख में यह कहा गया है कि नवीं अनुसूची में किसी अधिनियम को सम्मिलित करने का यह प्रभाव होगा कि वह अधिनियम मूल अधिकार का उल्लंघन करने के आधार पर कभी भी शून्य हुआ नहीं समझा जाएगा । अधिनियम के इस प्रकार सम्मिलित किए जाने का यह परिणाम होता है कि यदि कोई अधिनियम न्यायालय द्वारा इस आधार पर शून्य घोषित कर दिया गया है तो न्यायालय की यह घोषणा निष्प्रभावी हो जाएगी और सम्मिलित किया गया अधिनियम भूतलक्षी प्रभाव से अपने अधिनियमित किए जाने की तारीख से विधिमान्य हो जाएगा ।[76]

3. 24-4-1973 के पश्चात् (अर्थात् *केशवानन्द* के वाद के निर्णय की तारीख के बाद) नवीं अनुसूची में सम्मिलित अधिनियमो पर इस आधार पर आक्षेप किया जा सकेगा कि वे संविधान की आधारिक सरचना को क्षति पहुंचाते हैं ।[77]

नवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट अधिनियमों का संशोधन करने की शक्ति — अनुच्छेद 31ख द्वारा दिया गया संरक्षण अधिनियम को उसी रूप में लागू होता है जिस रूप में वे उस तारीख को थे जब संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 अधिनियमित किया गया था । इसी संशोधन से अनुच्छेद 31ख अंतःस्थापित किया गया था । यदि कोई अधिनियम बाद में सम्मिलित किया गया है तो उस तारीख तक उस अधिनियम में किए गए संशोधन सहित उसे संरक्षण मिलेगा ।[78] यदि विधान मंडल किसी अधिनियम का बाद मे संशोधन करता है तो ऐसा संशोधन संविधान के भाग 3 द्वारा प्रदत्त मूल अधिकार से सगत होना चाहिए ।[78-79] जब अनुच्छेद 31ख का संरक्षण नहीं है तो संविधान द्वारा विधान मडल की विधायी शक्ति पर अधिरोपित मर्यादाओ का भी पालन होना चाहिए ।[80]

---

71. *सरवरलाल* बनाम *हैदराबाद राज्य*, ए 1960 एस सी 862 (*866*); *रमनलाल* बनाम *गुजरात राज्य*, ए 1969 एस.सी. 168 (*175*); *राम किशन* बनाम *प्रभागीय वन अधिकारी*, ए 1965 एस सी 625 (*628*) ।

72. *कुंजुकुट्टि* बनाम *केरल राज्य*, ए 1972 एस सी 2097 (पैरा 2) ।

73. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *ब्रजेन्द्र*, ए 1961 एस सी 14, *जीजीभाई* बनाम *सहायक कलक्टर*, ए 1965 एस सी 1096 ।

74. *महावीर* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1976 पटना 256 (पैरा 14) ।

75. *गोदावरी शुगर मिल्स* बनाम *काम्बले*, ए. 1975 एस.सी 1193 ।

76. *जगन्नाथ* बनाम *प्राधिकृत अधिकारी*, (1971) 2 एस सी सी 893 (पैरा 23) ।

77. *वामन राव* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस सी 271; *कालीमाता* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी 1030 (पैरा 1-2); *श्रीनिवास* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1987 एस सी. 1518 (पैरा 6-7) ।

78. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *पाटिल*, (1968) II एस सी डब्ल्यू आर 704 (*713*) ।

79. *रमनलाल* बनाम *गुजरात राज्य*, ए 1969 एस सी 168 (*174-75*) ।

80. *सज्जन सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1965 एस सी 845 (*859*); *उडीसा राज्य* बनाम *चन्द्रशेखर*, ए. 1970 एस.सी. (*400*) ।

किंतु इन परिसीमाओं के अधीन रहते हुए विधान मंडल को नवीं अनुसूची में सम्मिलित अधिनियम का संशोधन या निरसन करने की पूरी शक्ति है ।[80]

कुछ निदेशक तत्वों को प्रभावी करने वाली विधियों की व्यावृत्ति ।

[81]**31ग.** *अनुच्छेद 13 में किसी बात के होते हुए भी, कोई विधि, जो [82][भाग 4 में अधिकथित सभी या किन्हीं तत्वों] को सुनिश्चित करने के लिए राज्य की नीति को प्रभावी करने वाली है, इस आधार पर शून्य नहीं समझी जाएगी कि वह [83][अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 19] द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी से असंगत है या उसे छीनती है या न्यून करती है [84][और कोई विधि, जिसमें यह घोषणा है कि वह ऐसी नीति को प्रभावी करने के लिए है, किसी न्यायालय में इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि वह ऐसी नीति को प्रभावी नहीं करती है] :*

परन्तु जहां ऐसी विधि किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई जाती है वहां इस अनुच्छेद के उपबंध उस विधि को तब तक लागू नहीं होंगे जब तक ऐसी विधि को, जो राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखी गई है, उसकी अनुमति प्राप्त नहीं हो गई है ।

42वें संशोधन अधिनियम द्वारा यथासंशोधित अनुच्छेद 31ग की परिधि — (i) 1971 में बनाए गए इस अधिनियम में अनुच्छेद 39(ख)-(ग) के निदेशों को प्रभावी करने वाली विधि को अनुच्छेद 14, 19 और 31 के उल्लंघन के आधार पर असांविधानिक घोषित किए जाने से सरक्षण दिया गया था ।[85] 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा इस संरक्षण का विस्तार करके उसको उन सभी विधानों पर लागू कर दिया गया जो भाग 4 में प्रगणित किसी भी निदेश को कार्यान्वित करने के लिए बनाया गया हो ।[86] इस विस्तार का प्रभाव बड़ा दूरगामी होता किंतु उच्चतम न्यायालय ने *मिनर्वा मिल* के वाद मे इसमें हस्तक्षेप किया ।[86]

(ii) इसे अनुच्छेद 14 और 19 का अभिव्यक्त रूप से अपवाद बनाया गया है इसलिए अर्थान्वियन के नियमों का आश्रय लेते हुए[87] यह अभिनिर्धारित करने की आवश्यकता नहीं है कि निदेशक तत्व का क्रियान्वयन —

(क) अनुच्छेद 14 के प्रयोजनों के लिए युक्तियुक्त वर्गीकरण है,[88] या

(ख) अनुच्छेद 19(1) द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों के प्रयोग पर युक्तियुक्त निर्बन्धन है ।

---

81. सविधान (पच्चीसवा संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 20-4-1972 से अनुच्छेद 31ग अंतःस्थापित किया गया ।

82. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा "अनुच्छेद 39 के खंड (ख) या खंड (ग) में विनिर्दिष्ट सिद्धांतों" शब्दों के स्थान पर "भाग 4 में अधिकथित सभी या किन्हीं तत्वों" शब्द प्रतिस्थापित किए गए । देखिए नीचे पाद टिप्पण 86 ।

83. अनुच्छेद 31 के परिणामस्वरूप संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा "अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 19 या अनुच्छेद 31" शब्दों के स्थान पर "अनुच्छेद 14 या अनुच्छेद 19" शब्द प्रतिस्थापित किए गए ।

84. *केशवानंद भारती* बनाम *केरल राज्य,* (1973) सप. एस.सी.आर. 1 में कोष्ठक में दिए गए शब्द "और कोई विधि .....प्रभावी नहीं करती है" असांविधानिक और अविधिमान्य घोषित किए गए । किंतु इन शब्दों का, जो अनुच्छेद 368(1) द्वारा संविधान के भागरूप थे, संविधान का और संशोधन किए बिना लोप नहीं किया जा सकता था । जनता सरकार ने संविधान (पैंतालीसवां संशोधन) विधेयक, 1978 की धारा 8 के खंड (ग) द्वारा ऐसा करना चाहा, किंतु दोनों कांग्रेस दलों के संयुक्त विरोध के परिणामस्वरूप यह हो नहीं पाया । अतएव 44वां संविधान संशोधन अधिनियम अनुच्छेद 31ग से ये शब्द निकाल नहीं सका ।

85. *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ (II),* ए. 1986 एस.सी. 2030 (पैरा 21) ।

86. *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ,* ए 1980 एस.सी. 1789 में यह संशोधन अविधिमान्य घोषित किया गया ।

87. तुलना कीजिए, *चन्द्र भवन* बनाम *मैसूर राज्य,* ए. 1970 एस.सी. 360 (पैरा 23) ।

88. तुलना कीजिए, *ओरिएन्ट वीविंग मिल्स* बनाम *भारत संघ,* ए. 1963 एस.सी. 98 (*103*) ।

(iii) विभिन्न निदेशों को क्रियान्वित करने की शक्ति, संघ और राज्य विधान मंडल[89] दोनों को है । यह देखना होगा कि निदेश से संबंधित विषय पर विधायी शक्ति का वितरण अनुसूची 7 की सूचियों के अनुसार किस प्रकार है ।

(iv) कोई अधिनियम जो राज्य की विधायी क्षमता के अन्तर्गत है इस आधार पर अविधिमान्य नहीं किया जा सकता कि वह किसी निदेशक तत्त्व का उल्लंघन करता है ।[90] न्यायालय उसका निर्वचन इस प्रकार करेगा कि वह यथासंभव निदेशक तत्त्वों से संगत हो जाए ।[91]

"भाग 4 में अधिकथित सभी या किन्हीं तत्वों को" — 1. जैसा पहले बताया गया है ये शब्द 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा "अनुच्छेद 39 के खंड (क) या खंड (ग) में विनिर्दिष्ट सिद्धांतों" शब्दों के स्थान पर रखे गए । इसका उद्देश्य अनुच्छेद 31क के संरक्षण का विस्तार उन सभी विधियों पर करना है जो सविधान के भाग 4 मे सम्मिलित सभी या किन्हीं निदेशों को कार्यान्वित करने के लिए बनाई जाएं, केवल अनुच्छेद 39(ख) या 39(ग) तक ही नहीं ।

2. उच्चतम न्यायालय ने बहुमत से *मिनर्वा मिल* के मामले में अनुच्छेद 31ग के प्रविषय में विस्तार करने के प्रयास को असफल कर दिया ।[92] न्यायालय का आधार यह था कि समस्त विधान को इस प्रकार न्यायिक पुनर्विलोकन से बाहर कर देने से आधारिक संरचना नष्ट हो जाएगी । विधियों की सांविधानिकता का न्यायिक पुनर्विलोकन हमारे सविधान का आवश्यक अंग है ।

3. *मिनर्वा मिल* के निर्णय का यह परिणाम है कि हम अनुच्छेद 31ग के उस पाठ पर वापस आ गए हैं जो 1976 के पहले था । इसके परिणामस्वरूप अनुच्छेद 31ग का संरक्षण केवल ऐसी विधि को मिलेगा जो अनुच्छेद 39(ख)-(ग) के निदेश को कार्यान्वित करने के लिए बनी है ।[92] किंतु बाद में एक संविधान पीठ ने[93] यह घोषित करके कि *मिनर्वा मिल* में किया गया संप्रेषण अप्रासंगिक था स्थिति को अस्पष्ट कर दिया है ।

4. अनुच्छेद 39(ख) के क्रियान्वयन मे राष्ट्रीयकरण[94] और कृषि सुधार[95] दोनो ही आ जाएंगे ।

क्या न्यायालय अनुच्छेद 31ग के अधीन बनाई गई विधि के प्रयोजन की परीक्षा कर सकता है — 1. 42वें संशोधन अधिनियम में इस बात का कोई अभिव्यक्त उत्तर नहीं दिया गया है कि अनुच्छेद 31ग के दूसरे भाग का क्या होगा[84] जिसे *केशवानंद* के मामले में[96] बहुमत ने इस आधार पर शून्य घोषित किया था कि वह 25वें संविधान संशोधन अधिनियम की शक्ति के बाहर है । इस संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 31ग अंतःस्थापित किया गया था जिससे इस प्रश्न की जांच करने की न्यायालय की शक्तियां छीन ली गई थीं कि कोई विशिष्ट विधि जो किसी निदेशक तत्व को क्रियान्वित करने का दावा करती है, वास्तव में उस उद्देश्य के लिए बनाई गई विधि है

---

89. *सहायक आयुक्त* बनाम *बी एंड सी कंपनी*, ए 1970 एससी 169 (*175-76*) ।

90 *दीपचंद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1959 एससी. 648 (*663, 664*); *गुरदयाल* बनाम *राज्य*, ए. 1957 पंजाब 232 ।

91 *बलवंत* बनाम *भारत संघ*, ए 1968 इला 14 (पैरा 6) ।

92 *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1980 एससी. 1789 (पैरा 30, 64, 70, 80) ।

93. *सजीव कोक* बनाम *भारत कोकिंग*, ए 1983 एस.सी 239 (पैरा 13, 14) ।

94. *तमिलनाडु राज्य* बनाम *आबू*, ए 1984 एस.सी 326 (पैरा 92); *कर्नाटक राज्य* बनाम *रंगानाथ*, ए. 1978 एस.सी. 215 (पैरा 82) ।

95. *मधुसूदन* बनाम *भारत संघ*, ए 1984 एस.सी. 374 (पैरा 17-19) ।

96. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए 1973 एस.सी. 1461 ।

या नहीं ।[97] 42वें संशोधन अधिनियम में ऐसी कोई बात नहीं है जिससे अनुच्छेद 31ग का वह भाग पुनरुज्जीवित हो जाए जिसे उच्चतम न्यायालय ने शून्य घोषित किया है । यह माना जाना चाहिए कि वह तभी से विद्यमान नहीं है ।

2. विधि के पूर्वोक्त कथन के आधार पर यह कह सकते हैं कि उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 31ग के दूसरे भाग की अवहेलना करते हुए ऐसी प्रत्येक विधि की सांविधानिकता पर विचार कर सकता है जो किसी निदेश को कार्यान्वित करने का दावा करती है, यदि न्यायालय यह पाता है कि उस विधि और उससे संयुक्त निदेश के बीच का संबंध अवास्तविक या आभासी है अथवा उसका अनुच्छेद 39(ख) या (ग) के निदेश से कोई सीधा और युक्तियुक्त संबंध है ही नहीं ।[92] यह अवधारित करने के लिए न्यायालय को उस विधान के प्रयोजन की पहचान करनी होगी और इसके लिए उसके प्रविषय और उद्देश्य को देखना होगा । ऐसा करते समय न्यायालय विधि की नीति पर अपना निर्णय नहीं दे सकता या उसकी युक्तियुक्तता का प्रश्न नहीं उठा सकता ।[92] जहां किसी विधि में बहुत से प्रश्न हैं वहां परीक्षण में यह देखना होगा कि विधि का प्रमुख भाग निदेशक तत्व को प्रभावी करने के लिए है या नहीं और आक्षेपित उपबंध निदेश के क्रियान्वयन से अविभाज्य रूप से जुड़ा है या नहीं ।[92] या उस उद्देश्य को पूरा करने के लिए अनिवार्यतः आवश्यक है या नहीं ।[92] इस प्रश्न का उत्तर अधिनियम के सार के अनुसार ही दिया जा सकता है उसके विशिष्ट उपबंधों के प्रति निर्देश से नहीं ।[98-99]

इस पुस्तक के पूर्ववर्ती अंग्रेजी संस्करण में जो उपर्युक्त कथन किया गया था उसकी संविधान पीठ ने पुष्टि कर दी है,[99क] जैसे अनुच्छेद 39 के सिद्धांत और विधि के बीच संबंध की विधायी घोषणा निश्चायक नहीं होगी — न्यायनिर्णय के अधीन होगी । न्यायालय पर्दा उठाकर देख सकता है कि आभासी विधायन या शक्ति के दुरुपयोग के आरोप सच हैं या नहीं ।[99क]

3. अनुच्छेद 31ग के संरक्षण का दावा करने के लिए यह आवश्यक नही है कि अधिनियम में यह घोषणा की गई हो कि वह निदेशक तत्वों को क्रियान्वित करने के लिए है ।[99]

किंतु —

(क) राष्ट्रीयकरण के पीछे जो आर्थिक चिंतन है उस पर न्यायालय विचार नहीं कर सकता ।[99क]

(ख) जिस उपक्रम का अर्जन किया गया है उसके लिए संदेय रकम को नियत करने वाला उपबंध राष्ट्रीयकरण की स्कीम का अविभाज्य अंग है और न्यायालय उस पर विचार नहीं कर सकता ।[99क, 99ख]

(ग) इस प्रश्न पर न्यायालय विचार नहीं कर सकता कि उपक्रम दक्षतापूर्वक कार्य कर रहा था इसलिए उसका अर्जन करना उचित नहीं था ।[99क]

राष्ट्रविरोधी क्रियाकलाप के संबंध में विधियों की व्यावृत्ति ।

[100]31घ. *संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित और संविधान (43वां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा तारीख 13-4-1978 से निरसित ।*

97. केरल शिक्षा विधेयक के बारे में निर्देश, ए. 1958 एस.सी 956, *जोसेफ* बनाम *केरल राज्य*, ए 1958 केरल 290 (*29.7*) ।

98. *भीमसिंह जी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 234 (पैरा 2) ।

99. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *बसंतीबाई*, (1986) 2 एस.सी.सी. 516 (पैरा 13) ।

99क. *तिनसुकिया* बनाम *असम राज्य*, (1989) 3 एस.सी.सी. 709 (पैरा 3-9, 49, 64, 66) ।

99ख. *वेलोर* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, (1989) 4 एस.सी.सी. 138; *महाराष्ट्र राज्य विद्युत बोर्ड* बनाम *थाणे*, (1989) 3 एस.सी.सी. 616 ।

100. देखिए *कांस्टिट्यूशनल लॉ आफ इंडिया* के पहले संस्करण का पृष्ठ 124 ।

सांविधानिक उपचारों का अधिकार

इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए उपचार ।

32. (1) इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए समुचित कार्यवाहियों द्वारा उच्चतम न्यायालय में समावेदन करने का अधिकार प्रत्याभूत किया जाता है ।

(2) इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से ऐसे निदेश या आदेश या रिट, जिनके अंतर्गत बंदीप्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकारपृच्छा और उत्प्रेषण रिट हैं, जो भी समुचित हो, निकालने की शक्ति होगी ।

(3) उच्चतम न्यायालय को खंड (1) और खंड (2) द्वारा प्रदत्त शक्तियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, संसद्, उच्चतम न्यायालय द्वारा खंड (2) के अधीन प्रयोक्तव्य किन्हीं या सभी शक्तियों का किसी अन्य न्यायालय को अपनी अधिकारिता की स्थानीय सीमाओं के भीतर प्रयोग करने के लिए विधि द्वारा सशक्त कर सकेगी ।

(4) इस संविधान द्वारा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, इस अनुच्छेद द्वारा प्रत्याभूत अधिकार निलंबित नहीं किया जाएगा ।

अनुच्छेद 32 का प्रविषय : उच्चतम न्यायालय द्वारा मूल अधिकारों का प्रवर्तन — 1. अनुच्छेद 32 का एकमात्र उद्देश्य संविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारों का प्रवर्तन है । जहां किसी मूल अधिकार का अतिलंघन नहीं होता है वहां व्यथित व्यक्ति को और चाहे जो उपचार उपलब्ध हों उसे अनुच्छेद 32 के अधीन परिवाद करने का अधिकार नहीं है ।[1] उदाहरण के लिए जिस अधिकार का उल्लंघन हुआ है वह करार या पंचाट से उत्पन्न हुआ है ।[2]

2. निम्नलिखित मामलों में अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन नहीं हो सकता :

(i) कोई व्यक्ति जिसने किसी अधिनियम के उपबंधों के अधीन स्वेच्छा से समझौता कर लिया है तब तक अनुच्छेद 32 के अधीन उस अधिनियम की सांविधानिकता पर आक्षेप नहीं कर सकेगा जब तक कि समुचित कार्यवाहियों में वह समझौता रद्द न हो जाए ।

(ii) जहां किसी कानून की या उसके अधीन दिए गए प्रशासनिक आदेश की सांविधानिकता पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया गया है कि वह किसी मूल अधिकार का उल्लंघन करता है तो न्यायालय अनुच्छेद 32 के अधीन उस प्रशासनिक आदेश में हस्तक्षेप नहीं करेगा चाहे वह गलत ही क्यों न हो ।[3]

(iii) जिस अधिकार का उल्लंघन हुआ है वह संविदा करने का व्यक्तिगत अधिकार है और उससे अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन वृत्ति या कारबार चलाने के अधिकार में हस्तक्षेप नहीं होता है तो जिस व्यक्ति के अधिकार का अतिलंघन हुआ है वह अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय में नहीं जा सकता ।[4]

(iv) सरकार के साथ कारबार करने का या सरकार से मान्यता पाने का[5] कोई मूल अधिकार नहीं है इसलिए ऐसे अधिकारों के उल्लंघन के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन नहीं हो सकेगा ।

(v) अनुच्छेद 21 केवल राज्य द्वारा स्वतंत्रता से वंचित किए जाने के बारे में है ।

---

1 *गोपालदास* बनाम *भारत संघ*, ए. 1955 एस.सी. 1, *हाजी इस्माईल* बनाम *सक्षम अधिकारी*, ए. 1967 एस.सी. 1244 ।

2. *कुरियाकोस* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 1509 (पैरा 6) ।

3. *साधूसिंह* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1965 एस.सी. 91 (*95*); *डी.ए.वी. कालेज* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1737 (*1752*) ।

4. *अच्युतन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 490 (*492*) ।

5. *राम जवाया* बनाम *पंजाब राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 225 (*239*); *हर शंकर* बनाम *उत्पाद-शुल्क उपायुक्त*, (1975) 3 एस.सी.आर. 254 ।

इसलिए यदि किसी व्यक्ति को किसी प्राइवेट व्यक्ति द्वारा निरुद्ध रखा जाता है तो अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका नहीं होगी ।[6] जहां याची पर अपने स्वैच्छिक कार्य से प्रभाव पड़ा है, राज्य की ओर से उसे विवश नहीं किया गया था वहां भी कोई याचिका नहीं दी जा सकेगी ।[1]

3. **इसी कारण से —**

(i) अनुच्छेद 32 के अधीन कार्यवाही में वही प्रश्न अवधारित किया जाएगा जो मूल अधिकार से संबंधित है ।[7-8]

(ii) यदि किसी कानून के अन्य उपबंधों पर मूल अधिकारों के उल्लंघन से भिन्न किसी आधार पर आक्षेप किया जाता है तो अनुच्छेद 32 के अधीन कार्यवाही में इस आक्षेप पर विचार नहीं होगा ।[9]

4. अनुच्छेद 32 किसी विधि की सांविधानिकता के अवधारण से प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध नहीं है । इस अनुच्छेद के अधीन किसी मामले को लाने के लिए यह आवश्यक है कि याची यह साबित करे कि परिवादित विधि विधान मंडल की क्षमता के बाहर है क्योंकि वह विषय विधायी सूची की किसी मद मे नहीं आता है । साथ ही यह भी साबित करे कि वह संविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकार को प्रभावित करती है या छोटा करती है जिसके लिए वह समुचित रिट या आदेश की मांग करता है ।[10]

5. जम्मू-कश्मीर राज्य की दशा मे अनुच्छेद 32 को अनुच्छेद 35(ग) के साथ पढ़ा जाना चाहिए ।[11]

अनुच्छेद 32 और 226 के अधीन आवेदन — 1 अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन पहली बार में उच्चतम न्यायालय मे हो सकता है । यह आवश्यक नहीं है कि पहले अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय मे मामला उठाया जाए ।[12]

2 इस बारे मे विधि कुछ अस्पष्ट थी कि अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय द्वारा किसी आवेदन की सुनवाई करके उसे नामंजूर कर दिए जाने के पश्चात् अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय में आवेदन हो सकता है या नहीं । अब यह सुस्थापित हो चुका है कि, —

(i) जहां गुणागुण के आधार पर अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन खारिज कर दिया गया है वहां उन्हीं तथ्यों पर, उन्हीं आधारों पर और वैसी ही रिट या आदेश पाने के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन नहीं किया जा सकता ।[13 15]

यह सिद्धांत उस मामले मे भी लागू होता है जहां सकारण आदेश गुणागुण के आधार पर एकपक्षीय रूप से पारित किया गया है । *अर्थात्* प्रत्यर्थी को सूचना दिए बिना ।[14]

(ii) जहां अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका वापस ली जाने पर खारिज की जाती

---

6 *विद्या वर्मा* बनाम *शिव नारायण*, ए 1956 एस सी 108 ।

7. *अमरसिंहजी* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1955 एस.सी 504 ।

8 *कॉफी बार्ड* बनाम *सयुक्त सी टी ओ*, ए 1971 एस सी. 870 (*877*) ।

9. *खैरबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1964 एस सी 925 (*941*) ।

10 *चिरंजीतलाल* बनाम *भारत संघ*, (1950) एस सी.आर 809; *नैनसुख* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1953) एस सी आर. 1184 ।

11 *अब्दुल* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1971 एस.सी 1217 (*1220*) ।

12 *एम के. गोपालन* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस सी आर. 168 (*174*) ।

13 *दरयाव* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस सी 1457; *जोसेफ* बनाम *केरल राज्य*, ए 1965 एस.सी 1514 (*1515*) ।

14. *विरुधनगर एस आर. मिल्स* बनाम *मद्रास सरकार*, ए 1968 एस सी 1196 (*1198*); *के एन. इंडस्ट्रीज* बनाम *सचिव*, ए. 1986 एस सी. 1292 (पैरा 1) ।

15. *त्रिलोकचंद* बनाम *मुंशी*, ए. 1970 एस सी 898 (*901*) ।

है या इस आधार पर खारिज की जाती है कि विवाद्य तथ्यों का विनिश्चय रिट कार्यवाही में नहीं किया जा सकता है । याची को नियमित वाद लाना चाहिए । वहां अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन नहीं हो सकता ।[13]

(iii) यदि अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन संक्षेप सुनवाई में खारिज कर दिया जाता है और कोई सकारण आदेश नहीं किया जाता है तो खारिज किए जाने को "पूर्व न्याय" लागू नहीं होगा ।[15]

(iv) यदि अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन गुणागुण के आधार पर खारिज नहीं हुआ है गफलत, अभ्यर्पण या आनुकल्पिक उपचार के आधार पर खारिज किया गया है तो ऐसे खारिज किए जाने से अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन वारित नहीं होगा । किंतु न्यायालय आवेदन को निपटाते समय इस बात पर विचार कर सकता है कि क्या वे आधार इस आवेदन को खारिज करने के लिए पर्याप्त हैं ।

(v) जिस प्रश्न पर कोई निर्णय नहीं लिया गया है वह "पूर्व न्याय" नहीं हो सकता ।[16]

(vi) उच्चतम न्यायालय ने बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिकाओं को अपवाद माना है । अब यह अभिनिर्धारित हो चुका है कि जहां उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन को खारिज कर दिया है वहा भी अनुच्छेद 32 के अधीन उसी रिट के लिए आवेदन हो सकेगा क्योंकि वह निर्णय नहीं है और आधारभूत रूप से विधिहीन आदेश को "पूर्व न्याय" का सिद्धांत लागू नहीं होता ।[16]

3. अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर किसी भी प्राधिकारी के विरुद्ध अनुतोष दे सकता है । अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति अपनी राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता तक ही सीमित है । मूल अधिकारों का अतिलंघन होने पर भी उच्च न्यायालय ऐसे प्राधिकारी के विरुद्ध अनुतोष नही दे सकता जो उसकी राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता के बाहर स्थित है । वह ऐसा तभी कर सकता है जब खंड (1क) लागू होता है ।[17]

4 अनुच्छेद 21 राज्य द्वारा स्वतंत्रता से वंचित किए जाने तक ही सीमित है इसलिए यदि किसी व्यक्ति को किसी प्राइवेट व्यक्ति द्वारा निरुद्ध रखा जाता है तो अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन नही किया जा सकता ।[18] यदि याची को राज्य द्वारा विवश नही किया गया है, उसने स्वैच्छिक कार्यवाही से अपने को प्रभावित कर लिया है तब भी अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका नही हो सकती ।[19]

खंड (1) : प्रत्याभूति का प्रभाव — 1. खंड (1) भाग 3 में सम्मिलित मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए रिट प्राप्त करने के लिए उच्चतम न्यायालय को अभ्यावेदन करने का अधिकार प्रत्याभूत करता है । दूसरे शब्दों मे मूल अधिकार का अतिलंघन होने पर उच्चतम न्यायालय को अभ्यावेदन करने का अधिकार भी मूल अधिकार है ।[20] इस प्रत्याभूति का यह प्रभाव है कि —

(क) रिट जारी करने की न्यायालय की शक्ति इस अनुच्छेद के खंड (4) के साथ

---

16 *गुलाम सरवर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी 1335 (*1337*); *नजूल अली* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, (1969) 3 एस सी सी 698 (699) ।

17. *रशीद* बनाम *आई टी आई. कमीशन*, (1954) एस सी आर. 738, *मुसालियार* बनाम *पोट्टि*, (1955) 2 एस.सी आर. 1196 ।

18. *विद्या वर्मा* बनाम *शिव नारायण*, ए. 1956 एस सी 108 ।

19. *गोपाल दास* बनाम *भारत संघ*, (1955) 1 एस.सी आर 773 ।

20. *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 725 (*729*) ।

पठित अनुच्छेद 359 में उपबंधित रीति से ही निलम्बित की जा सकती है ।[21] उच्चतम न्यायालय की यह शक्ति विधान द्वारा नहीं छीनी जा सकती ।[20] इसके लिए संविधान का संशोधन करना आवश्यक है ।

(ख) ऐसी विधि शून्य होगी जो अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की शक्ति को विनष्ट करती है या उसे छाया मात्र बनाती है ।[22] संविधान में उपबंध करके किसी विधि को मूल अधिकार के उल्लंघन के आधार पर आक्षेप से संरक्षण प्रदान किया जा सकता है जैसे अनुच्छेद 31(5) में सविधान के पहले की विधियों के लिए किया गया है ।[23]

(ग) मूल अधिकार के उल्लंघन की दशा में उच्चतम न्यायालय में अभ्यावेदन करने का अधिकार भी मूल अधिकार ही है । इसलिए उच्चतम न्यायालय मूल अधिकारों का संरक्षक और प्रत्याभूतिदाता है । जहां यह साबित हो जाता है कि कोई मूल अधिकार विद्यमान है और उसका भंग हुआ है या होने वाला है[24] वहां उच्चतम न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह अनुच्छेद 32 के अधीन अनुतोष प्रदान करे ।[25] इस उत्तरदायित्व का निर्वाह करते हुए उच्चतम न्यायालय केवल इस आधार पर अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन से इंकार नहीं कर सकता —

(i) कि ऐसा आवेदन प्रथम बार में उच्चतम न्यायालय मे ही किया गया है, अनुच्छेद 226 के अधीन उच्चतम न्यायालय मे नही ।[26]

(ii) कि याची को पर्याप्त आनुकल्पिक उपचार उपलब्ध है ।[27]

(iii) कि आवेदन में तथ्य के विवादित प्रश्नों की जांच करना या साक्ष्य देना अन्तर्वलित है ।[20]

(iv) कि घोषणात्मक अनुतोष और उसके पारिणामिक अनुतोष देने की प्रार्थना की गई है । जैसे, आक्षेपित अधिनियम को असांविधानिक घोषित करने की प्रार्थना ।

(v) आवेदन में उचित रिट या अनुदेश की प्रार्थना नहीं की गई है ।

(vi) आवेदक को उचित अनुतोष देने के लिए यह आवश्यक है कि कामन लॉ रिट को उपान्तरित किया जाए ।[20, 28]

2 ऊपर बताए गए उदाहरणों से यह निष्कर्ष निकलता है कि उच्चतम न्यायालय प्रशासनिक रूप से कार्य करते हुए भी युक्तियुक्त शर्त लगाकर अनुच्छेद 32 के अधीन मूल अधिकार पर बंधन नहीं लगा सकता । जैसें, वह यह नियम नहीं बना सकता कि अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका के लिए प्रतिभूति दी जाए । सविधान के अनुच्छेद 145 के अधीन शक्ति के प्रयोग में बनाया गया ऐसा नियम शून्य होगा ।[29] अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका में दिए गए आदेश के पुनर्विलोकन के लिए आवेदन की बाबत बनाए गए इस प्रकार के नियम पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता । कारण यह है कि मूल अधिकार के प्रवर्तन

---

21 44वें संशोधन अधिनियम, 1979 ने अनुच्छेद 21 को अनुच्छेद 359 से बचा लिया है अतएव अब आपात में भी बदीप्रत्यक्षीकरण की रिट को पूर्णत समाप्त नही किया जा सकता ।

22. *गोपालन* बनाम *मद्रास राज्य,* (1950) एस सी आर. 88 ।

23 *सोमवंती* बनाम *पंजाब राज्य,* ए 1964 एस.सी. 151 (*165*) ।

24. *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी* बनाम *सरकार,* ए. 1961 एस.सी. 65 (*68*) ।

25. *बिशनदास* बनाम *पंजाब राज्य,* ए. 1961 एस.सी 1570 (*1575*) ।

26. *रमेश थापर* बनाम *मद्रास राज्य,* (1950) एस.सी.आर. 1594 ।

27. *हिम्मतलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य,* (1954) एस.सी.आर. 1122; *खड़क सिंह* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य,* ए. 1963 एस.सी. 1295 ।

28. *बासप्पा* बनाम *नागप्पा,* (1955) 1 एस सी.आर 250 ।

29. *प्रेमचंद* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त,* ए. 1963 एस.सी. 996 (*1004*) ।

के लिए आवेदन और उस आवेदन में किए गए आदेश के पुनर्विलोकन के लिए आवेदन के बीच अन्तर रखा जाना चाहिए ।[30]

3. यह अभिनिर्धारित हुआ है कि अनुच्छेद 32 संविधान का आधारिक अभिलक्षण है ।[31] इसलिए जब तक आधारिक लक्षण का सिद्धांत स्वीकार्य रहता है तब तक संविधान का संशोधन करके इसे छीना नहीं जा सकता ।[31क]

अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता की परिधि — अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय को मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए दी गई शक्तियां विशेषाधिकार रिट निकालने तक ही सीमित नहीं हैं । विशेषाधिकार रिट के प्रयोग की जो मर्यादाएं हैं वे भी उसे लागू नहीं होतीं ।[32] संविधान के अनुच्छेद 32 और 226 में प्रयुक्त भाषा बहुत व्यापक है और उच्चतम न्यायालय तथा उच्च न्यायालय को बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, अधिकारपृच्छा, प्रतिषेध और उत्प्रेषण की रिटें या अन्य समुचित आदेश या निदेश देने की शक्ति है । कोई भी ऐसा आदेश आदि दिया जा सकता है जो मूल अधिकार के प्रवर्तन के लिए आवश्यक हो । न्यायालय समुचित मामलों मे और समुचित रीति मे उन विशेषाधिकार रिटो के रूप में आदेश कर सकता है । उसे इग्लैड की विधि मे ऐसी रिटें देने के विषय म अधिकारिता के प्रयोग को विनियमित करने वाले मूल सिद्धांतों का मोटी तौर से ध्यान रखना चाहिए ।[28]

साधारणतया किसी प्रशासनिक आदेश या अनुदेश से कोई न्यायनिर्णय अधिकार या कर्तव्य का जन्म नहीं होता है । किन्तु यदि वह नागरिको को आबद्ध करता है और उनके मूल अधिकारों को प्रभावित करता है तो वह अनुच्छेद 19(2)-(6) के अधीन अयुक्तियुक्त निर्बंधन के रूप में होगा और न्यायालय उसे शून्य घोषित कर सकेगा । उदाहरण के लिए न्यूजप्रिंट की बाबत भारत सरकार की आयात नीति ।[33]

अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन को केवल इसी कारण अस्वीकार नही किया जा सकता कि उसमें उचित निदेश या रिट के लिए प्रार्थना नही की गई है । जहां किसी विशेष प्ररूप में परमादेश की माग की गई है वहां न्यायालय उसे भिन्न प्ररूप मे दे सकता है ।[34] न्यायालय ऐसे साम्यापूर्ण आदेश दे सकता है जो विशेषाधिकार रिटों की परिधि में नही आते हैं ।[35] जैसे पुलिस के अत्याचारो के शिकार व्यक्तियों को प्रतिकर ।[35क]

अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय निम्नलिखित नहीं कर सकता :

(i) ऐसी घोषणा नहीं करेगा जिसका याची के लिए कोई उपयोग नहीं ।[36]

(ii) उच्च न्यायालयों के विरुद्ध उत्प्रेषण नहीं निकालेगा ।[37] उच्च न्यायालय के आदेश से प्रभावित व्यक्ति के लिए उचित उपचार अनुच्छेद 136 के अधीन अपील करना है ।

(iii) संविदाजात अधिकारों या बाध्यताओं में हस्तक्षेप नहीं करेगा ।[38]

---

30 *लाला राम* बनाम *भारत का उच्चतम न्यायालय*, ए 1968 एस.सी 847 (*848*) ।

31 *उर्वरक निगम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस सी 344 (पैरा 11) ।

31क. *भारत संघ* बनाम *रघुबीर*, (1989) 2 एस सी सी 754 (पैरा 7) ।

32 *रशीद अहमद* बनाम *म्युनिसिपल बोर्ड*, (1950) एस सी आर 566 ।

33. *बैनेट कोलमेन* बनाम *भारत संघ*, (1972) 2 एस.सी.सी 788 (पैरा 39, 43, 88, 89, 93-94) ।

34. *चिरंजीतलाल* बनाम *भारत संघ*, (1950) एस.सी आर. 869 ।

35. *शिव मिल्स* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1981 एस सी. 1037 (पैरा 6) ।

35क. *सहेली* बनाम *पुलिस आयुक्त*, ए. 1990 एस.सी. 513 (पैरा 14) ।

36. *काटाकिस* बनाम *भारत संघ*, (1968) एस सी [डब्ल्यू.पी 54/68, तारीख 28-10-1968] ।

37. *नरेश* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1967 एस.सी 1 ।

38. *प्रेमजी* बनाम *दिल्ली विकास प्राधिकरण*, ए 1980 एस.सी. 738 (पैरा 8) ।

(iv) अपील न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करेगा । उदाहरण के लिए किसी दाण्डिक मामले में आरोप की रचना को खंडित करने के लिए[39] या जमानत देने या देने से इंकार करने के लिए ।[40]

(v) नीति संबंधी निर्णयों में हस्तक्षेप नहीं करेगा ।[40क]

(vi) यदि सरकार द्वारा किसी कर्मचारी का वेतन नियत करने मे मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ है तो न्यायालय उसे शून्य घोषित कर सकता है; किंतु न्यायालय स्वय कर्मचारी का वेतनमान तय नहीं कर सकता ।[40ख]

(vii) न्यायालय, किसी विधान मंडल या अधीनस्थ विधायी प्राधिकरण को कोई विशिष्ट विधि या नियम बनाने के लिए निदेश नहीं दे सकता ।[40ख]

अनुच्छेद 32 के अधीन कौन आवेदन कर सकता है — (i) कोई भी व्यक्ति जो यह परिवाद करता है कि संविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारों में से किसी का अतिलंघन हुआ है उच्चतम न्यायालय को अभ्यावेदन कर सकता है । निगमित निकाय भी ऐसा कर सकते हैं । जहां उपबंध की भाषा से या अधिकार की प्रकृति से यह एकमात्र निष्कर्ष निकलता है कि यह अधिकार केवल प्राकृतिक व्यक्तियों के लिए है वहां निगमित निकाय आवेदन नहीं कर सकता । जिस व्यक्ति को कोई मूल अधिकार नहीं मिला है वह अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन नहीं कर सकता ।[41]

(ii) कंपनी और उसके अंशधारक अलग अलग विधिक व्यक्ति हैं, अर्थात् जब किसी कंपनी के किसी मूल अधिकार का अतिलंघन होता है या उन अधिकारों को पाने के लिए कंपनी को आगे आना होगा, अंशधारक उसका स्थान नहीं ले सकता ।[42]

कुछ मूल अधिकार ऐसे हैं जो सभी व्यक्तियों को उपलब्ध हैं, जैसे अनुच्छेद 14 । ऐसे अधिकारों के भंग होने पर निगम अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन कर सकता है ।[42] राज्य के किसी कार्य से कपनी या उसके अंशधारक दोनों के ही अधिकार कट सकते हैं । ऐसी दशा में अंशधारक भी अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन कर सकता है ।[43]

(iii) सामान्यतया अनुच्छेद 32 के अधीन वे ही अधिकार प्रवर्तित किए जा सकते हैं जो उस याची के अपने अधिकार हैं जो अधिकारों के अतिलंघन का परिवाद करता है और अनुतोष के लिए न्यायालय में पहुंचता है । न्यायालय यह अन्वेषण करेगा कि याची के कौन से अधिकार का उल्लंघन हुआ है । इस साधारण प्रतिपादना का अपवाद है बंदी प्रत्यक्षीकरण । जिस व्यक्ति को कारावास में रखा जाता है या निरुद्ध किया जाता है उसके अतिरिक्त एक बिल्कुल अपरिचित व्यक्ति भी अवैध रूप से कारावास मे रखे गए व्यक्ति को मुक्त करने के लिए बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट प्राप्त करने की कार्यवाही कर सकता है ।[34]

(iv) कुछ मूल अधिकार ऐसे हैं जो केवल नागरिकों को दिए गए हैं उदाहरण के लिए अनुच्छेद 19 के अधीन अधिकार ।[44] जो व्यक्ति नागरिक नहीं है वह उन अधिकारों के प्रवर्तन के लिए आवेदन नहीं कर सकता ।[44]

(v) यदि सरकार भूमि के स्वामी के नाते याची के पक्ष में कोई पट्टा देने से इंकार करती है तो इससे मूल अधिकार का अतिलंघन नहीं होता ।[45]

(vi) अनुच्छेद 32 के अधीन संपत्ति के हक का प्रश्न तय नहीं किया जाएगा।[46]

---

39. *रघुबीर* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1987 एससी 157 (पैरा 14) ।
40. *बिहार एल.एस.एस* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, ए 1987 एससी 39 (पैरा 3) ।
40क. *हिंदी समिति* बनाम *भारत संघ*, ए 1990 एससी 851 (पैरा 8-9) ।
40ख. *सुप्रीम कोर्ट एम्प्लाईज* बनाम *भारत संघ*, ए 1990 एससी 334 (पैरा 36, 51) ।
41. *रामेश्वर* बनाम *आयुक्त*, ए 1959 एस.सी. 498 ।
42. *कॉफी बोर्ड* बनाम *संयुक्त सी.टी.ओ.*, ए. 1971 एस.सी. 870 (876, पैरा 14) ।
43. *कूपर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 564 (585) ।
44. तुलना कीजिए, *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण*, ए. 1959 एस.सी. 395 (402) ।
45. *प्यारेलाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1956 एस.सी. 175 ।
46. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *तेजराज*, (1964) एस.सी. [सी.ए. 573/63, तारीख 14-2-1964] ।

(vii) अनुच्छेद 32 के अधीन न्यायालय कनिष्ठ अधिकरण के आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए अपीली शक्तियों का प्रयोग नहीं करेगा जब तक कि असांविधानिकता का प्रश्न अन्तर्वलित न हो । विधि संबंधी भूल हस्तक्षेप के लिए पर्याप्त आधार नहीं है ।[47]

इसी प्रकार,

(i) अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन करने का अधिकार मूल अधिकार के वास्तविक उल्लंघन पर उद्भूत होता है । जहां राज्य द्वारा अतिलंघन करने की गम्भीर आशंका है वहा भी आवेदन किया जा सकता है । उदाहरण के लिए अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन कारबार की स्वतंत्रता को प्रभावित करते हुए असांविधानिक कर वसूल करने की राज्य की धमकी ।[48] ऐसे भी मामले हो सकते हैं जिसमें अधिनियम के प्रवृत्त होने से ही नागरिक के मूल अधिकार का अतिलंघन हो जाता है । ऐसा होने पर वह उस अधिनियम के अधीन राज्य द्वारा कोई प्रकट कार्य करने की प्रतीक्षा किए बिना भी अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन कर सकता है ।[49] अतएव यह आवश्यक नहीं है कि आवेदक तब तक प्रतीक्षा करे जब तक कि धमकी को कार्य में परिणत न कर दिया जाए ।[50] यदि ऐसे कर की मांग की जाती है जो किसी विधिमान्य अधिनियम पर आधारित नहीं है तो अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन किया जा सकेगा ।[51]

किंतु यदि याची को यह शंका मात्र ही है कि उसे अपने मूल अधिकार से वंचित किया जाएगा तो यह पर्याप्त नही होगा ।[52] साधारणत· न्यायालय जब तक कोई अधिनियम प्रवृत्त नहीं हो जाता तब तक उसकी सांविधानिकता पर विचार नही करता ।[53]

(ii) यदि कोई आदेश शून्य है तो उसे अनुच्छेद 32 के अधीन अपास्त किया जाएगा ।[54]

लोकहित वाद — उच्चतम न्यायालय ने "सुने जाने का अधिकार" के सिद्धात को उदार बनाते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि सामान्यतया तो कोई व्यक्ति अनुच्छेद 32* या 226 के अधीन आवेदन तभी कर सकता है जब किसी विधि या आदेश द्वारा अधिकार के अतिलंघन का उस पर व्यक्तिगत रूप से प्रभाव पड़ा हो । किंतु सार्वजनिक या लोकहित के विषय में न्यायालय उस विषय में विशेष हित रखने वाले संगठन के किसी भी सदस्य को आवेदन करने की अनुमति देगा ।[54] ऐसे मामलों को "लोकहित वाद" की संज्ञा दी गई है ।[55-56]

ऐसे मामलों में न्यायालय जनता के हित के लिए सघर्ष करने वाले याची को खर्चा भी दिला सकता है ।[56] अधिक लोक महत्व के मामलों में न्यायालय इस बात पर बल नहीं देगा कि प्रक्रिया विधि की सभी तकनीकी अपेक्षाएं पूरी की जाएं ।[56क-56ख] ऐसे मामलों की

---

47 *उज्जम बाई* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1962 एस.सी 1621 ।

48 *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी* बनाम *सरकार*, ए 1961 एस सी. 65 (*68*); *रूपचन्द* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1963 एस सी 1503 ।

49 *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए 1959 एस सी 725 (*731, 733*) ।

50 *डी ए वी कालेज* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1971 एस सी 1731 (*1733*) ।

51 *कॉफी बोर्ड* बनाम *संयुक्त सी टी ओ*, ए 1971 एस सी 870 (*876*) ।

52 *मगनभाई* बनाम *भारत संघ*, ए 1969 एस सी 783 (*791*) ।

53 *चन्द्रशेखर* बनाम *उडीसा राज्य*, (1971) II एस सी डब्ल्यू आर 1171 (*1175*) ।

54 *रूपचद* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1963 एस.सी. 1503 (पैरा 21) ।

55 *उर्वरक निगम* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस.सी 344 (पैरा 23); *गुप्ता* बनाम *भारत संघ*, ए 1982 एस सी. 149 (पैरा 14, 17, 25); *नाकारा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1983 एस सी 130 (पैरा 64); *पीपुल्स यूनियन* बनाम *भारत संघ*, ए 1982 एस.सी 1473; *मेहता* बनाम *भारत संघ*, (1987) 1 एस.सी.सी 395 ।

56 *राम* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1984 एस सी 537 (पैरा 9); *नल्ला थम्पी* बनाम *भारत संघ*, ए 1984 एस.सी. 74 (पैरा 27); *विंसेंट* बनाम *भारत संघ*, (1987) 2 एस.सी.सी 165 (पैरा 11, 12, 32); *बंधुआ* बनाम *भारत संघ*, ए. 1984 एस.सी. 802 ।

56क. *रूरल लिटिगेशन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1989) सप. (1) एस.सी.सी. 504 (पैरा 16) ।

56ख. *रामशरण* बनाम *भारत संघ*, (1989) सप. (1) एस.सी.सी. 251 (पैरा 15) ।

विषय वस्तु कुछ भी हो सकती है जैसे पर्यावरण, न्यायाधीशों की नियुक्ति, प्रदूषण, बंधित श्रम पुलिस अभिरक्षा में मृत्यु, पूंजी निर्गम का नियंत्रण आदि ।[56ग]

इस अधिकारिता का उपयोग व्यक्तिगत वादों के निपटारे के लिए नहीं किया जा सकता (जैसे, लोक न्यास के कुप्रबंध को ठीक करने के लिए) । इसका उपयोग सरकार या उसके अधिकारियों द्वारा मानव अधिकारों के घोर उल्लंघन के विरुद्ध उपचार के लिए हो सकता है ।[56ख]

सुनवाई के अधिकार का समाप्त हो जाना — कोई व्यक्ति जो मूल अधिकार प्रवर्तित कराना चाहता है उस दशा में अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन करने का हकदार नहीं होगा जब साधारण विधि के अधीन किसी आदेश या विनिश्चय द्वारा उसके कारबार का अधिकार समाप्त हो गया हो[57] और ऐसा आदेश या विनिश्चय याचिका देने के पहले ही अन्तिम हो गया है । किंतु जहां हक के प्रश्न पर कोई विनिश्चय नहीं हुआ है वहां आवेदन दिया जा सकता है ।[58]

न्यायिक या न्यायिककल्प विनिश्चयों पर उत्प्रेषण अधिकारिता — 1. उच्च न्यायालय, उच्चतम न्यायालय की उत्प्रेषण अधिकारिता के अधीन नहीं है ।[59] अनुच्छेद 32 के अधीन आवदन करके उच्च न्यायालय के निर्णय पर आक्षेप नहीं किया जा सकता ।

2. सक्षम अधिकारिता वाले कनिष्ठ सिविल न्यायालयो को भी उत्प्रेषण अधिकारिता के प्रयोजन के लिए उच्च न्यायालय के समकक्ष रखा गया है ।[60] इन न्यायालयों के विनिश्चय पर अपील में ही आक्षेप किया जा सकता है चाहे उसके किसी पक्षकार या तृतीय पक्षकार के मूल अधिकार प्रभावित होते हों ।[59]

3 जहां किसी कनिष्ठ न्यायिककल्प प्राधिकारी का आदेश विधिमान्य विधि के अधीन उसकी अधिकारिता के भीतर है वहां ऐसे आदेश को अनुच्छेद 32 के अधीन विखंडित नहीं किया जा सकता चाहे वह गलत ही क्यों न हो[60-61] ऐसा आदेश विखंडित किया जा सकेगा,—

(i) जहा वह बिना अधिकारिता के दिया गया है,[60-61]

(ii) जहा कार्यवाही प्रक्रिया की दृष्टि से शक्ति वाह्य है, जैसे नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ है,[60]

(iii) जहां कार्यवाही ऐसे अधिनियम के अधीन है जो साविधानिक दृष्टि से शक्ति वाह्य है,[60-61]

(iv) जहा किसी प्राधिकारी ने किसी सांपार्श्विक तथ्य को दोषपूर्ण रीति से विचार करके स्वयं को अधिकारिता प्रदान की है ।[62] किंतु इस दशा में यह आवश्यक है कि उस आदेश का मूल अधिकार पर प्रभाव पडता हो,

(v) जहा वह विधि जिसके अधीन अधिकरण ने निर्णय दिया है मूल अधिकार का उल्लंघन करती है,[63]

56ग. *टेहरी बांध* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1992) सप (1) एस सी पी. 44; *सुप्रीम कोर्ट लीगल एड कमेटी* बनाम *बिहार राज्य*, (1991) 3 एस.सी.सी. 482; *सुभाष शर्मा* बनाम *भारत संघ*, ए 1991 एस.सी. 631; *रूरल लिटिगेशन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1991 एस सी 2216; *बंधुआ मुक्ति मोर्चा* बनाम *भारत संघ*, (1991) 4 एस.सी.सी. 174, *एन पार्थसारथी* बनाम *कंट्रोलर*, ए. 1991 एस.सी 1420 ।

57. *कल्याणसिंह* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1962 एस सी 1183 ।

58 *जोसेफ* बनाम *केरल राज्य*, (1965) एम सी डी. 893 ।

59 *नरेश* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए 1967 एस.सी 1 (पैरा 11-12, 15, 17) ।

60. *उज्जमबाई* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1962 एस सी 1621 में बहुमत दृष्टिकोण ।

61. *कुन्हामिन* बनाम *पुनर्वास मंत्रालय*, ए 1962 एस.सी. 1616 ।

62 *परभानी टी सी.एस.* बनाम *सड़क परिवहन प्राधिकरण*. ए 1960 एस.सी. 801 (*806*); *भटनागर* बनाम *भारत संघ*, (1957) एस सी.आर. 701; *बी.आई. कारपोरेशन* बनाम *केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क कलक्टर*, ए. 1963 एस.सी. 104; *पायोनियर ट्रेडर्स* बनाम *मुख्य नियंत्रक*, ए. 1963 एस.सी 734 ।

63 *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 578 (*643*) । [निवेदन है कि अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय द्वारा सांविधानिकता के प्रश्न का अवधारण अनुच्छेद 323क(2)(घ) या 323ख(3)(घ) के अधीन वर्जित नहीं किया जा सकता क्योंकि यह प्रश्न अनुच्छेद 323क(1) के अर्थान्तर्गत 'विवाद या परिवाद' नहीं है या अनुच्छेद 323(ख)(2) में निर्दिष्ट विषय नहीं है । अतः यह उक्त अधिकरणों की क्षमता के बाहर है । अनुच्छेद 323क और अनुच्छेद 323ख, संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित किए गए हैं ।]

(vi) जहां विधि तो विधिमान्य है किंतु न्यायिककल्प प्राधिकारी का निर्णय मूल अधिकार का उल्लंघन करता है, जैसे अनुच्छेद 14 ।[64]

4. किसी न्यायिककल्प प्राधिकारी के आदेश के विरुद्ध अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका केवल इस आधार पर नहीं की जा सकती है कि प्राधिकारी ने विधि गलत रूप से लागू की है, या उसका उल्लंघन किया है ।[65] यह आवश्यक है कि उस विधि की सांविधानिकता पर या आदेश पर इस आधार पर आक्षेप किया गया हो कि वह मूल अधिकार का उल्लंघन करता है ।[65]

5. अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकरणों पर अधिकारिता पूरी तरह से अपवर्जित की जा सकती है । संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अतःस्थापित अनुच्छेद 323क के अन्तर्गत लोकसेवाओं के या अनुच्छेद 323ख में उल्लिखित विषयों के बारे में अधिकरण स्थापित करते समय संसद् ऐसा कर सकती है ।

कराधान के आदेश के विरुद्ध अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन — 1 विधि के प्राधिकार के बिना कराधान नहीं होगा । यह अधिकार अनुच्छेद 265 में है । यह अनुच्छेद मूल अधिकार नहीं है ।[66] किंतु यदि कर किसी व्यक्ति के कारबार या वृत्ति चलाने के अधिकार से सबंधित है और इस प्रकार उसके अनुच्छेद 14,[67] 15,[68] 19(1)(छ)[69] द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारों का अतिलंघन होता है तो अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन हो सकता है — यदि केवल तथ्य का प्रश्न है तो न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा ।[70]

2 संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अतःस्थापित अनुच्छेद 323ख में उल्लिखित विषयों में से एक विषय, कर का उद्ग्रहण, निर्धारण, संग्रहण और प्रवर्तन भी है । अतएव जब विधान मंडल इस विषय के बारे में कोई अधिकरण बनाता है तो ऐसी विधि अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता का अपवर्जन कर सकती है ।

प्रतिषेध का लागू होना — जब कोई न्यायिककल्प प्राधिकारी पूर्वगामी रीति में किसी मूल अधिकार का निलम्बन करना प्रारंभ करता है तो उसे और आगे की कार्यवाही करने से रोकने के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन प्रतिषेध की रिट जारी की जाएगी ।[59]

परमादेश का लागू होना — अनुच्छेद 32 के अधीन परमादेश की रिट किसी प्रशासनिक कानूनी लोक प्राधिकारी के या स्वयं सरकार के ऐसे आदेश को रद्द करने के लिए जारी की जाएगी जो मूल अधिकार का उल्लंघन करता है, जैसे अनुच्छेद 14,[71] 16,[72] 19[73] । याची

---

64. तुलना कीजिए, *बाड़ी सप्लाई कंपनी* बनाम *भारत संघ*, (1956) एस.सी.आर. 267 [अनुच्छेद 323क(2)(घ), 323ख(3)(घ) के अधीन रहते हुए, किंतु अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय में अपील की जा सकती है] ।

65. *फर्नांडिस* बनाम *उप मुख्य नियंत्रक*, (1975) एस.सी. [डब्ल्यू.पी. 615/70, तारीख 7-3-1975] *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *गुलाम रसूल*, (1961) 3 एस.सी.आर. 969 (*973*) ।

66. *रामजीलाल* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1951 एस.सी. 97 ।

67. *मीनाक्षी मिल्स* बनाम *विश्वनाथ*, (1955) 1 एस.सी.आर. 787 ।

68. *छोटाभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1006 (*1021*) ।

69. *कैलाशनाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 790, *बालाजी* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1962 एस.सी. 123 ।

70. *दिल्ली क्लाथ मिल्स* बनाम *गुप्ता*, (1976) यू.जे.एस.सी. 648 ।

71. *रामकृष्ण* बनाम *तेंदुलकर*, ए. 1958 एस.सी. 538 (*544, 553*) ।

72. *अच्युतन* बनाम *केरल राज्य* ए. 1957 एस.सी. 490 (492); *दशरथ* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 564 (*570-72*); *कृष्ण चंद्र* बनाम *ट्रेक्टर संगठन*, ए. 1962 एस.सी. 602 ।

73. *जगन्नाथ* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1046 ।

के मूल अधिकार[74] को छीनने वाले अधिनियम को प्रवृत्त होने से रोकने के लिए[75] भी यह रिट निकाली जाएगी ।

बंदी प्रत्यक्षीकरण का लागू होना — 1. अनुच्छेद 31ख में दिए गए अपवादों के अधीन रहते हुए अनुच्छेद 32 के अधीन बंदीप्रत्यक्षीकरण की रिट किसी व्यक्ति को निर्मुक्त करने के लिए तब निकाली जाएगी जब जिस आदेश के अधीन उसे निरुद्ध किया गया है, वह मूल अधिकार का उल्लंघन करता है, जैसे अनुच्छेद 14,[76] 21,[77] या 22[78] ।

2. अनुच्छेद 21 का लाभ उठाते हुए बंदी प्रत्यक्षीकरण की कार्यवाही का आश्रय लेकर बंदियों को उत्पीड़ित करने या उन्हें कष्ट देने के मामलों में न्यायालयों ने हस्तक्षेप किया है ।[79] यह दोषसिद्ध बंदियों की दशा में भी हुआ है और विचाराधीन बंदियों की भी [देखिए आगे अनुच्छेद 21][80] ।

3. न्यायालय अनौपचारिक ससूचना के आधार पर भी कार्य कर सकता है । अभिवचन के नियमों का कठोरता से पालन किया जाना आवश्यक नहीं है ।[81]

4 निरोध विधि की स्थापित प्रक्रिया के अनुसार है, यह साबित करने का भार निरुद्ध करने वाले प्राधिकारी पर आता है ।[81]

5. यदि किसी व्यक्ति को किसी दांडिक न्यायालय ने दोषसिद्ध ठहराया है और न्यायालय का निर्णय अन्तिम हो चुका है तो उस निर्णय के अधीन निरोध को बंदी प्रत्यक्षीकरण द्वारा प्रश्नगत नहीं किया जा सकता[82] [देखिए आगे अनुच्छेद 226] ।

विलम्ब और उपमति, कहां तक अनुच्छेद 32 के अधीन अनुतोष देने से इंकार के आधार हो सकते हैं — विलम्ब, उपमति आदि से अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता समाप्त नहीं होती किंतु न्यायालय चाहे तो जहा विलम्ब के कारण याची के दावे के गुणागुण पर प्रभाव पडा है[83] या इस बीच के समय में अन्य पक्षकारों के अधिकार उद्भूत हो गए हैं[84] और विलम्ब का कोई युक्तियुक्त स्पष्टीकरण नहीं है[84-85] वहा अपनी अधिकारिता का प्रयोग करके निदेश देने से इंकार कर सकता है ।

जहां याची ने कनिष्ठ अधिकरण की अधिकारिता स्वीकार कर ली है वहां वह अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता का लाभ लेने का हकदार नहीं है ।[86]

---

74 *चिंतामनराव* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1951 एस.सी. 118, *अब्दुल हाकिम* बनाम *बिहार राज्य*, (1961) 2 एस.सी.आर. 610 ।

75. *भारत संघ* बनाम *रामकुमार*, ए. 1962 एस.सी 247; *राजस्थान राज्य* बनाम *नाथूमल*, (1954) एस.सी.आर. 982 ।

76. *मुंबई राज्य* बनाम *अनवर अली*, (1952) एस.सी.आर 284 (314, 328), *शिव बहादुर* बनाम *विंध्य प्रदेश राज्य*, (1953) एस.सी.आर 1188 (*1200*) ।

77 *हमदर्द दवाखाना* बनाम *भारत संघ*, ए 1960 एस.सी. 554; *शिब्बन लाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 418, *श्याम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी 789 ।

78 *रामकृष्ण* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1953) एस.सी.आर 708 (*715*) ।

79 *राकेश* बनाम *अधीक्षक*, ए 1981 एस.सी 1767 ।

80 *सुनील बतरा* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1980 एस.सी. 1579 (पैरा 3-4, 42) ए 1978 एस.सी 1675 (*1727*) ।

81. *इच्छू* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 1983 (पैरा 4-5) ।

82. *तुलना कीजिए, बोहर* बनाम *पंजाब राज्य*, (1981) क्रि. ला. ज (पी. एंड एच.) पूर्ण न्यायपीठ ।

83. *त्रिलोक चंद* बनाम *मुंशी*, ए. 1970 एस.सी. 898 (*902*) ।

84. *रवीन्द्र* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 470 (*478*); *अमृतलाल* बनाम *कलक्टर*, ए 1975 एस.सी. 538; *मोघे* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 1495 (पैरा 23) ।

85. *पंजाब राज्य* बनाम *कौशल*, ए. 1971 एस.सी. 1676 (*1678*) ।

86. *पन्नालाल* बनाम *भारत संघ*, (1957) एस.सी.आर. 233 ।

न्यायालय अनुच्छेद 32 के अधीन ऐसे व्यक्ति को अनुतोष नहीं देगा जिसने स्वेच्छा से अपना अधिकार छोड़ दिया है ।[87]

जहां किसी अधिनियम के अधीन किया गया आदेश किसी व्यक्ति के मूल अधिकार का उल्लंघन करता है वहां उस व्यक्ति का अधिनियम की सांविधानिकता पर आक्षेप करने का अधिकार केवल इस आधार पर समाप्त नहीं समझा जाएगा कि उसने उस अधिनियम के अधीन अपने पक्ष में आदेश पाने के लिए आवेदन किया था ।[88]

अनुतोष देने से इंकार करने के विवेकाधीन आधार — उच्चतम न्यायालय ने कुछ साधारण आधारों पर अनुतोष देने से इंकार कर दिया है । उदाहरण के लिए —

(i) अभिवचन अस्पष्ट हैं ।[89]

(ii) अभिवचन में कोई बात विनिर्दिष्ट रूप से नहीं कही गई है ।[90]

(iii) याचिका निरर्थक हो गई है क्योंकि याची को वह अनुतोष किसी अन्य कार्यवाही में मिल गया है ।[91]

प्राङ्न्याय — 1. अनुच्छेद 32 के अधीन याचिकाओं में दिए गए निर्णयों को प्राङ्न्याय का सिद्धांत लागू किया गया है ।[92-93] इसलिए यदि अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका के खारिज हो जाने के पश्चात् कोई नई परिस्थितिया उत्पन्न नहीं हुई हैं तो नई याचिका के माध्यम से उसी बात को दुबारा नहीं उठाया जा सकता ।[94] संक्षेप में याची को उन्हीं तथ्यों के आधार पर अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय में एक बार से अधिक अभ्यावेदन करने का अधिकार नहीं है ।[95] किंतु यदि नए विवाद्यक उत्पन्न होते हैं या नई बात सामने आती है तो नई याचिका दी जा सकती है ।[93]

2. जहां अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका कारणयुक्त आदेश देकर गुणागुण के आधार पर खारिज की जाती है, वहां *प्राङ्न्याय* का सिद्धांत लागू होगा चाहे आदेश एकपक्षीय हो अर्थात् दूसरे पक्षकार को सूचना दिए बिना किया गया हो ।[96]

3. साधारणतया अनुच्छेद 32 या 226 के अधीन रिट याचिकाओं को आन्वयिक *प्राङ्न्याय* का सिद्धांत लागू नहीं होता ।[93] बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका के लिए तो यह बिल्कुल स्पष्ट है ।[97]

4. किसी पूर्व अवधि से संबंधित कर के लिए कार्यवाही में दिया गया विनिश्चय पश्चात्वर्ती अवधि के लिए कार्यवाही में प्राङ्न्याय के रूप में लागू नहीं होगा । ऐसा तभी हो सकता है जब कि कोई आधारभूत और साधारण विवाद्यक तय किया गया हो, जैसे कराधान विधि की विधिमान्यता ।[93]

---

87. *सूरजमल* बनाम *विश्वनाथ*, ए 1953 एस.सी 545, *गोपाल दास* बनाम *भारत संघ*, (1955) 1 एस.सी.आर. 773 (*774*) ।

88 *रामाराव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस सी 566 (*572*) ।

89 *आरती* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1009 (पैरा 14) ।

90 *शर्मा* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस.सी 588 (पैरा 6) ।

91 *शर्मा* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस सी 1728 ।

92. *जगन्नाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस सी 1563 (*1566*) ।

93 *अमलगमेटेड कोलफील्ड्स* बनाम *जनपद सभा*, ए. 1964 एस.सी. 1013 ।

94. *लखनपाल* बनाम *भारत संघ*, ए 1967 एस सी 908 (*910*); *रोशन* बनाम *जैन*, ए. 1987 एस सी. 384 ।

95. *निरंजन* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1972) 2 एस.सी सी 542 (पैरा 2) ।

96. *विरुद्ध नगर मिल्स* बनाम *मद्रास सरकार*, ए. 1968 एस.सी. 1196 (*1198*) ।

97. *किरीट* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 1621 (पैरा 9); *लालू भाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस सी. 728 (पैरा 13) ।

क्या अनुच्छेद 226 के अधीन विनिश्चय से अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका वारित होती है — देखिए आगे अनुच्छेद 226 ।

राज्य विधि की सांविधानिक वैधता पर अनुच्छेद 32 के अधीन कार्यवाहियों में विचार न किया जाना ।

32क. *संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित और संविधान (43वां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा तारीख 13-4-1978 से निरसित ।*

इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों का, बलों आदि को लागू होने में, उपांतरण करने की संसद् की शक्ति ।

[98]33. *संसद्, विधि द्वारा, अवधारण कर सकेगी कि इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से कोई, —*

(क) सशस्त्र बलों के सदस्यों को, या

(ख) लोक व्यवस्था बनाए रखने का भारसाधन करने वाले बलों के सदस्यों को, या

(ग) आसूचना या प्रति आसूचना के प्रयोजनों के लिए राज्य द्वारा स्थापित किसी ब्यूरो या अन्य संगठन में नियोजित व्यक्तियों को, या

(घ) खंड (क) से खंड (ग) मे निर्दिष्ट किसी बल, ब्यूरो या संगठन के प्रयोजनों के लिए स्थापित दूरसंचार प्रणाली में या उसके संबध में नियोजित व्यक्तियों को,

लागू होने में, किस विस्तार तक निर्बन्धित या निराकृत किया जाए जिससे उनके कर्तव्यों का उचित पालन और उनमें अनुशासन बना रहना सुनिश्चित रहे ।

अनुच्छेद 33 : **सशस्त्र बलों के सदस्यों के मूल अधिकारों पर निर्बंधन** — 1. यह अनुच्छेद संसद् को सशस्त्र बलों[99] या पुलिस[100] के सदस्यों की बाबत मूल अधिकारों पर निर्बन्धन लगाने की असीमित शक्ति प्रदान करता है । अतएव सेना अधिनियम के किसी उपबंध को इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जा सकता कि वे भाग 3 के किसी मूल अधिकार का उल्लंघन करते हैं,[101] जैसे संगम की स्वतंत्रता ।[99]

2. अनुच्छेद 33 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अन्तर्गत पुलिस कर्मियों के ऐसे संगम की मान्यता वापस लेने की शक्ति है जिसे पहले मान्यता दी गई थी ।[100]

जब किसी क्षेत्र में सेना विधि प्रवृत्त है तब इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों पर निर्बन्धन ।

34. **इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, संसद् विधि द्वारा संघ या किसी राज्य की सेवा में किसी व्यक्ति की या किसी अन्य व्यक्ति की किसी ऐसे कार्य के संबंध में क्षतिपूर्ति कर सकेगी जो उसने भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर किसी ऐसे क्षेत्र में, जहां सेना विधि प्रवृत्त थी, व्यवस्था के बनाए रखने या पुनःस्थापन के संबंध में किया है या ऐसे क्षेत्र में सेना विधि के अधीन पारित दंडादेश, दिए गए दंड, आदिष्ट समपहरण या किए गए अन्य कार्य को विधिमान्य कर सकेगी ।**

सेना विधि और बंदी प्रत्यक्षीकरण का निलंबन — इस अनुच्छेद द्वारा संसद् को यह शक्ति दी गई है कि वह सेना विधि के प्रवर्तन के दौरान की गई अवैधताओं की रक्षा करने के लिए उन्मुक्ति अधिनियम बनाए । इसमे बंदी प्रत्यक्षीकरण के निलंबन के बारे में कुछ नहीं कहा गया है । सेना विधियों की घोषणा से यह निलंबन अपने आप नही होगा ।[102]

98. संविधान (पचासवा संशोधन) अधिनियम, 1984 द्वारा प्रतिस्थापित ।

99. *अच्युतन* बनाम *भारत संघ,* (1976) I एलसी.डब्ल्यू.आर. 80; *गोपाल* बनाम *भारत संघ,* ए. 1987 एस.सी. 413 ।

100. *दिल्ली पुलिस संघ* बनाम *भारत संघ,* ए. 1987 एस.सी. 379 (पैरा 9. 10. 12) ।

101. *रामस्वरूप* बनाम *भारत संघ,* ए. 1965 एस.सी. 247 (251) ।

102. *अपर जिला मजिस्ट्रेट* बनाम *शुक्ला,* ए. 1976 एस.सी 1207 (पैरा 535) ।

बंदी प्रत्यक्षीकरण के निलंबन के लिए एकमात्र उपबंध अनुच्छेद 359 में है ।[102] 44वें संशोधन अधिनियम के बाद अब अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश द्वारा अनुच्छेद 21 को निलंबित नहीं किया जा सकता । अनुच्छेद 32 के निलंबित होते हुए भी यदि किसी व्यक्ति को विधि के प्राधिकार के बिना निरुद्ध किया जाता है तो वह बंदीप्रत्यक्षीकरण के लिए अभ्यावेदन कर सकेगा ।

35. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, —

इस भाग के उपबंधों को प्रभावी करने के लिए विधान ।

***(क)* संसद् को शक्ति होगी और किसी राज्य के विधान मंडल को शक्ति नहीं होगी कि वह —**

(i) जिन विषयों के लिए अनुच्छेद 16 के खंड (3), अनुच्छेद 32 के खंड (3), अनुच्छेद 33 और अनुच्छेद 34 के अधीन संसद् विधि द्वारा उपबंध कर सकेगी उनमें से किसी के लिए, और

(ii) ऐसे कार्यों के लिए, जो इस भाग के अधीन अपराध घोषित किए गए हैं, दंड विहित करने के लिए,

विधि बनाए और संसद् इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र ऐसे कार्यों के लिए, जो उपखंड (ii) में निर्दिष्ट हैं, दंड विहित करने के लिए विधि बनाएगी;

(ख) खंड (क) के उपखंड (i) में निर्दिष्ट विषयों में से किसी से संबंधित या उस खंड के उपखंड (ii) में निर्दिष्ट किसी कार्य के लिए दंड का उपबंध करने वाली कोई प्रवृत्त विधि, जो भारत के राज्यक्षेत्र में इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले प्रवृत्त थी, उसके निबंधनों के और अनुच्छेद 372 के अधीन उसमें किए गए किन्हीं अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए तब तक प्रवृत्त रहेगी जब तक उसका संसद् द्वारा परिवर्तन या निरसन या संशोधन नहीं कर दिया जाता है ।

स्पष्टीकरण — **इस अनुच्छेद में, "प्रवृत्त विधि" पद का वही अर्थ है जो अनुच्छेद 372 में है ।**

भाग 4

राज्य की नीति के निदेशक तत्व

36. इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, "राज्य" का वही अर्थ है जो भाग 3 में है ।

परिभाषा ।

37. इस भाग में अंतर्विष्ट उपबंध किसी न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय नहीं होंगे किंतु फिर भी इनमें अधिकथित तत्व देश के शासन में मूलभूत हैं और विधि बनाने में इन तत्वों को लागू करना राज्य का कर्तव्य होगा ।

इस भाग में अंतर्विष्ट तत्वों का लागू होना ।

निदेशक तत्वों की उपयोगिता — 1. संविधान के भाग 4 में सम्मिलित अनुच्छेदों [अनुच्छेद 36 - 51] में कुछ निदेश हैं जिनका प्रशासन चलाने और विधि बनाने में अनुसरण करना राज्य का कर्तव्य है । इसमें गणतंत्रात्मक संविधान के अधीन राज्य के ध्येय और उद्देश्य समाहित हैं, जैसे यह 'कल्याणकारी राज्य'[1] है, 'पुलिस राज्य' नहीं ।

2. ये निदेश संविधान के भाग 3 में अंतर्विष्ट मूल अधिकारों से या देश की सामान्य विधि से निम्नलिखित बातों में भिन्न हैं :

(i) निदेशों को न्यायालय द्वारा प्रवृत्त नहीं कराया जा सकता और इसलिए उनके द्वारा किसी व्यक्ति के पक्ष में न्यायनिर्णय अधिकारों का सृजन नहीं होता ।[1-2]

(ii) निदेशों का क्रियान्वयन विधान बनाकर किया जा सकता है । निदेशों में अधिकथित नीति को कार्यान्वित करने के लिए यदि कोई विधि नहीं है तो राज्य या कोई व्यक्ति किसी विद्यमान विधि या विधिक अधिकार का उल्लंघन इस आधार पर नहीं कर सकता है कि वह निदेश का पालन कर रहा है ।[3]

(iii) निदेशों से समुचित विधान मंडल को न तो कोई विधायी शक्ति मिलती है और न उनकी कोई विधायी शक्ति समाप्त होती है ।[3] विधान बनाने की क्षमता का निर्णय संविधान की सातवीं अनुसूची में अंतर्विष्ट विधायी सूची के आधार पर किया जाता है ।

(iv) न्यायालय किसी विधि को इस आधार पर शून्य घोषित नहीं कर सकते हैं कि वह किसी निदेशक तत्व का उल्लंघन करती है ।[4]

(v) न्यायालय किसी सरकार को किसी निदेश को क्रियान्वित करने के लिए विवश नहीं कर सकते हैं । उदाहरण के लिए न्यायालय अनुच्छेद 45 द्वारा बांधी गई समय-सीमा के भीतर निःशुल्क अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था करने[1, 5] या प्रत्येक नागरिक को जीवनयापन का पर्याप्त साधन उपलब्ध कराने का[1] या किसी निदेश को प्रवृत्त करने के लिए विधि बनाने का आदेश सरकार को नहीं दे सकते हैं ।[2]

3. अनुच्छेद 39ङ, 41, 43(3) जैसे कुछ निदेश गांधीवादी समाजवाद की स्थापना करने के लिए हैं ।[6]

---

1. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, (1973) 4 एस.सी.सी. 225 (पैरा 134, 139; 1714) ।
2. *मार्कण्डेय* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1989) 3 एस.सी.सी. 191 (पैरा 9) ।
3. *मंगरू* बनाम *कमिश्नर्स आफ बजबज*, (1951) 87 सी.एल.जे. 369 ।
4. *दीप चंद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 648 (*664*) ।
5. केरल शिक्षा विधेयक, 1957, ए. 1958 एस.सी. 956 पर निर्देश ।
6. *नकारा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1953 एस.सी. 130 (पैरा 32-33) ।

निदेशों के संबंध में न्यायालयों की भूमिका — 1 उच्चतम न्यायालय के प्रारंभ के निर्णयों में भाग 4 के निदेशों पर तुलनात्मक दृष्टि से कम ध्यान दिया गया है ।[7-8] इसका आधार यह मान्यता थी कि न्यायालयों का उनसे कोई सरोकार नही है क्योंकि वे मूल अधिकारों के समान प्रवृत्त नहीं कराए जा सकते हैं या न्यायनिर्णेय नहीं हैं । निदेशक तत्वों के संबंध में न्यायालय के कर्त्तव्य को पश्चात्वर्ती निर्णयों में अधिक बल मिला । इसका सर्वोत्तम उदाहरण *केशवानंद* के वाद में 13 सदस्यीय न्यायपीठ का निर्णय है ।[7] इसमे मूल अधिकारों के बारे में कुछ व्यापक प्रस्थापनाए अधिकथित की गई हैं । आगे चलकर सभी न्यायालयों पर इनका व्यापक प्रभाव पडा । ये सिद्धात हैं —

I निदेशो और मूल अधिकारो के बीच काई विरोध नहीं है ।[7] ये एक-दूसरे के अनुपूरक हैं और इनका उद्देश्य एक सामाजिक क्रांति लाना और कल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है जिसकी कल्पना उद्देशिका मे की गई है ।[7]

II प्रत्येक व्यक्ति द्वारा अपने मूल अधिकारों का प्रयोग किए जाने की परिस्थितिया भी तभी बनेगी जब निदेशो को क्रियान्वित किया जाएगा ।

III संसद् को यह अधिकार है कि वह निदेशो को क्रियान्वित करने के लिए मूल अधिकारों का अध्यारोहण करके या उन्हें अतिष्ठित करने के लिए सविधान का सशोधन करे ।[8]

IV अनुच्छेद 37 में जो आदेश दिया गया है वह विधान मडल को सबोधित है । न्यायालय संविधान के या अधिनियमों के बीच मे जो स्थान छूटा हुआ है उसमें न्यायिक विधि का निर्माण कर सकते हैं । इसलिए यह आदेश न्यायालयो को भी लागू होता है ।[7]

V अनुच्छेद 12 के साथ पठित अनुच्छेद 36 मे यथापरिभाषित "राज्य" मे न्यायालय भी आते हैं । इसलिए न्यायिक प्रक्रिया भी "राज्य की कार्यवाही"[8] है । न्यायालयों का यह उत्तरदायित्व है कि वे सविधान और सामान्य अधिनियमों[9] का इस इस प्रकार निर्वचन करें जिससे निदेशों का क्रियान्वयन सुनिश्चित हो सके[10] और निदेश तथा व्यक्तियो के अधिकार के पीछे जो सामाजिक उद्देश्य है उसकी पूर्ति हो सके[11] जैसे अनुच्छेद 14[12] या 304 का निर्वचन ।[12]

2 *केशवानंद* के पहले भी[7] उच्चतम न्यायालय ने निदेशो को क्रियान्वित करने वाली विधि की सांविधानिकता की पुष्टि करते हुए निदेशो की ओर ध्यान दिया था । न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि अनुच्छेद 14 के प्रयोजनो के लिए ऐसा वर्गीकरण करना युक्तियुक्त होगा, अनुच्छेद 19(2)-(6) के अर्थान्तर्गत वह निर्बन्धन युक्तियुक्त निर्बंधन होगा, और ऐसी विधि के पीछे जो प्रयोजन है वह अनुच्छेद 31(2) के प्रयोजन के लिए लोक प्रयोजन होगा ।[13] 42वें सशोधन अधिनियम से न्यायालय को सभी प्रकार के कष्ट से बचा लिया गया । इसमें यह कहा गया कि ऐसी विधि पर अनुच्छेद 14 और 19 के अधीन किसी भी बाबत आक्षेप नही किया जा सकेगा [देखिए पीछे अनुच्छेद 31ग] ।

---

7 *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य* (1973) 4 एससीसी 225 (पैरा 486, 596, 712 15, 1036, 1044) ।

8 *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, (1973) 4 एससीसी 225 (पैरा 715, 1161, 1703 04, 1714) ।

9 *उत्तर प्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड* बनाम *हरि*, ए 1979 एससी 65 (पैरा 4क, 16) ।

10 *तमिलनाडु राज्य* बनाम *आबू*, ए 1984 एससी 326 (पैरा 11) सीबी ।

11 *मार्कण्डेय* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1989) 3 एससीसी 191 (पैरा 9) ।

12 *वीडियो* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1990 एससी 820 (पैरा 36); *डेली लेबर* बनाम *भारत संघ*, ए 1987 एससी 2342 (*2346 47*); *रणधीर* बनाम *भारत संघ*, ए 1982 एससी 879 (*881 82*); *एससी एम्पलाईज* बनाम *भारत संघ*, ए 1990 एससी 334 (पैरा 38) ।

13 *हनीफ कुरेशी* बनाम *बिहार राज्य* ए 1958 एससी 731 ।

3 *केशवानंद* के वाद में अधिकथित सिद्धांतों का अवलोकन करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि अनुच्छेद 14 और 19 की परिधि के बाहर भी न्यायालय को ऐसी विधि को अन्य मूल अधिकारों के, जैसे अनुच्छेद 15, 16 या 26, उल्लंघन का आक्षेप होने पर संरक्षण प्रदान करना चाहिए । न्यायालय को चाहिए कि वह निदेशक तत्व और मूल अधिकार के बीच समन्वय स्थापित करे ।[10 13] यह नही समझा जाना चाहिए कि निदेशक तत्व, मूल अधिकार से निम्नतर या कनिष्ठ हैं ।[14]

4 न्यायालय ऐसे उपयुक्त निदेश दे सकता है कि सरकार निदेशों को क्रियान्वित करने का अपना कर्तव्य करे, जैसे विधिक सहायता के कार्यक्रम[15] [अनुच्छेद 39क] के अनुसार बालकों के संरक्षण के लिए पारित अधिनियम का प्रवृत्त किया जाना [अनुच्छेद 39(1)] ।[16]

5 हाल ही के कुछ मामलों में न्यायालय ने इस प्रकार निर्वचन किया कि परिणामस्वरूप विधि या कार्यपालिक आदेश, निदेशक तत्व का उल्लघन करने के कारण शून्य हो गया ।[16क]

निदेशों को क्रियान्वित करने की विधियों की युक्तियुक्तता

अनुच्छेद 31ग की परिधि के बाहर भी समन्वयकारी अर्थान्वयन के नियम से यह परिणाम निकलता है कि —

जो विधि निदेश से असगत है उसे प्रथमदृष्टया अयुक्तियुक्त समझा जाना चाहिए ।[14] निदेशों को प्रभावित करने के लिए की गई कार्यवाही को प्रथमदृष्टया युक्तियुक्त समझना चाहिए ।[17]

38 [18](1) **राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करे, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोक कल्याण की अभिवृद्धि का प्रयास करेगा ।**

राज्य लोक कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा ।

[18]*(2) राज्य, विशिष्टतया, आय की असमानताओं को कम करने का प्रयास करेगा और न केवल व्यष्टियों के बीच बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच भी प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा ।*

39 **राज्य अपनी नीति का, विशिष्टतया, इस प्रकार संचालन करेगा कि सुनिश्चित रूप से —**

(क) पुरुष और स्त्री सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो,

राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्व ।

(ख) समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व और नियंत्रण इस प्रकार बंटा हो जिससे सामूहिक हित का सर्वोत्तम रूप से साधन हो;

(ग) आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार चले जिससे धन और उत्पादन-साधनों का सर्वसाधारण के लिए अहितकारी संकेंद्रण न हो,

---

14 *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1980 एस सी 1789 (पैरा 61-62) ।

15 *सेंटर आफ लीगल रिसर्च* बनाम *केरल राज्य*, ए 1987 एस सी 2195 (पैरा 1) ।

16 *शीला* बनाम *भारत संघ*, ए 1986 एस सी 1773 (पैरा 4, 8) ।

16क तुलना कीजिए, *अश्वत्थनारायण* बनाम *कर्नाटक राज्य*, (1989) सप (1) एस सी सी 698 (पैरा 95); *एआइ बैंक आफिसर्स* बनाम *भारत संघ*, (1989) 4 एस सी सी 96 (पैरा 11) ।

17 *कस्तूरी* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए 1980 एस सी 1992 (*2000*) ।

18 यह अनुच्छेद खंड (1) के रूप में पुनसंख्यांकित किया गया और खंड (2), संविधान (चवालीसवा संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा, अतःस्थापित किया गया ।

(घ) पुरुषों और स्त्रियों दोनों का समान कार्य के लिए समान वेतन हो;

(ङ) पुरुष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों;

[19]*(च) बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाए ।*

खंड (ख) — 1. इसका उदार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए जिससे इसके अतर्गत निम्नलिखित विधान आ जाएं

(i) समुदाय के ऐसे भौतिक स्रोतों का राष्ट्रीयकरण जो व्यक्तियों द्वारा धारित हैं और जिन्हें सामान्य हित के लिए वितरित करना आवश्यक है,[20] या किसी "रुग्ण उद्योग" का प्रबंध और आनुषगिक विषय ।[21]

(ii) किसी स्वामी को उसकी ऐसी सपत्ति के स्वामित्व या नियंत्रण वंचित करना जिसका उपयोग कर के दायित्व का अपवंचन करने के लिए या अपनी आय छिपाने के लिए किया गया था जिससे सामाजिक हित को क्षति पहुंची है ।[22]

(iii) कृषि सुधार ।[23 24]

(iv) किसी आवश्यक वस्तु का मितव्ययी उत्पादन और वितरण, चाहे इसका यह प्रभाव हो कि किसी अन्य वस्तु में उत्पादन या कारबार में अस्थायी निलंबन हो जाएगा ।[25]

(v) भूमि की अधिकतम सीमा तय करना और आधिक्य भूमि का भूमिहीनो में वितरण, चाहे ऐसी विधि के प्रवर्तन से निकट के नातेदारों के स्नेह स्वरूप दान के फायदे से वंचित होना पडे, क्योंकि समुदाय के हित के सामने व्यक्ति के हित को समर्पण करना होगा ।[26]

(vi) समान कार्य के लिए समान वेतन ।[27]

2 इस खड में "भौतिक ससाधन" के अतर्गत कच्चा माल और पूजी उपस्कर दोनो आएंगे ।[22] इसमें ये सब भी हैं — कृषि संसाधन,[23] वन,[20] भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सभी प्राइवेट और सार्वजनिक ससाधन, चाहे प्राकृतिक हो या मानव निर्मित ।[28] इसके अंतर्गत गैर सरकारी उपक्रम द्वारा उत्पादित और वितरित विद्युत ऊर्जा भी है ।[28क]

खंड (ग) — इस खड के —

अतर्गत सपति का राष्ट्रीयकरण है जिसका विक्रय मूल्य कम दिखाकर किसी व्यक्ति ने अपना धन छिपाया है । यदि ऐसे सव्यवहारों को चलने दिया जाए तो इससे संपत्ति के अतरणकर्ताओं के हाथ में काले धन का संकेंद्रण हो जाएगा । इससे सामाजिक हित की हानि होगी ।[22]

खंड (घ) — इस खड को अनुच्छेद 14 और 16 के साथ पढ़ने पर समान कार्य के

---

19 संविधान (बयालीसवा संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित ।

20 *कर्नाटक राज्य* बनाम *रंगनाथ*, ए 1978 एससी 215 (*234, 240, 250*); *तमिलनाडु राज्य* बनाम *आबू*, ए 1984 एससी 326 (पैरा 25), *तिनसुकिया* बनाम *असम राज्य*, (1989) 3 एससीसी 709 (पैरा 61) सीबी ।

21 *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ (II)*, ए 1986 एससी 2030 (पैरा 17, 21); *फाइन निटिंग* बनाम *भारत संघ*, ए 1987 एससी 167 (पैरा 4) ।

22 *महावीर मेटल वर्क्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1977 दिल्ली 73 (पैरा 8-9) ।

23 *मधुसूदन* बनाम *भारत संघ*, ए 1984 एससी 374 (पैरा 14, 21) ।

24 *महाजन* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए 1977 एससी 915 (*922*) ।

25 *लक्ष्मी खांडसारी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1981 एससी 873 (पैरा 33-34) ।

26 *सोनला* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1981 एससी 1274 (पैरा 29) ।

27 *रणधीर* बनाम *भारत संघ*, ए 1982 एससी 879 ।

28 *संजीव कोक* बनाम *भारत कोकिंग*, ए 1953 एससी 239 (पैरा 20) ।

28क *तिनसुकिया* बनाम *असम राज्य*, (1989) 3 एससीसी 709 (पैरा 57, 60) सी.बी ।

लिए समान वेतन का अधिकार प्राप्त होता है ।[27, 29] यह अस्थायी कर्मचारियों को भी लागू होता है, परंतु शर्त यह है कि उनके कर्त्तव्य एक-से होने चाहिए ।[29क]

खंड (च) — इस खंड के अतर्गत वह सब विधान आएगा जो बालकों को संरक्षण देने और उनके व्यक्तित्व के विकास के लिए है या किशोर अपराधियों से संबंधित सुधार कार्यों के लिए है ।[30]

समान न्याय और निःशुल्क विधिक सहायता ।

[31]**39क.** *राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक तंत्र इस प्रकार काम करे कि समान अवसर के आधार पर न्याय सुलभ हो और वह, विशिष्टतया, यह सुनिश्चित करने के लिए कि आर्थिक या किसी अन्य निर्योग्यता के कारण कोई नागरिक न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए, उपयुक्त विधान या स्कीम द्वारा या किसी अन्य रीति से निःशुल्क विधिक सहायता की व्यवस्था करेगा ।*

अनुच्छेद 39क के पीछे उद्देश्य — 1 यह निदेश संविधान (42वा सशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा जोडा गया है । यह अनुच्छेद उद्देशिका मे नागरिको को जिस समान न्याय का वचन दिया गया है वह सुनिश्चित करने के लिए और विधि के समक्ष समानता की जो प्रत्याभूति दी गई है उसे पूरा करने के लिए जोडा गया है, क्योंकि यदि निर्धन व्यक्ति अपने विधिक सलाहकार को फीस नही दे सकता है तो उसके लिए यह प्रत्याभूति अर्थहीन होगी । लेखक ने "*कमेटरी आन दि कांस्टीट्यूशन आफ इडिया*"[32] के तीसरे सस्करण में इसके पक्ष में लिखा था । इस अनुच्छेद से वह माग पूरी हो गई है ।[33]

2 यह अभिनिर्धारित किया गया है[34, 35] कि इस अनुच्छेद का उपयोग अनुच्छेद 21 के निर्वचन में किया जा सकता है और परिणामस्वरूप —

(क) जहां कोई बंदी निर्धनता के कारण या पृथक् रखे जाने के कारण अपील के अपने कानूनी अधिकार का प्रयोग इस कारण नही कर सकता है कि वह अपनी ओर से किसी अधिवक्ता को नहीं लगा सकता वहां यदि मामले की परिस्थितियो और न्याय के हित में ऐसा आवश्यक प्रतीत होता है तो न्यायालय बंदी की प्रतिरक्षा के लिए सक्षम वकील प्रदान करेगा । वकील की नियुक्ति पर अपीलार्थी को आक्षेप नही होना चाहिए (क्योंकि उसका सांविधानिक अधिकार है कि वह अपनी इच्छानुसार अधिवक्ता नियुक्त करे) ।[34]

---

29 *रामचन्द्र* बनाम *भारत संघ*, ए 1984 एससी 541 (पैरा 17) ।

29क *भगवान* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए 1987 एससी 2049 (पैरा 13), *जीतसिह* बनाम *दिल्ली नगर निगम*, ए 1987 एससी 1781 ।

30 *शीला* बनाम *भारत संघ*, ए 1986 एससी 1773 (पैरा 4, 10) ।

31 संविधान (बयालीसवा सशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अतःस्थापित ।

32 लेखक की *"कमेंट्री आन दि कान्सटीटयूशन आफ इंडिया"* के छठे संस्करण की जिल्द 'बी' का पृष्ठ 23 देखिए ।

33 सिविल प्रक्रिया सहिता और दड प्रक्रिया संहिता का निर्धन व्यक्तियों की सहायता के लिए पहले ही संशोधन किया जा चुका है और संविधान (बयालीसवा सशोधन) अधिनियम पारित होने के पश्चात् राज्यों को निर्धनों को विधिक सहायता प्रदान करने के लिए नए अनुच्छेद 39क द्वारा यथानिदेशित विनिर्दिष्ट विधान बनाना चाहिए [देखिए *हरियाणा राज्य* बनाम *दर्शन*, ए 1979 एससी 855 (पैरा 5)] । केन्द्रीय सरकार ने विधिक सेवा प्राधिकारी अधिनियम, 1987 (1987 का 39) अधिनियमित किया है । अभी यह प्रवृत्त नहीं हुआ है (1-2-1990 तक) । बिहार, कर्नाटक और मध्य प्रदेश राज्यों ने भी इस प्रयोजन के लिए अधिनियम बनाए हैं (1-2-1990 तक) ।

34 *होस्कोट* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए 1978 एससी 1548 (पैरा 20, 21, 24-26) ।

35 *हुसैनआरा* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1979 एससी 1369 (पैरा 6-7) ।

(ख) **ऐसे मामले में राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह प्रतिपक्ष के अधिवक्ता को** ऐसा **युक्तियुक्त पारिश्रमिक** दे जो न्यायालय द्वारा नियत किया जाए ।[34]

(ग) **राज्य** ऐसे अधिवक्ता को अपील का संचालन करने के लिए सभी युक्तियुक्त **सुविधाएं देगा** । अनुच्छेद 21 में जिस युक्तियुक्त, ऋजु और न्यायपूर्ण प्रक्रिया की बात कही **गई है, यह** उसके अनुरूप होगा ।[35]

(घ) निशुल्क विधिक सहायता का अधिकार तब उत्पन्न होता है जब अभियुक्त **को पहली** बार मजिस्ट्रेट के समक्ष उपस्थित किया जाता है और यह अधिकार विचारण के **दौरान** बना रहता है ।[36]

(ङ) यदि अपराध जघन्य है और प्रतिवादी को दिया गया अधिवक्ता अनुभवहीन है तो यह अनुच्छेद 14, 19 और 21 का उल्लघन होगा ।[36क]

(च) इसका विस्तार उच्चतम न्यायालय की कार्यवाहियो पर भी है ।[37]

3 न्यायालय राज्य को अभियुक्त के लिए वकील नियुक्त करने के लिए परमादेश नहीं दे सकता । इसके लिए दड प्रक्रिया सहिता 1973 की धारा 304(1) में अधिकथित प्रक्रिया का आश्रय लेना होगा ।[38]

4 अधिक मात्रा में कोर्ट फीस लगाना भी सब को समान रूप से न्याय सुलभ कराने के उद्देश्य के विपरीत है ।[39]

ग्राम पचायतों का सगठन ।

40. राज्य ग्राम पंचायतों का संगठन करने के लिए कदम उठाएगा और उनको ऐसी शक्तियां और प्राधिकार प्रदान करेगा जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हों ।

कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक सहायता पाने का अधिकार ।

41. राज्य अपनी आर्थिक सामर्थ्य और विकास की सीमाओं के भीतर, काम पाने के, शिक्षा पाने के और बेकारी, बुढ़ापा, बीमारी और निःशक्तता तथा अन्य अनर्ह अभाव की दशाओं में लोक सहायता पाने के अधिकार को प्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा ।

अभाव की दशाओं में . . . प्राप्त कराने का प्रभावी उपबंध करेगा — इस निदेश के कारण राज्य, सडक दुर्घटना के मामलों म प्रतिकर का दावा करन वाले व्यक्तियो को, न्यायालय फीस के सदाय से छूट दे सकता है या मध्य प्रदेश कोड के निर्धनता सबधी उपबधों को निर्धन दावेदारो को लागू कर सकता है ।[40]

काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबध ।

42 राज्य काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं को सुनिश्चित करने के लिए और प्रसूति सहायता के लिए उपबंध करेगा ।

कर्मकारों के लिए निर्वाह मजदूरी आदि ।

43. राज्य, उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य रीति से कृषि के, उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, निर्वाह मजदूरी, शिष्ट जीवनस्तर और अवकाश का संपूर्ण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाएं तथा सामाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का

---

36 *खत्री* बनाम *बिहार राज्य,* ए 1981 एस सी 928 (पैरा 4) ।

36क *किशोरचंद* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य,* (1991) 1 एस सी सी 286 ।

37 *गोपालनाचारी* बनाम *केरल राज्य,* ए 1981 एस सी 674 (पैरा 6) ।

38 *रंजन* बनाम *भारत संघ,* ए 1953 एस सी 624 (पैरा 7) ।

39 *सेंट्रल कोल फील्ड्स* बनाम *जायसवाल कोल कंपनी,* ए 1980 एस सी 2125 (पैरा 2) ।

40 *हरियाणा राज्य* बनाम *दर्शन,* ए 1979 एस सी 855 (पैरा 6) ।

प्रयास करेगा और विशिष्टतया ग्रामों में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा ।

श्रम विधि — अनुच्छेद 19(1)(छ) के अधीन कारबार की स्वतंत्रता पर यह उपबंध करना इस अनुच्छेद के आधार पर युक्तियुक्त निर्बन्धन होगा कि नियोजक जिस वर्ष उसे हानि हुई है उस वर्ष भी कर्मकारों को न्यूनतम बोनस दे ।[41]

[42]**43क.** *राज्य किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, स्थापनों या अन्य संगठनों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से कदम उठाएगा ।*

उद्योगों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना ।

अनुच्छेद 43क का उद्देश्य — 1 पूंजीवादी अर्थव्यवस्था में किसी उद्योग या उद्यम का संव्यवहार और प्रबंध उस व्यक्ति के पास होता है जो पूजी लगाता है । कर्मकार भाड़े पर रखे जाते हैं और उन्हें केवल मजदूरी मिलती है । पूंजीपति को लाभ या हानि होती है । समाजवादी अर्थव्यवस्था में पूंजीपति के लिए कोई स्थान नहीं है क्योंकि उत्पादन के सभी साधन और उनका प्रबंध राज्य के पास होता है। किंतु पूंजीवाद से समूहवाद की यात्रा रक्तपूर्ण हो इसमें समाजवाद की आस्था नहीं है । समाजवाद धीरे-धीरे परिवर्तन लाने में विश्वास करता है ।

2 42वे सशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा उद्देशिका में समाजवाद शब्द रखने के बाद अनुच्छेद 43क भारत मे समाजवाद की ओर पहला सक्रिय कदम है । अनुच्छेद 43क में यह कहा गया है कि स्वामित्व चाहे प्राइवेट व्यक्ति का हो या राज्य का, किसी विशिष्ट उद्योग या उद्यम मे लगे हुए कर्मकारो को विधान मंडल द्वारा उस उद्योग के प्रबंध में हिस्सा दिया जाएगा । इसका आर्थिक परिणाम यह होगा कि कर्मकार भाड़े के मजदूर नहीं रहेंगे । उनका उद्यम की सफलता में हित होगा और उन्हें लाभों मे अंश प्राप्त होगा । काम करने के अधिकार के अतिरिक्त उद्योग या उपक्रम के प्रबंध में भागीदार बनने के अधिकार के कारण यह आशा बंधी है कि उत्पादन में वृद्धि होगी और उसका स्तर बढेगा । इसके बिना आधुनिक परिस्थितियों में राष्ट्र का विकास असभव है ।

3 किंतु यह दुखद है कि 42वे संशोधन द्वारा अंतःस्थापित अनुच्छेद 51क में दी गई मूल कर्त्तव्यो की सूची में काम करने का कर्त्तव्य नहीं है । प्रबंध मे हिस्सा दिए जाने के बाद भी कर्मकार यदि हड़ताल करते हैं तो इसके विरुद्ध कोई नैतिक अवरोध नहीं है । जब तक अनुच्छेद 39क के अनुसरण में बनाई गई किसी विधि द्वारा हड़ताल पर प्रतिबंध नहीं लगाया जाता तब तक ऐसा नहीं हो सकता । हमारे संविधान में हड़ताल करने का कोई मूल अधिकार नहीं है ।[43]

अनुच्छेद 43क का लागू होना — उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है[44] कि इस अनुच्छेद ने श्रमिकों को उद्योग में भागीदार बना दिया है । यह समझा जाता है कि प्रत्येक उद्योग, पूंजी और श्रम, दोनों का मिला-जुला उपक्रम है । अतएव यदि उद्योग या उपक्रम के हित में कुछ त्याग करना आवश्यक हो जाता है तो दोनों ही समान रूप से त्याग करेंगे । यदि श्रमिक काम करने के लिए तैयार हैं किंतु नियोजक के अवैध कार्य के कारण वे काम नहीं कर सके तो श्रमिकों को उस अवधि की पूरी मजदूरी दी जाएगी ।[39]

---

41. *जालान ट्रेडिंग* बनाम *अणे,* ए 1979 एस.सी 233 (पैरा 2) ।

42. संविधान (बयालीसवां सशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित ।

43. *आल इंडिया बैंक एम्प्लाईज़ एसोसिएशन* बनाम *राष्ट्रीय औद्योगिक अधिकरण,* ए. 1962 एस.सी. 171 (*181*) ।

44. *हिन्दुस्तान टिन वर्क्स* बनाम *कर्मचारी,* ए. 1979 एस.सी. 75 (पैरा 12-13, 18); *गुजरात स्टील ट्यूब्स* बनाम *मजदूर सभा,* ए. 1980 एस.सी. 1899 (पैरा 142-43) ।

यदि अत्यधिक हानि होने के कारण प्रबंध को कुछ श्रमिकों की छंटनी करनी पड़ी और उन मजदूरों को दुबारा लेने के बाद भी हानि बनी रहती है तो औद्योगिक अधिकरण पिछली मजदूरी को कम कर सकता है जिससे कि प्रबंध और श्रमिकों का हानि में समान हिस्सा हो ।[44]

सरकारी परिपत्र का इस प्रकार निर्वचन होना चाहिए कि उससे अनुच्छेद 43क में समाविष्ट सिद्धांतों का उल्लंघन न हो ।[44क]

नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता ।

44. राज्य, भारत के समस्त राज्यक्षेत्र में नागरिकों के लिए एक समान सिविल संहिता प्राप्त कराने का प्रयास करेगा ।

बालकों के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा का उपबंध ।

45. राज्य, इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की अवधि के भीतर सभी बालकों को चौदह वर्ष की आयु पूरी करने तक निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा देने के लिए उपबंध करने का प्रयास करेगा ।

निदेश का प्रविषय — यह निदेश राज्य को यह अधिकार नहीं देता कि वह अल्पसंख्यक समुदाय के अनुच्छेद 30(1) के अधीन अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना करने के मूल अधिकार का अध्यारोहण करे । राज्य के लिए यह संभव है कि वह इस उत्तरदायित्व का निर्वाह सरकार के स्वामित्वाधीन और सहायता पाने वाली पाठशालाओं के माध्यम से करे ।[45]

अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि ।

46. राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों के, विशिष्टतया, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की विशेष सावधानी से अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से उनकी संरक्षा करेगा ।

दुर्बल वर्ग — 1 अनुच्छेद 15(4) के उपबंध को इस निदेश के साथ पढ़ना चाहिए ।[46]

2. अनुच्छेद 15(4) में "पिछड़ा वर्ग" अभिव्यक्ति का प्रयोग किया गया है । फिर भी इस अनुच्छेद में "दुर्बल वर्ग" अभिव्यक्ति आती है । किंतु "शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की" शब्दों के संदर्भ में और "अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों" शब्दों को देखते हुए यह निष्कर्ष निकालना उचित होगा कि "दुर्बल वर्ग" अभिव्यक्ति का प्रयोग उन व्यक्तियों के लिए है जो अनुसूचित जाति या जनजाति के नही हैं । किंतु शैक्षिक और आर्थिक कारणों से जो अनुसूचित जातियों और जनजातियों के समान ही पिछड़े हुए हैं ।[47]

3. यह धारणा करना गलत है कि यदि किसी वर्ग के लोग एक बार दुर्बल वर्ग मान लिए जाते हैं तो वे सदैव इस प्रकार बने रहेंगे । उनकी शैक्षिक और आर्थिक स्थिति के सुधर जाने के बाद सरकार पिछड़े वर्गों या दुर्बल वर्गों की सूची का पुनरीक्षण कर सकती है ।[46, 48]

दुर्बल वर्गों के आर्थिक हित — दुर्बल वर्गों को ऋण से मुक्त कराने के लिए बनाए गए विधान को अनुच्छेद 14, 19(1)(छ) के उल्लंघन के आक्षेप से इस उपबंध के आधार पर संरक्षण मिलेगा ।[49]

44क. *ए.आई. बैंक आफिसर्स* बनाम *भारत संघ*, (1989) 4 एस.सी.सी. 90 (पैरा 11) ।

45. केरल शिक्षा विधेयक, 1957 पर निर्देश, ए. 1958 एस.सी. 956 ।

46. *केरल राज्य* बनाम *थामस*, ए 1976 एस.सी. 490 (*505*); *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *बलराम*, ए. 1972 एस.सी. 1375 ।

47. तुलना कीजिए, *बालाजी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए 1963 एस.सी. 649 (*658*); *जानकी* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 930 ।

48. *पेरिआकरुप्पन* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए 1971 एस.सी. 2303 (*2311*) ।

49. *कृष्ण* बनाम *आंध्र प्रदेश सरकार*, ए. 1979 आंध्र प्रदेश 85 (पैरा 13, 16) ।

पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने तथा लोक स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य ।

47. राज्य, अपने लोगों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने और लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य, विशिष्टतया, मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर ओषधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न, उपभोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करेगा ।

"औषधीय प्रयोजनों से भिन्न" — मद्रास उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है[50] कि इसमें विचार यह है कि औषधीय निर्मित्तियों के विनिर्माण में लिकर या अल्कोहल का प्रयोग किया जा सकता है । इसका यह अर्थ नहीं है कि औषध के रूप में मादक द्रव्यों का अबाध उपयोग हो सकता है ।

यह अनुच्छेद किसी नागरिक को मादक पेय को अपने पास रखने या उसके सेवन करने के लिए कोई प्रवर्तनीय अधिकार नही देता, चाहे सेवन औषधीय प्रयोजनों के लिए ही क्यों न हो ।[50]

कृषि और पशुपालन का संगठन ।

48. राज्य, कृषि और पशुपालन को आधुनिक और वैज्ञानिक प्रणालियों से संगठित करने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया गायों और बछड़ों तथा अन्य दुधारू और वाहक पशुओं की नस्लों के परिरक्षण और सुधार के लिए और उनके वध का प्रतिषेध करने के लिए कदम उठाएगा ।

गोहत्या का प्रतिषेध — 1 इस अनुच्छेद के पश्चात्वर्ती भाग में यह निदेश है कि उसमे उल्लिखित पशुओं के किसी भी वर्ग का वध नहीं किया जाएगा, चाहे कृषि या पशुपालन की दृष्टि से उनकी कोई उपयोगिता न हो ।[51] यह प्रतिषेध अनुच्छेद 19(1)(छ) द्वारा प्रदत्त अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन नहीं माना जा सकता । किंतु निदेश के इस भाग में गायों और बछड़ों को (सभी प्रकार के) ही संरक्षण दिया गया है । यही संरक्षण ऐसे अन्य पशुओं को दिया गया है जो वर्तमान में दुधारू हैं या आगे दूध देंगे या जो वर्तमान में वाहक पशु का काम कर रहे हैं । यह सरक्षण उन पशुओं को नही है जो पहले दूध देता था या वाहक पशु था किंतु अब नहीं है ।[51]

2 गायों और बछड़ों या 16 साल के कम आयु के सांडो और बैलों के वध को प्रतिषिद्ध करने वाली विधि को अनुच्छेद 48 के कारण अनुच्छेद 19(6) के अर्थान्तर्गत अयुक्तियुक्त घोषित नहीं किया जा सकता । ऐसी विधि अनुच्छेद 25-26 का उल्लंघन नहीं करती ।[52]

पर्यावरण का सरक्षण तथा सवर्धन और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा ।

[53]**48क.** *राज्य, देश के पर्यावरण के सरक्षण तथा संवर्धन का और वन तथा वन्य जीवो की रक्षा करने का प्रयास करेगा ।*

राष्ट्रीय महत्व के संस्मारकों, स्थानों और वस्तुओ का संरक्षण ।

49. [54][*संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन*] **राष्ट्रीय महत्व वाले** [54][*घोषित किए गए*] **कलात्मक या ऐतिहासिक अभिरुचि वाले प्रत्येक संस्मारक या स्थान या वस्तु का, यथास्थिति, लुंठन, विरूपण, विनाश, अपसारण, व्ययन या निर्यात से संरक्षण करना राज्य की बाध्यता होगी ।**

---

50. *सतीश* बनाम *राज्य*, ए. 1979 मद्रास 246 (एफ.बी.) (पैरा 16) ।

51. *हनीफ कुरैशी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 731; *अब्दुल हाकिम* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 448 ।

52. *उस्मान भाई* बनाम *राज्य*, (1986) 3 एस.सी.सी. 12 (पैरा 19) ।

53. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित ।

54. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम 1956 द्वारा परिवर्तन किया गया ।

कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण ।

50. राज्य की लोक सेवाओं में, न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के लिए राज्य कदम उठाएगा ।

अनुच्छेद 50 का उद्देश्य — इस निदेश का उद्देश्य न्यायपालिका को कार्यपालिका से स्वतंत्र करना था । भाग 6 का अध्याय 6 इसी उद्देश्य से बनाया गया था ।[55]

51. राज्य, —

अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि ।

(क) अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि का,

(ख) राष्ट्रों के बीच न्यायसंगत और सम्मानपूर्ण संबंधों को बनाए रखने का,

(ग) संगठित लोगों के एक दूसरे से व्यवहारों में अंतरराष्ट्रीय विधि और संधि-बाध्यताओं के प्रति आदर बढ़ाने का, और

(घ) अंतरराष्ट्रीय विवादों के माध्यस्थम् द्वारा निपटारे के लिए प्रोत्साहन देने का,

प्रयास करेगा ।

खंड (ग) : 'अंतरराष्ट्रीय विधि के प्रति आदर' — जहां देशीय विधि और अंतरराष्ट्रीय विधि में अनिवार्य रूप से विरोध है वहां देश के न्यायालय देश की विधि लागू करने के लिए आबद्धकर हैं । किंतु अंतरराष्ट्रीय विधि और अंतरराष्ट्रीय आचार के प्रति आदरस्वरूप देश के न्यायालय देशीय विधि का इस प्रकार निर्वचन करेंगे कि जहां तक हो वे अंतरराष्ट्रीय विधि से असंगत न हों ।[56]

---

55. *चन्द्र मोहन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1987; *भारत संघ* बनाम *संकलचंद*, ए. 1977 एस.सी. 2328 (पैरा 52) ।

56. *ग्रामोफोन कंपनी* बनाम *बीरेन्द्र*, ए. 1984 एस.सी. 667 (पैरा 5-6); *ट्रैक्टोरो-एक्सपोर्ट* बनाम *तारापोर*, ए. 1971 एस.सी. 1 (*8*) ।

भाग 4क[1]

मूल कर्तव्य

[1]51क. *भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह —*

मूल कर्तव्य ।

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान का आदर करे;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे;

(ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियो के समान के विरुद्ध है;

(च) हमारी सामाजिक संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे;

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियो के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊंचाइयों को छू ले ।

मूल कर्तव्यों की उपयोगिता — यह भाग स्वर्ण सिंह समिति की सिफारिशों के अनुसार सविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा जोड़ा गया ।[2] इस संशोधन के कारण हमारा संविधान मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा के अनुच्छेद 29(1) और जापान, चीन और रूस के संविधानों की पंक्ति में आ गया है ।[3]

मूल कर्तव्यों की विधिक उपयोगिता वैसी ही है जैसी 1949 के संविधान में निदेशों की थी । निदेश राज्य को संबोधित हैं । इनके पीछे कोई अधिशास्ति नहीं है । इसी प्रकार कर्तव्य नागरिकों को संबोधित हैं किंतु उनके उल्लंघन पर कोई अधिशास्ति नहीं दी जा सकती । प्रत्येक नागरिक से यह आशा है कि वह अपने मूल अधिकारों का प्रयोग करते समय और उन्हें प्रवृत्त करते समय अपनी आत्मपरीक्षा करेगा और यह स्मरण रखेगा कि राज्य के प्रति उसके कुछ कर्तव्य हैं जो अनुच्छेद 51क में गिनाए गए हैं । यदि वह कर्तव्यों की अवहेलना

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित ।

2 ऐसा प्रतीत होता है कि इस समिति ने डा दुर्गादास बसु के सुझाव को मान लिया । यह सुझाव 'लिमिटेड गर्वमेंट एंड जुडिशियल रिव्यू' विषय पर टैगोर लॉ लेक्चर में पृष्ठ 201 और पश्चात्वर्ती पृष्ठों पर है । व्यक्ति मूल अधिकारों का प्रयोग करते हुए समाज के प्रति अपने कर्तव्य को न भूले या लोक संपत्ति का विनाश न करे इन सबका ध्यान दिलाने के लिए यह आवश्यक है ।

3. लेखक की *"सलेक्ट कान्शटीट्यूशन्स ऑफ दि वर्ल्ड"*, दूसरा संस्करण, पृष्ठ 54, 192, 269 देखिए ।

करता है तो वह अधिकार पाने योग्य नहीं है । उदाहरण के लिए यदि कोई व्यक्ति अनुच्छेद 51क(क) के कर्तव्य के उल्लंघन में संविधान को जलाता है तो वह यह नहीं कह सकता कि सरकार के विरुद्ध प्रदर्शन करते हुए जिस सभा में उसने संविधान जलाया था उसमें अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत वाक् स्वातंत्र्य या संगम स्वातंत्र्य की रक्षा होनी चाहिए । यह ठीक है कि इन कर्तव्यों को न्यायालयों में विधिक रूप से प्रवृत्त नहीं कराया जा सकता किंतु यदि राज्य कोई विधि बनाकर इन कर्तव्यों के उल्लंघन में किए गए किसी कार्य या आचरण को प्रतिषिद्ध करता है तो न्यायालय यह मानेंगे कि वह सुसंगत अधिकार पर युक्तियुक्त निर्बन्धन है । इसी प्रकार निर्वचन करके 1949 के संविधान के अधीन निदेशक तत्वों को क्रियान्वित करने वाली विधि को वैध माना गया था (अर्थात् अनुच्छेद 31ग के अंतःस्थापन और विस्तारित किए जाने के पूर्व) । जब न्यायालय किसी ऐसे अधिनियम का निर्वचन करते हैं जिसका अर्थ अस्पष्ट है या जिसके दो अर्थ हो सकते हैं तब न्यायालय कर्तव्यों की ओर भी दृष्टिपात कर सकते हैं ।[4-5]

उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों में इन कर्तव्यों का एक और पहलू प्रकट हुआ है ।[6] ये कर्तव्य नागरिकों पर आज्ञापक हैं । इसका यह परिणाम होता है कि राज्य को भी उसी उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए जैसे वन, वन्य-जीव और पर्यावरण का संरक्षण जिसके बारे में अनुच्छेद 51क के खंड (छ) में निदेश है । अतएव न्यायालय समुचित मामलों में ऐसे विषयों के बारे में उपयुक्त निदेश दे सकता है ।[7]

4. तुलना कीजिए, *मुंबई कामगार सभा* बनाम *अब्दुल भाई*, ए. 1976 एस.सी. 1455 (पैरा 29) ।

5. मूल कर्तव्यों के कारण "अधिकारों का ह्रास नहीं होगा बल्कि प्रजातंत्र में संतुलन आएगा" (श्रीमती इंदिरा गांधी, लोकसभा में, 28-10-1976) । इससे लोग अपने कर्तव्य के प्रति वैसे ही जागरूक होंगे जैसे वे अपने अधिकारों के प्रति हैं । शिक्षा के पाठ्यक्रमों में ये कर्तव्य सम्मिलित किए जाएं, इसका ध्यान रखा जाएगा (विधि मंत्री, 26-10-1976) ।

6. *आर.एल.ई. केन्द्र* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1985 एस.सी. 653; ए. 1987 एस.सी. 359 (पैरा 20); *बनवासी आश्रम* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 374 ।

7. *रूरल लिटिगेशन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 359 (पैरा 20) ।

भाग 5

संघ

अध्याय 1 — कार्यपालिका

राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति

भारत का राष्ट्रपति ।

52. भारत का एक राष्ट्रपति होगा ।

सघ की कार्यपालिका शक्ति ।

53. (1) संघ की कार्यपालिका शक्ति राष्ट्रपति में निहित होगी और वह इसका प्रयोग इस संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करेगा ।

(2) पूर्वगामी उपबंध की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, संघ के रक्षा बलों का सर्वोच्च समादेश राष्ट्रपति में निहित होगा और उसका प्रयोग विधि द्वारा विनियमित होगा ।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात —

(क) किसी विद्यमान विधि द्वारा किसी राज्य की सरकार या अन्य प्राधिकारी को प्रदान किए गए कृत्य राष्ट्रपति को अंतरित करने वाली नहीं समझी जाएगी; या

(ख) राष्ट्रपति से भिन्न अन्य प्राधिकारियों को विधि द्वारा कृत्य प्रदान करने से संसद् को निवारित नहीं करेगी ।

संविधान में शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत नहीं है — हमारे संविधान के अनुच्छेद 53 ने राष्ट्रपति मे कार्यपालिका शक्ति निहित की है किंतु अन्य निकायों में विधायी और न्यायिक शक्ति निहित करने के लिए संविधान में इस प्रकार का कोई उपबंध नहीं है । मंत्रिमंडल के दायित्व के सिद्धांत का समावेश करके भारत के संविधान ने शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत से विचलन किया है । हमारे संविधान मे यह उपबंध कर दिया गया है कि कार्यपालिका का अध्यक्ष (राष्ट्रपति[1] या राज्यपाल) मंत्रिमंडल की सलाह से कार्य करेगा । मंत्रिमंडल विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी होगा । इसी प्रकार अमरीकी संविधान से हमारा संविधान भिन्न है । हमारे संविधान में ही कुछ अन्य उपबंध ऐसे हैं जिनके द्वारा कार्यपालिका या न्यायपालिका को विधायी शक्तियां दी गई हैं । अनुच्छेद 140 में यह उपबंध है कि संसद् उच्चतम न्यायालय को नियम बनाने की शक्ति प्रदान कर सकती है (यह विधायी शक्ति है) । अनुच्छेद 357 में यह उपबंध है कि आपात की उद्घोषणा के अधीन संसद् यह उपबंध करने के लिए सक्षम होगी कि राज्य विधान मंडल की विधि बनाने की शक्ति का प्रयोग राष्ट्रपति द्वारा किया जाएगा ।[2] विधान मंडल के अवकाश के समय राष्ट्रपति की अध्यादेश जारी करने की शक्ति कार्यपालिका में निहित विधायी शक्ति का उदाहरण है ।

यद्यपि हमारे संविधान में शक्ति के पृथक्करण के सिद्धांत का कठोरता से अनुसरण नहीं किया गया है फिर भी इसका यह अर्थ नहीं है कि हमारे संविधान में एक अंग दूसरे

---

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा आगे अनुच्छेद 74(1) में संशोधन करके यह अब और सुस्पष्ट कर दिया गया है ।

2. दिल्ली विधि अधिनियम का मामला, 1912, (1951) एस.सी.आर. 747 (*835, 884, 943-45, 965*) ।

अंग की संविधायी शक्ति का अतिचार कर सकता है[3] या अपने सांविधानिक कृत्य किसी अन्य अंग या प्राधिकारी को प्रत्यायोजित कर सकता है । लिखित संविधान में शक्तियों का वितरण आवश्यक है । यद्यपि संविधान द्वारा विधायी और न्यायिक शक्तियां विधान मंडल और न्यायपालिका में अभिव्यक्त रूप से निहित नहीं की गई हैं फिर भी संविधान के विभिन्न उपबंधों से यह स्पष्ट है कि विनिर्दिष्ट अपवादों को छोड़कर विधि बनाने की शक्ति का प्रयोग संसद् और राज्य के विधान मंडल करेंगे और संविधान का निर्वचन करने और निर्णय देने की शक्ति का प्रयोग न्यायालय द्वारा किया जाएगा । संविधान ने यह भार विधान मंडल और न्यायालयों पर डाला है और वे स्वयं इसे प्रत्यायोजित नहीं कर सकते ।[2]

विधान मंडल किसी न्यायालय के निर्णय का प्रत्यक्ष रूप से अध्यारोहण नहीं कर सकता और न उसे शून्य घोषित कर सकता है क्योंकि यह न्यायिक शक्ति का प्रयोग हो जाएगा । इसका दूसरा कारण यह भी है कि विधि साधारण होनी चाहिए और साधारणतः लागू की जानी चाहिए ।[4] यदि विधान मंडल किसी विशिष्ट मामले का विनिश्चय करता है तो यह "बिल आफ अटेंडर" (दंडादेश देने वाला अधिनियम) हो जाएगा ।[4]

निम्नलिखित दशाओं में न्यायिक शक्ति का अतिक्रमण नहीं होता, —

(i) विधान मंडल भूतलक्षी रूप से विधि में परिवर्तन करके निर्णय के आधार में परिवर्तन कर देता है जिससे निर्णय निष्प्रभावी हो जाता है । इसे विधिमान्य करना कहते हैं ।[4] यदि यह अनुच्छेद 13 (या अनुच्छेद 20) के विरुद्ध हो तब यह नहीं किया जा सकता ।[4-5]

(ii) विधान मंडल निश्चायक साक्ष्य घोषित करने वाला खंड अधिनियमित करता है ।[4]

कार्यपालिका शक्ति — कार्यपालिका कृत्य क्या होता है इसकी सर्वव्यापी परिभाषा देना संभव नहीं है । सामान्यतया कार्यपालिका शक्ति में वे सब सरकारी कृत्य आते हैं जो विधायी और न्यायिक कृत्यों को निकालने पर बचे रहते हैं ।[6] किंतु यह वक्तव्य संविधान या किसी अन्य विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए है ।[3]

कार्यपालिका कृत्य में, नीति का अवधारण और उसका निष्पादन, विधायन का प्रारम्भ, व्यवस्था बनाए रखना, सामाजिक और आर्थिक कल्याण का प्रोन्नयन, विदेश नीति का संचालन आदि आते हैं । वस्तुतः राज्य के सामान्य प्रशासन को चलाना या उसका अधीक्षण इसमें आता है ।[3] इसमें राजनीतिक और राजनयिक गतिविधियां भी सम्मिलित हैं ।[7]

अनुच्छेद 298 के कारण इसमें, —

(क) व्यापार करना,

(ख) संपत्ति का अर्जन, धारण और व्ययन आदि,

(ग) किसी भी प्रयोजन के लिए संविदा करना भी है ।

कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग पूर्ववर्ती विधान पर आश्रित नहीं है — कार्यपालिका का एक काम विधियों का निष्पादन करना भी है । इसका यह अर्थ नहीं है कि किसी विषय के बारे में कार्यपालिका तभी काम कर सकती है जब कोई विधि पहले से विद्यमान हो । कुछ कार्यों के लिए विधान होना अनिवार्य है । लोक निधि से व्यय करने के लिए विनिर्दिष्ट विधान होना आवश्यक है । इसी प्रकार संविधान के अधीन प्राइवेट अधिकारों पर विधान के बिना अतिक्रमण नहीं किया जा सकता । किंतु इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा

3. *राम जवाया* बनाम *पंजाब राज्य*, (1956) 2 एस.सी.आर. 225 (*236*) ।

4. *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए 1975 एस.सी 2299 (पैरा 194, 210, 284, 299, 324, 329, 604, 689-90) ।

5. *कांता* बनाम *मानक चंद*, ए. 1970 एस.सी. 694 ।

6 *जयंतीलाल* बनाम *राणा*, ए. 1964 एस.सी. 648 (*655*) ।

7. *सतवंत सिंह* बनाम *सहायक ए.पी.ओ.*, ए. 1967 एस.सी. 1836 (*1845*) ।

सकता कि कोई कार्य करने के लिए जैसे व्यापार या कारबार चलाने के लिए यह आवश्यक है कि कार्यपालिका पहले विधायी मंजूरी प्राप्त कर ले ।[3]

कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में सरकार कोई भी ऐसा कार्य कर सकती है जो,

(i) ऐसा कार्य नहीं है जो सविधान द्वारा किसी अन्य प्राधिकारी या निकाय को सौपा गया है जैसे विधान मंडल या न्यायपालिका या लोकसेवा आयोग (जैसे अनुच्छेद 3 में विनिर्दिष्ट विषय) ।[3]

(ii) संविधान या किसी अन्य विधि के उपबंधों के प्रतिकूल नहीं है ।[8]

(iii) किसी व्यक्ति के विधिक अधिकारों का उल्लंघन या अतिक्रमण नहीं करता है ।[3]

इसी सिद्धांत के अनुसार यह अभिनिर्धारित हुआ है[9] कि संधि करना कार्यपालिका का कार्य है और देशीय न्यायालय भारत सरकार द्वारा अनुच्छेद 53 के अधीन शक्ति के प्रयोग में की गई संधि की विधिमान्यता के प्रश्न पर विचार नही कर सकते और सधि को इस आधार पर दोषपूर्ण नहीं ठहराया जा सकता कि उसके समर्थन में कोई विधान नहीं है ।

संधि को प्रभावी करने के लिए विधान की वहां आवश्यकता होगी, —

(क) जहा किसी विदेशी शक्ति को धन का सदाय करने का उपबध किया गया है क्योंकि धन भारत की संचित निधि से निकाला जाएगा ।[7]

(ख) जहां सधि से भारत के नागरिकों के अधिकार प्रभावित होते हैं । किसी विदेशी शक्ति द्वारा भारत को अध्यर्पित संपत्ति के अर्जन के लिए विधायी मजूरी की आवश्यकता नहीं है, किंतु भारत के राज्यक्षेत्र को किसी विदेशी राज्य को अध्यर्पित करने के लिए सविधान का संशोधन किया जाना आवश्यक है ।[9, 10]

अधीनस्थ अधिकारी — मंत्री, यथास्थिति, राष्ट्रपति [अनुच्छेद 53(1)] या राज्यपाल [अनुच्छेद 154(1)] के अधीनस्थ कर्मचारी हैं । अतएव वे भारतीय दड सहिता की धारा 21 के अर्थान्तर्गत लोकसेवक भी हैं ।[10]

राष्ट्रपति का निर्वाचन ।

54. राष्ट्रपति का निर्वाचन ऐसे निर्वाचकगण के सदस्य करेंगे जिसमें —

(क) संसद् के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्य, और

(ख) राज्यों की विधान सभाओं के निर्वाचित सदस्य होंगे ।

[10क]*स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद और अनुच्छेद 55 मे, "राज्य" के अंतर्गत दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र और पांडिचेरी सघ राज्यक्षेत्र हैं ।*

राष्ट्रपति के निर्वाचन की रीति ।

55. (1) जहां तक साध्य हो, राष्ट्रपति के निर्वाचन में भिन्न-भिन्न राज्यों के प्रतिनिधित्व के मापमान में एकरूपता होगी ।

(2) राज्यों में आपस में ऐसी एकरूपता तथा समस्त राज्यों और संघ में समतुल्यता प्राप्त कराने के लिए संसद् और प्रत्येक राज्य की विधान सभा का प्रत्येक निर्वाचित सदस्य ऐसे निर्वाचन में जितने मत देने का हकदार है उनकी संख्या निम्नलिखित रीति से अवधारित की जाएगी, अर्थात् —

(क) किसी राज्य की विधान सभा के प्रत्येक निर्वाचित सदस्य के उतने मत होंगे जितने कि एक हजार के गुणित उस भागफल में हों जो राज्य की जनसंख्या को उस विधान सभा के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या से भाग देने पर आए;

(ख) यदि एक हजार के उक्त गुणितों को लेने के बाद शेष पांच सौ से कम नहीं हैं तो उपखंड (क) में निर्दिष्ट प्रत्येक सदस्य के मतों की संख्या में एक और जोड़ दिया जाएगा;

(ग) संसद् के प्रत्येक सदन के प्रत्येक निर्वाचित सदस्य के मतों की संख्या वह होगी जो उपखंड (क) और उपखंड (ख) के अधीन राज्यों की विधान सभाओं के सदस्यों के लिए नियत कुल मतों की

---

8 *कस्तूरी* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, (1980) एससी 9-5-1980 ।

9 *मगनभाई* बनाम *भारत संघ*, ए 1969 एससी 783 (*807*) ।

10 बेरुबारी संघ का मामला, (1960) 3 एससीआर 250 ।

10क संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1992 द्वारा तारीख से अंतःस्थापित ।

संख्या को, संसद् के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या से भाग देने पर आए, जिसमें आधे से अधिक भिन्न को एक गिना जाएगा और अन्य भिन्नों की उपेक्षा की जाएगी ।

(3) राष्ट्रपति का निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा होगा और ऐसे निर्वाचन में मतदान गुप्त होगा ।

[11]*स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद में, "जनसंख्या" पद से ऐसी अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना में अभिनिश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसंगत आंकडे प्रकाशित हो गए हैं*

परंतु इस स्पष्टीकरण मे अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना के प्रति, जिसके सुसंगत आंकडे प्रकाशित हो गए हैं, निर्देश का, जब तक सन् 2000 के पश्चात् की गई पहली जनगणना के सुसंगत आंकडे प्रकाशित नही हो जाते हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह 1971 की जनगणना के प्रति निर्देश है ।

राष्ट्रपति की पदावधि ।

56. (1) राष्ट्रपति अपने पद ग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा :

परंतु —

(क) राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा,

(ख) संविधान का अतिक्रमण करने पर राष्ट्रपति को अनुच्छेद 61 में उपबंधित रीति से चलाए गए महाभियोग द्वारा पद से हटाया जा सकेगा,

(ग) राष्ट्रपति, अपने पद की अवधि समाप्त हो जाने पर भी, तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता है ।

(2) खंड (1) के परंतुक के खंड (क) के अधीन उपराष्ट्रपति को संबोधित त्यागपत्र की सूचना उसके द्वारा लोक सभा के अध्यक्ष को तुरंत दी जाएगी ।

खंड (1), परंतुक (ग) — राष्ट्रपति की पदावधि पाच वर्ष नय की गई है और रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन अवधि की समाप्ति के पहले पूरा हो जाना चाहिए । किंतु उत्तरवर्ती तब तक पदभार ग्रहण नही कर सकता जब तक कि निर्वाचन का परिणाम घोषित नही हो जाता और वह अनुच्छेद 60 के अधीन पद की शपथ ग्रहण नहीं कर लेता । यह सभव है कि उत्तरवर्ती, जिस दिन पदावरोही राष्ट्रपति की पदावधि समाप्त हो रही है उसके ठीक दूसरे दिन पद भार ग्रहण न कर सके । इसीलिए इस परंतुक मे यह उपबंध किया गया है कि पदावधि के समाप्त होने पर भी पदावरोही राष्ट्रपति तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक कि उसका उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण नही कर लेता ।[12]

पुनर्निर्वाचन के लिए पात्रता ।

57. कोई व्यक्ति, जो राष्ट्रपति के रूप में पद धारण करता है या कर चुका है, इस संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए उस पद के लिए पुनर्निर्वाचन का पात्र होगा ।

राष्ट्रपति निर्वाचित होने के लिए अर्हताएं ।

58. (1) कोई व्यक्ति राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र तभी होगा जब वह —

(क) भारत का नागरिक है,

(ख) पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका है, और

(ग) लोक सभा का सदस्य निर्वाचित होने के लिए अर्हित है ।

(2) कोई व्यक्ति, जो भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन अथवा उक्त सरकारों में से किसी के नियंत्रण में किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन कोई लाभ का पद धारण करता है, राष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र नहीं होगा ।

---

11 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित ।

12 राष्ट्रपतीय निर्वाचन का मामला, ए 1974 एससी 1682 (पैरा 18) ।

*स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए, कोई व्यक्ति केवल इस कारण कोई लाभ का पद धारण करने वाला नहीं समझा जाएगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल[13]*** है अथवा संघ का या किसी राज्य का मंत्री है ।*

राष्ट्रपति के पद के लिए शर्तें ।

59. (1) राष्ट्रपति संसद् के किसी सदन का या किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का सदस्य नहीं होगा और यदि संसद् के किसी सदन का या किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का कोई सदस्य राष्ट्रपति निर्वाचित हो जाता है तो यह समझा जाएगा कि उसने उस सदन में अपना स्थान राष्ट्रपति के रूप में अपने पद ग्रहण की तारीख से रिक्त कर दिया है ।

(2) राष्ट्रपति अन्य कोई लाभ का पद धारण नहीं करेगा ।

(3) राष्ट्रपति, बिना किराया दिए, अपने शासकीय निवासों के उपयोग का हकदार होगा और ऐसी उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का भी, जो संसद्, विधि द्वारा अवधारित करे और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसी उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों, का, जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, हकदार होगा ।

(4) राष्ट्रपति की उपलब्धियां और भत्ते उसकी पदावधि के दौरान कम नहीं किए जाएंगे ।

राष्ट्रपति द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान ।

60. प्रत्येक राष्ट्रपति और प्रत्येक व्यक्ति, जो राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर रहा है या उसके कृत्यों का निर्वहन कर रहा है, अपना पद ग्रहण करने से पहले भारत के मुख्य न्यायमूर्ति या उसकी अनुपस्थिति में उच्चतम न्यायालय के उपलब्ध ज्येष्ठतम न्यायाधीश के समक्ष निम्नलिखित प्ररूप में शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा, अर्थात् —

"मैं, अमुक $\frac{\text{ईश्वर की शपथ लेता हूं}}{\text{सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञा करता हूं}}$ कि मैं श्रद्धापूर्वक भारत के राष्ट्रपति के पद का कार्यपालन (अथवा राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन) करूंगा तथा अपनी पूरी योग्यता से संविधान और विधि का परिरक्षण, संरक्षण और प्रतिरक्षण करूंगा और मैं भारत की जनता की सेवा और कल्याण में निरत रहूंगा ।"

राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाने की प्रक्रिया ।

61. (1) जब संविधान के अतिक्रमण के लिए राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाना हो, तब संसद् का कोई सदन आरोप लगाएगा ।

(2) ऐसा कोई आरोप तब तक नहीं लगाया जाएगा जब तक कि —

(क) ऐसा आरोप लगाने की प्रस्थापना किसी ऐसे संकल्प में अंतर्विष्ट नहीं है, जो कम से कम चौदह दिन की ऐसी लिखित सूचना के दिए जाने के पश्चात् प्रस्तावित किया गया है जिस पर उस सदन की कुल सदस्य संख्या के कम से कम एक-चौथाई सदस्यों ने हस्ताक्षर करके उस संकल्प को प्रस्तावित करने का अपना आशय प्रकट किया है; और

(ख) उस सदन की कुल सदस्य संख्या के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा ऐसा संकल्प पारित नहीं किया गया है ।

(3) जब आरोप संसद् के किसी सदन द्वारा इस प्रकार लगाया गया है तब दूसरा सदन उस आरोप का अन्वेषण करेगा या कराएगा और ऐसे अन्वेषण में उपस्थित होने का तथा अपना प्रतिनिधित्व कराने का राष्ट्रपति को अधिकार होगा ।

(4) यदि अन्वेषण के परिणामस्वरूप यह घोषित करने वाला संकल्प कि राष्ट्रपति के विरुद्ध लगाया गया आरोप सिद्ध हो गया है, आरोप का अन्वेषण करने या कराने वाले सदन की कुल सदस्य

---

13. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख या उप-राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

संख्या के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर दिया जाता है तो ऐसे संकल्प का प्रभाव उसके इस प्रकार पारित किए जाने की तारीख से राष्ट्रपति को उसके पद से हटाना होगा ।

राष्ट्रपति के पद में रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन करने का समय और आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचित व्यक्ति की पदावधि ।

62. (1) राष्ट्रपति की पदावधि की समाप्ति से हुई रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन, पदावधि की समाप्ति से पहले ही पूर्ण कर लिया जाएगा ।

(2) राष्ट्रपति की मृत्यु, पदत्याग या पद से हटाए जाने या अन्य कारण से हुई उसके पद में रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन, रिक्ति होने की तारीख के पश्चात् यथाशीघ्र और प्रत्येक दशा में छह मास बीतने से पहले किया जाएगा और रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचित व्यक्ति, अनुच्छेद 56 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अपने पद ग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की पूरी अवधि तक पद धारण करने का हकदार होगा ।

भारत का उपराष्ट्रपति ।

63. भारत का एक उपराष्ट्रपति होगा

उपराष्ट्रपति का राज्य सभा का पदेन सभापति होना ।

64. उपराष्ट्रपति, राज्य सभा का पदेन सभापति होगा और अन्य कोई लाभ का पद धारण नहीं करेगा :

परंतु जिस किसी अवधि के दौरान उपराष्ट्रपति, अनुच्छेद 65 के अधीन राष्ट्रपति के रूप में कार्य करता है या राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन करता है, उस अवधि के दौरान वह राज्य सभा के सभापति के पद के कर्तव्यों का पालन नहीं करेगा और वह अनुच्छेद 97 के अधीन राज्य सभा के सभापति को संदेय वेतन या भत्ते का हकदार नहीं होगा ।

राष्ट्रपति के पद में आकस्मिक रिक्ति के दौरान या उसकी अनुपस्थिति में उपराष्ट्रपति का राष्ट्रपति के रूप में कार्य करना या उसके कृत्यों का निर्वहन ।

65. (1) राष्ट्रपति की मृत्यु, पदत्याग या पद से हटाए जाने या अन्य कारण से उसके पद में हुई रिक्ति की दशा में उपराष्ट्रपति उस तारीख तक राष्ट्रपति के रूप में कार्य करेगा जिस तारीख को ऐसी रिक्ति को भरने के लिए इस अध्याय के उपबंधों के अनुसार निर्वाचित नया राष्ट्रपति अपना पद ग्रहण करता है ।

(2) जब राष्ट्रपति अनुपस्थिति, बीमारी या अन्य किसी कारण से अपने कृत्यों का निर्वहन करने में असमर्थ है तब उपराष्ट्रपति उस तारीख तक उसके कृत्यों का निर्वहन करेगा जिस तारीख को राष्ट्रपति अपने कर्तव्यों को फिर से संभालता है ।

(3) उपराष्ट्रपति को उस अवधि के दौरान और उस अवधि के संबंध में, जब वह राष्ट्रपति के रूप में इस प्रकार कार्य कर रहा है या उसके कृत्यों का निर्वहन कर रहा है, राष्ट्रपति की सभी शक्तियां और उन्मुक्तियां होंगी तथा वह ऐसी उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का जो संसद्, विधि द्वारा, अवधारित करे, और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसी उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का, जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, हकदार होगा ।

खंड (1) — *यह खंड अनुच्छेद 62(2) का अनुपूरक है ।* इसका यह अर्थ है कि जब राष्ट्रपति का पद मृत्यु, पदत्याग, पद से हटाए जाने या अन्य कारण से रिक्त हो जाता है तो रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन यथासंभव शीघ्र किया जाएगा और ऐसे निर्वाचन के बाद नए राष्ट्रपति के पद भार ग्रहण करने तक, उपराष्ट्रपति, राष्ट्रपति के रूप में कार्य करेगा । ऐसी परिस्थितियों में पदावरोही राष्ट्रपति पद में बना नहीं रह सकता । एक ही मामले में वह बना रह सकता है और वह है *अनुच्छेद 56(1)(ग) में विनिर्दिष्ट राष्ट्रपति के पदावधि* की समाप्ति से संबंधित परिस्थिति ।[12]

उपराष्ट्रपति का निर्वाचन ।

66. (1) उपराष्ट्रपति का निर्वाचन [*संसद् के दोनों सदनों के सदस्यों से मिलकर बनने वाले निर्वाचकगण के सदस्यों*][14] **द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा होगा और ऐसे निर्वाचन में मतदान गुप्त होगा ।**

(2) उपराष्ट्रपति संसद् के किसी सदन का या किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का सदस्य नहीं होगा और यदि संसद् के किसी सदन का या किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का कोई सदस्य उपराष्ट्रपति निर्वाचित हो जाता है तो यह समझा जाएगा कि उसने उस सदन में अपना स्थान उपराष्ट्रपति के रूप में अपने पद ग्रहण की तारीख से रिक्त कर दिया है ।

(3) कोई व्यक्ति उपराष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र तभी होगा जब वह —

(क) भारत का नागरिक है;

(ख) पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका है; और

(ग) राज्य सभा का सदस्य निर्वाचित होने के लिए अर्हित है ।

(4) कोई व्यक्ति जो भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन अथवा उक्त सरकारों में से किसी के नियंत्रण में किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन कोई लाभ का पद धारण करता है, उपराष्ट्रपति निर्वाचित होने का पात्र नहीं होगा ।

स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए, कोई व्यक्ति केवल इस कारण कोई लाभ का पद धारण करने वाला नहीं समझा जाएगा कि वह संघ का राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल [13]*** है अथवा संघ का या किसी राज्य का मंत्री है ।

खंड (4) : अनर्हता की शर्तें — देखिए *गुरुशातप्पा का वाद* ।[15]

उपराष्ट्रपति की पदावधि

67. उपराष्ट्रपति अपने पद ग्रहण करने की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा :

परंतु —

(क) उपराष्ट्रपति, राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा;

(ख) उपराष्ट्रपति, राज्य सभा के ऐसे संकल्प द्वारा अपने पद से हटाया जा सकेगा जिसे राज्य सभा के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत ने पारित किया है और जिससे लोक सभा सहमत है; किंतु इस खंड के प्रयोजन के लिए कोई संकल्प तब तक प्रस्तावित नहीं किया जाएगा जब तक कि उस संकल्प को प्रस्तावित करने के आशय की कम से कम चौदह दिन की सूचना न दे दी गई हो;

(ग) उपराष्ट्रपति, अपने पद की अवधि समाप्त हो जाने पर भी तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता है ।

उपराष्ट्रपति के पद मे रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन करने का समय और आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचित व्यक्ति की पदावधि ।

68. (1) उपराष्ट्रपति की पदावधि की समाप्ति से हुई रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन, पदावधि की समाप्ति से पहले ही पूर्ण कर लिया जाएगा ।

(2) उपराष्ट्रपति की मृत्यु, पदत्याग या पद से हटाए जाने या अन्य कारण से हुई उसके पद में रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन, रिक्ति होने के पश्चात् यथाशीघ्र किया जाएगा और रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचित व्यक्ति, अनुच्छेद 67 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अपने पद ग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की पूरी अवधि तक पद धारण करने का हकदार होगा ।

14. *संविधान (ग्यारहवां संशोधन) अधिनियम*, 1961 द्वारा "*संयुक्त अधिवेशन में समवेत संसद् के दोनों सदनों के सदस्यों*" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

15. *गुरुशांतप्पा* बनाम *अब्दुल खुद्दूस*, ए. 1969 एस.सी. 744 (*750*) ।

69. प्रत्येक उपराष्ट्रपति अपना पद ग्रहण करने से पहले राष्ट्रपति अथवा उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त किसी व्यक्ति के समक्ष निम्नलिखित प्ररूप में शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा, अर्थात् :—

उपराष्ट्रपति द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान ।

"मैं, $\frac{\text{ईश्वर की शपथ लेता हूं,}}{\text{सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं}}$ कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा तथा जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूं उसके कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक निर्वहन करूंगा"।

70. संसद् ऐसी किसी आकस्मिकता में जो इस अध्याय में उपबंधित नहीं है, राष्ट्रपति के कृत्यों के निर्वहन के लिए ऐसा उपबंध कर सकेगी जो वह ठीक समझे ।

अन्य आकस्मिकताओं में राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन ।

[16]71. (1) *राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से उत्पन्न या संसक्त सभी शंकाओं और विवादों की जांच और विनिश्चय उच्चतम न्यायालय द्वारा किया जाएगा और उसका विनिश्चय अंतिम होगा ।*

राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित या संसक्त विषय ।

(2) यदि उच्चतम न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति के राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के रूप में निर्वाचन को शून्य घोषित कर दिया जाता है तो उसके द्वारा, यथास्थिति, राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के पद की शक्तियों के प्रयोग और कर्तव्यों के पालन में उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय की तारीख को या उससे पहले किए गए कार्य उस घोषणा के कारण अविधिमान्य नहीं होंगे ।

(3) इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित या संसक्त किसी विषय का विनियमन संसद् विधि द्वारा कर सकेगी ।

(4) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के रूप में किसी व्यक्ति के निर्वाचन को उसे निर्वाचित करने वाले निर्वाचकगण के सदस्यों में किसी भी कारण से विद्यमान किसी रिक्ति के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।

खंड (1) : राष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित संदेह और विवादों का विनिश्चय — *अ — 1975 के पहले की विधि* — मूल अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित व्यावृत्तियों के निपटाने की अधिकारिता उच्चतम न्यायालय को थी । 39वें संशोधन ने इस अधिकारिता को ऐसे निकाय में निहित कर दिया जो संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा स्थापित की जाए ।

आ — 10 अगस्त, 1975 के पश्चात् — 1. मोरारजी देसाई की जनता सरकार ने यह वचन दिया था कि वे सर्वोच्च न्यायालय के स्थान पर न्यायिकेतर निकाय को रखने के अजनतांत्रिक कदम को वापस कर देंगे । किंतु राज्य सभा में कांग्रेस का बहुमत होने के कारण 39वें संशोधन द्वारा किए गए परिवर्तनों को मिटाने के लिए संविधान संशोधन विधेयक तुरंत पास करा पाना संभव नहीं हो सका । इस कठिनाई को दूर करने के लिए सामान्य विधान बनाया गया । 1977 के एक विधेयक द्वारा राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय के निर्वाचन अधिनियम में संशोधन कर दिया गया । कांग्रेसी बहुमत वाली राज्य सभा ने 29 जून, 1977 को उसे स्वीकार कर लिया ।

2. पूर्वगामी कानूनी परिवर्तन को संविधान (44वें संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 71 की पुनः रचना करके पुष्ट कर दिया गया है । इससे वापस वही मूल उपबंध

---

16. पहले, संविधान (उनतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा प्रतिस्थापित और पुनः संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा प्रतिस्थापित ।

आ गया है जिसमे उच्चतम न्यायालय को अधिकारिता देकर अन्तिम अधिकरण बनाया गया था ।

राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन पर जब आक्षेप किया जाता है तब उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता का प्रविषय — 1 निर्वाचन, कामन ला द्वारा या सविधान द्वारा दिया गया अधिकार नही है । यह कानूनी अधिकार है इसलिए निर्वाचन को उसी अधिनियम में उपबधित रीति से और आधारों पर अपास्त किया जा सकता है जिस अधिनियम में निर्वाचन का अधिकार दिया गया है ।[17]

2 इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन को 1952 के राष्ट्रपतीय और उपराष्ट्रपतीय निर्वाचन अधिनियम मे विनिर्दिष्ट आधार पर ही अपास्त किया जा सकता है किसी अन्य आधार पर नही । जैसे, इस आधार पर नहीं कि प्रत्यर्थी उस पद के लिए उपयुक्त नही है क्योकि यह प्रश्न तो निर्वाचकगण तय करेंगे ।[17]

अनुच्छेद 58 और 71 — अनुच्छेद 58 मे राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए अभ्यर्थी की पात्रता के लिए अर्हताए दी गई है । उसमे ऐसे प्रत्यर्थी के नामनिर्देशन का ढग नही है । इसे अनुच्छेद 71 के खड (3) के उपबधो के अनुसार विधि द्वारा विनियमित किया जा सकता है (44वा सशोधन अधिनियम 1978 के पहले भी यह खड (1) था) ।[18]

क्षमा आदि की और कुछ मामलो में दडादेश के निलबन, परिहार या लघुकरण की राष्ट्रपति की शक्ति ।

72 (1) **राष्ट्रपति को, किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराए गए किसी व्यक्ति के दंड को क्षमा, उसका प्रविलंबन, विराम या परिहार करने की अथवा दंडादेश के निलंबन, परिहार या लघुकरण की —**

(क) उन सभी मामलों में, जिनमें दंड या दंडादेश सेना न्यायालय ने दिया है,

(ख) उन सभी मामलों में, जिनमें दंड या दंडादेश ऐसे विषय संबंधी किसी विधि के विरुद्ध अपराध के लिए दिया गया है जिस विषय तक संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है,

(ग) उन सभी मामलों मे, जिनमे दंडादेश, मृत्यु दडादेश है

शक्ति होगी ।

(2) खंड (1) के उपखंड (क) की कोई बात सघ के सशस्त्र बलों के किसी आफिसर की सेना न्यायालय द्वारा पारित दंडादेश के निलंबन, परिहार या लघूकरण की विधि द्वारा प्रदत्त शक्ति पर प्रभाव नहीं डालेगी ।

(3) खंड (1) के उपखंड (ग) की कोई बात तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन किसी राज्य के राज्यपाल [19]* द्वारा प्रयोक्तव्य मृत्यु दंडादेश के निलंबन, परिहार या लघूकरण की शक्ति पर प्रभाव नहीं डालेगी ।**

राष्ट्रपति की क्षमा करने की शक्ति — 1 इस अनुच्छेद के अधीन राष्ट्रपति की शक्ति कार्यपालिक शक्ति है और उसका प्रयोग केन्द्रीय सरकार की सलाह पर किया जाएगा ।[19क]

2 क्षमा की याचना करने वाले को राष्ट्रपति के समक्ष मौखिक सुनवाई का कोई अधिकार नही है ।[19क]

---

17 *चरण* बनाम *जैलसिह*, ए 1984 एससी 309 (पैरा 24-26) ।

18 *चरण* बनाम *सजीव*, ए 1978 एससी 499 (पैरा 11) । पुराने अनुच्छेद 71 के खंड (3) में ऐसी विधि की सांविधानिकता पर आक्षेप करना निषिद्ध कर दिया गया था । प्रोद्धरित वाद में इसका अवलंब लिया गया था । 44वें संशोधन द्वारा खंड (3) का लोप कर दिया गया । यह उचित ही था क्योंकि उच्चतम न्यायालय को उस स्थिति में नहीं रखा जा सकता जिसमें कनिष्ठ न्यायालय होते है ।

19 सविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

19क *केहर* बनाम *भारत संघ*, (1989) 1 एससीसी 204 ।

3. न्यायालय इस अनुच्छेद के अधीन राष्ट्रपति की शक्ति के विस्तार पर विचार कर सकता है किंतु राष्ट्रपति के विनिश्चय के गुणागुण पर विचार नहीं कर सकता । राष्ट्रपति का विनिश्चय अंतिम न्यायालय के निर्णय से भिन्न हो सकता है ।[19क]

4. *मारुराम*[19ख] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने नियम बनाने के लिए जो सिफारिश की थी वह निर्णयाधार नहीं, संप्रेक्षण मात्र था ।[19ग]

संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार ।

73. (1) इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार —

(क) जिन विषयों के संबंध में संसद् को विधि बनाने की शक्ति है उन तक, और

(ख) किसी संधि या करार के आधार पर भारत सरकार द्वारा प्रयोक्तव्य अधिकारों, प्राधिकार और अधिकारिता के प्रयोग तक,

होगा :

परंतु इस संविधान में या संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि में अभिव्यक्त रूप से यथा उपबंधित के सिवाय, उपखंड (क) में निर्दिष्ट कार्यपालिका शक्ति का विस्तार किसी [20]* राज्य में ऐसे विषयों तक नहीं होगा जिनके संबंध में उस राज्य के विधान मंडल को भी विधि बनाने की शक्ति है ।**

(2) जब तक संसद् अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, कोई राज्य और राज्य का कोई अधिकारी या प्राधिकारी उन विषयों में, जिनके संबंध में संसद् को उस राज्य के लिए विधि बनाने की शक्ति है, ऐसी कार्यपालिका शक्ति का या कृत्यों का प्रयोग कर सकेगा जिनका प्रयोग वह राज्य या उसका अधिकारी या प्राधिकारी इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले कर सकता था ।

'संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए' — अनुच्छेद 73 और 162 के उपबंधों के अतिरिक्त तीन विनिर्दिष्ट बातों के बारे में संघ और राज्य सरकारों को कार्यपालिका शक्ति दी गई है, —

(i) व्यापार या कारबार चलाना [अनुच्छेद 298],

(ii) सम्पत्ति का अर्जन, धारण और व्ययन [अनुच्छेद 298],

(iii) किसी भी प्रयोजन के लिए संविदा करना [अनुच्छेद 299] ।

'कार्यपालिका शक्ति' — देखिए पीछे अनुच्छेद 53 ।

खंड (1)(क) — 1 इस उपबंध के आधार पर राष्ट्रपति, इस विषय मे विधान या कानूनी नियमों के अभाव में, संघ की संसद् की विधायी अधिकारिता के भीतर प्रशासनिक अनुदेश दे सकता है या नियम[21] या सरकार की नीति[22] निर्धारित कर सकता है[22क] या परिवर्तित[23] कर सकता है । परंतु ऐसा करने मे कार्यपालिका स्वेच्छाचारी ढंग से या समता के नियमों के उल्लंघन में कार्य नहीं कर सकती ।[22]

19ख *मारूराम* बनाम *भारत संघ*, (1981) 1 एस सी सी 107 ।

19ग *अशोक कुमार* बनाम *भारत संघ*, ए 1991 एस सी 1792 ।

20 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "प्रथम अनुसूची के भाग क और भाग ख में उल्लिखित" शब्दों का लोप किया गया ।

21 *आय-कर आयुक्त* बनाम *रमन*, ए 1968 एस सी 49 ।

22 *भारत संघ* बनाम *मज्जी*, ए 1977 एस सी 757 (*767*) । (पैरा 34 में, अनुच्छेद 73 के बजाय अनुच्छेद 163 के प्रति निर्देश गलत है ।)

22क *भारत संघ* बनाम *नरसिंहम*, (1988) सप एस सी सी 636 (पैरा 7) ।

23 *संगवान* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस सी 1545 (पैरा 4) ।

2 अनुच्छेद 72 या 162 के अधीन निकाले गए प्रशासनिक अनुदेश, किसी विधि या कानूनी नियम के अनुपूरक तो हो सकते हैं किंतु उसका अध्यारोहण नही कर सकते ।[23क]

क्या किसी विशिष्ट विषय से संबंधित कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग के लिए विधान की अपेक्षा है — हमारे सविधान के अधीन कार्यपालिका के कृत्य विधान मंडल द्वारा बनाए गए और पहले से विद्यमान विधियो के निष्पादन तक ही सीमित नही हैं । अनुच्छेद 73 और 162 से यह प्रकट होता है कि संघ और राज्यों की कार्यपालिका शक्तियो का विस्तार उतना ही है जितना संघ और राज्य की विधायी शक्ति का । कार्यपालिका विधि के उपबंधों के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकती । किंतु इसका यह परिणाम नही होता कि कार्यपालिका को किसी विषय के सबंध में कार्य करने के लिए समर्थ बनाने के लिए उस कार्यवाही को प्राधिकृत करने वाली कोई विधि पहले से विद्यमान हो ।

जहा सविधान मे ही यह उपबंध है कि कोई कार्य विधान द्वारा ही किया जा सकता है वहा विधान की अपेक्षा होगी । जैसे किसी कर का अधिरोपण करने के लिए [अनुच्छेद 265] या धन व्यय करने के लिए [अनुच्छेद 266(3)] ।[24]

[देखिए पीछे अनुच्छेद 53] ।

परंतुक — इस परंतुक का यह प्रभाव है कि समवर्ती क्षेत्र में संघ की कार्यपालक शक्ति तभी होगी जब —

(क) सविधान, या (ख) संसद् द्वारा बनाई गई विधि में अभिव्यक्त रूप से ऐसा उपबंध हो ।

मंत्रिपरिषद्

राष्ट्रपति को सहायता और सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद्।

74 [25]*(1) राष्ट्रपति को सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी जिसका प्रधान, प्रधान मंत्री होगा और राष्ट्रपति अपने कृत्यों का प्रयोग करने मे ऐसी सलाह के अनुसार कार्य करेगा*

[26]*परंतु राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् से ऐसी सलाह पर साधारणतया या अन्यथा पुनर्विचार करने की अपेक्षा कर सकेगा और राष्ट्रपति ऐसे पुनर्विचार के पश्चात् दी गई सलाह के अनुसार कार्य करेगा ।*

(2) इस प्रश्न की किसी न्यायालय में जांच नहीं की जाएगी कि क्या मंत्रियों ने राष्ट्रपति को कोई सलाह दी, और यदि दी तो क्या दी ।

राष्ट्रपति और मंत्रिपरिषद् के बीच संबंध — हमारे यहा निर्वाचित राष्ट्रपति है । फिर भी इस अनुच्छेद से इंगलैंड के समान संसदीय कार्यपालिका प्रणाली का समावेश किया गया है । इसके कारण राष्ट्रपति कार्यपालिका का प्रारूपिक या सांविधानिक प्रधान रह गया है । वास्तविक शक्ति मंत्रिपरिषद् के हाथों मे है ।[27] संविधान द्वारा राष्ट्रपति में जो भी शक्तियां निहित की गई हैं उनका प्रयोग विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी मंत्रियो की सलाह पर ही किया जाना चाहिए जैसा कि इंगलैंड मे है । अनुच्छेद 74 के खंड (1) मे यह आज्ञापक अपेक्षा है ।[28] 42वे संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा नया खंड (1) रखकर इस बात को स्पष्ट और संदेह से परे कर दिया गया है ।

23क *पालुरु* बनाम *भारत संघ*, (1989) 2 एस सी सी 541 (पैरा 10 11) *भारत संघ* बनाम *सोमसुंदरम्*, (1989) 1 एस सी सी 175 (पैरा 6) ।

24 *राम जवाया* बनाम *पंजाब राज्य*, (1955) 2 एस सी आर 225 (*232 36*) ।

25 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा खंड (1) प्रतिस्थापित ।

26 संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा परंतुक अंतःस्थापित ।

27 *संजीवी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए 1970 एस सी 1102 (*1106*) ।

28 *राव* बनाम *इन्दिरा*, ए 1971 एस सी 1002 (*1005*); *शमशेर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1974 एस सी 2192 ।

यद्यपि 1976 के संशोधन ने उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्वचन की गई विद्यमान विधि को ही संहिताबद्ध किया है फिर भी जब तक विधि अभिसमय पर आधारित थी तब तक आपवादिक परिस्थितियों में समायोजन किया जा सकता था, जैसे जब मंत्रिपरिषद् की सलाह प्राप्त करना संभव नहीं है उदाहरणार्थ, — जब प्रधान मंत्री की मृत्यु हो जाती है और मंत्रिपरिषद् प्रधान रहित हो जाती है । अब जब खंड (1) में विधि को संहिताबद्ध कर दिया गया है और इसका कोई अपवाद या शर्त नहीं रखी गई है तो विद्यमान विधि से कुछ अंतर होगा और नीचे दी गई परिस्थितियों या दशाओं में कठिनाइयां उत्पन्न होंगी ।[29]

जनता सरकार को इस दोष को दूर करने का अवसर इसके बाद के दो संशोधन विधेयकों को पारित करते समय मिला था, किंतु उन्होंने यह सोचा कि इसमें कोई परिवर्तन आवश्यक नहीं है क्योंकि 1976 के संशोधन ने अनुच्छेद 74(1) को आज्ञापक बनाकर विद्यमान विधि को ही संहिताबद्ध किया । उन्होंने इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि उच्चतम न्यायालय ने विद्यमान विधि का कथन करते हुए[28] यह बताया था कि इंग्लैंड के अभिसमयों के अनुसार कुछ अपवाद भी हैं । यदि खड (1) का आत्यंतिक अर्थ लिया गया तो आपवादिक परिस्थितियों में इसके परिणाम विचित्र निकलेंगे, जैसे —

(i) उस दशा में क्या होगा जब प्रधान मंत्री की मृत्यु पर मंत्रिपरिषद् समाप्त हो जाती है और लोक सभा में बहुमत का समर्थन प्राप्त कोई व्यक्ति तुरत उपलब्ध न हो? यदि कठोर अर्थान्वियन किया जाता है तो नई मत्रिपरिषद् की रचना होने तक राष्ट्रपति जो भी करेगा वह शून्य होगा ।

संविधान में इस प्रकार की बेतुकी स्थिति की कल्पना नहीं की जा सकती ।

(ii) जब प्रधान मत्री ससद् का विघटन करने के लिए अनुरोध करेगा तो राष्ट्रपति को इसमें कोई विवेकाधिकार नहीं होगा क्योंकि अब सभी परिस्थितियों में उससे यह अपेक्षा है कि वह मंत्रिपरिषद् की सलाह के अनुसार कार्य करेगा । किंतु यदि हम मान लें कि मंत्रिपरिषद् अविश्वास का प्रस्ताव पारित हो जाने पर भी त्यागपत्र देने से इंकार करती है और इस प्रकार अनुच्छेद 75 के खंड (3) के अधीन अपने सांविधानिक उत्तरदायित्व का उल्लंघन करती है तो क्या तब भी राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् को चलने देगा और मत्रिपरिषद की सलाह पर संसद् का विघटन करेगा? यह निष्कर्ष ससदीय पद्धति और मत्रिमडलीय उत्तरदायित्व के सिद्धांत के विपरीत होगा जैसा सविधान सभा मे डा. अम्बेडकर ने स्पष्ट किया है ।[30]

(iii) 1976 के सशोधन के पश्चात् (जिसे जनता सरकार का अनुमोदन भी मिला था) तुरंत ही एक और प्रश्न उपस्थित हो गया था — क्या राष्ट्रपति उस प्रधान मंत्री की सलाह पर लोक सभा का विघटन करने के लिए आबद्धकर है जिसने सदन का विश्वास खो देने पर त्यागपत्र दे दिया है और साथ ही विघटन की सलाह दी है? क्या राष्ट्रपति ऐसे प्रधान मंत्री को साधारण निर्वाचन होने तक और नई लोक सभा के आने तक पद में बने रहने के लिए कह सकता है?[31]

यदि इंग्लैंड की सांविधानिक विधि या मत्रिमंडलीय शासन पर कोई भी पुस्तक पढ़ी जाए तो यह दिखाई पड़ेगा कि निम्नलिखित अभिसमय सुस्थापित हैं :

29. देखिए लेखक की *कमेंट्री ऑन दि कांस्टीट्यूशन आफ इंडिया*, पांचवां सस्करण, जिल्द II, पृष्ठ 426; और *शमशेर बनाम पंजाब राज्य*, ए 1974 एस.सी 2192 (पैरा 47, 88, 152, 153) भी देखिए ।

30. 7 कांस्टियूएंट एसेंबली डिबेट, 107 ।

31. **श्री चरण सिंह सदन से विश्वास मत प्राप्त नहीं कर सके । इसके बाद उन्होंने त्यागपत्र दे दिया और सदन का विघटन करने की सलाह दी । राष्ट्रपति ने उस सलाह के अनुसार कार्य करके श्री चरण सिंह से नई मंत्रिपरिषद् के बनने तक कार्य करते रहने को कहा । राष्ट्रपति के इस कार्य और चरण सिंह की प्रास्थिति पर आपत्ति करते हुए अनेकों उच्च न्यायालयों में वाद प्रस्तुत किए गए । ये सभी निष्फल हुए । इनमें से किसी में भी उन मुद्दों पर विचार नहीं हुआ जो यहां उठाए गए हैं ।**

I. *हाउस आफ कामन्स* का विघटन करना सम्राट का परमाधिकार है । किंतु मंत्रिमंडल शासन के प्रारंभ से सम्राट इस अधिकार का प्रयोग प्रधान मंत्री की सलाह पर करता है । प्रधान मंत्री के विघटन की सलाह देने के अधिकार के पीछे सिद्धांत यह है कि जब वह सदन में विश्वास खो देता है तब त्यागपत्र देने के स्थान पर वह यह कह सकता है कि यह सदन निर्वाचकों की इच्छा को प्रतिबिम्बित नहीं करता । इस प्रकार विघटन प्रधान मंत्री का विशेषाधिकार हो सकता है जिसके द्वारा वह संसद् के स्थान पर निर्वाचकों के सामने जाता है ।

II. सांविधानिक विशेषज्ञ इस बात पर सहमत हैं कि हारे हुए प्रधान मंत्री के सामने दो विकल्प हो सकते हैं । या तो वह इस्तीफा दे दे या विघटन की सलाह दे । वह दोनों एक-साथ नहीं कर सकता । या तो सरकार इस्तीफा देगी और विरोधी पक्ष सत्ता में आएगा या सरकार संसद् का विघटन करने की सलाह सम्राट को देगी ।[32]

इसका कारण यह है कि जहां प्रधान मंत्री ने लोक सभा की आज्ञा मानकर त्यागपत्र दे दिया है वहां निर्वाचकों से अपील करने का प्रश्न उपस्थित नहीं होता । इसलिए त्यागपत्र देने वाले प्रधान मंत्री की विघटन करने की सलाह राष्ट्रपति पर आबद्धकर नहीं होगी क्योंकि ऐसा करना इंग्लैंड के कन्वैंशनों के प्रतिकूल होगा जिन पर विघटन की शक्ति आधारित है ।

III. यदि वह प्रधान मंत्री जो सदन में हार गया है या जिसने सदन का विश्वास खो दिया है, इस्तीफा देने से मना करता है तो राष्ट्रपति उसे पदच्युत कर सकता है (यह शक्ति इंग्लैंड में लुप्तप्रयोग है किंतु हमारे संविधान के अनुच्छेद 75(2) में संहिताबद्ध है) । यदि वह त्यागपत्र देता है तो राष्ट्रपति को चाहिए कि वह तुरंत विरोधी पक्ष को सरकार बनाने का अवसर दे । ऐसा होने पर पद छोड़ने वाले प्रधान मंत्री को विघटन की सलाह देने का अधिकार नहीं होगा और वह अंतरिम सरकार के प्रधान के रूप में पदधारण नहीं कर सकेगा ।

अनुच्छेद 74(1) में प्रयुक्त "कार्य करेगा" के कठोर निर्वचन से यह बेतुकापन आ जाएगा । इसलिए न्यायालय को यह छूट है कि वह ऐसा बेतुका निर्वचन करने से इंकार कर दे । "कार्य करेगा" से यह ध्वनि निकलती है कि यह पूर्ण रूप से आज्ञापक है, किंतु जहां न्यायालय यह देखता है कि किसी अर्थान्वयन से बेतुकापन उत्पन्न हो जाएगा तो वह अपवादों की रचना कर सकता है ।[33]

कुछ न्यायालय अनुच्छेद 74(2) का अवलंब लेते हुए अनुच्छेद 74(1) के निर्वचन करने से अपने आप को बचा गए हैं । अनुच्छेद 74(2) के अतिरिक्त न्यायालय इस बात की जांच नहीं करेगा कि राष्ट्रपति ने विघटन मंत्रिमंडल या प्रधान मंत्री की सलाह पर किया था या नहीं । किंतु चरण सिंह के मामले में राष्ट्रपति ने विघटन का जो आदेश दिया था उसी में इस बात का उल्लेख था कि उन्होंने प्रधान मंत्री चरण सिंह की सलाह पर कार्य किया है और चरण सिंह ने त्यागपत्र दे दिया है । जब आदेश से ही यह तथ्य प्रकट होता है कि राष्ट्रपति उस प्रधान मंत्री की सलाह पर कार्य कर रहा है जिसने त्यागपत्र दे दिया है तो जांच करना या अनुच्छेद 69 का उल्लंघन करने का प्रश्न उपस्थित नहीं होता ।

लेखक की राय में अनुच्छेद 74(1) में "कार्य करेगा" शब्दों के कारण अनेक कठिनाइयां आएंगी । अच्छा यह होगा कि अपवादों को गिनाते हुए इसमें एक परंतुक जोड़ दिया जाए ।

32. जेनिंग्स, *लॉ एंड दि कांस्टीट्यूशन*, पांचवां संस्करण, पृष्ठ 184; स्टीफन्स "*कमेंट्रीज*", बीसवां संस्करण, जिल्द 1, पृष्ठ 403 भी देखिए; पैरी, "*ब्रिटिश गवर्नमेंट*", 1969, पृष्ठ 93; डी स्मिथ, "*कांस्टीट्यूशनल लॉ*", 1971, पृष्ठ 105; वेड और फिल्लिप्स, "*कांस्टीट्यूशनल लॉ*", आठवां संस्करण, पृष्ठ 121; हुड फिलिप्स, "*कांस्टीट्यूशनल एंड एडमिनिस्ट्रेटिव लॉ*", छठा संस्करण, 1978, पृष्ठ 144-51 ।

33. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *आजाद*, ए. 1967 एस.सी. 276 (पैरा 5); *हरि* बनाम *अहमद*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1104 (*1125*) ।

75. (1) प्रधान मंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति, प्रधान मंत्री की सलाह पर करेगा ।

मंत्रियों के बारे में अन्य उपबंध ।

(2) मंत्री, राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त अपने पद धारण करेंगे ।

(3) मंत्रिपरिषद् लोक सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी ।

(4) किसी मंत्री द्वारा अपना पद ग्रहण करने से पहले, राष्ट्रपति तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूपों के अनुसार उसको पद की और गोपनीयता की शपथ दिलाएगा ।

(5) कोई मंत्री, जो निरंतर छह मास की किसी अवधि तक संसद् के किसी सदन का सदस्य नहीं है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा ।[34]

(6) मंत्रियों के वेतन और भत्ते ऐसे होंगे जो संसद्, विधि द्वारा, समय-समय पर अवधारित करे और जब तक संसद् इस प्रकार अवधारित नहीं करती है तब तक ऐसे होंगे जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं ।

भारत का महान्यायवादी

76. (1) राष्ट्रपति, उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए अर्हित किसी व्यक्ति को भारत का महान्यायवादी नियुक्त करेगा ।

भारत का महान्यायवादी ।

(2) महान्यायवादी का यह कर्तव्य होगा कि वह भारत सरकार को विधि संबंधी ऐसे विषयों पर सलाह दे और विधिक स्वरूप के ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करे जो राष्ट्रपति उसको समय-समय पर निर्देशित करे या सौंपे और उन कृत्यों का निर्वहन करे जो उसको इस संविधान अथवा तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा या उसके अधीन प्रदान किए गए हों ।

(3) महान्यायवादी को अपने कर्तव्यों के पालन में भारत के राज्यक्षेत्र में सभी न्यायालयों में सुनवाई का अधिकार होगा ।

(4) महान्यायवादी, राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त पद धारण करेगा और ऐसा पारिश्रमिक प्राप्त करेगा जो राष्ट्रपति अवधारित करे ।

सरकारी कार्य का संचालन

77. (1) भारत सरकार की समस्त कार्यपालिका कार्यवाही राष्ट्रपति के नाम से की हुई कही जाएगी ।

भारत सरकार के कार्य का संचालन ।

(2) राष्ट्रपति के नाम से किए गए और निष्पादित आदेशों और अन्य लिखतों को ऐसी रीति से अधिप्रमाणित किया जाएगा जो राष्ट्रपति द्वारा बनाए जाने वाले नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए और इस प्रकार अधिप्रमाणित आदेश या लिखत की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि वह राष्ट्रपति द्वारा किया गया या निष्पादित आदेश या लिखत नहीं है ।

(3) राष्ट्रपति, भारत सरकार का कार्य अधिक सुविधापूर्वक किए जाने के लिए और मंत्रियों में उक्त कार्य के आबंटन के लिए नियम बनाएगा ।

[35]* * * * *

78. प्रधान मंत्री का यह कर्तव्य होगा कि वह —

राष्ट्रपति को जानकारी देने आदि के संबंध में प्रधान मंत्री के कर्तव्य ।

(क) संघ के कार्यकलाप के प्रशासन संबंधी और विधान विषयक प्रस्थापनाओं संबंधी मंत्रिपरिषद् के सभी विनिश्चय राष्ट्रपति को संसूचित करे;

34. *हरशरण* बनाम *भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी 1969 ।

35. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा खंड (4) अंतःस्थापित किया गया और संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा उसका लोप किया गया ।

(ख) संघ के कार्यकलाप के प्रशासन संबंधी और विधान विषयक प्रस्थापनाओं संबंधी जो जानकारी राष्ट्रपति मांगे, वह दे; और

(ग) किसी विषय को जिस पर किसी मंत्री ने विनिश्चय कर दिया है किंतु मंत्रिपरिषद् ने विचार नहीं किया है, राष्ट्रपति द्वारा अपेक्षा किए जाने पर परिषद् के समक्ष विचार के लिए रखे ।

अध्याय 2—संसद्

साधारण

संसद् का गठन ।

79. **संघ के लिए एक संसद् होगी जो राष्ट्रपति और दो सदनों से मिल कर बनेगी जिनके नाम राज्य सभा और लोक सभा होंगे ।**

राज्य सभा की संरचना ।

80. (1) **राज्य सभा —**

(क) राष्ट्रपति द्वारा खंड (3) के उपबंधों के अनुसार नामनिर्देशित किए जाने वाले बारह सदस्यों, और

(ख) राज्यों के [1]*[और संघ राज्यक्षेत्रों के]* **दो सौ अड़तीस से अनधिक प्रतिनिधियों,**

से मिलकर बनेगी ।

(2) **राज्य सभा में राज्यों के** [1]*[और संघ राज्यक्षेत्रों के]* **प्रतिनिधियों द्वारा भरे जाने वाले स्थानों का आबंटन चौथी अनुसूची में इस निमित्त अंतर्विष्ट उपबंधों के अनुसार होगा ।**

(3) **राष्ट्रपति द्वारा खंड (1) के उपखंड (क) के अधीन नामनिर्देशित किए जाने वाले सदस्य ऐसे व्यक्ति होंगे जिन्हें निम्नलिखित विषयों के संबंध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है, अर्थात्: —**

साहित्य, विज्ञान, कला और समाज सेवा ।

(4) **राज्य सभा में प्रत्येक** [2]*** **राज्य के प्रतिनिधियों का निर्वाचन उस राज्य की विधान सभा के निर्वाचित सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा किया जाएगा ।**

(5) **राज्य सभा में** [3]*[संघ राज्यक्षेत्रों]* **के प्रतिनिधि ऐसी रीति से चुने जाएंगे जो संसद् विधि द्वारा विहित करे ।**

लोक सभा की संरचना ।

[4]81. *(1) अनुच्छेद 331 के उपबंधों के अधीन रहते हुए लोक सभा —*

(क) राज्यों में प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने हुए [5]*[पाच सौ तीस] से अनधिक* [5]*[सदस्यों], और*

(ख) संघ राज्यक्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने के लिए ऐसी रीति से, जो संसद् विधि द्वारा उपबंधित करे, चुने हुए [6]*[बीस] से अनधिक* [6]*[सदस्यों],*

से मिलकर बनेगी ।

---

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।
2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।
3. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग ग में विनिर्दिष्ट राज्यों" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
4. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।
5. गोवा, दमण और दीव पुनर्गठन अधिनियम, 1987 द्वारा तारीख 30-5-1987 से संख्या 500 से बढ़ाकर 530 कर दी गई ।
6. संविधान (चौदहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा "पच्चीस" के स्थान पर "तीस" शब्द प्रतिस्थापित किया गया और मूल शब्द "बीस" संविधान (इकतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1973 द्वारा पुनःस्थापित किया गया ।

(2) खंड (1) के उपखंड (क) के प्रयोजनों के लिए, —

(क) प्रत्येक राज्य को लोक सभा में स्थानों का आबंटन ऐसी रीति से किया जाएगा कि स्थानों की संख्या से उस राज्य की जनसंख्या का अनुपात सभी राज्यों के लिए यथासाध्य एक ही हो, और

(ख) प्रत्येक राज्य को प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में ऐसी रीति से विभाजित किया जाएगा कि प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र की जनसंख्या का उसको आबंटित स्थानो की सख्या से अनुपात समस्त राज्य में यथासाध्य एक ही हो

[7]परंतु इस खंड के उपखड (क) के उपबंध किसी राज्य को लोक सभा में स्थानों के आबंटन के प्रयोजन के लिए तब तक लागू नहीं होगे जब तक उस राज्य की जनसंख्या साठ लाख से अधिक नहीं हो जाती है ।

(3) इस अनुच्छेद मे, "जनसख्या" पद से ऐसी अतिम पूर्ववर्ती जनगणना में अभिनिश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसगत आकडे प्रकाशित हो गए हैं

[8]परतु इस खड में अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना के प्रति, जिसके सुसगत आकडे प्रकाशित हो गए हैं, निर्देश का, जब तक सन् 2000 के पश्चात् की गई पहली जनगणना के सुसगत आकडे प्रकाशित नही हो जाते हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह 1971 की जनगणना के प्रति निर्देश है ।

प्रत्येक जनगणना के पश्चात पुन समायोजन ।

82. *प्रत्येक जनगणना की समाप्ति पर राज्यो को लोक सभा मे स्थानो के आबटन और प्रत्येक राज्य के प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रो में विभाजन का ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसी रीति से पुन समायोजन किया जाएगा जो ससद् विधि द्वारा अवधारित करे*

परंतु ऐसे पुन समायोजन से लोक सभा में प्रतिनिधित्व पर तब तक कोई प्रभाव नही पडेगा जब तक उस समय विद्यमान लोक सभा का विघटन नही हो जाता है

[9]परंतु यह और कि ऐसा पुन समायोजन उस तारीख से प्रभावी होगा जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे और ऐसे पुन समायोजन के प्रभावी होने तक लोक सभा के लिए कोई निर्वाचन उन प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रो के आधार पर हो सकेगा जो ऐसे पुन समायोजन के पहले विद्यमान है

परंतु यह और भी कि जब तक सन् 2000 के पश्चात् की गई पहली जनगणना के सुसगत आकडे प्रकाशित नही हो जाते है तब तक राज्यो को लोक सभा मे स्थानों के आबंटन का और इस अनुच्छेद के अधीन प्रत्येक राज्य के प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रो मे विभाजन का पुन समायोजन आवश्यक नहीं होगा ।

संसद् के सदनों की अवधि ।

83. (1) **राज्य सभा का विघटन नहीं होगा, किंतु उसके सदस्यों में से यथासंभव निकटतम एक-तिहाई सदस्य, संसद् द्वारा विधि द्वारा इस निमित्त किए गए उपबंधों के अनुसार, प्रत्येक द्वितीय वर्ष की समाप्ति पर यथाशक्य शीघ्र निवृत्त हो जाएंगे ।**

(2) लोक सभा, यदि पहले ही विघटित नहीं कर दी जाती है तो, अपने प्रथम अधिवेशन के

7 संविधान (इकतीसवा सशोधन) अधिनियम, 1973 द्वारा तारीख 17-10-1973 से परंतुक अंतःस्थापित ।

8 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित ।

9 संविधान (सातवां सशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

लिए नियत तारीख से [10][पांच वर्ष] तक बनी रहेगी, इससे अधिक नहीं और [10][पांच वर्ष] की उक्त अवधि की समाप्ति का परिणाम लोक सभा का विघटन होगा :

परंतु उक्त अवधि को, जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब, संसद् विधि द्वारा, ऐसी अवधि के लिए बढ़ा सकेगी, जो एक बार में [11]एक वर्ष से अधिक नहीं होगी और उद्घोषणा के प्रवर्तन में न रह जाने के पश्चात् उसका विस्तार किसी भी दशा में छह मास की अवधि से अधिक नहीं होगा ।

संसद् की सदस्यता के लिए अर्हता ।

84. **कोई व्यक्ति संसद् के किसी स्थान को भरने के लिए चुने जाने के लिए अर्हित तभी होगा जब —**

[12]*(क) वह भारत का नागरिक है और निर्वाचन आयोग द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार शपथ लेता है या प्रतिज्ञान करता है और उस पर अपने हस्ताक्षर करता है,*

(ख) वह राज्य सभा में स्थान के लिए कम से कम तीस वर्ष की आयु का और लोक सभा में स्थान के लिए कम से कम पच्चीस वर्ष की आयु का है, और

(ग) उसके पास ऐसी अन्य अर्हताएं हैं जो संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस निमित्त विहित की जाएं ।

ससद् के सत्र, सत्रावसान और विघटन ।

[13]85. *(1) राष्ट्रपति समय-समय पर, ससद् के प्रत्येक सदन को ऐसे समय और स्थान पर, जो वह ठीक समझे, अधिवेशन के लिए आहूत करेगा, किंतु उसके एक सत्र की अंतिम बैठक और आगामी सत्र की प्रथम बैठक के लिए नियत तारीख के बीच छह मास का अंतर नहीं होगा ।*

(2) राष्ट्रपति, समय-समय पर —

(क) सदनो का या किसी सदन का सत्रावसान कर सकेगा,

(ख) लोक सभा का विघटन कर सकेगा ।

खंड (1) : संसद् का आहूत किया जाना — ससद् की अंतिम बैठक से छह मास के भीतर संसद् के सत्र का आहूत किया जाना आज्ञापक है । इस तथ्य से प्रभाव नहीं पडता कि किसी एक सदन या दोनो सदनो के कुछ सदस्य उपस्थित नही हो सकते हैं क्योकि वे दोषसिद्ध हो चुके हैं या निवारक निरोध की विधि या आपात विधि के अधीन निरुद्ध हैं ।[14]

यह स्पष्ट है कि ऐसे सत्र के दौरान पारित किसी विधि या सविधान संशोधन की वैधता को इस आधार पर प्रश्नगत नही किया जा सकता है कि ससद् सम्यकत गठित नहीं

10 सविधान (बयालीसवा सशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा "पाच वर्ष" शब्दों के स्थान पर जो "छह वर्ष" शब्द प्रतिस्थापित किए गए थे वे "पांच वर्ष" शब्द संविधान (चवालीसवां सशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा पुनःस्थापित किए गए ।

11 जब जून, 1975 में आपात की उद्घोषणा की गई थी, लोक सभा की अवधि मार्च, 1976 में समाप्त होनी थी, उपरोक्त परंतुक के आधार पर संसद् ने इसे 18 मार्च, 1977 तक बढ़ा दिया ।

12 संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा तारीख 6-10-1963 से खंड (क) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

13 सविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 की धारा 6 द्वारा मूल अनु के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

14 *इन्दिरा बनाम राजनारायण*, ए 1975 एससी 2229 (पैरा 74-76, 82, 86-87, 180-81, 378, 509, 696) (सर्वसम्मत) ।

थी क्योंकि उसके बहुत से सदस्य दोषसिद्ध या निरुद्ध किए जाने के कारण उपस्थित होने में असमर्थ थे ।[14]

खंड (2)(ख) : लोक सभा का विघटन — लोक सभा का विघटन अनुच्छेद 83(2) के अधीन उसके पांच वर्ष की अवधि की समाप्ति पर हो सकता है या उसके पहले राष्ट्रपति द्वारा विघटन के आदेश से हो सकता है । दोनों दशाओं में सदस्य अपनी सदस्यता खो देते हैं और मंत्रीगण विघटन के बाद छह मास के उपरांत पद में बने नही रह सकते । अनुच्छेद 75(5) और 74(1) के कारण विघटन पर मंत्रिपरिषद् को तुरंत इस्तीफा देने या पदच्युत किए जाने की आवश्यकता नहीं है । हो सकता है कि राष्ट्रपति अपनी सहायता और सलाह के लिए मंत्रिपरिषद् रखे[15] [देखिए पीछे अनुच्छेद 74(1)] ।

सदनों में अभिभाषण का और उनको संदेश भेजने का राष्ट्रपति का अधिकार ।

86. (1) **राष्ट्रपति, संसद् के किसी एक सदन में या एक साथ समवेत दोनों सदनों में अभिभाषण कर सकेगा और इस प्रयोजन के लिए सदस्यों की उपस्थिति की अपेक्षा कर सकेगा ।**

(2) **राष्ट्रपति, संसद् में उस समय लंबित किसी विधेयक के संबंध में संदेश या कोई अन्य संदेश, संसद् के किसी सदन को भेज सकेगा और जिस सदन को कोई संदेश इस प्रकार भेजा गया है वह सदन उस संदेश द्वारा विचार करने के लिए अपेक्षित विषय पर सुविधानुसार शीघ्रता से विचार करेगा ।**

राष्ट्रपति का विशेष अभिभाषण ।

87. (1) **राष्ट्रपति,** [16][*लोक सभा के लिए प्रत्येक साधारण निर्वाचन के पश्चात् प्रथम सत्र*] **के आरंभ में** [16][*और प्रत्येक वर्ष के प्रथम सत्र के आरंभ में*] **एक साथ समवेत संसद् के दोनों सदनों में अभिभाषण करेगा और संसद् को उसके आह्वान के कारण बताएगा ।**

(2) **प्रत्येक सदन की प्रक्रिया का विनियमन करने वाले नियमो द्वारा ऐसे अभिभाषण में निर्दिष्ट विषयों की चर्चा के लिए समय नियत करने के लिए** [17]*** **उपबंध किया जाएगा ।**

सदनों के बारे में मंत्रियों और महान्यायवादी के अधिकार ।

88. **प्रत्येक मंत्री और भारत के महान्यायवादी को यह अधिकार होगा कि वह किसी भी सदन में, सदनों की किसी संयुक्त बैठक में और संसद् की किसी समिति में, जिसमें उसका नाम सदस्य के रूप में दिया गया है, बोले और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले, किंतु इस अनुच्छेद के आधार पर वह मत देने का हकदार नहीं होगा ।**

संसद् के अधिकारी

राज्य सभा का सभापति और उपसभापति ।

89. (1) **भारत का उपराष्ट्रपति राज्य सभा का पदेन सभापति होगा ।**

(2) **राज्य सभा, यथाशक्य शीघ्र, अपने किसी सदस्य को अपना उपसभापति चुनेगी और जब-जब उपसभापति का पद रिक्त होता है तब-तब राज्य सभा किसी अन्य सदस्य को अपना उपसभापति चुनेगी ।**

15 तुलना कीजिए, *राव* बनाम *इन्दिरा*, ए 1971 एस सी 1002 ।

16 संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा तारीख 18-6-1951 द्वारा "प्रत्येक सत्र" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

17 संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 की धारा 8 द्वारा "और सदन के अन्य कार्य पर इस चर्चा को अग्रता देने के लिए" शब्दों का लोप किया गया ।

90. राज्य सभा के उपसभापति के रूप में पद धारण करने वाला सदस्य —

उपसभापति का पद रिक्त होना, पदत्याग और पद से हटाया जाना ।

(क) यदि राज्य सभा का सदस्य नहीं रहता है तो अपना पद रिक्त कर देगा,

(ख) किसी भी समय सभापति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा, और

(ग) राज्य सभा के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत से पारित संकल्प द्वारा अपने पद से हटाया जा सकेगा ·

परंतु खंड (ग) के प्रयोजन के लिए कोई संकल्प तब तक प्रस्तावित नहीं किया जाएगा जब तक कि उस संकल्प को प्रस्तावित करने के आशय की कम से कम चौदह दिन की सूचना न दे दी गई हो ।

91 (1) जब सभापति का पद रिक्त है या ऐसी अवधि में जब उपराष्ट्रपति, राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर रहा है या उसके कृत्यों का निर्वहन कर रहा है तब उपसभापति, या यदि उपसभापति का पद भी रिक्त है तो, राज्य सभा का ऐसा सदस्य, जिसको राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा ।

सभापति के पद के कर्तव्यों का पालन करने या सभापति के रूप मे कार्य करने की उपसभापति या अन्य व्यक्ति की शक्ति ।

(2) राज्य सभा की किसी बैठक से सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति, या यदि वह भी अनुपस्थित है तो ऐसा व्यक्ति, जो राज्य सभा की प्रक्रिया के नियमों द्वारा अवधारित किया जाए, या यदि ऐसा कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं है तो ऐसा अन्य व्यक्ति, जो राज्य सभा द्वारा अवधारित किया जाए, सभापति के रूप में कार्य करेगा ।

92 (1) राज्य सभा की किसी बैठक में, जब उपराष्ट्रपति को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब सभापति, या जब उपसभापति को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब उपसभापति, उपस्थित रहने पर भी, पीठासीन नहीं होगा और अनुच्छेद 91 के खंड (2) के उपबंध ऐसी प्रत्येक बैठक के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे उस बैठक के संबंध में लागू होते हैं जिससे, यथास्थिति, सभापति या उपसभापति अनुपस्थित है ।

जब सभापति या उपसभापति को पद से हटाने का कोई सकल्प विचाराधीन है तब उसका पीठासीन न होना ।

(2) जब उपराष्ट्रपति को उसके पद से हटाने का कोई सकल्प राज्य सभा में विचाराधीन है तब सभापति को राज्य सभा में बोलने और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग लेने का अधिकार होगा, किंतु वह अनुच्छेद 100 में किसी बात के होते हुए भी ऐसे संकल्प पर या ऐसी कार्यवाहियों के दौरान किसी अन्य विषय पर, मत देने का बिल्कुल हकदार नहीं होगा ।

93 लोक सभा, यथाशक्य शीघ्र, अपने दो सदस्यों को अपना अध्यक्ष और उपाध्यक्ष चुनेगी और जब-जब अध्यक्ष या उपाध्यक्ष का पद रिक्त होता है तब-तब लोक सभा किसी अन्य सदस्य को, यथास्थिति, अध्यक्ष या उपाध्यक्ष चुनेगी ।

लोक सभा का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष ।

94. लोक सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के रूप में पद धारण करने वाला सदस्य —

अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का पद रिक्त होना, पद त्याग और पद से हटाया जाना ।

(क) यदि लोक सभा का सदस्य नहीं रहता है तो अपना पद रिक्त कर देगा,

(ख) किसी भी समय, यदि वह सदस्य अध्यक्ष है तो उपाध्यक्ष को संबोधित और यदि वह सदस्य उपाध्यक्ष है तो अध्यक्ष को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा, और

(ग) लोक सभा के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत से पारित संकल्प द्वारा अपने पद से हटाया जा सकेगा :

परंतु खंड (ग) के प्रयोजन के लिए कोई संकल्प तब तक प्रस्तावित नहीं किया जाएगा जब तक कि उस संकल्प को प्रस्तावित करने के आशय की कम से कम चौदह दिन की सूचना न दे दी गई हो :

परंतु यह और कि जब कभी लोक सभा का विघटन किया जाता है तो विघटन के पश्चात् होने वाले लोक सभा के प्रथम अधिवेशन के ठीक पहले तक अध्यक्ष अपने पद को रिक्त नहीं करेगा ।

अध्यक्ष के पद के कर्तव्यों का पालन करने या अध्यक्ष के रूप में कार्य करने की उपाध्यक्ष या अन्य व्यक्ति की शक्ति ।

95. (1) जब अध्यक्ष का पद रिक्त है तब उपाध्यक्ष, या यदि उपाध्यक्ष का पद भी रिक्त है तो लोक सभा का ऐसा सदस्य, जिसको राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा ।

(2) लोक सभा की किसी बैठक से अध्यक्ष की अनुपस्थिति में उपाध्यक्ष, या यदि वह भी अनुपस्थित है तो ऐसा व्यक्ति, जो लोक सभा की प्रक्रिया के नियमों द्वारा अवधारित किया जाए, या यदि ऐसा कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं है तो ऐसा अन्य व्यक्ति, जो लोक सभा द्वारा अवधारित किया जाए, अध्यक्ष के रूप में कार्य करेगा ।

जब अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब उसका पीठासीन न होना ।

96. (1) लोक सभा की किसी बैठक में, जब अध्यक्ष को उसके पद से हटाने का संकल्प विचाराधीन है तब अध्यक्ष, या जब उपाध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब उपाध्यक्ष, उपस्थित रहने पर भी, पीठासीन नहीं होगा और अनुच्छेद 95 के खंड (2) के उपबंध ऐसी प्रत्येक बैठक के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे उस बैठक के संबंध में लागू होते हैं जिससे, यथास्थिति, अध्यक्ष या उपाध्यक्ष अनुपस्थित है ।

(2) जब अध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प लोक सभा में विचाराधीन है तब उसको लोक सभा में बोलने और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग लेने का अधिकार होगा और वह अनुच्छेद 100 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे संकल्प पर या ऐसी कार्यवाहियों के दौरान किसी अन्य विषय पर प्रथमतः ही मत देने का हकदार होगा, किंतु मत बराबर होने की दशा में मत देने का हकदार नहीं होगा ।

सभापति और उपसभापति तथा अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के वेतन और भत्ते ।

97. राज्य सभा के सभापति और उपसभापति को तथा लोक सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को, ऐसे वेतन और भत्तों का जो संसद्, विधि द्वारा, नियत करे और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसे वेतन और भत्तों का, जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, संदाय किया जाएगा ।

संसद् का सचिवालय ।

98. (1) संसद् के प्रत्येक सदन का पृथक् सचिवीय कर्मचारिवृंद होगा :

परंतु इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह संसद् के दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पदों के सृजन को निवारित करती है ।

(2) संसद्, विधि द्वारा, संसद् के प्रत्येक सदन के सचिवीय कर्मचारिवृंद में भर्ती का और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का विनियमन कर सकेगी ।

(3) जब तक संसद् खंड (2) के अधीन उपबंध नहीं करती है तब तक राष्ट्रपति, यथास्थिति, लोक सभा के अध्यक्ष या राज्य सभा के सभापति से परामर्श करने के पश्चात् लोक सभा के या राज्य

सभा के सचिवीय कर्मचारिवृंद में भर्ती के और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों के विनियमन के लिए नियम बना सकेगा और इस प्रकार बनाए गए नियम उक्त खंड के अधीन बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए प्रभावी होंगे ।

कार्य संचालन

99. संसद् के प्रत्येक सदन का प्रत्येक सदस्य अपना स्थान ग्रहण करने से पहले, राष्ट्रपति या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त व्यक्ति के समक्ष, तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार, शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा ।

सदस्यों द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान ।

100 (1) इस संविधान में यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, प्रत्येक सदन की बैठक में या सदनों की संयुक्त बैठक में सभी प्रश्नों का अवधारण, अध्यक्ष को अथवा सभापति या अध्यक्ष के रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति को छोडकर, उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के बहुमत से किया जाएगा ।

सदनों में मतदान, रिक्तियों के होते हुए भी सदनों की कार्य करने की शक्ति और गणपूर्ति ।

सभापति या अध्यक्ष, अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति प्रथमतः मत नहीं देगा, किंतु मत बराबर होने की दशा में उसका निर्णायक मत होगा और वह उसका प्रयोग करेगा ।

(2) संसद् के किसी सदन की सदस्यता में कोई रिक्ति होने पर भी, उस सदन को कार्य करने की शक्ति होगी और यदि बाद में यह पता चलता है कि कोई व्यक्ति जो ऐसा करने का हकदार नहीं था, कार्यवाहियों में उपस्थित रहा है या उसने मत दिया है या अन्यथा भाग लिया है तो भी संसद् की कोई कार्यवाही विधिमान्य होगी ।

[18]*(3) जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध नहीं करती है तब तक संसद् के प्रत्येक सदन का अधिवेशन गठित करने के लिए गणपूर्ति सदन के सदस्यों की कुल संख्या का दसवां भाग होगी ।*

[8]*(4) यदि सदन के अधिवेशन में किसी समय गणपूर्ति नहीं है तो सभापति या अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति का यह कर्तव्य होगा कि वह सदन को स्थगित कर दे या अधिवेशन को तब तक के लिए निलंबित कर दे जब तक गणपूर्ति नहीं हो जाती है ।*

सदस्यों की निरर्हताएं

101 (1) कोई व्यक्ति संसद् के दोनों सदनों का सदस्य नहीं होगा और जो व्यक्ति दोनों सदनों का सदस्य चुन लिया जाता है उसके एक या दूसरे सदन के स्थान को रिक्त करने के लिए संसद् विधि द्वारा उपबंध करेगी ।

स्थानों का रिक्त होना ।

(2) कोई व्यक्ति संसद् और किसी [19]*** राज्य के विधानमंडल के किसी सदन, दोनों का सदस्य नहीं होगा और यदि कोई व्यक्ति संसद् और [19क][*किसी राज्य*] के विधानमंडल के किसी सदन, दोनों का सदस्य चुन लिया जाता है तो ऐसी अवधि की समाप्ति के पश्चात् जो राष्ट्रपति द्वारा बनाए

---

18 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम 1976 द्वारा खंड (3) (4) का लोप किया गया, किंतु श्रीमती गांधी की आपात सरकार के पूर्व इस संशोधन को प्रवृत्त करने वाली कोई अधिसूचना जारी नहीं की गई और दिसंबर, 1987 तक भी नहीं निकाली गई । अतः मूल खंड (3) (4) अविकल बने हुए हैं ।

19 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

19क संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "ऐसे किसी राज्य" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

गए नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए, संसद् में ऐसे व्यक्ति का स्थान रिक्त हो जाएगा यदि उसने राज्य के विधान मंडल में अपने स्थान को पहले ही नहीं त्याग दिया है ।

(3) यदि संसद् के किसी सदन का सदस्य —

(क) [20]*अनुच्छेद 102 के खंड (1) या खंड (2)* **में वर्णित किसी निरर्हता से ग्रस्त हो जाता है, या**

[21](ख) *यथास्थिति, सभापति या अध्यक्ष को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपने स्थान का त्याग कर देता है और उसका त्यागपत्र, यथास्थिति, सभापति या अध्यक्ष द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है,*

तो ऐसा होने पर उसका स्थान रिक्त हो जाएगा :

[21]*परंतु उपखंड (ख) में निर्दिष्ट त्यागपत्र की दशा मे, यदि प्राप्त जानकारी से या अन्यथा और ऐसी जाच करने के पश्चात्, जो वह ठीक समझे, यथास्थिति, सभापति या अध्यक्ष का यह समाधान हो जाता है कि ऐसा त्यागपत्र स्वैच्छिक या असली नही है तो वह ऐसे त्यागपत्र को स्वीकार नहीं करेगा ।*

(4) यदि संसद् के किसी सदन का कोई सदस्य साठ दिन की अवधि तक सदन की अनुज्ञा के बिना उसके सभी अधिवेशनों से अनुपस्थित रहता है तो सदन उसके स्थान को रिक्त घोषित कर सकेगा :

परंतु साठ दिन की उक्त अवधि की संगणना करने में किसी ऐसी अवधि को हिसाब में नहीं लिया जाएगा जिसके दौरान सदन सत्रावसित या निरंतर चार से अधिक दिनों के लिए स्थगित रहता है।

खंड (3)(ख) : सदस्यता से त्यागपत्र — 1 सविधान (तैतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1974 ने अनुच्छेद 101 और 190 दोनो के खड (3)(ख) का सशोधन करके उनमे एक परंतुक जोड़ दिया । इस सशोधन के पहले संघ या राज्य विधान मडल से त्यागपत्र देने का उपबंध उसी प्रकार का था जिस प्रकार का राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, लोक सभा के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के न्यायाधीशो जैसे सांविधानिक अधिकारियो के बारे में था । यह उपबंध अनुच्छेद 56क, 67क, 94, 124(2)(क) और 217क(1) के परतुक (क) में है । परिणामस्वरूप विधान मडल के सदस्य का त्यागपत्र उसी तारीख से प्रभावी हो जाता था जब वह अपना त्यागपत्र लोक सभा के अध्यक्ष या सभापति को सबोधित करता था । अध्यक्ष या सभापति इस बात की जाच नहीं कर सकता था कि वह पत्र कपट या बल का प्रयोग करके लिखवाया गया है ।

2 संशोधन के पश्चात्, — (i) लोक सभा के अध्यक्ष या राज्य सभा के सभापति को यह शक्ति दी गई है कि वह सभा से त्यागपत्र के असली होने के बारे मे जाच करे, और (ii) त्यागपत्र देने पर सदस्यता तभी समाप्त होगी जब अध्यक्ष या सभापति त्यागपत्र स्वीकार कर लेता है । सघ या राज्य विधान मडल के सदस्य ने वह विशेषाधिकार खो दिया है जो सांविधानिक अधिकारियों को प्राप्त है अर्थात् एकपक्षीय कार्यवाही द्वारा पदत्याग । अब पदत्याग स्वीकार किए जाने पर निर्भर होगा वैसे ही जैसे साधारण सरकारी कर्मचारी की दशा में होता है ।[22] इससे यह भी निष्कर्ष निकलता है कि जब तक त्यागपत्र स्वीकार नहीं किया जाता है तब तक वह सदस्य अध्यक्ष या सभापति को पत्र लिखकर त्यागपत्र वापस ले सकता है ।[22]

20 संविधान (बावनवां संशोधन) अधिनियम, 1985 द्वारा प्रतिस्थापित ।

21 संविधान (तैंतीसवां सशोधन) अधिनियम, 1974 द्वारा तारीख 19-5-1974 से खंड (3) में खंड (ख) प्रतिस्थापित किया गया और परंतुक जोड़ा गया ।

22 *भारत संघ बनाम गोपाल*, ए 1978 एस सी 694 (पैरा 84-85) ।

102. (1) कोई व्यक्ति संसद् के किसी सदन का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा —

सदस्यता के लिए निरर्हताएं ।

(क) यदि वह भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन, ऐसे पद को छोड़कर, जिसको धारण करने वाले का निरर्हित न होना संसद् ने विधि द्वारा घोषित किया है, कोई लाभ का पद धारण करता है;

(ख) यदि वह विकृतचित्त है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घोषणा विद्यमान है;

(ग) यदि वह अनुन्मोचित दिवालिया है;

(घ) यदि वह भारत का नागरिक नहीं है या उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित कर ली है या वह किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा या अनुषक्ति को अभिस्वीकार किए हुए है;

(ङ) यदि वह संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निरर्हित कर दिया जाता है ।

[23]*स्पष्टीकरण — इस खंड के प्रयोजनों के लिए,* **कोई व्यक्ति केवल इस कारण भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन लाभ का पद धारण करने वाला नहीं समझा जाएगा कि वह संघ का या ऐसे राज्य का मंत्री है ।**

[23]*(2) कोई व्यक्ति संसद् के किसी सदन का सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा यदि वह दसवीं अनुसूची के अधीन इस प्रकार निरर्हित हो जाता है ।*

खंड (1)(क) : सरकार के अधीन लाभ का पद — इस अभिव्यक्ति का अर्थ "सरकार के अधीन धारित पद" अभिव्यक्ति से अधिक व्यापक है । इसमें अभ्यर्थी और सरकार के बीच स्वामी और सेवक का संबंध होना आवश्यक नहीं है ।[23क] इसके अधीन सरकार के नियंत्रण के अधीन किसी कानूनी निगम[24] में या सरकार के किसी अन्य उपक्रम में नियोजन भी है ।[25]

किंतु विधान मंडल की सदस्यता लाभ का पद नहीं यद्यपि सदस्यों को सरकार द्वारा भुगतान किया जाता है ।[26]

[27]103. *(1) यदि यह प्रश्न उठता है कि संसद् के किसी सदन का कोई सदस्य अनुच्छेद 102 के खंड (1) मे वर्णित किसी निरर्हता से ग्रस्त हो गया है या नही तो वह प्रश्न राष्ट्रपति को विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जाएगा और उसका विनिश्चय अतिम होगा ।*

सदस्यों की निरर्हताओं से संबंधित प्रश्नों पर विनिश्चय ।

(2) ऐसे किसी प्रश्न पर विनिश्चय करने के पहले राष्ट्रपति निर्वाचन आयोग की राय लेगा और ऐसी राय के अनुसार कार्य करेगा ।

104. यदि संसद् के किसी सदन में कोई व्यक्ति अनुच्छेद 99 की अपेक्षाओं का अनुपालन करने से पहले, या यह जानते हुए कि मैं उसकी सदस्यता के लिए अर्हित नहीं हूं या निरर्हित कर दिया गया हूं या संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों द्वारा ऐसा करने से प्रतिषिद्ध कर दिया गया हूं, सदस्य के रूप में बैठता है या मत देता है तो वह प्रत्येक दिन के लिए, जब वह इस प्रकार बैठता है या मत देता है, पांच सौ रुपए की शास्ति का भागी होगा जो संघ को देय ऋण के रूप में वसूल की जाएगी ।

अनुच्छेद 99 के अधीन शपथ लेने या प्रतिज्ञान करने से पहले या अर्हित न होते हुए या निरर्हित किए जाने पर बैठने और मत देने के लिए शास्ति ।

---

23. संविधान (बावनवां संशोधन) अधिनियम, 1985 द्वारा परिवर्तन किए गए ।

23क. *जी. बासु* बनाम *घोषाल,* ए. 1964 एस.सी. 254 ।

24. *बिहारीलाल* बनाम *रोशन,* ए 1984 एस.सी. 385 (पैरा 5, 21); *प्रकाश* बनाम *भारत संघ,* ए. 1987 पी. एण्ड एच. 262 (एफ.बी.) ।

25. *गुजरात राज्य* बनाम *रमन,* ए. 1984 एस.सी 161 ।

26. *भगवती* बनाम *राजीव,* ए. 1986 एस.सी. 1534 (पैरा 14) ।

27. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अनुच्छेद 103 प्रतिस्थापित किया गया, किंतु, चवालीसवें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा मूल अनुच्छेद पुनःस्थापित किया गया ।

"अर्हित नहीं है या निरर्हित कर दिया गया है" । ये शब्द व्यापक हैं । इनमें दोनों प्रकार की निरर्हताएं आ जाती हैं । निर्वाचन के पूर्व की और निर्वाचन के बाद लेने वाली ।[28]

संसद् और उसके सदस्यों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां

संसद् के सदनों की तथा उनके सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार आदि ।

105. (1) **इस संविधान के उपबंधों के और संसद् की प्रक्रिया का विनियमन करने वाले नियमों और स्थायी आदेशों के अधीन रहते हुए, संसद् में वाक्-स्वातंत्र्य होगा ।**

(2) **संसद् में या उसकी किसी समिति में संसद् के किसी सदस्य द्वारा कही गई किसी बात या दिए गए किसी मत के संबंध में उसके विरुद्ध किसी न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी और किसी व्यक्ति के विरुद्ध संसद् के किसी सदन के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन किसी प्रतिवेदन, पत्र, मतों या कार्यवाहियों के प्रकाशन के संबंध में इस प्रकार की कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी ।**

(3) **अन्य बातों में संसद् के प्रत्येक सदन की और प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी जो संसद्, समय-समय पर, विधि द्वारा, परिनिश्चित करे और जब तक वे इस प्रकार परिनिश्चित नहीं की जाती हैं तब तक** [29][*वही होंगी जो संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 की धारा 15 के प्रवृत्त होने से ठीक पहले उस सदन की और उसके सदस्यों और समितियों की थीं*] ।

(4) **जिन व्यक्तियों को इस संविधान के आधार पर संसद् के किसी सदन या उसकी किसी समिति में बोलने का और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग लेने का अधिकार है, उनके संबंध में खंड (1), खंड (2) और खंड (3) के उपबंध उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे संसद् के सदस्यों के संबंध में लागू होते हैं ।**

समान उपबंध — [देखिए आगे अनुच्छेद 194 का खंड (1)]।

खंड (2) वाक्-स्वातंत्र्य — खंड (2) के पहले भाग द्वारा प्रदत्त वाक्-स्वातंत्र्य या मतदान देने की स्वतंत्रता आत्यंतिक है ।[30] संसद् के किसी सदन या किसी समिति में कही गई किसी बात के लिए किसी सदस्य के विरुद्ध मानहानि के लिए कोई कार्यवाही नहीं हो सकती चाहे अनुच्छेद 211 का उल्लंघन क्यों न किया गया हो ।[31] इस खंड द्वारा दी गई उन्मुक्ति के लिए यह आवश्यक नहीं है कि जो कहा गया है वह सदन के कार्य से ससंगत हो । यह पर्याप्त है कि संसद् की बैठक चल रही है और सदन के कामकाज के अनुक्रम में वह कही गई है ।[32]

प्राधिकार के बिना प्रकाशन — इस संदर्भ में प्राधिकार से अभिप्रेत है अभिव्यक्त प्राधिकार ।[33] संसद् के किसी सदन की कार्यवाही के प्रकाशन को अवमान विधि से संरक्षण नहीं है ।[33]

सदस्यों के वेतन और भत्ते ।

106 **संसद् के प्रत्येक सदन के सदस्य ऐसे वेतन और भत्ते, जिन्हें संसद्, समय-समय पर, विधि द्वारा, अवधारित करे और जब तक इस संबंध में इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसे भत्ते, ऐसी दरों से और ऐसी**

---

28 *निर्वाचन आयोग* बनाम *[illegible]*, (1953) एस सी आर 1144 ।

29 पहले, खंड (3) संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया और पुन: चवालीसवें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया ।

30 संविधान के अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश, ए 1965 एस सी 745 ।

31 *जैन* बनाम *लेक्शी*, ए 1971 एस सी 86 (*87*) ।

32 *तेज किरण* बनाम *संजीव*, ए 1970 एस सी 1573 (*1574*) ।

33 *दफ्तरी* बनाम *गुप्ता*, (1971) 1 एस सी सी 626 ।

शर्तों पर, जो भारत डोमिनियन की संविधान सभा के सदस्यों को इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले लागू थीं, प्राप्त करने के हकदार होंगे ।

विधायी प्रक्रिया

विधेयकों के पुरःस्थापन और पारित किए जाने के संबंध में उपबंध ।

107. (1) धन विधेयकों और अन्य वित्त विधेयकों के संबंध में अनुच्छेद 109 और अनुच्छेद 117 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई विधेयक संसद् के किसी भी सदन में आरंभ हो सकेगा ।

(2) अनुच्छेद 108 और अनुच्छेद 109 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई विधेयक संसद् के सदनों द्वारा तब तक पारित किया गया नहीं समझा जाएगा जब तक संशोधन के बिना या केवल ऐसे संशोधनों सहित, जिन पर दोनों सदन सहमत हो गए हैं, उस पर दोनों सदन सहमत नहीं हो जाते हैं ।

(3) संसद् में लंबित विधेयक सदनों के सत्रावसान के कारण व्यपगत नहीं होगा ।

(4) राज्य सभा में लंबित विधेयक, जिसको लोक सभा ने पारित नहीं किया है, लोक सभा के विघटन पर व्यपगत नहीं होगा ।

(5) कोई विधेयक, जो लोक सभा में लंबित है या जो लोक सभा द्वारा पारित कर दिया गया है और राज्य सभा में लंबित है, अनुच्छेद 108 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, लोक सभा के विघटन पर व्यपगत हो जाएगा ।

खंड (3) : लंबित — इस अभिव्यक्ति में वह विधेयक भी आ जाता है जो राष्ट्रपति की अनुमति के लिए लंबित है ।[34] ऐसा विधेयक सत्रावसान या विघटन से व्यपगत नहीं होता । जब कोई विधेयक विधिमान्यतः पुरःस्थापित कर दिया गया है तो वह प्रवर समिति को निर्दिष्ट किए जाने पर भी लंबित बना रहता है । इसलिए प्रवर समिति द्वारा अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् विधेयक को फिर से पुरःस्थापित करने की आवश्यकता नहीं होती ।[35]

कुछ दशाओं में दोनों सदनों की संयुक्त बैठक ।

108. (1) यदि किसी विधेयक के एक सदन द्वारा पारित किए जाने और दूसरे सदन को पारेषित किए जाने के पश्चात्, —

(क) दूसरे सदन द्वारा विधेयक अस्वीकार कर दिया गया है, या

(ख) विधेयक में किए जाने वाले संशोधनों के बारे में दोनों सदन अंतिम रूप से असहमत हो गए हैं, या

(ग) दूसरे सदन को विधेयक प्राप्त होने की तारीख से उसके द्वारा विधेयक पारित किए बिना छह मास से अधिक बीत गए हैं,

तो उस दशा के सिवाय जिसमें लोक सभा का विघटन होने के कारण विधेयक व्यपगत हो गया है, राष्ट्रपति विधेयक पर विचार-विमर्श करने और मत देने के प्रयोजन के लिए सदनों को संयुक्त बैठक में अधिवेशित होने के लिए आहूत करने के अपने आशय की सूचना, यदि वे बैठक में हैं तो संदेश द्वारा या यदि वे बैठक में नहीं हैं तो लोक अधिसूचना द्वारा देगा :

परंतु इस खंड की कोई बात धन विधेयक को लागू नहीं होगी ।

(2) छह मास की ऐसी अवधि की गणना करने में, जो खंड (1) में निर्दिष्ट है, किसी ऐसी अवधि को हिसाब में नहीं लिया जाएगा जिसमें उक्त खंड के उपखंड (ग) में निर्दिष्ट सदन सत्रावसित या निरंतर चार से अधिक दिनों के लिए स्थगित कर दिया जाता है ।

---

34. *पुरुषोतमन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 694 (*700*) ।

35. *कोटेश्वर* बनाम *के.आर.बी. एंड कंपनी*, ए. 1969 एस.सी. 504 (*510*) ।

(3) यदि राष्ट्रपति ने खंड (1) के अधीन सदनों को संयुक्त बैठक में अधिवेशित होने के लिए आहूत करने के अपने आशय की सूचना दे दी है तो कोई भी सदन विधेयक पर आगे कार्यवाही नहीं करेगा, किंतु राष्ट्रपति अपनी अधिसूचना की तारीख के पश्चात् किसी समय सदनों को अधिसूचना में विनिर्दिष्ट प्रयोजन के लिए संयुक्त बैठक में अधिवेशित होने के लिए आहूत कर सकेगा और, यदि वह ऐसा करता है तो, सदन तदनुसार अधिवेशित होंगे ।

(4) यदि सदनों की संयुक्त बैठक में विधेयक ऐसे संशोधनों सहित, यदि कोई हों, जिन पर संयुक्त बैठक में सहमति हो जाती है, दोनों सदनों के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की कुल संख्या के बहुमत द्वारा पारित हो जाता है तो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए वह दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया समझा जाएगा :

परंतु संयुक्त बैठक में —

(क) यदि विधेयक एक सदन से पारित किए जाने पर दूसरे सदन द्वारा संशोधनों सहित पारित नहीं कर दिया गया है और उस सदन को, जिसमें उसका आरंभ हुआ था, लौटा नहीं दिया गया है तो ऐसे संशोधनों से भिन्न (यदि कोई हों), जो विधेयक के पारित होने में देरी के कारण आवश्यक हो गए हैं, विधेयक में कोई और संशोधन प्रस्थापित नहीं किया जाएगा;

(ख) यदि विधेयक इस प्रकार पारित कर दिया गया है और लौटा दिया गया है तो विधेयक में केवल पूर्वोक्त संशोधन, और ऐसे अन्य संशोधन, जो उन विषयों से सुसंगत हैं जिन पर सदनों में सहमति नहीं हुई है, प्रस्थापित किए जाएंगे,

और पीठासीन व्यक्ति का इस बारे में विनिश्चय अंतिम होगा कि कौन से संशोधन इस खंड के अधीन ग्राह्य हैं ।

(5) सदनों की संयुक्त बैठक में अधिवेशित होने के लिए आहूत करने के अपने आशय की राष्ट्रपति की सूचना के पश्चात्, लोक सभा का विघटन बीच में हो जाने पर भी, इस अनुच्छेद के अधीन संयुक्त बैठक हो सकेगी और उसमें विधेयक पारित हो सकेगा ।

धन विधेयकों के संबंध में विशेष प्रक्रिया ।

109. (1) धन विधेयक राज्य सभा में पुरःस्थापित नहीं किया जाएगा ।

(2) धन विधेयक लोक सभा द्वारा पारित किए जाने के पश्चात् राज्य सभा को उसकी सिफारिशों के लिए पारेषित किया जाएगा और राज्य सभा विधेयक की प्राप्ति की तारीख से चौदह दिन की अवधि के भीतर विधेयक को अपनी सिफारिशों सहित लोक सभा को लौटा देगी और ऐसा होने पर लोक सभा, राज्य सभा की सभी या किन्हीं सिफारिशों को स्वीकार या अस्वीकार कर सकेगी ।

(3) यदि लोक सभा, राज्य सभा की किसी सिफारिश को स्वीकार कर लेती है तो धन विधेयक राज्य सभा द्वारा सिफारिश किए गए और लोक सभा द्वारा स्वीकार किए गए संशोधनों सहित दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया समझा जाएगा ।

(4) यदि लोक सभा, राज्य सभा की किसी भी सिफारिश को स्वीकार नहीं करती है तो धन विधेयक, राज्य सभा द्वारा सिफारिश किए गए किसी संशोधन के बिना, दोनों सदनों द्वारा उस रूप में पारित किया गया समझा जाएगा जिसमें वह लोक सभा द्वारा पारित किया गया था ।

(5) यदि लोक सभा द्वारा पारित और राज्य सभा को उसकी सिफारिशों के लिए पारेषित धन विधेयक उक्त चौदह दिन की अवधि के भीतर लोक सभा को नहीं लौटाया जाता है तो उक्त अवधि की समाप्ति पर वह दोनों सदनों द्वारा, उस रूप में पारित किया गया समझा जाएगा जिसमें वह लोक सभा द्वारा पारित किया गया था ।

"धन विधेयक" की परिभाषा ।

110. (1) इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए, कोई विधेयक धन विधेयक समझा जाएगा यदि उसमें केवल निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों से संबंधित उपबंध हैं, अर्थात् :—

(क) किसी कर का अधिरोपण, उत्सादन, परिहार, परिवर्तन या विनियमन;

(ख) भारत सरकार द्वारा धन उधार लेने का या कोई प्रत्याभूति देने का विनियमन अथवा भारत सरकार द्वारा अपने ऊपर ली गई या ली जाने वाली किन्हीं वित्तीय बाध्यताओं से संबंधित विधि का संशोधन;

(ग) भारत की संचित निधि या आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी किसी निधि में धन जमा करना या उसमें से धन निकालना;

(घ) भारत की संचित निधि में से धन का विनियोग;

(ङ) किसी व्यय को भारत की संचित निधि पर भारित व्यय घोषित करना या ऐसे किसी व्यय की रकम को बढ़ाना;

(च) भारत की संचित निधि या भारत के लोक लेखे मद्धे धन प्राप्त करना अथवा ऐसे धन की अभिरक्षा या उसका निर्गमन अथवा संघ या राज्य के लेखाओं की संपरीक्षा; या

(छ) उपखंड (क) से उपखंड (च) में विनिर्दिष्ट किसी विषय का आनुषंगिक कोई विषय ।

(2) कोई विधेयक केवल इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा कि वह जुर्मानों या अन्य धनीय शास्तियों के अधिरोपण का अथवा अनुज्ञप्तियों के लिए फीसों की या की गई सेवाओं के लिए फीसों की मांग का या उनके संदाय का उपबंध करता है अथवा इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा कि वह किसी स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा स्थानीय प्रयोजनों के लिए किसी कर के अधिरोपण, उत्सादन, परिहार, परिवर्तन या विनियमन का उपबंध करता है ।

(3) यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं तो उस पर लोक सभा के अध्यक्ष का विनिश्चय अंतिम होगा ।

(4) जब धन विधेयक अनुच्छेद 109 के अधीन राज्य सभा को पारेषित किया जाता है और जब वह अनुच्छेद 111 के अधीन अनुमति के लिए राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है तब प्रत्येक धन विधेयक पर लोक सभा के अध्यक्ष के हस्ताक्षर सहित यह प्रमाण पृष्ठांकित किया जाएगा कि वह धन विधेयक है ।

विधेयकों पर अनुमति ।

111. जब कोई विधेयक संसद् के सदनों द्वारा पारित कर दिया गया है तब वह राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा और राष्ट्रपति घोषित करेगा कि वह विधेयक पर अनुमति देता है या अनुमति रोक लेता है :

परंतु राष्ट्रपति अनुमति के लिए अपने समक्ष विधेयक प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र उस विधेयक को, यदि वह धन विधेयक नहीं है तो, सदनों को इस संदेश के साथ लौटा सकेगा कि वे विधेयक पर या उसके किन्हीं विनिर्दिष्ट उपबंधों पर पुनर्विचार करें और विशिष्टतया किन्हीं ऐसे संशोधनों के पुरःस्थापन की वांछनीयता पर विचार करें जिनकी उसने अपने संदेश में सिफारिश की है और जब विधेयक इस प्रकार लौटा दिया जाता है तब सदन विधेयक पर तदनुसार पुनर्विचार करेंगे और यदि विधेयक सदनों द्वारा संशोधन सहित या उसके बिना फिर से पारित कर दिया जाता है और राष्ट्रपति के समक्ष अनुमति के लिए प्रस्तुत किया जाता है तो राष्ट्रपति उस पर अनुमति नहीं रोकेगा ।

संसद् सदस्य वेतन, भत्ते और पेंशन (संशोधन) विधेयक, 1991 को राष्ट्रपति ने अनुमति नहीं दी । (राज्य सभा बुलेटिन, भाग 1, 9 मार्च, 1992) ।

वित्तीय विषयों के संबंध में प्रक्रिया

वार्षिक वित्तीय विवरण ।

112. (1) राष्ट्रपति प्रत्येक वित्तीय वर्ष के संबंध में संसद् के दोनों सदनों के समक्ष भारत सरकार की उस वर्ष के लिए प्राक्कलित प्राप्तियों और व्यय का विवरण रखवाएगा जिसे इस भाग में "वार्षिक वित्तीय विवरण" कहा गया है ।

(2) वार्षिक वित्तीय विवरण में दिए हुए व्यय के प्राक्कलनों में --

(क) इस संविधान में भारत की संचित निधि पर भारित व्यय के रूप में वर्णित व्यय की पूर्ति के लिए अपेक्षित राशियां, और

(ख) भारत की संचित निधि में से किए जाने के लिए प्रस्थापित अन्य व्यय की पूर्ति के लिए अपेक्षित राशियां,

पृथक्-पृथक् दिखाई जाएंगी और राजस्व लेखे होने वाले व्यय का अन्य व्यय से भेद किया जाएगा ।

(3) निम्नलिखित व्यय भारत की संचित निधि पर भारित व्यय होगा, अर्थात् :—

(क) राष्ट्रपति की उपलब्धियां और भत्ते तथा उसके पद से संबंधित अन्य व्यय;

(ख) राज्य सभा के सभापति और उपसभापति के तथा लोक सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के वेतन और भत्ते;

(ग) ऐसे ऋण भार, जिनका दायित्व भारत सरकार पर है, जिनके अंतर्गत ब्याज, निक्षेप निधि भार और मोचन भार तथा उधार लेने और ऋण सेवा और ऋण मोचन से संबंधित अन्य व्यय हैं;

(घ) (i) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को या उनके संबंध में संदेय वेतन, भत्ते और पेंशन;

(ii) फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को या उनके संबंध में संदेय पेंशन;

(iii) उस उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को या उनके संबंध में दी जाने वाली पेंशन, जो भारत के राज्यक्षेत्र के अंतर्गत किसी क्षेत्र के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करता है या जो [36][*भारत डोमिनियन के राज्यपाल वाले प्रांत*] के अंतर्गत किसी क्षेत्र के संबंध में इस संविधान के प्रारंभ से पहले किसी भी समय अधिकारिता का प्रयोग करता था;

(ङ) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को, या उसके संबंध में, संदेय वेतन, भत्ते और पेंशन;

(च) किसी न्यायालय या माध्यस्थम् अधिकरण के निर्णय, डिक्री या पंचाट की तुष्टि के लिए अपेक्षित राशियां;

(छ) कोई अन्य व्यय जो इस संविधान द्वारा या संसद् द्वारा, विधि द्वारा, इस प्रकार भारित घोषित किया जाता है ।

संसद् में प्राक्कलनों के संबंध में प्रक्रिया ।

113. (1) प्राक्कलनों में से जितने प्राक्कलन भारत की संचित निधि पर भारित व्यय से संबंधित हैं वे संसद् में मतदान के लिए नहीं रखे जाएंगे, किंतु इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह संसद् के किसी सदन में उन प्राक्कलनों में से किसी प्राक्कलन पर चर्चा को निवारित करती है ।

(2) उक्त प्राक्कलनों में से जितने प्राक्कलन अन्य व्यय से संबंधित हैं वे लोक सभा के समक्ष अनुदानों की मांगों के रूप में रखे जाएंगे और लोक सभा को शक्ति होगी कि वह किसी मांग को अनुमति दे या अनुमति देने से इंकार कर दे अथवा किसी मांग को, उसमें विनिर्दिष्ट रकम को कम करके, अनुमति दे ।

(3) किसी अनुदान की मांग राष्ट्रपति की सिफारिश पर ही की जाएगी, अन्यथा नहीं ।

विनियोग विधेयक ।

114. (1) लोक सभा द्वारा अनुच्छेद 113 के अधीन अनुदान किए जाने के पश्चात्, यथाशक्य शीघ्र, भारत की संचित निधि में से —

(क) लोक सभा द्वारा इस प्रकार किए गए अनुदानों की, और

(ख) भारत की संचित निधि पर भारित, किंतु संसद् के समक्ष पहले रखे गए विवरण में वर्णित रकम से किसी भी दशा में अनधिक व्यय की,

पूर्ति के लिए अपेक्षित सभी धनराशियों के विनियोग का उपबंध करने के लिए विधेयक पुरःस्थापित किया जाएगा ।

---

36. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के . . . तत्स्थानी प्रांत" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(2) इस प्रकार किए गए किसी अनुदान की रकम में परिवर्तन करने या अनुदान के लक्ष्य को बदलने अथवा भारत की संचित निधि पर भारित व्यय की रकम में परिवर्तन करने का प्रभाव रखने वाला कोई संशोधन, ऐसे किसी विधेयक में संसद् के किसी सदन में प्रस्थापित नहीं किया जाएगा और पीठासीन व्यक्ति का इस बारे में विनिश्चय अंतिम होगा कि कोई संशोधन इस खंड के अधीन अग्राह्य है या नहीं ।

(3) अनुच्छेद 115 और अनुच्छेद 116 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, भारत की संचित निधि में से इस अनुच्छेद के उपबंधों के अनुसार पारित विधि द्वारा किए गए विनियोग के अधीन ही कोई धन निकाला जाएगा, अन्यथा नहीं ।

अनुपूरक, अतिरिक्त या अधिक अनुदान ।

115. (1) यदि —

(क) अनुच्छेद 114 के उपबंधों के अनुसार बनाई गई किसी विधि द्वारा किसी विशिष्ट सेवा पर चालू वित्तीय वर्ष के लिए व्यय किए जाने के लिए प्राधिकृत कोई रकम उस वर्ष के प्रयोजनों के लिए अपर्याप्त पाई जाती है या उस वर्ष के वार्षिक वित्तीय विवरण में अनुध्यात न की गई किसी नई सेवा पर अनुपूरक या अतिरिक्त व्यय की चालू वित्तीय वर्ष के दौरान आवश्यकता पैदा हो गई है, या

(ख) किसी वित्तीय वर्ष के दौरान किसी सेवा पर, उस वर्ष और उस सेवा के लिए अनुदान की गई रकम से अधिक कोई धन व्यय हो गया है,

तो राष्ट्रपति, यथास्थिति, संसद् के दोनों सदनों के समक्ष उस व्यय की प्राक्कलित रकम को दर्शित करने वाला दूसरा विवरण रखवाएगा या लोक सभा में ऐसे आधिक्य के लिए मांग प्रस्तुत करवाएगा ।

(2) ऐसे किसी विवरण और व्यय या मांग के संबंध में तथा भारत की संचित निधि में से ऐसे व्यय या ऐसी मांग से संबंधित अनुदान की पूर्ति के लिए धन का विनियोग प्राधिकृत करने के लिए बनाई जाने वाली किसी विधि के संबंध में भी, अनुच्छेद 112, अनुच्छेद 113 और अनुच्छेद 114 के उपबंध वैसे ही प्रभावी होंगे जैसे वे वार्षिक वित्तीय विवरण और उसमें वर्णित व्यय या किसी अनुदान की किसी मांग के संबंध में और भारत की संचित निधि में से ऐसे व्यय या अनुदान की पूर्ति के लिए धन का विनियोग प्राधिकृत करने के लिए बनाई जाने वाली विधि के संबंध में प्रभावी हैं ।

लेखानुदान, प्रत्ययानुदान और अपवादानुदान ।

116. (1) इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, लोक सभा को —

(क) किसी वित्तीय वर्ष के भाग के लिए प्राक्कलित व्यय के संबंध में कोई अनुदान, उस अनुदान के लिए मतदान करने के लिए अनुच्छेद 113 में विहित प्रक्रिया के पूरा होने तक और उस व्यय के संबंध में अनुच्छेद 114 के उपबंधों के अनुसार विधि के पारित होने तक, अग्रिम देने की;

(ख) जब किसी सेवा की महत्ता या उसके अनिश्चित रूप के कारण मांग ऐसे ब्यौरे के साथ वर्णित नहीं की जा सकती है जो वार्षिक वित्तीय विवरण में सामान्यतया दिया जाता है तब भारत के संपत्ति स्रोतों पर अप्रत्याशित मांग की पूर्ति के लिए अनुदान करने की;

(ग) किसी वित्तीय वर्ष की चालू सेवा का जो अनुदान भाग नहीं है, ऐसा कोई अपवादानुदान करने की,

शक्ति होगी और जिन प्रयोजनों के लिए उक्त अनुदान किए गए हैं उनके लिए भारत की संचित निधि में से धन निकालना विधि द्वारा प्राधिकृत करने की संसद् को शक्ति होगी ।

(2) खंड (1) के अधीन किए जाने वाले किसी अनुदान और उस खंड के अधीन बनाई जाने वाली किसी विधि के संबंध में अनुच्छेद 113 और अनुच्छेद 114 के उपबंध वैसे ही प्रभावी होंगे जैसे वे वार्षिक वित्तीय विवरण में वर्णित किसी व्यय के बारे में कोई अनुदान करने के संबंध में और भारत की संचित निधि में से ऐसे व्यय की पूर्ति के लिए धन का विनियोग प्राधिकृत करने के लिए बनाई जाने वाली विधि के संबंध में प्रभावी हैं ।

117. (1) अनुच्छेद 110 के खंड (1) के उपखंड (क) से उपखंड (च) में विनिर्दिष्ट किसी विषय के लिए उपबंध करने वाला विधेयक या संशोधन राष्ट्रपति की सिफारिश से ही पुरःस्थापित या प्रस्तावित किया जाएगा, अन्यथा नहीं और ऐसा उपबंध करने वाला विधेयक राज्य सभा में पुरःस्थापित नहीं किया जाएगा :

वित्त विधेयकों के बारे में विशेष उपबंध ।

परंतु किसी कर के घटाने या उत्सादन के लिए उपबंध करने वाले किसी संशोधन के प्रस्ताव के लिए इस खंड के अधीन सिफारिश की अपेक्षा नहीं होगी ।

(2) कोई विधेयक या संशोधन उक्त विषयों में से किसी के लिए उपबंध करने वाला केवल इस कारण नहीं समझा जाएगा कि वह जुर्मानों या अन्य धनीय शास्तियों के अधिरोपण का अथवा अनुज्ञप्तियों के लिए फीसों की या की गई सेवाओं के लिए फीसों की मांग का या उनके संदाय का उपबंध करता है अथवा इस कारण नहीं समझा जाएगा कि वह किसी स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा स्थानीय प्रयोजनों के लिए किसी कर के अधिरोपण, उत्सादन, परिहार, परिवर्तन या विनियमन का उपबंध करता है ।

(3) जिस विधेयक को अधिनियमित और प्रवर्तित किए जाने पर भारत की संचित निधि में से व्यय करना पड़ेगा वह विधेयक संसद् के किसी सदन द्वारा तब तक पारित नहीं किया जाएगा जब तक ऐसे विधेयक पर विचार करने के लिए उस सदन से राष्ट्रपति ने सिफारिश नहीं की है ।

साधारणतया प्रक्रिया

118. (1) इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद् का प्रत्येक सदन अपनी प्रक्रिया[37] और अपने कार्य संचालन के विनियमन के लिए नियम बना सकेगा ।

प्रक्रिया के नियम ।

(2) जब तक खंड (1) के अधीन नियम नहीं बनाए जाते हैं तब तक इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन के विधान मंडल के संबंध में जो प्रक्रिया के नियम और स्थायी आदेश प्रवृत्त थे वे ऐसे उपांतरणों और अनुकूलनों के अधीन रहते हुए संसद् के संबंध में प्रभावी होंगे जिन्हें, यथास्थिति, राज्य सभा का सभापति या लोक सभा का अध्यक्ष उनमें करे ।

(3) राष्ट्रपति, राज्य सभा के सभापति और लोक सभा के अध्यक्ष से परामर्श करने के पश्चात्, दोनों सदनों की संयुक्त बैठकों से संबंधित और उनमें परस्पर संचार से संबंधित प्रक्रिया के नियम बना सकेगा ।

(4) दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में लोक सभा का अध्यक्ष या उसकी अनुपस्थिति में ऐसा व्यक्ति पीठासीन होगा जिसका खंड (3) के अधीन बनाई गई प्रक्रिया के नियमों के अनुसार अवधारण किया जाए ।

प्रक्रिया के नियम — इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 208 के अधीन बनाए गए नियम [यदि अन्यथा विधिमान्य हैं तो] अनुच्छेद 21 के अर्थान्तर्गत 'विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया' समझे जाएंगे ।[38]

119. संसद्, वित्तीय कार्य को समय के भीतर पूरा करने के प्रयोजन के लिए किसी वित्तीय विषय से संबंधित या भारत की संचित निधि में से धन का विनियोग करने के लिए किसी विधेयक से संबंधित, संसद् के प्रत्येक सदन की प्रक्रिया और कार्य संचालन का विनियमन विधि द्वारा कर सकेगी तथा

संसद् में वित्तीय कार्य संबंधी प्रक्रिया का विधि द्वारा विनियमन ।

---

37. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा खंड (1) में, उस अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 100 में किए गए संशोधन के परिणामस्वरूप, "प्रक्रिया" शब्द के पश्चात् "जिसके अंतर्गत सदन का अधिवेशन गठित करने के लिए गणपूर्ति भी है" शब्द अंतःस्थापित किए गए थे, किंतु संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा इन शब्दों का लोप किया गया । अतः मूल पाठ अविकल बना है ।

38. *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण*, ए. 1959 एस.सी. 395 ।

यदि और जहां तक इस प्रकार बनाई गई किसी विधि का कोई उपबंध अनुच्छेद 118 के खंड (1) के अधीन संसद् के किसी सदन द्वारा बनाए गए नियम से या उस अनुच्छेद के खंड (2) के अधीन संसद् के संबंध में प्रभावी किसी नियम या स्थायी आदेश से असंगत है तो और वहां तक ऐसा उपबंध अभिभावी होगा ।

संसद् में प्रयोग की जाने वाली भाषा ।

120. (1) भाग 17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद् में कार्य हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा :

परंतु, यथास्थिति, राज्य सभा का सभापति या लोक सभा का अध्यक्ष अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो हिंदी में या अंग्रेजी में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृ-भाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा ।

(2) जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो "या अंग्रेजी में" शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया हो ।

संसद् मे चर्चा पर निर्बन्धन ।

121. उच्चतम न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के, अपने कर्तव्यों के निर्वहन में किए गए आचरण के विषय में संसद् में कोई चर्चा इसमें इसके पश्चात् उपबंधित रीति से उस न्यायाधीश को हटाने की प्रार्थना करने वाले समावेदन को राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करने के प्रस्ताव पर ही होगी, अन्यथा नहीं ।

न्यायालयों द्वारा संसद् की कार्यवाहियों की जाच न किया जाना ।

122. (1) संसद् की किसी कार्यवाही की विधिमान्यता को प्रक्रिया की किसी अभिकथित अनियमितता के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।

(2) संसद् का कोई अधिकारी या सदस्य, जिसमें इस संविधान द्वारा या इसके अधीन संसद् में प्रक्रिया या कार्य संचालन का विनियमन करने की अथवा व्यवस्था बनाए रखने की शक्तियां निहित हैं, उन शक्तियों के अपने द्वारा प्रयोग के विषय में किसी न्यायालय की अधिकारिता के अधीन नहीं होगा ।

अध्याय 3 — राष्ट्रपति की विधायी शक्तियां

संसद् के विश्रांतिकाल में अध्यादेश प्रख्यापित करने की राष्ट्रपति की शक्ति ।

123. (1) उस समय को छोड़कर जब संसद् के दोनों सदन सत्र में हैं, यदि किसी समय राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि ऐसी परिस्थितियां विद्यमान हैं जिनके कारण तुरंत कार्यवाही करना उसके लिए आवश्यक हो गया है तो वह ऐसे अध्यादेश प्रख्यापित कर सकेगा जो उसे उन परिस्थितियों में अपेक्षित प्रतीत हों ।

(2) इस अनुच्छेद के अधीन प्रख्यापित अध्यादेश का वही बल और प्रभाव होगा जो संसद् के अधिनियम का होता है, किंतु प्रत्येक ऐसा अध्यादेश —

(क) संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखा जाएगा और संसद् के पुनः समवेत होने से छह सप्ताह की समाप्ति पर या यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले दोनों सदन उसके अननुमोदन का संकल्प पारित कर देते हैं तो, इनमें से दूसरे संकल्प के पारित होने पर प्रवर्तन में नहीं रहेगा; और

(ख) राष्ट्रपति द्वारा किसी भी समय वापस लिया जा सकेगा ।

स्पष्टीकरण — जहां संसद् के सदन, भिन्न-भिन्न तारीखों को पुनः समवेत होने के लिए, आहूत

किए जाते हैं वहां इस खंड के प्रयोजनों के लिए, छह सप्ताह की अवधि की गणना उन तारीखों में से पश्चात्‌वर्ती तारीख से की जाएगी ।

(3) यदि और जहां तक इस अनुच्छेद के अधीन अध्यादेश कोई ऐसा उपबंध करता है जिसे अधिनियमित करने के लिए संसद् इस संविधान के अधीन सक्षम नहीं है तो और वहां तक वह अध्यादेश शून्य होगा ।

[1]* * *

खंड (2) 'वही बल और प्रभाव होगा जो संसद् के अधिनियम का होता है' — 1. इन शब्दों के कारण राष्ट्रपति की अध्यादेश निकालने की क्षमता ठीक उतनी है जितनी उस विषय पर विधि बनाने की संसद् की शक्ति है ।[2] विधायी सूची में जो प्रविष्टियां संसद् के लिए हैं वे सब राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित अध्यादेश की विधिमान्यता के पक्ष में प्रस्तुत की जा सकती हैं ।[2]

2. अध्यादेश नया अपराध बना सकता है,[3] या कराधान विधि की संरचना कर सकता है या संशोधन कर सकता है, अर्थात् अनुच्छेद 109-110 का अनुपालन किए बिना धन विधेयक बना सकता है क्योंकि संसद् सत्र में नहीं है और आपात की दशा के कारण जब तक संसद् नहीं बैठती है तब तक के लिए विधान को मुल्तवी नहीं किया जा सकता है ।[4]

3. अध्यादेश से वह कार्य नहीं किया जा सकता जो संसद् अधिनियम बनाकर नहीं कर सकती ।[4]

4. जब संसद् कोई विधि बनाती है और उसे अध्यादेश निकालने की तारीख से भूतलक्षी प्रभाव दिया जाता है तो ऐसे अध्यादेश की सांविधानिकता पर आक्षेप करना बेकार है । क्योंकि अध्यादेश ने जो कुछ भी किया उसे संसद् ने भूतलक्षी अधिनियम बनाकर विधिमान्य बना दिया है ।[4]

अध्याय 4 — संघ की न्यायपालिका

उच्चतम न्यायालय की स्थापना और गठन ।

124. (1) भारत का एक उच्चतम न्यायालय होगा जो भारत के मुख्य न्यायमूर्ति और, जब तक संसद् विधि द्वारा अधिक संख्या विहित नहीं करती है तब तक, *सात*[5] से अनधिक अन्य न्यायाधीशों से मिलकर बनेगा ।

(2) उच्चतम न्यायालय के और राज्यों के उच्च न्यायालयों के ऐसे न्यायाधीशों से परामर्श करने के पश्चात्, जिनसे राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए परामर्श करना आवश्यक समझे, राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा उच्चतम न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को नियुक्त करेगा[6] और वह न्यायाधीश तब तक पद धारण करेगा जब तक वह पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त नहीं कर लेता है :

परंतु मुख्य न्यायमूर्ति से भिन्न किसी न्यायाधीश की नियुक्ति की दशा में भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से सदैव परामर्श किया जाएगा[6] :

परंतु यह और कि —

---

1. संविधान (अड़तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा खंड (4) अंतःस्थापित किया गया और चवालीसवें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा उसका लोप किया गया ।

2. *सतपाल* बनाम *राज्यपाल*, ए. 1979 एस.सी. 1550 (पैरा 3, 7, 8, 10); *राय* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 710 (पैरा 30-31) ।

3. *पंजाब राज्य* बनाम *मोहरसिंह*, ए. 1955 एस.सी. 84 ।

4. *गर्ग* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 2138 (पैरा 5) ।

5. उच्चतम न्यायालय (न्यायाधीश संख्या) संशोधन अधिनियम, 1977 द्वारा बढ़ाकर "सतरह" कर दी गई । बाद में 1986 के अधिनियम 22 ने यह संख्या "पचीस" कर दी है ।

6. *गुप्ता* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 149; *सुभाष शर्मा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1991 एस.सी. 631 में उच्चतम न्यायालय ने यह कहा कि मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श के विषय में *गुप्ता* बनाम *भारत संघ* में जो कहा गया उस पर पुनर्विचार की आवश्यकता है ।

(क) कोई न्यायाधीश, राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा;

(ख) किसी न्यायाधीश को खंड (4) में उपबंधित रीति से उसके पद से हटाया जा सकेगा ।

[7]*(2क) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की आयु ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसी रीति से अवधारित की जाएगी जिसका संसद् विधि द्वारा उपबंध करे ।*

(3) कोई व्यक्ति, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए तभी अर्हित होगा जब वह भारत का नागरिक है और —

(क) किसी उच्च न्यायालय का या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों का लगातार कम से कम पांच वर्ष तक न्यायाधीश रहा है; या

(ख) किसी उच्च न्यायालय का या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों का लगातार कम से कम दस वर्ष तक अधिवक्ता रहा है; या

(ग) राष्ट्रपति की राय में पारंगत विधिवेत्ता है ।

स्पष्टीकरण 1 — **इस खंड में, "उच्च न्यायालय" से वह उच्च न्यायालय अभिप्रेत है जो भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग में अधिकारिता का प्रयोग करता है, या इस संविधान के प्रारंभ से पहले किसी भी समय प्रयोग करता था ।**

स्पष्टीकरण 2 — **इस खंड के प्रयोजन के लिए, किसी व्यक्ति के अधिवक्ता रहने की अवधि की संगणना करने में वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान किसी व्यक्ति ने अधिवक्ता होने के पश्चात् ऐसा न्यायिक पद धारण किया है जो जिला न्यायाधीश के पद से अवर नहीं है ।**

(4) उच्चतम न्यायालय के किसी न्यायाधीश को उसके पद से तब तक नहीं हटाया जाएगा जब तक साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर ऐसे हटाए जाने के लिए संसद् के प्रत्येक सदन द्वारा अपनी कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा समर्थित समावेदन, राष्ट्रपति के समक्ष उसी सत्र में रखे जाने पर राष्ट्रपति ने आदेश नहीं दे दिया है ।[7क]

(5) संसद् खंड (4) के अधीन किसी समावेदन के रखे जाने की तथा न्यायाधीश के कदाचार या असमर्थता के अन्वेषण और साबित करने की प्रक्रिया का विधि द्वारा विनियमन कर सकेगी ।

(6) उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश होने के लिए नियुक्त प्रत्येक व्यक्ति, अपना पद ग्रहण करने से पहले राष्ट्रपति या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त व्यक्ति के समक्ष, तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार, शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा ।

(7) कोई व्यक्ति, जिसने उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में पद धारण किया है, भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर किसी न्यायालय में या किसी प्राधिकारी के समक्ष अभिवचन या कार्य नहीं करेगा ।

खंड (4) — निर्णय में की गई गंभीर भूल भी कदाचार नहीं है ।[8]

न्यायाधीशों के वेतन आदि ।

125. [9]*(1) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतनों का संदाय किया जाएगा जो संसद्, विधि द्वारा, अवधारित करे और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसे वेतनों का संदाय किया जाएगा जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं ।*

7. संविधान (पंद्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा अंतःस्थापित ।

7क. *सबकमिटी* बनाम *भारत संघ*, (1991) 4 एस.सी.सी. 699 ।

8 *दफ्तरी* बनाम *गुप्ता*, ए. 1971 एस.सी. 1132 (*1145*) ।

9. संविधान (चौवनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा तारीख 1-4-1986 से मूल खंड के स्थान पर खंड (1) प्रतिस्थापित ।

(2) प्रत्येक न्यायाधीश ऐसे विशेषाधिकारों और भत्तों का तथा अनुपस्थिति छुट्टी और पेंशन के संबंध में ऐसे अधिकारों का, जो संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन समय-समय पर अवधारित किए जाएं और जब तक इस प्रकार अवधारित नहीं किए जाते हैं तब तक ऐसे विशेषाधिकारों, भत्तों और अधिकारों का जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, हकदार होगा :

परंतु किसी न्यायाधीश के विशेषाधिकारों और भत्तों में तथा अनुपस्थिति छुट्टी या पेंशन के संबंध में उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति की नियुक्ति ।

126. जब भारत के मुख्य न्यायमूर्ति का पद रिक्त है या जब मुख्य न्यायमूर्ति, अनुपस्थिति के कारण या अन्यथा अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तब न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों में से ऐसा एक न्यायाधीश, जिसे राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा ।

तदर्थ न्यायाधीशो की नियुक्ति ।

127. (1) यदि किसी समय उच्चतम न्यायालय के सत्र को आयोजित करने या चालू रखने के लिए उस न्यायालय के न्यायाधीशों की गणपूर्ति प्राप्त न हो तो भारत का मुख्य न्यायमूर्ति राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से और संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करने के पश्चात्, किसी उच्च न्यायालय के किसी ऐसे न्यायाधीश से, जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए सम्यक् रूप से अर्हित है और जिसे भारत का मुख्य न्यायमूर्ति नामोदिष्ट करे, न्यायालय की बैठकों में उतनी अवधि के लिए, जितनी आवश्यक हो, तदर्थ न्यायाधीश के रूप में उपस्थित रहने के लिए लिखित रूप में अनुरोध कर सकेगा ।

(2) इस प्रकार नामोदिष्ट न्यायाधीश का कर्तव्य होगा कि वह अपने पद के अन्य कर्तव्यों पर पूर्विकता देकर उस समय और उस अवधि के लिए, जिसके लिए उसकी उपस्थिति अपेक्षित है, उच्चतम न्यायालय की बैठकों में, उपस्थित हो और जब वह इस प्रकार उपस्थित होता है तब उसको उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की सभी अधिकारिता, शक्तियां और विशेषाधिकार होंगे और वह उक्त न्यायाधीश के कर्तव्यों का निर्वहन करेगा ।

उच्चतम न्यायालय की बैठकों में सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की उपस्थिति ।

128. इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, भारत का मुख्य न्यायमूर्ति, किसी भी समय, राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से किसी व्यक्ति से, जो उच्चतम न्यायालय या फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश का पद धारण कर चुका है [10][*या जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद धारण कर चुका है और उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए सम्यक् रूप से अर्हित है*], उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में बैठने और कार्य करने का अनुरोध कर सकेगा और प्रत्येक ऐसा व्यक्ति, जिससे इस प्रकार अनुरोध किया जाता है, इस प्रकार बैठने और कार्य करने के दौरान, ऐसे भत्तों का हकदार होगा जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा अवधारित करे और उसको उस न्यायालय के न्यायाधीश की सभी अधिकारिता, शक्तियां और विशेषाधिकार होंगे, किंतु उसे अन्यथा उस न्यायालय का न्यायाधीश नहीं समझा जाएगा :

परंतु जब तक यथापूर्वोक्त व्यक्ति उस न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में बैठने और कार्य करने की सहमति नहीं दे देता है तब तक इस अनुच्छेद की कोई बात उससे ऐसा करने की अपेक्षा करने वाली नहीं समझी जाएगी ।

10 संविधान (पन्द्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा तारीख 6-10-1963 से कोष्ठक में दिए गए शब्द अंतःस्थापित ।

129. उच्चतम न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा और उसको अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति सहित ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियां होंगी ।

उच्चतम न्यायालय का अभिलेख न्यायालय होना ।

अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति[11] — अभिलेख के न्यायालय के रूप में उच्चतम न्यायालय को अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति है । फिर भी अनुच्छेद 129 विनिर्दिष्ट रूप से इस शक्ति का उल्लेख करता है जिससे कोई संदेह न रहे । इस शक्ति का प्रयोग संक्षेपत किया जाता है ।[12]

इस शक्ति का उद्देश्य व्यक्तिगत रूप से न्यायाधीशों को आरोपों से संरक्षण प्रदान करना नहीं है । इसका उद्देश्य जनता को संरक्षण प्रदान करना है क्योंकि यदि अधिकरण के प्राधिकार को ठेस पहुंचती है तो इससे जनता की हानि होगी ।[13] न्यायालय, न्याय के सम्यक् अनुक्रम में हस्तक्षेप के आधार पर भी अवमान की कार्यवाही नहीं करता जब तक कि वास्तव में ऐसा "प्रतिकूल प्रभाव" न पडा हो जिसे "सारवान हस्तक्षेप" कहा जाए । इसमें और "अनुचित व्यवहार" में अन्तर किया जाना चाहिए ।[14]

यह एक असाधारण शक्ति है और इसका उपयोग बहुत कम किया जाना चाहिए । किंतु जहां लोकहित में शक्ति का प्रयोग आवश्यक है वहां न्यायालय को पीछे नहीं हटना चाहिए । जहां जुर्माना पर्याप्त न हो वहां पर कारावास का दंड दिया जाना चाहिए ।[15]

130. उच्चतम न्यायालय दिल्ली में अथवा ऐसे अन्य स्थान या स्थानों में अधिविष्ट होगा जिन्हें भारत का मुख्य न्यायमूर्ति, राष्ट्रपति के अनुमोदन से समय-समय पर, नियत करे ।

उच्चतम न्यायालय का स्थान ।

131 इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, —

उच्चतम न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता ।

(क) भारत सरकार और एक या अधिक राज्यों के बीच, या

(ख) एक ओर भारत सरकार और किसी राज्य या राज्यों और दूसरी ओर एक या अधिक अन्य राज्यों के बीच, या

(ग) दो या अधिक राज्यों के बीच,

किसी विवाद में, यदि और जहां तक उस विवाद में (विधि का या तथ्य का) ऐसा कोई प्रश्न अंतर्वलित है जिस पर किसी विधिक अधिकार का अस्तित्व या विस्तार निर्भर है तो और वहां तक अन्य न्यायालयों का अपवर्जन करके उच्चतम न्यायालय को आरंभिक अधिकारिता होगी

[16]*परंतु उक्त अधिकारिता का विस्तार उस विवाद पर नहीं होगा जो किसी ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबंध, सनद या वैसी ही अन्य लिखत से उत्पन्न हुआ है जो इस संविधान के प्रारंभ से पहले की गई थी या निष्पादित की गई थी और ऐसे प्रारंभ के पश्चात् प्रवर्तन में है या जो यह उपबंध करती है कि उक्त अधिकारिता का विस्तार ऐसे विवाद पर नहीं होगा ।*

---

11 इस अनुच्छेद के अधीन प्रक्रिया अब न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के उपबंधों के अधीन होगी जिसकी लेखक की पुस्तक *"लॉ आफ दि प्रेस इन इंडिया"* (प्रेन्टिस-हाल आफ इंडिया, 1980, पृष्ठ 451-516) में पूर्ण रूप से चर्चा की गई है, *"कमेंट्री आन दि कांस्टीट्यूशन ऑफ इंडिया"*, छठा संस्करण, जिल्द सी, पृष्ठ 145 और आगे भी देखिए, *राजस्व बोर्ड* बनाम *विनय*, ए 1981 एससी 723 (पैरा 14) ।

12 *हीरालाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1954 एससी 743 ।

13 *ब्रह्म प्रकाश* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1953) एससीआर 1169 ।

14 *रिजान-उल-हसन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1953) एससीआर 581 ।

15 *शेरीफ* बनाम *न्यायाधीश*, (1955) 1 एससीआर 767, *राय* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए 1960 एससी 190 ।

16 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा मूल परंतुक (i) और (ii) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

अनुच्छेद 131 : उच्चतम न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता का प्रविषय — उच्चतम न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता पर निम्नलिखित मर्यादाएं हैं .

(क) विवाद के पक्षकार खंड (क) से (ग) में विनिर्दिष्ट व्यक्ति भी हो सकते हैं । दूसरे शब्दों में संघ की घटक इकाइयां भी हो सकती हैं ।[17] वह ऐसे वाद ग्रहण नहीं करेगा जिनके पक्षकार नागरिक या प्राइवेट निकाय हैं ।[18] चाहे वे सयुक्त रूप से हों या किसी राज्य या भारत सरकार के साथ आनुकल्पिक रूप में हों । जिस वाद में प्राइवेट पक्षकार हैं वह वाद उच्चतम न्यायालय से भिन्न न्यायालय में सस्थित किया जाना चाहिए । अनुच्छेद 36 में राज्य की जो विस्तृत परिभाषा है वह अनुच्छेद 131 को लागू नहीं होगी ।[17]

(ख) विवाद किसी विधिक अधिकार के सबंध में होना चाहिए । विधिक अधिकार और राजनैतिक अधिकारों में अंतर है । न्यायालय राजनैतिक अधिकारों पर कोई निर्णय नही दे सकता । ऐसे अधिकारों पर ही निर्णय दे सकता है जो न्यायालय की कार्यवाही द्वारा प्रवृत्त कराए जा सकते हैं ।[19]

निम्नलिखित प्रश्नों में विधिक अधिकार अतवर्लित था

(i) संघ या किसी राज्य की विधि की विधिमान्यता ।[20]

(ii) किसी विधान सभा को विघटित करने की सघ की क्षमता और इसके विपरीत किसी राज्य का अनुच्छेद 356 के अधीन सघ की शक्ति के असाविधानिक प्रयोग के विरुद्ध संविधान के परिसंघीय आधार को बनाए रखने का अधिकार ।[21]

(iii) संघ की राज्य के किसी मत्री या अन्य अधिकारी या अभिकर्ता के विरुद्ध भ्रष्टाचार, सरकार की शक्तियों के दुरुपयोग आदि के अभिकथन की जांच आयोग अधिनियम के अधीन जाच के लिए आदेश देने की क्षमता ।[22]

(ग) प्रश्न ऐसा नहीं होना चाहिए जो अनुच्छेद 131 या संविधान के किसी अन्य उपबंध के अपवाद के रूप में है ।[20]

इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए — सघ और राज्य या राज्यो के बीच आपस में विधिक अधिकार की विद्यमानता के बारे में विवादों पर उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता अनन्य है । संविधान के अन्य उपबंधों में गिनाए गए विषय इसके अपवाद हैं । निम्नलिखित विषय उच्चतम न्यायालय की आरभिक अधिकारिता से निकाल कर संविधान द्वारा स्थापित अन्य अधिकरणों को सौंपे गए हैं ।

(i) सविधान में विनिर्दिष्ट विवाद अतरराज्यीय जल विवाद अधिनियम की धारा 11 के साथ पठित अनुच्छेद 262 मे उल्लिखित कानूनी अधिकरण को निर्दिष्ट अतरराज्यीय जल प्रदाय में हस्तक्षेप के परिवाद ।

(ii) वित्त आयोग को निर्दिष्ट विषय [अनुच्छेद 280] ।

(iii) सघ और राज्य के बीच कुछ सेवाओ का समायोजन [अनुच्छेद 290] ।

(iv) अनुच्छेद 31 के परंतुक के साथ पठित अनुच्छेद 143(2) के अधीन उच्चतम न्यायालय को निर्देश ।[17]

अनुच्छेद 131 के अधीन वाद का प्रविषय — उच्चतम न्यायालय ऐसी डिक्री पारित कर सकता है जो उसी प्रकार निष्पादित होगी जैसे अन्य न्यायालयों की डिक्रिया होती हैं ।[21]

17 *बिहार राज्य* बनाम *भारत संघ*, ए 1970 एससी 1446 (*1449, 1452*) ।

18 *रामगढ स्टेट* बनाम *बिहार प्रात*, ए 1939 एफसी 55 ।

19 *संयुक्त प्रात* बनाम *गवर्नर-जनरल*, ए 1939 एफसी 58 ।

20 *सरायकेल्ला राज्य* बनाम *भारत संघ*, ए 1951 एससी 253 ।

21 *राजस्थान राज्य* बनाम *भारत संघ*, ए 1977 एससी 1361 (पैरा 92, 105-07, 134-36) ।

22 *कर्नाटक राज्य* बनाम *भारत संघ*, ए 1978 एससी 68 (पैरा 141-49, 159-65, 198-203, 276) ।

केंद्रीय विधियों की सांविधानिक वैधता से संबंधित प्रश्नों के बारे में उच्चतम न्यायालय की अनन्य अधिकारिता ।

[23]131क. *संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 की धारा 4 द्वारा (13-4-1978 से) निरसित ।*

कुछ मामलों में उच्च न्यायालयों से अपीलों में उच्चतम न्यायालय की अपीली अधिकारिता ।

132. (1) **भारत के राज्यक्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय की सिविल, दांडिक या अन्य कार्यवाही में दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी** [24][*यदि वह उच्च न्यायालय अनुच्छेद 134क के अधीन प्रमाणित कर देता है*] **कि उस मामले में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है ।**

[25]***

(3) **जहां ऐसा प्रमाणपत्र दे दिया गया है** [26]*** **वहां उस मामले में कोई पक्षकार इस आधार पर उच्चतम न्यायालय में अपील कर सकेगा कि पूर्वोक्त किसी प्रश्न का विनिश्चय गलत किया गया है** [26]*** **।**

स्पष्टीकरण — **इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए, "अंतिम आदेश" पद के अंतर्गत ऐसे विवाद्यक का विनिश्चय करने वाला आदेश है जो, यदि अपीलार्थी के पक्ष में विनिश्चित किया जाता है तो, उस मामले के अंतिम निपटारे के लिए पर्याप्त होगा ।**

अनुच्छेद 132 : **सांविधानिक प्रश्नों को अंतर्वलित करने वाली अपीलें** — यह अनुच्छेद उन अपीलों के बारे में है जो उच्च न्यायालय में सिविल, दांडिक या अन्य किसी प्रकार की कार्यवाही से उद्भूत होती हैं और संविधान के निर्वचन से सबंधित हैं ।[27]

इसमें यह कहा गया है कि भारत के राज्यक्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय की सिविल, दांडिक या अन्य कार्यवाही में दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी, यदि उसमें संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है । शर्त यह है कि उच्च न्यायालय उसे इस प्रकार का प्रमाणपत्र दे ।[28] प्रमाणपत्र देने की प्रक्रिया आगे अनुच्छेद 134 में दी गई है ।

इस अनुच्छेद में यह सुनिश्चित किया गया है कि यद्यपि उच्च न्यायालय किसी भी अधिनियम की विधिमान्यता पर अपना निर्णय दे सकता है या संविधान के निर्वचन से संबंधित किसी प्रश्न का विनिश्चय कर सकता है, किंतु ऐसे मामलों में उच्च न्यायालय का विनिश्चय अंतिम नहीं होगा । संविधान के निर्वचन के लिए अंतिम प्राधिकार उच्चतम न्यायालय के पास होगा ।[27] इस प्रकार संविधान में सांविधानिक अपीलों को एक विशेष प्रवर्ग में रखा गया है । इस बात से कोई अंतर नहीं पड़ता कि वे किस कार्यवाही से उत्पन्न हुई हैं । ऐसे प्रश्नों को अंतर्वलित करने वाले मामलों में बहुत अधिक छूट दी जाती है ।[27]

'संविधान के निर्वचन के बारे में सारवान् प्रश्न' — इस अनुच्छेद में तब तक अपील नहीं

23 *"कांस्टीट्यूशन लॉ आफ इंडिया"* के प्रथम संस्करण का पृष्ठ 182 देखिए ।

24. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा कोष्ठक में दिए गए शब्द अंतःस्थापित किए गए ।

25 संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा खंड (2) का लोप किया गया ।

26. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा उच्चतम न्यायालय की इजाजत के प्रति निर्देश का लोप किया गया ।

27. *निर्वाचन आयोग* बनाम *वेंकट*, ए. 1953 एस.सी. 210 (*212*) ।

28. चवालीसवें संशोधन अधिनियम से पूर्व, उच्च न्यायालय द्वारा प्रमाणपत्र देने से इंकार करने पर पक्षकार अनुच्छेद 132 के अधीन अपील करने की विशेष इजाजत अभिप्राप्त कर सकता था । उच्चतम न्यायालय में जाने का अधिकार, खंड (2) का लोप करके, छीन लिया गया है । किंतु अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत का उपचार बना हुआ है ।

हो सकती जब तक कि इस मामले में संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतवर्लित न हो । सांविधानिक प्रश्न उच्च न्यायालय या अधीनस्थ न्यायालय के निष्कर्ष से उत्पन्न होना चाहिए ।[29] इस संदर्भ में "सारवान्" का यह अर्थ नहीं है कि यह प्रश्न साधारण महत्व का हो । प्रश्न इस प्रकार का होना चाहिए जिसके बार में मत-भिन्नता है ।[30]

(क) जिस प्रश्न का उच्चतम न्यायालय के पहले के किसी निर्णय में उत्तर दिया जा चुका है वह सारवान् प्रश्न नहीं है ।[29] सारवान् प्रश्न वहीं उत्पन्न होता है जहां संविधान के किसी उपबंध का नया निर्वचन किया जाता है ।[30]

(ख) उच्चतम न्यायालय के किसी विनिश्चय को देखते हुए उच्च न्यायालय का कोई पूर्ववर्ती निर्णय लागू होता है या नहीं यह प्रश्न सारवान् प्रश्न होगा यदि उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय ने उस निर्णय को प्रत्यक्ष रूप से उल्टा नहीं है ।[31]

निम्नलिखित ऐसे प्रश्नों के उदाहरण हैं जिनमें सांविधानिक निर्वचन अंतवर्लित था :

(i) किसी अधिनियम को शक्तिबाह्य[32] या संविधान के आज्ञापक उपबंधों से असंगत बताते हुए लाया गया वाद ।[33]

(ii) किसी ऐसी विधि के अधीन दोषसिद्धि जिस पर शक्तिबाह्य होने का आक्षेप है ।[34]

(iii) संविधान के किसी विशिष्ट उपबंध का निर्वचन अतर्वलित करने वाले मामले ।[35] किंतु उस दशा में नहीं जहां उस प्रश्न का किसी पूर्व निर्णय द्वारा उत्तर दिया जा चुका है ।

(iv) कोई विधि[36] या कार्यपालिका आदेश मूल अधिकार का उल्लंघन करता है या नहीं ।

निम्नलिखित मामलों में यह अभिनिर्धारित हुआ कि इनमें संविधान के निर्वचन के बारे में कोई प्रश्न अंतर्वलित नहीं है :

(i) क्या कोई अधिनियम मामले के तथ्यों को शुद्ध रूप से लागू किया गया है ?[37]

(ii) क्या अनुच्छेद 311(2) के अर्थान्तर्गत सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिया गया है ?[38] किंतु ऐसे भी मामले हो सकते हैं जिनमें युक्तियुक्त अवसर का प्रश्न इस अनुच्छेद के अधीन सांविधानिक प्रत्याभूति की प्रकृति और अंतर्वस्तु से इस प्रकार संयुक्त हो कि उसे अलग नहीं किया जा सकता ।[38]

उच्च न्यायालयों से सिविल विषयों से संबंधित अपीलों में उच्चतम न्यायालय की अपीली अधिकारिता ।

133. [39][(1) *भारत के राज्यक्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय की सिविल कार्यवाही में दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी* [40][*यदि उच्च न्यायालय अनुच्छेद 134क के अधीन प्रमाणित कर देता है कि*] —

(क) उस मामले में विधि का व्यापक महत्व का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है; और

---

29. *हिन्दुस्तान कमर्शियल बैंक* बनाम *भगवान दास*, ए. 1955 एस.सी. 1142 (*1143*) ।

30. *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *गंगा*, ए. 1960 एस.सी. 356 (*369*); *नारायण राव* बनाम *ईश्वर लाल*, ए 1965 एस.सी. 1818 ।

31. तुलना कीजिए, *पंजाब राज्य* बनाम *शादी लाल*, ए. 1960 एस.सी. 397 (*399*) ।

32. *भैरवेन्द्र* बनाम *असम राज्य*, (1956) एस.सी.ए. 736 ।

33. *असम राज्य* बनाम *रमेश*, ए. 1962 एस.सी. 107 ।

34. *किशोरी* बनाम *किंग*, ए. 1950 एफ.सी. 37 ।

35. *कारपोरेशन* बनाम *सेंट थामस स्कूल*, (1949) एफ.एल.जे. 361; तुलना कीजिए, *हरि विष्णु* बनाम *अहमद*, ए. 1965 एस.सी. 233 ।

36. तुलना कीजिए, *गणपति* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 188; *बुधन* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 191 (*192*) ।

37. *आर.* बनाम *अब्दुल मजीद*, (1949) एफ.एल.जे. 133 ।

38. *मैसूर राज्य* बनाम *चबलानी*, ए. 1958 एस.सी. 325 (*328*) ।

39. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा खंड (1) प्रतिस्थापित किया गया ।

40. संविधान (तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1972 द्वारा तारीख 27-2-1973 से खंड (1) प्रतिस्थापित किया गया ।

(ख) उच्च न्यायालय की राय में उस प्रश्न का उच्चतम न्यायालय द्वारा विनिश्चय आवश्यक है ।]

(2) अनुच्छेद 132 में किसी बात के होते हुए भी, उच्चतम न्यायालय में खंड (1) के अधीन अपील करने वाला कोई पक्षकार ऐसी अपील के आधारों में यह आधार भी बता सकेगा कि इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि के किसी सारवान् प्रश्न का विनिश्चय गलत किया गया है ।

(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश की अपील उच्चतम न्यायालय में तब तक नहीं होगी जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे ।

सिविल अपीलें — अनुच्छेद 132 सांविधानिक प्रश्नों तक ही सीमित है । किंतु उसमें सिविल, दांडिक या अन्य मामलों से अपीलें हो सकती हैं । अनुच्छेद 135 सिविल अपीलों तक ही सीमित है जो ऐसे प्रश्नों के बारे में है जो संविधान के निर्वचन से भिन्न हैं [खंड (2) के अधीन रहते हुए] ।

इस अनुच्छेद में यह अधिकथित है कि अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत द्वारा की गई अपील और अनुच्छेद 132 के अधीन सांविधानिक आधार पर की गई अपील को छोड़कर भारत के राज्यक्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय की सिविल कार्यवाही से उच्चतम न्यायालय को अपील निम्नलिखित दशाओं में होगी :

(क) अपील का विषय कोई निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश है ।

(ख) उच्च न्यायालय ने ऐसी अपील के लिए प्रमाणपत्र दे दिया है :

(i) 27 फरवरी 1973 के पश्चात् किसी भी मामले में साधिकार प्रमाणपत्र प्राप्त नहीं किया जा सकता ।

(ii) सभी मामलों में वाद का मूल्य, चाहे जो भी हो, प्रमाणपत्र देना उच्च न्यायालय के विवेकाधीन है ।

पुराने खंड के अधीन उपखंड (क)-(ख) में आने वाले मामले में विधि का सारवान् प्रश्न अंतर्वलित होना उस दशा में आवश्यक नहीं था जब वह उल्लिखित मूल्य से अधिक का था । अब यह वस्तुपरक शर्त है जिसे अनुच्छेद 133 के अधीन प्रमाणपत्र के लिए आवेदन के लिए प्रत्येक दशा में पूरा किया जाना चाहिए । इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालय की राय में प्रश्न ऐसे साधारण और दीर्घकालिक महत्व का होना चाहिए कि उसका देश के सर्वोच्च न्यायालय से निश्चय किया जाना आवश्यक है ।[41] ये सभी अपेक्षाएं पूरी होने पर ही उच्च न्यायालय प्रमाणपत्र देगा ।[41]

खंड (1) : निर्णय, डिक्री या अंतिम आदेश — 1. यह अनुच्छेद वादों तक ही सीमित नहीं है । वाद और कार्यवाहियों में अंतर है । इसमें शर्त यही है कि निर्णय किसी सिविल कार्यवाही में दिया गया हो ।

2. यह आवश्यक नहीं है कि निर्णय या आदेश, उच्च न्यायालय ने अपनी अपीली अधिकारिता में दिया हो । प्रस्तुत अनुच्छेद के अधीन उच्च न्यायालय के आरंभिक अपीली या पुनरीक्षण अधिकारिता में किए गए विनिश्चय से अपील उच्चतम न्यायालय को होगी, चाहे विधि में उच्चतम न्यायालय को केवल एक ही अपील का उपबंध किया गया हो ।[42]

3. 'निर्णय' शब्द से यह प्रकट होता है कि न्यायालय के समक्ष विवाद पर गुणागुण के आधार पर विनिश्चय दिया गया है ।[43] इसमें अंतवर्ती निर्णय नहीं आता ।[44] निर्णय के

41. *स्टेट बैंक बनाम मोनी*, ए. 1976 एस.सी. 1111 (पैरा 2) ।
42. *जयचंद बनाम कमलाक्ष*, ए. 1949 पी.सी. 239 ।
43. *कुप्पुस्वामी बनाम दि किंग*, ए. 1949 पी.सी. 1 ।
44. *अमीन ब्रदर्स बनाम भारत डोमिनियन*, ए. 1950 एफ.सी. 77 ।

विशेषण के रूप में "अंतिम" नहीं लगाया गया है, फिर भी इससे कोई परिवर्तन नहीं होगा ।[45]

4. जहां न्यायालय का कृत्य सलाहकारी या परामर्शदाता का है वहां पर कोई निर्णय या आदेश नहीं होता । आरंभिक या अपीली अधिकारिता में ही ऐसा निर्णय या आदेश होता है ।[46]

5. जहां उच्च न्यायालय मध्यस्थ के रूप में अधिकारिता का प्रयोग कर रहा है वहां भी इस अनुच्छेद के अर्थान्तर्गत निर्णय, डिक्री या आदेश नहीं होगा ।[47]

6. 'निर्णय, डिक्री या आदेश' एक व्यापक अभिव्यक्ति है और इस अभिव्यक्ति के सभी भागों का एक-सा अर्थ है, अर्थात्, न्यायालय द्वारा उसके समक्ष उपस्थित होने वाले पक्षकारों के अधिकारों का अंतिम रूप से न्याय-निर्णयन किया गया है ।[48-49] जहां अधिकारों के बारे में अवधारण नहीं किया जाता वहां कोई अंतिम निर्णय या आदेश नहीं होता ।

उपखंड (क) : विधि का प्रश्न क्या है — 1. इस संदर्भ में विधि से अभिप्रेत है साधारण विधि, केवल अधिनियमित विधि नहीं ।[49] विधि का प्रश्न तथ्य के प्रश्न से भिन्न होता है, किंतु कभी-कभी विधि और तथ्य के प्रश्न एक-दूसरे में उलझ जाते हैं ।[50] विधि का प्रश्न क्या है यह समझने के लिए नीचे उदाहरण दिए गए हैं ।

2. निम्नलिखित प्रश्न विधिक प्रश्न हैं :

किसी साबित तथ्य का विधिक प्रभाव,[51] जैसे साबित या स्वीकृत तथ्यों को परिसीमा अधिनियम की धारा 18 का लागू होना, या क्या कोई संपत्ति लौकिक है या देवोत्तर,[52] या क्या प्रतिवादी ने किसी बंधक विलेख को जिसका वह पक्षकार नहीं था स्वीकार करके उसे अपने पर आबद्धकर बाध्यता बना लिया है, क्या कोई अभिधारिता स्थायी है,[53] या संपत्ति का लोक समर्पण हुआ था या विस्मृत अनुदान की उपधारणा की जा सकती है ।[54]

किंतु अन्य तथ्यों से तथ्य संबंधी निष्कर्ष विधि का प्रश्न नहीं है ।[55]

विधि का सारवान् प्रश्न — 1. प्रमाणपत्र के लिए केवल विधि का प्रश्न होना पर्याप्त नहीं है । अपेक्षा यह है कि विधि का सारवान् प्रश्न हो । सारवान् प्रश्न होने के लिए उस विषय में कोई संदेह या मतभेद की गुंजाइश होनी चाहिए ।[56] यदि अपील न्यायालय द्वारा विधि निश्चित हो चुकी है या न्यायिक मत अधिकांशतः उसके पक्ष में हैं तो विशेष तथ्यों को लागू करना मात्र ही विधि का सारवान् प्रश्न नहीं होगा ।[56]

2. विधि का सारवान् प्रश्न ऐसा प्रश्न है जिसके उत्तर पर ही विनिश्चय आधारित होता है, जैसे कोई निर्णय प्राङ्न्याय होगा या नहीं । हो सकता है इसका विनिश्चय अन्य व्यक्तियों के लिए महत्वहीन हो ।[57]

45. *टोबैको मैन्यूफैक्चरर्स* बनाम *राज्य*, ए 1951 पटना 29 (एफ.बी.) ।

46. *प्रेमचंद* बनाम *बिहार राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 799 (*804*) ।

47. *हंस कुमार* बनाम *भारत संघ*, ए 1958 एस.सी. 947; *कलक्टर* बनाम *मिश्रा*, (1968) 1 एस.सी.आर. 372 (*379*) ।

48. *जुगल* बनाम *गुलबाई*, ए. 1955 एस.सी. 812 ।

49. *रामगोपाल* बनाम *शम्स खातून*, (1893) 19 आई.ए. 528 ।

50. *नाफर* बनाम *शुकूर*, (1918) 45 आई.ए. 183 ।

51. *देशमुख* बनाम *कोठारी*, (1951) 6 डी.एल.आर. (एस.सी.) 73 (*77*) ।

52. *मिदनापुर जमींदारी* बनाम *उमाचरण*, ए. 1923 पी.सी. 187 ।

53. *धन्ना मल्ल* बनाम *मोती सागर*, (1927) 54 आई.ए. 178 ।

54. *लक्ष्मीधर* बनाम *रंगालाल*, (1949) 76 आई.ए. 271 ।

55. *मीनाक्षी मिल्स* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1957 एस.सी. 49 (*58*); *शरत* बनाम *खगेन्द्रनाथ*, ए. 1962 एस.सी. 334 ।

56. *चुन्नीलाल* बनाम *सेंचुरी स्पिनिंग कंपनी*, ए. 1962 एस.सी. 1314 (*1318*) ।

57. *रघुनाथ* बनाम *उपायुक्त*, ए. 1927 पी.सी. 101 ।

3. जहां उच्च न्यायालयों में मतभिन्नता है वहां यह तथ्य कि जिन उच्च न्यायालयों के निर्णयों से उच्चतम न्यायालय में अपील की जानी है वे एकमत हैं या उच्च न्यायालय का कोई सीधा निर्णय नहीं है तो भी वह प्रश्न विधि का सारवान् प्रश्न रहेगा ।[58] जहां उच्च न्यायालयों के बीच मतभिन्नता नहीं है वहां केवल इस तथ्य के आधार पर कि स्थानीय उच्च न्यायालय ने उस विषय पर अब तो कोई निर्णय नहीं दिया है वह विधि का सारवान् प्रश्न नहीं हो जाएगा ।[59]

'साधारण महत्व का' — विद्यमान उपखंड (क) के अधीन प्रमाणपत्र तभी दिया जा सकता है जब विधि का प्रश्न (क) सारवान् भी हो और (ख) साधारण महत्व का भी ।[60] वह इस प्रकार का होना चाहिए कि वाद के पक्षकारों से भिन्न साधारण जनता भी उस प्रश्न के उच्चतम न्यायालय द्वारा अवधारित किए जाने में हितबद्ध हो । कोई प्रश्न साधारण महत्व का तभी होता है जब वह बड़ी संख्या में लोगों को प्रभावित करे,[61] या बड़ी मात्रा में लंबित कार्यवाहियों में वही प्रश्न अंतर्वलित हो ।[62]

संक्षेप में इस अनुच्छेद के संशोधन के बाद 'प्राइवेट महत्व' के कारण प्रमाणपत्र नहीं दिया जा सकता ।[63]

उपखंड (ख) : उच्चतम न्यायालय द्वारा विनिश्चय आवश्यक है — I. यह अभिव्यक्ति तीसवें संशोधन अधिनियम द्वारा अंतःस्थापित की गई है ।

II. इस खंड के अधीन साधारण महत्व के सारवान् महत्व के साधारण प्रश्न उपस्थित होने पर भी उच्च न्यायालय तभी प्रमाणपत्र देगा जब उसका यह समाधान हो जाता है कि इसका उच्चतम न्यायालय द्वारा प्राधिकारवान निर्णय किया जाना आवश्यक है ।[60] 'आवश्यक' शब्द से यह प्रकट होता है कि मामले के तथ्य और परिस्थितियों से आज्ञापक आवश्यकता दिखाई पड़नी चाहिए । उदाहरण के लिए, यह कहा जा सकता है कि इन मामलों में ऐसी आवश्यकता है —

(क) जहां किसी प्रश्न के बारे में दो मत हो सकते हैं और जिस न्यायालय से प्रमाण-पत्र की मांग की गई है उसने एक मत अपनाया है ।[60]

(ख) जहां किसी उच्च न्यायालय ने भिन्न मत अभिव्यक्त किया है ।[64]

(ग) जहां यह प्रश्न प्राथमिक सिद्धांतों के लागू होने के बारे में है और पहले के निर्णयों से कोई मार्गदर्शन नहीं प्राप्त होता है ।[65]

जहां उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय से कोई प्रश्न पूरी तरह उत्तरित हो जाता है[65] या अधिनियम का उपबंध साफ और स्पष्ट है वहां ऐसा प्रश्न उपस्थित नहीं होता ।[66]

58. *सुब्बाराव* बनाम *वीराजू*, ए 1951 मद्रास 969; *काजी एंड कंपनी* बनाम *जटाशंकर*, ए. 1956 पटना 526 ।

59. *नल्लार्थपी* बनाम *रघुनाथ*, ए. 1943 मद्रास 581 ।

60. *स्टेट बैंक* बनाम *मोनी*, ए. 1976 एस.सी. 1111 (पैरा 2) ।

61. तुलना कीजिए, *गुलाब* बनाम *मनफूल*, ए. 1953 राज. 42 (एफ.बी.); *लच्छमन* बनाम *बिहार सरकार*, ए. 1952 पटना 386 ।

62. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *सोमेन्द्र*, ए. 1975 कलकत्ता 335 (पैरा 5) ।

63. अतः, निम्नलिखित जैसे मामले मान्य विधि नहीं रहे, *मनोहर* बनाम *चारू*, ए. 1955 एस.सी. 228; *बच्चाराम* बनाम *विश्वनाथ*, ए. 1957 एस.सी. 34 ।

64. *भारत संघ* बनाम *हफीज़ मोहम्मद*, ए. 1975 दिल्ली 77 (एफ.बी.); *प्रीमियर टायर्स* बनाम *आर.टी.पी. कमीशन*, ए. 1975 दिल्ली 204 (पैरा 20) ।

65. *नई दिल्ली नगरपालिका* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1976 दिल्ली 1 (पैरा 11) ।

66. *सत्यनारायण* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1986 एस.सी. 1162 (पैरा 6) ।

134. (1) भारत के राज्यक्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय की दांडिक कार्यवाही में दिए गए किसी निर्णय, अंतिम आदेश या दंडादेश की अपील उच्चतम न्यायालय में होगी यदि —

दांडिक विषयों में उच्चतम न्यायालय की अपीली अधिकारिता ।

(क) उस उच्च न्यायालय ने अपील में किसी अभियुक्त व्यक्ति की दोषमुक्ति के आदेश को उलट दिया है और उसको मृत्यु दंडादेश दिया है; या

(ख) उस उच्च न्यायालय ने अपने प्राधिकार के अधीनस्थ किसी न्यायालय से किसी मामले को विचारण के लिए अपने पास मंगा लिया है और ऐसे विचारण में अभियुक्त व्यक्ति को सिद्धदोष ठहराया है और उसको मृत्यु दंडादेश दिया है; या

(ग) वह उच्च न्यायालय [67][*अनुच्छेद 134क के अधीन प्रमाणित कर देता है*] **कि मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किए जाने योग्य है :**

परंतु उपखंड (ग) के अधीन अपील ऐसे उपबंधों के अधीन रहते हुए होगी जो अनुच्छेद 145 के खंड (1) के अधीन इस निमित्त बनाए जाएं और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए होगी जो उच्च न्यायालय नियत या अपेक्षित करे ।

(2) संसद् विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को भारत के राज्यक्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय की दांडिक कार्यवाही में दिए गए किसी निर्णय, अंतिम आदेश या दंडादेश की अपील ऐसी शर्तों और परिसीमाओं के अधीन रहते हुए, जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट की जाएं, ग्रहण करने और सुनने की अतिरिक्त शक्ति दे सकेगी ।

खंड (1) : दांडिक कार्यवाही — दांडिक कार्यवाही में वे सभी कार्यवाहियां सम्मिलित होती हैं जो देश की सामान्य दांडिक विधि के अधीन संस्थित की जा सकती हैं॰ । दांडिक विधि और सैन्य विधि में अंतर किया जाता है ।[68] किंतु ये कार्यवाहियां दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन कार्यवाहियों तक ही सीमित नहीं है ।[69] यह ऐसी कार्यवाही है जिसके परिणामस्वरूप आरोपित व्यक्ति दोषसिद्ध ठहराया जा सकता है और उसे मृत्यु दंड, कारावास, जुर्माने, संपत्ति का समपहरण जैसा दंड दिया जा सकता है ।[70] इसमें दंड प्रक्रिया संहिता की वे कार्यवाहियां भी आती हैं जो शांति भंग रोकने के लिए की जाती हैं ।

खंड (1)(क) : दोषमुक्त' — इसका यह अर्थ नहीं होता कि विचारण में पूर्ण दोष-मुक्ति हुई हो । यह उपखंड वहां भी लागू होता है जहां विचारण न्यायालय ने अभियुक्त को उस पर आरोपित अपराध से दोषमुक्त कर दिया हो (जैसे, भारतीय दंड संहिता की धारा 302) । किंतु उसे किसी अन्य छोटे अपराध के लिए (जैसे भारतीय दंड संहिता की धारा 304) के लिए दोषसिद्ध ठहराया हो और उच्च न्यायालय ने अपील में दोषमुक्ति को उलट कर अभियुक्त को बड़े अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराया हो ।[71]

खंड (1)(ख) : यह खंड ऐसे मामले में अपील का उपबंध करता है जहां उच्च न्यायालय ने अपने अधीनस्थ किसी न्यायालय से किसी मामले को अपने पास मंगाकर अभियुक्त व्यक्ति को सिद्धदोष ठहराया है और उसे मृत्यु दंडादेश दिया है ।

अनुच्छेद 134 के खंड (1) के उपखंड (क) और (ख) में जिन मामलों के बारे में उपबंध किया गया है उनके अतिरिक्त उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए दोषसिद्धि के आदेश के विरुद्ध

67. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा प्रतिस्थापित
68. *मीहस बनाम के.ई.*, (1944) 49 सी.डब्ल्यू.एन. (एफ.आर.) 23 ।
69. *एस.के. गुप्ता बनाम सेन*, ए. 1959 कलकत्ता 106 (*109*) ।
70. *नारायण बनाम ईश्वर*, ए. 1965 एस.सी. 1818 (*1821*) ।
71. *ताराचंद बनाम महाराष्ट्र राज्य*, ए। 1962 एस.सी. 130 (*132*) ।

साधिकार कोई अपील नहीं होगी ।[72] अन्य मामलों में अपील तभी होती है जब उपखंड (ग) के अधीन प्रमाणपत्र दे दिया जाता है ।

अनुच्छेद 133(1)(क) के अधीन विवेकाधिकार के प्रयोग के लिए यह शर्त है कि मामले में साधारण महत्व का प्रश्न अंतर्वलित होना चाहिए । अनुच्छेद 134(1)(ग) के अधीन दांडिक मामले में यह परीक्षण लागू नहीं होता है । किंतु अनुच्छेद 134(1)(क) के अधीन प्रमाणपत्र तभी दिया जाएगा जब कोई मूलगामी भूल हो और अंतर्वलित प्रश्न केवल तथ्य का प्रश्न न हो ।[73]

खंड (1)(ग) : अनुच्छेद 134(1)(ग) के अधीन शक्ति के प्रयोग की शर्तें — अनुच्छेद 134(1)(ग) के अधीन प्रमाणपत्र के अनुदान के लिए विवेकशक्ति का प्रयोग करने के लिए आवश्यक शर्तें क्या होंगी, यह ठीक-ठीक बताना संभव नहीं है । किंतु इस शक्ति का प्रयोग कभी-कभार किया जाना चाहिए । उच्चतम न्यायालय को दांडिक अपील के सामान्य न्यायालय की भूमिका नहीं दी जानी चाहिए ।[74] प्रमाणपत्र में यह स्पष्ट रूप से बताया जाना चाहिए कि विवेकाधिकार का प्रयोग किया गया है । आदेश के कारण भी आदेश से प्रकट होने चाहिए ।[74-75]

दूसरे शब्दों में इजाजत देते समय उच्च न्यायालय को वह विधिक विवाद्यक या सिद्धांत अवधारित करना चाहिए[76] जो उसकी राय में उच्च न्यायालय द्वारा सुलझाया जाना चाहिए और आदेश में यह प्रश्न स्पष्ट रूप से बताया जाना चाहिए ।[77]

यदि उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित मामले में ऐसा कोई प्रश्न अंतर्वलित नहीं है तो उच्च न्यायालय यह प्रमाणित नहीं कर सकता कि वह मामला उच्चतम न्यायालय में अपील किए जाने योग्य है ।[73] यदि किसी मामले में विधि या सिद्धांत का ऐसा कोई प्रश्न अंतर्वलित नहीं है तो तथ्य का चाहे जितना कठिन प्रश्न होने पर भी प्रमाणपत्र का दिया जाना उचित नहीं होगा । यदि उच्च न्यायालय को तथ्य के बारे में कोई संदेह है तो संदेह का लाभ अभियुक्त को मिलेगा ।[73] अपील में साक्ष्य के अधिमूल्यन के प्रश्न से अधिक कोई बात होनी चाहिए तभी प्रमाणपत्र दिया जाएगा ।[73]

उच्चतम न्यायालय में अपील के लिए प्रमाणपत्र ।

[77क]134क. *प्रत्येक उच्च न्यायालय, जो अनुच्छेद 132 के खंड (1) या अनुच्छेद 133 के खंड (1) या अनुच्छेद 134 के खंड (1) में निर्दिष्ट निर्णय, डिक्री, अंतिम आदेश या दंडादेश पारित करता है या देता है, इस प्रकार पारित किए जाने या दिए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, इस प्रश्न का अवधारण कि उस मामले के संबंध में, यथास्थिति, अनुच्छेद 132 के खंड (1) या अनुच्छेद 133 के खंड (1) या अनुच्छेद 134 के खंड (1) के उपखंड (ग) में निर्दिष्ट प्रकृति का प्रमाणपत्र दिया जाए या नहीं, —*

(क) यदि वह ऐसा करना ठीक समझता है तो स्वप्रेरणा से कर सकेगा; और

(ख) यदि ऐसा निर्णय, डिक्री, अंतिम आदेश या दंडादेश पारित किए जाने या दिए जाने के ठीक पश्चात् व्यथित पक्षकार द्वारा या उसकी ओर से मौखिक आवेदन किया जाता है तो करेगा ।

---

72. *महबूब बनाम महाराष्ट्र राज्य,* (1965) एस.सी (दांडिक अपील 120/64, तारीख 19-3-1965) ।
73. *बाबू बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* ए 1965 एस.सी 1467 ।
74. *नरसिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* (1955) एस.सी.आर. 238 ।
75. *बालादीन बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* ए 1956 एस.सी. 181; *सिद्धेश्वर बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य,* ए. 1958 एस.सी. 143 (*145*) ।
76. *असम राज्य बनाम अब्दुल,* ए. 1970 एस.सी. 1365 ।
77. *ठाकरा बनाम महाराष्ट्र राज्य,* (1969) एस.सी. (सिविल अपील 187/66, तारीख 25-4-1969) ।

77क. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा अंतःस्थापित ।

विद्यमान विधि के अधीन फेडरल न्यायालय की अधिकारिता और शक्तियों का उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रयोक्तव्य होना ।

135. **जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक उच्चतम न्यायालय को भी किसी ऐसे विषय के संबंध में, जिसको अनुच्छेद 133 या अनुच्छेद 134 के उपबंध लागू नहीं होते हैं, अधिकारिता और शक्तियां होंगी यदि उस विषय के संबंध में इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले किसी विद्यमान विधि के अधीन अधिकारिता और शक्तियां फेडरल न्यायालय द्वारा प्रयोक्तव्य थीं ।**

अपील के लिए उच्चतम न्यायालय की विशेष इजाजत ।

136. (1) **इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, उच्चतम न्यायालय अपने विवेकानुसार भारत के राज्यक्षेत्र में किसी न्यायालय या अधिकरण द्वारा किसी वाद या मामले में पारित किए गए या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री, अवधारण, दंडादेश या आदेश की अपील के लिए विशेष इजाजत दे सकेगा ।**

(2) **खंड (1) की कोई बात सशस्त्र बलों से संबंधित किसी विधि द्वारा या उसके अधीन गठित किसी न्यायालय या अधिकरण द्वारा पारित किए गए या दिए गए किसी निर्णय, अवधारण, दंडादेश या आदेश को लागू नहीं होगी ।**

अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत देने से संबंधित साधारण सिद्धांत — अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय में निहित विवेक शक्ति की कोई मर्यादा नहीं है । किंतु न्यायालय ने स्वयं ही अपनी शक्ति पर कुछ मर्यादाएं लगाई हैं ।[78] जैसे यह अधिकथित किया गया है कि इस शक्ति का प्रयोग कभी-कभार किया जाना चाहिए और वह भी आपवादिक मामलों में ।[79] इस अनुच्छेद के आधार पर उच्चतम न्यायालय किसी भी वाद या मामले में विशेष इजाजत दे सकता है । वाद या मामला सिविल, दांडिक या अन्य कोई हो सकता है और भारत के किसी भी न्यायालय या अधिकरण से उत्पन्न हो सकता है । अनेक प्रकार के मामलों में एक समान मानक यही हो सकता है कि इस शक्ति का प्रयोग तभी किया जाएगा जब विशेष परिस्थितियों की विद्यमान्यता दिखाई जाए ।[78]

सामान्यतया उच्चतम न्यायालय कनिष्ठ न्यायालय के आदेश से अनुच्छेद 136 के अधीन अपील ग्रहण करने से इंकार कर देगा जहां वादकारी ने उन उपलब्ध सामान्य उपचारों का लाभ नहीं उठाया है, जैसे अपील या पुनरीक्षण का कानूनी अधिकार, या उसने कनिष्ठ न्यायालय के विनिश्चय से अपील में अपीलीय अधिकरण में अंतिम आदेश के विरुद्ध कोई अपील नहीं की है ।[80] विशेष इजाजत आपवादिक मामलों में ही दी जाती है जैसे जहां किसी आदेश द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत को भंग किया गया है,[81] या उच्चतम न्यायालय को अपील ऐसी बात के लिए की गई है जो सामान्य विधि के अधीन अपील में तय नहीं की जा सकती थी,[82] या जहां कानूनी अपील करना व्यर्थ होगा,[83] या जहां मुकदमेबाजी असम्यक् रूप से लंबी खिंच जाएगी ।[83क]

इस आरक्षित शक्ति की कोई सर्वकालिक सर्वमान्य परिभाषा नहीं हो सकती । किंतु विनिश्चित मामलों से यह प्रकट होता है कि हस्तक्षेप तभी किया जाता है जब विधिक प्रक्रिया

78. *रामसरन* बनाम *वाणिज्यिक कर अधिकारी*, ए. 1962 एस.सी. 1325 (*1328*) ।

79. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *दावानिया*, ए. 1971 एससी 1722 (*1725*); *भारत संघ* बनाम *आप्टे*, ए. 1971 एस.सी. 1533 (*1537*) ।

80. *बी.आई.एस.एन. कंपनी* बनाम *जसजीत*, (1965) 1 एस.सी.ए. 425 (*428*) ।

81. *महादयाल* बनाम *वाणिज्यिक कर अधिकारी*, ए. 1958 एस.सी. 667 ।

82. तुलना कीजिए, *कन्हैया लाल* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1962 एस.सी. 1323 (*1325*) ।

83. *ओंकार लाल* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1986 एस.सी. 2146 (पैरा 3) ।

83क. *बली पेर* बनाम *फर्नांडीज़*, (1989) 4 एस.सी.सी. 671 (पैरा 6-7) ।

की अवहेलना की गई हो या नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन हुआ हो,[84] अथवा[85] घोर अन्याय किया गया हो[84] या अभिलेख से प्रकट होने वाली स्पष्ट भूल दिखाई पड़ती हो ।[86]

यह स्पष्ट है कि यदि उच्चतम न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि किसी व्यक्ति के साथ मनमाना व्यवहार किया गया है या न्यायालय या अधिकरण ने वादकारी के साथ ऋजु व्यवहार नहीं किया है तो इस शक्ति के प्रयोग में कोई तकनीकी बाधा खड़ी नहीं हो सकती, जैसे यह नहीं कहा जा सकता कि तथ्यों के बारे में निष्कर्ष अंतिम है ।[87]

(क) इधर साधारण शक्ति के प्रयोग में उच्चतम न्यायालय ऐसी अधिकारिता ग्रहण नहीं करेगा जो संविधान के उपबंधों पर आधारित नहीं है । न्यायालय ऐसा अनुतोष भी नहीं देगा जिसका संविधान ने लोप कर दिया है क्योंकि ऐसे करने का परिणाम विधान बनाना होगा जो वास्तव में न्यायालय का कार्य नहीं है ।[88]

(ख) विशेष इजाजत देने के प्रक्रम पर वही सिद्धांत लागू होता है जो अपील के अंतिम रूप से निपटाने पर लागू किया जाता है ।[89] दूसरे शब्दों में न्यायालय उन आधारों पर विशेष इजाजत नहीं देगा जिन पर अपील कायम नहीं रखी जा सकती ।[90]

(ग) जहां अपील केवल शास्त्रीय महत्व की रह गई है वहां विशेष इजाजत नहीं दी जाएगी । उदाहरण के लिए, जहां पश्चात्‌वर्ती घटनाओं के कारण मांगा गया अनुतोष निरर्थक हो गया है ।[91] किंतु अनुतोष के निरर्थक हो जाने पर भी जिस आदेश या निर्णय के विरुद्ध अपील की गई है उसमें कुछ बातें ऐसी हैं जो अपीलार्थी को सारवान् रूप से प्रभावित करती हैं तो इजाजत दी जा सकती है ।[91]

(घ) यदि कनिष्ठ न्यायालय या अधिकरण के आदेश द्वारा सारवान् रूप से न्याय किया गया है तो उच्चतम न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा ।[92,93]

तथ्य संबंधी निष्कर्षों में हस्तक्षेप — उच्चतम न्यायालय सामान्यतया उच्च न्यायालय द्वारा शपथ साक्ष्य के लागू किए जाने में हस्तक्षेप नहीं करेगा । किंतु आपवादिक मामलों में उच्च न्यायालय के निष्कर्षों की परीक्षा कर सकता है । जैसे, जहां वह न्यायिककल्प अधिकरण का पद धारण करने वाले व्यक्ति की प्रास्थिति को पूर्वाग्रह के आधार पर प्रभावित करता है[94] या जहां निष्कर्ष अनुचित है,[95] या अधिकरण ने अपनी बुद्धि लगाए बिना कोई निष्कर्ष निकाला है ।[96]

अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता से अधिक विस्तारवान है । उच्चतम न्यायालय तथ्य

84. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *आई.बी.एस.पी. राव*, ए. 1970 एस.सी. 648 (*651*); *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *चंपालाल*, ए. 1981 एस.सी. 1675 ।
85. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *चन्द्रय्या*, ए. 1986 एस.सी. 1899 (पैरा 10) ।
86 *मोहन* बनाम *भारत इलैक्ट्रानिक्स*, ए. 1981 एस.सी. 1253 ।
87. *ढाकेश्वरी मिल्स* बनाम *आय-कर आयुक्त*, (1955) 1 एस.सी.आर. 941 (*949*) ।
88. *जनार्दन रेड्डी* बनाम *राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 940 ।
89. *बलदोता ब्रदर्स* बनाम *लिबरा माइनिंग वर्क्स*, ए. 1961 एस.सी. 100 (*103*) ।
90. *प्रीतम सिंह* बनाम *राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 453 ।
91. *मुख्य आयुक्त* बनाम *राधेश्याम*, ए. 1957 एस.सी. 304 (*306*) ।
92. *मार्गरेट* बनाम *इंडो-कमर्शियल बैंक*, ए. 1979 एस.सी. 102 (पैरा 14) ।
93. *हिन्दुस्तान टिन वर्क्स* बनाम *कर्मचारी*, ए. 1979 एस.सी. 75 (पैरा 6) ।
94. *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम* बनाम *सत्यनारायण ट्रांसपोर्ट्स*, ए. 1965 एस.सी. 1303 (*1307*) ।
95. *रघुनाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 912 (पैरा 18); *धनवंती* बनाम *गुप्ता*, ए. 1986 एस.सी. 1184 (पैरा 5) ।
96. *जय भगवान* बनाम *ए.सी. को-आपरेटिव बैंक*, ए. 1984 एस.सी. 286 (पैरा 2) ।

के प्रश्नों पर भी विचार कर सकता है जब कि उच्च न्यायालय उत्प्रेषण की कार्यवाही में ऐसा नहीं कर सकता ।[97]

उच्च न्यायालय आपवादिक मामलों में साक्ष्य की परीक्षा करेगा जैसे अपना यह समाधान करने के लिए कि अन्याय नहीं हुआ है ।[98] जहां किसी दांडिक मामले में अभियुक्त का दोष संदेह से परे साबित नहीं हुआ है[99] या प्रकट रूप से अन्याय हुआ है[100] वहां न्यायालय तथ्य के समवर्ती निष्कर्ष को भी अपास्त कर सकता है ।

[देखिए, दुर्गादास बसु का *शार्टर कांस्टीटयूशन आफ इंडिया*, 9वां संस्करण, पृष्ठ 308] ।

निर्णयों या आदेशों का उच्चतम न्यायालय द्वारा पुनर्विलोकन ।

137. संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के या अनुच्छेद 145 के अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय को अपने द्वारा सुनाए गए निर्णय या दिए गए आदेश का पुनर्विलोकन करने की शक्ति होगी ।

पुनर्विलोकन के आधार — 1. उच्चतम न्यायालय अभिलेख से प्रकट होने वाली भूल के आधार पर अपने निर्णय का पुनर्विलोकन कर सकता है,[1] जैसे न्यायालय का ध्यान किसी विशिष्ट कानूनी उपबंध की ओर नहीं दिलाया गया,[2] या किसी अप्रायिक मामले में जिससे ऐसा न करने से अन्याय हो जाएगा ।[3] किंतु अन्यथा नहीं ।[4]

2. अपील की विशेष इजाजत देने वाले आदेश के प्रविषय का विस्तार करने के लिए भी इस शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है ।[5]

उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता की वृद्धि ।

138. (1) उच्चतम न्यायालय को संघ सूची के विषयों में से किसी के संबंध में ऐसी अतिरिक्त अधिकारिता और शक्तियां होंगी जो संसद् विधि द्वारा प्रदान करे ।

(2) यदि संसद् विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय द्वारा ऐसी अधिकारिता और शक्तियों के प्रयोग का उपबंध करती है तो उच्चतम न्यायालय को किसी विषय के संबंध में ऐसी अतिरिक्त अधिकारिता और शक्तियां होंगी जो भारत सरकार और किसी राज्य की सरकार विशेष करार द्वारा प्रदान करे ।

कुछ रिट निकालने की शक्तियों का उच्चतम न्यायालय को प्रदत्त किया जाना ।

139. संसद् विधि द्वारा उच्चतम न्यायालय को अनुच्छेद 32 के खंड (2) में वर्णित प्रयोजनों से भिन्न किन्हीं प्रयोजनों के लिए ऐसे निदेश, आदेश या रिट, जिनके अंतर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार-पृच्छा और उत्प्रेषण रिट हैं, या उनमें से कोई निकालने की शक्ति प्रदान कर सकेगी ।

97. *शर्मा* बनाम *भारतीय स्टेट बैंक*, (1968) 3 एस.सी.आर. 91 (*94*) ।

98. *रघुबीर* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 2156 (*2159*); *मंसूर* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1977 (*1980*); *बांके* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 2233 (*2236*) ।

99. *पन्नालाल* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 1191 (पैरा 11) ।

100. *रफीक* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 559 (पैरा 3) ।

1. *बलवंतराय* बनाम *नागरशना*, (1961) 1 एस.सी.आर. 113 ।
2. *गिरधारी* बनाम *मेहता*, ए. 1971 एस.सी. 2162 ।
3. *मोहिन्दराव* बनाम *जिला न्यायाधीश*, ए. 1971 एस.सी. 107 ।
4. *चन्द्रकांता* बनाम *हबीब*, ए. 1975 एस.सी. 1500 ।
5. *बलाई* बनाम *शिवधारी*, ए. 1978 एस.सी. 1062 (पैरा 14) ।

[6]**139क.** [7][*(1)* *यदि ऐसे मामले, जिनमें विधि के समान या सारतः समान प्रश्न अंतर्वलित हैं, उच्चतम न्यायालय के और एक या अधिक उच्च न्यायालयों के अथवा दो या अधिक उच्च न्यायालयों के समक्ष लंबित हैं और उच्चतम न्यायालय का स्वप्रेरणा से अथवा भारत के महान्यायवादी द्वारा या ऐसे किसी मामले के किसी पक्षकार द्वारा किए गए आवेदन पर यह समाधान हो जाता है कि ऐसे प्रश्न व्यापक महत्व के सारवान् प्रश्न हैं तो, उच्चतम न्यायालय उस उच्च न्यायालय या उन उच्च न्यायालयों के समक्ष लंबित मामले या मामलों को अपने पास मंगा सकेगा और उन सभी मामलों को स्वयं निपटा सकेगा :*

कुछ मामलों का अंतरण ।

परंतु उच्चतम न्यायालय इस प्रकार मंगाए गए मामले को उक्त विधि के प्रश्नों का अवधारण करने के पश्चात् ऐसे प्रश्नों पर अपने निर्णय की प्रतिलिपि सहित उस उच्च न्यायालय को, जिससे मामला मंगा लिया गया है, लौटा सकेगा और वह उच्च न्यायालय उसके प्राप्त होने पर उस मामले को ऐसे निर्णय के अनुरूप निपटाने के लिए आगे कार्यवाही करेगा ।]

(2) यदि उच्चतम न्यायालय न्याय के उद्देश्य की पूर्ति के लिए ऐसा करना समीचीन समझता है तो वह किसी उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित किसी मामले, अपील या अन्य कार्यवाही का अंतरण किसी अन्य उच्च न्यायालय को कर सकेगा ।

संशोधन का प्रभाव — इस अनुच्छेद का खंड (1) संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम 1976 द्वारा अंतःस्थापित किया गया और 44वें संशोधन अधिनियम 1978 द्वारा संशोधित किया गया । इसमें वही सिद्धांत घोषित किया गया है जो अनुच्छेद 228 में है (अधीनस्थ न्यायालय से उच्च न्यायालय को मामलों के अंतरण के संबंध में) । इसमें यह उपबंध है कि जहां पर विधि के व्यापक महत्व के समान या सारतः समान प्रश्न अंतर्वलित हैं और अंतर्वलित करने वाला वाद उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय या दो या अधिक उच्च न्यायालयों के समक्ष लंबित है तो उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति होगी कि वह स्वप्रेरणा से या महान्यायवादी या ऐसे वाद के किसी पक्षकार द्वारा अभ्यावेदन किए जाने पर उच्च न्यायालय से उस वाद को अपने पास मंगा ले और ऐसे प्रश्न का अवधारण करे या मामले को निपटाए । इस खंड का उद्देश्य यह है कि विभिन्न उच्च न्यायालयों के बीच या उच्च न्यायालय के किसी पूर्ववर्ती निर्णय और उच्चतम न्यायालय के पश्चात्वर्ती निर्णय के बीच एक ही प्रश्न पर मतभेद न हो । ऐसे सभी लंबित वादों में समान प्रश्न का अवधारण केवल उच्चतम न्यायालय ही करेगा ।

खंड (1) में एक परंतुक अंतःस्थापित करके 44वें संशोधन अधिनियम ने उच्चतम न्यायालय को यह विकल्प दिया है कि वह या तो ऐसे मामलों को पूरी तरह निपटा दे या केवल उन्हीं प्रश्नों का अवधारण करे जो मंगाए गए सभी वादों में समान हैं और बाकी वादों को निपटाने के लिए उन्हें उच्च न्यायालयों को वापस भेज दे ।

खंड (ख) में उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति दी गई है कि वह ऐसे मामलों को जो खंड (1) के अधीन नहीं आते हैं, एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को अंतरित कर दे । दंड प्रक्रिया संहिता 1973 के अधीन दांडिक मामलों में यह शक्ति धारा 406 द्वारा पहले ही प्रदत्त की जा चुकी है । इस खंड में जो शक्ति दी गई है उस पर धारा 406 में लगाई गई मर्यादाएं लागू नहीं होतीं । इसके अतिरिक्त यह खंड सिविल मामलों को भी लागू होता है । इसके समान कोई उपबंध सिविल प्रक्रिया संहिता में नहीं है ।

6. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अनुच्छेद 139क अंतःस्थापित किया गया ।
7. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा खंड (1) प्रतिस्थापित किया गया ।

उच्चतम न्यायालय की आनुषंगिक शक्तियां ।

140. संसद्, विधि द्वारा, उच्चतम न्यायालय को ऐसी अनुपूरक शक्तियां प्रदान करने के लिए उपबंध कर सकेगी जो इस संविधान के उपबंधों में से किसी से असंगत न हों और जो उस न्यायालय को इस संविधान द्वारा या इसके अधीन प्रदत्त अधिकारिता का अधिक प्रभावी रूप से प्रयोग करने के योग्य बनाने के लिए आवश्यक या वांछनीय प्रतीत हों ।

उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि का सभी न्यायालयों पर आबद्धकर होना ।

141. उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर सभी न्यायालयों पर आबद्धकर होगी ।

उच्चतम न्यायालयों के विनिश्चयों का आबद्धकर होना — भारत के सभी न्यायालय उच्चतम न्यायालय के विनिश्चयों का अनुसरण करने के लिए बाध्य हैं, चाहे वे हाउस आफ लार्ड्स या प्रिवी कौंसिल के निर्णयों के प्रतिकूल क्यों न हों ।[8]

किंतु उच्चतम न्यायालय अपने विनिश्चयों से आबद्ध नहीं है । यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि कोई भूल हुई है या उस विनिश्चय का साधारण जनता के हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा तो वह अपने पूर्व विनिश्चय से विचलन करने के लिए मुक्त है ।[9-10] किंतु पूर्ववर्ती विनिश्चय का पुनर्विलोकन करते समय न्यायालय इस तथ्य पर विचार करेगा कि उक्त विनिश्चय का बड़ी संख्या में मामलों में अनुसरण किया गया होगा । पाच न्यायाधीशों की न्यायपीठ ने यदि सर्वसम्मति से कोई निर्णय दिया है तो न्यायालय उससे हटने में बहुत सोच-विचार करेगा ।[10] •

'घोषित विधि' — 1. उच्चतम न्यायालय के अपने ही विनिश्चयों में संघर्ष होने पर जो ताजा निर्णय है वही कनिष्ठ न्यायालयों पर आबद्धकर होगा ।

2. उच्चतम न्यायालय के विनिश्चय सभी राज्यों और उनके अधिकारियों पर[11] और सभी व्यक्तियों पर आबद्धकर हैं, चाहे वे उसके पक्षकार हों या नहीं ।[12] इसी प्रकार वे सभी लंबित कार्यवाहियों को भी लागू होते हैं ।[13]

3. एक समय था जब यह मान्यता थी कि उच्चतम न्यायालय की इतरोक्ति भी पूर्वदृष्टांत हैं और कनिष्ठ न्यायालयों पर आबद्धकर हैं । किंतु उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ ने[13क] यह अधिकथित किया है कि उच्चतम न्यायालय के निम्नलिखित प्रवर्ग के विनिश्चय आबद्धकर नहीं हैं —

(क) *इतरोक्ति* अर्थात् वे कथन जो *निर्णय आधार* के भागरूप नहीं हैं ।

(ख) न्यायिक भूल से दिया गया निर्णय अर्थात् ऐसा निर्णय जो किसी कानून के या कानून का बल रखने वाले नियम के उपबंधों का ज्ञान न होने के कारण दिया गया है ।

(ग) चर्चारहित विनिश्चय अर्थात् ऐसा निर्णय जो सुसंगत प्रश्न पर बिना बहस सुने या विचार-विमर्श के दिया गया है ।

(घ) ऐसा आदेश जो पक्षकारों की सहमति से दिया गया है जिसमें यह स्पष्ट उल्लेख है कि उसे पूर्वदृष्टांत *नहीं* माना जाएगा ।[13क]

---

8. *द्वारकादास* बनाम *शोलापुर स्पिनिंग कंपनी*, ए. 1954 एस.सी. 119 ।

9. *सज्जन सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 845 (*855*) ।

10. *केशव मिल्स* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1965 एस.सी. 1630 (*1644, 1647*); *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *कलकत्ता निगम*, ए. 1967 एस.सी. 997 (*1001*) ।

11. *माखन लाल* बनाम *जम्मू राज्य*, ए 1971 एस.सी 2206 ।

12. *स्टार कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए 1987 एस.सी. 179 ।

13. *गौरय्या* बनाम *ठाकुर*, ए. 1986 एस.सी. 1440 (पैरा 12) ।

13क. *म्युनिसिपल कारपोरेशन* बनाम *गुरुआम* (1989) 1 एस.सी.सी. 101 (पैरा 10-11) ।

4. किंतु जब किसी वाद बिंदु पर उच्चतम न्यायालय में तर्क प्रस्तुत किया जाता है और न्यायालय उस पर विनिश्चय करता है तो वही बिंदु (जैसे किसी अधिनियम की सांविधानिकता) नए आधार या तर्कों का अवलंब लेकर पश्चात्‌वर्ती कार्यवाहियों में फिर से नहीं उठाया जा सकता ।[13ख]

5. जब किसी प्रश्न का विनिश्चय किसी अधिक संख्या वाली न्यायापीठ में हुआ है तो बाद में उससे छोटी न्यायपीठ में किए गए संप्रेक्षण का इस प्रकार अर्थ लगाया जाना चाहिए जिससे वह बड़ी न्यायपीठ के निर्णय के अनुसार हो, उससे भिन्न नहीं हो ।[13ग]

उच्चतम न्यायालय की डिक्रियों और आदेशों का प्रवर्तन और प्रकटीकरण आदि के बारे में आदेश ।

142. (1) **उच्चतम न्यायालय अपनी अधिकारिता का प्रयोग करते हुए ऐसी डिक्री पारित कर सकेगा या ऐसा आदेश कर सकेगा जो उसके समक्ष लंबित किसी वाद या विषय में पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक हो और इस प्रकार पारित डिक्री या किया गया आदेश भारत के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र ऐसी रीति से, जो संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन विहित की जाए, और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक, ऐसी रीति से जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा विहित करे, प्रवर्तनीय होगा ।**

(2) **संसद् द्वारा इस निमित्त बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय को भारत के संपूर्ण राज्यक्षेत्र के बारे में किसी व्यक्ति को हाजिर कराने के, किन्हीं दस्तावेजों के प्रकटीकरण या पेश कराने के अथवा अपने किसी अवमान का अन्वेषण करने या दंड देने के प्रयोजन के लिए कोई आदेश करने की समस्त और प्रत्येक शक्ति होगी ।**

समझौता कराने की शक्ति — उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति है कि वह लंबित दांडिक कार्यवाहियों की समाप्ति कर दे और पक्षकारों के बीच समझौता करा दे ।[13घ]

उच्चतम न्यायालय से परामर्श करने की राष्ट्रपति की शक्ति ।

143. (1) **यदि किसी समय राष्ट्रपति को प्रतीत होता है कि विधि या तथ्य का कोई ऐसा प्रश्न उत्पन्न हुआ है या उत्पन्न होने की संभावना है, जो ऐसी प्रकृति का और ऐसे व्यापक महत्व का है कि उस पर उच्चतम न्यायालय की राय प्राप्त करना समीचीन है, तो वह उस प्रश्न को विचार करने के लिए उस न्यायालय को निर्देशित कर सकेगा और वह न्यायालय, ऐसी सुनवाई के पश्चात् जो वह ठीक समझता है, राष्ट्रपति को उस पर अपनी राय प्रतिवेदित कर सकेगा ।**

(2) **राष्ट्रपति अनुच्छेद 131** [14]*** **के परंतुक में किसी बात के होते हुए भी, इस प्रकार के विवाद को, जो** [14][*उक्त परंतुक*] **में वर्णित है, राय देने के लिए उच्चतम न्यायालय को निर्देशित कर सकेगा और उच्चतम न्यायालय, ऐसी सुनवाई के पश्चात् जो वह ठीक समझता है, राष्ट्रपति को उस पर अपनी राय प्रतिवेदित करेगा ।**

अनुच्छेद 143 : उच्चतम न्यायालय का परामर्शदायी कृत्य — 1. यह अनुच्छेद राष्ट्रपति को यह शक्ति प्रदान करता है कि वह व्यापक महत्त्व के किसी भी प्रश्न पर उच्चतम न्यायालय से परामर्श प्राप्त कर सकता है । प्रश्न विधि का हो सकता है या तथ्य का ।[15] ऐसे प्रश्न राष्ट्रपति के कर्त्तव्य और कृत्यों से संबधित होने आवश्यक नहीं हैं ।[16] प्रश्न ऐसा हो सकता है जो उत्पन्न हो गया हो या होने वाला हो ।[15]

13ख. *केशोराम* बनाम *भारत संघ*, (1989) 1 एस.सी.सी 151 (पैरा 10); *अनिल* बनाम *भारत संघ*, (1988) 2 एस.सी.सी. 587 ।

13ग. *मीरा* बनाम *तमिलनाडु*, (1989) 4 एस.सी.सी. 418 (पैरा 13, 21) ।

13घ. यूनियन कार्बाइड बनाम भारत संघ, (1991) 4 एस.सी.सी. 584 ।

14. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "के खंड (i)" शब्दों का लोप किया गया ।

15. विशेष न्यायालय विधेयक का मामला, ए. 1979 एस.सी. 478 (पैरा 20) ।

2. प्रश्न व्यापक महत्व का है या नहीं इसके बारे में राष्ट्रपति की राय को प्रश्नगत नहीं किया जा सकता ।[16]

3. अभी तक राष्ट्रपति ने निम्नलिखित विषयों से संबंधित प्रश्नों को इस अनुच्छेद के अधीन निर्दिष्ट किया है –

(क) किसी विद्यमान विधि की सांविधानिकता ।

(ख) राष्ट्रपति की अनुमति के लिए प्रस्तुत विधेयक की सांविधानिकता ।[18]

(ग) अंतरराष्ट्रीय करार का अनुपालन ।[19]

(घ) संसद् में प्रस्तावित[20] किए जाने वाले या लंबित विधेयक की सांविधानिकता ।

(ङ) विधान मंडल और वरिष्ठ न्यायालय की अधिकारिता और विधान मंडल के अवमान के लिए दंड देने की शक्ति ।[16]

निर्देश होने पर न्यायालय की शक्ति – 1. उपखंड (1) में प्रयुक्त शब्द 'कर सकेगा' से यह साफ हो जाता है कि न्यायालय उत्तर देने के लिए बाध्य नहीं है । खंड (1) के अधीन न्यायालय को विवेकाधिकार है और उचित मामले में वह प्रस्तुत प्रश्न पर राय देने से इंकार कर सकता है, जैसे, निर्दिष्ट प्रश्न राजनीतिक है[18] या उत्तर देना उचित नहीं है या संभव नहीं है । किसी विधेयक से संबंधित प्रश्न को केवल इसीलिए प्रकल्पना नहीं माना जा सकता कि संशोधन द्वारा उसमें मौलिक रूप से परिवर्तन किए जा सकते हैं ।[15]

2. खंड (2) में 'करेगा' का प्रयोग है । यह आज्ञापक है, फिर भी यदि प्रश्न ऐसा है कि उत्तर नहीं दिया जा सकता तो न्यायालय उत्तर देने से इंकार कर सकता है ।[15]

3. राष्ट्रपति इस बात का निश्चय करेगा कि कौन सा प्रश्न निर्दिष्ट किया जाना है । इसमें लंबित बिल भी हो सकता है ।[18] उच्चतम न्यायालय उसे निर्दिष्ट प्रश्न की परिधि के बाहर जाकर उन प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकता जिनके बारे में संदेह उत्पन्न हो गया हो ।

4. जहां निर्दिष्ट प्रश्न किसी विधेयक की सांविधानिकता के बारे में है वहां निर्देश में यह विनिर्दिष्ट किया जाना चाहिए कि वे कौन से आधार हैं जिन पर उस विधेयक या उसके किसी उपबंधों पर संविधान के अधीन आक्षेप किया जा सकता है ।[15] किंतु न्यायालय को निर्देश को इस आधार पर नामंजूर नहीं कर देना चाहिए कि वह अस्पष्ट है क्योंकि पक्षकारों के लिखित कथन और उनके अधिवक्ता की बहस से प्रश्न स्पष्ट हो सकता है ।

5. संसद् के समक्ष विचाराधीन किसी विधेयक की सांविधानिकता का प्रश्न राजनीतिक नहीं है क्योंकि विधि की सांविधानिकता घोषित करने की शक्ति अनन्य रूप से न्यायालय को है । अनुच्छेद 143(1) उच्चतम न्यायालय को सलाहकार के रूप में यह शक्ति देता है । इसका प्रयोग विधेयक के विधि बनाने के पहले भी किया जा सकता है । संसद् स्वयं भी विधेयक की सांविधानिकता के प्रश्न पर विचार कर सकती है । किंतु जहां उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 143(1) के अधीन राय दी है वहां संसद् से यह अपेक्षा की जाती है कि वह उच्चतम न्यायालय की राय को ध्यान में रखे ।

अनुच्छेद 143 के अधीन राय का आबद्धकर होना – इस अनुच्छेद के अधीन सलाह के रूप में दी गई राय निर्णय नहीं है[16] और तदनुसार उसके आधार पर उस प्रकार अधिकारों का सृजन नहीं होता जिस प्रकार उच्चतम न्यायालय के निर्णयों से सामान्यतया होता है ।

16 अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश ए 1965 एससी 755 ।
17 दिल्ली विधि अधिनियम, 1912 का मामला, (1951) एससीआर 747 ।
18 केरल शिक्षा विधेयक का मामला, ए 1958 एससी 956 ।
19 इम्प्लीमेंटशन आफ इंडो-पाकिस्तान एग्रीमेंट का मामला, ए 1960 एससी 845 ।
20 सागर सीमाशुल्क अधिनियम का मामला, 1878, ए 1963 एससी 975 ।

निर्देश की कार्यवाही में उच्चतम न्यायालय के समक्ष कोई पक्षकार नहीं होते । ऐसी कार्यवाही में न्यायालय द्वारा दी गई राय किसी पक्षकार पर आबद्धकर नहीं है ।[21]

अनुच्छेद 143 के अधीन दी गई राय, प्रथमदृष्ट्या, अनुच्छेद 141 के अधीन नहीं आती । किंतु उच्चतम न्यायालय ने दिल्ली विधि अधिनियम[22] में जो राय दी थी उसका विभिन्न उच्च न्यायालयों ने खुलकर अनुसरण किया है ।

सिविल और न्यायिक प्राधिकारियों द्वारा उच्चतम न्यायालय की सहायता में कार्य किया जाना ।

144. भारत के राज्यक्षेत्र के सभी सिविल और न्यायिक प्राधिकारी उच्चतम न्यायालय की सहायता में कार्य करेंगे ।

विधियों की सांविधानिक वैधता से संबंधित प्रश्नों के निपटारे के बारे में विशेष उपबंध ।

[22]144क. संविधान (तैतालीसवा संशोधन) अधिनियम, 1977 की धारा 5 द्वारा (13-4-1978 से) निरसित ।

न्यायालय के नियम आदि ।

145. (1) संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय समय-समय पर, राष्ट्रपति के अनुमोदन से न्यायालय की पद्धति और प्रक्रिया के, साधारणतया, विनियमन के लिए नियम बना सकेगा जिसके अंतर्गत निम्नलिखित भी हैं, अर्थात् :—

(क) उस न्यायालय में विधि-व्यवसाय करने वाले व्यक्तियों के बारे में नियम;

(ख) अपीलें सुनने के लिए प्रक्रिया के बारे में, और अपीलों संबंधी अन्य विषयों के बारे में, जिनके अंतर्गत वह समय भी है जिसके भीतर अपीलें उस न्यायालय में ग्रहण की जानी हैं, नियम;

(ग) भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी का प्रवर्तन कराने के लिए उस न्यायालय में कार्यवाहियों के बारे में नियम;

[23](गग) [23क][*अनुच्छेद 139क*] *के अधीन उस न्यायालय में कार्यवाहियों के बारे में नियम;*

(घ) अनुच्छेद 134 के खंड (1) के उपखंड (ग) के अधीन अपीलों को ग्रहण किए जाने के बारे में नियम;

(ङ) उस न्यायालय द्वारा सुनाए गए किसी निर्णय या किए गए आदेश का जिन शर्तों के अधीन रहते हुए पुनर्विलोकन किया जा सकेगा उनके बारे में और ऐसे पुनर्विलोकन के लिए प्रक्रिया के बारे में, जिसके अंतर्गत वह समय भी है जिसके भीतर ऐसे पुनर्विलोकन के लिए आवेदन उस न्यायालय में ग्रहण किए जाने हैं, नियम;

(च) उस न्यायालय में किन्हीं कार्यवाहियों के और उनके आनुषंगिक खर्चे के बारे में, तथा उसमें कार्यवाहियों के संबंध में प्रभारित की जाने वाली फीसों के बारे में नियम;

(छ) जमानत मंजूर करने के बारे में नियम;

(ज) कार्यवाहियों को रोकने के बारे में नियम;

(झ) जिस अपील के बारे में उस न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि वह तुच्छ या तंग करने वाली है अथवा विलंब करने के प्रयोजन से की गई है, उसके संक्षिप्त अवधारण के लिए उपबंध करने वाले नियम;

(ञ) अनुच्छेद 317 के खंड (1) में निर्दिष्ट जांचों के लिए प्रक्रिया के बारे में नियम ।

21. एलोकेशन आफ लैंड्स एंड बिलडिंग्स का मामला, ए. 1943 एफ.सी. 13 ।
22. *कांस्टीट्यूशनल ला ऑफ इंडिया* के प्रथम संस्करण का पृष्ठ 195 देखिए ।
23. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित ।
23क. संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा प्रतिस्थापित ।

(2) [23ख][[24]* *खंड (3) के उपबंधों*] के अधीन रहते हुए, इस अनुच्छेद के अधीन बनाए गए नियम, उन न्यायाधीशों की न्यूनतम संख्या नियत कर सकेंगे जो किसी प्रयोजन के लिए बैठेंगे तथा एकल न्यायाधीशों और खंड न्यायालयों की शक्ति के लिए उपबंध कर सकेंगे ।**

(3) जिस मामले में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है उसका विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए या इस संविधान के अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश की सुनवाई करने के प्रयोजन के लिए बैठने वाले न्यायाधीशों की [23ख][[24]* *न्यूनतम संख्या*] पांच होगी :**

परंतु जहां अनुच्छेद 132 से भिन्न इस अध्याय के उपबंधों के अधीन अपील की सुनवाई करने वाला न्यायालय पांच से कम न्यायाधीशों से मिलकर बना है और अपील की सुनवाई के दौरान उस न्यायालय का समाधान हो जाता है कि अपील में संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का ऐसा सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है जिसका अवधारण अपील के निपटारे के लिए आवश्यक है वहां वह न्यायालय ऐसे प्रश्न को उस न्यायालय को, जो ऐसे प्रश्न को अंतर्वलित करने वाले किसी मामले के विनिश्चय के लिए इस खंड की अपेक्षानुसार गठित किया जाता है, उसकी राय के लिए निर्देशित करेगा और ऐसी राय की प्राप्ति पर उस अपील को उस राय के अनुरूप निपटाएगा ।

(4) उच्चतम न्यायालय प्रत्येक निर्णय खुले न्यायालय में ही सुनाएगा, अन्यथा नहीं और अनुच्छेद 143 के अधीन प्रत्येक प्रतिवेदन खुले न्यायालय में सुनाई गई राय के अनुसार ही दिया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(5) उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रत्येक निर्णय और ऐसी प्रत्येक राय, मामले की सुनवाई में उपस्थित न्यायाधीशों की बहुसंख्या की सहमति से ही दी जाएगी, अन्यथा नहीं, किंतु इस खंड की कोई बात किसी ऐसे न्यायाधीश को, जो सहमत नहीं है, अपना विसम्मत निर्णय या राय देने से निवारित नहीं करेगी ।

खंड (1) : नियम बनाने की शक्ति — अपनी प्रक्रिया को नियमित करने के लिए नियम बनाने की शक्ति अनुच्छेद 142 के अधीन उच्चतम न्यायालय की शक्ति की सहायता में है । अनुच्छेद 142 की शक्ति ऐसा आदेश देने की है जो न्यायालय के समक्ष लंबित किसी वाद या विषय में पूर्ण न्याय करने के लिए आवश्यक है । अतएव न्यायालय दंडादेश के निलंबन के लिए या अपील लंबित रहने तक न्यायालय को अभ्यर्पण करने के लिए और इस निमित्त राज्यपाल के निलंबन करने की शक्ति का अध्यारोहण करने के लिए नियम बना सकता है ।[25] उच्चतम न्यायालय की नियम बनाने की दो परिसीमाएं हैं :

(i) यह संसद् द्वारा बनाई गई विधि के अधीन होगा, जैसे परिसीमा संबंधी अधिनियम ।[26]

(ii) यह अधीनस्थ विधान है, इसलिए यह नियम संविधान के उपबंधों का अधिग्रहण नहीं कर सकता ।[27]

146. (1) **उच्चतम न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्तियां भारत का मुख्य न्यायमूर्ति करेगा या उस न्यायालय का ऐसा अन्य न्यायाधीश या अधिकारी करेगा जिसे वह निर्दिष्ट करे :**

उच्चतम न्यायालय के अधिकारी और सेवक तथा व्यय ।

परंतु राष्ट्रपति नियम द्वारा यह अपेक्षा कर सकेगा कि ऐसी किन्हीं दशाओं में, जो नियम में विनिर्दिष्ट की जाएं, किसी ऐसे व्यक्ति को, जो पहले से ही न्यायालय

23ख संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम 1976 द्वारा प्रतिस्थापित ।

24. संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा "अनुच्छेद 144क के उपबंधों के अधीन रहते हुए" शब्दों का लोप किया गया ।

25. *नानावती* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1961 एस.सी 112 (*124-25*) ।

26. *पार्थसारथी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 38 ।

27. *प्रेमचंद* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, ए. 1963 एस.सी. 996 (*1004*) ।

से संलग्न नहीं है, न्यायालय से संबंधित किसी पद पर संघ लोक सेवा आयोग से परामर्श करके ही नियुक्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(2) **संसद् द्वारा बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की सेवा की शर्तें ऐसी होंगी जो भारत के मुख्य न्यायमूर्ति या उस न्यायालय के ऐसे अन्य न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा, जिसे भारत के मुख्य न्यायमूर्ति ने इस प्रयोजन के लिए नियम बनाने के लिए प्राधिकृत किया है, बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाएं :**

परंतु इस खंड के अधीन बनाए गए नियमों के लिए, जहां तक वे वेतनों, भत्तों, छुट्टी या पेंशनों से संबंधित हैं, राष्ट्रपति के अनुमोदन की अपेक्षा होगी ।

(3) **उच्चतम न्यायालय के प्रशासनिक व्यय, जिनके अंतर्गत उस न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों को या उनके संबंध में संदेय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होंगे और उस न्यायालय द्वारा ली गई फीसें और अन्य धनराशियां उस निधि का भाग होंगी ।**

निर्वचन ।

147. **इस अध्याय में और भाग 6 के अध्याय 5 में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि के किसी सारवान् प्रश्न के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उनके अंतर्गत भारत शासन अधिनियम, 1935 के (जिसके अंतर्गत उस अधिनियम की संशोधक या अनुपूरक कोई अधिनियमिति है) अथवा किसी सपरिषद् आदेश या उसके अधीन बनाए गए किसी आदेश के अथवा भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 के या उसके अधीन बनाए गए किसी आदेश के निर्वचन के बारे में विधि के किसी सारवान् प्रश्न के प्रति निर्देश हैं ।**

अध्याय 5 — भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक

भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक ।

148. (1) **भारत का एक नियंत्रक-महालेखापरीक्षक होगा जिसको राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा नियुक्त करेगा और उसे उसके पद से केवल उसी रीति से और उन्हीं आधारों पर हटाया जाएगा जिस रीति से और जिन आधारों पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाया जाता है ।**

(2) **प्रत्येक व्यक्ति, जो भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक नियुक्त किया जाता है अपना पद ग्रहण करने से पहले, राष्ट्रपति या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त व्यक्ति के समक्ष, तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार, शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा ।**

(3) **नियंत्रक-महालेखापरीक्षक का वेतन और सेवा की अन्य शर्तें ऐसी होंगी जो संसद्, विधि द्वारा, अवधारित करे और जब तक वे इस प्रकार अवधारित नहीं की जाती हैं तब तक ऐसी होंगी जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं :**

परंतु नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के वेतन में और अनुपस्थिति छुट्टी, पेंशन या निवृत्ति की आयु के संबंध में उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

(4) **नियंत्रक-महालेखापरीक्षक, अपने पद पर न रह जाने के पश्चात् भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी और पद का पात्र नहीं होगा ।**

(5) **इस संविधान के और संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, भारतीय लेखापरीक्षा और लेखा विभाग में सेवा करने वाले व्यक्तियों की सेवा की शर्तें और नियंत्रक-महालेखापरीक्षक की प्रशासनिक शक्तियां ऐसी होंगी जो नियंत्रक-महालेखापरीक्षक से परामर्श करने के पश्चात् राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाएं ।**

(6) नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के कार्यालय के प्रशासनिक व्यय, जिनके अंतर्गत उस कार्यालय में सेवा करने वाले व्यक्तियों को या उनके संबंध में संदेय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होंगे ।

नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के कर्तव्य और शक्तियां ।

149. **नियंत्रक-महालेखापरीक्षक संघ के और राज्यों के तथा किसी अन्य प्राधिकारी या निकाय के लेखाओं के संबंध में ऐसे कर्तव्यों का पालन और ऐसी शक्तियों का प्रयोग करेगा जिन्हें संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन विहित किया जाए और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक, संघ के और राज्यों के लेखाओं के संबंध में ऐसे कर्तव्यों का पालन और ऐसी शक्तियों का प्रयोग करेगा जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले क्रमशः भारत डोमिनियन के और प्रांतों के लेखाओं के संबंध में भारत के महालेखापरीक्षक को प्रदत्त थीं या उसके द्वारा प्रयोक्तव्य थीं ।**

संघ के और राज्यों के लेखाओं का प्ररूप ।

[28]150. *संघ के और राज्यों के लेखाओं को ऐसे प्ररूप में रखा जाएगा जो राष्ट्रपति, भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक [29][की सलाह पर] विहित करे ।*

संपरीक्षा प्रतिवेदन ।

151. (1) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के संघ के लेखाओं संबंधी प्रतिवेदनों को राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा, जो उनको संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा ।

(2) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के किसी राज्य के लेखाओं संबंधी प्रतिवेदनों को उस राज्य के राज्यपाल [30]*** के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा, जो उनको राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखवाएगा ।

28 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित ।

29 संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा "की सलाह पर" शब्द प्रतिस्थापित किए गए ।

30 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

भाग 6

1*** राज्य

अध्याय 1 — साधारण

परिभाषा । **152. इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, "राज्य" पद** [2][*के अन्तर्गत जम्मू-कश्मीर राज्य नहीं है*] ।

अध्याय 2 — कार्यपालिका

राज्यपाल

राज्यों के राज्यपाल । **153. प्रत्येक राज्य के लिए एक राज्यपाल होगा :**

[3]*परंतु इस अनुच्छेद की कोई बात एक ही व्यक्ति को दो या अधिक राज्यों के लिए राज्यपाल नियुक्त किए जाने से निवारित नहीं करेगी ।*

राज्य की कार्यपालिका शक्ति । **154. (1) राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होगी और वह इसका प्रयोग इस संविधान के अनुसार स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों के द्वारा करेगा ।**

(2) इस अनुच्छेद की कोई बात —

(क) किसी विद्यमान विधि द्वारा किसी अन्य प्राधिकारी को प्रदान किए गए कृत्य राज्यपाल को अंतरित करने वाली नहीं समझी जाएगी; या

(ख) राज्यपाल के अधीनस्थ किसी प्राधिकारी को विधि द्वारा कृत्य प्रदान करने से संसद् या राज्य के विधान मंडल को निवारित नहीं करेगी ।

खंड (1) : कार्यपालिका शक्ति — 1. यह अभिव्यक्ति बहुत व्यापक है । इसमें वे सब शासकीय कृत्य आ जाते हैं जो विधायी और न्यायिक कृत्यों को निकालने पर शेष बचते हैं ।[4] इसमें राज्य का सामान्य प्रशासन चलाने और उसका अधीक्षण करने के लिए आवश्यक सभी कार्य आते हैं ।[4] इसमें कार्यवाही का विनिश्चय करना और उसे कार्यरूप में परिणत करना, दोनों ही सम्मिलित हैं ।[5]

राज्य की कार्यपालिका की शक्ति, राज्य विधान मंडल की विधायी शक्तियों के समान विस्तारवान है । किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि कार्यपालिका किसी विषय की बाबत तभी काम कर सकती है जब उस विषय पर पहले से कोई विधि विद्यमान हो । या यह कि कार्यपालिका की शक्ति विधियों के कार्यान्वयन तक ही सीमित है ।[4] जहां सरकार कोई

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क में के" शब्दों का लोप किया गया ।
2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "का अर्थ प्रथम अनुसूची के भाग क में उल्लिखित राज्य है" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
3. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा परंतुक अंतःस्थापित किया गया ।
4. *राम जवाया बनाम पंजाब राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 225 (*236*) ।
5. *बिहार राज्य बनाम सोनावती*, ए. 1961 एस.सी. 221 (*230*) ।

महाविद्यालय चलाती है तो उसकी कार्यपालिका शक्ति का विस्तार ऐसे महाविद्यालय में प्रवेश के नियम बनाने तक ही है ।[6] ये नियम सांविधानिक[7] या विधिक[8] उपबंधों के अधीन होंगे । कार्यपालिका संविधान के या किसी विधि के उपबंधों के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकती ।[4]

अपने अधीनस्थ अधिकारी — देखिए पीछे अनुच्छेद 53(1) ।

राज्यपाल के अधीनस्थ अधिकारियों में मंत्री भी है और तदनुसार वह भारतीय दंड संहिता की धारा 21 के अर्थान्तर्गत लोकसेवक है ।[9]

'कार्यपालिका शक्ति' में किसी कानून द्वारा राज्य सरकार में निहित न्यायिककल्प शक्तियां भी सम्मिलित हैं । राज्य सरकार द्वारा राज्यपाल के अधीनस्थ अधिकारी को ऐसी शक्तियों का प्रत्यायोजन असांविधानिक नहीं होगा ।[10]

इस संविधान के अनुसार — राज्यपाल की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग संविधान के किसी उपबंध का अध्यारोहण करने के लिए नहीं किया जा सकता, जैसे अनुच्छेद 311(2) की उपेक्षा करके अपने प्रसाद से किसी सिविल सेवक को पदच्युत करना ।[11]

खंड (2)(ख) : कार्यपालिका कृत्यों से संबंधित विधि — जब विधान मंडल किसी अधीनस्थ प्राधिकारी को कार्यपालिका शक्ति प्रदान करता है तो राज्यपाल उन कृत्यों का प्रयोग नहीं कर सकता या ऐसी विधि के उपबंधों से असंगत रीति में कार्य नहीं कर सकता । ऐसा वह तभी कर सकेगा जब कि वह अनन्य रूप से अनुच्छेद 154(1) से ही शक्ति प्राप्त करे ।[11]

इस उपखंड के अधीन बनाई गई विधि अनुच्छेद 245(1) के अधीन विधि है और इस प्रकार संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन है । ऐसी विधि किसी अन्य प्राधिकारी को ऐसा कृत्य प्रदान नहीं कर सकती जो किसी अन्य विनिर्दिष्ट उपबंध द्वारा अभिव्यक्त रूप से राज्यपाल में निहित किया गया है, जैसे अनुच्छेद 310(1) के अधीन अपने प्रसाद से सरकारी कर्मचारी को पदच्युत करने का अधिकार ।[11] जहां किसी अधिनियम द्वारा किसी अन्य अधिकारी या प्राधिकारी को कार्यपालिका शक्ति दी जाती है वहां ऐसे अधिकारी या प्राधिकारी की शक्ति का एकमात्र स्रोत वह अधिनियम है । वहां शक्ति का प्रयोग उस अधिनियम में दी गई शर्तों और मर्यादाओं का कठोरता से पालन करते हुए किया जाना चाहिए ।[11]

राज्यपाल की नियुक्ति ।

155. **राज्य के राज्यपाल को राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा नियुक्त करेगा ।**

156. (1) **राज्यपाल, राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त पद धारण करेगा ।**

राज्यपाल की पदावधि ।

(2) **राज्यपाल, राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा ।**

(3) **इस अनुच्छेद के पूर्वगामी उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्यपाल अपने पदग्रहण की तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा :**

परंतु राज्यपाल, अपने पद की अवधि समाप्त हो जाने पर भी, तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी अपना पद ग्रहण नहीं कर लेता है ।

---

6. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *नरेन्द्र*, ए. 1971 एस.सी. 2569 (*2564, 2566*); *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1823; *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *नृपेन्द्र*, ए. 1971 एस.सी. 2560 ।

7. *चित्रा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 35 ।

8. *राजेन्द्रन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1968) 2 एस.सी.आर. 786 (*795*) ।

9. *करुणानिधि* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एस.सी. 898 (पैरा 49, 53, 56) सी.बी. ।

10. तुलना कीजिए, *नागेश्वर राव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम*, ए. 1959 एस.सी. 308 ।

11. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *बाबू राम*, (1961) 2 एस.सी.आर. 679 ।

खंड (1) : राष्ट्रपति का प्रसाद — 1. खंड (3) में विनिर्दिष्ट पांच वर्षों की अवधि, खंड (1) के अधीन राष्ट्रपति के प्रसाद के अधीन है । यदि राज्यपाल को उसकी पदावधि की समाप्ति के पहले राष्ट्रपति द्वारा पदच्युत कर दिया जाता है तो उसका कोई विधिक उपचार नहीं है ।[12] राष्ट्रपति का आदेश निश्चायक है और न्यायनिर्णय नहीं है ।

2. राज्यपाल की नियुक्ति को समाप्त करने के लिए राष्ट्रपति का प्रसाद किस प्रकार अभिव्यक्त किया जाएगा यह विहित नहीं है, अर्थात् कोई प्ररूप नहीं है । प्रायः यह इस रूप में किया जाता है :

. . . . तुरंत प्रभाव से . . . . राज्य के राज्यपाल का पद धारण नहीं करेंगे ।[12]

3. राज्यपाल को हटाने के विषय में राष्ट्रपति के प्रसाद पर ऐसी सांविधानिक मर्यादाएं नहीं हैं जैसी अनुच्छेद 311 या 124(4) में हैं । इसमें नैसर्गिक न्याय के नियम लागू नहीं होते ।[12] पदच्युत करने के पहले सूचना देना भी आवश्यक नहीं है ।[12] आदेश में कारण देना भी जरूरी नहीं है ।[12]

4. राज्यपाल का पद राष्ट्रपति के प्रसाद से धारण किया जाता है इसलिए राज्यपाल एक राज्य से दूसरे राज्य को अंतरित किया जा सकता है ।[12]

परंतुक : राज्यपाल की नियुक्ति में अनुच्छेद 62(1) या 68(1) जैसा कोई उपबंध नहीं है । अनुच्छेद 153 में यह उपबंध है कि राज्यपाल सदैव रहना चाहिए । अपेक्षा तो यही होती है कि समय रहते नया राज्यपाल नियुक्त किया जाएगा किंतु ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं जिसमें किसी राज्यपाल की पांच वर्ष की पदावधि समाप्त हो जाने पर भी उसके उत्तराधिकारी की नियुक्ति नहीं हो पाई हो । राज्यपाल की पदावधि समाप्त होने के पहले ही दूसरे की नियुक्ति करना कभी-कभी संभव नहीं होता । अनुच्छेद 160 का उपयोग किया जा सकता है किंतु इससे बीच का अंतराल तो बना ही रहेगा । इस अंतराल से बचने के लिए ही अनुच्छेद 156(3) में परंतुक रखा गया है । उत्तरवर्ती राज्यपाल अनुच्छेद 155 के अधीन नियुक्त किया जा सकता है या अनुच्छेद 160 के अधीन आदेश निकाला जा सकता है । जैसी भी स्थिति हो पूर्ववर्ती राज्यपाल तब तक पद धारण करता रहेगा जब तक नया राज्यपाल पद ग्रहण नहीं कर लेता ।[13]

किंतु ऐसे मामले हो सकते हैं जिसमें राज्यपाल नियुक्त न करने का निष्कर्ष यह निकले कि संविधान के अधीन कार्य करने में सरकार असफल रही है ।[13]

राज्यपाल नियुक्त होने के लिए अर्हताएं ।

157. **कोई व्यक्ति राज्यपाल नियुक्त होने का पात्र तभी होगा जब वह भारत का नागरिक है और पैंतीस वर्ष की आयु पूरी कर चुका है ।**

राज्यपाल के पद के लिए शर्तें ।

158. (1) **राज्यपाल संसद् के किसी सदन का या पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का सदस्य नहीं होगा और यदि संसद् के किसी सदन का या ऐसे किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का कोई सदस्य राज्यपाल नियुक्त हो जाता है तो यह समझा जाएगा कि उसने उस सदन में अपना स्थान राज्यपाल के रूप में अपने पद ग्रहण की तारीख से रिक्त कर दिया है ।**

(2) राज्यपाल अन्य कोई लाभ का पद धारण नहीं करेगा ।

(3) राज्यपाल, बिना किराया दिए, अपने शासकीय निवासों के उपयोग का हकदार होगा और

---

12. *सूर्या* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 राज. 1 (पैरा 26, 32, 33) [श्री रघुकुल तिलक पांच वर्ष की अवधि के अवसान से पूर्व तारीख 8-8-1981 के राष्ट्रपति आदेश द्वारा पदच्युत किए गए । इन्हें जनता सरकार द्वारा नियुक्त किया गया था और श्रीमती गांधी की सरकार द्वारा पदच्युत किया गया] ।

13. *कृष्ण बल्लभ* बनाम *जांच आयोग*, ए. 1969 एस.सी. 258 (*261*) ।

ऐसी उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का भी, जो संसद्, विधि द्वारा, अवधारित करे और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसी उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का, जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, हकदार होगा ।

[14]*(3क) जहां एक ही व्यक्ति को दो या अधिक राज्यों का राज्यपाल नियुक्त किया जाता है वहां उस राज्यपाल को संदेय उपलब्धियां और भत्ते उन राज्यों के बीच ऐसे अनुपात में आबंटित किए जाएंगे जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा अवधारित करे ।*

(4) राज्यपाल की उपलब्धियां और भत्ते उसकी पदावधि के दौरान कम नहीं किए जाएंगे ।

राज्यपाल द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान ।

159. **प्रत्येक राज्यपाल और प्रत्येक व्यक्ति जो राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन कर रहा है, अपना पद ग्रहण करने से पहले उस राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति या उसकी अनुपस्थिति में उस न्यायालय के उपलब्ध ज्येष्ठतम न्यायाधीश के समक्ष निम्नलिखित प्ररूप में शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा, अर्थात् —**

"मैं, अमुक, ईश्वर की शपथ लेता हूं, / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं **कि मैं श्रद्धापूर्वक (राज्य का नाम) के राज्यपाल के पद का कार्यपालन (अथवा राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन) करूंगा तथा अपनी पूरी योग्यता से संविधान और विधि का परिरक्षण, संरक्षण और प्रतिरक्षण करूंगा और मैं . . . . (राज्य का नाम) की जनता की सेवा और कल्याण में निरत रहूंगा" ।**

कुछ आकस्मिकताओं में राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन ।

160 **राष्ट्रपति ऐसी किसी आकस्मिकता में, जो इस अध्याय में उपबंधित नहीं है, राज्य के राज्यपाल के कृत्यों के निर्वहन के लिए ऐसा उपबंध कर सकेगा जो वह ठीक समझता है ।**

क्षमा आदि की और कुछ मामलों में दंडादेश के निलंबन परिहार या लघुकरण की राज्यपाल की शक्ति ।

161. **किसी राज्य के राज्यपाल को उस विषय संबंधी, जिस विषय पर उस राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है, किसी विधि के विरुद्ध किसी अपराध के लिए सिद्धदोष ठहराए गए किसी व्यक्ति के दंड को क्षमा, उसका प्रविलंबन, विराम या परिहार करने की अथवा दंडादेश के निलंबन, परिहार या लघुकरण की शक्ति होगी ।**

राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार ।

162. **इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार उन विषयों पर होगा जिनके संबंध में उस राज्य के विधान मंडल को विधि बनाने की शक्ति है :**

परंतु जिस विषय के संबंध में राज्य के विधान मंडल और संसद् को विधि बनाने की शक्ति है उसमें राज्य की कार्यपालिका शक्ति इस संविधान द्वारा, या संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा, संघ या उसके प्राधिकारियों को अभिव्यक्त रूप से प्रदत्त कार्यपालिका शक्ति के अधीन है ।

'कार्यपालिका शक्ति का विस्तार . . . . होगा' — इसका अर्थ यह हुआ कि राज्य की कार्यपालिका को ऐसा विनियम बनाने या आदेश देने की शक्ति है जो प्रभाव में 'विधि' हो । बस विषय ऐसा होना चाहिए जिसकी बाबत राज्य विधान मंडल सातवीं अनुसूची के अधीन सक्षम है ।[15] दूसरी शर्त यह है कि उसी विषय पर राज्य विधान मंडल द्वारा बनाए गए विद्यमान विधान का उल्लंघन नहीं होना चाहिए ।[16]

14 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा खंड (3क) जोड़ा गया ।

15 *एसएसएवी संघ* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1981 एससी 2030 (पैरा 9) ।

16 *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *लाबू*, ए 1971 एससी 2560, *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *जैन*, ए 1981 एससी 2045 (पैरा 22-23) ।

163. (1) जिन बातों में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने कृत्यों या उनमें से किसी को अपने विवेकानुसार करे उन बातों को छोड़कर राज्यपाल को अपने कृत्यों का प्रयोग करने में सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी जिसका प्रधान, मुख्य मंत्री होगा ।

राज्यपाल को सहायता और सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद् ।

(2) यदि कोई प्रश्न उठता है कि कोई विषय ऐसा है या नहीं जिसके संबंध में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने विवेकानुसार कार्य करे तो राज्यपाल का अपने विवेकानुसार किया गया विनिश्चिय अंतिम होगा और राज्यपाल द्वारा की गई किसी बात की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि उसे अपने विवेकानुसार कार्य करना चाहिए था या नहीं ।

(3) इस प्रश्न की किसी न्यायालय में जांच नहीं की जाएगी कि क्या मंत्रियों ने राज्यपाल को कोई सलाह दी, और यदि दी तो क्या दी ।

अनुच्छेद 163 : **मंत्रिपरिषद् और राज्यपाल** — 1 अनुच्छेद 74(1) और अनुच्छेद 163(1) के बीच अंतर यह है कि अनुच्छेद 163(1) में इस बात का उल्लेख है कि संविधान के अधीन कुछ कृत्य राज्यपाल अपने विवेकानुसार करेगा । 1976 में यथासंशोधित अनुच्छेद 74 में यह अभिव्यक्त रूप से अधिकथित है कि राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह पर ही कार्य करेगा । राज्यपाल द्वारा संविधान के अधीन अपने विवेकानुसार किए जाने के लिए अपेक्षित कृत्यों के दृष्टांत हैं,—असम के राज्यपाल की छठी अनुसूची के पैरा 9 के अधीन शक्तियां, अनुच्छेद 239(2) के अधीन किसी संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासन नियुक्त किए गए राज्यपाल के कृत्य, अनुच्छेद 371(2), 371क(1)(ख), 371ग(1), 371च(छ) । यदि किसी अनुच्छेद में अभिव्यक्त रूप से उपबंध नही है तो यह विवक्षा नहीं की जा सकती कि राज्यपाल अपने विवेकानुसार कार्य करने के लिए बाध्य है । अनुच्छेद 163 यह स्पष्ट कर देता है कि उन मामलों को छोडकर जहा राज्यपाल से यह अपेक्षा है कि वह स्वविवेकानुसार कार्य करेगा वह मंत्रिमंडल की सलाह पर ही कार्य करेगा ।[17] लोक सेवा आयोग के विरुद्ध अपीलें भी इसमें सम्मिलित हैं ।[17क] अनुच्छेद 356(1) के अधीन राज्यपाल का प्रतिवेदन मंत्रिपरिषद् की सलाह पर नहीं दिया जा सकता विशेषकर तब जब प्रतिवेदन के कारण मंत्रिमंडल का पतन होने वाला हो ।

2 विधान मंडल के विघटन या मंत्रिपरिषद् के त्यागपत्र के बाद भी राज्यपाल को सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद् का विद्यमान होना अनिवार्य है इसलिए वर्तमान मंत्रिपरिषद् तब तक बनी रह सकती है जब तक कि उसकी उत्तरवर्ती पदभार ग्रहण न कर ले ।[18]

खंड (3) — इस उपबंध का विधिक परिणाम यह है कि मंत्रिपरिषद् की बैठकों में हुए संकल्प या विमर्श अथवा ऐसे विमर्श के बाद राज्यपाल को अंतिम रूप से दी गई सलाह को न्यायालय में पेश नहीं कराया जा सकता चाहे साक्ष्य अधिनियम में कुछ भी उपबंध हो ।[19]

किंतु यदि सरकार स्वयं मंत्रिमंडल की कार्यवाही या नीति निर्णय पेश करती है तो न्यायालय उसका अवलोकन कर सकता है । इस पर कोई बंधन नहीं है ।[20]

---

17 *कपूर* बनाम *पंजाब राज्य*, (1955) 1 एस सी आर 577 (*587*); *संजीवी* बनाम *मद्रास राज्य*, (1970) II एस सी. 672 (*677*) ।

17क *उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग* बनाम *सुरेश*, ए 1987 एस सी 1953 (पैरा 8-9) ।

18 *राव* बनाम *इन्दिरा*, ए 1971 एस सी 1002 ।

19 *पंजाब राज्य* बनाम *सोढ़ी सुखदेव*, ए 1961 एस सी 493 (*512, 532*) ।

20. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *नंदलाल*, ए 1987 एस सी 251 (पैरा 29); *चौधरी* बनाम *बिहार सरकार*, ए 1980 एस.सी. 383 (पैरा 4) ।

मंत्रियों के बारे में अन्य उपबंध ।

164. (1) मुख्य मंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करेगा और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राज्यपाल, मुख्य मंत्री की सलाह पर करेगा तथा मंत्री, राज्यपाल के प्रसादपर्यन्त अपने पद धारण करेंगे :

परंतु बिहार, मध्य प्रदेश और उड़ीसा राज्यों में जनजातियों के कल्याण का भारसाधक एक मंत्री होगा जो साथ ही अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के कल्याण का या किसी अन्य कार्य का भी भारसाधक हो सकेगा ।

(2) मंत्रिपरिषद् राज्य की विधान सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी ।

(3) किसी मंत्री द्वारा अपना पद ग्रहण करने से पहले, राज्यपाल तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्रारूपों के अनुसार उसको पद की और गोपनीयता की शपथ दिलाएगा ।

(4) कोई मंत्री, जो निरंतर छह मास की किसी अवधि तक राज्य के विधान मंडल का सदस्य नहीं है, उस अवधि की समाप्ति पर मंत्री नहीं रहेगा ।

(5) मंत्रियों के वेतन और भत्ते ऐसे होंगे जो उस राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, समय-समय पर अवधारित करे और जब तक उस राज्य का विधान मंडल इस प्रकार अवधारित नहीं करता है तब तक ऐसे होंगे जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं ।

राज्य का महाधिवक्ता

राज्य का महाधिवक्ता ।

165. (1) प्रत्येक राज्य का राज्यपाल, उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए अर्हित किसी व्यक्ति को राज्य का महाधिवक्ता नियुक्त करेगा ।

(2) महाधिवक्ता का यह कर्तव्य होगा कि वह उस राज्य की सरकार को विधि संबंधी ऐसे विषयों पर सलाह दे और विधिक स्वरूप के ऐसे अन्य कर्तव्यों का पालन करे जो राज्यपाल उसको समय-समय पर निर्देशित करे या सौंपे और उन कृत्यों का निर्वहन करे जो उसको इस संविधान अथवा तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि द्वारा या उसके अधीन प्रदान किए गए हों ।

(3) महाधिवक्ता, राज्यपाल के प्रसादपर्यन्त पद धारण करेगा और ऐसा पारिश्रमिक प्राप्त करेगा जो राज्यपाल अवधारित करे ।

सरकारी कार्य का संचालन

राज्य की सरकार के कार्य का संचालन ।

166. (1) किसी राज्य की सरकार की समस्त कार्यपालिका कार्यवाही राज्यपाल के नाम से की हुई कही जाएगी ।

(2) राज्यपाल के नाम से किए गए और निष्पादित आदेशों और अन्य लिखतों को ऐसी रीति से अधिप्रमाणित किया जाएगा जो राज्यपाल द्वारा बनाए जाने वाले नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए और इस प्रकार अधिप्रमाणित आदेश या लिखत की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि वह राज्यपाल द्वारा किया गया या निष्पादित आदेश या लिखत नहीं है ।

(3) राज्यपाल, राज्य की सरकार का कार्य अधिक सुविधापूर्वक किए जाने के लिए और जहां तक वह कार्य ऐसा कार्य नहीं है जिसके विषय में इस संविधान द्वारा या इसके अधीन राज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने विवेकानुसार कार्य करे वहां तक मंत्रियों में उक्त कार्य के आबंटन के लिए नियम बनाएगा ।

[21]* * *

21. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा खंड (4) अंतःस्थापित [पूर्व अनुच्छेद 77(4) के अधीन देखिए] और संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा इसका लोप किया गया ।

खंड (1) : कार्यपालिका कृत्य अभिव्यक्त करने की प्ररूपिताएं — इस खंड में यह अपेक्षा है कि राज्य सरकार की सभी कार्यपालिका कार्यवाही राज्यपाल के नाम से अभिव्यक्त की जाएंगी। संविधान में यह अपेक्षा नहीं है कि अनुच्छेद 166(1) के अनुपालन के लिए कोई विशेष शब्द रचना का प्रयोग हो। यह उपबंध निदेशात्मक है[22] इसलिए न्यायालय को यह देखना है कि इसकी अपेक्षाओं का पर्याप्त रूप से पालन हो गया है या नहीं।[23]

खंड (1) में यह विहित नहीं किया गया है कि सरकार का कार्यपालिका कार्य किस प्रकार किया जाएगा। उसमें यही कहा गया है कि कार्य किस प्रकार अभिव्यक्त किया जाएगा। खंड (1) अभिव्यक्ति के ढंग के बारे में है। खंड (2) यह बताता है कि आदेश किस प्रकार अधिप्रमाणित किया जाएगा। खंड (1) निदेशात्मक है आदेशात्मक नहीं।[22] अनुच्छेद 166(1) का अनुपालन न करने से आदेश शून्य नहीं होगा। बस उसे साबित करना आवश्यक होगा। संविधान ने साबित करने से जो छूट दी है वह उसे नहीं मिलेगी। यदि राज्य यह साबित कर सकता है कि वह आदेश वस्तुतः राज्यपाल ने दिया था तो आदेश मान्य होगा।[22]

वह कब सरकार का आदेश बन जाता है — 1. जैसे ही कोई आदेश इस अनुच्छेद के अधीन विधिमान्यतः बनाया जाता है और अभिव्यक्त किया जाता है वैसे ही सरकार उसके लिए उत्तरदायी हो जाती है चाहे आदेश व्यक्तिगत रूप से राज्यपाल से उद्भूत हुआ हो या नहीं। किंतु सरकार या जनता पर आबद्धकर होने के लिए एक और प्ररूपिता आवश्यक है। वह यह कि प्रभावित व्यक्ति को आदेश संसूचित किया जाना चाहिए। जब तक यह नहीं होता वह अनन्तिम बना रहेगा और मंत्रियों द्वारा बदला जा सकेगा। मंत्री उस पर पुनर्विचार कर सकते हैं।[22]

2. मंत्रिपरिषद् का कोई कार्य या आदेश तब तक राज्य सरकार का आदेश नहीं हो जाता जब तक कि राज्यपाल अनुच्छेद 166(1)-(2) द्वारा अधिरोपित शर्तों का पालन करते हुए आदेश न निकाले।[24]

कार्यपालिक कार्यवाही — खंड (1) उन मामलों तक ही सीमित है जहां कार्यपालिक कार्यवाही किसी प्ररूपिक आदेश या अधिसूचना या किसी अन्य लिखत के रूप में अभिव्यक्त की जानी है।[25] प्राय. कार्यपालिक विनिश्चय समुचित मंत्री या अधिकारी द्वारा कार्यालय की फाइलों पर टिप्पण या पृष्ठांकन के रूप में लिखकर लिए जाते हैं। यदि सभी विनिश्चयों की प्ररूपिक अभिव्यक्ति की जाए तो सरकार की मशीनरी चल ही नहीं पाएगी। किंतु जब कार्यपालिक विनिश्चय से कोई बाहरी व्यक्ति प्रभावित होता है या जहां यह अपेक्षा है कि विनिश्चय की शासकीय अधिसूचना या संसूचना होगी तो वह सामान्यतः अनुच्छेद 166(1) में उल्लिखित प्ररूप में अभिव्यक्त किया जाएगा।[26] फाइल पर लिखे गए टिप्पणों से न्यायालय का अवमान या मानहानि नहीं होती।[26क]

न्यायिक जांच का वारित होना — राज्यपाल के नाम से अभिव्यक्त और राज्यपाल द्वारा

22. *दत्तात्रेय* बनाम *मुंबई राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 612 (*615*); *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1823 (*1329*); *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *गुप्ता*, ए. 1970 एस.सी. 679 (*685*); *बारसे* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1762; *बछित्तर* बनाम *पंजाब राज्य*, (1962) सप. 3 एस.सी.आर. 713; *घियाऊ मल* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1959) एस.सी.आर. 1424 (*1439*)।

23. *मुंबई राज्य* बनाम *पुरुषोत्तम*, (1952) एस.सी.आर. 674 (*678*)।

24. *केरल राज्य* बनाम *लक्ष्मीकुट्टि*, ए. 1987 एस.सी. 331 (पैरा 40)।

25. *बिहार राज्य* बनाम *सोनावती*, ए. 1961 एस.सी. 221 (*231*)।

26. *मुंबई राज्य* बनाम *पुरुषोत्तम*, (1952) एस.सी.आर. 674; *बछित्तर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 395।

26क. *बिहार राज्य* बनाम *कृपालु*, ए. 1987 एस.सी. 1554 (पैरा 12-14)।

इस निमित्त बनाए गए नियमों के अनुसार सम्यकतः अधिप्रमाणित आदेश या लिखत की विधिमान्यता किसी न्यायालय में इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि वह राज्यपाल द्वारा किया गया या निष्पादित नहीं है ।[27]

काम-काज के नियमों के लिए देखिए निम्नलिखित वाद ।[28]

राज्यपाल को जानकारी देने आदि के संबंध में मुख्य मंत्री के कर्तव्य ।

167. प्रत्येक राज्य के मुख्य मंत्री का यह कर्तव्य होगा कि वह –

(क) राज्य के कार्यों के प्रशासन संबंधी और विधान विषयक प्रस्थापनाओं संबंधी मंत्रिपरिषद् के सभी विनिश्चय राज्यपाल को संसूचित करे;

(ख) राज्य के कार्यों के प्रशासन संबंधी और विधान विषयक प्रस्थापनाओं संबंधी जो जानकारी राज्यपाल मांगे, वह दे; और

(ग) किसी विषय को जिस पर किसी मंत्री ने विनिश्चय कर दिया है किंतु मंत्रिपरिषद् ने विचार नहीं किया है, राज्यपाल द्वारा अपेक्षा किए जाने पर परिषद् के समक्ष विचार के लिए रखे ।

अध्याय 3 — राज्य का विधान मंडल

साधारण

राज्यों के विधान मंडलों का गठन ।

168. (1) प्रत्येक राज्य के लिए एक विधान मंडल होगा जो राज्यपाल और —

(क) * * *,[29] बिहार, * * *,[30] * * *,[31] महाराष्ट्र,[32] कर्नाटक,[33] * * *,[34] और उत्तर प्रदेश[35] राज्यों में दो सदनों से;

(ख) अन्य राज्यों में[36] एक सदन से,

मिलकर बनेगा ।

(2) जहां किसी राज्य के विधान मंडल के दो सदन हैं वहां एक का नाम विधान परिषद्

27 *ईश्वरलाल* बनाम *गुजरात राज्य*, ए 1968 एस.सी. 870 (*875*) ।

28. तुलनीय, *नगर निगम* बनाम *बिरला मिल्स*, (1968) 3 एस.सी.आर. 251 (*275*); *बी.एल. काटन मिल्स* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए 1967 एस.सी. 1145 (*1151*); *केपिटल मल्टी-पर्पज सोसाइटी* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1815, *संजीवी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए 1970 एस.सी. 1102 (*1107*); *पंजाब राज्य* बनाम *पुरी*, ए. 1975 एस.सी. 1633 ।

29. आंध्र प्रदेश विधान परिषद् (उत्सादन) अधिनियम, 1985 द्वारा "आंध्र प्रदेश" शब्द का तारीख 1-6-1985 से लोप किया गया ।

30. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "मध्य प्रदेश" शब्द अंतःस्थापित किया जाना है, किंतु इसे अभी प्रभावी नहीं किया गया ।

31. तमिलनाडु विधान परिषद् (उत्सादन) अधिनियम, 1986 की धारा 4 द्वारा "तमिलनाडु" शब्द का तारीख 1-11-1986 से लोप किया गया ।

32. मुंबई पुनर्गठन अधिनियम, 1968 की धारा 20 द्वारा तारीख 1-5-1960 से "मुंबई" शब्द के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

33. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा तारीख 1-11-1956 से 'मैसूर' अंतःस्थापित किया गया और मैसूर राज्य (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1973 द्वारा उसका नाम परिवर्तित करके 'कर्नाटक' कर दिया गया ।

34. पंजाब विधान परिषद् (उत्सादन) अधिनियम, 1969 द्वारा "पंजाब" शब्द का तारीख 7-1-1970 से लोप किया गया ।

35. पश्चिमी बंगाल विधान परिषद् (उत्सादन), अधिनियम, 1969 की धारा 4 द्वारा "और पश्चिमी बंगाल" शब्दों का लोप किया गया । पश्चिमी बंगाल ने अपने द्वितीय सदन—विधान परिषद्—का तारीख 1-8-1969 से उत्सादन कर दिया है [पश्चिमी बंगाल विधान परिषद् (उत्सादन) अधिनियम, 1969 की धारा 1(2) के अधीन अधिसूचना द्वारा] ।

36. मुंबई में से निर्मित नए गुजरात राज्य में एक सदन है, किंतु जम्मू-कश्मीर में उसके अपने राज्य के संविधान के आधार पर दो सदन हैं ।

और दूसरे का नाम विधान सभा होगा और जहां केवल एक सदन है वहां उसका नाम विधान सभा होगा ।

मध्य प्रदेश — संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 8(2) के कारण मध्य प्रदेश में दूसरा सदन (विधान परिषद्) तब बनेगा जब राष्ट्रपति द्वारा इस प्रभाव की अधिसूचना निकाली जाएगी ।[37] जब तक ऐसी अधिसूचना नहीं निकाली जाती है तब तक एक सदन वाले विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधियां विधिमान्य होंगी ।[37]

राज्यों में विधान परिषदों का उत्सादन या सृजन ।

169. (1) **अनुच्छेद 168 में किसी बात के होते हुए भी, संसद् विधि द्वारा किसी विधान परिषद् वाले राज्य में विधान परिषद् के उत्सादन के लिए या ऐसे राज्य में, जिसमें विधान परिषद् नहीं है, विधान परिषद् के सृजन के लिए उपबंध कर सकेगी, यदि उस राज्य की विधान सभा ने इस आशय का संकल्प विधान सभा की कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों की संख्या के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर दिया है ।**[38]

(2) **खंड (1) में निर्दिष्ट किसी विधि में इस संविधान के संशोधन के लिए ऐसे उपबंध अंतर्विष्ट होंगे जो उस विधि के उपबंधों को प्रभावी करने के लिए आवश्यक हों तथा ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध भी अंतर्विष्ट हो सकेंगे जिन्हें संसद् आवश्यक समझे ।**

(3) **पूर्वोक्त प्रकार की कोई विधि अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जाएगी ।**

विधान सभाओं की संरचना ।

[39]170. *(1) अनुच्छेद 333 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक राज्य की विधान सभा उस राज्य में प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने हुए पांच सौ से अनधिक और साठ से अन्यून सदस्यों से मिलकर बनेगी ।*[40]

(2) खंड (1) के प्रयोजनों के लिए, प्रत्येक राज्य को प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में ऐसी रीति से विभाजित किया जाएगा कि प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र की जनसंख्या का उसको आबंटित स्थानों की संख्या से अनुपात समस्त राज्य में यथासाध्य एक ही हो ।

[41]*स्पष्टीकरण — इस खंड में "जनसंख्या" पद से ऐसी अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना में अभिनिश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गए हैं :*

परंतु इस स्पष्टीकरण में अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना के प्रति जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गए हैं, निर्देश का, जब तक सन् 2000 के पश्चात् की गई पहली जनगणना के सुसंगत आंकड़े प्रकाशित नहीं हो जाते हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह 1971 की जनगणना के प्रति निर्देश है ।

(3) प्रत्येक जनगणना की समाप्ति पर प्रत्येक राज्य की विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या और प्रत्येक राज्य के प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में विभाजन का ऐसे प्राधिकारी द्वारा और ऐसी रीति से पुनः समायोजन किया जाएगा जो संसद् विधि द्वारा अवधारित करे :

37. *राम दास बनाम राज्य*, ए. 1959 मध्य प्रदेश 353 (*355*) ।

38. उदाहरणार्थ, पश्चिमी बंगाल विधान परिषद् (उत्सादन) अधिनियम, 1969 के अधिनियम द्वारा इस अनुच्छेद के अधीन पश्चिमी बंगाल की विधान परिषद् का उत्सादन किया गया ।

39. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा तारीख 1-11-1956 से प्रतिस्थापित ।

40. अनुच्छेद 4 के अधीन विधि द्वारा परिवर्तित किया जा सकता है [*मंगल सिंह बनाम भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 944] ।

41. संविधान (*बयालीसवां संशोधन*) *अधिनियम*, 1976 द्वारा तारीख *3-1-11977* से प्रतिस्थापित ।

परंतु ऐसे पुनः समायोजन से विधान सभा में प्रतिनिधित्व पर तब तक कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जब तक उस समय विद्यमान विधान सभा का विघटन नहीं हो जाता है :

[42]परंतु यह और कि ऐसा पुनः समायोजन उस तारीख से प्रभावी होगा जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे और ऐसे पुनः समायोजन के प्रभावी होने तक विधान सभा के लिए कोई निर्वाचन उन प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों के आधार पर हो सकेगा जो ऐसे पुनः समायोजन के पहले विद्यमान हैं :

परंतु यह और भी कि जब तक सन् 2000 के पश्चात् की गई पहली जनगणना के सुसंगत आंकड़े प्रकाशित नहीं हो जाते हैं तब तक प्रत्येक राज्य की विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या का और इस खंड के अधीन ऐसे राज्य के प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में विभाजन का पुनः समायोजन आवश्यक नहीं होगा ।

विधान परिषदों की संरचना ।

171. (1) **विधान परिषद् वाले राज्य की विधान परिषद् के सदस्यों की कुल संख्या उस राज्य की विधान सभा के सदस्यों की कुल संख्या के [43][*एक-तिहाई*] से अधिक नहीं होगी :**

परंतु किसी राज्य की विधान परिषद् के सदस्यों की कुल संख्या किसी भी दशा में चालीस से कम नहीं होगी ।

(2) जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक किसी राज्य की विधान परिषद् की संरचना खंड (3) में उपबंधित रीति से होगी ।

(3) किसी राज्य की विधान परिषद् के सदस्यों की कुल संख्या का —

(क) यथाशक्य निकटतम एक-तिहाई भाग उस राज्य की नगरपालिकाओं, जिला बोर्डों और अन्य ऐसे स्थानीय प्राधिकारियों के, जो संसद् विधि द्वारा विनिर्दिष्ट करे, सदस्यों से मिलकर बनने वाले निर्वाचक-मंडलों द्वारा निर्वाचित होगा;

(ख) यथाशक्य निकटतम बारहवां भाग उस राज्य में निवास करने वाले ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनने वाले निर्वाचक-मंडलों द्वारा निर्वाचित होगा, जो भारत के राज्यक्षेत्र में किसी विश्वविद्यालय के कम से कम तीन वर्ष से स्नातक हैं या जिनके पास कम से कम तीन वर्ष से ऐसी अर्हताएं हैं जो संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि या उसके अधीन ऐसे किसी विश्वविद्यालय के स्नातक की अर्हताओं के समतुल्य विहित की गई हों;

(ग) यथाशक्य निकटतम बारहवां भाग ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनने वाले निर्वाचक-मंडलों द्वारा निर्वाचित होगा जो राज्य के भीतर माध्यमिक पाठशालाओं से अनिम्न स्तर की ऐसी शिक्षा संस्थाओं में, जो संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन विहित की जाएं, पढ़ाने के काम में कम से कम तीन वर्ष से लगे हुए हैं;

(घ) यथाशक्य निकटतम एक-तिहाई भाग राज्य की विधान सभा के सदस्यों द्वारा ऐसे व्यक्तियों में से निर्वाचित होगा जो विधान सभा के सदस्य नहीं हैं;

(ङ) शेष सदस्य राज्यपाल द्वारा खंड (5) के उपबंधों के अनुसार नामनिर्देशित किए जाएंगे ।

(4) खंड (3) के उपखंड (क), उपखंड (ख) और उपखंड (ग) के अधीन निर्वाचित होने वाले सदस्य ऐसे प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में चुने जाएंगे, जो संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन विहित किए जाएं तथा उक्त उपखंडों के और उक्त खंड के उपखंड (घ) के अधीन निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा होंगे ।

(5) राज्यपाल द्वारा खंड (3) के उपखंड (ङ) के अधीन नामनिर्देशित किए जाने वाले सदस्य

42. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से अंतःस्थापित ।

43. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा तारीख 1-11-1956 से "एक-चौथाई" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

ऐसे व्यक्ति होंगे जिन्हें निम्नलिखित विषयों के संबंध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है, अर्थात् :—

साहित्य, विज्ञान, कला, सहकारी आंदोलन और समाज सेवा ।

राज्यों के विधान मंडलों की अवधि ।

172. (1) प्रत्येक राज्य की प्रत्येक विधान सभा, यदि पहले ही विघटित नहीं कर दी जाती है तो, अपने प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से [44][*पांच वर्ष*] तक बनी रहेगी, इससे अधिक नहीं और [44][*पांच वर्ष*] की उक्त अवधि की समाप्ति का परिणाम विधान सभा का विघटन होगा :

परंतु उक्त अवधि को, जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, तब संसद् विधि द्वारा, ऐसी अवधि के लिए बढ़ा सकेगी, जो एक बार में एक वर्ष से अधिक नहीं होगी और उद्घोषणा के प्रवर्तन में न रह जाने के पश्चात् किसी भी दशा में उसका विस्तार छह मास की अवधि से अधिक नहीं होगा ।[45]

(2) राज्य की विधान परिषद् का विघटन नहीं होगा, किंतु उसके सदस्यों में से यथासंभव निकटतम एक-तिहाई सदस्य संसद् द्वारा विधि द्वारा इस निमित्त बनाए गए उपबंधों के अनुसार, प्रत्येक द्वितीय वर्ष की समाप्ति पर यथाशक्य शीघ्र निवृत्त हो जाएंगे ।

राज्य के विधान मंडल की सदस्यता के लिए अर्हता ।

173. कोई व्यक्ति किसी राज्य के विधान मंडल के किसी स्थान को भरने के लिए चुने जाने के लिए अर्हित तभी होगा जब —

[46]*(क) वह भारत का नागरिक है और निर्वाचन आयोग द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति के समक्ष तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार शपथ लेता है या प्रतिज्ञान करता है और उस पर अपने हस्ताक्षर करता है;*

(ख) वह विधान सभा के स्थान के लिए कम से कम पच्चीस वर्ष की आयु का और विधान परिषद् के स्थान के लिए कम से कम तीस वर्ष की आयु का है; और

(ग) उसके पास ऐसी अन्य अर्हताएं हैं जो इस निमित्त संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन विहित की जाएं ।

खंड (क) — तीसरी सूची और लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के साथ पढ़े जाने पर इस खंड से अभिप्रेत है कि नामनिर्देशन पत्र की संवीक्षा के लिए नियत तारीख के पूर्व शपथ या प्रतिज्ञान किया जाना चाहिए । यदि संवीक्षा की तारीख तक यह कार्य नहीं किया जाता है तो वह व्यक्ति चुने जाने के लिए निरर्हित हो जाएगा और उसका नामनिर्देशन पत्र नामंजूर किया जा सकेगा ।[47] किंतु जहां कोई प्रत्याशी एक से अधिक निर्वाचन क्षेत्रों से खड़ा हो रहा है वहां संविधान यह अपेक्षा नहीं करता है कि वह प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में शपथ लेगा । एक निर्वाचन क्षेत्र के सक्षम प्राधिकारी के समक्ष ऐसा कर लेने के पश्चात् इस निमित्त उसकी निरर्हता समाप्त हो जाती है ।[48]

खंड (ख) — लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 36(2) के साथ पढ़े जाने

44. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से जो अवधि पांच वर्ष से बढ़ाकर छह वर्ष की गई थी, वह संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 6-9-1979 से पुनः पांच वर्ष कर दी गई ।

45. संसद् ने, इस शक्ति का प्रयोग करते हुए केरल विधान सभा की अवधि तारीख 21-4-1976 से छह मास के लिए बढ़ा दी (*स्टेट्समैन*, कलकत्ता, तारीख 24-3-1976; पृष्ठ 5) ।

46. संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा तारीख 6-10-1963 से खंड (क) के स्थान पर खंड (क) प्रतिस्थापित किया गया ।

47. *पशुपति* बनाम *हरिहर*, ए. 1968 एस.सी. 1064; *हुसैन* बनाम *निजलिंगप्पा*, ए. 1969 एस.सी. 1034 ।

48. *खाजे खानावार खादरखान* बनाम *सिद्दाबनवाली*, ए. 1969 एस.सी. 1034 ।

पर इसका यह अभिप्राय है कि कोई अभ्यर्थी तभी अर्ह होगा जब उसने नामनिर्देशन की संवीक्षा की तारीख को विनिर्दिष्ट आयु प्राप्त कर ली हो ।[49]

उल्लंघन का प्रभाव — यदि कोई व्यक्ति जिसकी उपर्युक्त अर्हताएं नहीं है निर्वाचित हो जाता है तो निर्वाचन शून्य होगा[50] चाहे नामनिर्देशन पत्र रिटर्निंग आफिसर द्वारा स्वीकार कर लिया गया हो ।[49]

राज्य के विधान मंडल के सत्र, सत्रावसान और विघटन ।

[51]**174.** *(1) राज्यपाल, समय-समय पर, राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन को ऐसे समय और स्थान पर, जो वह ठीक समझे, अधिवेशन के लिए आहूत करेगा, किंतु उसके एक सत्र की अंतिम बैठक और आगामी सत्र की प्रथम बैठक के लिए नियत तारीख की बीच छह मास का अंतर नहीं होगा ।*

(2) राज्यपाल, समय-समय पर —

(क) सदन का या किसी सदन का सत्रावसान कर सकेगा,

(ख) विधान सभा का विघटन कर सकेगा ।

सत्रावसान — सत्रावसान करने की राज्यपाल की शक्ति की सीमा नहीं है । जब अध्यक्ष के आदेश से सदन स्थगित किया गया हो तब भी इस शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है ।[52] राज्यपाल का आदेश राजपत्र में प्रकाशित होते ही तुरंत प्रभावी हो जाता है । सदन के नियम यदि इसके प्रतिकूल हो तो भी वे इस शक्ति को प्रभावित नहीं कर सकते ।

सदन या सदनों मे अभिभाषण का और उनको संदेश भेजने का राज्यपाल का अधिकार ।

175. (1) **राज्यपाल, विधान सभा में या विधान परिषद् वाले राज्य की दशा में उस राज्य के विधान मंडल के किसी एक सदन में या एक साथ समवेत दोनों सदनों में, अभिभाषण कर सकेगा और इस प्रयोजन के लिए सदस्यों की उपस्थिति की अपेक्षा कर सकेगा ।**

(2) **राज्यपाल, राज्य के विधान मंडल में उस समय लंबित किसी विधेयक के संबंध में संदेश या कोई अन्य संदेश, उस राज्य के विधान मंडल के सदन या सदनों को भेज सकेगा और जिस सदन को कोई संदेश इस प्रकार भेजा गया है वह सदन उस संदेश द्वारा विचार करने के लिए अपेक्षित विषय पर सुविधानुसार शीघ्रता से विचार करेगा ।**

राज्यपाल का विशेष अभिभाषण ।

176. (1) **राज्यपाल,** [53][*विधान सभा के लिए प्रत्येक साधारण निर्वाचन के पश्चात् प्रथम सत्र के आरंभ में और प्रत्येक वर्ष के प्रथम सत्र के आरंभ में*] **विधान सभा में या विधान परिषद् वाले राज्य की दशा में एक साथ समवेत दोनों सदनों में अभिभाषण करेगा और विधान मंडल को उसके आह्वान के कारण बताएगा ।**

(2) सदन या प्रत्येक सदन की प्रक्रिया का विनियमन करने वाले नियमों द्वारा ऐसे अभिभाषण में निर्दिष्ट विषयों की चर्चा के लिए समय नियत करने के लिए [54]* * * उपबंध किया जाएगा ।

49 *अमृतलाल* बनाम *हिम्मतभाई*, ए. 1968 एस.सी. 1455 ।

50. *दुर्गाशंकर* बनाम *रघुराज*, ए. 1954 एस.सी. 520 ।

51 संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 (धारा 8) द्वारा तारीख 18-6-1951 से मूल अनुच्छेद के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

52 *पंजाब राज्य* बनाम *सत्यपाल*, ए. 1969 एस.सी. 903 (*911*) ।

53 संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 (धारा 9) द्वारा तारीख 18-6-1951 से "प्रत्येक सत्र" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

54 संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 की धारा 9 द्वारा "तथा सदन के अन्य कार्य पर इस चर्चा को अग्रता देने के लिए" शब्दों का लोप किया गया ।

सदनों के बारे में मंत्रियों और महाधिवक्ता के अधिकार ।

177. प्रत्येक मंत्री और राज्य के महाधिवक्ता को यह अधिकार होगा कि वह उस राज्य की विधान सभा में या विधान परिषद् वाले राज्य की दशा में दोनों सदनों में बोले और उनकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले और विधान मंडल की किसी समिति में, जिसमें उसका नाम सदस्य के रूप में दिया गया है, बोले और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग ले, किंतु इस अनुच्छेद के आधार पर वह मत देने का हकदार नहीं होगा ।

गैर सदस्य का मंत्री होना — कोई व्यक्ति जो विधान मंडल का सदस्य नहीं है या जिसने किसी कारणवश अपना स्थान खो दिया है छह मास से अनधिक की अवधि के लिए मंत्री रह सकता है [जैसा अनुच्छेद 164(4) में विनिर्दिष्ट है][55] और विधान मंडल की कार्यवाहियों में उपस्थित हो सकता है तथा भाग ले सकता है ।[55] किंतु —

(क) ऐसे गैर सदस्य मंत्री को विधान मंडल या उसकी किसी समिति में मत देने का अधिकार नहीं होगा (अनुच्छेद 177); और

(ख) सदस्य न रहने पर छह मास की समाप्ति पर वह मंत्री नहीं रहेगा ।[55]

इसी कारण विधान सभा का विघटन होते ही मंत्रिपरिषद् समाप्त नहीं होती ।[56-57] विधान मंडल की (पांच वर्ष की) सांविधानिक अवधि समाप्त हो जाने पर स्थिति भिन्न होती है ।[57]

राज्य के विधान मंडल के अधिकारी

विधान सभा का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष ।

178. प्रत्येक राज्य की विधान सभा, यथाशक्य शीघ्र, अपने दो सदस्यों को अपना अध्यक्ष और उपाध्यक्ष चुनेगी और जब-जब अध्यक्ष या उपाध्यक्ष का पद रिक्त होता है तब-तब विधान सभा किसी अन्य सदस्य को, यथास्थिति, अध्यक्ष या उपाध्यक्ष चुनेगी ।

अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का पद रिक्त होना, पदत्याग और पद से हटाया जाना ।

179. विधान सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के रूप में पद धारण करने वाला सदस्य —

(क) यदि विधान सभा का सदस्य नहीं रहता है तो अपना पद रिक्त कर देगा;

(ख) किसी भी समय, यदि वह सदस्य अध्यक्ष है तो उपाध्यक्ष को संबोधित और यदि वह सदस्य उपाध्यक्ष है तो अध्यक्ष को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा; और

(ग) विधान सभा के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत से पारित संकल्प द्वारा अपने पद से हटाया जा सकेगा :

परंतु खंड (ग) के प्रयोजन के लिए कोई संकल्प तब तक प्रस्तावित नहीं किया जाएगा जब तक कि उस संकल्प को प्रस्तावित करने के आशय की कम से कम चौदह दिन की सूचना न दे दी गई हो :

परंतु यह और कि जब कभी विधान सभा का विघटन किया जाता है तो विघटन के पश्चात् होने वाले विधान सभा के प्रथम अधिवेशन के ठीक पहले तक अध्यक्ष अपने पद को रिक्त नहीं करेगा ।

अध्यक्ष के पद के कर्तव्यों का पालन करने या अध्यक्ष के रूप में कार्य करने की उपाध्यक्ष या अन्य व्यक्ति की शक्ति ।

180. (1) जब अध्यक्ष का पद रिक्त है तब उपाध्यक्ष, या यदि उपाध्यक्ष का पद भी रिक्त है तो विधान सभा का ऐसा सदस्य, जिसको राज्यपाल इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा ।

55. *हर शरन* बनाम *त्रिभुवन*, ए. 1971 एस.सी. 1331 (*1332*) ।

56. *राजगोपाल* बनाम *करुणानिधि*, ए. 1971 एस.सी. 1551 ।

57. तुलना कीजिए, *यू.एन.आर. राव* बनाम *इन्दिरा गांधी*, ए. 1971 एस.सी. 1002 (*1005*) ।

(2) विधान सभा की किसी बैठक से अध्यक्ष की अनुपस्थिति में उपाध्यक्ष, या यदि वह भी अनुपस्थित है तो ऐसा व्यक्ति, जो विधान सभा की प्रक्रिया के नियमों द्वारा अवधारित किया जाए, या यदि ऐसा कोई व्यक्ति उपस्थित नहीं है तो ऐसा अन्य व्यक्ति, जो विधान सभा द्वारा अवधारित किया जाए, अध्यक्ष के रूप में कार्य करेगा ।

जब अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब उसका पीठासीन न होना ।

181. (1) विधान सभा की किसी बैठक में, जब अध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब अध्यक्ष, या जब उपाध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब उपाध्यक्ष, उपस्थित रहने पर भी, पीठासीन नहीं होगा और अनुच्छेद 180 के खंड (2) के उपबंध ऐसी प्रत्येक बैठक के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे उस बैठक के संबंध में लागू होते हैं, जिससे, यथास्थिति, अध्यक्ष या उपाध्यक्ष अनुपस्थित है ।

(2) जब अध्यक्ष को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विधान सभा में विचाराधीन है तब उसको विधान सभा में बोलने और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग लेने का अधिकार होगा और वह अनुच्छेद 189 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे संकल्प पर या ऐसी कार्यवाहियों के दौरान किसी अन्य विषय पर प्रथमतः ही मत देने का हकदार होगा किंतु मत बराबर होने की दशा में मत देने का हकदार नहीं होगा ।

विधान परिषद् का सभापति और उपसभापति ।

182. विधान परिषद् वाले प्रत्येक राज्य की विधान परिषद्, यथाशीघ्र, अपने दो सदस्यों को अपना सभापति और उपसभापति चुनेगी और जब-जब सभापति या उपसभापति का पद रिक्त होता है तब-तब परिषद् किसी अन्य सदस्य को, यथास्थिति, सभापति या उपसभापति चुनेगी ।

सभापति और उपसभापति का पद रिक्त होना, पदत्याग और पद से हटाया जाना ।

183. विधान परिषद् के सभापति या उपसभापति के रूप में पद धारण करने वाला सदस्य —

(क) यदि विधान परिषद् का सदस्य नहीं रहता है तो अपना पद रिक्त कर देगा;

(ख) किसी भी समय, यदि वह सदस्य सभापति है तो उपसभापति को संबोधित और यदि वह सदस्य उपसभापति है तो सभापति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा; और

(ग) विधान परिषद् के तत्कालीन समस्त सदस्यों के बहुमत से पारित संकल्प द्वारा अपने पद से हटाया जा सकेगा :

परंतु खंड (ग) के प्रयोजन के लिए कोई संकल्प तब तक प्रस्तावित नहीं किया जाएगा जब तक कि उस संकल्प को प्रस्तावित करने के आशय की कम से कम चौदह दिन की सूचना न दे दी गई हो ।

सभापति के पद के कर्तव्यों का पालन करने या सभापति के रूप में कार्य करने की उपसभापति या अन्य व्यक्ति की शक्ति ।

184. (1) जब सभापति का पद रिक्त है तब उपसभापति, या यदि उपसभापति का पद भी रिक्त है तो विधान परिषद् का ऐसा सदस्य, जिसको राज्यपाल इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा ।

(2) विधान परिषद् की किसी बैठक से सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति, या यदि वह भी अनुपस्थित है तो ऐसा व्यक्ति, जो विधान परिषद् की प्रक्रिया के नियमों द्वारा अवधारित किया जाए, या यदि ऐसा कोई व्यक्ति

उपस्थित नहीं है तो ऐसा अन्य व्यक्ति, जो विधान परिषद् द्वारा अवधारित किया जाए, सभापति के रूप में कार्य करेगा ।

जब सभापति या उपसभापति को पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब उसका पीठासीन न होना ।

185. (1) विधान परिषद् की किसी बैठक में, जब सभापति को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब सभापति, या जब उपसभापति को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है तब उपसभापति, उपस्थित रहने पर भी पीठासीन नहीं होगा और अनुच्छेद 184 के खंड (2) के उपबंध ऐसी प्रत्येक बैठक के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे उस बैठक के संबंध में लागू होते हैं जिससे, यथास्थिति, सभापति या उपसभापति अनुपस्थित है ।

(2) जब सभापति को उसके पद से हटाने का कोई संकल्प विधान परिषद् में विचाराधीन है तब उसको विधान परिषद् में बोलने और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग लेने का अधिकार होगा और वह अनुच्छेद 189 में किसी बात के होते हुए भी, ऐसे संकल्प पर या ऐसी कार्यवाहियों के दौरान किसी अन्य विषय पर प्रथमतः ही मत देने का हकदार होगा किंतु मत बराबर होने की दशा में मत देने का हकदार नहीं होगा ।

अध्यक्ष और उपाध्यक्ष सभापति और उपसभापति [illegible] वेतन और [illegible]

186. विधान सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को तथा विधान परिषद् के सभापति और उपसभापति को, ऐसे वेतन और भत्ता का जो राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, नियत करे और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसे वेतन और भत्तों का जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, संदाय किया जाएगा ।

राज्य के विधान मंडल सचिवालय ।

187. (1) राज्य के विधान मंडल के सदन का या प्रत्येक सदन का पृथक् सचिवीय कर्मचारिवृंद होगा :

परंतु विधान परिषद् वाले राज्य के विधान मंडल की दशा में, इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह ऐसे विधान मंडल के दोनों सदनों के लिए सम्मिलित पदों के सृजन को निवारित करती है ।

(2) राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, राज्य के विधान मंडल के सदन या सदनों के सचिवीय कर्मचारिवृंद में भर्ती का और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का विनियमन कर सकेगा ।

(3) जब तक राज्य का विधान मंडल खंड (2) के अधीन उपबंध नहीं करता है तब तक राज्यपाल, यथास्थिति, विधान सभा के अध्यक्ष या विधान परिषद् के सभापति से परामर्श करने के पश्चात् विधान सभा के या विधान परिषद् के सचिवीय कर्मचारिवृंद में भर्ती के और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों के विनियमन के लिए नियम बना सकेगा और इस प्रकार बनाए गए नियम उक्त खंड के अधीन बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रभावी होंगे ।

कार्य संचालन

सदस्यों द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान ।

188. राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् का प्रत्येक सदस्य अपना स्थान ग्रहण करने से पहले, राज्यपाल या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त व्यक्ति के समक्ष, तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार, शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा ।

189. (1) इस संविधान में यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन की बैठक में सभी प्रश्नों का अवधारण, अध्यक्ष या सभापति को अथवा उस रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति को छोड़कर, उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के बहुमत से किया जाएगा ।

सदनों में मतदान, रिक्तियों के होते हुए भी सदनों की कार्य करने की शक्ति और गणपूर्ति ।

अध्यक्ष या सभापति, अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति प्रथमतः मत नहीं देगा, किंतु मत बराबर होने की दशा में उसका निर्णायक मत होगा और वह उसका प्रयोग करेगा ।

(2) राज्य के विधान मंडल के किसी सदन की सदस्यता में कोई रिक्ति होने पर भी, उस सदन को कार्य करने की शक्ति होगी और यदि बाद में यह पता चलता है कि कोई व्यक्ति, जो ऐसा करने का हकदार नहीं था, कार्यवाहियों में उपस्थित रहा है या उसने मत दिया है या अन्यथा भाग लिया है तो भी राज्य के विधान मंडल की कार्यवाही विधिमान्य होगी ।

[58](3) जब तक राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का अधिवेशन गठित करने के लिए गणपूर्ति दस सदस्य या सदन के सदस्यों की कुल संख्या का दसवां भाग, इसमें से जो भी अधिक हो, होगी ।

[58](4) यदि राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् के अधिवेशन में किसी समय गणपूर्ति नहीं है तो अध्यक्ष या सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाले व्यक्ति का यह कर्तव्य होगा कि वह सदन को स्थगित कर दे या अधिवेशन को तब तक के लिए निलंबित कर दे जब तक गणपूर्ति नहीं हो जाती है ।

सदस्यों की निरर्हताएं

190. (1) **कोई व्यक्ति राज्य के विधान मंडल के दोनों सदनों का सदस्य नहीं होगा और जो व्यक्ति दोनों सदनों का सदस्य चुन लिया जाता है उसके एक या दूसरे सदन के स्थान को रिक्त करने के लिए उस राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा उपबंध करेगा ।**

स्थानों का रिक्त होना ।

(2) कोई व्यक्ति पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट दो या अधिक राज्यों के विधान मंडलों का सदस्य नहीं होगा और यदि कोई व्यक्ति दो या अधिक ऐसे राज्यों के विधान मंडलों का सदस्य चुन लिया जाता है तो ऐसी अवधि की समाप्ति के पश्चात् जो राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए नियमों में विनिर्दिष्ट की जाए, ऐसे सभी राज्यों के विधान मंडलों में ऐसे व्यक्ति का स्थान रिक्त हो जाएगा यदि उसने एक राज्य को छोड़कर अन्य राज्यों के विधान मंडलों में अपने स्थान को पहले ही नहीं त्याग दिया है ।

(3) यदि राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का सदस्य —

(क) *अनुच्छेद 191 के खंड (1) या खंड (2)*[59] **में वर्णित किसी निरर्हता से ग्रस्त हो जाता है, या**

(ख) यथास्थिति, अध्यक्ष या सभापति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपने स्थान का त्याग कर देता है *और उसका त्यागपत्र, यथास्थिति, अध्यक्ष या सभापति द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है,*[60]

तो ऐसा होने पर उसका स्थान रिक्त हो जाएगा :

---

58. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 जो खंड (3) और (4) का लोप किया गया था उन्हें संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से पुनःस्थापित किया गया ।

59. संविदान (बावनवां संशोधन) अधिनियम, 1985 द्वारा तारीख 1-3-1985 से अंतःस्थापित ।

60. संविधान (तैतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1974 द्वारा इटेलिक में लिखे शब्द और परंतुक जोड़ा गया था, जिससे कि यह स्पष्ट हो सके कि जब तक अध्यक्ष या सभापति द्वारा त्यागपत्र स्वीकार नहीं कर लिया जाता वह प्रभावी नहीं होगा ।

[60]*परंतु उपखंड (ख) में निर्दिष्ट त्यागपत्र की दशा में, यदि प्राप्त जानकारी से या अन्यथा और ऐसी जांच करने के पश्चात्, जो वह ठीक समझे, यथास्थिति, अध्यक्ष या सभापति का यह समाधान हो जाता है कि ऐसा त्यागपत्र स्वैच्छिक या असली नहीं है तो वह ऐसे त्यागपत्र को स्वीकार नहीं करेगा ।*

(4) यदि किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का सदस्य साठ दिन की अवधि तक सदन की अनुज्ञा के बिना उसके सभी अधिवेशनों से अनुपस्थित रहता है तो सदन उसके स्थान को रिक्त घोषित कर सकेगा :

परंतु साठ दिन की उक्त अवधि की संगणना करने में किसी ऐसी अवधि को हिसाब में नहीं लिया जाएगा जिसके दौरान सदन सत्रावसित या निरंतर चार से अधिक दिनों के लिए स्थगित रहता है ।

खंड (3)(ख) : त्यागपत्र — इस उपखंड के संशोधन के प्रभाव के बारे में देखिए पीछे अनुच्छेद 101(3)(ख) । वहां भी 33वें संशोधन अधिनियम, 1974 द्वारा इसी प्रकार का संशोधन किया गया है ।

सदस्यता के लिए निरर्हताएं ।

191. (1) **कोई व्यक्ति किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा —**

[61]*(क) यदि वह भारत सरकार के या पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट किसी राज्य की सरकार के अधीन, ऐसे पद को छोड़कर जिसको धारण करने वाले का निरर्हित न होना राज्य के विधान मंडल ने विधि द्वारा घोषित किया है, कोई लाभ का पद धारण करता है;*

(ख) यदि वह विकृतचित्त है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घोषणा विद्यमान है;

(ग) यदि वह अनुन्मोचित दिवालिया है;

(घ) यदि वह भारत का नागरिक नहीं है या उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित कर ली है या वह किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा या अनुषक्ति को अभिस्वीकार किए हुए है;

(ङ) यदि वह संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस प्रकार निरर्हित कर दिया जाता है ।

[62]*स्पष्टीकरण — इस खंड के प्रयोजनों के लिए,* **कोई व्यक्ति केवल इस कारण भारत सरकार के या पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट किसी राज्य की सरकार के अधीन लाभ का पद धारण करने वाला नहीं समझा जाएगा कि वह संघ का या ऐसे राज्य का मंत्री है ।**

[62]*(2) कोई व्यक्ति किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् का सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा यदि वह दसवीं अनुसूची के अधीन इस प्रकार निरर्हित हो जाता है ।*

खंड (1)(क) : 'सरकार के अधीन लाभ का पद' — यह पद सरकार के अधीन धारित पद अभिव्यक्ति से अधिक व्यापक है ।[63] इस उपखंड के अधीन निरर्ह होने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह व्यक्ति सरकार की सेवा में हो । सरकार के किसी अभिकरण या उपकरण में, जैसे सरकार द्वारा नियंत्रित किसी कानूनी निगम में नियोजन, निरर्हता का आधार होगा ।[63]

61 पूर्वोक्त अनुच्छेद 102(1)(क) में जो परिवर्तन किए गए थे वैसे ही परिवर्तन संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से अनुच्छेद 191(1)(क) में भी किए गए । किंतु संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 6-9-1979 से मूल पाठ पुनःस्थापित किया गया ।

62. संविधान (बावनवां संशोधन) अधिनियम, 1985 द्वारा तारीख 1-3-1985 से परिवर्तन किए गए ।

63. *बिहारी लाल बनाम रोशन लाल*, ए. 1984 एस.सी. 385 (पैरा 5, 21, 23-24); *दिव्य प्रकाश बनाम कुलतार*, ए. 1975 एस.सी. 1067; *गुजरात राज्य बनाम रमन*, ए. 1984 एस.सी. 161 ।

[64]*192. (1) यदि यह प्रश्न उठता है कि किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन का कोई सदस्य अनुच्छेद 191 के खंड (1) में वर्णित किसी निरर्हता से ग्रस्त हो गया है या नहीं तो वह प्रश्न राज्यपाल को विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जाएगा और उसका विनिश्चय अंतिम होगा ।*

सदस्यों की निरर्हताओं से संबंधित प्रश्नों पर विनिश्चय ।

(2) ऐसे किसी प्रश्न पर विनिश्चय करने से पहले राज्यपाल निर्वाचन आयोग की राय लेगा और ऐसी राय के अनुसार कार्य करेगा ।

193. **यदि किसी राज्य की विधान सभा या विधान परिषद् में कोई व्यक्ति अनुच्छेद 188 की अपेक्षाओं का अनुपालन करने से पहले, या यह जानते हुए कि मैं उसकी सदस्यता के लिए अर्हित नहीं हूं या निरर्हित कर दिया गया हूं या संसद् या राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों द्वारा ऐसा करने से प्रतिषिद्ध कर दिया गया हूं, सदस्य के रूप में बैठता है या मत देता है तो वह प्रत्येक दिन के लिए जब वह इस प्रकार बैठता है या मत देता है, पांच सौ रुपये की शास्ति का भागी होगा जो राज्य को देय ऋण के रूप में वसूल की जाएगी ।**

अनुच्छेद 188 के अधीन शपथ लेने या प्रतिज्ञान करने से पहले या अर्हित न होते हुए या निरर्हित किए जाने पर बैठने और मत देने के लिए शास्ति ।

राज्यों के विधान मंडलों और उनके सदस्यों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां

194. (1) **इस संविधान के उपबंधों के और विधान मंडल की प्रक्रिया का विनियमन करने वाले नियमों और स्थायी आदेशों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक राज्य के विधान मंडल में वाक्-स्वातंत्र्य होगा ।**

विधान मंडलों के सदनों की तथा उनके सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार, आदि ।

(2) **राज्य के विधान मंडल में या उसकी किसी समिति में विधान मंडल के किसी सदस्य द्वारा कही गई किसी बात या दिए गए किसी मत के संबंध में उसके विरुद्ध किसी न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी और किसी व्यक्ति के विरुद्ध ऐसे विधान मंडल के किसी सदन के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन किसी प्रतिवेदन, पत्र, मतों या कार्यवाहियों के प्रकाशन के संबंध में इस प्रकार की कोई कार्यवाही नहीं की जाएगी ।**

[65]*(3) अन्य बातों में राज्य के विधान मंडल के किसी सदन की और ऐसे विधान मंडल के किसी सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां ऐसी होंगी जो वह विधान मंडल, समय-समय पर, विधि द्वारा परिनिश्चित करे और जब तक वे इस प्रकार परिनिश्चित नहीं की जाती हैं तब तक* [66]*[वही होंगी जो संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 की धारा 26 के प्रवृत्त होने से ठीक पहले उस सदन की और उसके सदस्यों और समितियों की थीं] ।*

(4) **जिन व्यक्तियों को इस संविधान के आधार पर राज्य के विधान मंडल के किसी सदन या उसकी किसी समिति में बोलने का और उसकी कार्यवाहियों में अन्यथा भाग लेने का अधिकार है,**

---

64. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से अनुच्छेद 192 प्रतिस्थापित किया गया था किंतु संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से इस मूल पाठ को पुनःस्थापित किया गया ।

65. खंड (3) पहले संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 20-6-1979 से प्रतिस्थापित किया गया था, और संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से पुनःप्रतिस्थापित किया गया ।

66. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से कोष्ठक में दिए गए शब्द प्रतिस्थापित किए गए ।

उनके संबंध में खंड (1), खंड (2) और खंड (3) के उपबंध उसी प्रकार लागू होंगे जिस प्रकार वे उस विधान मंडल के सदस्यों के संबंध में लागू होते हैं ।

अनुच्छेद 194 : **विधान मंडल के विशेषाधिकार** — देखिए पीछे अनुच्छेद 105 ।

खंड (1) : वाक्-स्वातंत्र्य 'इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए' — अनुच्छेद 194(1) 'संविधान के उपबंधों के अधीन है' अर्थात् अनुच्छेद 208 और 211 के उपबंधों के अधीन है (संसद् की दशा में अनुच्छेद 118 और 121) । अतएव वाक्-स्वातंत्र्य के प्रयोग में कोई सदस्य उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के आचरण पर बहस का प्रस्ताव नहीं कर सकता क्योंकि यह अनुच्छेद 211 द्वारा प्रतिषिद्ध है ।[67-68] 'विधान मंडल की प्रक्रिया का विनियमन करने वाले' शब्दों से यह प्रतीत होता है कि विधान मंडल के सदस्यों का वाक्-स्वातंत्र्य, अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन अधिरोपित मर्यादाओं से बंधा नहीं है किंतु विधान मंडल की प्रक्रिया के नियमों के अधीन है ।[68]

खंड (1) का प्रविषय है विधायकों को वाक्-स्वातंत्र्य प्रदान करना जो न तो अनुच्छेद 19(1)(क) पर आधारित हो और न उसके द्वारा नियंत्रित हो ।[68] विधायकों की इस स्वतंत्रता पर दो निर्बन्धन हैं ।

(क) विधान मंडल की प्रक्रिया से संबंधित संविधान के उपबंध, जैसे अनुच्छेद 208 या 211 ।
(ख) सदन के नियम और स्थायी आदेश जो सदन की प्रक्रिया का विनियमन करते है ।

खंड (2) का प्रविषय : विधिक कार्यवाही से उन्मुक्ति — यह खंड एक बात में खंड (1) से भी एक पग आगे है । वह है विधान मंडल में कही गई किसी बात के लिए विधायक का विधिक दायित्व । यदि उसके भाषण से किसी अन्य व्यक्ति के अनुच्छेद 19(1)(क) के अधीन मूल अधिकार का उल्लंघन होता है और वह संविधान के किसी उपबंध का उल्लंघन करता है (जैसे अनुच्छेद 211) तो भी उसे विधिक कार्यवाहियों से पूरी उन्मुक्ति है । हां, उल्लंघन के लिए वह सदन के प्रति उत्तरदायी है और अध्यक्ष उसके विरुद्ध समुचित कार्यवाही कर सकता है ।[68]

खंड (1) के प्रारंभ मे जो मर्यादा अधिरोपित करने वाले शब्द हैं वे खंड (2) में नहीं हैं ।[67] इसका यह अर्थ हुआ कि सदन के भीतर वाक्-स्वातंत्र्य अनुच्छेद 19 और 121 तथा सदन के सुसंगत नियमों के अधीन है किंतु इन उपबंधों का उल्लंघन होने पर न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं हो सकती । जैसे न्यायालय के अवमान या मान-हानि आदि के लिए । ऐसे कथनों के लिए अध्यक्ष ही उपचार दे सकता है, निवारक कार्यवाही कर सकता है या उल्लंघन के लिए वक्ता के विरुद्ध कार्यवाही कर सकता है ।[67]

'कही गई कोई बात . . . .' — खंड (2) में 'कार्यवाही' के अंतर्गत भाषण ही नहीं, प्रस्ताव, प्रश्न आदि सभी आते हैं जो सदन की कार्यवाही के भाग हैं । किंतु जिन प्रश्नों की अनुमति नहीं दी जाती है वे कभी कार्यवाही के भाग नहीं हो सकते ।[69]

'सदन के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन प्रकाशन' — खंड (2) के अधीन उन्मुक्ति ऐसे प्रकाशन को है जो सदन के प्राधिकार द्वारा या उसके अधीन प्रकाशित किया गया है । इस खंड के अधीन समाचार पत्र को विशेषाधिकार नहीं है चाहे उसकी रिपोर्ट सच हो । उसे सदन का प्राधिकार होना चाहिए ।[69]

सदन को यह आत्यंतिक विशेषाधिकार है कि वह अपनी पूरी कार्यवाही को या उसके किसी भाग को जिसे निकाल दिया गया है, प्रकाशित करने पर प्रतिबंध लगा दे । कार्यवाही

67. ***शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण*,** ए. 1959 एस.सी. 393 (*409*) ।
68. **अनुच्छेद 143 के निर्देशाधीन,** ए. 1965 एस.सी. 745 (*760*) ।
69. ***जतीश* बनाम *हरिसाधन*,** ए. 1961 एस.सी. 613 · (1961) 3 एस.सी.आर. 486 ।

के जिस भाग को निकाल दिया जाता है वह सदन की कार्यवाही का भाग नहीं रहता और सदन के प्राधिकार के बिना उसका प्रकाशन करने से सदन का अवमान होता है ।[70]

खंड (3) : 42वें और 44वें संशोधन अधिनियम का प्रभाव — देखिए पीछे अनुच्छेद 105(3) । इस खंड के पाठ में जो परिवर्तन किए गए हैं उनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि—

जब तक विधान मंडल विधि बनाकर अपने विशेषाधिकार परिनिश्चित नहीं कर देता तब तक रिक्त स्थान तो नहीं रह सकता । अनुच्छेद 105 के खंड (3) में और (यथासंशोधित) अनुच्छेद 194 में यह उपबंध है कि जब तक ऐसा संविधान नहीं बनता तब तक प्रत्येक सदन के और उसकी समितियों के वही विशेषाधिकार होंगे जो 44वें संविधान संशोधन अधिनियम के प्रारंभ पर थे । दूसरे शब्दों में विद्यमान विशेषाधिकार तब तक चलते रहेंगे जब तक कि विधि द्वारा निश्चित किए गए विशेषाधिकार उनका स्थान नहीं ले लेते ।[71]

सदस्यों के वेतन और भत्ते ।

195. **राज्य की विधान सभा और विधान परिषद् के सदस्य ऐसे वेतन और भत्ते, जिन्हें उस राज्य का विधान मंडल, समय-समय पर, विधि द्वारा, अवधारित करे और जब तक इस संबंध में इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसे वेतन और भत्ते, ऐसी दरों से और ऐसी शर्तों पर, जो तत्स्थानी प्रांत की विधान सभा के सदस्यों को इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले लागू थीं, प्राप्त करने के हकदार होंगे ।**

विधायी प्रक्रिया

विधेयकों के पुरःस्थापन और पारित किए जाने के संबंध में उपबंध ।

196. (1) **धन विधेयकों और अन्य वित्त विधेयकों के संबंध में अनुच्छेद 198 और अनुच्छेद 207 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई विधेयक विधान परिषद् वाले राज्य के विधान मंडल के किसी भी सदन में आरंभ हो सकेगा ।**

(2) **अनुच्छेद 197 और अनुच्छेद 198 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, कोई विधेयक विधान परिषद् वाले राज्य के विधान मंडल के सदनों द्वारा तब तक पारित किया गया नहीं समझा जाएगा जब तक संशोधन के बिना या केवल ऐसे संशोधनों सहित, जिन पर दोनों सदन सहमत हो गए हैं, उस पर दोनों सदन सहमत नहीं हो जाते हैं ।**

(3) **किसी राज्य के विधान मंडल में लंबित विधेयक उसके सदन या सदनों के सत्रावसान के कारण व्यपगत नहीं होगा ।**

(4) **किसी राज्य की विधान परिषद् में लंबित विधेयक, जिसको विधान सभा ने पारित नहीं किया है, विधान सभा के विघटन पर व्यपगत नहीं होगा ।**

(5) **कोई विधेयक, जो किसी राज्य की विधान सभा में लंबित है या जो विधान सभा द्वारा पारित कर दिया गया है और विधान परिषद् में लंबित है, विधान सभा के विघटन पर व्यपगत हो जाएगा ।**

खंड (3) : लंबित विधेयकों पर सत्रावसान का प्रभाव — राज्य के विधान मंडल के किसी सदन में लंबित कोई विधेयक उसके सदन या सदनों के सत्रावसान के कारण व्यपगत नहीं होगा ।[72] यह कहने की आवश्यकता नहीं कि यदि कोई विधेयक दोनों सदनों ने पारित कर दिया है और राज्यपाल की अनुमति के लिए लंबित है तो वह व्यपगत नहीं होगा ।[72]

---

70. इस संशोधन ने *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण* में अभिव्यक्त मत को उलट दिया है, *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण*, ए. 1960 एस.सी. 1186 (*1191*) ।

71. तुलना कीजिए, अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश, ए. 1965 एस.सी. 745 (*791*); *राज्य* बनाम *सुदर्शन*, ए. 1984 केरल 1 (पैरा 29) ।

72. *पुरुषोत्तमन्* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 694 ।

197. (1) यदि विधान परिषद् वाले राज्य की विधान सभा द्वारा किसी विधेयक के पारित किए जाने और विधान परिषद् को पारेषित किए जाने के पश्चात् —

धन विधेयकों से भिन्न विधेयकों के बारे में विधान परिषद् की शक्तियों पर निर्बन्धन ।

(क) विधान परिषद् द्वारा विधेयक अस्वीकार कर दिया जाता है, या

(ख) विधान परिषद् के समक्ष विधेयक रखे जाने की तारीख से, उसके द्वारा विधेयक पारित किए बिना, तीन मास से अधिक बीत गए हैं, या

(ग) विधान परिषद् द्वारा विधेयक ऐसे संशोधनों सहित पारित किया जाता है जिनसे विधान सभा सहमत नहीं होती है,

तो विधान सभा विधेयक को, अपनी प्रक्रिया का विनियमन करने वाले नियमों के अधीन रहते हुए, उसी या किसी पश्चात्वर्ती सत्र में ऐसे संशोधनों सहित या उसके बिना, यदि कोई हों, जो विधान परिषद् ने किए हैं या जिनसे विधान परिषद् सहमत है, पुनः पारित कर सकेगी और तब इस प्रकार पारित विधेयक को विधान परिषद् को पारेषित कर सकेगी ।

(2) यदि विधान सभा द्वारा विधेयक इस प्रकार दुबारा पारित कर दिए जाने और विधान परिषद् को पारेषित किए जाने के पश्चात्, —

(क) विधान परिषद् द्वारा विधेयक अस्वीकार कर दिया जाता है, या

(ख) विधान परिषद् के समक्ष विधेयक रखे जाने की तारीख से, उसके द्वारा विधेयक पारित किए बिना, एक मास से अधिक बीत गया है, या

(ग) विधान परिषद् द्वारा विधेयक ऐसे संशोधनों सहित पारित किया जाता है जिनसे विधान सभा सहमत नहीं होती है,

तो विधेयक राज्य के विधान मंडल के सदनों द्वारा ऐसे संशोधनों सहित, यदि कोई हों, जो विधान परिषद् ने किए हैं या सुझाए हैं और जिनसे विधान सभा सहमत है, उस रूप में पारित किया गया समझा जाएगा जिसमें वह विधान सभा द्वारा दुबारा पारित किया गया था ।

(3) इस अनुच्छेद की कोई बात धन विधेयक को लागू नहीं होगी ।

198. (1) धन विधेयक विधान परिषद् में पुरःस्थापित नहीं किया जाएगा ।

धन विधेयकों के संबंध में विशेष प्रक्रिया ।

(2) धन विधेयक विधान परिषद् वाले राज्य की विधान सभा द्वारा पारित किए जाने के पश्चात् विधान परिषद् को उसकी सिफारिशों के लिए पारेषित किया जाएगा और विधान परिषद् विधेयक की प्राप्ति की तारीख से चौदह दिन की अवधि के भीतर विधेयक को अपनी सिफारिशों सहित विधान सभा को लौटा देगी और ऐसा होने पर विधान सभा, विधान परिषद् की सभी या किन्हीं सिफारिशों को स्वीकार या अस्वीकार कर सकेगी ।

(3) यदि विधान सभा, विधान परिषद् की किसी सिफारिश को स्वीकार कर लेती है तो धन विधेयक विधान परिषद् द्वारा सिफारिश किए गए और विधान सभा द्वारा स्वीकार किए गए संशोधनों सहित दोनों सदनों द्वारा पारित किया गया समझा जाएगा ।

(4) यदि विधान सभा, विधान परिषद् की किसी भी सिफारिश को स्वीकार नहीं करती है तो धन विधेयक विधान परिषद् द्वारा सिफारिश किए गए किसी संशोधन के बिना, दोनों सदनों द्वारा उस रूप में पारित किया गया समझा जाएगा जिसमें वह विधान सभा द्वारा पारित किया गया था ।

(5) यदि विधान सभा द्वारा पारित और विधान परिषद् को उसकी सिफारिशों के लिए पारेषित धन विधेयक उक्त चौदह दिन की अवधि के भीतर विधान सभा को नहीं लौटाया जाता है तो उक्त अवधि की समाप्ति पर वह दोनों सदनों द्वारा उस रूप में पारित किया गया समझा जाएगा जिसमें वह विधान सभा द्वारा पारित किया गया था ।

"धन विधेयक" की परिभाषा ।

199. (1) इस अध्याय के प्रयोजनों के लिए, कोई विधेयक धन विधेयक समझा जाएगा यदि उसमें केवल निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों से संबंधित उपबंध हैं, अर्थात् :—

(क) किसी कर का अधिरोपण, उत्सादन, परिहार, परिवर्तन या विनियमन;

(ख) राज्य द्वारा धन उधार लेने का या कोई प्रत्याभूति देने का विनियमन अथवा राज्य द्वारा अपने ऊपर ली गई या ली जाने वाली किन्हीं वित्तीय बाध्यताओं से संबंधित विधि का संशोधन;

(ग) राज्य की संचित निधि या आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी किसी निधि में धन जमा करना या उसमें से धन निकालना;

(घ) राज्य की संचित निधि में से धन का विनियोग;

(ङ) किसी व्यय को राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय घोषित करना या ऐसे किसी व्यय की रकम को बढ़ाना;

(च) राज्य की संचित निधि या राज्य के लोक लेखे मद्धे धन प्राप्त करना अथवा ऐसे धन की अभिरक्षा या उसका निर्गमन; या

(छ) उपखंड (क) से उपखंड (च) में विनिर्दिष्ट किसी विषय का आनुषंगिक कोई विषय ।

(2) कोई विधेयक केवल इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा, कि वह जुर्मानों या अन्य धनीय शास्तियों के अधिरोपण का अथवा अनुज्ञप्तियों के लिए फीसों की या की गई सेवाओं के लिए फीसों की मांग का या उनके संदाय का उपबंध करता है अथवा इस कारण धन विधेयक नहीं समझा जाएगा कि वह किसी स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा स्थानीय प्रयोजनों के लिए किसी कर के अधिरोपण, उत्सादन, परिहार, परिवर्तन या विनियमन का उपबंध करता है ।

(3) यदि यह प्रश्न उठता है कि विधान परिषद् वाले किसी राज्य के विधान मंडल में पुरःस्थापित कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं तो उस पर उस राज्य की विधान सभा के अध्यक्ष का विनिश्चय अंतिम होगा ।

(4) जब धन विधेयक अनुच्छेद 198 के अधीन विधान परिषद् को पारेषित किया जाता है और जब वह अनुच्छेद 200 के अधीन अनुमति के लिए राज्यपाल के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है तब प्रत्येक धन विधेयक पर विधान सभा के अध्यक्ष[73] के हस्ताक्षर सहित यह प्रमाण पृष्ठांकित किया जाएगा कि वह धन विधेयक है ।

विधेयकों पर अनुमति ।

200. जब कोई विधेयक राज्य की विधान सभा द्वारा या विधान परिषद् वाले राज्य में विधान मंडल के दोनों सदनों द्वारा पारित कर दिया गया है तब वह राज्यपाल के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा और राज्यपाल घोषित करेगा कि वह विधेयक पर अनुमति देता है या अनुमति रोक लेता है अथवा वह विधेयक को राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखता है :

परंतु राज्यपाल अनुमति के लिए अपने समक्ष विधेयक प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र उस विधेयक को, यदि वह धन विधेयक नहीं है तो, सदन या सदनों को इस संदेश के साथ लौटा सकेगा कि सदन या दोनों सदन विधेयक पर या उसके किन्हीं विनिर्दिष्ट उपबंधों पर पुनर्विचार करें और विशिष्टतया किन्हीं ऐसे संशोधनों के पुरःस्थापन की वांछनीयता पर विचार करें जिनकी उसने अपने संदेश में सिफारिश की है और जब विधेयक इस प्रकार लौटा दिया जाता है तब सदन या दोनों सदन विधेयक पर तदनुसार पुनर्विचार करेंगे और यदि विधेयक सदन या सदनों द्वारा संशोधन सहित या उसके बिना

73. उपाध्यक्ष का प्रमाणपत्र मान्य घोषित किया गया | *पंजाब राज्य* बनाम *सत्यपाल*, ए. 1969 एस.सी. 903 (*916*)] ।

फिर से पारित कर दिया जाता है और राज्यपाल के समक्ष अनुमति के लिए प्रस्तुत किया जाता है तो राज्यपाल उस पर अनुमति नहीं रोकेगा :

परंतु यह और कि जिस विधेयक से, उसके विधि बन जाने पर, राज्यपाल की राय में उच्च न्यायालय की शक्तियों का ऐसा अल्पीकरण होगा कि वह स्थान, जिसकी पूर्ति के लिए वह न्यायालय इस संविधान द्वारा परिकल्पित है, संकटापन्न हो जाएगा, उस विधेयक पर राज्यपाल अनुमति नहीं देगा, किंतु उसे राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखेगा ।

न्यायालय का हस्तक्षेप नहीं — 1 जब राज्यपाल की अनुमति के लिए कोई विधेयक प्रस्तुत कर दिया जाता है तब अनुच्छेद 212 के कारण कोई न्यायालय इस आधार पर हस्तक्षेप नही कर सकता कि वह सम्यक् रूप मे पारित नही किया गया है ।[74]

2 राज्यपाल की अनुमति और विधेयक का आरक्षित किया जाना ऐसे विषय हैं जिन पर न्यायालय निर्णय नहीं दे सकता ।[75, 76]

राज्यपाल की घोषणा के लिए कोई समय सीमा नहीं है — संविधान मे इन घोषणाओं के किए जाने के लिए राज्यपाल पर कोई समय सीमा नही है । यदि वह कोई विधेयक अनिश्चित काल तक अपने पास लंबित रखता है तो उसे विवश करने का कोई उपाय नहीं है ।[77]

राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित करना — 1 अनुच्छेद 200 में यह व्यवस्था नहीं है कि राज्यपाल पहले अपनी अनुमति देगा और जब वह पूरी तरह से विधि बन जाए तब उसे राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित करेगा । आरक्षित करना आनकल्पिक है । वह अनुमति देगा या नहीं देगा और अनुकल्प के रूप में आरक्षित करेगा । जिन विषयो में आरक्षण अनिवार्य है उनमे राज्यपाल को अनुमति देने से प्रतिषिद्ध किया गया है ।[78]

2 राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित करने का कार्य, राज्यपाल अपने विवेकानुसार करेगा और उसके औचित्य को न्यायालय मे प्रश्नगत नही किया जा सकता ।[76]

3 राष्ट्रपति के पास आरक्षित विधेयक आ जाने पर वह अपनी अनुमति देने के पूर्व उसे अनुच्छेद 143 के अधीन उच्चतम न्यायालय को निर्दिष्ट कर सकता है यदि उसमें कोई सांविधानिक प्रश्न अंतर्वलित है ।[79]

विचार के लिए आरक्षित विधेयक ।

201. **जब कोई विधेयक राज्यपाल द्वारा राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रख लिया जाता है तब राष्ट्रपति घोषित करेगा कि वह विधेयक पर अनुमति देता है या अनुमति रोक लेता है :**

परंतु जहां विधेयक धन विधेयक नहीं है वहां राष्ट्रपति राज्यपाल को यह निदेश दे सकेगा कि वह विधेयक को, यथास्थिति, राज्य के विधान मंडल के सदन या सदनों को ऐसे संदेश के साथ, जो अनुच्छेद 200 के पहले परंतुक में वर्णित है, लौटा दे और जब कोई विधेयक इस प्रकार लौटा दिया जाता है तब ऐसा संदेश मिलने की तारीख से छह मास की अवधि के भीतर सदन या सदनों द्वारा उस पर तदनुसार पुनर्विचार किया जाएगा और यदि वह सदन या सदनों द्वारा संशोधन सहित या उसके बिना फिर से पारित कर दिया जाता है तो उसे राष्ट्रपति के समक्ष उसके विचार के लिए फिर से प्रस्तुत किया जाएगा ।

74. *रामचन्द्र* बनाम *आंध्र प्रदेश प्रादेशिक समिति*, ए 1965 आंध्र प्रदेश 305 (*314*) ।
75. *भारत सेवाश्रम* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 494 (पैरा 6) ।
76. *हेक्स्ट* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1983 एस.सी. 1019 (पैरा 89) ।
77. *पुरुषोत्तमन्* बनाम *केरल राज्य*, ए 1962 एस.सी. 694 (*701-02*) ।
78. *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए. 1952 एस.सी. 252 (*265*) ।
79. तुलना कीजिए, केरल शिक्षा विधेयक का मामला, ए. 1958 एस.सी. 956 ।

वित्तीय विषयों के संबंध में प्रक्रिया

वार्षिक वित्तीय विवरण ।

202. (1) राज्यपाल प्रत्येक वित्तीय वर्ष के संबंध में राज्य के विधान मंडल के सदन या सदनों के समक्ष उस राज्य की उस वर्ष के लिए प्राक्कलित प्राप्तियों और व्यय का विवरण रखवाएगा जिसे इस भाग में "वार्षिक वित्तीय विवरण" कहा गया है ।

(2) वार्षिक वित्तीय विवरण में दिए हुए व्यय के प्राक्कलनों में —

(क) इस संविधान में राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय के रूप में वर्णित व्यय की पूर्ति के लिए अपेक्षित राशियां, और

(ख) राज्य की संचित निधि में से किए जाने के लिए प्रस्थापित अन्य व्यय की पूर्ति के लिए अपेक्षित राशियां,

पृथक्-पृथक् दिखाई जाएंगी और राजस्व लेखे होने वाले व्यय का अन्य व्यय से भेद किया जाएगा ।

(3) निम्नलिखित व्यय प्रत्येक राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय होगा, अर्थात् :—

(क) राज्यपाल की उपलब्धियां और भत्ते तथा उसके पद से संबंधित अन्य व्यय;

(ख) विधान सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के तथा विधान परिषद् वाले राज्य की दशा में विधान परिषद् के सभापति और उपसभापति के भी वेतन और भत्ते;

(ग) ऐसे ऋण भार जिनका दायित्व राज्य पर है, जिनके अंतर्गत ब्याज, निक्षेप निधि भार और मोचन भार तथा उधार लेने और ऋण सेवा और ऋण मोचन से संबंधित अन्य व्यय हैं;

(घ) किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों और भत्तों के संबंध में व्यय;

(ङ) किसी न्यायालय या माध्यस्थम् अधिकरण के निर्णय, डिक्री या पंचाट की तुष्टि के लिए अपेक्षित राशियां;

(च) कोई अन्य व्यय जो इस संविधान द्वारा या राज्य के विधान मंडल द्वारा, विधि द्वारा, इस प्रकार भारित घोषित किया जाता है ।

विधान मंडल में प्राक्कलनों के संबंध में प्रक्रिया ।

203. (1) प्राक्कलनों में से जितने प्राक्कलन राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय से संबंधित हैं वे विधान सभा में मतदान के लिए नहीं रखे जाएंगे, किंतु इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह विधान मंडल में उन प्राक्कलनों में से किसी प्राक्कलन पर चर्चा को निवारित करती है ।

(2) उक्त प्राक्कलनों में से जितने प्राक्कलन अन्य व्यय से संबंधित हैं वे विधान सभा के समक्ष अनुदानों की मांगों के रूप में रखे जाएंगे और विधान सभा को शक्ति होगी कि वह किसी मांग को अनुमति दे या अनुमति देने से इंकार कर दे अथवा किसी मांग को, उसमें विनिर्दिष्ट रकम को कम करके, अनुमति दे ।

(3) किसी अनुदान की मांग राज्यपाल की सिफारिश पर ही की जाएगी, अन्यथा नहीं ।

विनियोग विधेयक ।

204. (1) विधान सभा द्वारा अनुच्छेद 203 के अधीन अनुदान किए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, राज्य की संचित निधि में से —

(क) विधान सभा द्वारा इस प्रकार किए गए अनुदानों की, और

(ख) राज्य की संचित निधि पर भारित, किंतु सदन या सदनों के समक्ष पहले रखे गए विवरण में दर्शित रकम से किसी भी दशा में अनधिक व्यय की,

पूर्ति के लिए अपेक्षित सभी धनराशियों के विनियोग का उपबंध करने के लिए विधेयक पुरःस्थापित किया जाएगा ।

(2) इस प्रकार किए गए किसी अनुदान की रकम में परिवर्तन करने या अनुदान के लक्ष्य को बदलने अथवा राज्य की संचित निधि पर भारित व्यय की रकम में परिवर्तन करने का प्रभाव रखने वाला कोई संशोधन, ऐसे किसी विधेयक में राज्य के विधान मंडल के सदन में या किसी सदन में प्रस्थापित नहीं किया जाएगा और पीठासीन व्यक्ति का इस बारे में विनिश्चय अंतिम होगा कि कोई संशोधन इस खंड के अधीन अग्राह्य है या नहीं ।

(3) अनुच्छेद 205 और अनुच्छेद 206 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य की संचित निधि में से इस अनुच्छेद के उपबंधों के अनुसार पारित विधि द्वारा किए गए विनियोग के अधीन ही कोई धन निकाला जाएगा, अन्यथा नहीं ।

अनुपूरक, अतिरिक्त या अधिक अनुदान ।

205. (1) यदि —

(क) अनुच्छेद 204 के उपबंधों के अनुसार बनाई गई किसी विधि द्वारा किसी विशिष्ट सेवा पर चालू वित्तीय वर्ष के लिए व्यय किए जाने के लिए प्राधिकृत कोई रकम उस वर्ष के प्रयोजनों के लिए अपर्याप्त पाई जाती है या उस वर्ष के वार्षिक वित्तीय विवरण में अनुध्यात न की गई किसी नई सेवा पर अनुपूरक या अतिरिक्त व्यय की चालू वित्तीय वर्ष के दौरान आवश्यकता पैदा हो गई है, या

(ख) किसी वित्तीय वर्ष के दौरान किसी सेवा पर उस वर्ष और उस सेवा के लिए अनुदान की गई रकम से अधिक कोई धन व्यय हो गया है,

तो राज्यपाल, यथास्थिति, राज्य के विधान मंडल के सदन या सदनों के समक्ष उस व्यय की प्राक्कलित रकम को दर्शित करने वाला दूसरा विवरण रखवाएगा या राज्य की विधान सभा में ऐसे आधिक्य के लिए मांग प्रस्तुत करवाएगा ।

(2) ऐसे किसी विवरण और व्यय या मांग के संबंध में तथा राज्य की संचित निधि में से ऐसे व्यय या ऐसी मांग से संबंधित अनुदान की पूर्ति के लिए धन का विनियोग प्राधिकृत करने के लिए बनाई जाने वाली किसी विधि के संबंध में भी, अनुच्छेद 202, अनुच्छेद 203 और अनुच्छेद 204 के उपबंध वैसे ही प्रभावी होंगे जैसे वे वार्षिक वित्तीय विवरण और उसमें वर्णित व्यय के संबंध में या किसी अनुदान की किसी मांग के संबंध में और राज्य की संचित निधि में से ऐसे व्यय या अनुदान की पूर्ति के लिए धन का विनियोग प्राधिकृत करने के लिए बनाई जाने वाली विधि के संबंध में प्रभावी हैं ।

लेखानुदान, प्रत्ययानुदान और अपवादानुदान ।

206. (1) इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य की विधान सभा को —

(क) किसी वित्तीय वर्ष के भाग के लिए प्राक्कलित व्यय के संबंध में कोई अनुदान, उस अनुदान के लिए मतदान करने के लिए अनुच्छेद 203 में विहित प्रक्रिया के पूरा होने तक और उस व्यय के संबंध में अनुच्छेद 204 के उपबंधों के अनुसार विधि के पारित होने तक, अग्रिम देने की,

(ख) जब किसी सेवा की महत्ता या उसके अनिश्चित रूप के कारण मांग ऐसे ब्यौरे के साथ वर्णित नहीं की जा सकती है जो वार्षिक वित्तीय विवरण में सामान्यतया दिया जाता है तब राज्य के संपत्ति स्रोतों पर अप्रत्याशित मांग की पूर्ति के लिए अनुदान करने की,

(ग) किसी वित्तीय वर्ष की चालू सेवा का जो अनुदान भाग नहीं है ऐसा कोई अपवादानुदान करने की,

शक्ति होगी और जिन प्रयोजनों के लिए उक्त अनुदान किए गए हैं उनके लिए राज्य की संचित निधि में से धन निकालना विधि द्वारा प्राधिकृत करने की राज्य के विधान मंडल को शक्ति होगी ।

(2) खंड (1) के अधीन किए जाने वाले किसी अनुदान और उस खंड के अधीन बनाई जाने वाली किसी विधि के संबंध में अनुच्छेद 203 और अनुच्छेद 204 के उपबंध वैसे ही प्रभावी होंगे

जैसे वे वार्षिक वित्तीय विवरण में वर्णित किसी व्यय के बारे में कोई अनुदान करने के संबंध में और राज्य की संचित निधि में से ऐसे व्यय की पूर्ति के लिए धन का विनियोग प्राधिकृत करने के लिए बनाई जाने वाली विधि के संबंध में प्रभावी हैं ।

वित्त विधेयकों के बारे में विशेष उपबंध ।

207 (1) अनुच्छेद 199 के खंड (1) के उपखंड (क) से उपखंड (च) में विनिर्दिष्ट किसी विषय के लिए उपबंध करने वाला विधेयक या संशोधन राज्यपाल की सिफारिश से ही पुरःस्थापित या प्रस्तावित किया जाएगा, अन्यथा नहीं और ऐसा उपबंध करने वाला विधेयक विधान परिषद् में पुरःस्थापित नहीं किया जाएगा

परंतु किसी कर के घटाने या उत्सादन के लिए उपबंध करने वाले किसी संशोधन के प्रस्ताव के लिए इस खंड के अधीन सिफारिश की अपेक्षा नहीं होगी ।

(2) कोई विधेयक या संशोधन उक्त विषयों में से किसी विषय के लिए उपबंध करने वाला केवल इस कारण नहीं समझा जाएगा कि वह जुर्मानों या अन्य धनीय शास्तियों के अधिरोपण का अथवा अनुज्ञप्तियों के लिए फीसों की या की गई सेवाओं के लिए फीसों की मांग का या उनके संदाय का उपबंध करता है अथवा इस कारण नहीं समझा जाएगा कि वह किसी स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा स्थानीय प्रयोजनों के लिए किसी कर के अधिरोपण, उत्सादन, परिहार, परिवर्तन या विनियमन का उपबंध करता है ।

(3) जिस विधेयक को अधिनियमित और प्रवर्तित किए जाने पर राज्य की संचित निधि में से व्यय करना पड़ेगा वह विधेयक राज्य के विधान मंडल के किसी सदन द्वारा तब तक पारित नहीं किया जाएगा जब तक ऐसे विधेयक पर विचार करने के लिए उस सदन से राज्यपाल ने सिफारिश नहीं की है ।

साधारणतया प्रक्रिया

प्रक्रिया के नियम ।

208 (1) इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान मंडल का कोई सदन अपनी प्रक्रिया ***[80] और अपने कार्य संचालन के विनियमन के लिए नियम बना सकेगा ।

(2) जब तक खंड (1) के अधीन नियम नहीं बनाए जाते हैं तब तक इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रांत के विधान मंडल के संबंध में जो प्रक्रिया के नियम और स्थायी आदेश प्रवृत्त थे वे ऐसे उपांतरणों और अनुकूलनों के अधीन रहते हुए उस राज्य के विधान मंडल के संबंध में प्रभावी होंगे जिन्हें, यथास्थिति, विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति उनमें करे ।

(3) राज्यपाल, विधान परिषद् वाले राज्य में विधान सभा के अध्यक्ष और विधान परिषद् के सभापति से परामर्श करने के पश्चात्, दोनों सदनों में परस्पर संचार से संबंधित प्रक्रिया के नियम बना सकेगा ।

प्रक्रिया के नियम — देखिए पीछे अनुच्छेद 118 ।

राज्य के विधान मंडल में वित्तीय कार्य संबंधी प्रक्रिया का विधि द्वारा विनियमन ।

209. किसी राज्य का विधान मंडल, वित्तीय कार्य को समय के भीतर पूरा करने के प्रयोजन के लिए किसी वित्तीय विषय से संबंधित या राज्य की संचित निधि में से धन का विनियोग करने के लिए किसी विधेयक से संबंधित, राज्य के विधान मंडल के सदन या सदनों की प्रक्रिया और कार्य संचालन का विनियमन विधि द्वारा कर सकेगा तथा यदि और जहां तक इस

---

80 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित किंतु संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा लोप किया गया ।

प्रकार बनाई गई किसी विधि का कोई उपबंध अनुच्छेद 208 के खंड (1) के अधीन राज्य के विधान मंडल के सदन या किसी सदन द्वारा बनाए गए नियम से या उस अनुच्छेद के खंड (2) के अधीन राज्य के विधान मंडल के संबंध में प्रभावी किसी नियम या स्थायी आदेश से असंगत है तो और वहां तक ऐसा उपबंध अभिभावी होगा ।

अनुच्छेद 209 के अधीन विधि की प्रधानता — इस अनुच्छेद के अधीन विधिमान्य रूप से बनाई गई विधि या अध्यादेश विधान मंडल के नियमों पर अभिभावी होगा और विधान मंडल की या अध्यक्ष की सत्र को स्थगित करने की शक्ति का प्रयोग नहीं हो सकता ।[81]

विधान मंडल में प्रयोग की जाने वाली भाषा ।

210. (1) भाग 17 में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 348 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान मंडल में कार्य राज्य की राजभाषा या राजभाषाओं में या हिंदी में या अंग्रेजी में किया जाएगा :

परंतु, यथास्थिति, विधान सभा का अध्यक्ष या विधान परिषद् का सभापति अथवा उस रूप में कार्य करने वाला व्यक्ति किसी सदस्य को, जो पूर्वोक्त भाषाओं में से किसी भाषा में अपनी पर्याप्त अभिव्यक्ति नहीं कर सकता है, अपनी मातृभाषा में सदन को संबोधित करने की अनुज्ञा दे सकेगा ।

(2) जब तक राज्य का विधान मंडल विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि की समाप्ति के पश्चात् यह अनुच्छेद ऐसे प्रभावी होगा मानो "या अंग्रेजी में" शब्दों का उसमें से लोप कर दिया गया हो

[81क][परंतु [81ख][हिमाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय और त्रिपुरा राज्यों के विधान मंडलों] के संबंध में, यह खंड इस प्रकार प्रभावी होगा मानो इसमें आने वाले "पंद्रह वर्ष" शब्दों के स्थान पर "पच्चीस वर्ष" शब्द रख दिए गए हों :]

[81ग][परंतु यह और कि [81घ-81ङ][अरुणाचल प्रदेश, गोवा और मिजोरम राज्यों के विधान मंडलों] के संबंध में यह खंड इस प्रकार प्रभावी होगा मानो इसमें आने वाले "पंद्रह वर्ष" शब्दों के स्थान पर "चालीस वर्ष" शब्द रख दिए गए हों] ।

विधान मंडल में चर्चा पर निर्बन्धन ।

211. उच्चतम न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश के, अपने कर्तव्यों के निर्वहन में किए गए, आचरण के विषय में राज्य के विधान मंडल में कोई चर्चा नहीं होगी ।

न्यायालयों द्वारा विधान मंडल की कार्यवाहियों की जांच न किया जाना ।

212. (1) राज्य के विधान मंडल की किसी कार्यवाही की विधिमान्यता को प्रक्रिया की किसी अभिकथित अनियमितता के आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।

(2) राज्य के विधान मंडल का कोई अधिकारी या सदस्य, जिसमें इस संविधान द्वारा या इसके अधीन उस विधान मंडल में प्रक्रिया या कार्य संचालन का विनियमन करने की अथवा व्यवस्था बनाए रखने की शक्तियां निहित हैं,

81 *पंजाब राज्य* बनाम *सत्यपाल*, ए 1969 एस सी 903 (*913*) ।

81क हिमाचल प्रदेश राज्य अधिनियम, 1970 की धारा 46 द्वारा तारीख 25-1-1971 से अंतःस्थापित ।

81ख. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 की धारा 71 द्वारा तारीख 21-1-1972 से "हिमाचल प्रदेश राज्य के विधान मंडल" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

81ग मिजोरम राज्य अधिनियम की धारा 39 द्वारा तारीख 20-2-1987 से अंतःस्थापित ।

81घ. अरुणाचल प्रदेश अधिनियम, 1986 की धारा 42 द्वारा तारीख 20-2-1987 से प्रतिस्थापित ।

81ङ. गोवा, दमण और दीव पुनर्गठन अधिनियम, 1987 द्वारा तारीख 30-5-1987 से प्रतिस्थापित ।

उन शक्तियों के अपने द्वारा प्रयोग के विषय में किसी न्यायालय की अधिकारिता के अधीन नहीं होगा ।

खंड (1) : न्यायालयों द्वारा विधान मंडल की कार्यवाहियों की जांच न किया जाना — उपर्युक्त खंड से यह स्पष्ट है कि —

(i) जब अध्यक्ष किसी विधेयक पर यह पृष्ठांकन कर देता है कि वह पारित हो गया है तो न्यायालय में वह इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जा सकता कि विधान मंडल की कार्यवाहियों में यह अभिलिखित नहीं है कि कार्य संचालन नियमों के अनुसार वह प्ररूपिक तौर से सदन के समक्ष उपस्थित किया गया था और पारित हुआ था ।[82] या इस आधार पर कि आपात विधियों के अधीन कुछ सदस्य निरुद्ध थे और इस कारण उपस्थित होने में असमर्थ थे ।[83]

(ii) विधान मंडल के भीतर की कार्यवाहियों को इस आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जा सकता कि वे कार्य संचालन के नियमों के अनुसार नहीं की गई हैं ।[84]

जैसे,

विधान मंडल के अध्यक्ष द्वारा विशेषाधिकार भंग के लिए जारी की गई अधिसूचना उच्चतम न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय द्वारा इस आधार पर विखंडित नहीं की जा सकती कि विधान मंडल ने विशेषाधिकार भंग के लिए अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया है ।[84]

न्यायिक हस्तक्षेप से उन्मुक्ति प्रक्रिया में अनियमितता तक ही सीमित है । यदि अधिकारिता का अभाव है तो उन्मुक्ति नहीं मिलेगी ।[84] जैसे, यदि संविधान के आज्ञापक उपबंधों की अवहेलना हुई है[81] या विधान मंडल ने ऐसी शक्ति का प्रयोग किया है जो उसे दी ही नहीं गई है,[84-85] या विधिमान्य और आबद्धकर विधि का उल्लंघन हुआ है[81] या अनुच्छेद 368 में अधिकथित प्रक्रिया के उल्लंघन में संविधान संशोधन पारित किया गया है ।[83]

किंतु एक या अधिक सदस्यों की अनुपस्थिति से सदन की बैठक की विधिमान्यता या सदन की अधिकारिता पर प्रभाव नहीं पड़ता ।[83]

खंड (2) : विधान मंडल के अधिकारी द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियां — अध्यक्ष द्वारा प्रक्रिया के नियमों का त्रुटिपूर्ण निर्वचन या गलत विनिश्चय न्यायालय द्वारा संवीक्षा के विषय नहीं हो सकते । उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय, विधान मंडल या अध्यक्ष की व्यवस्था या सदन में की कार्यवाही की बाबत पुनरीक्षण करने वाले न्यायालय नहीं हैं ।[86]

यह उन्मुक्ति प्रक्रिया के विषयों तक ही सीमित है । विधान मंडल के गठन से संबंधित विषय इसमें नहीं आते । जैसे—लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 74 के अधीन अधिसूचना का अभाव[87] या कोई बात जो असांविधानिक है ।[88]

82 *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए 1952 एस.सी 252 (*266*) ।

83. *इन्दिरा* बनाम *राजनारायण*, ए. 1975 एस.सी. 2299 (पैरा 180, 509) ।

84. *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण (II)*, ए. 1960 एस.सी. 1186 (*1189*) ।

85. संविधान के अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश, ए. 1965 एस.सी. 745 (*768*) ।

86. मधुलिमये की लोक सभा के अध्यक्ष के विरुद्ध रिट याचिका पंजाब उच्च न्यायालय द्वारा नामंजूर किए जाने के विनिश्चय पर उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील करने की विशेष इजाजत देने से इंकार [*स्टेट्समैन*, तारीख 26-11-1965, पृष्ठ 7]; *जय सिंह* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1970 पंजाब और हरियाणा 379 (एफ.बी.) ।

87. तुलना कीजिए, *विनोद* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 223 ।

88. *राज्य* बनाम *सुदर्शन*, ए. 1984 केरल 1 (पैरा 29) ।

अध्याय 4 — राज्यपाल की विधायी शक्ति

विधान मंडल के विश्रांतिकाल में अध्यादेश प्रख्यापित करने की राज्यपाल की शक्ति ।

213. (1) उस समय को छोड़कर जब किसी राज्य की विधान सभा सत्र में है या विधान परिषद् वाले राज्य में विधान मंडल के दोनों सदन सत्र में हैं, यदि किसी समय राज्यपाल का यह समाधान हो जाता है कि ऐसी परिस्थितियां विद्यमान हैं जिनके कारण तुरंत कार्रवाई करना उसके लिए आवश्यक हो गया है तो वह ऐसे अध्यादेश प्रख्यापित कर सकेगा जो उसे उन परिस्थितियों में अपेक्षित प्रतीत हों :

परंतु राज्यपाल, राष्ट्रपति के अनुदेशों के बिना, कोई ऐसा अध्यादेश प्रख्यापित नहीं करेगा यदि —

(क) वैसे ही उपबंध अंतर्विष्ट करने वाले विधेयक को विधान मंडल में पुरःस्थापित किए जाने के लिए राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी की अपेक्षा इस संविधान के अधीन होती; या

(ख) वह वैसे ही उपबंध अंतर्विष्ट करने वाले विधेयक को राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखना आवश्यक समझता; या

(ग) वैसे ही उपबंध अंतर्विष्ट करने वाला राज्य के विधान मंडल का अधिनियम इस संविधान के अधीन तब तक अविधिमान्य होता जब तक राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखे जाने पर उसे राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त नहीं हो गई होती ।

(2) इस अनुच्छेद के अधीन प्रख्यापित अध्यादेश का वही बल और प्रभाव होगा जो राज्य के विधान मंडल के ऐसे अधिनियम का होता है जिसे राज्यपाल ने अनुमति दे दी है, किंतु प्रत्येक ऐसा अध्यादेश —

(क) राज्य की विधान सभा के समक्ष और विधान परिषद् वाले राज्य में दोनों सदनों के समक्ष रखा जाएगा तथा विधान मंडल के पुनः समवेत होने से छह सप्ताह की समाप्ति पर या यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले विधान सभा उसके अननुमोदन का संकल्प पारित कर देती है और यदि विधान परिषद् है तो वह उससे सहमत हो जाती है तो, यथास्थिति, संकल्प के पारित होने पर या विधान परिषद् द्वारा संकल्प से सहमत होने पर प्रवर्तन में नहीं रहेगा; और

(ख) राज्यपाल द्वारा किसी भी समय वापस लिया जा सकेगा ।

स्पष्टीकरण — **जहां विधान परिषद् वाले राज्य के विधान मंडल के सदन, भिन्न-भिन्न तारीखों को पुनः समवेत होने के लिए, आहूत किए जाते हैं वहां इस खंड के प्रयोजनों के लिए, छह सप्ताह की अवधि की गणना उन तारीखों में से पश्चात्‌वर्ती तारीख से की जाएगी ।**

(3) यदि और जहां तक इस अनुच्छेद के अधीन अध्यादेश कोई ऐसा उपबंध करता है जो राज्य के विधान मंडल के ऐसे अधिनियम में, जिसे राज्यपाल ने अनुमति दे दी है, अधिनियमित किए जाने पर विधिमान्य नहीं होता तो और वहां तक वह अध्यादेश शून्य होगा :

परंतु राज्य के विधान मंडल के ऐसे अधिनियम के, जो समवर्ती सूची में प्रगणित किसी विषय के बारे में संसद् के किसी अधिनियम या किसी विद्यमान विधि के विरुद्ध है, प्रभाव से संबंधित इस संविधान के उपबंधों के प्रयोजनों के लिए यह है कि कोई अध्यादेश, जो राष्ट्रपति के अनुदेशों के अनुसरण में इस अनुच्छेद के अधीन प्रख्यापित किया जाता है, राज्य के विधान मंडल का ऐसा अधिनियम समझा जाएगा जो राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखा गया था और जिसे उसने अनुमति दे दी है ।

[89]* * *

खंड (1) : 'राज्यपाल का यह समाधान हो जाता है' — यहां भी वही स्थिति है जैसी राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए अध्यादेश में है । न्यायालय, राज्यपाल द्वारा बनाए गए अध्यादेश

89. संविधान (अड़तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से जो खंड (4) अंतःस्थापित किया गया उसका संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से लोप किया गया ।

की विधिमान्यता को इस आधार पर प्रश्नगत नहीं कर सकते कि अध्यादेश प्रख्यापित करने के लिए पर्याप्त कारण नहीं थे ।[90]

किंतु यदि राज्यपाल ने (क) संविधान के किसी उपबंध का उल्लंघन किया है; या (ख) अध्यादेश बनाने की अपनी शक्ति के बाहर कार्य किया है; या (ग) अपनी शक्ति का आभासी उपयोग किया है जैसे राजनैतिक उद्देश्य से, तो न्यायालय अध्यादेश को अभिखंडित कर देगा ।[90]

यदि इस अनुच्छेद के खंड (2)(क) द्वारा अधिकथित 6 सप्ताह की अवधि के पूर्व राज्यपाल ने अध्यादेश के स्थान पर विधान मंडल का अधिनियम लाने के पहले अध्यादेश पुनः प्रख्यापित कर दिया है (चाहे विधान मंडल के लिए ऐसा विधान बनाना संभव रहा हो) जिससे कि विधान मंडल के कार्य की आवश्यकता न रहे तथा ऐसा प्रायः किया जाता है तो न्यायालय पुनः प्रख्यापित अध्यादेश को विखंडित कर देगा क्योंकि यह संविधान के साथ कपट है ।[90]

यह एक अनिवार्य शर्त है कि इस शक्ति का प्रयोग तभी होगा जब दोनों में से कोई सदन सत्र में नहीं हैं । किंतु राज्यपाल अध्यादेश निकालने के लिए विधान मंडल का या किसी सदन का सत्रावसान कर सकता है ।[91]

अध्याय 5 — राज्यों के उच्च न्यायालय

राज्यों के लिए उच्च न्यायालय ।

214. [92]*** **प्रत्येक राज्य के लिए एक उच्च न्यायालय होगा ।**

उच्च न्यायालयों का अभिलेख न्यायालय होना ।

215. प्रत्येक उच्च न्यायालय अभिलेख न्यायालय होगा और उसको अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति सहित ऐसे न्यायालय की सभी शक्तियां होंगी ।

'अभिलेख न्यायालय' — अभिलेख न्यायालय के निम्नलिखित अनुषंग हैं —

(i) उसे अपनी अधिकारिता के बारे में प्रश्नों का अवधारण करने की शक्ति होती है ।[93]

(ii) उसे अपने अवमान के लिए संक्षिप्ततः दंड देने की अंतर्निहित शक्ति होती है ।[94]

अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया — उच्च न्यायालय अपने अवमान के मामले पर संक्षिप्त विचारण कर सकता है । वह अपनी प्रक्रिया भी तय कर सकता है । बस इतना ही है कि प्रक्रिया ऋजु होनी चाहिए और अवमानकर्ता को अपनी प्रतिरक्षा के लिए पर्याप्त अवसर मिलना चाहिए । ऐसी कार्यवाही को दंड प्रक्रिया संहिता या भारतीय दंड संहिता लागू नहीं होती ।[94] उसे अपनी शक्ति के उचित प्रयोग के लिए आवश्यक सभी शक्तियां होती हैं ।[95]

किंतु इस अनुच्छेद को न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971 के उपबंधों के साथ पढ़ना चाहिए ।

90. *वाधवा* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 579 (पैरा 6-8) ।

91 *पंजाब राज्य* बनाम *सत्यपाल*, ए. 1969 एस.सी. 903 (*912*) ।

92. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा खंड (2) और (3) का लोप किया गया ।

93. विशेष निर्देश 1964 का 1, (1965) 1 एस.सी.आर. 413 (*499*); *नरेश* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1 (*17-18*) ।

94. *सुखदेव* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, (1954) एस.सी.आर. 454 (*463*); *कपूर* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 858 (*860*) ।

95. *पीटरसन* बनाम *फोर्बस*, ए. 1963 एस.सी. 692 (*697*) ।

उच्च न्यायालयों का गठन ।

216. प्रत्येक उच्च न्यायालय मुख्य न्यायमूर्ति और ऐसे अन्य न्यायाधीशों से मिलकर बनेगा जिन्हें राष्ट्रपति समय-समय पर नियुक्त करना आवश्यक समझे ।

[96]* * *

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति और उसके पद की शर्तें ।

217. (1) **भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से, उस राज्य के राज्यपाल से और मुख्य न्यायमूर्ति से भिन्न किसी न्यायाधीश की नियुक्ति की दशा में उस उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करने के पश्चात्, राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा उच्च न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को नियुक्त करेगा और वह न्यायाधीश** [97][*अपर या कार्यकारी न्यायाधीश की दशा में अनुच्छेद 224 में उपबंधित रूप में पद धारण करेगा और किसी अन्य दशा में तब तक पद धारण करेगा जब तक वह* [98][*बासठ वर्ष*] *की आयु प्राप्त नहीं कर लेता है*] :

परंतु —

(क) कोई न्यायाधीश, राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा;

(ख) किसी न्यायाधीश को उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाने के लिए अनुच्छेद 124 के खंड (4) में उपबंधित रीति से उसके पद से राष्ट्रपति द्वारा हटाया जा सकेगा;

(ग) किसी न्यायाधीश का पद, राष्ट्रपति द्वारा उसे उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किए जाने पर या राष्ट्रपति द्वारा उसे भारत के राज्यक्षेत्र में किसी अन्य उच्च न्यायालय को अंतरित किए जाने पर रिक्त हो जाएगा ।

(2) कोई व्यक्ति, किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के लिए तभी अर्हित होगा जब वह भारत का नागरिक है और —

(क) भारत के राज्यक्षेत्र में कम से कम दस वर्ष तक न्यायिक पद धारण कर चुका है, या

(ख) किसी [99]* * * उच्च न्यायालय का या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों का लगातार कम से कम दस वर्ष तक अधिवक्ता रहा है; * * *[100]

स्पष्टीकरण — इस खंड के प्रयोजनों के लिए —

[1]*(क) भारत के राज्यक्षेत्र मे न्यायिक पद धारण करने की अवधि की संगणना करने में वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान कोई व्यक्ति न्यायिक पद धारण करने के पश्चात् किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है या उसने किसी अधिकरण के सदस्य का पद धारण किया है अथवा संघ या राज्य के अधीन कोई ऐसा पद धारण किया है जिसके लिए विधि का विशेष ज्ञान अपेक्षित है;*

---

96. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा परंतुक का लोप किया गया ।

97. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "तब तक पद धारण करेगा जब तक कि वह साठ वर्ष की आयु प्राप्त न कर ले" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

98. संविधान (पन्द्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा तारीख 6-10-1963 से "साठ" शब्द के स्थान पर "बासठ" शब्द प्रतिस्थापित किया गया ।

99 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट किसी राज्य में के" शब्दों का लोप किया गया ।

100. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से जो उपखंड (ग) अंतःस्थापित किया गया था, उसका संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से लोप किया गया और पश्चात्वर्ती अधिनियम द्वारा उपखंड (ख) के अंत में आने वाले शब्द "या" का भी लोप किया गया ।

1. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से नया खंड (क) अंतःस्थापित किया गया और मूल खंड (क) को खंड (कक) के रूप में पुनःअक्षरांकित किया गया ।

[1][**(कक)] किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहने की अवधि की संगणना करने में वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान किसी व्यक्ति ने अधिवक्ता होने के पश्चात्** [2]*न्यायिक पद धारण किया है या किसी अधिकरण के सदस्य का पद धारण किया है अथवा संघ या राज्य के अधीन कोई ऐसा पद धारण किया है जिसके लिए विधि का विशेष ज्ञान अपेक्षित है;*

(ख) भारत के राज्यक्षेत्र में न्यायिक पद धारण करने या किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहने की अवधि की संगणना करने में इस संविधान के प्रारंभ से पहले की वह अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान किसी व्यक्ति ने, यथास्थिति, ऐसे क्षेत्र में जो 15 अगस्त, 1947 से पहले भारत शासन अधिनियम, 1935 में परिभाषित भारत में समाविष्ट था, न्यायिक पद धारण किया है या वह ऐसे किसी क्षेत्र में किसी उच्च न्यायालय का अधिवक्ता रहा है ।

[3]*(3) यदि उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश की आयु के बारे में कोई प्रश्न उठता है तो उस प्रश्न का विनिश्चय भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करने के पश्चात् राष्ट्रपति द्वारा किया जाएगा और राष्ट्रपति का विनिश्चय अंतिम होगा ।*

नियुक्ति निरस्त करने की शक्ति — यदि ऐसा व्यक्ति नियुक्त किया जाता है जिसके पास आवश्यक अर्हताएं नहीं हैं तो न्यायालय नियुक्ति विखंडित कर सकता है ।[3क]

खंड (1), परंतुक (क) — 1. कोई भी सरकारी सेवक जो संविदा या सेवा की कानूनी शर्तों के अधीन नियोजित है, एकपक्षीय कार्यवाही से, अपना त्यागपत्र देकर, सेवा समाप्त नहीं कर सकता । उनके लिए जो संविधान के विनिर्दिष्ट उपबंधों के अधीन पद धारण करते हैं, जैसे उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश, इससे भिन्न उपबंध किया गया है ।[4] सामान्य सरकारी सेवक का त्यागपत्र सरकार की स्वीकृति के बिना प्रभावी नहीं होता ।[5] किंतु उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के त्यागपत्र को राष्ट्रपति या सरकार द्वारा स्वीकार किए जाने की अपेक्षा नहीं है।

2. वर्तमान परंतुक के अनुसार उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की सेवा उस तारीख से समाप्त हो जाती है जिसको वह राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पदत्याग करता है।[4] यदि वह वर्तमान में पदत्याग करने का आशय अभिव्यक्त करता है तब यही परिणाम होगा । अर्थात् जब वह कोई भावी तारीख बताए बिना त्यागपत्र देता है ।[4] ऐसी स्थिति में त्यागपत्र देने वाला न्यायाधीश अपना त्यागपत्र वापस नहीं ले सकता ।[4]

3 किंतु यदि अपने त्यागपत्र में न्यायाधीश कोई भावी तारीख बताता है जिससे वह पदत्याग करेगा तो वह तारीख आने तक उसका पदत्याग करने की क्रिया पूरी नहीं होती । उस तारीख के आने के पहले वह किसी भी समय अपना त्यागपत्र वापस ले सकता है ।[4]

4. पूरा त्यागपत्र न्यायाधीश के हस्तलेख में होना चाहिए ।[4]

खंड (3) : न्यायाधीश की आयु के बारे में प्रश्न का अवधारण — इस उपबंध से न्यायाधीश की आयु का प्रश्न अवधारित करने की अधिकारिता अनन्य रूप से राष्ट्रपति में निहित है । इस उपबंध के रहते हुए कोई न्यायालय इस प्रश्न का अवधारण नहीं कर सकता । यह ठीक है कि संविधान में इस उपबंध के रखे जाने के पूर्व उच्च न्यायालय के किसी वर्तमान न्यायाधीश की आयु का प्रश्न अनुच्छेद 226 के अधीन 'अधिकार पृच्छा' की रिट के रूप

2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से प्रतिस्थापित ।

3. संविधान (पन्द्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से, आरंभ से, खंड (3) अंतःस्थापित किया गया ।

3क. उच्चतम न्यायालय ने केसरी नंदन श्रीवास्तव की गुवाहाटी न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति विखंडित कर दी । इंडियन एक्सप्रेस 11 मार्च, 1992 (नई दिल्ली) । *श्रीकुमार पद्मप्रसाद* बनाम *भारत संघ* तारीख 10-3-1992 का निर्णय ।

4. *भारत संघ* बनाम *गोपाल*, ए. 1978 एस.सी 694 (पैरा 51) : (5:1 का निर्णय) ।

5 *श्रीकुमार पद्मप्रसाद* बनाम *भारत संघ*, जे.टी. 1992 (2) एस.सी. 247 ।

में कार्यवाही द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष लाया जा सकता था । किंतु अब इस विषय में कोई संदेह नहीं है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की आयु का प्रश्न एक ही रीति से अवधारित किया जा सकता है और वह है अनुच्छेद 217(3) द्वारा विहित रीति ।[6] दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 217(3) की विवक्षा यह है कि अनुच्छेद 32 या 226 के अधीन न्यायाधीश की आयु का प्रश्न उठाने की रिट अधिकारिता समाप्त कर दी गई है । उच्चतम न्यायालय ने आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के न्यायाधीश एकबोटे के विरुद्ध दो याचिकाओं को इसलिए संक्षिप्ततः खारिज कर दिया कि उनमें यह कथन था कि वे संविधान द्वारा विहित आयु सीमा के पश्चात् भी पद पर बने हुए हैं ।[7]

'आयु के बारे में प्रश्न' — जब न्यायाधीश की आयु के बारे में वास्तविक विवाद हो तब ही अनुच्छेद 217(3) लागू किया जाएगा । किंतु विवाद है या नहीं यह तो राष्ट्रपति निर्णय करेगा । प्रत्येक मामले मे राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करेगा कि क्या किसी उच्च न्यायालय के वर्तमान न्यायाधीश की बाबत प्राप्त परिवाद का अन्वेषण किया जाना चाहिए । परामर्श करके उसे यह निर्णय लेना चाहिए कि परिवाद का और अन्वेषण किया जाना चाहिए । इस बारे में उसका निर्णय अंतिम होगा ।[8]

यदि कार्यरत न्यायाधीश की आयु के बारे में प्रश्न उठता है और उसके समर्थन में साक्ष्य दिया जाता है जिससे नियुक्ति के समय न्यायाधीश द्वारा दी गई जन्म की तारीख के सही होने के बारे में प्रथमदृष्ट्या संदेह उत्पन्न होता है तो यह वाञ्छनीय है कि यह विवाद राष्ट्रपति द्वारा निपटाया जाए ।[8]

यदि किसी न्यायाधीश की आयु के प्रश्न पर विवाद उपस्थित हुआ है और उस पर राष्ट्रपति विचार कर रहे है तो इतने मात्र से यह कहना विधिसम्मत नहीं है कि अब वह न्यायाधीश नही रहा ।[8]

'विनिश्चित' — खंड (3) के अधीन विनिश्चय राष्ट्रपति का होना चाहिए' और न्यायिक रूप से किया जाना चाहिए ।[9] इसमें मंत्रियो से प्रभावित नहीं होना चाहिए ।

निर्णय माध्यस्थम् द्वारा नही हो सकता चाहे राष्ट्रपति ने ही माध्यस्थम् का निदेश क्यों न दिया हो ।[10]

खंड (3) के अंतःस्थापित किए जाने के पूर्व और उसके पश्चात भी कार्यपालिका न्यायाधीश की आयु अवधारित नहीं कर सकती है क्योंकि उसमें न्यायपालिका की स्वाधीनता भंग होगी ।[10] गृह मंत्री का विनिश्चय, राष्ट्रपति का विनिश्चय नहीं हो सकता चाहे उसके लिए मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श किया गया हो और राष्ट्रपति ने उसका अनुमोदन कर दिया हो ।[10] संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अनुच्छेद 74(1) के प्रतिस्थापन के पश्चात् इस दृष्टिकोण मे परिवर्तन करना होगा । इस अनुच्छेद के अनुसार राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह पर ही कार्य कर सकता है ।

किंतु —

(क) राष्ट्रपति ने सूचना तामील करने के लिए और समूचना प्राप्त करने के लिए गृह मंत्रालय के तंत्र का उपयोग किया है इस तथ्य से यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि निष्कर्ष पर पहुंचने में उसका मार्गदर्शन गृह मंत्रालय ने किया है ।[9]

(ख) प्रक्रिया में अनियमितता के कारण राष्ट्रपति का आदेश इस आधार पर अविधिमान्य नहीं हो जाता

ज्योति प्रकाश बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, ए 1965 एस.सी. 961 (*966*) ।
स्टेट्समैन, तारीख 29-3-1967, पृष्ठ 13 ।
8. *ज्योति प्रकाश* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, ए 1965 एस.सी. 961 (*967*, पैरा 24) ।
9. *भारत संघ* बनाम *ज्योति प्रकाश*, ए 1971 एस.सी. 1093 (*1103*) ।
10. *ज्योति प्रकाश* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, ए. 1965 एस.सी. 961 (पैरा 21, 26, 27, 29) ।

कि वह गृह मंत्री या प्रधान मंत्री के प्रभाव में आ गया था । उदाहरणार्थ – गृह मंत्रालय के माध्यम से पत्रादि भेजना अथवा प्रधान मंत्री का उस पर इस प्रकार प्रति हस्ताक्षर करना मानो वह कार्यपालिका का विषय है ।[11]

(ग) जहां राष्ट्रपति ने, भारत के मुख्य न्यायमूर्ति की सलाह पर, यह स्पष्ट रूप से अभिलिखित किया है कि वह सलाह को मानते हैं तो इस विनिश्चय पर यह आक्षेप नहीं हो सकता कि वह राष्ट्रपति का निर्णय नहीं है ।[11]

अनुच्छेद 217(3) के अधीन शक्ति की विधिमान्यता की शर्त – अनुच्छेद 217(3) के अधीन राष्ट्रपति ही न्यायाधीश की आयु के प्रश्न पर निर्णय करते हैं । किंतु यह आवश्यक है कि वे उस उपबंध की शर्तों का पालन करें । शर्तें अभिव्यक्त भी हैं और विवक्षित भी ।

(i) राष्ट्रपति विनिश्चय करने के पूर्व भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करेगा ।[10]

(ii) न्यायाधीश को अपना पक्ष और उसके समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत करने का नैसर्गिक न्याय के अनुसार युक्तियुक्त अवसर दिया जाएगा ।[10]

भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श – राष्ट्रपति, न्यायाधीश की आयु का प्रश्न तय करने के पहले भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करेगा । यह अपेक्षा आज्ञापक है ।[10] मुख्य न्यायमूर्ति से व्यक्तिगत विचार-विमर्श करना आवश्यक नहीं है । उस मामले के कागजपत्र और उस पर समस्त साक्ष्य मुख्य न्यायमूर्ति को भेजकर उसकी सलाह प्राप्त करने से अपेक्षाओं का पूर्णतः पालन हो जाता है ।[12]

नैसर्गिक न्याय के नियमों का अनुसरण – अनुच्छेद 217(3) के अधीन राष्ट्रपति का कृत्य, न्यायिक कृत्य है, कार्यपालिक कृत्य नहीं । इसलिए नैसर्गिक न्याय के नियमों का अनुसरण किया जाना चाहिए ।[12] इसका अर्थ यह है कि,

(क) न्यायाधीश को यह जानने का हक है कि उसके विरुद्ध क्या साक्ष्य है• ।

(ख) न्यायाधीश ने नियुक्ति के समय जो आयु दी थी उसके समर्थन मे उसे अपना पक्ष प्रस्तुत करने का और इस निमित्त साक्ष्य पेश करने का युक्तियुक्त अवसर दिया जाना चाहिए ।[10]

(ग) राष्ट्रपति का निर्णय पूर्वोक्त रीति से उसके समक्ष प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर होना चाहिए ।[12]

(घ) न्यायाधीश को विनिश्चय के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का अधिकार होना चाहिए ।[12] किंतु मौखिक अभ्यावेदन या राष्ट्रपति के समक्ष व्यक्तिगत सुनवाई आवश्यक नहीं है । राष्ट्रपति उसकी व्यक्तिगत सुनवाई करेंगे या नहीं इसका निर्णय भी राष्ट्रपति ही करेंगे ।

राष्ट्रपति द्वारा प्रतिकूल अवधारण का प्रभाव – यदि राष्ट्रपति का निर्णय किसी न्यायाधीश द्वारा दी गई जन्मतिथि के विरुद्ध होता है तो गंभीर स्थिति उत्पन्न हो सकती है क्योंकि इस बीच न्यायाधीश ने जिन मामलों को सुना होगा उनकी पुनः सुनवाई करना होगा । संविधान में यह उपबंध है कि अधिवर्षिता के पश्चात् न्यायाधीश अपने पद पर कार्य नहीं कर सकता । इसके कारण उक्त न्यायाधीश के निर्णय अविधिमान्य हो जाएंगे ।[10]

राष्ट्रपति के विनिश्चय का अंतिम होना – अनुच्छेद 217(3) के अधीन राष्ट्रपति का विनिश्चय अन्तिम है । उसके औचित्य, विधिमान्यता या सही होने के बारे में विचार करना न्यायालय की अधिकारिता में नहीं आता ।[10] राष्ट्रपति ही साक्ष्य का अधिमूल्यन करेगा । न्यायालय उस साक्ष्य के आधार पर दिए गए निर्णय के औचित्य पर विचार नहीं कर सकते ।[13]

---

11 *भारत संघ* बनाम *ज्योति प्रकाश*, ए 1971 एस.सी. 1093 (*1102*, पैरा 22) । [ए 1965 एस.सी. 961 के पैरा 21, 26-27, 29 में किए गए प्रतिकूल सप्रेक्षणों को स्पष्ट करने के लिए इस मामले में कोई प्रयास नहीं किया गया ।]

12. *भारत संघ* बनाम *ज्योति प्रकाश*, ए. 1971 एस.सी. 1093 (पैरा 23) ।

13. *भारत संघ* बनाम *ज्योति प्रकाश*, ए 1971 एस.सी. 1093 (*1106*, पैरा 31) ।

किंतु उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय को राष्ट्रपति का आदेश अपास्त करने की अधिकारिता है (अनुच्छेद 226 के अधीन और उसमें अपील में) यदि उसे यह प्रतीत होता है कि[13], —

(i) आदेश सापाश्र्विक आधार पर किया गया है ।
(ii) नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अनुसरण नहीं किया गया है ।
(iii) राष्ट्रपति का निर्णय कार्यपालिका की या मन्त्रियों की सलाह के आधार पर लिया गया है ।[14]
(iv) निर्णय साक्ष्य पर आधारित नहीं है ।[13]

उच्चतम न्यायालय से संबंधित कुछ उपबंधों का उच्च न्यायालयों को लागू होना ।

218. अनुच्छेद 124 के खंड (4) और खंड (5) के उपबंध, जहां-जहां उनमें उच्चतम न्यायालय के प्रति निर्देश हैं वहां-वहां उच्च न्यायालय के प्रति निर्देश प्रतिस्थापित करके, उच्च न्यायालय के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे उच्चतम न्यायालय के संबंध में लागू होते हैं ।

उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान ।

219. [14क]* उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होने के लिए नियुक्त प्रत्येक व्यक्ति, अपना पद ग्रहण करने से पहले, उस राज्य के राज्यपाल या उसके द्वारा इस निमित्त नियुक्त व्यक्ति के समक्ष, तीसरी अनुसूची में इस प्रयोजन के लिए दिए गए प्ररूप के अनुसार, शपथ लेगा या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपने हस्ताक्षर करेगा ।**

स्थायी न्यायाधीश रहने के पश्चात् विधि-व्यवसाय पर निर्बन्धन ।

[15]220. *कोई व्यक्ति, जिसने इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् किसी उच्च न्यायालय के स्थायी न्यायाधीश के रूप में पद धारण किया है, उच्चतम न्यायालय और अन्य उच्च न्यायालयों के सिवाय भारत में किसी न्यायालय या किसी प्राधिकारी के समक्ष अभिवचन या कार्य नहीं करेगा ।*

स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद में, "उच्च न्यायालय" पद के अंतर्गत संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 के प्रारंभ से पहले विद्यमान पहली अनुसूची के भाग ख में विनिर्दिष्ट राज्य का उच्च न्यायालय नहीं है ।

न्यायाधीशों के वेतन आदि ।

221. [16]*(1) प्रत्येक उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतनों का संदाय किया जाएगा जो संसद्, विधि द्वारा, अवधारित करे और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसे वेतनों का संदाय किया जाएगा जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं ।*

(2) प्रत्येक न्यायाधीश ऐसे भत्तों का तथा अनुपस्थिति छुट्टी और पेंशन के संबंध में ऐसे अधिकारों का, जो संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन समय-समय पर अवधारित किए जाएं, और जब तक इस प्रकार अवधारित नहीं किए जाते हैं तब तक ऐसे भत्तों और अधिकारों का, जो दूसरी अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, हकदार होगा :

परंतु किसी न्यायाधीश के भत्तों में और अनुपस्थिति छुट्टी या पेंशन के संबंध में उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

14. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अनुच्छेद 74(1) के संशोधन के पश्चात् पुनरीक्षण किया जाना होगा ।
14क संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "किसी राज्य में" शब्दों का लोप किया गया ।
15. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।
16. संविधान (चौवनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा खंड (1) प्रतिस्थापित ।

किसी न्यायाधीश का एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को अंतरण ।

222. (1) राष्ट्रपति, भारत के मुख्य न्यायमूर्ति से परामर्श करने के पश्चात् [17]*** **किसी न्यायाधीश का एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को अंतरण कर सकेगा ।**

[18]*(2) जब कोई न्यायाधीश इस प्रकार अंतरित किया गया है या किया जाता है तब वह उस अवधि के दौरान, जिसके दौरान वह संविधान (पंद्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 के प्रारंभ के पश्चात् दूसरे उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में सेवा करता है, अपने वेतन के अतिरिक्त ऐसा प्रतिकरात्मक भत्ता, जो संसद् विधि द्वारा अवधारित करे, और जब तक इस प्रकार अवधारित नहीं किया जाता है तब तक ऐसा प्रतिकरात्मक भत्ता, जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा नियत करे, प्राप्त करने का हकदार होगा ।*

कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति की नियुक्ति ।

223. **जब किसी उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति का पद रिक्त है या जब ऐसा मुख्य न्यायमूर्ति अनुपस्थिति के कारण या अन्यथा अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तब न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों में से ऐसा एक न्यायाधीश, जिसे राष्ट्रपति इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उस पद के कर्तव्यों का पालन करेगा ।**

अपर और कार्यकारी न्यायाधीशों की नियुक्ति ।

[19]224. *(1) यदि किसी उच्च न्यायालय के कार्य में किसी अस्थायी वृद्धि के कारण या उसमें कार्य की बकाया के कारण राष्ट्रपति को यह प्रतीत होता है कि उस न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या को तत्समय बढ़ा देना चाहिए तो राष्ट्रपति सम्यक् रूप से अर्हित व्यक्तियों को दो वर्ष से अनधिक की ऐसी अवधि के लिए जो वह विनिर्दिष्ट करे, उस न्यायालय के अपर न्यायाधीश नियुक्त कर सकेगा ।*

(2) जब किसी उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति से भिन्न कोई न्यायाधीश अनुपस्थिति के कारण या अन्य कारण से अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है या मुख्य न्यायमूर्ति के रूप में अस्थायी रूप से कार्य करने के लिए नियुक्त किया जाता है तब राष्ट्रपति सम्यक् रूप से अर्हित किसी व्यक्ति को तब तक के लिए उस न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में कार्य करने के लिए नियुक्त कर सकेगा जब तक स्थायी न्यायाधीश अपने कर्तव्यों को फिर से नहीं संभाल लेता है ।

(3) उच्च न्यायालय के अपर या कार्यकारी न्यायाधीश के रूप में नियुक्त कोई व्यक्ति [20]*[बासठ वर्ष] की आयु प्राप्त कर लेने के पश्चात् पद धारण नहीं करेगा ।*

उच्च न्यायालयों की बैठकों में सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की नियुक्ति ।

224क. *इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य के उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति, किसी भी समय, राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से किसी व्यक्ति से, जो उस उच्च न्यायालय या किसी अन्य उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद धारण कर चुका है, उस राज्य के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में बैठने और कार्य करने का अनुरोध कर सकेगा और प्रत्येक ऐसा व्यक्ति, जिससे इस प्रकार अनुरोध किया जाता है, इस प्रकार बैठने और कार्य करने के दौरान ऐसे भत्तों का हकदार होगा जो*

---

17 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा खंड (1) और खंड (2) में "भारत के राज्यक्षेत्र में के" शब्दों का लोप किया गया ।

18. संविधान (पन्द्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा खंड (2) पुनः अंतःस्थापित किया गया ।

19. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

20. संविधान (पन्द्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा "साठ वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

21. संविधान (पन्द्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा अंतःस्थापित ।

राष्ट्रपति आदेश द्वारा अवधारित करे और उसको उस उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की सभी अधिकारिता, शक्तियां और विशेषाधिकार होंगे, किंतु उसे अन्यथा उस उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नहीं समझा जाएगा :

परंतु जब तक यथापूर्वोक्त व्यक्ति उस उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में बैठने और कार्य करने की सहमति नहीं दे देता है तब तक इस अनुच्छेद की कोई बात उससे ऐसा करने की अपेक्षा करने वाली नहीं समझी जाएगी ।

विद्यमान उच्च न्यायालयों की अधिकारिता ।

225. **इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए और इस संविधान द्वारा समुचित विधान मंडल को प्रदत्त शक्तियों के आधार पर उस विधान मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी विद्यमान उच्च न्यायालय की अधिकारिता और उसमें प्रशासित विधि तथा उस न्यायालय में न्याय प्रशासन के संबंध में उसके न्यायाधीशों की अपनी-अपनी शक्तियां, जिनके अंतर्गत न्यायालय के नियम बनाने की शक्ति तथा उस न्यायालय और उसके सदस्यों की बैठकों का चाहे वे अकेले बैठें या खंड न्यायालयों में बैठें विनियमन करने की शक्ति है, वही होंगी जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले थीं :**

[22]*परंतु राजस्व संबंधी अथवा उसका संग्रहण करने में आदिष्ट या किए गए किसी कार्य संबंधी विषय की बाबत उच्च न्यायालयों में से किसी की आरंभिक अधिकारिता का प्रयोग, इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले, जिस किसी निर्बन्धन के अधीन था वह निर्बन्धन ऐसी अधिकारिता के प्रयोग को ऐसे प्रारंभ के पश्चात् लागू नहीं होगा ।*

संशोधन — संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा इस परंतुक का लोप किया गया था जिससे अनुच्छेद 323ख(2) के अधीन स्थापित किए जाने वाले प्रशासनिक अधिकरण राजस्व अधिकारिता का प्रयोग करेंगे । उच्च न्यायालय की राजस्व अधिकारिता समाप्त हो जाएगी । 44वें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा इसे वापस रखा गया । राज्य सभा में विपक्ष में कांग्रेस ने अनुच्छेद 323 को निरसन करने के जनता पार्टी के प्रस्ताव को सफल नहीं होने दिया । ऐसा प्रतीत होता है कि विपक्ष ने अनुच्छेद 225 के परंतुक की ओर ध्यान नहीं दिया ।

अनुच्छेद 225 के परंतुक को अनुच्छेद 323ख के साथ पढ़ने पर यह परिणाम होगा कि यदि कर और राजस्व संबंधी मामलों के अवधारण के लिए प्रशासनिक अधिकरण स्थापित किए जाते हैं तो भी इन मामलों को संविधान का संशोधन किए बिना उच्च न्यायालय की अधिकारिता से बाहर नहीं किया जा सकता ।

कुछ रिट निकालने की उच्च न्यायालय की शक्ति ।

[23]226. *(1) अनुच्छेद 32 में किसी बात के होते हुए भी प्रत्येक उच्च न्यायालय को उन राज्यक्षेत्रों में सर्वत्र, जिनके संबंध में वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है, भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी को प्रवर्तित कराने के लिए और किसी अन्य प्रयोजन के लिए उन राज्यक्षेत्रों के भीतर किसी व्यक्ति या प्राधिकारी को या समुचित मामलों में किसी सरकार को ऐसे निदेश, आदेश या रिट जिनके अंतर्गत बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार-पृच्छा और उत्प्रेषण रिट हैं, या उनमें से कोई निकालने की शक्ति होगी ।*

(2) किसी सरकार, प्राधिकारी या व्यक्ति को निदेश, आदेश या रिट निकालने की खंड (1) द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग उन राज्यक्षेत्रों के संबंध में, जिनके भीतर ऐसी शक्ति के

---

22. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 1-2-1977 से जिस परंतुक का लोप किया गया था, वह संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से पुनःस्थापित किया गया ।

23. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 1-2-1977 से खंड (1) प्रतिस्थापित करके, खंड (1क) को खंड (2) के रूप में पुनर्संख्यांकित करके और खंड (3)-(7) जोड़कर क्रांतिकारी परिवर्तन किए गए थे । संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 1-8-1979 से खंड (1) में मूल पाठ पुनःस्थापित किया गया, खंड (3)-(6) को नए खंड (3) द्वारा प्रतिस्थापित किया गया और बयालीसवें संशोधन द्वारा यथा अंतःस्थापित खंड (7) को खंड (4) के रूप में पुनर्संख्यांकित किया गया ।

प्रयोग के लिए वादहेतुक पूर्णतः या भागतः उत्पन्न होता है, अधिकारिता का प्रयोग करने वाले किसी उच्च न्यायालय द्वारा भी, इस बात के होते हुए भी किया जा सकेगा कि ऐसी सरकार या प्राधिकारी का स्थान या ऐसे व्यक्ति का निवास-स्थान उन राज्यक्षेत्रों के भीतर नहीं है ।

(3) जहां कोई पक्षकार, जिसके विरुद्ध खंड (1) के अधीन किसी याचिका पर या उससे संबंधित किसी कार्यवाही में व्यादेश के रूप में या रोक के रूप में या किसी अन्य रीति से कोई अंतरिम आदेश —

(क) ऐसे पक्षकार को ऐसी याचिका की और ऐसे अंतरिम आदेश के लिए अभिवाक् के समर्थन में सभी दस्तावेजों की प्रतिलिपियां, और

(ख) ऐसे पक्षकार को सुनवाई का अवसर,

दिए बिना किया गया है, ऐसे आदेश को रद्द कराने के लिए उच्च न्यायालय को आवेदन करता है और ऐसे आवेदन की एक प्रतिलिपि उस पक्षकार को जिसके पक्ष में ऐसा आदेश किया गया है या उसके काउंसेल को देता है वहां उच्च न्यायालय उसकी प्राप्ति की तारीख से या ऐसे आवेदन की प्रतिलिपि इस प्रकार दिए जाने की तारीख से दो सप्ताह की अवधि के भीतर, इनमें से जो भी पश्चात्वर्ती हो, या जहां उच्च न्यायालय उस अवधि के अंतिम दिन बंद है वहां उसके ठीक बाद वाले दिन की समाप्ति से पहले जिस दिन उच्च न्यायालय खुला है, आवेदन को निपटाएगा और यदि आवेदन इस प्रकार नहीं निपटाया जाता है तो अंतरिम आदेश, यथास्थिति, उक्त अवधि की या उक्त ठीक बाद वाले दिन की समाप्ति पर रद्द हो जाएगा ।

(4) इस अनुच्छेद द्वारा उच्च न्यायालय को प्रदत्त शक्ति से, अनुच्छेद 32 के खंड (2) द्वारा उच्चतम न्यायालय को प्रदत्त शक्ति का अल्पीकरण नहीं होगा । •

संशोधन का प्रभाव — 1 अनुच्छेद 226 को उसके 1976 के पूर्व के रूप में पुन लाने का प्रभाव यह है कि सामान्य विधिक अधिकारों के (मूल अधिकारों से भिन्न) प्रवर्तन के लिए खंड (1) के उपखंड (ख)-(ग) द्वारा लगाई गई मर्यादाए, जिसमें 'अधिष्ठायी प्रकृति' 'न्याय की पर्याप्त विफलता' आदि की आवश्यकता बताई गई थी, हटा दी गई हैं । अब यदि भाग 3 के बाहर भी संविधान के किसी उपबंध का उल्लंघन होता है या पशासकीय कार्यवाही से किसी सामान्य विधिक अधिकार का उल्लघन होता है और विशेषाधिकार रिटों या वैसे ही किसी आदेश के अधीन याची का मामला आता है तो वह याची सफल होगा । उदाहरणार्थ, यदि नैसर्गिक न्याय का उल्लंघन होता है तो उत्प्रेषण की रिट दी जाएगी । इस प्रश्न का महत्व नहीं है कि न्याय की विफलता पर्याप्त है या नही ।

2. 1976 के पूर्व की सभी निर्णयज विधि जो मूल अनुच्छेद 226(1) के अधीन थी, अब पुन· लागू होगी ।

अनुच्छेद 226 से संबंधित साधारण सिद्धांत — 1 अनुच्छेद 226 उच्च न्यायालय को यह शक्ति देता है कि वह बंदी प्रत्यक्षीकरण, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार-पृच्छा, और उत्प्रेषण की रिटें या उसी प्रकार के निदेश या आदेश निकाल सकेगा । इस शक्ति का प्रयोग निम्नलिखित के लिए किया जा सकेगा — (क) भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों में से किसी को प्रवर्तित कराने के लिए और (ख) किसी अन्य प्रयोजन के लिए । पहले भाग में रिट तभी निकाली जा सकती है जब यह विनिश्चय हो गया हो कि व्यथित पक्षकार का मूल अधिकार है और उसका अतिलंघन हुआ है । इसी प्रकार दूसरे भाग में रिट तभी दी जाएगी जब यह निष्कर्ष प्राप्त हो जाता है कि व्यथित पक्षकार का विधिक अधिकार है और उस अधिकार का अतिलंघन हुआ है ।[24]

2. अनुच्छेद 226 ने सभी उच्च न्यायालयों को रिट के संबंध में इतने व्यापक

24. *कलकत्ता गैस कंपनी बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य,* ए 1962 एस.सी. 1044 ।

अधिकार दिए हैं जो उन्हें पहले कभी नहीं थे । इस शक्ति के प्रयोग पर केवल दो परिसीमाएं हैं — (क) कि शक्ति का प्रयोग उन राज्यक्षेत्रों में सर्वत्र किया जा सकता है जिनके संबंध में वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है । अर्थात् उच्च न्यायालय की रिट उस राज्यक्षेत्र के बाहर नहीं जा सकती जिस पर उसकी अधिकारिता है, और (ख) उच्च न्यायालय ऐसे व्यक्ति या प्राधिकारी को ही रिट दे सकता है जो उसके राज्यक्षेत्र के भीतर है । इससे यह विवक्षा है कि वे उस राज्यक्षेत्र में निवास करने या स्थित होने के कारण उसकी अधिकारिता के अधीन होने चाहिए ।[25] इसका अपवाद वहां होता है जहां वाद हेतुक भागतः या पूर्णतः, उच्च न्यायालय की राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर उत्पन्न होता है (आगे खंड 2) ।

3. अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्तियां विवेकाधीन हैं (मूल अधिकार के प्रवर्तन के लिए ऐसा नहीं है) । उस विवेक शक्ति पर कोई बंधन नहीं लगाया जा सकता । किंतु उसका प्रयोग सुविदित सिद्धांतों के अनुसार किया जाना चाहिए, मनमाने ढंग से नहीं ।[26] साथ ही उसके प्रयोग पर कुछ स्वयं निर्मित बंधन हैं ।[27] जैसे,

(i) विवेकाधीन अधिकारिता के प्रयोग मे उच्च न्यायालय को अपील या पुनरीक्षण न्यायालय का कार्य करते हुए विधि या तथ्य की भूलों को नहीं सुधारना चाहिए ।[27-28] यह तो केवल अधीक्षण अधिकारिता है ।[29]

(ii) वाद द्वारा या किसी अधिनियम में विहित अन्य रीति से जो अनुतोष प्राप्त किया जा सकता है उसका यह आनुकल्पिक उपचार नहीं है ।[30] जहां किसी अधिनियम में किए गए उपबंध के अनुसार व्यथित व्यक्ति किसी अन्य अधिकरण द्वारा या किसी अन्य अधिकारिता में उच्च न्यायालय में ही अनुतोष पा सकता है तो न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका ग्रहण करके उस अधिनियम द्वारा बनाए गए तंत्र को व्यर्थ नहीं बनाएगा ।[30-31]

(iii) उच्च न्यायालय ऐसे प्रश्न का अवधारण नही करता जिसमें अधिकार साबित करने के लिए साक्ष्य की विस्तार से परीक्षा करना आवश्यक हो ।[27]

किंतु यह अधिकारिता पर पूर्ण प्रतिबंध नही है ।[32]

(iv) न्यायालय ऐसे प्राधिकारी के निर्णय में हस्तक्षेप नही करेगा जिसे कानून द्वारा शक्ति दी गई है, विशेषकर ऐसे विषयों मे जो विशेषज्ञों के क्षेत्र मे आते हैं ।[30] केवल आपवादिक परिस्थितियों में ही हस्तक्षेप होगा । उदाहरणार्थ — (क) निर्णय दुर्भावपूर्ण है, या (ख) बाह्य कारणों पर आधारित है, या (ग) नैसर्गिक न्याय के नियमो के विपरीत है,[31] या (घ) संविधान के उपबंधों के विरुद्ध है ।[33]

4. अनुच्छेद 226 के अधीन किसी वाद मे उच्च न्यायालय द्वारा घोषित विधि उस राज्य के सभी अधीनस्थ न्यायालयों और अधिकरणों पर आबद्धकर होगी ।[34]

25. *रशीद* बनाम *आई टी आई कमीशन*, (1954) एस.सी.आर. 738 ।

26. *संग्राम* बनाम *निर्वाचन अधिकरण*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1 (*8*) ।

27. *थान सिंह* बनाम *कर-अधीक्षक*, ए. 1964 एस.सी. 1419 (*1432*) ।

28. *वीरप्पा* बनाम *रमन*, (1952) एस.सी.आर. 583 ।

29. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *चित्रा*, ए. 1975 एस.सी. 2151 (पैरा 23); *नैना* बनाम *नटराजन*, ए. 1975 एस.सी. 1867 (पैरा 2) ।

30. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *भाई लाल*, ए. 1964 एस.सी. 1006 (*1011*) ।

31. *भारत संघ* बनाम *प्रभावल्कर*, ए. 1973 एस.सी. 2102 (पैरा 13-14) ।

32. *वीना* बनाम *वरीन्द्र*, ए. 1982 एस.सी. 792 (उच्चतम न्यायालय के, अपील किए जाने पर, अवर न्यायालय को, अनुच्छेद 226 के अधीन बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही में अप्राप्तवय के कल्याण से संबंधित साक्ष्य लेने का निदेश दिया); *मुन्ना* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1982 एस.सी. 806 (पैरा 2) [विचारणाधीन कैदियों के साथ बुरा बर्ताव करने के बारे में लोक संगठन के सदस्यों को साक्ष्य लेने का निदेश दिया] ।

33. *पटवर्धन* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1977 (एस.सी.) [सी.ए. 1113/74]; *प्रभात* बनाम *भारत संघ*, (1977) यू.जे.एस.सी. 192 (पैरा 2-3); *महेश्वर* बनाम *सुरेश*, ए. 1976 एस.सी. 1404 (पैरा 6) ।

34. *ई.आई. कमर्शियल कंपनी* बनाम *सीमा-शुल्क कलक्टर*, ए. 1962 एस.सी. 1895 ।

35. *उड़ीसा राज्य* बनाम *मदन गोपाल*, (1952) एस.सी.आर. 28 (*33*) ।

किन प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग किया जा सकेगा —
1. **अनुच्छेद 226 के अधीन रिट निकालने की उच्च न्यायालय की शक्ति का प्रयोग दो प्रयोजनों के लिए किया जा सकता है अर्थात् (क) मूल अधिकारों के, और (ख) अन्य सामान्य अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ।**[24, 35]

2. अनुच्छेद 226 के अंत में प्रयुक्त शब्द 'या किसी अन्य प्रयोजन के लिए' उच्च न्यायालय की रिट निकालने की अधिकारिता को उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता से अधिक व्यापक बना देते हैं । ये शब्द अनुच्छेद 32 में नहीं हैं । उच्चतम न्यायालय को यह शक्ति (किसी अन्य प्रयोजन के लिए) विधान द्वारा ही दी जा सकती है [अनुच्छेद 139] किंतु उच्च न्यायालय को मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए और किसी अन्य प्रयोजन के लिए भी रिट निकालने की शक्ति है ।[35]

3. 'कोई अन्य प्रयोजन' से ऐसा प्रयोजन अभिप्रेत है जिसके लिए सुस्थापित सिद्धांतों के अनुसार रिट निकाली जा सकती है ।[36] इस अनुच्छेद के पहले भाग के अनुसार रिट तभी निकाली जा सकती है जब यह साबित हो जाए कि व्यथित पक्षकार के मूल अधिकार का अतिलंघन हुआ है । दूसरे भाग के अनुसार रिट तब निकाली जा सकती है जब न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंच गया हो कि व्यथित पक्षकार का कोई विधिक अधिकार है जिसके कारण उसे पूर्वोक्त रिटों में से कोई रिट पाने का हक है और उस हक का उल्लंघन हुआ है ।[37] संक्षेप में "अन्य प्रयोजन के लिए" का अर्थ है "किसी विधिक अधिकार के प्रवर्तन के लिए"[24, 35] अथवा "किसी विधिक कर्तव्य के अनुपालन के लिए" । 'विधिक अधिकार' से तात्पर्य है "विधि द्वारा प्रवर्तनीय अधिकार" । इसके अंतर्गत संविदाजात अधिकार[24] भी है किंतु व्यक्तिगत अधिकार नहीं हैं ।[38]

4. अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष निम्नलिखित के लिए नहीं मिलेगा, अर्थात् —

(i) राजनैतिक अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ।[39]

(ii) मानसिक या भावनात्मक क्षति के लिए ।[40]

(iii) ऐसी संविदा के प्रवर्तन के लिए जिसके पीछे कानून का बल नहीं है[41] और इसलिए वह प्राइवेट विधि के क्षेत्र में आती है ।

(iv) विधायी नीति के मामलों में विधायी निर्णय के स्थान पर न्यायालय का निर्णय रखने के लिए,[42] जैसे, किसी टैरिफ दर का उचित होना ।[43]

(v) ऐसे अनुदान को प्रवृत्त करने के लिए जिसे देने वाला कभी भी वापस ले सकता है ।[44]

(vi) ऐसे प्रशासनिक नियम, विनियम, अनुदेश प्रवृत्त कराने के लिए जिनका कोई विधिक बल नहीं है ।[45] किंतु आपवादिक परिस्थितियों में प्रवृत्त किया जा सकेगा ।[46]

36. *निर्वाचन आयोग* बनाम *साका वेंकट*, (1953) एस.सी.आर. 1144, *बासप्पा* बनाम *नागप्पा*, ए. 1954 एस.सी. 440 ।

37. तुलना कीजिए, *समर्थ ट्रांसपोर्ट कंपनी* बनाम *सड़क परिवहन प्राधिकरण*, ए. 1961 एस.सी. 93 (*95*) ।

38. *बंधा निधि* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 843 (पैरा 7-8) ।

39. *राममूर्ति के मामले में*, ए. 1953 मद्रास 94; *चक्कारा का मामला*, ए. 1953 मद्रास 96 ।

40. *डी.जी. विद्यालय एसोसिएशन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1962 इला. 187 (*191*) ।

41. *डी.एफ.ओ* बनाम *राम सनेही*, ए. 1973 एस.सी. 205 ।

42. *कुलचिंदर* बनाम *हरदयाल*, ए. 1976 एस.सी. 2216 (पैरा 11-12); *कलकत्ता गैस कंपनी* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1044 (*1047-48*); *प्रेम सागर* बनाम *स्टेंडर्ड कंपनी*, (1964) 5 एस.सी.आर. 1030 (*1038*); *हर शंकर* बनाम *उपायुक्त*, ए. 1975 एस.सी. 1121 (पैरा 21-22) ।

43. *नारायण* बनाम *भारत संघ*, ए. 1976 एस.सी. 1986 (पैरा 6-7) ।

44. *उड़ीसा राज्य* बनाम *राम*, ए. 1964 एस.सी. 685 (*688-89*) ।

45. *असम राज्य* बनाम *अजीत*, ए. 1965 एस.सी. 1196 (*1200*); *फर्नांडिस* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1753 (*1757*) ।

46. *भारत संघ* बनाम *जोसेफ*, (1973) 2 एस.सी.आर. 752 (*755*); *सक्सेना* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1264 ।

(vii) प्रशासनिक विवेक में हस्तक्षेप करने के लिए ।[47]

5. नीचे संविधान के कुछ अनुच्छेद, उदाहरणस्वरूप, दिए जा रहे हैं (भाग 3 के बाहर के) जिनका उल्लंघन होने पर अनुच्छेद 226 के अधीन आदेश दिया गया था ।

अनुच्छेद 161 : राज्यपाल द्वारा इस अनुच्छेद द्वारा दी गई शक्ति के बाहर कार्य करना ।[48]

अनुच्छेद 162 : राज्य द्वारा, संघ सूची में सम्मिलित विषयों पर अपनी कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग ।[49]

अनुच्छेद 165 : अनुच्छेद के उल्लंघन में किसी व्यक्ति को महाधिवक्ता नियुक्त करना ।[50]

अनुच्छेद 166 : अनुच्छेद की अपेक्षाओं का पालन किए बिना आदेश निकालना ।[51]

अनुच्छेद 168, 170, 171 : किसी विधान मंडल के गठन पर यह आक्षेप कि वह संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं है ।[52]

अनुच्छेद 213(1), परंतुक; (3), परंतुक : राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति के बिना राज्यपाल द्वारा अध्यादेश ।[53]

अनुच्छेद 219 : न्यायाधीश का बिना शपथ लिए पद ग्रहण करना ।[54]

अनुच्छेद 265 : विधायी प्राधिकार के बिना, कार्यपालक आदेश द्वारा कर लगाया जाना ।[55]

अनुच्छेद 286 : अनुच्छेद द्वारा अधिरोपित परिसीमाओं के उल्लंघन में विक्रय कर अधिरोपित करना ।[56]

अनुच्छेद 299 : सरकार से संविदा की प्ररूपिक आवश्यकताएं ।[57]

अनुच्छेद 301 : अनुच्छेद द्वारा प्रत्याभूत व्यापार की स्वतंत्रता में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप ।[58]

अनुच्छेद 303 : अन्य राज्य में उत्पादित माल पर विभेदकारी कराधान ।[59]

अनुच्छेद 304(ख) : अनुच्छेद की परिसीमाओं का उल्लंघन ।[60]

अनुच्छेद 321 : राज्य लोक सेवा आयोग का ऐसे कृत्य करना जो उस अनुच्छेद में उल्लिखित नहीं है ।[61]

शक्ति परमाधिकार रिट तक ही सीमित नहीं है — अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की शक्ति परमाधिकार रिटों तक ही सीमित नहीं है । उच्चतम न्यायालय की शक्ति भी अनुच्छेद 32 के अधीन इस प्रकार सीमित नहीं है । उच्च न्यायालय इन रिटों के अतिरिक्त भी निदेश, आदेश और रिट निकाल सकता है ।[62]

अनुच्छेद 226(1) में इंग्लैंड की रिटों का उल्लेख नहीं है बल्कि उन रिटों का है

47 *शान्ति* बनाम *क्षेत्रीय उपनिदेशक*, ए. 1981 एस.सी. 1577 ।

48. *गोडसे* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए 1961 एस.सी. 600 (*604*); *मुंबई राज्य* बनाम *नानावती*, (1960) 62 मुंबई, एल.आर. 383 ।

49. *माउंट कार्पोरेशन* बनाम *निदेशक*, ए. 1965 मैसूर 143 (*149*) ।

50. *करकरे* बनाम *शेवडे*, ए. 1952 नागपुर 330 ।

51 *बारसे* बनाम *मुंबई राज्य*, ए 1961 एस.सी. 1762; *बियाउ मल* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1959) एस.सी.आर. 1424 (*1439*); *प्रेमचंद* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1965 मध्य प्रदेश 196 (*206*) ।

52. तुलना कीजिए, *विनोद* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, ए 1959 एस.सी. 223 ।

53. *आचय्या* बनाम *मैसूर राज्य*, ए 1962 मैसूर 215 (*231*) ।

54 *शब्बीर* बनाम *राज्य*, ए. 1965 इला 97 (*99*) ।

55. *बुरई नगरपालिका* बनाम *कमल*, ए. 1965 एस.सी. 1321 (*1324*); *केरल राज्य* बनाम *जोसेफ*, ए. 1958 एस.सी. 296 ।

56. *हिम्मत लाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 403; *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 661 ।

57. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *बी.के. मंडल*, ए. 1962 एस.सी. 779 (*783*); *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *मुरारी*, (1971) 2 एस.सी.सी. 449 (*451*) ।

58. *महताब* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 928; *कल्याणी स्टोर्स* बनाम *राज्य*, (1966) 1 एस.सी.आर. 865 (*877*); *मद्रास राज्य* बनाम *नटराज*, ए. 1969 एस.सी. 147; *मैसूर राज्य* बनाम *संजीवय्या*, ए. 1967 एस.सी. 1190 ।

59. *राजस्थान राज्य* बनाम *मांगीलाल*, (1969) 2 एस.सी.सी. 710 ।

60. *आतियाबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, (1961) 1 एस.सी.आर. 809 ।

61. *मीरा चटर्जी* बनाम *लोक सेवा आयोग*, ए. 1958 कल. 345 (*349*) ।

62. *ईरानी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1731 (*1738*) ।

जो इंग्लैंड की रिटों के स्वरूप की हैं । इसलिए भारत के न्यायालय उन तकनीकी प्रक्रियाओं से बंधे नहीं हैं जो इंग्लैंड की रिटों से जुड़ी हुई हैं ।[63]

न्यायालय अपने देश की विशेष आवश्यकताओं को देखते हुए अनुतोष में परिवर्तन भी कर सकते हैं ।[64] यह ध्यान रखना होगा कि ऐसा करने में उच्च न्यायालय संविधान के या इस निमित्त उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि के किसी उपबंध का उल्लंघन नहीं करेगा ।[65]

इसी कारणवश —

(क) अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय को यह शक्ति है कि वह अधिकारातीत कार्यपालिका आदेश को अपास्त कर दे । चाहे उत्प्रेषण (सर्शियोरारी) की रिट दी जा सकती हो या नहीं ।[62] यही सिद्धांत प्रतिषेध की रिट को भी लागू होगा ।[66]

(ख) न्यायालय को अनुच्छेद 226 के अधीन पारिणामिक अनुतोष देने की शक्ति है । जैसे विधि के प्राधिकार के बिना या अविधिमान्य विधि के अधीन प्राप्त धन वापस करने का आदेश ।[67]

(ग) उचित मामलों में, अनुच्छेद 226 के अधीन घोषणात्मक अनुतोष भी दिया जा सकता है । इसके द्वारा किसी कानूनी निकाय का कार्य अधिकारातीत घोषित किया जा सकता है यद्यपि इंग्लैंड में परमाधिकार रिट की कार्यवाही में इस प्रकार का अनुतोष नहीं दिया जा सकता था ।[68]

अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष देने से केवल निम्नलिखित आधारों पर इंकार नहीं किया जा सकता — 1 साधारणतया अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष देने से तकनीकी आधारों पर इंकार नहीं किया जा सकता ।[69]

2 न्यायालय परिवर्तित परिस्थितियों पर ध्यान देते हुए अनुतोष में आवश्यक फेरफार कर सकता है ।[69] या यदि याची द्वारा वांछित बड़ा अनुतोष नहीं दिया जा सकता तो कोई छोटा अनुतोष दिया जा सकता है ।[69]

3 यदि मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ है तो अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका को केवल इस आधार पर नामंजूर नहीं किया जा सकता कि उचित रिट की याचना नहीं की गई है ।[70, 71] इन मामलों में याची को अपने मूल अधिकार के संरक्षण के लिए उचित आदेश पाने का[72] या प्रत्यर्थी के विधिक कर्तव्य को प्रवृत्त कराने का अधिकार है ।[71]

यदि याची ने व्यापक अनुतोष की मांग की है तो न्यायालय उसे समुचित रूप से आदेश देगा ।[73] उच्च न्यायालय भी संविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकारों को प्रवृत्त कराने के लिए उतना ही आबद्ध है जितना उच्चतम न्यायालय ।[72, 74]

---

63 *बासप्पा* बनाम *नागप्पा*, ए 1954 एस.सी 440 ।

64 *द्वारका* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1966 एस.सी. 81 (*85*) ।

65 *देसाई* बनाम *रोशन*, ए 1976 एस.सी 578 (पैरा 11); *द्वारका* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1966 एस.सी 81 ।

66 *कलकत्ता डिस्काउंट कंपनी* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1961 एस.सी. 372 (*380*) ।

67 *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *भाईलाल*, ए 1964 एस.सी 1006 (*1010-11*) ।

68 *बी.बी.एल एंड टी मर्चेंटस् एसोसिएशन* बनाम *मुंबई राज्य*, ए 1962 एस.सी 486 (*496*); *अब्दुल कादिर* बनाम *केरल राज्य*, ए 1962 एस.सी. 922 (*926*); *तिवारी* बनाम *निदेशक बोर्ड*, ए 1964 एस.सी. 1680 (*1683*); *मेनन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी 1160 ।

69 *रामभद्रय्या* बनाम *सचिव*, ए. 1981 एस.सी. 1653 ।

70 *चिरंजीत लाल* बनाम *भारत संघ*, (1950) एस.सी.आर. 869 ।

71. *मैसूर राज्य* बनाम *चंद्रशेखर*, ए 1965 एस.सी 523 (*537*) ।

72. *हिम्मत लाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1964) एस.सी.आर 1122 ।

73. *यासिन* बनाम *शहर क्षेत्र समिति*, (1952) एस.सी.आर. 572 (*582*); *द्वारका* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1966 एस.सी. 81 (पैरा 4) ।

74. लेखक के इस विचार को अब *देवीलाल* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए. 1965 एस.सी. 1150; *दरयाव* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1457 (पैरा 15) में किए गए संप्रेक्षणों से समर्थन प्राप्त हुआ है ।

अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष देने से इंकार करने के लिए साधारण आधार — I. 'अन्य प्रयोजनों' के लिए शक्ति का प्रयोग विवेकाधीन है[76-77] (किंतु मूल अधिकारों को प्रवृत्त करना विवेकाधीन नहीं है)[75] ।

इन मामलों में न्यायालय इस आधार पर आवेदन नामंजूर कर सकता है कि कुछ परिस्थितियां हैं जिनके कारण आवेदक अनुतोष पाने का हकदार नहीं है चाहे उसके विधिक अधिकार का अतिलंघन हुआ हो । जैसे, —

(क) आनुकल्पिक उपचार उपलब्ध है ।[76, 78]

(ख) आवेदक का आचरण ऐसा रहा है कि उसे विवेकाधीन उपचार नहीं दिया जाना चाहिए । उदाहरणार्थ वह गफलत (या अनुचित विलंब)[77,79] या उपमत होने का दोषी है ।[80]

(ग) आवेदक ने अपने शपथ पत्र में मिथ्या व्यपदेशन किया है या तात्विक तथ्य छिपाए हैं,[81-82] और इस प्रकार न्यायालय को भ्रमित किया है ।[83]

(घ) याची को अनुतोष देने के लिए विवादित तथ्यों या तथ्य और विधि[84] के मिश्रित प्रश्नों का अन्वेषण करना आवश्यक है ।[85]

(ङ) रिट निकालना निरर्थक है[86] या निष्प्रभावी होगा[87] या केवल शास्त्रीय रुचि का विषय होगा ।[88] किंतु तब नहीं जब आक्षेपित आदेश या अधिसूचना, विधान पर आधारित है[89] या जहां वार्षिक अनुज्ञप्ति का नवीकरण स्वयमेव हो जाता है ।[90]

(च) जहां न्यायालय के आदेश का पालन करने से दूसरों के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा[91] या उससे अवैध आदेश पुन: प्रतिष्ठापित हो जाएगा ।[92]

(छ) जहां आवेदन समय आने से पूर्व ही कर दिया गया है ।[93]

II. मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के बारे में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि मूल अधिकारों को प्रवृत्त कराना उच्च न्यायालय का कर्तव्य है[94-96] वैसे ही जैसे कि उच्चतम न्यायालय का है । जब यह कहा गया है कि मूल

---

75 *अमलगमेटेड कोलफील्ड्स* बनाम *जनपद सभा*, ए 1961 एस.सी 964 (*965*) ।

76 *वेलुस्वामी* बनाम *राजा*, ए. 1959 एस.सी 422 ।

77 *अशोक* बनाम *कलक्टर* ए. 1980 एस.सी. 112 (पैरा 7) ।

78 *रशीद* बनाम *आई टी आई कमीशन*, (1954) एस.सी आर 738 ।

79 *भारत संघ* बनाम *वर्मा*, ए 1957 एस.सी 882 (*884*) ।

80 *पन्नालाल* बनाम *भारत संघ*, ए 1957 एस.सी 497 (*512*) ।

81 *मगनलाल* बनाम *नगर निगम*, ए 1975 एस.सी 648 (पैरा 4) ।

82 तुलना कीजिए, *वेल्कम होटल* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए 1983 एस.सी. 1015; *विजय कुमार* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1983 एस.सी 622 ।

83 *हरियाणा राज्य* बनाम *करनाल डिस्टलरी*, ए 1977 एस.सी. 781 (पैरा 9) ।

84 *एवी सभा* बनाम *आर.आई.ई कमिश्नर*, ए 1976 एस.सी 475 (पैरा 7) ।

85. *बोकारो* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1963 एस.सी. 516; *सोहन लाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी 529 (*531*); *डी.एल.एफ हाऊसिंग* बनाम *दिल्ली नगरपालिका*, ए. 1976 एस.सी. 386 (पैरा 18) ।

86. *रासबिहारी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए 1969 एस.सी 1081 (*1088*) ।

87. *गुरुस्वामी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1954 एस.सी 592; *नंदकिशोर* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 1992 (*1994*) ।

88. *मद्रास राज्य* बनाम *पेरियैस्वामी*, (1961) एस.सी [सिविल अपील 440/60, तारीख 6-11-1961] ।

89. *सुब्रह्मण्य* बनाम *मद्रास राज्य*, (1965) एस.सी [सिविल अपील 560/65, तारीख 10-2-1965] ।

90. *धियाउ मल* बनाम दिल्ली राज्य, ए. 1959 एस.सी. 65 ।

91. *रमनलाल* बनाम *लौह और इस्पात नियंत्रक*, (1964) एस.सी. [रिट याचिका 89/63, तारीख 24-7-1964] ।

92. *वेंकटेश्वर* बनाम *आंध्र प्रदेश सरकार*, ए. 1966 एस.सी. 828 ।

93. *त्रिलोक* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, ए. 1976 एस.सी. 1988 ।

94. *देवीलाल* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए. 1965 एस.सी. 1150 (*1152*) ।

95. *हिम्मतलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1122 (*1128*); *शिवराम* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1964 एस.सी. 1095 (*1099*); *वेंकटेश्वरन* बनाम *रामचंद*, ए. 1961 एस.सी. 1506 ।

96. *केरल शिक्षा विधेयक का मामला*, ए. 1958 एस.सी. 956 (*981*) ।

अधिकार का अतिलंघन हुआ है तो अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन इस आधार पर नामंजूर नहीं किया जा सकता कि आवेदन उचित प्ररूप में नहीं है[95] या आवेदक गफलत या अयुक्तियुक्त विलंब या उपमत होने का दोषी है ।[96]

उच्चतम न्यायालय ने वाद में यह निर्णय किया है कि मूल अधिकार अंतर्वलित हैं। इसका यह अर्थ नहीं है कि न्यायालय आवेदन अस्वीकार करने के लिए उन बातों पर ध्यान नहीं देंगे जिनके कारण असाधारण उपचार देना मंजूर नहीं किया जाता ।[97] जैसे गफलत, या अयुक्तियुक्त विलंब[97-99] (देखिए पीछे अनुच्छेद 32) ।

आनुकल्पिक उपचार का उपलभ्य होना — (अ) 1. अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार विवेकाधीन है इसलिए यदि समान रूप से प्रभावी और पर्याप्त आनुकल्पिक उपचार[100, 1] उपलभ्य है तो उच्च न्यायालय उपचार तभी देगा जब उसके लिए सुदृढ़ आधार है ।[2-3]

2. आनुकल्पिक उपचार समान रूप से प्रभावी और पर्याप्त है या नहीं यह तथ्य का प्रश्न है । इसका निर्णय हर मामले में करना होगा । यह साबित करने का भार आवेदक पर होगा कि उपचार पर्याप्त नहीं है ।[3]

3. जहां साधारण विधिक कार्यवाही करके अर्थात् सिविल या दांडिक कार्यवाही करके[4-6] याची पर्याप्त अनुतोष प्राप्त कर सकता है वहां अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार देने से इंकार किया जा सकता है ।

अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन संविदा को प्रवृत्त कराने के लिए[7] या संविदा को शून्य घोषित करने के लिए[8] या अपकृत्य में अनुतोष के लिए[9] ग्रहण नहीं किया जाएगा । सरकार द्वारा वसूले धन के प्रतिदाय या लौटाने के लिए आवेदन ग्राह्य नहीं होगा यदि कुछ प्रतिवाद ऐसे हैं जिनके आधार पर उसी प्रयोजन का वाद खारिज हो जाएगा । आवेदन वहां भी ग्राह्य नहीं होगा जहां यह कहकर कि अन्य किसी कार्यवाही में निर्धारण अविधिमान्य ठहराया गया है आवेदन में केवल रुपए वापस पाने का अनुतोष मांगा गया है ।[5] या जहा याची यह चाहता है कि उसके हक की घोषणा कर दी जाए ।[9]

इस संदर्भ में सरकार के विरुद्ध वाद हेतुकों में सरकार के प्रभुत्वसंपन्न कार्य और सरकार द्वारा की गई संविदाओं में विभेद करना होगा । शराब के उत्पादन, वितरण और

97 *मून मिल्स बनाम औद्योगिक न्यायालय*, ए 1967 एस.सी. 1450 (*1453-54*) ।

98. *त्रिलोकचंद बनाम मुंशी*, ए. 1970 एस.सी 898; *दुर्गा प्रसाद बनाम मुख्य नियंत्रक*, ए. 1970 एस.सी. 769; *मध्य प्रदेश राज्य बनाम नंदलाल*, ए. 1987 एस.सी 251 (पैरा 23) ।

99 *हर स्वरूप बनाम महाप्रबंधक*, (1976) 1 एस.सी.डब्ल्यू.आर 382 (*391*); *मकाशी बनाम मेनन*, ए 1982 एस.सी. 101; *मुदगल बनाम सिंह*, ए 1986 एस.सी. 2086 (पैरा 7) ।

100 *अब्राहम बनाम आय-कर अधिकारी*, ए 1961 एस.सी. 609 ।

1 *वेलुस्वामी बनाम राजा*, ए. 1959 एस.सी. 423 ।

2. *रशीद अहमद बनाम म्यूनिसिपल बोर्ड*, (1950) एस.सी.आर. 566 (*572*) ।

3. *रशीद बनाम आई टी आई कमीशन*, ए 1954 एस.सी 207 (*210*) ।

4 *सोहन लाल बनाम भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी 529 ।

5. *मध्य प्रदेश राज्य बनाम भाईलाल*, ए. 1964 एस.सी. 1006 (*1011*) ।

6. *सुगनमल बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1965 एस.सी. 1740 (*1742*); *धानसिंह बनाम कर-अधीक्षक*, ए 1964 एस.सी 1419 (*1423*) ।

7 *बर्मा कन्स्ट्रक्शन कंपनी बनाम उड़ीसा राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1320 (*1323*); *पंजाब राज्य बनाम बलबीर*, ए. 1977 एस.सी. 1717 ।

8. *भारतीय तंबाकू निगम बनाम मद्रास राज्य*, ए. 1954 मद्रास 549 ।

9. *सोहन लाल बनाम भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी. 529; *हिन्दुस्तान स्टील बनाम कल्याणी*, (1973) यू.जे.एस.सी. 485 ।

उसके लाइसेंस का विनियमन प्रभुत्वसंपन्न कार्य है ।[10] किंतु शराब के विनिर्माता द्वारा सरकार को शराब का विक्रय किया जाना दोनों के बीच संविदा का विषय है ।[11-12]

जो व्यक्ति सरकार के प्रभुत्वसंपन्न कार्य से व्यथित है वह अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन कर सकता है ।[10] किंतु सरकार या किसी कानूनी प्राधिकरण द्वारा संविदा भंग का उपचार[13] सिविल वाद[11] है । सरकार के ऐसे आदेश को अपास्त करने के लिए अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन किया जा सकता है जो संविधान[14] या किसी कानून का उल्लंघन करता है[13] चाहे वह संविदा से ही उत्पन्न हुआ हो । इस सिद्धांत पर सरकार की स्कीम में सरकार ने जो वचन दिए थे उन्हें सरकार के विरुद्ध प्रवृत्त किया गया यद्यपि स्कीम असांविधिक थी ।[15]

4. संविधान में ही कोई आनुकल्पिक विकल्प दिया गया हो ।[16]

5. जहां याची ने सामान्य विधि[17] के अधीन कोई वाद[18] या अन्य विधिक कार्यवाही[19] पहले से संस्थित कर दी है तो उसी प्रश्न पर अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन सामान्यतः ग्रहण नहीं किया जाएगा । कम से कम उस समय तक नहीं जब तक कि कार्यवाहियां निपटा नहीं दी जातीं । वह एक साथ दो उपचारों के लिए प्रयत्न नहीं कर सकता ।[17] किंतु ऐसे मामलों में भी उचित प्रकरणों में न्यायालय अनुतोष दे सकता है । जैसे — बिना विधि के प्राधिकार के कर अधिरोपित करने पर ।[20]

किंतु यदि अर्जीदार ने सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन (पुनरीक्षण में) उच्च न्यायालय से आदेश प्राप्त कर लिया है तो अधीनस्थ न्यायालय का आदेश उसमें विलीन हो जाएगा । अब आगे अनुच्छेद 226 या 227 के अधीन आवेदन नहीं हो सकता ।[21]

6. यदि आनुकल्पिक उपचार उपलब्ध है तो याची यह नहीं कर सकता कि उसे कालवर्जित हो जाने दे और तब अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन करके यह कहे कि उसे और कोई उपचार उपलब्ध नहीं है । आवेदन तभी मंजूर होगा जब वह यह बता दे कि कुछ आपवादिक परिस्थितियां थीं जिनके कारण आनुकल्पिक उपचार कालवर्जित हो गया ।[22]

(आ) 1. आनुकल्पिक उपचार उपलब्ध के होने के कारण अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार पूर्णतः वर्जित नहीं हो जाता । वह एक ऐसी बात है जिस पर न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी विवेक शक्ति का प्रयोग करते समय विचार करेगा ।[23] इसका यह

10. *हर शंकर* बनाम *उप उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, (1975) 3 एस.सी.आर. 254 (पैरा 16-18) ।

11. *करनाल डिस्टिलरी* बनाम *भारत संघ*, (1977) यू.जे.एस.सी. 108 (पैरा 6-7) ।

12. *शाम लाल* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 2045 (पैरा 19-20) ।

13. तुलना कीजिए, *कुलचिन्दर* बनाम *हरदयाल*, ए. 1976 एस.सी. 2216 (पैरा 12); *सुगनमल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 1940; *केरल राज्य* बनाम *एल्युमिनियम इण्डस्ट्रीज़*, (1965) 16 एस.टी.सी. 689 (एस.सी.) ।

14. *हनीफ* बनाम *असम राज्य*, (1969) 2 एस.सी.सी. 782 (*785-86*) ।

15. *भारत संघ* बनाम *एंग्लो-अफगान एजेंसीज़*, (1968) 2 एस.सी.आर. 366 । *सेंचुरी स्पिनिंग कंपनी* बनाम *उल्हासनगर नगरपालिका*, ए. 1971 एस.सी. 1021 (पैरा 10-11) भी देखिए ।

16. *भारत संघ* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 127 ।

17. *रशीद* बनाम *आई.टी.आई. कमीशन*, ए. 1954 एस.सी. 207 ।

18. *जय सिंह* बनाम *भारत संघ*, ए. 1977 एस.सी. 898 ।

19. *श्रीवास्तव* बनाम *भारत संघ*, (1977) यू.जे.एस.सी. 344 (पैरा 4); *त्रिलोक* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, ए. 1976 एस.सी. 1986 (पैरा 13) ।

20. *खुरई नगरपालिका* बनाम *कमल कुमार*, ए. 1965 एस.सी. 1321 (*1324*) ।

21. *शंकर* बनाम *कृष्णजी*, (1969) 2 एस.सी.सी. 74 : ए. 1970 एस.सी. 1 ।

22. *वेंकटेश्वरन* बनाम *रामचंद*, ए. 1961 एस.सी. 1506 (*1510*) ।

23. *अपर सीमाशुल्क कलक्टर* बनाम *शांतिलाल*, ए. 1966 एस.सी. 197 (*202*); *बाबूराम* बनाम *जिला परिषद*, ए. 1969 एस.सी. 556 (*558*) ।

अर्थ नहीं है कि आपवादिक परिस्थितियों में न्यायालय उपचार दे ही नहीं सकता ।[24] यदि उच्च न्यायालय ने विवेक शक्ति का प्रयोग करके अनुचित कार्य नहीं किया है तो उच्चतम न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा ।[25]

सामान्यतया न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन संपत्ति के हक के प्रश्नों का अवधारण नहीं करता है[26] किंतु यदि कार्यपालिक प्राधिकारी किसी व्यक्ति के कब्जे में विधिविरुद्ध हस्तक्षेप करता है तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है चाहे राज्य ने उसके हक को प्रश्नगत किया हो ।[27]

2. पर्याप्त आनुकल्पिक उपचार के विद्यमान होने से अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार देना वर्जित नहीं हो जाता । चाहे यह उपचार सांविधिक[28] हो (जैसे प्रशासकीय अपील,[29] या पुनरीक्षण[30]) या अन्यथा[31] । जैसे —

(क) जहां मूल अधिकार का अतिलंघन हुआ है उदाहरण —

जहां कोई ऐसा कर लगाया गया है जो अनुच्छेद 286 का उल्लंघन करता है[31] या कर का अधिरोपण अधिकारातीत है क्योंकि उसे विधि ने ही छूट दे रखी है,[33] या विक्रय पर अधिरोपित कर अनुच्छेद 19(1)(छ) का उल्लंघन करता है ।[31]

(ख) जहां संविधान के किसी आज्ञापक उपबंध का उल्लंघन किया गया है जैसे अनुच्छेद 265 ।[34]

(ग) जहां वह अधिनियम जिसमे आनुकल्पिक उपचार की व्यवस्था है असांविधानिक या अधिकारातीत है ।[35]

(घ) जहां वह कानूनी नियम जिसके अधीन आदेश दिया गया है उस कानून के अधिकारातीत है जिसके अधीन वह बनाया गया है ।

(ङ) उस प्राधिकारी ने जिसके विरुद्ध परिवाद किया गया है नैसर्गिक न्याय के नियमों का उल्लंघन किया है ।[32,36]

(च) आदेश देने वाले प्राधिकारी की अधिकारिता में त्रुटि है,[37-39] या प्राधिकारी ने ऐसी शर्त अधिरोपित की है जो शक्तिबाह्य है ।[40]

(छ) जहां न्यायालय के आदेश में भूल को सुधारने के लिए संपत्ति वापस करना

---

24 *भारत संघ* बनाम *वर्मा*, (1958) एस सी आर 499 (*503-04*); *वेलुस्वामी* बनाम *राजा*, ए 1959 एस सी. 422 (*429*); *खुरई नगरपालिका* बनाम *कमल कुमार*, ए 1965 एस सी 1421 (*1424*); *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *एन ए कोल कंपनी*, 1 एस सी डब्ल्यू आर 133 ।

25. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *इंडियन ह्यूम पाइप*, ए 1977 एस सी 1132 (पैरा 4); *जिला परिषद* बनाम *मंडन शुगर मिल्स*, ए 1968 एस.सी 98 ।

26 *हिन्दुस्तान स्टील* बनाम *कल्याणी*, (1973) यू जे एस सी 485 (पैरा 16-18) ।

27. *हनीफ* बनाम *असम राज्य*, (1969) 2 एस सी सी 782

28. *बी आई कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, (1955) 2 एस सी आर 603 (*620, 627*); *हिम्मत लाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1954) एस सी आर 1122 (*1126*) ।

29 *जिला परिषद* बनाम *के एस मिल्स*, ए 1968 एस सी. 98 (*100*) ।

30. *सीमाशुल्क कलक्टर* बनाम *बावा*, ए 1968 एस सी 13 (*15*) ।

31 *मुंबई राज्य* बनाम *यूनाइटेड मोटर्स*, (1953) एस सी आर 1069 ।

32 *राजस्थान राज्य* बनाम *कर्मचंद*, ए 1965 एस सी 913 (*916*); तुलना कीजिए, *कॉफी बोर्ड* बनाम *संयुक्त सी टी ओ*, ए 1971 एस सी 870 (*876-77*) ।

33 *कैलाश नाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1957 एस.सी. 790 ।

34. *खुरई नगरपालिका* बनाम *कमल कुमार*, ए 1965 एस.सी. 1321 (*1324*) ।

35 *बी आई कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर 603 (*620, 627*) ।

36 *वेंकटेश्वरन* बनाम *रामचंद*, ए 1961 एस सी 1506 (*1509*) ।

37. *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *शिव रतन*, ए. 1966 एस.सी 142 ।

38. *कलकत्ता डिस्काउंट कंपनी* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1961 एस.सी 372 (*380*) ।

39. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *एन ए कोल कंपनी*, (1971) I एस.सी.डब्ल्यू.आर 183; *टाटा इंजीनियरिंग* बनाम *सहायक आयुक्त*, ए. 1967 एस सी 1401 ।

40. *त्रिलोकचंद* बनाम *मोतीचंद*, (1969) एस सी आर. 110 ।

आवश्यक है । अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि वाद के रूप में उपचार उपलब्ध था ।[41]

(ज) जहां आनुकल्पिक उपचार निष्प्रभावी है[42] या उसमें इतना विलंब हो जाएगा कि आवेदक पर ऐसा प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा जिसे ठीक नहीं किया जा सकता या प्रक्रिया लंबी चलेगी और अनावश्यक परेशानी होगी ।[30, 38]

(झ) अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका में जिस अनुतोष की मांग की गई है वह देने के लिए[43] या उसमें उपस्थित प्रश्न को निपटाने के लिए[44] सिविल न्यायालय या अन्य अधिकरण सक्षम नहीं है । वह विधि जिसमें आनुकल्पिक उपचार का उपबंध किया गया है संविधान के आज्ञापक उपबंध का उल्लंघन करती है,[35] जैसे अनुच्छेद 286[45] या विधायी क्षमता के अभाव के कारण यह नहीं कहा जा सकता कि आनुकल्पिक उपचार उपलब्ध है ।

3. प्रतिषेध[41] या उत्प्रेषण देने से इंकार करने के लिए आनुकल्पिक उपचार का होना उचित आधार नहीं है जहां, —

(क) अधिकारिता का न होना या उसके बाहर काम किया जाना सुस्पष्ट है और व्यथित व्यक्ति ने आवेदन किया है ।[36, 45]

(ख) अभिलेख में ऐसी भूल है जो स्वयं स्पष्ट है ।[46-47]

(ग) नैसर्गिक न्याय के नियमों का उल्लंघन हुआ है ।[47-48]

(घ) मूल अधिकारों का उल्लंघन हुआ है ।[49]

(ड) आनुकल्पिक उपचार के होते हुए भी यदि उच्च न्यायालय अपने विवेक से अनुतोष प्रदान करता है तो उच्चतम न्यायालय अपील में सामान्यतः हस्तक्षेप नहीं करेगा ।[50]

कानूनी उपचार समाप्त करने का नियम — 1. जहां कोई कानून किसी अधिकार या दायित्व का सृजन करता है और उस अधिकार या दायित्व को प्रवृत्त करने के लिए प्रक्रिया उसी कानून में विहित की गई है तो अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन करने के पहले उस विशिष्ट कानूनी उपचार को पाने के लिए प्रयास करना होगा ।[51-52] उच्च न्यायालय यह कह सकता है कि वह अपने विवेकाधिकार का प्रयोग तभी करेगा जब कानूनी उपचार समाप्त हो गए हों ।[48, 53] इसमें प्रशासनिक अभ्यावेदन भी सम्मिलित हैं ।[54] विशेषकर जब अधिकारिता का प्रश्न साक्ष्य[55] या विवादास्पद तथ्यों के अधिमूल्यन पर निर्भर है ।[56]

---

41 *पीटरसन* बनाम *फोर्बस*, ए 1963 एस सी 692 (*697-98*) ।

42. *राम और श्याम* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1985 एस सी. 1147 (पैरा 9) ।

43 *ईशा* बनाम *टी आर ओ*, ए 1975 एस सी 2135 ।

44 *डी एम.सी बैंक* बनाम *दुलीचंद*, ए 1969 एस सी. 1320 ।

45 तुलना कीजिए, *कार्ल स्टिल* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1961 एस सी 1615 (*1621*) ।

46 *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *बाबूलाल*, ए 1977 एस सी. 1718 ।

47 *चंपालाल* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1990 एस सी. 645 (*647*) ।

48. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *नूह*, ए. 1958 एस सी. 86 ।

49 *हिम्मतलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1954) एस सी.आर 1122 ।

50 *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *इंडियन ह्यूम पाइप कंपनी*, (1977) 2 एस.सी सी 725 ।

51 *अब्राहम* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1961 एस सी. 609 ।

52 *थानसिंह* बनाम *कर-अधीक्षक*, ए. 1964 एस.सी 1419 (*1423*); *वेलुस्वामी* बनाम *राजा*, ए. 1959 एस सी. 422 (*429*); *भोपाल शुगर इण्डस्ट्रीज* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए 1967 एस.सी. 549 (*552*) ।

53. *बी.आई.एस.एन कंपनी* बनाम *जसजीत*, ए. 1964 एस सी. 1451 (*1453*); *सरन* बनाम *लखनऊ विश्वविद्यालय*, ए. 1976 एस सी 2428 (पैरा 16); *रघुबंस* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1972) यू.जे.एस.सी. 95 ।

54 *राजेन्द्र* बनाम *हरियाणा राज्य*, (1972) यू.जे.एस.सी. 664 ।

55. *एक्सप्रेस न्यूज़पेपर्स* बनाम *कर्मकार*, ए 1963 एस.सी 569 (*574*) ।

56. *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *शिव रतन*, ए. 1966 एस.सी. 142 (*145*); *स्टैंडर्ड मिल्स* बनाम *रामलिंगम*, (1964) एस.सी. [सिविल अपील 24/64)]; *चंपालाल* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1970 एस.सी 645 (*647*) ।

2. यह नियम वहां भी लागू होगा जहां यह कानूनी उपचार है कि विधि के प्रश्न पर उच्च न्यायालय को निर्देश किया जाएगा ।[52]

3. कानूनी उपचार को निःशेष करने का नियम नीति, सुविधा और विवेक का नियम है । यह विधिक आदेश नहीं है ।[57] आपवादिक परिस्थितियों में न्यायालय विवेकाधीन रिट दे सकता है (जैसे उत्प्रेषण) चाहे कानूनी उपचार निःशेष नहीं हुए हों ।[58] इस नियम के कारण अनुच्छेद 226 के अधीन न्यायालय की अधिकारिता समाप्त नहीं हो जाती ।[57, 59]

4. ये आपवादिक मामले क्या हो सकते हैं यह विस्तार से गिनाया नहीं जा सकता ।[51] यह मामला तो रिट निकालने वाले न्यायालय के विवेक पर छोड़ना ही उत्तम होगा ।[48] प्रत्येक मामले के तथ्यों को देखकर ही विवेक का प्रयोग करना होगा । नीचे कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं जिसमें न्यायालय अनुतोष दे सकता है चाहे कानूनी उपचार समाप्त न हुए हों ।

(i) जहां उस अधिकारी या प्राधिकारी या अभिकरण[60] को कार्यवाही करने की अधिकारिता थी ही नहीं,[61] जैसे शक्तिबाह्य विधि के अधीन,[62-63] या कानून के त्रुटिपूर्ण निर्वचन के आधार पर[61] कार्यवाही की गई है[62-63] या जहां कर का अधिरोपण विधि के प्राधिकार के बिना किया गया है[64] या अधिकारातीत है[64] या ऐसी सामग्री नहीं है जिसके आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सके कि अधिकारिता के प्रयोग के लिए कानून में अपेक्षित पुरोभावी शर्तें विद्यमान थीं ।[65] किंतु यदि अधिकारिता संबंधी तथ्य का अवधारण करने के लिए दीर्घ और विस्तृत जांच करनी होगी या ऐसा साक्ष्य लेना होगा जो शपथ पत्र पर नहीं लिया जा सकता[60] तो उपचार नहीं दिया जाएगा ।

(ii) आक्षेपित आदेश नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन में किया गया है ।[62]

(iii) कानूनी उपचार पाने का अधिकार समाप्त या वर्जित हो गया है और इसमें याची का कोई दोष नहीं है ।[66]

(iv) जहां सांविधिक, अपीली या पुनरीक्षण प्राधिकारी के कार्यों से यह स्पष्ट है कि आक्षेपित आदेश के पुनरीक्षण के लिए उससे अनुरोध करना निरर्थक है ।[66]

(v) अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका में दिए गए आधारों पर अनुतोष देना कानूनी प्राधिकारी की क्षमता के बाहर है ।[67]

(vi) जहां आक्षेपित आदेश से मूल अधिकारों का अतिलंघन हुआ है ।[57]

5 यदि उपर्युक्त आपवादिक परिस्थितियों जैसी कोई बात नहीं है तो कानूनी उपचारों को समाप्त किए बिना अनुच्छेद 226 के अधीन अर्जी स्वीकार नहीं की जा सकती । यह कोई कारण नहीं कि उपचार दुर्भर है उदाहरणार्थ, अपीलार्थी को अपील करने के पहले निर्धारित

57. *वेंकटेश्वरन* बनाम *रामचंद*, ए. 1961 एस.सी. 1506 (*1509-10*) ।

58 *मुंगेर कलक्टर* बनाम *केशव*, ए 1962 एस.सी 1694 (*1703*); *जहरीमल* बनाम *सहायक आय-कर अधिकारी*, ए. 1970 एस.सी 1980 (*1981*) ।

59 *भारत संघ* बनाम *वर्मा*, (1958) एस.सी.आर 499 (*503-04*) ।

60 *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *शिव रतन*, ए 1966 एस.सी 142; *कलकत्ता डिस्काउंट कंपनी* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1961 एस.सी. 372 (*380*) ।

61. *भोपाल शुगर इंडस्ट्रीज* बनाम *दुबे*, (1963) 14 एस.टी.सी. 410 (एस.सी.) ।

62. तुलना कीजिए, *कार्ल स्टिल* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1961 एस.सी. 1615 (*1621*); *बाबूराम* बनाम *जिला परिषद*, ए. 1969 एस.सी. 556 (*559*) ।

63. *सीमाशुल्क कलक्टर* बनाम *बावा*, ए 1968 एस.सी. 13 (*15*) ।

64. *बिहारीलाल* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, (1965) 17 एस.टी.सी. 508 (*509*) एस.सी. ।

65. *कलकत्ता डिस्काउंट कंपनी* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1961 एस.सी. 372 (*380*) ।

66. *अपर सीमाशुल्क कलक्टर* बनाम *शांतिलाल*, ए. 1966 एस.सी. 197 (*202*) ।

67. *वेंकटरमन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1966) 17 एस.टी.सी. 418 एस.सी. ।

रकम जमा करनी पड़ेगी क्योंकि यह पुरोभाव्य शर्त है ।[60] किंतु यदि भार डालने वाला आदेश या विधि बिना अधिकारिता के है तो आवेदन स्वीकार्य होगा ।[63]

जहां आनुकल्पिक उपचार पर्याप्त नहीं है — 1. निम्नलिखित दशाओं में कानूनी उपचार पर्याप्त आनुकल्पिक उपचार नहीं है —

(क) उपचार विवेकाधीन है और अर्जीदार साधिकार उसे नहीं पा सकता ।

(ख) अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत ।[60] जहां उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 136 के अधीन इजाजत नहीं दी है वहां भी अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप करने की उच्च न्यायालय की अधिकारिता समाप्त नहीं हो जाती । परंतु किसी मामले में अनुतोष दिया जाए या नहीं यह निर्णय करने के लिए इस बात पर विचार किया जा सकता है ।[68] विशेषकर तब जब वे आधार हैं वही हैं जिन पर अनुच्छेद 136 के अधीन विशेष इजाजत की मांग की गई है ।[69]

(ग) अनुच्छेद 227 के अधीन अनुतोष ।[70]

(घ) जब अनुतोष आभास मात्र है ।[71]

(ङ) आनुकल्पिक उपचार समान रूप से प्रभावी नहीं है ।[63,72]

(च) जहां आनुकल्पिक उपचार दुर्भर है[72] और घोर अन्याय हुआ है ।[73]

(छ) जहां आनुकल्पिक उपचार में अत्यधिक विलंब हुआ है ।[74]

(ज) जहां सांविधानिक प्रश्न अंतर्वलित है ।[75]

अनुच्छेद 226 के अधीन कौन आवेदन कर सकता है — 1. अनुच्छेद 226 के अधीन जो अधिकार प्रवृत्त किए जाने हैं वे सामान्यतया याची के ही अधिकार होने चाहिए ।[76] बंदी प्रत्यक्षीकरण[77] और अधिकार-पृच्छा[78] इसके अपवाद हैं । अन्य शब्दों में अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन का आधार जो अधिकार है वह व्यक्ति का अधिकार है ।[78-79]

(क) जो व्यक्ति मूल अधिकार के अतिलंघन का परिवाद करता है उसे यह दिखाना होगा कि वह मूल अधिकार उसे प्राप्त है ।[77] जो व्यक्ति नागरिक नहीं है वह ऐसे मूल अधिकार को प्रवृत्त कराने के लिए आवेदन नहीं दे सकता जो केवल नागरिकों के लिए है जैसे अनुच्छेद 19 ।[80]

(ख) जहां अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन मूल अधिकार से भिन्न अधिकार को प्रवृत्त कराने के लिए है वहां आवेदन स्वीकार किए जाने की पुरोभाव्य शर्त यह है कि

68 *शिवराम* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1964 एस सी 1096 (*1099*) ।

69 तुलना कीजिए, *भारत कला भंडार* बनाम *नगरपालिका समिति*, ए. 1966 एस.सी. 249 (*261*) ।

70. *सरीन* बनाम *पाटिल*, ए. 1954 मुंबई 171 ।

71. *बिहारी लाल* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, (1966) 17 एस.टी.सी. 508 (एस.सी.); *बाबूराम* बनाम *जिला परिषद*, ए 1969 एस.सी 556 (*558-59*); *बंगाल इम्यूनिटी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 661 (*669*) ।

72. *अबूल* बनाम *शांतिलाल*, ए. 1966 एस.सी. 197 (*202*) ।

73. *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *शिव रतन*, ए. 1966 एस.सी. 142 (*144*) ।

74. *तिलोकचंद* बनाम *मोतीचंद*, (1969) एस.सी.आर. 110; *सी.आई.डब्ल्यू.टी. कारपोरेशन* बनाम *बी.एन. गांगुली*, ए. 1986 एस.सी. 1571 ।

75. *मैसूर राज्य* बनाम *चबलानी*, ए. 1958 एस.सी. 325 (*328*) ।

76. *उड़ीसा राज्य* बनाम *रामचन्द्र*, ए. 1964 एस.सी. 685; *जोनाला* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 163 (*167*) ।

77. *चिरंजीत लाल* बनाम *भारत संघ*, (1950) एस.सी.आर. 869 ।

78. *कलकत्ता गैस कंपनी* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1044 ।

79. *प्रताप सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 72 ।

80. *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण*, ए. 1959 एस.सी. 395 (*402*) ।

विधिक अधिकार की विधिमान्यता साबित की जाए ।[81] यह अधिकार सांविधानिक हो सकता है या केवल कानूनी अधिकार ।[82] यह आवश्यक नहीं कि वह संपत्ति संबंधी अधिकार हो ।[83]

(ग) कोई भी व्यक्ति जो किसी कार्य या लोप से प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुआ है रिट के लिए आवेदन कर सकता है चाहे उसका विषयवस्तु में सांपत्तिक हित न हो । वैश्वासिक हित न हो तब भी आवेदन किया जा सकता है ।[83]

(घ) अधिकार विद्यमान विधिक अधिकार होना चाहिए ।[84]

(ङ) याची ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जिस पर उस कार्य या लोप का प्रतिकूल प्रभाव पड़ा हो ।[85] वह ऐसा व्यक्ति नहीं हो सकता जिसका उससे कोई संबंध नहीं है ।

(च) जहां कोई कानून किसी संविदा से उद्‌भूत होने वाले अधिकारों को प्रभावित करता है वहां उस संविदा का कोई भी पक्षकार उसकी सांविधानिकता को प्रश्नगत कर सकता है ।[86]

(छ) अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन उस समय दिया जा सकता है जब आवेदक के विधिक अधिकारों को क्षति पहुंची है और तब भी जब कि ऐसा होने की आसन्न आशंका है ।[87] साधारणतया न्यायालय किसी अधिनियम की सांविधानिकता पर तभी विचार करता है जब वह प्रवृत्त हो गया हो ।[88]

2 यदि किसी कानूनी उपबंध का उल्लंघन हुआ है तो भी न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन अर्जी तभी ग्रहण करेगा जब अर्जीदार यह दिखा देगा कि कानून ने उसे न्यायनिर्णेय विधिक अधिकार प्रदान किया है । इस विषय में वह साधारण जनता से भिन्न है[89] या वह यह दिखाता है कि यदि आक्षेपित नियम या आदेश प्रवृत्त किया जाता है तो उस पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा ।[90]

3 यदि कार्यवाही में पर्याप्त विधिक हित की शर्त पूरी हो जाती है तो न्यायालय, आपवादिक मामलों में, कार्यवाही से असंबद्ध व्यक्ति को भी अनुच्छेद 226 के अधीन ऐसी कार्यवाही की विधिमान्यता पर आक्षेप करने की अनुमति दे सकता है ।[89] उदाहरणार्थ — घोर अन्याय न हो जाए इसलिए ।[89]

4 कंपनी और उसके अंशधारियों की विधिक हैसियत के बारे में देखिए पीछे अनुच्छेद 19 ।

संक्षेप में कोई निगम निम्नलिखित के प्रवर्तन के लिए आवेदन कर सकता है —

(i) अनुच्छेद 14 के अधीन मूल अधिकार;

(ii) कोई भी कानूनी अधिकार;

(iii) ऐसी कार्यपालिका कार्यवाही के विरुद्ध जिसका कोई विधिक आधार नहीं है ।

---

81 *मदनगोपाल* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1952) एस.सी.आर 28 ।

82 *पंजाब राज्य* बनाम *सूरज*, ए 1963 एस.सी 507 (*509*) ।

83 *वेंकटेश्वर* बनाम *आंध्र प्रदेश सरकार*, ए 1966 एस.सी 828 (*833*) ।

84 *जोसेफ* बनाम *केरल राज्य*, ए 1965 एस.सी. 1514 (*1515*); *धर्मदास* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1975 एस.सी 1069 (पैरा 20) ।

85 *जे.एन. एंड कंपनी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए 1971 एस.सी 1507 (*1510*) ।

86 *बाम्बे डाईंग कंपनी* बनाम *मुंबई सरकार*, ए. 1958 एस.सी 329 ।

87 *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 661; *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए 1959 एस.सी. 725 ।

88 *चंद्रशेखर* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1971) II एस.सी.डी 1171 (*1175*) ।

89. *देसाई* बनाम *रोशन*, ए 1976 एस.सी. 578 (पैरा 41); *एन.आर.एफ. मिल्स* बनाम *गौडा*, ए 1971 एस.सी. 246 ।

90 *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *जयरामन*, ए 1975 एस.सी 633 (पैरा 10) ।

किंतु वह अनुच्छेद 226 के अधीन निम्नलिखित के प्रवर्तन के लिए आवेदन नहीं कर सकता —

(i) अनुच्छेद 19 के अधीन मूल अधिकार;[91]

(ii) किसी संविदा के निबंधनों को प्रवृत्त करने का अधिकार, चाहे ये निबंधन कानूनी उपबंधों का ही पुनर्लेखन क्यों न हो । ऐसी दशा में संविदा का विनिर्दिष्ट अनुपालन या नुकसानी ही सही उपचार है ।[91]

लोकहित वाद — अ. 'सुने जाने के अधिकार' के साधारण नियम का सर्वाधिक महत्वपूर्ण अपवाद उन मामलों में स्वीकार किया गया है जहां राज्य की कार्यवाही से जनता को क्षति पहुंची है । किसी एक व्यक्ति को नहीं, सामान्य जन को । यह अधिकथित किया गया है कि जहां लोक कर्तव्य का भंग हुआ है या संविधान के किसी उपबंध का भंग हुआ है जिससे साधारण जन को क्षति हुई है तो कोई भी व्यक्ति अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका देकर उस लोक कर्तव्य को या संविधान के उस उपबंध को प्रवृत्त करा सकता है ।[92]

जैसे, कोई भी विधि व्यवसायी, न्यायाधीशों के अंतरण के आदेश की सांविधानिकता को प्रश्नगत कर सकता है ।[92]

इस संदर्भ में निम्नलिखित बातें स्मरणीय हैं :

(क) व्यक्तिगत क्षति या अपकृत्य के मामलों में कोई तीसरा पक्षकार अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार नहीं प्राप्त कर सकता ।[92]

(ख) किंतु जहां किसी विशेष वर्ग या समूह के साथ विधिक दृष्टि से सदोष कार्य किया गया है या ऐसे वर्ग या समूह का विधिक अधिकार भंग हुआ है तो कोई भी व्यक्ति जो सद्भावपूर्वक न्याय की प्राप्ति के लिए आगे आता है वह न्यायालय में अभ्यावेदन कर सकता है ।[92] यदि वह व्यक्तिगत लाभ के लिए या राजनीति से प्रेरित होकर या किसी अन्य उद्देश्य से ऐसा कर रहा है तो उसे अनुमति नहीं दी जाएगी ।[93]

आ पूर्वगामी नियम से यह निष्कर्ष निकलता है कि जहां कोई लोक क्षति पहुंचाई गई है वहां जनता की कोई संस्था (जिसका उस विषय में विशेष हित हो) या उसका कोई सदस्य[92, 94] अनुच्छेद 226 के अधीन उन लोगों की ओर से याचिका दे सकता है जो राज्य की कार्यवाही से प्रभावित होंगे । वह संस्था निगमित है या नहीं इससे अंतर नहीं पड़ता ।[92]

इ. 'लोकहित वाद' से संबंधित पूर्वगामी नियम का विस्तार करते हुए उच्चतम न्यायालय कुछ संस्थाओं और संगठनों के पत्र पर भी कार्यवाही कर लेता है । उस पत्र को ही अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका मान लिया जाता है ।[95]

ई. इस 'लोकहित वाद' के नियम की भी सीमा है । जहां किसी शासकीय कार्य से किसी व्यक्ति विशेष को या व्यक्तियों को क्षति पहुंचती है किंतु साथ ही साधारण जनता

91 *डी एफ ओ बनाम विश्वनाथ टी कंपनी*, ए 1981 एस सी 1369 (पैरा 7-9) ।

92. *गुप्ता बनाम भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी 149 (*194*); *नाकारा बनाम भारत संघ*, ए. 1983 एस सी 130 (पैरा 64) डी बी. [पेंशनभोगियों का एक संगम, जो पेंशन नियम से प्रभावित हुआ], *संजीत बनाम राजस्थान राज्य*, (1983) यू.जे एस सी 161 (पैरा 1) [सामाजिक कार्य और अनुसंधान केंद्र निदेशक, अकाल सहायता कर्मकारों को मजदूरी संदाय की पद्धति का विरोध करते हुए], *वाधवा बनाम बिहार राज्य*, ए 1987 एस.सी. 579 (पैरा 3) [राजनीति विज्ञान के प्रोफेसर ने सांविधानिक उपबंधों के उल्लंघन का विरोध किया]; *सच्चिदानंद बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 1109 (पैरा 60); *मेहता बनाम भारत संघ*, (1987) 1 एस.सी.सी. 395 ।

93. *रमन बनाम आई.ए.ए.आई.*, ए. 1979 एस सी 1628 (*1651*) ।

94. *रतलाम नगरपालिका बनाम वर्धीचंद*, ए. 1980 एस.सी. 1622; *उर्वरक निगम बनाम भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 344 (पैरा 41, 44, 48); *शीला बनाम भारत संघ*, ए. 1986 एस.सी. 1773 (पैरा 8-9) ।

95. *पीपुल्स यूनियन बनाम भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 1473 (पैरा 1); *हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम पेरेन्ट*, ए. 1985 एस.सी. 910 (पैरा 4) ।

को भी क्षति पहुंचती है तब यदि प्रभावित व्यक्ति कार्यवाही में संयुक्त नहीं होते हैं तो कोई अन्य व्यक्ति कार्य या लोप की वैधता पर आक्षेप नहीं कर सकता क्योंकि किसी व्यक्ति को यह अधिकार नहीं है कि वह उन व्यक्तियों को उपचार दिलाए जो उपचार नहीं चाहते हैं ।[92]

उ. लोकहित के सिद्धांत का और विस्तार किया जाए तो न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन त्रुटिपूर्ण आवेदन पर भी विचार कर सकता है यदि उसका संबंध लोकहित के मामले से है ।[96]

पूर्वन्याय : क्या दूसरा आवेदन दिया जा सकता है — 1 जहां अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका गुणागुण के आधार पर खारिज की जाती है वहां वह 'पूर्वन्याय' के रूप में कार्य करता है । उसके बाद अनुच्छेद 226 के अधीन नई याचिका नहीं दी जा सकती । यदि याचिका में दूसरे पक्षकार को सुने बिना भी आदेश दे दिया गया है तो पूर्वन्याय का सिद्धांत लागू होगा ।[97]

2 किंतु अनुच्छेद 226 के अधीन दूसरी याचिका निम्नलिखित परिस्थितियों में ग्रहण की जाएगी :

(क) याचिका वापस ले ली गई थी और इस कारण खारिज की गई थी । कारण यह है कि ऐसे मामलों में गुणागुण के आधार पर कोई निर्णय नहीं होता है ।[97]

(ख) याचिका संक्षिप्तत खारिज कर दी गई थी । कोई सकारण आदेश नहीं दिया गया था या गुणागुण के आधार पर कोई निर्णय नहीं हुआ था ।[97]

(ग) याचिका इस आधार पर नामंजूर की गई कि याची को सुने जाने का अधिकार नहीं था ।

(घ) याचिका इस आधार पर अस्वीकार की गई कि वह समयपूर्व की गई थी ।

(ङ) याचिका विलंब के आधार पर खारिज की गई है या आनुकल्पिक उपचार उपलब्ध था ।[97]

(च) याचिका इस आधार पर खारिज की गई कि उसमें ऐसे प्रश्न अंतर्वलित थे जिनका निर्णय वाद में ही हो सकता है ।[98]

(छ) वाद हेतुक भिन्न है ।[99]

(ज) जिस अधिनियम पर पूर्ववर्ती विनिश्चय आधारित था उसमें तात्विक परिवर्तन किए गए हैं ।[100]

3 अनुच्छेद 226 के अधीन कार्यवाही में पूर्वन्याय की वर्जना तभी लागू होती है जब निर्णय *गुणागुण* के आधार पर दिया जाता है । आन्वयिक पूर्वन्याय का सिद्धांत, पूर्वन्याय के सिद्धांत से अलग है । उसका भाग नहीं है । आन्वयिक पूर्वन्याय तो सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 11 से उत्पन्न होता है । अनुच्छेद 226 के अधीन कार्यवाही को वह लागू नहीं होगा ।[97.1]

4. जहां *गुणागुण* के आधार पर निर्णय हुआ है वहां उसी वाद हेतुक के आधार पर दूसरा आवेदन नहीं दिया जा सकता क्योंकि पूर्वन्याय का सिद्धांत उसे वर्जित करेगा ।[2]

---

96. *शिवाजीराव* बनाम *महेश*, ए. 1987 एस.सी. 294 (पैरा 35-36) ।

97. *दरयाव* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1457; *अमलगमेटेड कोलफील्ड्स* बनाम *जनपद सभा*, ए. 1964 एस.सी. 1013, *तिलोक चंद* बनाम *मुंशी*, ए 1970 एस.सी. 898 (*916*); *दुडानी* बनाम *शर्मा*, ए 1986 एस.सी. 1455 (पैरा 18) ।

98. *जोसेफ* बनाम *केरल राज्य*, ए 1965 एस.सी. 1514 (*1515*); *धर्मदास* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1975 एस.सी. 1069 (पैरा 20) ।

99. *अनवर* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1637 ।

100. *अमृतसर नगरपालिका* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1969 एस.सी. 1100 (*1104*) ।

1. *देवीलाल* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए 1965 एस.सी. 1150 (पैरा 11-12) में इस सिद्धांत को सीमित कर दिया गया ।

2 *गुलाबचंद* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 1158 (*1166*); *गुलाम सरवर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1335 [तथापि, देखिए *कपूरचंद* बनाम *कर वसूली अधिकारी*, (1968) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 417 (*423*)] ।

जहां अर्जीदार ने अपने निरोध के विरुद्ध आवेदन किया था वहां उसे वही तर्क[2क] पश्चात्वर्ती याचिका में देने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यह तभी हो सकता है जब नई परिस्थितियां उत्पन्न हुई हों जिनके कारण पुनः अर्जी देने का औचित्य बन गया हो।[3]

जहां अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका के कारण अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका वर्जित हो जाती है — 1 उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया है कि जहां अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका का गुणागुण के आधार पर विनिश्चय किया गया है वहां पूर्वन्याय का नियम लागू होगा और उसी आधार पर आवेदन वर्जित होगा।[2क, 4] यदि उच्च न्यायालय आवेदन को संक्षेपतः खारिज कर देता है और उसने अपने आदेश के कारण दिए हैं तो भी नया आवेदन नहीं होगा चाहे दूसरे पक्षकार को नोटिस नहीं दिया गया हो।[5] ऐसे मामले में पक्षकार के लिए उच्चतम न्यायालय में अपील करना ही उचित उपचार है।[4-5]

2 ऊपर बताया गया दृष्टिकोण सुआधारित प्रतीत नहीं होता क्योंकि दोनों न्यायालयों की अधिकारिता (अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 226 के अधीन) एक समान या एक स्तर की नहीं है। इसी कारण न्यायालय ने इसके अपवाद भी स्वीकार किए हैं जो अनुच्छेद 32 के अधीन आज्ञापक अधिकारिता के प्रयोग में हैं :

(i) बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका।[6-7]
(ii) आन्वयिक पूर्वन्याय का सिद्धांत।[7]
(iii) विवाद्य तथ्यों से असबद्ध विधि के सैद्धांतिक प्रश्न।[7क]
(iv) उच्च न्यायालय की अधिकारिता का प्रश्न।[7क]

क्या अनुच्छेद 226 के अधीन विनिश्चय से अनुच्छेद 136 के अधीन अपील वर्जित हो जाती है — उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जहां उच्च न्यायालय ने अनुच्छेद 226 के अधीन गुणागुण के आधार पर सुनवाई करने के पश्चात् अधीनस्थ अधिकरण के आदेश में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया है और याची ने उच्च न्यायालय के विनिश्चय के विरुद्ध अपील नहीं की है, जिसके कारण वह निर्णय उन पक्षकारों के बीच अंतिम हो गया है, वहां उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 136 के अधीन अपील करने की विशेष इजाजत नहीं देगा।[8-9]

क्या प्राइवेट व्यक्ति के विरुद्ध रिट हो सकती है — खंड (1) में 'व्यक्ति' का कोई विशेषण नहीं है। इसमें प्राइवेट व्यक्ति भी हो सकता है।[10] शर्त यह है कि उसके विरुद्ध रिट के लिए पर्याप्त आधार होना चाहिए। जैसे, उसे कानून द्वारा कोई शक्ति मिली हुई है,[10] वह औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 10क के अधीन नियुक्त मध्यस्थ है और उसका अधिनिर्णय शक्तिबाह्य है या उसमें 'अभिलेख से प्रकट होने वाली भूल' है[10-11] अथवा वह प्राइवेट शिक्षा संस्था तो है किंतु सरकार के निदेशों से आबद्धकर है और उसने याची

2क *केशोराम बनाम भारत संघ*, (1989) 3 एससीसी 151 (पैरा 10)।
3 *लखनपाल बनाम भारत संघ*, ए 1967 एससी 908 (*915*)।
4. *हरस्वरूप बनाम महाप्रबंधक*, (1976) I एससी.डब्ल्यू.आर 382 (*391*)।
5 *विरूधनगर मिल्स बनाम मद्रास सरकार*, ए 1968 एससी 1196 (*1198*)।
6. *गुलाम बनाम भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1335।
7. *किरीट बनाम भारत संघ*, ए. 1981 एससी. 1621।
7क. *एस.सी. एम्प्लाईज बनाम भारत संघ*, (1989) 4 एस.सी.सी. 187 (पैरा 24)।
8. *फूलचंद बनाम चंद्र शंकर*, ए. 1965 एस.सी. 782 (*784*); *उत्तर रेलवे को-आपरेटिव सोसाइटी बनाम औद्योगिक अधिकरण*, (1967) II एल.एल.जे. 46 (*51*) एस.सी।
9. *बिहार राज्य बनाम कामेश्वर*, ए. 1956 एस.सी. 575 (*577*)।
10 *रोहतास इंडस्ट्रीज़ बनाम यूनियन*, ए. 1976 एस.सी. 425 (पैरा 9-11)।
11. *इंजीनियरिंग मजदूर सभा बनाम हिंद साइकिल्स*, ए. 1963 एस.सी. 874 (*881*)।

के मूल अधिकारों का उल्लंघन किया है ।[12] या वह 'लोक कृत्यों' का निर्वहन करती है चाहे वे कानून द्वारा अधिरोपित हों या अन्यथा ।[12क]

क्या विधान मंडल के विरुद्ध रिट हो सकती है — अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश के मामले में बहुमत से यह अभिनिर्धारित हुआ कि —

(क) समुचित मामले में विधान मंडल के विरुद्ध अनुच्छेद 226 की अधिकारिता का प्रयोग किया जा सकता है, जैसे, जहां विधान मंडल ने अपने अवमान के लिए निरोध का जो आदेश दिया है वह किसी नागरिक के अनुच्छेद 20 और अनुच्छेद 21 के अधीन मूल अधिकार का उल्लंघन करता है ।[13]

(ख) भारत का कोई विधान मंडल साधारण वारंट निकालकर उच्च न्यायालय की अधिकारिता से उन्मुक्ति का दावा नहीं कर सकता । साधारण वारंट का अर्थ है ऐसा वारंट जिसमें गिरफ्तारी या निरोध का कारण नहीं दिखाया गया है ।[13]

(ग) यदि विधान मंडल द्वारा निकाले गए वारंट या विधान मंडल द्वारा अपने विशेषाधिकार के प्रयोग में की गई दोषसिद्धि के विरुद्ध कोई न्यायाधीश अनुच्छेद 226 के अधीन अधिकारिता का प्रयोग करता है तो उसके विरुद्ध विधान मंडल के अवमान की कार्यवाही नहीं हो सकती ।[13]

क्या उच्च न्यायालय के विरुद्ध रिट हो सकती है — उच्च न्यायालय जब न्यायिक हैसियत से कार्य करता है तब यह नहीं कहा जा सकता कि वह अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता के अधीनस्थ प्राधिकारी है ।[14] यह उन्मुक्ति उस न्यायाधीश को भी दी गई है जो पक्षकारों से प्राधिकार प्राप्त करके किसी वाद से एकमात्र मध्यस्थ के रूप में कार्य करता है ।[15] यह सिद्धांत वहां भी लागू होता है जहां किसी निचले अधिकरण का आदेश, अपील या पुनरीक्षण में उच्च न्यायालय के समक्ष आता है और न्यायालय द्वारा आदेश पारित किए जाने पर उसका उच्च न्यायालय के आदेश में विलय हो जाता है ।[14]

किंतु जहां उच्च न्यायालय या उसका कोई न्यायाधीश प्रशासनिक हैसियत में कार्य करता है वहां उसके आदेश या निर्णय के विरुद्ध अनुच्छेद 226 के अधीन रिट हो सकती है ।[16] जैसे जहां उच्च न्यायालय ने अपने किसी कर्मचारी के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही की है ।[17]

अधिकरण जिनके विरुद्ध अनुच्छेद 226 के अधीन रिट नहीं हो सकती — 42वें संशोधन अधिनियम में यह कहा गया है कि उच्च न्यायालय विनिर्दिष्ट अधिकरणों के विरुद्ध रिट नहीं निकाल सकेगा और उनके निर्णयों का पुनर्विलोकन नहीं कर सकेगा । किंतु यह तभी होगा जब समुचित विधान मंडल अनुच्छेद 323क(2)(घ) या 323ख(3)(घ) के अधीन विधि बनाए ।[18]

अतएव निम्नलिखित विषयों से संबंधित किसी अधिकरण के विरुद्ध (किसी भी आधार

---

12 *अरुण* बनाम *राज्य*, ए. 1976 कर्नाटक 174 (पैरा 18) ।

12क *अनादि* बनाम *रूदानी*, (1989) 2 एससीसी 691 (पैरा 15-17) ।

13. अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश, ए. 1965 एससी 745 (*767, 788, 791*) ।

14. *शंकर* बनाम *कृष्णजी*, ए 1970 एस.सी 1 (4) ।

15 *आरती* बनाम *रजिस्ट्रार*, ओ.एस., (1969) 2 एस.सी.सी. 756 ।

16. *हिमांशु* बनाम *ज्योति प्रकाश*, ए 1964 एस.सी 1636 ।

17. तुलना कीजिए, *प्रद्योत* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एससी.आर 1331 (*1352*) ।

18. जून, 1992 तक, जब ये पृष्ठ प्रकाशित किए जा रहे थे, किसी भी विधान मंडल द्वारा अनुच्छेद 323ख के अधीन ऐसी कोई विधि नहीं बनाई गई । किंतु, अनुच्छेद 323क के अधीन (सेवाओं से संबंधित) प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 अधिनियमित किया गया और प्रवृत्त किया गया । [देखिए आगे अनुच्छेद 323क के अधीन] ।

पर) अनुच्छेद 226 के अधीन कोई रिट नहीं होगी ।[18] ऐसे अधिकरणों के विनिश्चयों से व्यथित व्यक्ति के लिए एकमात्र उपचार अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय में अपील करना है, अर्थात् :—

(i) सेवाएं ।
(ii) श्रम ।
(iii) कर ।
(iv) विदेशी मुद्रा, सीमा-शुल्क ।
(v) भूमि सुधार ।
(vi) नगर संपत्ति पर अधिकतम सीमा ।
(vii) खाद्य और अन्य आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन और वितरण ।
(viii) निर्वाचन ।
(ix) पूर्वोक्त विषयों से संबंधित विधियों के विरुद्ध अपराध और आनुषंगिक विषय ।

ये कोटियां व्यापक हैं और संख्या में भी अधिक हैं । किसी अधिकरण के विरुद्ध अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका ग्रहण करने के पहले न्यायालय और अधिवक्ता, दोनों को ही यह देखना होगा कि क्या वह अधिकरण उपर्युक्त कोटियों में आता है । यदि आता है तो याचिका ग्रहण नहीं की जा सकती । ऐसा प्रतीत होता है कि निम्नलिखित अधिनियमों के अधीन अधिकरणों के विरुद्ध अनुच्छेद 226 के अधीन कार्यवाही नहीं हो सकती । 1976 के पहले यह कार्यवाही हो सकती थी ।

(i) आय-कर अधिनियम ।[19]
(ii) सीमा-शुल्क अधिनियम ।[20]
(iii) स्टांप अधिनियम ।[21]
(iv) विक्रय कर अधिनियम ।[22]
(v) अधिकतम सीमा संबंधी अधिनियम ।[23]

जब तक समुचित विधान द्वारा उच्च न्यायालय की अधिकारिता का अपवर्जन करते हुए ऐसे अधिकरण स्थापित नहीं किए जाते तब तक अनुच्छेद 226 के अधीन किसी मामले में उच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि सभी निचले न्यायालयों पर और उच्च न्यायालय की स्थानीय अधिकारिता के भीतर स्थित सभी अधिकरणों पर आबद्धकर होगी ।[18, 24]

अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष को विधि द्वारा वर्जित नहीं किया जा सकता — 1. अनुच्छेद 226 ऐसा सांविधानिक उपबंध नहीं है जिसे साधारण विधान द्वारा परिवर्तित किया जा सके । अनुच्छेद 226 के अधीन शक्तियों को संविधान में संशोधन करके ही कम किया जा सकता है या छीना जा सकता है ।

2 इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि वह विधि शून्य होगी जो अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता पर निर्बन्धन लगाती है या उसे छीनती है ।[25-26]

---

19 *सूरजमल* बनाम *विश्वनाथ*, ए. 1954 एस.सी. 545; *गोविंदराव* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 1222 (*1226*) ।

20. *शिवपूजनराय* बनाम *सीमाशुल्क कलक्टर*, ए. 1958 एस.सी. 1893 (*1903*); *ई.आई. कमर्शियल कंपनी* बनाम *सीमाशुल्क कलक्टर*, ए. 1962 एस.सी. 1217, *सीमाशुल्क कलक्टर* बनाम *पेडनेकर*, ए. 1976 एस.सी. 1408 ।

21. *उत्तर प्रदेश सरकार* बनाम *अमीर अहमद*, ए. 1961 एस.सी. 787 ।

22. तुलना कीजिए, *उड़ीसा राज्य* बनाम *चाकोभाई*, ए. 1961 एस.सी. 284 (*287*) ।

23. *केशो* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1976 मुंबई 78 ।

24. *ई.आई. कमर्शियल कंपनी* बनाम *कलक्टर*, ए. 1962 एस.सी. 1895 ।

25. *राजकृष्ण* बनाम *बिनोद*, (1954) एस.सी.आर. 913; ए. 1954 एस.सी. 202; *दुर्गाशंकर* बनाम *रघुराज*, (1955) 1 एस.सी.आर. 267; *संग्राम सिंह* बनाम *निर्वाचन अधिकरण*, (1955) 2 एस.सी.आर. 1 (*1*) ।

26. *कस्टोडियन* बनाम *जाफरान बेगम*, ए. 1968 एस.सी. 1 ।

उच्च न्यायालय इन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष बंधनों से मुक्त होकर अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग कर सकेगा ।[27]

खंड (2) : राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता — 1. यह खंड, खंड (1क) के रूप में 15वें संशोधन अधिनियम, 1963 द्वारा अंतःस्थापित किया गया था । 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा इसे खंड (2) के रूप में संख्यांकित किया गया ।

2. खंड (1क) के अंतःस्थापन के पूर्व यह अभिनिर्धारित था कि रिट उस राज्यक्षेत्र के बाहर नहीं जा सकती जिसके संबंध में उच्च न्यायालय अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता था ।[28] उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन रिट या आदेश तभी निकाल सकता था जब वह व्यक्ति, प्राधिकारी या सरकार जिसके विरुद्ध रिट की मांग की गई है उच्च न्यायालय की राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता में निवास करता है या अवस्थित है ।[29] नए खंड (1क) के अधीन यदि वाद हेतुक, भागतः या अंशतः, उच्च न्यायालय की राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर उत्पन्न हुआ है तो वह ऐसे व्यक्ति या प्राधिकारी के विरुद्ध भी रिट निकाल सकता है जो किसी अन्य उच्च न्यायालय की अधिकारिता के भीतर है ।

3. खंड (1क) के अंतःस्थापन के परिणामस्वरूप अनुच्छेद 226 के अधीन याचिका किसी भी ऐसे उच्च न्यायालय में दी जा सकती है जो निम्नलिखित वर्गों में से किसी में आता है —

(क) उस उच्च न्यायालय में जिसकी राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता में वह व्यक्ति या वह प्राधिकारी निवास करता है या स्थित है जिसके विरुद्ध अनुतोष मांगा गया है । इसका यह अर्थ हुआ कि भारत सरकार और दिल्ली या दिल्ली उच्च न्यायालय[29-30] की राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर स्थित अन्य प्राधिकरणों और निचले अधिकरणों की दशा में दिल्ली का उच्च न्यायालय, भारत संघ के विरुद्ध रिट निकाल सकता है चाहे वाद हेतुक कहीं भी उत्पन्न हुआ हो ।[28]

(ख) वह उच्च न्यायालय जिसकी अधिकारिता के भीतर वह वाद हेतुक पूर्णतः या भागतः उत्पन्न हुआ है जिसकी बाबत अनुच्छेद 226 के अधीन अनुतोष मांगा गया है ।[31]

रिटों का विशेष वर्णन

बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट की प्रकृति — यह रिट एक आदेश के रूप में होती है जिसमें उस व्यक्ति से जिसने किसी अन्य व्यक्ति को निरुद्ध किया है यह अपेक्षा की जाती है कि वह निरुद्ध व्यक्ति को न्यायालय के समक्ष पेश करे जिससे न्यायालय यह जान सके कि किस आधार पर उसे निरुद्ध किया गया है और यदि उसे कारावास में रखने का विधिक औचित्य नहीं तो उसे स्वतंत्र कर दे ।[32]

बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट कब नहीं दी जाती — यदि विवरण से यह प्रतीत होता है कि निरुद्ध व्यक्ति किसी अपराध के लिए दोषसिद्ध ठहराए जाने पर दंडादेश भुगत रहा है तो

27. केरल शिक्षा विधेयक, ए. 1958 एस.सी. 956 के मामले में; *प्रेम सागर* बनाम *स्टैंडर्ड कंपनी*, (1964) 5 एस.सी.आर. 1030 (*1038*) ।

28. *रशीद* बनाम *आई.टी.आई. कमीशन*, (1954) एस.सी.आर. 738 ।

29. *निर्वाचन आयोग* बनाम *साका वेंकट*, (1953) एस.सी.आर. 1144 ।

30 *श्रीराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 670; *मदन गोपाल* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1513 ।

31. तुलना कीजिए, *जगत* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम*, ए. 1977 इला. 83 (पैरा 9) ।

32. *गुलाम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1335 (*1337*) ।

यह बंदी प्रत्यक्षीकरण के लिए आवेदन का पर्याप्त उत्तर होगा ।[33] यदि दंडादेश बिना अधिकारिता के दिया गया है तो न्यायालय रिट निकाल सकेगा ।[34]

यदि यह मान लें कि ऐसे मामलों में उस न्यायालय की अधिकारिता प्रश्नगत की जा सकती है जिसने अर्जीदार को दोषसिद्ध किया है तो भी विचारण न्यायालय के बिना अधिकारिता के काम करने पर भी हस्तक्षेप संभव नहीं होगा यदि सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय ने अपील में दोषसिद्धि की पुष्टि की है । अपील न्यायालय यह विनिश्चय करने के लिए सक्षम है कि विचारण की अधिकारिता थी या नहीं और साथ ही उसे यह भी अधिकारिता है कि वह सही या गलत निर्णय करे । जब अपील न्यायालय ने यह गलत निष्कर्ष निकाला है कि विचारण न्यायालय को अधिकारिता थी तो यह नहीं कहा जा सकता कि अपील न्यायालय ने बिना अधिकारिता के कार्य किया है । ऐसे में अपील न्यायालय के आदेश को शून्य नहीं माना जा सकता ।[33]

बंदी प्रत्यक्षीकरण की कार्यवाही में न्यायालय यह देखेगा कि उत्तर जिस दिन दिया जा रहा है उस दिन निरोध वैध है या नहीं । कार्यवाही संस्थित करने के समय से कोई संबंध नहीं होगा ।[34] यदि रिट का उत्तर देने के पहले नया और विधिमान्य आदेश निकालकर निरोध का औचित्य साबित कर दिया जाता है तो न्यायालय निरुद्ध व्यक्ति को छोड़ नहीं सकता चाहे वह आदेश जिसके अधीन उसे प्रारंभ में गिरफ्तार या निरुद्ध किया गया था कितना ही दोषपूर्ण क्यों न रहा हो ।[35]

जब किसी विधि के अधीन किसी व्यक्ति पर शारीरिक बंधन लगाए जाते हैं तब उसे बंदी प्रत्यक्षीकरण का अधिकार तभी होगा जब वह विधि असांविधानिक हो[36] या आदेश, अधिनियम द्वारा दी गई शक्ति के बाहर हो ।[37] अर्जीदार, बंदी प्रत्यक्षीकरण की कार्यवाही में विधि की सांविधानिकता पर आक्षेप कर सकता है और यदि विधि को असांविधानिक पाया जाता है तो न्यायालय उस बंदी को छोड़ देगा ।[38]

अनुच्छेद 226 के अधीन बंदी प्रत्यक्षीकरण की रिट तब तो निकलती ही है जब किसी व्यक्ति को राज्य ने निरुद्ध किया हो, वह उस समय भी प्राप्त की जा सकती है जब उसे कोई प्राइवेट व्यक्ति द्वारा निरुद्ध किया गया हो (किंतु अनुच्छेद 32 के अधीन नहीं) क्योंकि अनुच्छेद 226 की सहायता मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए भी ली जा सकती है और अन्य प्रयोजनों के लिए भी ।[39]

आन्वयिक पूर्वन्याय का सिद्धांत बंदी प्रत्यक्षीकरण कार्यवाही को लागू नहीं होता है । यदि नए आधार सामने आते हैं तो एक आवेदन के खारिज किए जाने पर दूसरा आवेदन किया जा सकता है ।[40] किंतु उसी आधार पर दूसरा आवेदन नहीं हो सकता । तब सही रास्ता है खारिज होने के विरुद्ध पुनर्विलोकन कराने का आवेदन किया जाए ।[41]

परमादेश की प्रकृति और उद्देश्य — अंग्रेजी में इसे 'मैंडेमस' कहते हैं जिसका अर्थ है

33. *जनार्दन* बनाम *हैदराबाद राज्य*, (1950) एस.सी.आर. 344 ।

34. *रामचन्द्र* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1971) II एस.सी.डब्ल्यू.आर 575 (*579*) ।

35. *निरंजन* बनाम *पंजाब राज्य*, (1952) एस.सी.आर. 395 (*401*); *गोपालन* बनाम *भारत सरकार*, ए. 1966 एस.सी. 816 (*818*) ।

36. *पंजाब राज्य* बनाम *अजायब सिंह*, (1953) एस.सी.आर. 254 ।

37. *मखन सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, (1950) एस.सी.आर 88 ।

38. तुलना कीजिए, *गोपालन बनाम मद्रास राज्य*, (1950) एस.सी.आर 88 ।

39. *विद्या वर्मा* बनाम *शिवनारायण*, (1956) एस.सी.ए. 357; *इकराम* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1625 (*1630*); *बीना* बनाम *वरीन्द्र*, ए. 1982 एस.सी. 792 ।

40. *लल्लू भाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 728 (पैरा 13) ।

41. *कविता* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 2084 ।

आदेश । यह रिट प्रतिषेध या उत्प्रेषण की रिटों से इस बात में भिन्न है कि जिस व्यक्ति या निकाय को यह संबोधित होती है उससे कुछ कार्य करने की मांग की जाती है । परमादेश की रिट द्वारा किसी व्यक्ति, निगम, अधीनस्थ न्यायालय या सरकार को निदेश देकर उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह रिट में विनिर्दिष्ट कार्य करे । यह कार्य उनके पद से संबंधित होता है और लोक कर्तव्य के रूप में होता है ।[42]

परमादेश, प्रतिषेध, उत्प्रेषण और अधिकार-पृच्छा में अंतर — उत्प्रेषण और प्रतिषेध से परमादेश की रिट इस बात में भिन्न है कि पहली दो रिटें तो तब निकाली जाती हैं जब निचला अधिकरण अपनी अधिकारिता का गलत प्रयोग करता है या अधिकारिता के बाहर चला जाता है । परमादेश का उपयोग तभी किया जाएगा जब अधीनस्थ न्यायालय ने अधिकारिता का प्रयोग करने से इंकार कर दिया हो । परमादेश का उद्देश्य निचले अधिकरण की कार्यवाही का पुनर्विलोकन या नियंत्रण करना नहीं है । उसका उद्देश्य उसे कार्य करने के लिए विवश करना है ।

परमादेश की रिट जिन लोगों को संबोधित होती है उनसे कुछ कार्य करने की मांग करती है जबकि प्रतिषेध में उसे 'निष्क्रिय' कर दिया जाता है (अर्थात्, कार्य नहीं करने के लिए कहा जाता है) । प्रतिषेध का उद्देश्य यह है कि निचला न्यायालय ऐसी अधिकारिता का प्रयोग न करे जो उसमें निहित नहीं है । अथवा वह अपनी अधिकारिता की सीमाओं के बाहर न जाए ।

परमादेश सभी लोक प्राधिकरणों के विरुद्ध प्राप्त की जा सकती है चाहे वे प्रशासनिक हों या स्थानीय निकाय हों । प्रतिषेध और उत्प्रेषण का उपयोग केवल न्यायिक और न्यायिककल्प प्राधिकारियों के विरुद्ध ही हो सकता है । परमादेश उस व्यक्ति के विरुद्ध दिया जा सकता है जिस पर कोई विशेष कार्य करने का कर्तव्य संविधान या किसी अधिनियम द्वारा डाला गया है । यदि वह व्यक्ति वह कार्य नही करता है या दोषपूर्ण मंतव्य से उस शक्ति का प्रयोग करता है जिसका प्रयोग करना उसका कर्तव्य है तो न्यायालय परमादेश देकर वह करने के लिए विवश करेगा जो उसे करना चाहिए था ।

जब यह दर्शाया गया है कि किसी अधिकरण ने उन विषयों पर विचार नही किया है जिन पर उसे विचार करना चाहिए था या विधि के अनुसार विनिश्चय नहीं किया है तो परमादेश द्वारा अधिकरण को यह आदेश दिया जाएगा कि वह विधि के अनुसार कार्य करे । किंतु यदि अधिकारिता का अभाव है या अधिकारिता के बाहर कार्य हुआ है या आदेश प्रकटतः त्रुटिपूर्ण है तो उत्प्रेषण द्वारा कार्यवाही विखंडित कर दी जाएगी या हटा ली जाएगी ।

मोटी तौर पर यह कह सकते हैं कि उत्प्रेषण और प्रतिषेध की रिटों में सैद्धांतिक रूप से कोई अंतर नहीं है । अंतर है तो इतना ही कि प्रतिषेध कार्यवाही के चलते रहने पर दी जाती है । दोनों का उद्देश्य है न्यायिक और न्यायिककल्प निकायों का नियंत्रण ।

समानता होते हुए भी प्रतिषेध और उत्प्रेषण में कुछ भिन्नताएं भी हैं ।

प्रतिषेध द्वारा अधिकरण को अपनी अधिकारिता से बाहर जाने से रोक दिया जाता है । उत्प्रेषण से ऊपर का न्यायालय निचले न्यायालय का आदेश या अभिलेख अपने पास मंगवाकर उसकी वैधता पर विचार करता है और आवश्यकतानुसार आदेश को विखंडित कर देता है । प्रतिषेध का प्रयोजन है रोकना । उत्प्रेषण से दो कार्य होते हैं निवारण और उपचार । संक्षेप में प्रतिषेध तब दी जाती है जब कार्यवाहियों से यह साबित हो जाता है कि कोई निकाय अपनी अधिकारिता के बाहर के विषयो पर विचार कर रहा है जिसका परिणाम यह होगा कि उसका अंतिम विनिश्चय न्यायालय के सामने आने पर उत्प्रेषण द्वारा विखंडित किया जाएगा । उत्प्रेषण की रिट तब दी जाती है जब अधिकारिता को अनधिकृत रूप से ग्रहण

42. *प्रागा टूल्स कारपोरेशन* बनाम *इमानुयल*, ए. 1969 एस.सी. 1306 ।

कर लिया गया है । प्रतिषेध की रिट तब दी जाती है जब अधिकारिता ग्रहण नहीं की गई है किंतु अनधिकृत रूप से ग्रहण करने का प्रस्ताव है और कुछ करना शेष है ।

परमादेश की रिट न्यायालय का आदेश है जिससे किसी व्यक्ति को वह करने का समादेश दिया जाता है जो करना उसका स्पष्ट कर्तव्य है । अधिकार-पृच्छा की रिट ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध होती है जिसने किसी पद, या विशेषाधिकार का दावा किया है या उसे हथिया लिया है । न्यायालय यह जांच करता है कि उस व्यक्ति के पास कौन सा विधिक प्राधिकार है जिससे यह निर्णय किया जा सके कि वह उस अधिकार या पद का अधिकारी है या नहीं ।[43]

परमादेश निकालने की पुरोभावी शर्तें — 1. परमादेश के रूप में रिट या आदेश प्राप्त करने के पूर्व आवेदक को निम्नलिखित शर्तें पूरी करनी होंगी :—

(क) आवेदक को यह दिखाना होगा[44] कि उसे किसी विधिक कर्तव्य का (केवल विवेकाधिकार नहीं)[45] अनुपालन कराने का विधिक अधिकार है ।[46] यह कर्तव्य उस पक्षकार का है जिसके विरुद्ध परमादेश मांगी गई है और आवेदक का अधिकार याचिका की तारीख को विद्यमान है ।[47]

(ख) परमादेश से जिस कर्तव्य को करने की आज्ञा दी जाएगी वह, संविधान,[48] अधिनियम,[49] विधि का बल रखने वाले नियम या आदेश[50] द्वारा अधिरोपित कर्तव्य होना चाहिए । संविदा के अधीन कर्तव्य नहीं ।[51]

किसी अधिनियम या अध्यादेश की सांविधानिकता की परीक्षा भी इससे हो सकती है ।[52]

(ग) यह सचिवीय कर्तव्य होना चाहिए, विवेकाधिकार नहीं ।[53]

जहां किसी अधिनियम में कोई शक्ति प्रदान की गई है जो विवेकाधिकार से जुड़ी हुई है तो न्यायालय उस प्राधिकारी को उस शक्ति का प्रयोग करने के लिए तभी विवश कर सकेगा जब उस अधिनियम में उस विवेकाधिकार का मार्गदर्शन करने और उसे नियंत्रित करने के लिए तथ्यपरक नियम उल्लिखित हो ।[54]

(घ) ऐसा अधिकार न्यायालय द्वारा प्रवर्तनीय अधिकार होना चाहिए ।[55]

43 *मद्रास विश्वविद्यालय* बनाम *गोविन्द राव*, ए 1965 एस.सी. 491 ।

44 *मुंबई राज्य* बनाम *हास्पिटल मजदूर सभा*, (1960) 1 एलएलजे 251 (एससी); *विनोद* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एससी 223, *प्रागा टूल्स कारपोरेशन* बनाम *इमानुयल*, ए 1969 एससी 1306 (*1309*) ।

45 *बांबे यूनियन ऑफ जर्नलिस्ट्स* बनाम *मुंबई राज्य*, ए 1964 एससी 1617 (*1624*); *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *मंडावर*, ए 1954 एस.सी 493; *शिवेन्द्र* बनाम *नालंदा कालेज*, (1962) सप (2) एस.सी.आर. 147 ।

46 *जीप इडस्ट्रीज* बनाम *भारत संघ*, ए. 1977 एस.सी 456 (पैरा 24) ।

47 *कल्याण सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1962 एससी 1183 ।

48 *वजीर चंद* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एससीआर 408, *रशीद अहमद* बनाम *म्यूनिसिपल बोर्ड*, (1950) एस.सी.आर. 566 ।

49. *मुंबई राज्य* बनाम *हास्पिटल मजदूर सभा*, ए. 1960 एस.सी. 610 ।

50 *गुरुस्वामी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए 1954 एससी. 592; *बिहार को-आपरेटिव सोसाइटी* बनाम *सिपाही*, ए 1977 एससी. 2149 (पैरा 15) ।

51. *लेखराज* बनाम *उप अभिरक्षक*, ए 1966 एस.सी 334 (*336*) ।

52. *प्रबोध* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1985 एससी 167 (पैरा 31) ।

53. *शरीफ* बनाम *प्रादेशिक परिवहन प्राधिकरण*, ए. 1978 एस.सी. 209 (पैरा 14) ।

54. *ए.के. राय* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. (पैरा 52-53) ।

55. *मणि* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए 1977 एस.सी. 276 ।

2. *किंतु —*

(i) परमादेश, ऐसे विभागीय मैन्युअल या अनुदेशों को प्रवृत्त नहीं कराएगी जिनका विधिक बल नहीं है[56] या ऐसी रियायतें[57] नहीं दिलवाएगी जिन्हें पाने का अर्जीदार का विधिक अधिकार नहीं है ।

उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि जहां किसी व्यक्ति ने सरकार के व्यपदेशन या वचन पर कार्य किया है वहां वह परमादेश की मांग करके सरकार को उस वचन का पालन करने के लिए विवश कर सकता है । चाहे वह असांविधिक हो या कार्यपालिक अनुदेशों पर ही आधारित हो ।[58]

(ii) परमादेश की रिट, लोक प्रकृति के कर्तव्यों का अनुपालन कराने के लिए ही दी जाती हैं ।[59] प्राइवेट व्यक्ति के विरुद्ध तो तभी दी जाती हैं जब उसकी लोक प्राधिकारी से दुरभिसंधि हो ।[59]

(iii) परमादेश या अनुच्छेद 226 के अधीन कोई भी रिट कंपनी अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत कंपनी के विरुद्ध नहीं होगी चाहे वह सरकारी कंपनी ही क्यों न हो । कानूनी निगम के विरुद्ध तभी होगी जब उसे कानूनी कर्तव्य सौंपे गए हों ।[59-60]

यह रिट सहकारी सोसाइटियों के रजिस्ट्रार के विरुद्ध हो सकती है क्योंकि वह कानूनी प्राधिकरण है किंतु सोसाइटी के विरुद्ध नहीं हो सकती ।[61] ऐसे मामलों में न्यायालय परमादेश के स्थान पर घोषणा नहीं कर सकता ।

(iv) परमादेश देकर सरकार को यह निदेश नहीं दिया जा सकता कि वह किसी विधिमान्य विधि के उपबंधों को प्रवृत्त न कराए[62] या ऐसे करार को प्रवृत्त करे जो किसी अधिनियम का उल्लंघन करता हो ।[62क]

3. (क) यदि कोई लोक अधिकारी अपने कानूनी कर्तव्य का उल्लंघन करती है तो कोई भी व्यक्ति जो उसके आदेश से प्रभावित होने वाला है, परमादेश के लिए आवेदन[63] कर सकता है ।

यदि किसी नीलामी में नीलामी अधिकारी उस अधिनियम के विरुद्ध कार्य करता है जिसके अधीन नीलामी की गई है[63] या नीलामी से संबंधित कानूनी कर्तव्यों का अनुपालन करने में असफल रहता है[64] तो नीलामी में बोली लगाने वाला व्यक्ति परमादेश के लिए आवेदन कर सकता है चाहे नीलामी शराब के लाइसेंस के लिए ही क्यों न हो जिसके लिए किसी व्यक्ति को आत्यंतिक अधिकार नहीं है ।[65]

56. *असम राज्य* बनाम *अजीत कुमार*, ए 1965 एस सी 1196 (*1200*); *रमन एंड रमन* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 694; *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *लोक शिक्षण संस्थान*, (1971) 2 एस सी सी 410 (*416*) ।

57. *राजलक्ष्मय्या* बनाम *मैसूर राज्य*, (1966) एस सी [सिविल अपील 2174/65, तारीख 7-11-1966] ।

58. *भारत संघ* बनाम *एंग्लो-अफगान एजेंसीस*, ए. 1968 एस.सी 718 (*727*); *सेंचुरी स्पिनिंग* बनाम *उल्हासनगर नगरपालिका समिति*, ए 1971 एस.सी 1021 ।

59. *सोहनलाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस सी 529, *बिहार को-आपरेटिव सोसाइटी* बनाम *सिपाही*, ए 1977 एस.सी. 2149 (पैरा 15) ।

60. *हैवी इंजीनियरिंग मजदूर यूनियन* बनाम *बिहार राज्य*, (1969) 1 एस सी.सी 765; *अग्रवाल* बनाम *महाप्रबंधक, हिंदुस्तान स्टील*, (1970) यू.जे.एस.सी. 97 (*100*) ।

61. *नयागढ़ को-आपरेटिव सोसाइटी* बनाम *नारायण*, ए. 1977 एस.सी. 112 (पैरा 5) ।

62. *नरेन्द्र* बनाम *उप राज्यपाल*, (1971) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 651 (*657*) ।

62क. *बृज मोहन* बनाम *राज्य सड़क परिवहन निगम*, (1987) 1 एस.सी.सी. 13 (पैरा 3) ।

63. *गुरुस्वामी* बनाम *बिहार राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 305 ।

64. *रामभरोसा* बनाम *बिहार सरकार*, ए. 1953 पटना 370 ।

65. *कुंवरजी* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, (1954) एस.सी.आर. 873; ए. 1954 एस.सी. 220 ।

(ख) वह व्यक्ति जिसके विरुद्ध सरकार या उसके अधिकारी ने आदेश दिया है आदेश का पालन न करके जोखिम उठाता है चाहे बाद में आदेश शक्तिबाह्य ही क्यों न ठहराया जाए । तदनुसार उसे यह हक है कि वह परमादेश का आवेदन करके आदेश की विधिमान्यता का प्रश्न उठाए[66] चाहे उस समय तक आदेश प्रवृत्त नहीं हुआ हो और उसे वास्तविक क्षति न हुई हो ।[66]

(v) आवेदन व्यथित पक्षकार ही करेगा । यह रिट ऐसे पक्षकार की प्रेरणा पर नहीं दी जाएगी जिसके पक्ष में वह त्रुटिपूर्ण आदेश हुआ है ।

(vi) आवेदन के पहले कर्तव्य के पालन की सुस्पष्ट मांग की जानी चाहिए जिससे उस पक्षकार को यह विचार करने का अवसर मिले कि मांग पूरी की जानी चाहिए या नहीं । इस मांग से इंकार किया गया हो चाहे शब्दों से या आचरण से । न्यायालय का यह समाधान हो जाना चाहिए कि पक्षकार ने मांग अस्वीकार करने का पक्का संकल्प कर लिया है ।[67]

एक मामले में जो अपील में उच्चतम न्यायालय तक गया था मांग और इंकार को आवश्यक नहीं समझा गया । इसका आधार यह था कि मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ था ।[68]

(vii) साधारण नियम यह है कि, मूल अधिकार के मामलों को छोड़कर, क्षति होने के पहले परमादेश नहीं दिया जाएगा ।[66]

परमादेश से इंकार करने के आधार — पूर्वगामी शर्तों के पूरा हो जाने पर भी परमादेश देने से इंकार किया जा सकता है । यह रिट विवेकाधीन है साधिकार नहीं । इंकार के निम्नलिखित आधार हो सकते हैं :—

(i) जिस कार्य के विरुद्ध परमादेश की मांग की गई है वह पूरा हो गया है और रिट देना व्यर्थ होगा ।[69] इसी सिद्धांत पर न्यायालय परमादेश देने से इंकार करेगा यदि समय व्यतीत हो जाने के कारण या अन्यथा परमादेश देना निरर्थक है ।[63] जैसे,

लाइसेंस या पट्टा देने से इंकार करने के आदेश के विरुद्ध,[70] या लाइसेंस रद्द करने के आदेश के विरुद्ध[70क] परमादेश नहीं होगा यदि पट्टे या लाइसेंस की अवधि (जिसके लिए आवेदन किया गया था) समाप्त हो गई है । या अनुज्ञप्ति अधिकारी के समक्ष कोई ऐसा आवेदन लंबित नहीं है जिसके बारे में परमादेश दिया जा सके ।[71]

किंतु यदि न्यायालय कोई उपचार इसलिए नहीं देता है कि वह अल्पकालिक होगा तो उसी कार्यवाही में कोई दूसरा अनुतोष दिया जा सकता है ।[72]

(ii) आवेदन समयपूर्व है — उदाहरणार्थ विधि के विरुद्ध कोई कार्यवाही न तो की गई है और न करने का प्रस्ताव है ।[73]

(iii) गफलत और अकारण विलंब के आधार पर भी इंकार किया जा सकता है

66. *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 603 ।

67. *एस.आई. सिंडिकेट* बनाम *भारत संघ*, ए 1975 एस.सी. 460 (पैरा 24) ।

68. *फ्रेम नसरवानजी* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1951 मुंबई 210 (*225*); अपील किए जाने पर, *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, (1951) एस.सी.आर. 682 ।

69. *दया* बनाम *संयुक्त मुख्य नियंत्रक*, ए. 1962 एस.सी. 1796 ।

70. तुलना कीजिए, *असम राज्य* बनाम *तुलसी*, (1962) सप. (3) एस.सी.आर. 508 ।

70क. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *धर्मेन्द्र*, (1989) 2 एस.सी.सी. 504 (पैरा 27, 32) ।

71. *अमर ज्योति स्टोन क्रशिंग कंपनी* बनाम *भारत संघ*, (1962) 3 एस.सी.आर. 62 ।

72. *श्रीनिवास* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 350 (*353*) ।

73. *चंद्रशेखर* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1971) II एस.सी.डी. 1171 (*1175*) ।

चाहे मूल अधिकार ही क्यों न अंतर्वलित हों ।[74] किंतु कोई परिसीमा का नियम नहीं है ।[75]

(iv) संपत्ति के हक के प्रश्न[76] या तथ्यों के जटिल प्रश्नों का विनिश्चय परमादेश की कार्यवाही में नहीं किया जाता ।[77]

(v) किसी लोक सेवक के विरुद्ध किसी संविदा को प्रवृत्त कराने के लिए[77क] परमादेश नहीं होगा, यदि संविदा आवेदक के प्रति कानूनी कर्तव्य या बाध्यता से विलग है,[78] चाहे संविदा के निबंधन कानूनी उपबंधों पर आधारित हों ।[79]

(vi) परमादेश में न्यायालय, अपील न्यायालय का कार्य नहीं करेगा । अतएव वह तथ्यों की परीक्षा नहीं करेगा और न कानून द्वारा किसी व्यक्ति या निकाय को दिए गए विवेकाधिकार के स्थान पर अपना निर्णय रखेगा ।[80]

परमादेश विवेकाधीन उपचार है किंतु उच्चतम न्यायालय ने यह कहा है कि कुछ मामलों में इसे देना अनिवार्य है, जैसे जहां निचले अधिकरण ने वरिष्ठ अधिकरण के ऐसे आदेश को नहीं माना है जो वैध है ।[81]

परमादेश किसके विरुद्ध होगा — 1 (इसके ठीक पश्चात्‌वर्ती शीर्ष में उल्लिखित अपवादों के अधीन रहते हुए) परमादेश संघ और राज्य की सरकारों के विरुद्ध (यथास्थिति) और किसी भी 'प्राधिकारी'[81क] या 'व्यक्ति' के विरुद्ध दी जा सकती है ।

2 अनुच्छेद 226(1) में 'प्राधिकारी' का अनुच्छेद 12 की अपेक्षा अधिक उदार अर्थान्वयन किया जाना चाहिए क्योंकि अनुच्छेद 12 केवल *मूल अधिकारों* के प्रवर्तन के प्रयोजन के लिए है । अनुच्छेद में प्रयुक्त शब्द 'किसी व्यक्ति या प्राधिकारी' कानूनी प्राधिकारी या अभिकरणों तक ही सीमित नहीं है । उसमें वे सभी व्यक्ति या निकाय हैं जो 'लोक कर्तव्य' का पालन करते हैं । ये कर्तव्य कॉमन ला, रूढ़ि या संविदा द्वारा अधिरोपित भी हो सकती हैं । यह आवश्यक नहीं कि वे कानून द्वारा अधिरोपित हों ।[81ख] (उदाहरणार्थ, किसी विश्वविद्यालय से संबद्ध किसी महाविद्यालय को चलाने वाला लोक न्यास जिसके विरुद्ध ऐसे अनुतोष की मांग की गई है जो सेवा की व्यक्तिगत संविदा का विनिर्दिष्ट अनुपालन नहीं है) ।[81क]

परमादेश किसके विरुद्ध नहीं होगा — परमादेश निम्नलिखित व्यक्तियो के विरुद्ध नहीं होगा :—

(i) राष्ट्रपति या राज्य के राज्यपाल के विरुद्ध, अपने पद की शक्तियों के प्रयोग और कर्तव्य के पालन के लिए या उन शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करते हुए अपने द्वारा किए गए या किए जाने के लिए तात्पर्यित किसी कार्य के लिए (अनुच्छेद 361, आगे) ।

---

74 *दुर्गा प्रसाद* बनाम *मुख्य नियंत्रक*, (1969) 1 एस.सी.आर. 185 (*187-88*); *अजीत सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1967 एस.सी 856 (*859*); *वजीर* बनाम *भारत संघ*, ए 1967 एस.सी 990 ।

75 *भूषण* बनाम *उप-निदेशक*, ए. 1967 एस.सी 1272, *भारत संघ* बनाम *के.के. कोलरी*, ए. 1969 एस.सी. 125 ।

76. *सोहन लाल* बनाम *भारत संघ*, ए 1957 एस.सी 529 ।

77. *विक्रय कर अधिकारी* बनाम *शिव रत्तन*, ए. 1966 एस.सी. 142 (*145*) ।

77क. *बी.डी.ए* बनाम *अजय*, (1989) 2 एस.सी.सी 117 (पैरा 21-22); *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, (1986) 1 एस.सी.सी. 133 (पैरा 202) ।

78. *अच्युतन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 490; *बंछा निधि* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 843 (*845*); *डी.एफ.ओ* बनाम *राम सनेही*, (1970) एस.सी.डी. 181 ।

79. *डी.एफ.ओ.* बनाम *विश्वनाथ*, ए. 1981 एस.सी. 1368 (पैरा 7-8) ।

80. *कुलपति* बनाम *एस.के. घोष*, ए. 1954 एस.सी. 217 (*220*) ।

81. *हिम्मतलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 403 ।

81क. *अनादि* बनाम *रूदानी*, (1989) 2 एस.सी.सी. 691 (पैरा 19-22) ।

81ख. जैसे, *प्रागा टूल्स* बनाम *इमानुयल*, (1969) 1 एस.सी.सी. 585 (पैरा 6) ।

(ii) उच्च न्यायालय या उसके किसी न्यायाधीश के विरुद्ध जो न्यायिक हैसियत से कार्य कर रहा है — प्रशासनिक हैसियत से नहीं ।[82]

(iii) किसी निचले या अनुसचिवीय अधिकारी के विरुद्ध जो उच्चतर अधिकारी के आदेश का पालन करने के लिए आबद्ध है । जैसे उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार को न्यायिक आदेश प्रवृत्त कराने से रोका नहीं जा सकता ।[83]

(iv) ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध जो लोक पद धारण नहीं करते हैं । यह प्राइवेट संगठनों के विरुद्ध नहीं दी जा सकती चाहे वे कितने ही शक्तिवान क्यों न हों । प्राइवेट व्यापारी कंपनी के विरुद्ध भी नहीं दी जा सकती जब तक कि उन्हें कोई लोक कर्तव्य न सौंपा गया हो[84] जिसके करने में वे असफल रहे हों ।

(v) कंपनी अधिनियम के अधीन रजिस्ट्रीकृत कंपनी के विरुद्ध चाहे वह अधिनियम के प्रयोजनों के लिए सरकारी कंपनी हो ।[84 85] यदि वह सरकार का अभिकरण या उपकरण हो तो परमादेश दिया जा सकेगा[86] [देखिए पीछे अनुच्छेद 12] ।

(vi) परमादेश विधान मंडल के विरुद्ध नहीं होगा चाहे वह ऐसी विधि बनाने वाला हो जो मूल अधिकारों के विरुद्ध है । परमादेश द्वारा विधान मंडल को कोई विशेष विधि बनाने के लिए निदेश नहीं दिया जा सकता ।[87]

प्रतिषेध की प्रकृति — प्रतिषेध एक न्यायिक रिट है जो वरिष्ठ न्यायालय अपने से कनिष्ठ न्यायालय को देकर उसे वह अधिकारिता हथियाने से निवारित करता है जो उसमें वैधत. निहित नहीं की गई है । दूसरे शब्दों में इसके द्वारा न्यायालयों को अपनी अधिकारिता की सीमा के भीतर रखा जाता है ।[88]

> "प्रतिषेध एक आदेश है जो कनिष्ठ न्यायालय को संबोधित होता है और जिसमें उस न्यायालय को उस कार्यवाही को आगे चलाने से मना किया जाता है जो अधिकारिता के बाहर है या देश की विधि के उल्लंघन में है ।"[89]

प्रतिषेध कब दी जाती है — उत्प्रेषण और प्रतिषेध का उद्देश्य एक ही है, अर्थात् न्यायिक और न्यायिककल्प निकायों द्वारा अधिकारिता का हथियाना रोकना । दोनों में मूल अंतर उस प्रक्रम या चरण का है जिसमें ये प्राप्त की जा सकती हैं । प्रतिषेध के आधार वही हैं जो उत्प्रेषण के हैं । यदि अर्जीदार उस समय न्यायालय के समक्ष आता है जब अधिकरण ने बिना अधिकारिता के आदेश कर दिया है तो उत्प्रेषण ही उपचार है ।[90] प्रतिषेध द्वारा अधिकरण को आगे कार्यवाही करने से रोक दिया जाता है जब अधिकरण —

(क) बिना अधिकारिता के[89] या अधिकारिता के बाहर कार्य करना प्रारंभ करता है,[91]

(ख) नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के विरुद्ध कार्य करना प्रारंभ करता है;[92]

82. पूर्व पृष्ठ 256 देखिए ।
83. *आरती बनाम कलकत्ता उच्च न्यायालय*, ए 1969 एस.सी 1133 ।
84. *प्रागा टूल्स कारपोरेशन बनाम इमानुयल*, ए 1969 एस.सी 1306 ।
85. *हैवी इंजीनियरिंग मजदूर यूनियन बनाम बिहार राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 82 ।
86. *सोम प्रकाश बनाम भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी 212 ।
87. *नरिन्द्र बनाम उपराज्यपाल*, (1971) II एस.सी डब्ल्यू.आर. 651 (*657*) ।
88. *गोविंद मेनन बनाम भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1 ।
89. *ईस्ट इंडिया कमर्शियल कंपनी बनाम सीमाशुल्क कलक्टर*, ए. 1962 एस.सी. 1893 ।
90. *हरि विष्णु बनाम सय्यद*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1104 (*1117*) ।
91. *शिवपूजनराय बनाम सीमाशुल्क कलक्टर*, ए. 1958 एस.सी. 845 (*855*) ।
92. तुलना कीजिए, *मानक लाल बनाम प्रेम चंद*, ए. 1957 एस.सी. 425 (*431*) ।

(ग) ऐसी विधि के अधीन कार्य करना प्रारंभ करता है जो शक्तिबाह्य है या असांविधानिक है,[93-94]

(घ) मूल अधिकारों के उल्लंघन में कार्य करना प्रारंभ करता है ।[94]

प्रतिषेध की रिट की सीमाएं — प्रतिषेध केवल न्यायिक या न्यायिककल्प कार्यवाहियों के विरुद्ध ही प्राप्त की जा सकती है । विधायी या कार्यपालिका[95] कृत्यों के विरुद्ध नहीं । यह प्राइवेट व्यक्तियों या संगमों के विरुद्ध भी नहीं हो सकती क्योंकि वे 'प्राधिकारी' नहीं हैं [अनुच्छेद 226(1)(ग)] ।

संक्षेप में, प्रतिषेध की रिट ऐसे प्राधिकारियों के विरुद्ध ही दी जा सकती है जो उत्प्रेषण की अधिकारिता में आते हैं (देखिए आगे उत्प्रेषण) ।

प्रतिषेध की रिट तभी तक निकाली जा सकती है जब तक कार्यवाहियां कनिष्ठ न्यायालय या अधिकरण में लंबित हैं । यह तब नहीं हो सकती जब अधिकरण विद्यमान नहीं है या वह कार्य निवृत्त हो गया है ।[90]

प्रतिषेध उस समय प्राप्त नहीं की जा सकती जब कनिष्ठ न्यायालय को अधिकारिता तो है[96] किंतु उसका प्रयोग अनियमित या त्रुटिपूर्ण है,[97] अवैध नहीं ।

उत्प्रेषण की प्रकृति — जब कोई व्यक्ति-निकाय (क) जिसे यह विधिक प्राधिकार है, (ख) कि वह जनता के अधिकारों को प्रभावित करने वाले प्रश्नों का अवधारण करे, (ग) न्यायिक रूप से काम करना जिसका कर्तव्य है, और (घ) अपने विधिक प्राधिकार से बाहर जाकर काम करता है तो उत्प्रेषण की रिट दी जा सकती है ।[95] इस रिट से कार्यवाहियों को हटाकर उच्च न्यायालय ले जाया जाता है[98,99] और अधिकारिता के बाहर जाकर किए गए निर्णय को विखंडित कर दिया जाता है ।[95]

इस रिट का उद्देश्य न्यायिक और न्यायिककल्प अधिकरणों द्वारा शक्ति के प्रयोग को विधि द्वारा बनाई गई सीमाओं के भीतर रखना है और उन्हें उनके प्राधिकार के बाहर कार्य करने से रोकना है ।[98]

उत्प्रेषण की रिट निकालने की साधारण शर्तें — असुविधा या अन्य उपचार के अभाव के कारण उत्प्रेषण पाने का अधिकार नहीं प्राप्त होता । निम्नलिखित शर्तें पूरी होने पर ही रिट दी जा सकती है ।[95]

I. *अधिकरण को विधिक प्राधिकार होना चाहिए ।*

II. *यह विधिक प्राधिकार जनता के अधिकारों को प्रभावित करने वाले प्रश्नों का अवधारण करने का होना चाहिए* — प्रतिषेध या उत्प्रेषण प्राप्त करने के लिए प्राधिकारी के निर्णय जनता के अधिकार को प्रभावित करने वाले होने चाहिए । अधिकार या हित विधि द्वारा प्रवर्तनीय होने चाहिए । वे किसी भी प्रकार के हो सकते हैं । सांपत्तिक, धन संबंधी या व्यक्तिगत ।[100]

93. *आयुक्त, एच.आर.ई बनाम लक्ष्मीन्द्र*, (1954) एस.सी.आर. 1005; *कार्ल स्टिल बनाम बिहार राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1615 (*1621*) ।

94. *बीड़ी सप्लाई कंपनी बनाम भारत संघ*, (1956) एस.सी.आर. 267 (*277-78*) ।

95. *मुंबई प्रांत बनाम खुशालदास*, (1950) एस.सी.आर. 621 (*631*); *राधे श्याम बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 107 (*115*) ।

96. *जीप इंडस्ट्रीज बनाम भारत संघ*, ए. 1977 एस.सी. 456 (पैरा 24) ।

97. *नारायण बनाम आय-कर अधिकारी*, ए. 1959 एस.सी. 213 (*219*) ।

98. *भारत बैंक बनाम भारत बैंक के कर्मचारी*, (1950) एस.सी.आर. 459 (*518*) ।

99. *बासप्पा बनाम नागप्पा*, ए. 1954 एस.सी. 440 ।

100. *सगीर अहमद बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 707 (*717*); *पन्नालाल बनाम भारत संघ*, (1957) एस.सी.आर. 233 (*262*) ।

III. *अधिकरण का कर्तव्य न्यायिक रूप से कार्य करना होना चाहिए* — उत्प्रेषण कार्यपालिका के कृत्यों के विरुद्ध नहीं होती । न्यायिक अधिकारियों के प्रशासनिक कार्यों के लिए भी नहीं । यह तभी निकाली जाती है जब कनिष्ठ निकाय या प्राधिकारी का कार्य न्यायिक कार्य है । न्यायिक में न्यायिककल्प भी आ जाता है ।[1] प्रशासनिक आदेशों के,[1] या असांविधिक निकायों के आदेशों के विरुद्ध या विधायी कृत्यों में हस्तक्षेप करने के लिए रिट प्राप्त नहीं की जा सकती ।[2]

न्यायिककल्प और प्रशासनिक आदेशों के बीच इस अंतर को भारत में लगभग समाप्त कर दिया गया है । कारण यह है कि उच्चतम न्यायालय ने बहुत से प्रशासनिक कार्यों के बारे में यह कहा है कि उनके संबंध में भी निर्णय न्यायिक प्रक्रिया से होना चाहिए ।[3]

IV. न्यायिक या न्यायिककल्प प्राधिकारी ने (क) अधिकारिता के बिना या उसके बाहर[95] या (ख) नैसर्गिक न्याय के नियमों के उल्लंघन में कार्य किया हो या (ग) ऐसी भूल की हो जो अभिलेख से ही प्रकट हो जाती है ।

(अ) जब कोई अधिकरण बिना अधिकारिता के कोई आदेश करता है तो वह आदेश न्यायालय की रिट अधिकारिता के अधीन हो जाता है चाहे अधिकरण के विनिश्चय को उच्चतर अधिकारी की मंजूरी प्राप्त करना आवश्यक होता हो और वह अधिकारी रिट अधिकारिता के अधीन न हो । जहां कानून द्वारा किसी विशिष्ट प्रकार के आदेश पारित करने का उत्तरदायित्व किसी विनिर्दिष्ट प्राधिकारी को सौंपा गया है किंतु आदेश किसी और प्राधिकारी ने किया है तो वह अविधिमान्य होगा और इस बात से कोई अंतर नहीं पड़ेगा कि उचित अपीली प्राधिकारी ने मूल आदेश की पुष्टि कर दी थी ।[4]

(आ) यदि कनिष्ठ न्यायालय को उस विषय का निर्णय करने की अधिकारिता है तो उत्प्रेषण नहीं दी जाएगी, चाहे —

(i) परिवादित आदेश के विरुद्ध अपील का अधिकार या कोई अन्य उपचार नहीं है ।[93]

(ii) उत्प्रेषण नहीं देने से व्यथित पक्षकार को असुविधा होगी ।[5]

(iii) अधिकरण का निष्कर्ष तथ्य की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण है,[6] या अधिकरण ने पर्याप्त साक्ष्य के बिना कार्य किया है या साक्ष्य पर विचार करने में गलत मार्ग अपनाया है या विधिक साक्ष्य ग्रहण नहीं किया है या विधिक साक्ष्य अस्वीकार किया है या अधिनियम का गलत अर्थ लगाया है ।[4]

उत्प्रेषण देने वाला न्यायालय अधीक्षण की अधिकारिता का प्रयोग करता है अपीली अधिकारिता का नहीं ।[95] उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन कार्य करते हुए अपील न्यायालय नहीं बन सकता ।[7] वह तथ्य के निष्कर्ष में हस्तक्षेप तभी कर सकता है जब यह साबित हो जाए कि उसके लिए कोई साक्ष्य है ही नहीं ।[8]

(iv) केवल विधि संबंधी भूल ठीक करने के लिए उत्प्रेषण नहीं दी जा सकती ।[6]

1 *बिहार राज्य बनाम गांगुली*, ए. 1958 एस.सी. 1018 (*1026*) ।

2. *सरकारी संघ बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 2030 (पैरा 8) ।

3. तुलना कीजिए, *क्रैपक बनाम भारत संघ*, ए 1970 एस.सी. 150 (*155*, पैरा 14); *उड़ीसा राज्य बनाम बीनापाणि*, ए 1967 एस.सी. 1269, *इरुसीयन इक्विपमेंट बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 266 ।

4. *रामचन्द्र बनाम शंकरम्मा*, (1956) एस.सी.ए. 636 (*661*) ।

5. *हरि विष्णु बनाम सय्यद अहमद*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1104 ।

6. *उज्जम बाई बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1621 (*1627-29*) ।

7. *डी.सी. वर्क्स बनाम सौराष्ट्र राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 264 (*269*); *स्वर्ण सिंह बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 232 (*236*) ।

8. *बासप्पा बनाम नागप्पा*, (1955) 1 एस.सी.आर. 250; *शिक्षा बोर्ड बनाम बागलेश्वर*, ए. 1966 एस.सी. 875 ।

बस अभिलेख से प्रकट होने वाली भूल होने पर ही दी जा सकती है ।[8] इसका यह अभिप्राय है कि (क) केवल सादी भूल से अधिक कुछ होना चाहिए, (ख) यह भूल अभिलेख से प्रकट होनी चाहिए, अर्थात् ऐसी भूल जिसे प्रदर्शित करने के लिए लंबी-चौड़ी बहस की आवश्यकता नहीं है ।[9]

यदि ये आधार विद्यमान नहीं हैं तो न्यायालय ऐसे आदेश में हस्तक्षेप नहीं करेगा जो अधिकारिता के भीतर है चाहे वह कितना ही त्रुटिपूर्ण या अनुचित क्यों न हो ।[10]

V. जिस अधिकरण के आदेश को विखंडित करने की मांग की जा रही है वह उस न्यायालय के अधीन है जिसमें आवेदन किया गया है ।[11] कोई भी न्यायालय ऐसे आदेश को विखंडित करने के लिए उत्प्रेषण नहीं दे सकता जो उसने स्वयं दिया है या किसी समान स्तर के न्यायालय ने दिया है या जिसे किसी स्वतंत्र अधिकरण ने दिया है ।[12]

VI. *वह अधिकरण, जिसके आदेश को विखंडित करने की मांग की गई है या वह प्राधिकारी, जिसकी अभिरक्षा से अभिलेख मंगाया जाना है, उच्च न्यायालय की अधिकारिता के भीतर होना चाहिए* — जिस अधिकरण के आदेश को विखंडित करने की मांग की गई है वह उस न्यायालय की अधिकारिता के भीतर स्थित होना चाहिए जिसके समक्ष उत्प्रेषण की रिट के लिए याचिका दी गई है ।[13] यह आवश्यक नहीं है कि उत्प्रेषण निकालने के दिन वह अधिकरण विद्यमान हो । यदि कोई अधिकरण पद कार्य निवृत्त हो गया है तो भी उत्प्रेषण की रिट दी जा सकती है । यह रिट अभिलेख के विरुद्ध है इसलिए उस व्यक्ति को संबोधित हो सकती है जिसकी अभिरक्षा में अभिलेख है ।[5]

323क और 323ख में उल्लिखित अधिकरणों का अपवर्जन — पूर्वगामी शर्तें पूरी हो जाने पर भी उच्च न्यायालय को अनुच्छेद 323क या 323ख में विनिर्दिष्ट अधिकरणों की कार्यवाही की बाबत प्रतिषेध या उत्प्रेषण निकालने की अधिकारिता नहीं है ।

कोई विनिश्चय न्यायिक या न्यायिककल्प कब हो जाता है — 1 (i) यदि कोई कानून किसी प्राधिकारी को, जो सामान्य अर्थ में न्यायालय नहीं है, किसी पक्षकार द्वारा उस अधिनियम के अधीन किए गए ऐसे दावे से उत्पन्न विवाद को निपटाने की शक्ति देता है जिसका दूसरा पक्षकार विरोध करता है और अधिकरण को इन परस्पर विरोधी पक्षकारों के अधिकारों का अवधारण करने का अधिकार है तो यहां पर हितों का टकराव है । यहां पर प्राधिकारी का कर्तव्य है कि वह न्यायिक रूप से कार्य करे और उसका निर्णय न्यायिककल्प कार्य होगा ।[14]

(ii) कार्यवाही करने का कर्तव्य कानून में अभिव्यक्त रूप से लिखा होगा या आवश्यक विवक्षा से यह अर्थ निकलेगा ।[15 16] कानून की स्कीम या उसके तात्विक उपबंधों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है ।[16] जहां अधिनियम में न्यायिक रूप से कार्य करने के कर्तव्य के बारे में कुछ नहीं कहा गया है वहां अधिनियम के उपबंधों और प्रभावित अधिकारों की

9 *बेअंत बनाम भारत संघ*, ए 1977 एस सी 388, *हेगड़े बनाम तिरुमले*, ए 1960 एस सी 137 ।

10 *महबूब बनाम आंध्र प्रदेश राज्य*, (1961) एस सी. [सिविल अपील 235/59] ।

11 *जनार्दन बनाम हैदराबाद राज्य*, (1951) एस सी आर 344 ।

12 *नगेन्द्र बनाम आयुक्त*, ए 1958 एस सी 398 (*407*) ।

13 *रशीद बनाम आई टी आई कमीशन*, (1954) एस सी आर 738 ।

14 *लखनपाल बनाम भारत संघ*, ए. 1967 एस सी 1507 (*1512*), *उच्च विद्यालय बोर्ड बनाम घनश्याम*, ए. 1962 एस.सी 1110 ।

15. *शंकरलाल बनाम शंकरलाल*, ए 1965 एस सी. 506 (*511*); *एंग्लो-अमेरीकन डायरेक्ट टी ट्रेडिंग कंपनी बनाम कर्मकार*, ए. 1963 एस सी 874 ।

16. *श्री भगवान बनाम रामचंद*, ए 1965 एस सी. 1767 (*1770*) ।

प्रकृति,[14] शक्ति के स्वरूप[17] और अन्य सुसंगत बातों[18] से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उसका कर्तव्य है कि वह न्यायिक रूप से कार्य करे ।

2. **प्रशासनिक और न्यायिककल्प विनिश्चयों के बीच**, नैसर्गिक न्याय के विषय में, जो अंतर था वह उच्चतम न्यायालय के निर्णयों ने समाप्त कर दिया है ।[19-20] बहुत से प्रशासनिक मामलों में उच्चतम न्यायालय ने नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन करना अनिवार्य बताया है । यह कार्य की प्रकृति और प्रभावित अधिकार के स्वरूप के आधार पर होगा ।[21] यदि सुसंगत अधिनियम में प्रक्रिया के बारे में कुछ नहीं कहा गया है तो भी विधिसम्मत शासन की यह अनिवार्य आवश्यकता है कि निर्णय नैसर्गिक न्याय के अनुसार हो ।[20]

3. जहां अधिनियम ने अधिकरण पर अभिव्यक्त या विवक्षित रूप से न्यायिककल्प कार्य करने की बाध्यता अपवर्जित कर दी है वहां यह निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि प्रशासनिक अधिकारी को न्यायिककल्प कार्य करना है ।[22]

न्यायिककल्प कार्य करने की बाध्यता की विभिन्न कोटियां इस प्रकार हैं, –

(अ) न्यायिककल्प कार्य करने की कानूनी बाध्यता – प्रशासनिक अधिकारी पर न्यायिककल्प रूप से कार्य करने की बाध्यता है या नहीं इसका अवधारण सुसंगत अधिनियम[20] और उसके अधीन बनाए गए नियमों[23] की परीक्षा करके किया जाना चाहिए । जहां अधिनियम, प्राधिकारी से यह अपेक्षा करता है कि वह न्यायिक रूप से कार्य करेगा वहां विनिश्चय न्यायिककल्प होगा चाहे प्राधिकारी स्वयं ही विवाद का पक्षकार क्यों न हो ।[24]

(आ) दो पक्षकारों के बीच विवाद से उत्पन्न न्यायिककल्प बाध्यता – इस वर्ग के मामलों में यह आवश्यक नहीं है कि जिस अधिनियम के अधीन प्राधिकारी को निर्णय देना है उसमें न्यायिककल्प कार्य करने की बाध्यता अधिकथित हो । इस प्रकार कार्य करने की विवक्षा निम्नलिखित परिस्थितियों से[25] की जाएगी, अर्थात् :-

(क) विवाद दो पक्षकारों के बीच उनके अधिकारों के बारे में है,[26]

(ख) एक पक्षकार के दावे का दूसरे पक्षकार ने विरोध किया है,[27]

(ग) अधिनियम में ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह उपदर्शित होता हो कि प्राधिकारी को न्यायिक रीति से कार्य करना आवश्यक नहीं है ।

(इ) कृत्य की प्रकृति से न्यायिककल्प कार्य करने की बाध्यता – न्यायालय ने विषयवस्तु की प्रकृति,[28] अंतर्वलित शक्ति की प्रकृति,[29] या प्रभावित अधिकारों की प्रकृति के अनुसार

---

17 *जसवंत शुगर मिल्स* बनाम *लक्ष्मी चंद*, ए. 1963 एस.सी. 677 ।

18 *असम राज्य* बनाम *भारत कला भंडार*, ए. 1967 एस.सी. 1766 (*1773*) ।

19 *क्रैपक* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 150, *सुरेश* बनाम *केरल विश्वविद्यालय*, ए. 1969 एस.सी. 198, *पंजाब राज्य* बनाम *ऐरी*, ए. 1973 एस.सी. 834, *इंडिया शुगर्स* बनाम *अमरावती को-आपरेटिव सोसाइटी*, (1976) यू.जे.एस.सी. 23 ।

20 *गुजरात राज्य* बनाम *अंबालाल*, ए. 1976 एस.सी. 2002 (पैरा 8); *गुजरात राज्य* बनाम *चतुरभाई*, ए. 1975 एस.सी. 629; *सिटी कार्नर* बनाम *कलक्टर का निजी सहायक*, ए. 1976 एस.सी. 143 (पैरा 5) ।

21 *इरूसियन इक्विपमेंट* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 266 (सरकारी संविदाओं के लिए काली सूची में नाम डालने से पिटिशनर के कारबार पर प्रभाव पड़ना); *उच्च विद्यालय बोर्ड* बनाम *चित्रा*, ए. 1970 एस.सी. 1039 (शिक्षा संस्था में प्रवेश रद्द करना) ।

22. *भारत संघ* बनाम *सिन्हा*, ए. 1971 एस.सी. 40 ।

23 *नगेन्द्र* बनाम *आयुक्त*, ए. 1958 एस.सी. 398 (*408*) (1958) एस.सी.आर. 1240 ।

24 *नागेश्वर* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम*, ए. 1959 एस.सी. 308 (*321*) ।

25 *राधेश्याम* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 107 (*129*) ।

26 *परताबपुर कंपनी* बनाम *केन आयुक्त*; ए. 1970 एस.सी. 1896 (*1902*) ।

27 *एक्सप्रेस न्यूज़पेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 578 (*617*) ।

28. *राजस्व बोर्ड* बनाम *विद्यावती*, ए. 1962 एस.सी. 1217 (*1220*) ।

29 *एंग्लो-अमेरीकन डायरेक्ट टी ट्रेडिंग कंपनी* बनाम *कर्मकार*, ए. 1963 एस.सी. 874 ।

यह विवक्षा की है कि कुछ मामलों में यह कर्तव्य है कि सुनवाई का अवसर देते हुए जांच की जाए । इन मामलों में अधिनियम इस बारे में मौन था । इस सभी मामलों में न्यायिककल्प की कसौटी यह है कि वर्तमान विधिक अधिकारों के प्रकाश में जो तथ्य पाए गए हैं उन्हें वस्तुपरक मापदंड[17] लागू करके निर्णय किया जाए । व्यक्तिनिष्ठ विचार नहीं हो ।[30]

(क) अपीली कृत्य तो न्यायिककल्प होगा ही ।[23] प्रशासनिक आदेश से अपील हो तो भी अपीली कृत्य न्यायिककल्प होगा ।[31] अपीली प्राधिकरण नैसर्गिक न्याय के नियमों के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकता[32] चाहे अधिनियम में कोई विशेष प्रक्रिया अपनाने की अपेक्षा नहीं की गई हो ।

(ख) वरिष्ठ प्रशासनिक प्राधिकारी में निहित पुनरीक्षण की शक्ति को भी यह नियम लागू होता है ।[23] वरिष्ठ प्राधिकार स्वयमेव अभिलेख मंगाकर[33] शक्ति का प्रयोग करे या पुनरीक्षण करे, दोनों दशाओं में, यदि व्यक्ति के अधिकार प्रभावित हो रहे हैं[34] तो न्यायिक रीति से कार्य करना पड़ेगा ।

(ग) विद्यार्थियों के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही जिसका उनके भावी जीवन पर प्रभाव पड़ सकता है या जिससे उन पर दांडिक अभियोग चलाया जा सकता है ।[35]

(घ) राजस्व प्राधिकारी के समक्ष कार्यवाही जिसका फल भारी धन संबंधी दायित्व[36] या अन्य शास्ति[37] हो सकता है और जिसके निर्णय में शुद्ध रूप से विधि के प्रश्न अंतर्वलित हैं।[28]

(ङ) किसी सांविधिक प्राधिकारी ने अपनी शक्ति का प्रयोग करके अपने कर्मचारियों की सेवाएं समाप्त कर दी हैं ।[38]

(ई) प्रभावित अधिकारों की प्रकृति से न्यायिक-कल्प रीति से कार्य करने की बाध्यता का निष्कर्ष — प्रशासनिक प्राधिकारी के आदेश से प्रभावित होने वाले अधिकारों की प्रकृति के आधार पर भी यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि न्यायिककल्प रीति से कार्य करने की बाध्यता है या नहीं ।[25, 33] हो सकता है कि अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से यह बाध्यता नहीं डाली गई हो किंतु आदेश सिविल अधिकारों की घोषणा करता हो या पक्षकारों के सिविल अधिकारो को प्रभावित करने वाली बाध्यता अधिरोपित करता हो ।[17, 39] उदाहरणार्थ, —

(क) आदेश किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित करता है जैसे अभिधारी के बेदखल करने का आदेश,[31] अनिवार्य अर्जन की प्रक्रिया द्वारा किसी नागरिक की भूमि का अर्जन;[37, 40]

(ख) किसी व्यक्ति को उसकी वृत्ति या व्यवसाय से वंचित करना;[39]

(ग) किसी व्यक्ति को उसके नियोजन से वंचित करना जैसे उसकी जन्म तिथि बदलकर;[39]

(घ) किसी कारबार[41] या वृत्ति[31] से संबंधित लाइसेंस देने से इंकार करता है[41] या लाइसेंस रद्द कर देता है और ऐसा कारबार या वृत्ति मूल रूप से खतरनाक नहीं है ।

---

30. *साधूसिंह* बनाम *दिल्ली प्रशासन*, ए. 1966 एस.सी. 91 ।
31. *महावीर* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 1302 (*1304*) ।
32. *दिल्ली क्लाथ मिल्स* बनाम *आय-कर आयुक्त*, (1955) 1 एस.सी.आर. 941 ।
33. *श्री भगवान* बनाम *रामचंद*, ए. 1965 एस.सी. 1767 (*1770*) ।
34. *शिवजी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी. 606 ।
35. *उच्च विद्यालय बोर्ड* बनाम *घनश्याम*, ए. 1962 एस.सी. 1110 (*1115*); *उच्च विद्यालय बोर्ड* बनाम *बागलेश्वर*, (1963) 2 एस.सी.आर. 767 ।
36. *बिहारीलाल* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1981 एस.सी. 1585 (पैरा 4) ।
37. *अंबालाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1961 एस.सी. 264 ।
38. *कलकत्ता डॉक लेबर बोर्ड* बनाम *इमाम*, (1965) 11 एस.सी.ए. 226 (*230*) ।
39. *उड़ीसा राज्य* बनाम *बीणापाणी*, ए. 1967 एस.सी. 1269; *सरजू* बनाम *महाप्रबंधक*, ए. 1981 एस.सी. 1481 ।
40. *गुजरात राज्य* बनाम *चतुरभाई*, ए. 1975 एस.सी. 629 ।
41. *पंजाब राज्य* बनाम *अयुध्या*, ए. 1981 एस.सी. 1374 (पैरा 3); *राज रेस्टोरेंट* बनाम *नगर निगम*, ए. 1982 एस.सी. 1550 ।

कुछ मामलों में[42] न्यायालय ने न्यायिककल्प और प्रशासनिक निर्णयों के बीच भेद को समाप्त करते हुए यह अभिनिर्धारित किया है कि ऐसे प्रशासनिक प्राधिकरण को भी, जिसकी बाबत न्यायालय यह नहीं कहा जा सकता कि उस पर न्यायिककल्प कार्य करने की बाध्यता है क्योंकि प्राधिकरण को सुसंगत अधिनियम द्वारा अपने व्यक्तिगत समाधान के आधार पर कार्य करने की शक्ति दी गई है, नैसर्गिक न्याय और ऋजु व्यवहार की तथा पक्षपात रहित होने की न्यूनतम अपेक्षाओं का पालन करना होगा क्योंकि प्रशासनिक निर्णय से व्यक्ति के मूल्यवान अधिकारों पर प्रभाव पड़ता है ।

ऐसे मामलों में न्यायालय ने प्रशासनिक प्राधिकरण द्वारा किए जाने वाले कार्य की प्रकृति से यह निष्कर्ष निकाला है कि नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन करने की बाध्यता है ।[40]

क्या उत्प्रेषण प्रशासनिक विनिश्चय के विरुद्ध प्राप्त की जा सकती है — 1. उच्चतम न्यायालय अब धीरे-धीरे प्रशासनिक प्राधिकारी द्वारा ऐसे क्षेत्र में भी मनमानी कार्यवाही के विरुद्ध सजग हो गया है जहां सुसंगत अधिनियम में न्यायिककल्प रीति से कार्य करने की बाध्यता नहीं है ।

पूर्ववर्ती मामलों में न्यायालय ने इंग्लैंड का यह दृष्टिकोण अपनाया था कि उत्प्रेषण न्यायिक और न्यायिककल्प कार्यवाहियों के विरुद्ध ही प्राप्त की जा सकती है और वह ऐसे प्रशासनिक आदेश के विरुद्ध नहीं दी जा सकती जिसके बारे में न्यायालय यह निष्कर्ष नहीं निकाल सकता कि उसमें न्यायिककल्प रीति से कार्य करने की बाध्यता थी ।

इस उदारवादी दृष्टिकोण से दिए गए निर्णयों की श्रृंखला के परिणामस्वरूप अब स्थिति इस प्रकार है —

"न्यायिक कार्य और प्रशासनिक कार्य के बीच पुराना अन्तर अब मिट गया है । अब हम उसे प्रशासनिक कार्यवाही कह कर बच नहीं सकते । अब ये शब्द ऐसा मंत्र नहीं है जो रक्षा कर सके ।"[43]

2. बाद में न्यायालय ने यह अनुभव किया है कि निर्णयजनित विधि में इस निमित्त जो प्रारम्भिक परीक्षण बताए गए हैं उन्हें लागू करके यह अवधारित करना संभव नहीं होता कि कोई विनिश्चय प्रशासनिक है या न्यायिककल्प ।[44-45] हाल ही के कुछ निर्णयों में उत्प्रेषण की परिधि को दो दशाओं में बढ़ाया गया है ।

I. न्यायालय ने कृत्य संबंधी परीक्षण लागू करके उन मामलों में न्यायिककल्प रीति से काम करने की बाध्यता जोड़ी है जहां अधिनियम इस बारे में मौन था । इस प्रकार शक्ति की प्रकृति, प्राइवेट अधिकारों का स्वरूप आदि को ध्यान में रखते हुए अधिकाधिक मामले न्यायिककल्प बाध्यता के अधीन आ गए हैं ।

II. दूसरी दशा में जो उच्चतम न्यायालय ने विधि का विकास किया है वह अधिक महत्व का और साथ ही जटिल भी है । अब प्रशासनिक और न्यायिककल्प के पुराने विभाजन को कोई महत्व नहीं दिया जाता ।[43, 45] पहले यह देखने के लिए कि न्यायिककल्प रीति से काम करने की बाध्यता की विवक्षा है या नहीं इस बात की ओर ध्यान दिया जाता था ।

---

42. *क्रैपक बनाम भारत संघ*, ए 1970 एस.सी. 150 (*154*); *रामपुर डिस्टलरी कंपनी बनाम कंपनी लॉ बोर्ड*, (1969) 2 एस.सी.सी. 774 (*779*); *शौकिन बनाम देस सिंह*, ए. 1970 एस.सी. 672 (*674*); *इरुसियन इक्विपमेंट बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 266, *बिलंगदन बनाम कार्यपालक इंजीनियर*, ए. 1978 एस.सी. 930 (पैरा 17) ।

43. कपूर बनाम *जगमोहन*, ए. 1981 एस.सी. 136 (पैरा 7) ।

44. *क्रैपक बनाम भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 150 (*154*); *अशोक बनाम हरियाणा राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 454 (पैरा 16, 18) ।

45. *मोहिन्दर बनाम मुख्य निर्वाचन आयुक्त*, ए. 1978 एस.सी. 851 (पैरा 44) ।

यदि बाध्यता थी तभी न्यायसंगत और ऋजु कार्य करने की न्यूनतम अपेक्षाओं का पालन करना पड़ता था ।

(क) जिन मामलों में अधिनियम ने प्रशासनिक प्राधिकारी को यह शक्ति दे दी है कि अपना व्यक्तिगत समाधान हो जाने पर कार्य करे और "का समाधान हो जाता है" या इसी प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया जाता है वहां भी न्यायिक पुनर्विलोकन किया जाने लगा है ।[46-47]

(ख) *रामपुर डिस्टिलरी के मामले*[48] से अब हम अन्तिम चरण में पहुंच गए हैं । इसमें न्यायालय ने यह कहा कि "का समाधान हो जाता है" जैसे शब्द जिनका अर्थ व्यक्तिगत समाधान है इस बात का अवधारण करने के लिए निश्चायक नहीं है कि कृत्य न्यायिककल्प है या नहीं ।[49] यदि प्रशासनिक निर्णय का प्रभाव मूल्यवान सिविल अधिकारों पर पड़ता है जिसके अन्तर्गत व्यक्ति की संविदा करने की स्वतंत्रता भी है तो कानूनी प्राधिकारी को न्यायिकतः कार्य करना होगा चाहे कानूनी शक्ति व्यक्तिपरक कार्य करने के लिए क्यों न दी गई हो । ऐसे मामलों में जांच नैसर्गिक न्याय के नियमों के अनुसार होगी और उसमें पक्षपात नहीं होगा ।

इस निर्णय के परिणामस्वरूप कृत्य संबंधी परीक्षण को लागू करके न्यायिककल्प रूप से कार्य करने की बाध्यता की विवक्षा की जा सकती है चाहे अधिनियम की भाषा से यह प्रतीत होता हो कि विनिश्चय व्यक्तिगत समाधान पर किया जा सकता है ।

III. किंतु निम्नलिखित मामलों में नैसर्गिक न्याय की अपेक्षा नहीं की जा सकेगी और उत्प्रेषण लागू नहीं होगा ।

(i) जिस सरकारी कार्य पर आक्षेप किया गया है उसमें किसी कानूनी शक्तियों का प्रयोग नहीं किया गया है ।[50] वह संविदा के निबंधनों के भंग पर ही आधारित है,[51]

(ii) न्यायिककल्प कार्य करने के प्रक्रम तक अभी पहुंचा नहीं गया है और जिस मामले में प्राधिकारी को अधिकारिता है उसमें कानूनी निदेश देने के प्रक्रम तक ही कार्यवाही पहुंची है,[52]

(iii) विषय, विधायी या दंड संबंधी नीति पर आधारित है[53] जैसे ऐसे किसी माल[54] या सेवा[53] की कीमत तय करना जिसका प्रदाय या नियंत्रण सरकार द्वारा होता है,

(iv) कार्यपालक या प्रशासनिक प्राधिकरण का कार्य विधायी कल्प कार्य है जैसे सशर्त विधायन[65] चाहे उससे प्राइवेट अधिकार प्रभावित होता हो । जैसे उत्तर प्रदेश टाउन एरिया ऐक्ट, 1914 के अधीन राज्य सरकार द्वारा किसी क्षेत्र को टाउन एरिया घोषित करना,[55]

(v) सुसंगत अधिनियम में अभिव्यक्त रूप से नैसर्गिक न्याय की अपेक्षाओं को लागू होने को अपवर्जित किया गया है[56] या कृत्य की प्रकृति से यह विवक्षा हो जाती है कि इस प्रकार अपवर्जन हो जाता है,[57]

46 *केशव मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1973 एस.सी. 389 [उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 की धारा 18क के अधीन आदेश], *केरल राज्य* बनाम *शदुलि*, (1977) यू.जे.एस.सी. 318 (पैरा 3) ।

47. *मेनका* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 597 (पैरा 52, 62) ।

48. *रामपुर डिस्टलरी कंपनी* बनाम *कंपनी लॉ बोर्ड*, (1969) 2 एस.सी.सी. 774 (*779*); *राज आनन्द* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1967 एस.सी. 1081 (*1085*) ।

49. *असम राज्य* बनाम *भारत कला भंडार*, ए 1967 एस.सी. 1766 (*1771*) ।

50. *अपर जिला मजिस्ट्रेट* बनाम *शुक्ला*, ए 1976 एस.सी. 1207 (*1288*) ।

51. *राधाकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 1496 (पैरा 23, 25) ।

52. *जी.एफ. इंडस्ट्रीज* बनाम *भारत संघ*, ए. 1977 एस.सी. 456 (पैरा 24) ।

53 *नारायण* बनाम *भारत संघ*, ए. 1976 एस.सी. 1986 ।

54. *एस.आई. सिंडिकेट* बनाम *भारत संघ*, ए 1975 एस.सी. 460, *पोरवाल* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1127 ।

55 *तुलसीपुर शुगर कंपनी* बनाम *अधिसूचित क्षेत्र समिति*, ए. 1980 एस.सी. 883 (पैरा 5-8) ।

56. *भारत संघ* बनाम *सिन्हा*, ए 1971 एस.सी. 40 (*42*) ।

57. *हीरा* बनाम *प्रधानाचार्य*, ए. 1973 एस.सी. 1260 (*1264*) ।

(vi) आक्षेपित कार्य से किसी निहित अधिकार पर प्रभाव नहीं पड़ रहा है और मनमानी कार्यवाही को रोकने के लिए स्कीम में अन्य रक्षोपाय है ।[58]

उत्प्रेषण के उपयोग ।

अ. **मूल अधिकारों का प्रवर्तन** — इस आधार पर उत्प्रेषण निम्नलिखित मामलों में न्यायिककल्प अधिकरण के विनिश्चय के विरुद्ध प्राप्त की जा सकेगी, अर्थात् :—

(i) जहां विनिश्चय से किसी मूल अधिकार का उल्लंघन होता है ।[59]

यह उल्लंघन किस-किस प्रकार से हो सकता है, —

(क) जहां विनिश्चय का प्रभाव मूल अधिकार पर होता है और अधिकरण जिस विधि के अधीन बनाया गया है वह अधिकारातीत है[60] या मूल अधिकारों का उल्लंघन करता है,[61]

(ख) जहां विधि तो विधिमान्य है किंतु आक्षेपित विनिश्चय मूल अधिकार का उल्लंघन करता है जैसे अनुच्छेद 14 के अधीन ।[62]

(ii) अधिकरण अधिकारिता के बिना या अधिकारिता के बाहर कार्य करता है और उसके विनिश्चय का प्रभाव मूल अधिकारों पर पड़ता है ।[63]

(iii) अधिकरण नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन करता है और उसके विनिश्चयों का प्रभाव मूल अधिकारों पर पड़ता है ।[64]

(iv) जिस आदेश से कार्यवाहियां प्रारम्भ की गई थी वह असांविधानिक है और याची के मूल अधिकार पर प्रभाव डालता है ।[62]

आ **अधिकारातीत निर्णय का विखंडन ।**

इ **अभिलेख से प्रकट होने वाली विधि की भूल से दोषपूर्ण विनिश्चय का विखंडन ।**

ई **नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन** — जहां किसी न्यायिक या न्यायिककल्प प्राधिकारी ने नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतो का उल्लंघन किया है वहां उत्प्रेषण की रिट प्राप्त की जा सकती है चाहे प्राधिकारी ने अपनी अधिकारिता के भीतर कार्य किया हो ।

नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत मोटे तौर से ये हैं —

1. कोई भी न्यायिककल्प प्राधिकारी किसी पक्षकार के विरुद्ध कोई निर्णय उसे अपने विरुद्ध अभिकथन का उत्तर देने का प्रभावी अवसर दिए बिना[65] या उसको प्रभावी करने वाला आदेश निकालने के पहले उसे सुने बिना[66] नहीं दे सकता ।

जहां वह आदेश ऐसी *जानकारी* पर आधारित है जो उस व्यक्ति ने दी थी जिसके विरुद्ध कार्यवाही की जा रही है[67] या कार्यवाही सीमित तथ्यों पर आधारित है वहां भी सुनवाई की जानी चाहिए । सुनवाई करने की आवश्यकता उस दशा में नहीं होगी जहां —

(क) स्वीकृति करने के पहले उस व्यक्ति को यह ज्ञात था कि जानकारी देने पर उसके विरुद्ध प्रतिकूल कार्यवाही हो सकती है, और

58 *दास* बनाम *भारत संघ*, ए 1987 एस सी 593 (पैरा 25) ।

59 *उज्जम बाई* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1621 ।

60. तुलना कीजिए, *जगन्नाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस सी 1563 (*1569*) ।

61. *हिम्मतलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1122; *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1958 एस सी 578 (*648*), *आयुक्त, एच आर ई.* बनाम *लक्ष्मीन्द्र*, (1954) एस सी.आर 1005 ।

62. *बीड़ी सप्लाई कंपनी* बनाम *भारत संघ*, (1956) एस.सी.आर. 267 ।

63. *मदन लाल* बनाम *उत्पाद-शुल्क और कराधान अधिकारी*, ए. 1961 एस सी 1565 ।

64. *सिन्हा गोविन्दजी* बनाम *उप-कलक्टर*, (1962) 1 एस.सी.आर. 540 ।

65. *दिल्ली क्लाथ मिल्स* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1955 एस.सी. 65 ।

66. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *चिंतामन*, ए. 1961 एस सी. 1623 ।

67. *कपूर* बनाम *जगमोहन*, ए. 1981 एस सी 136 (पैरा 16-17) ।

(ख) स्वीकृत तथ्य के आधार पर एक ही निश्चय संभव है और सुनवाई करना व्यर्थ होगा ।[67]

किंतु —

(i) सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर देने का यह अर्थ नहीं है कि किसी पक्षकार की व्यक्तिगत रूप से सुनवाई की जानी चाहिए ।[68] ऐसा तभी होगा जब कि इस निमित्त कानून में अपेक्षा की गई हो ।[69] यह तो प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर होगा कि मामले की सुनवाई की जाए या नहीं । जहां जटिल प्रश्नों का विनिश्चय करना है वहां पर ऐसी सुनवाई करना आवश्यक होगा ।[65]

(ii) नैसर्गिक न्याय के नियम में यह अपेक्षा की जाती है कि पक्षकार को अपना साक्ष्य पेश करने के लिए या विरोधी साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने के लिए या जब उसके विरुद्ध न्यायालय या अधिकरण साक्ष्य एकत्र कर रहा है उस समय उपस्थित होने के लिए उसे उचित अवसर दिया जाना चाहिए ।[70] जहां ऐसा अवसर दिया गया है किंतु पक्षकारों ने उसका लाभ नहीं उठाया है वहां बाद में वह यह परिवाद नहीं कर सकता कि उसकी अनुपस्थिति में साक्ष्य लिया गया था या निरीक्षण किया गया था ।[70-71]

(iii) न्यायिककल्प अधिकरण को सभी स्रोतों से जांच मे संबंधित सूचना और सामग्री प्राप्त करने का अधिकार है । वह प्रक्रिया के उन नियमों से नहीं बंधा है जिनसे न्यायालय बंधा रहता है ।[72] ऐसे अधिकरणों पर विधि द्वारा बस यही बाध्यता रख दी जाती है कि वे ऐसी जानकारी के आधार पर कार्य नहीं करेंगे जो उस पक्षकार को नहीं दिखाई गई है जिसके विरुद्ध उसका उपयोग किया जा रहा है और उस पक्षकार को उसका स्पष्टीकरण देने के लिए उचित अवसर प्रदान किया जाना चाहिए ।[72]

II. न्यायिक और न्यायिककल्प विनिश्चयों का यह सार है कि ऐसे विनिश्चय करने वाले प्राधिकारी को निष्पक्ष रूप से, वस्तुनिष्ठ रूप से और बिना पक्षपात के कार्य करना चाहिए ।[73-74]

जब न्यायिक या न्यायिककल्प प्राधिकारी अपने समक्ष उपस्थित वाद में हितबद्ध होता है तब इस सिद्धांत का उल्लंघन हो जाता है । ऐसे हित तीन प्रकार के हो सकते हैं, —

(क) उसका वाद के विषय से प्रत्यक्ष संबंध हो सकता है चाहे उसमें धन संबंधी या अन्य विधिक हित न हो । जैसे यदि न्यायाधीश स्वयं पक्षकार है या उसे मामले के तथ्यों की व्यक्तिगत जानकारी है या उसने वाद में साक्षी के रूप में अपनी परीक्षा की है[75] तो उसे उसकी सुनवाई नहीं करनी चाहिए,[76]

(ख) यदि किसी व्यक्ति का धन संबंधी हित है तो वह व्यक्ति न्यायाधीश के रूप में कार्य करने के लिए पात्र नहीं है चाहे वह हित कितना ही छोटा क्यों न हो,[74]

(ग) यदि धन संबंधी हित नहीं है किंतु न्यायाधीश का एक पक्षकार के प्रति व्यक्तिगत

68. *एफ एन राय* बनाम *सीमा-शुल्क कलक्टर,* ए. 1957 एस सी 648 (*652*), *भारत संघ* बनाम *ज्योति प्रकाश,* ए. 1971 एस सी 1093 (*1103*) ।

69. *रशीद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य,* ए. 1979 एस सी 592 (पैरा 42, 47) ।

70. *रोशन लाल* बनाम *ईश्वर दास,* ए. 1962 एस सी 646 (*655*) ।

71. *उड़ीसा राज्य* बनाम *मुरलीधर,* ए. 1963 एस सी 375 ।

72. *मैसूर राज्य* बनाम *शिवबासप्पा,* ए. 1963 एस सी. 375 ।

73. *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम* बनाम *सत्यनारायण ट्रांसपोर्ट्स,* ए. 1965 एस सी 1303 (*1306*) ।

74. *मानक लाल* बनाम *प्रेमचंद,* ए. 1957 एस.सी. 425 ।

75. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *नूह,* (1958) एस.सी.आर. 595 ।

76. *नागेश्वर राव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य,* ए. 1959 एस.सी. 1376 (*1378*); *नागेश्वर* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम,* ए. 1959 एस.सी. 308 (*326*) ।

झुकाव है[76] जो नातेदारी के कारण या इसी प्रकार के किसी और संबंध के कारण है या विचारण के पहले होने वाली घटनाओं के परिणामस्वरूप वह किसी पक्षकार के प्रति शत्रुभाव रखता है तो वह न्यायाधीश के रूप में कार्य नहीं करेगा ।[73]

III. न्यायिककल्प प्राधिकरण का विनिश्चय उसके समक्ष सामग्री पर आधारित होना चाहिए । किसी बाहरी प्राधिकारी के निष्कर्ष या निदेशों पर नहीं ।[77] चाहे बाहरी प्राधिकारी कितना ही प्रमुख व्यक्ति क्यों न हो ।

IV न्यायिक प्रक्रिया का यह आधारभूत सिद्धांत है कि जो व्यक्ति मामले की सुनवाई करता है वही उसका निर्णय करेगा कोई अन्य व्यक्ति नहीं ।[78]
निम्नलिखित मूलभूत सिद्धांतों के बारे में मतैक्य है किंतु विभिन्न न्यायिककल्प निकायों को इन नियमों के विस्तार से लागू किए जाने के बारे में मतभेद है ।[78]

V न्यायिककल्प आदेश में कारण दिए जाने चाहिए ।[79]

VI नैसर्गिक न्याय की अपेक्षा इन मामलों में नहीं की जा सकती जिनमें —
कोई कानूनी अधिकार या बाध्यता अन्तर्वलित नहीं है[80-81] और वह विषय राज्य से की गई संविदा का विषय है,[80] उसमें कोई कानूनी शक्ति का आधार नहीं है[82] या वह कृत्य विधायी है[83] या कानून ने सुनवाई करने की बाध्यता समाप्त कर दी है ।[84]

VII. नैसर्गिक न्याय के उल्लंघन से निर्णय अविधिमान्य हो जाता है । इस बात का कोई महत्व नहीं होगा कि निर्णय जिस व्यक्ति के विरुद्ध दिया गया है उस पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है या नहीं ।[85-86] परिवादित विनिश्चय या आदेश को अपास्त किया जाना चाहिए । यदि परिस्थितियों में परिवर्तन होकर अपास्त करने की आवश्यकता न रह गई हो तो बात दूसरी है ।[85]

विद्यार्थियों के विरुद्ध कार्यवाही

I कदाचार के आधार पर किसी विद्यार्थी के विरुद्ध की गई अनुशासनिक कार्यवाही न्यायिककल्प कार्यवाही है जैसे परीक्षा में कदाचार ।[87-88] ऐसे मामले में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का पालन करना होगा ।[87] जब कभी किसी विद्यार्थी को प्रभावित करने वाला आदेश निकालने की प्रस्थापना हो तब इस सिद्धांत को लागू किया जाएगा ।[88]

किसी विद्यार्थी की परीक्षा का परिणाम[88] उसे सुनवाई का और अपनी प्रतिरक्षा करने का अवसर दिए बिना रद्द नहीं किया जा सकता[89] चाहे न्यायिककल्प रीति से कार्य करने की कानूनी बाध्यता हो या नहीं ।

77 *राजगोपाल* बनाम *एम टी ए टी.*, ए 1964 एस सी 1573 (*1579*) ।

78 *नागेश्वर* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम*, ए 1959 एस.सी. 308; *भारत संघ* बनाम *पी के राय*, ए 1968 एस सी 850 (*858*); *बी बी एंड डी कंपनी* बनाम *बोस*, ए 1967 एस.सी 361 (***365***) ।

79 *सीमेन्स कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए 1976 एस सी 1785 (पैरा 6) ।

80 *राधाकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1977 एस सी 1496 ।

81 *अपर जिला मजिस्ट्रेट* बनाम *शिवकांत*, ए 1976 एस सी 1207 (*1288*) ।

82 *डी एफ ओ* बनाम *स्नेही*, ए 1973 एस सी 205 ।

83 *इंटरनेशनल टूरिस्ट कारपोरेशन* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए 1981 एस सी 774; *एस.एस.ए.बी. संघ* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1981 एस सी. 2030 (पैरा 8); *तुलसीपुर* बनाम *नोटिफाइड एरिया*, (1980) 2 एस सी सी 295, *सुंदरजस* बनाम *कलक्टर*, (1989) 3 एस.सी.सी 396 (पैरा 28) ।

84 *स्वदेशी काटन मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस सी. 818 (पैरा 42, 78, 108) ।

85. *कपूर* बनाम *जगमोहन*, ए 1981 एस सी 136 (पैरा 20, 26) ।

86 *चिंतापल्ली एजेंसी* बनाम *सचिव*, ए. 1977 एस.सी 2313 ।

87 *उच्च विद्यालय बोर्ड* बनाम *घनश्याम*, ए. 1962 एस.सी. 1110 ।

88 *उच्च विद्यालय बोर्ड* बनाम *चित्रा*, ए. 1970 एस.सी. 1039 ।

89. *उच्च विद्यालय बोर्ड* बनाम *बागलेश्वर*, (1963) 3 एस.सी.आर. 767 ।

II. ऐसे मामलों में नैसर्गिक न्याय की अपेक्षा का पर्याप्त अनुपालन हो जाएगा यदि, —

(i) अपराधी विद्यार्थी को उसके विरुद्ध आरोप बतला दिए जाते है, और

(ii) उन आरोपों का उत्तर देने के लिए और उसके विरुद्ध प्रयोग की जाने वाली सामग्री के विरुद्ध पर्याप्त अवसर दिया जाता है तथा उसे अपना पक्ष प्रस्तुत करने का भी पर्याप्त अवसर दिया जाता है ।[87, 90]

यदि ये दो शर्तें पूरी हो जाती हैं तो कार्यवाही इस आधार पर दोषपूर्ण नहीं हो सकती कि अपराधी को उसके विरुद्ध साक्षियों की प्रतिपरीक्षा करने का अवसर नहीं दिया गया था या उसकी अनुपस्थिति में साक्षियों की परीक्षा की गई थी,[90-91] या जाच अधिकारी की रिपोर्ट उसे दी नहीं गई थी ।[92-93] संक्षेप में नैसर्गिक न्याय की अपेक्षाएं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होंगी जैसे, जांच की विषय-वस्तु ।[93]

III. जहां समुचित प्राधिकारी किसी एक परीक्षार्थी पर अनुचित माध्यम अपनाने का आरोप नहीं लगाता बल्कि एक पूरी परीक्षा या एक विशेष केन्द्र की परीक्षा अपना यह समाधान हो जाने पर रद्द कर देता है कि ऐसी परीक्षा में या ऐसे केन्द्र पर अनुचित साधन अपनाए गए थे ।[94]

IV. निष्कासन करने या निलम्बित करने की अनुशासनिक कार्यवाही किसी विद्यार्थी को प्रवेश देने या पुन. प्रवेश देने से इंकार करने से भिन्न कार्यवाही है । प्रवेश देना या न देना शिक्षा संस्था के अध्यक्ष के विवेक पर निर्भर करता है ।[88]

अधिकार पृच्छा की प्रकृति — अधिकार पृच्छा एक ऐसा उपचार या कार्यवाही है जिसके द्वारा राज्य उस दावे की वैधता की जांच करता है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति कोई पद या विशेषाधिकार का दावा करता है और यदि दावा सुआधारित नहीं है तो उसे उस पद या अधिकार के उपभोग से वंचित किया जा सकता है ।[95]

किसी लोक पद के संबंध में अधिकार पृच्छा के निकाले जाने की शर्तें — किसी पद के बारे में अधिकार पृच्छा की रिट तभी निकाली जाएगी जब निम्नलिखित शर्तें पूरी हो जाएं :—

I. पद लोक पद होना चाहिए ।[95] वह किसी प्राइवेट पूर्त संस्था या प्राइवेट सगम के पद की बाबत नहीं दिया जा सकता । लोक पद की कसौटी यह है कि क्या उस पद के कर्तव्य लोक प्रकृति के हैं ।[96]

II. पद अधिष्ठायी होना चाहिए अर्थात् वह पद स्वतंत्र पद होना चाहिए ।[95]

III. यह रिट ऐसी प्राइवेट शिक्षा संस्था की प्रबन्ध समिति के विरुद्ध नहीं हो सकती जिसका सृजन किसी अधिनियम या अधिनियम का बल रखने वाले नियमों द्वारा नहीं हुआ है ।[96]

अधिकार-पृच्छा की रिट इन पदों की बाबत दी जा सकती है. —

(i) कानून द्वारा बनाई गई किसी स्थानीय निकाय या नगरपालिका के सदस्य,[96]

(ii) उच्च न्यायालय का न्यायाधीश,[97]

(iii) कानूनी अधिकरण ।[98]

IV. यह आवश्यक है कि प्रत्यर्थी ने उस पद के लिए अपना दावा प्रस्तुत किया था ।

90 *यूनीवर्सिटी आफ सिलोन* बनाम *फर्नेंडो*, (1960) 1 इला ई आर 631 (पी सी) ।

91 *नागराज* बनाम *मैसूर विश्वविद्यालय*, (1968) एस सी [सिविल अपील 1957/66, तारीख 15-4-1968] ।

92 *सुरेश* बनाम *केरल विश्वविद्यालय*, ए. 1969 एस सी 198 (*202*) ।

93 *हीरा नाथ* बनाम *राजेन्द्र*, ए 1973 एस.सी 1260 ।

94 *बिहार उच्चतर माध्यमिक बोर्ड* बनाम *सुभाष*, ए 1970 एस सी. 1269 (*1273*) ।

95 *मैसूर विश्वविद्यालय* बनाम *गोविंद*, ए 1965 एस सी 41 (*49*) ।

96 *शयाबुद्दीनसाब* बनाम *नगरपालिका*, ए 1955 एस सी. 314 ।

97 *चन्द्रप्रकाश* बनाम *चतुर्भुज*, (1969) एस सी [सिविल अपील 2331/68, तारीख 18-12-1969] ।

98. *स्टेट्समैन* बनाम *एच आर देव*, ए. 1965 एस.सी. 1495 (*1500*) ।

V. प्रत्यर्थी उस पद को धारण करने के लिए या उस पद पर बने रहने के लिए विधिक रूप से अर्ह नहीं है क्योंकि संविधान या किसी अधिनियम के उपबंध का उल्लंघन रहा है ।

अनुच्छेद 226 के अधीन कार्यवाहियों में केंद्रीय विधियों की सांविधानिक वैधता पर विचार न किया जाना ।

226क. *संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 की धारा 8 द्वारा (13-4-1978 से) निरसित ।*

सभी न्यायालयों के अधीक्षण की उच्च न्यायालय की शक्ति ।

227. [99][*(1) प्रत्येक उच्च न्यायालय उन राज्यक्षेत्रों में सर्वत्र जिनके संबंध में वह अपनी अधिकारिता का प्रयोग करता है, सभी न्यायालयों और अधिकरणों का अधीक्षण करेगा ।*]

(2) पूर्वगामी उपबंध की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, उच्च न्यायालय —

(क) ऐसे न्यायालयों से विवरणी मंगा सकेगा;

(ख) ऐसे न्यायालयों की पद्धति और कार्यवाहियों के विनियमन के लिए साधारण नियम और प्ररूप बना सकेगा, और निकाल सकेगा तथा विहित कर सकेगा; और

(ग) किन्हीं ऐसे न्यायालयों के अधिकारियों द्वारा रखी जाने वाली पुस्तकों, प्रविष्टियों और लेखाओं के प्ररूप विहित कर सकेगा ।

(3) उच्च न्यायालय उन फीसों की सारणियां भी स्थिर कर सकेगा जो ऐसे न्यायालयों के शैरिफ को तथा सभी लिपिकों और अधिकारियों को तथा उनमें विधि-व्यवसाय करने वाले अटर्नियों, अधिवक्ताओं और प्लीडरों को अनुज्ञेय होंगी :

परंतु खंड (2) या खंड (3) के अधीन बनाए गए कोई नियम, विहित किए गए कोई प्ररूप या स्थिर की गई कोई सारणी तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के उपबंध से असंगत नहीं होगी और इनके लिए राज्यपाल के पूर्व अनुमोदन की अपेक्षा होगी ।

(4) इस अनुच्छेद की कोई बात उच्च न्यायालय को सशस्त्र बलों से संबंधित किसी विधि द्वारा या उसके अधीन गठित किसी न्यायालय या अधिकरण पर अधीक्षण की शक्तियां देने वाली नहीं समझी जाएगी ।

[100]* * *

अनुच्छेद 227 का प्रविषय और उसके अधीन हस्तक्षेप की शर्तें — 1. अनुच्छेद 227 द्वारा प्रदत्त साधारण अधीक्षण की शक्ति में उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य है कि वह अपनी राज्यक्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर स्थित सभी अधिकरणों और न्यायालयों को[100] अपने प्राधिकार की सीमाओं के भीतर रखे और यह सुनिश्चित करे कि वे अपने कर्तव्य का पालन करें और अपने कर्तव्य को विधिक रूप से संपन्न करें ।[1] इसका अर्थ यह हुआ कि उच्च न्यायालय इन मामलों में हस्तक्षेप कर सकता है —

(क) भूल से अधिकारिता ग्रहण करना या अधिकारिता के बाहर काम करना ।[2]

99. खंड (1) में, कोष्ठक में दिए गए शब्द, जो बयालीसवें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा प्रतिस्थापित किए गए थे, चवालीसवें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा वापस रखे गए । बयालीसवें संशोधन अधिनियम, द्वारा अंतःस्थापित खंड (5) का चवालीसवें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा लोप कर दिया गया है । इस प्रकार अनुच्छेद 227 का पाठ मूल रूप में फिर से आ गया है ।

100. *मनमोहन* बनाम *संघ राज्यक्षेत्र*, (1984) सप एस.सी.सी 540 (पैरा 7) ।

1. *उमरसाहेब* बनाम *कडलासकर*, ए. 1970 एस.सी 61 (65) ।

2. *कौंट्रा निवारण* बनाम *महेन्द्र*, ए. 1963 एस.सी. 1895; *रूकुरानंद* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1971 एस.सी. 746 (*748*) ।

(ख) अधिकारिता के प्रयोग से इंकार ।[3,4]

(ग) अभिलेख से प्रकट होने वाली विधि संबंधी भूल जो अधिकारिता संबंधी विधिक भूल नहीं है या जो केवल विधि की भूल नहीं है ।[4]

(घ) नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन ।[3,5]

(ङ) प्राधिकार या विवेक का मनमाना या तानाशाही प्रयोग ।[6]

(च) ऐसे निष्कर्ष निकालना जो उलटा है या जो किसी सामग्री पर आधारित नहीं है ।

किंतु —

(i) संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण की शक्ति के अधीन ऐसे मामलों में ही हस्तक्षेप किया जा सकता है जिनमे कर्तव्य की घोर उपेक्षा हुई है या विधि का गम्भीर उल्लंघन हुआ है ।[5] इसका प्रयोग उन विरले मामलो मे किया जाता है जहां हस्तक्षेप न किए जाने पर घोर अन्याय होगा ।[5] इस शक्ति का प्रयोग अपीली या पुनरीक्षण शक्ति के रूप में नहीं किया जा सकता ।[7,8]

(ii) इस शक्ति का प्रयोग तथ्य[9] या विधि[7] की भूल को सुधारने के लिए नहीं किया जा सकता जब तक कि ऐसी भूल अभिलेख से प्रकट होने वाली विधि की भूल न हो ।[10] इसी प्रकार इस शक्ति का प्रयोग प्रक्रिया में अनियमितता या अवैधता को सुधारने के लिए नहीं हो सकता जब तक कि उससे अधिकारिता पर प्रभाव न पड़ा हो या नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का भंग न हुआ हो ।[6] इस शक्ति का प्रयोग करके साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं किया जा सकता ।[1]

(iii) इस शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय, कनिष्ठ न्यायालय के निर्णय के स्थान पर अपना निर्णय नहीं रखेगा चाहे वह तथ्य का प्रश्न हो या विधि का ।[11,12] यदि अधिकारिता के भीतर विवेक शक्ति का प्रयोग किया गया है तो तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि यह प्रयोग मनमाना या आधारहीन न हो[12,13] अथवा इस शक्ति का प्रयोग तभी करेगा जब कोई ऐसा साक्ष्य ही नहीं है जिसके आधार पर न्यायालय उस निष्कर्ष पर पहुंच सकता था जिस पर वह पहुंचा था या अधिकारिता संबंधी तथ्य का निष्कर्ष निकालने मे भूल की गई है ।[14]

(iv) उच्च न्यायालय अपीली न्यायालय नहीं है इसलिए वह पुनःप्रेषण का आदेश नहीं निकाल सकता ।[15]

3 *डाहया लाल* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए 1964 एस सी 1320 (*1323*) ।

4 *प्रोविंशियल ट्रासपोर्ट सर्विस* बनाम *राज्य औद्योगिक न्यायालय*, ए 1963 एस सी 114, *गुजरात राज्य* बनाम *वखतसिंहजी*, ए 1968 एस सी 141 (*148*) ।

5 तुलना कीजिए, *डी एन बनर्जी* बनाम *मुखर्जी*, (1953) एस सी आर. 302 (*304*) ।

6. *संतोष* बनाम *मूल सिंह*, ए 1958 एस सी 312 ।

7 *भूतनाथ* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, (1969) 3 एस सी सी 675 (*677*) ।

8 *राजकमल* बनाम *इंडियन मोशन पिक्चर्स यूनियन*, (1965) II एस सी डब्ल्यू आर 233, *गणपत* बनाम *शशिकांत*, ए 1978 एस सी 955 ।

9 *बभूतमल* बनाम *लक्ष्मीबाई*, ए 1975 एस सी 1297 (पैरा 7); *चदावरकर* बनाम *आशालता*, (1986) 4 एस सी सी 447 ।

10. *नगेन्द्र* बनाम *आयुक्त*, ए 1958 एस सी 398 (*412*) ।

11 *डी सी वर्क्स* बनाम *सौराष्ट्र राज्य*, ए 1957 एस सी 264, *फिल्मिस्तान* बनाम *बालकृष्ण*, ए. 1972 एस सी 171 (*175*) ।

12 *सत्यनारायण* बनाम *मल्लिकार्जुन*, ए 1960 एस सी 137 (*142*) ।

13. *इंडिया पाइप कंपनी* बनाम *फिकरुद्दीन*, ए 1978 एस सी. 45 (पैरा 5, 8) ।

14 *जीजाबाई* बनाम *पठानखान*, ए 1971 एस सी 315 (*318*); *यूनुस* बनाम *मुस्तकिम*, ए 1984 एस.सी 38 ।

15. *बभूतमल* बनाम *लक्ष्मीबाई*, ए 1975 एस सी 1297 (पैरा 4) [कोद्रा *निवारण* बनाम *महेन्द्र*, ए 1963 एस सी 1895; *डाहया लाल* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए 1964 एस सी 1320 (*1323*)] ।

2. संक्षेप में कनिष्ठ न्यायालय के तथ्य संबंधी निष्कर्ष के बारे में अनुच्छेद 227 की अधिकारिता इतने तक ही सीमित है कि इस बात की परीक्षा की जा सकती है कि अधीनस्थ न्यायालय ने अपने प्राधिकार के भीतर रहकर काम किया है या नहीं ।[9] उच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालय का निर्णय केवल इस आधार पर विखंडित नहीं कर सकता कि तथ्य संबंधी निष्कर्ष निकालने में भूल हुई है । वह ऐसा तभी कर सकेगा जब अधीनस्थ न्यायालय बिना किसी साक्ष्य के[16] या साक्ष्य का गलत अर्थ निकालकर उस निष्कर्ष पर पहुंचा है या निष्कर्ष आधारहीन है ।[9]

अनुच्छेद 226 और 227 — इन दोनों अनुच्छेदों के अधीन अधिकारिता एक दूसरे से अलग और स्वतंत्र है ।

अनुच्छेद 227 द्वारा प्रदत्त न्यायिक अधीक्षण की शक्ति पर वे तकनीकी नियम लागू नहीं होते हैं जो अनुच्छेद 226 के अधीन उत्प्रेषण की रिट निकालने की शक्ति पर लागू होते है ।[17] जैसे —

(क) अनुच्छेद 226 के अधीन शक्ति का प्रयोग किसी पक्षकार के आवेदन पर ही किया जा सकता है । किंतु अनुच्छेद 227 के अधीन शक्ति का प्रयोग न्यायालय स्वप्रेरणा से भी कर सकता है ।[17]

(ख) न्यायालय अनुच्छेद 227 के अधीन कार्यवाही में किसी आदेश को विखंडित कर सकता है और आगे ऐसे निदेश भी दे सकता है जो अनुच्छेद 226 के अधीन कार्यवाही में नहीं दिए जा सकते थे ।[18] जैसे साक्ष्य लेने के पश्चात् आगे और जांच करने का निदेश[19-20] या विधि के अनुसार मामले को निपटाने का निदेश ।[19]

(ग) अधिकरणों पर अधिकारिता के बारे में देखिए आगे अनुच्छेद 323क-323ख ।

कुछ मामलों का उच्च न्यायालय को अंतरण ।

228. **यदि उच्च न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि उसके अधीनस्थ किसी न्यायालय में लंबित किसी मामले में इस संविधान के निर्वचन के बारे में विधि का कोई सारवान् प्रश्न अंतर्वलित है जिसका अवधारण मामले के निपटारे के लिए आवश्यक है** [21]*तो वह* ***[21क] *उस मामले को अपने पास मंगा लेगा और —*

(क) मामले को स्वयं निपटा सकेगा, या

(ख) उक्त विधि के प्रश्न का अवधारण कर सकेगा और उस मामले को ऐसे प्रश्न पर निर्णय की प्रतिलिपि सहित उस न्यायालय को, जिससे मामला इस प्रकार मंगा लिया गया है, लौटा सकेगा और उक्त न्यायालय उसके प्राप्त होने पर उस मामले को ऐसे निर्णय के अनुरूप निपटाने के लिए आगे कार्यवाही करेगा ।

अनुच्छेद 228 का उद्देश्य — अनुच्छेद 228 का उद्देश्य उच्च न्यायालय को राज्य में संविधान का एकमात्र निर्वचन कर्ता बनाना है और अधीनस्थ न्यायालयो को संविधान के निर्वचन के अधिकार से वंचित करना है । इसका उद्देश्य सांविधानिक विनिश्चयों के बारे में यथासंभव एकरूपता प्राप्त करना है । इस अनुच्छेद के अधीन, —

16 *गोपाल* बनाम *एन पी ट्रस्ट*, ए 1978 एस सी 347 (पैरा 7) ।
17 *हरि विष्णु* बनाम *अहमद*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1104 ।
18 *गुजरात राज्य* बनाम *वख्तसिंहजी*, ए 1968 एस सी 1481 (*1489*) ।
19. *सुरेन्द्र* बनाम *स्टीफन कोर्ट*, ए. 1966 एस.सी. 1361 ।
20. *लोनांड ग्राम पंचायत* बनाम *रामगिरि*, ए. 1968 एस.सी. 222 (*223*) ।
21. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 1-2-1977 से प्रतिस्थापित ।
21क. संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा तारीख 13-4-1978 से "अनुच्छेद 131क के उपबंधों के अधीन रहते हुए" का लोप किया गया ।

(क) उच्च न्यायालय का यह कर्तव्य है[22] कि वह अधीनस्थ न्यायालय से ऐसे मामले को अपने पास ले ले जिसमें संविधान के निर्वचन के बारे में कोई महत्वपूर्ण प्रश्न उपस्थित हुआ है ।

(ख) अधीनस्थ न्यायालय का भी यह कर्तव्य है कि जैसे ही उसे यह पता चलता है कि इस प्रकार का प्रश्न अंतर्वलित है तो वह ऐसे मामले को उच्च न्यायालय को निर्दिष्ट करेगा ।

इस अनुच्छेद के अधीन पक्षकार और अधीनस्थ न्यायालय दोनों ही उच्च न्यायालय में जा सकते हैं ।[22]

अनुच्छेद के लागू होने के लिए आवश्यक शर्तें — उच्च न्यायालय इस अनुच्छेद के अधीन अपने पास मंगाने की शक्ति का प्रयोग करे इसके लिए कुछ शर्तें पूरी होनी चाहिए :—

(i) उच्च न्यायालय के अधीनस्थ किसी न्यायालय में कोई वाद या मामला वास्तव में लंबित होना चाहिए । कोई व्यक्ति अनुच्छेद 228 के अधीन उच्च न्यायालय में यह कहते हुए अभ्यावेदन नहीं कर सकता कि उसका ऐसा वाद या मामला प्रस्तुत करने का आशय है । अनुच्छेद 228 वहां लागू नहीं होगा जहां मामला पहले ही निपटा दिया गया हो । उच्च न्यायालय तभी हस्तक्षेप कर सकता है जब कि वाद या मामला लंबित हो । चाहे उसके लंबित रहने का कोई भी कारण हो । ये कारण वादी द्वारा स्वार्थ से प्रेरित याचिकाएं हो सकती हैं या न्याय प्राप्त करने के लिए सद्भावी अर्जी भी ।[23] यह अनुच्छेद ऐसे कनिष्ठ अधिकरणों के समक्ष लंबित मामलों को लागू नहीं होता जो न्यायालय नहीं हैं ।[24]

(ii) उस मामले में संविधान के निर्वचन के बारे में महत्वपूर्ण प्रश्न अंतर्वलित होना चाहिए । संविधान के किसी उपबंध के उल्लंघन के आधार पर किसी अधिनियम की असांविधानिकता का प्रश्न ऐसा प्रश्न है ।[22] किंतु उच्चतम न्यायालय के पूर्व विनिश्चय द्वारा निपटाए गए विधिक प्रश्न को ऐसा प्रश्न नहीं कहा जा सकता ।[25]

ऐसे मामले का निपटाया जाना — उच्च न्यायालय द्वारा ऐसे मामले के निपटाए जाने के बारे में यह अनुच्छेद दो प्रकार के मामलों में विभेद करता है, — (क) वे मामले जिनमें केवल सांविधानिक प्रश्न अंतर्वलित हैं, और (ख) वे मामले जिसमें सांविधानिक प्रश्नों के साथ-साथ सामान्य विधि के प्रश्न भी अंतर्वलित हैं । पहले प्रकार के मामलों में उच्च न्यायालय पूरे वाद या मामले को निपटा सकता है । दूसरे प्रकार के मामलों में उच्च न्यायालय केवल सांविधानिक विवाद्यक निपटाएगा और अन्य विवाद्यकों को निपटाने के लिए उसे निचले न्यायालय को भेजेगा ।[22] निपटाने के बारे में उच्च न्यायालय को विवेकाधिकार दिया गया है[26] और समुचित मामलों में वह सामान्य प्रश्नों का निपटारा करते हुए पूरे मामले को निपटा सकता है ।

राज्य विधियों की सांविधानिक वैधता से संबंधित प्रश्नों के निपटारे के बारे में विशेष उपबंध ।

228क. *संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 की धारा 10 द्वारा* (13-4-1978 से) *निरसित* ।

22 *गंगा प्रताप बनाम इलाहाबाद बैंक*, ए. 1958 एस.सी 233 (*295*) ।
23 *रामास्वामी बनाम मद्रास एच.आर.ई. बोर्ड*, ए 1952 मद्रास 20 ।
24. *जुगल किशोर बनाम एस.सी.सी बैंक*, ए. 1967 एस.सी 1494 ।
25. *जम्मू-कश्मीर राज्य बनाम गंगा सिंह*, ए. 1960 एस.सी. 356 ।
26. *शिव बहादुर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, (1955) एस.सी.आर. 206 ।

229. (1) किसी उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्तियां उस न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति करेगा या उस न्यायालय का ऐसा अन्य न्यायाधीश या अधिकारी करेगा जिसे वह निर्दिष्ट करे :

उच्च न्यायालयों के अधिकारी और सेवक तथा व्यय ।

परंतु उस राज्य का राज्यपाल[27]* नियम द्वारा यह अपेक्षा कर सकेगा कि ऐसी किन्हीं दशाओं में जो नियम में विनिर्दिष्ट की जाएं, किसी ऐसे व्यक्ति को, जो पहले से ही न्यायालय से संलग्न नहीं है, न्यायालय से संबंधित किसी पद पर राज्य लोक सेवा आयोग से परामर्श करके ही नियुक्त किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।**

(2) राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की सेवा की शर्तें ऐसी होंगी जो उस न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति या उस न्यायालय के ऐसे अन्य न्यायाधीश या अधिकारी द्वारा, जिसे मुख्य न्यायमूर्ति ने इस प्रयोजन के लिए नियम बनाने के लिए प्राधिकृत किया है, बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाएं :

परंतु इस खंड के अधीन बनाए गए नियमों के लिए, जहां तक वे वेतनों, भत्तों, छुट्टी या पेंशनों से संबंधित हैं, उस राज्य के राज्यपाल के [27]* अनुमोदन की अपेक्षा होगी ।**

(3) उच्च न्यायालय के प्रशासनिक व्यय, जिनके अंतर्गत उस न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों को या उनके संबंध में संदेय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, राज्य की संचित निधि पर भारित होंगे और उस न्यायालय द्वारा ली गई फीसें और अन्य धनराशियां उस निधि का भाग होंगी ।

अनुच्छेद 229 का उद्देश्य — इसका उद्देश्य उच्च न्यायालय की स्वाधीनता सुनिश्चित करना है । लोकतंत्र के सफल कार्यकरण के लिए यह आवश्यक है । उच्च न्यायालय के कर्मचारिवृंद पर उस न्यायालय को पूरा नियंत्रण दिया गया है । यह नियंत्रण इस अनुच्छेद द्वारा अधिरोपित मर्यादाओं के अधीन है और सरकार का उसमें हस्तक्षेप नहीं हो सकता ।[28]

खंड (1) : 'नियुक्तियां' — नियुक्त करने की शक्ति के अधीन निलंबित या पदच्युत करने की शक्ति भी है ।[29] रजिस्ट्रार का पद मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा ही भरा जा सकता है ।[30]

परंतुक — मुख्य न्यायमूर्ति को उच्च न्यायालय के अधिकारियों और सेवकों की नियुक्ति की जो शक्ति दी गई है उस पर यह परंतुक कुछ बंधन लगाता है । सामान्यतया इन नियुक्तियों के विषय में उसे लोक सेवा आयोग से परामर्श करना आवश्यक नहीं है किंतु यदि राज्यपाल नियम बनाकर कुछ मामलों में ऐसा विनिर्दिष्ट करता है तो मुख्य न्यायमूर्ति को उन विनिर्दिष्ट पदों पर नियुक्त करने में लोकसेवक से परामर्श करना होगा ।

मुख्य न्यायमूर्ति की पदच्युत करने की शक्ति पर इस प्रकार का कोई बंधन नहीं है ।[29] उच्च न्यायालय के कर्मचारिवृंद को अनुच्छेद 320(3)(ग) लागू नहीं होता । किंतु अनुच्छेद 311 लागू होता है ।

खंड (2) : वेतन, सेवा की शर्तें, आदि — इस खंड के अधीन बनाए गए नियमों के अधीन रहते हुए उच्च न्यायालय के कर्मचारियों के वेतन आदि नियत करने के लिए और उन्हें नियंत्रित करने के लिए मुख्य न्यायमूर्ति ही एकमात्र प्राधिकारी है ।

खंड (2) के परंतुक के अधीन राज्यपाल का अनुमोदन केवल ऐसे नियमों के लिए ही आवश्यक है जो वेतन, भत्ते, छुट्टी या पेंशन से संबंधित हैं । सेवा की शर्तों से या नियुक्ति से संबंधित अन्य सभी नियमों के लिए राज्यपाल के अनुमोदन की अपेक्षा नहीं है ।[28] राज्यपाल

27. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "जिसमें उच्च न्यायालय का मुख्य स्थान है" शब्दों का लोप किया गया ।
28. *गुरुमूर्ति बनाम महालेखाकार*, ए. 1971 एस.सी. 1850 (*1854-55*) ।
29. *प्रद्योत बनाम मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एस.सी.आर. (*1331*) ।
30. *उड़ीसा राज्य बनाम मिश्रा*, ए. 1968 एस.सी. 647 ।

पदों के सृजन के लिए वित्तीय मंजूरी देते समय मुख्य न्यायमूर्ति के चयन करने और नियुक्ति करने की शक्ति पर निर्बन्धन नहीं लगा सकते हैं ।[28]

मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा सेवा की शर्तों के बारे में बनाए गए नियम विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहेंगे । यह खंड (2) के आरंभिक शब्दों से स्पष्ट है ।[28] राज्यपाल द्वारा अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियम उच्च न्यायालय के कर्मचारियों को लागू नहीं होंगे ।

मुख्य न्यायमूर्ति पर रिट अधिकारिता — जब मुख्य न्यायमूर्ति प्रशासनिक रूप से कार्य करता है, जैसे अनुच्छेद 229 के अधीन, तो वह उच्च न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश की अनुच्छेद 226 के अधीन रिट अधिकारिता के अधीन आ जाता है ।[29]

उच्च न्यायालयों की अधिकारिता का संघ राज्यक्षेत्रों पर विस्तार ।

[31]230. *(1) संसद्, विधि द्वारा, किसी संघ राज्यक्षेत्र पर किसी उच्च न्यायालय की अधिकारिता का विस्तार कर सकेगी या किसी संघ राज्यक्षेत्र से किसी उच्च न्यायालय की अधिकारिता का अपवर्जन कर सकेगी ।*

(2) जहां किसी राज्य का उच्च न्यायालय किसी संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करता है वहां —

(क) इस संविधान की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह उस राज्य के विधान मंडल को उस अधिकारिता में वृद्धि, उसका निर्बन्धन या उत्सादन करने के लिए सशक्त करती है; और

(ख) उस राज्यक्षेत्र में अधीनस्थ न्यायालयों के लिए किन्हीं नियमों, प्ररूपों या सारणियों के संबंध में, अनुच्छेद 227 में राज्यपाल के प्रति निर्देश का, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह राष्ट्रपति के प्रति निर्देश है ।

दो या अधिक राज्यों के लिए एक ही उच्च न्यायालय की स्थापना ।

[31]231. *(1) इस अध्याय के पूर्ववर्ती उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, संसद्, विधि द्वारा, दो या अधिक राज्यों के लिए अथवा दो या अधिक राज्यों और किसी संघ राज्यक्षेत्र के लिए एक ही उच्च न्यायालय स्थापित कर सकेगी ।*

(2) किसी ऐसे उच्च न्यायालय के संबंध में, —

(क) अनुच्छेद 217 में उस राज्य के राज्यपाल के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह उन सभी राज्यों के राज्यपालों के प्रति निर्देश है जिनके संबंध में वह उच्च न्यायालय अधिकारिता का प्रयोग करता है,

(ख) अधीनस्थ न्यायालयों के लिए किन्हीं नियमों, प्ररूपों या सारणियों के संबंध में, अनुच्छेद 227 में राज्यपाल के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह उस राज्य के राज्यपाल के प्रति निर्देश है जिसमें वे अधीनस्थ न्यायालय स्थित हैं; और

(ग) अनुच्छेद 219 और अनुच्छेद 229 में राज्य के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे उस राज्य के प्रति निर्देश हैं, जिसमें उस उच्च न्यायालय का मुख्य स्थान है :

परंतु यदि ऐसा मुख्य स्थान किसी संघ राज्यक्षेत्र में है तो अनुच्छेद 219 और अनुच्छेद 229 में राज्य के राज्यपाल, लोक सेवा आयोग, विधान मंडल और संचित निधि के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे क्रमशः राष्ट्रपति, संघ लोक सेवा आयोग, संसद् और भारत की संचित निधि के प्रति निर्देश हैं ।

232. *संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा लोप किया गया ।*

31. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

अध्याय 6 — अधीनस्थ न्यायालय

जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति ।

233. (1) किसी राज्य में जिला न्यायाधीश नियुक्त होने वाले व्यक्तियों की नियुक्ति तथा जिला न्यायाधीश की पदस्थापना और प्रोन्नति उस राज्य का राज्यपाल ऐसे राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करके करेगा ।

(2) वह व्यक्ति, जो संघ की या राज्य की सेवा में पहले से ही नहीं है, जिला न्यायाधीश नियुक्त होने के लिए केवल तभी पात्र होगा जब वह कम से कम सात वर्ष तक अधिवक्ता या प्लीडर रहा है और उसकी नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय ने सिफारिश की है ।

अनुच्छेद 233-236 का उद्देश्य — इन अनुच्छेदों का उद्देश्य न्यायपालिका को कार्यपालिका से स्वतंत्र करना है और इस प्रकार शक्तियों का पृथक्करण करना है ।[32]

'नियुक्ति' — इस संदर्भ मे इस शब्द से अभिप्रेत है न्यायाधीश के रूप में किसी व्यक्ति को प्रारंभिक नियुक्ति । नियुक्त करने वाला प्राधिकारी है राज्यपाल जो उच्च न्यायालय के परामर्श से कार्य करेगा ।[33] नियुक्ति के पश्चात् जिला न्यायाधीश का पदस्थापन और उसका पश्चात्वर्ती स्थानान्तरण केवल उच्च न्यायालय के हाथों में रहेगा ।[34]

इस संदर्भ में नियुक्ति के अंतर्गत जिला न्यायाधीश के पद पर प्रोन्नति भी है ।[35]

जिला न्यायाधीश या तो सीधे नियुक्त किए जा सकते है या अधीनस्थ पंक्ति से प्रोन्नत किए जा सकते हैं । अनुच्छेद 233 में दोनो के बारे में उपबंध है ।

जिला न्यायाधीश के पद पर या उसमे सम्मिलित पदों पर (अनुच्छेद 236 द्वारा) प्रारंभिक नियुक्ति या प्रारंभिक प्रोन्नति के मामले अनुच्छेद 233 में आते हैं और राज्यपाल में निहित हैं जो उच्च न्यायालय के परामर्श से कार्य करेगा ।[35-36] राज्यपाल उच्च न्यायालय की सिफारिश के अनुसार कार्य के लिए आबद्ध नहीं है ।[37]

(ख) जिला न्यायाधीशों की आगे प्रोन्नति उच्च न्यायालय के नियंत्रण में है ।

उच्चतम न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालयों की नियुक्ति और सेवा की शर्तों के विषय में एक निर्णय में निदेश दिए हैं किंतु अनुच्छेद 312 को देखते हुए यह संदेहास्पद है कि न्यायालय को ऐसे निदेश देने की शक्ति है ।[37क]

उच्च न्यायालय से परामर्श — उच्च न्यायालय से परामर्श थोथी औपचारिकता नहीं है ।[33] राज्यपाल, उच्च न्यायालय का मत प्राप्त किए बिना किसी व्यक्ति को नियुक्त नहीं कर सकता चाहे वह उच्च न्यायालय द्वारा नामनिर्दिष्ट व्यक्ति को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हो । उच्चतम न्यायालय ने यह अधिकथित किया है[32] कि —

(क) नियुक्ति के समय उच्च न्यायालय से परामर्श करना आज्ञापक है ।

(ख) यह परामर्श वास्तविक और प्रभावी होना चाहिए ।[38-39]

सामान्यतया, राज्यपाल उन्हीं नामों में से जिला न्यायाधीश की नियुक्ति कर सकता है जिनकी उच्च न्यायालय ने सिफारिश की है । यदि किसी कारणवश राज्य सरकार उच्च न्यायालय की सिफारिश स्वीकार करने में कठिनाई अनुभव करती है तो उसे अपना दृष्टिकोण उच्च न्यायालय को बताकर उससे पुनर्विचार

32. *चंद्रमोहन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1966 एस.सी. 1987 ।
33. *चंद्रमौलेश्वर* बनाम *पटना उच्च न्यायालय*, ए 1970 एस.सी 370 (*375*) ।
34. *असम राज्य* बनाम *रंगा मोहम्मद*, ए. 1967 एस.सी 903 ।
35. *असम राज्य* बनाम *कुशेश्वर*, (1970) यू.जे.एस.सी 140 (*144*) ।
36. *उच्च न्यायालय* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए 1975 एस.सी. 613 (पैरा 35) ।
37. *जैन* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1977 एस.सी 276 (पैरा 10) ।
37क *आल इंडिया जजेस एसोसिएशन* बनाम *भारत संघ*, जे.टी. (1991) एस.सी. 285 ।
38. *गुप्ता* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1982 एस.सी. 1579 ।
39. *केरल राज्य* बनाम *लक्ष्मीकुट्टि*, (1986) 4 एस.सी.सी 632 (पैरा 24 चच, 35) ।

करने के लिए कहना चाहिए ।[38] वह, उच्च न्यायालय से पुनः परामर्श किए बिना उसके द्वारा भेजे गए नामों को अस्वीकार नहीं कर सकती है । इसी प्रकार उच्च न्यायालय परमादेश निकालकर सरकार को उन व्यक्तियों को नियुक्त करने के लिए विवश नहीं कर सकता है जिनके नाम की सूची उच्च न्यायालय ने भेजी थी ।[39]

(ग) 'उच्च न्यायालय' से इस संदर्भ में अभिप्रेत है सभी न्यायाधीशों सहित पूर्ण न्यायालय । कुछ न्यायाधीशों की चयन समिति उसका स्थान ग्रहण नहीं कर सकती ।

(घ) उच्च न्यायालय से भिन्न किसी निकाय से परामर्श करने से इस अनुच्छेद का उल्लंघन होगा ।

(ङ) उच्च न्यायालय से परामर्श किए बिना की गई नियुक्ति अविधिमान्य होगी ।[32-33] किंतु ऐसी घोषणा से वे निर्णय अविधिमान्य नहीं होंगे जो घोषणा के पूर्व उस जिला न्यायाधीश ने दिए हैं ।[40]

(च) यदि अनुच्छेद 309 के अधीन राज्यपाल द्वारा बनाया गया नियम अनुच्छेद 233 का उल्लंघन करता है तो वह शून्य होगा ।[34]

अंतरण — यह अनुच्छेद राज्यपाल को जिला न्यायाधीशों के बारे में तीन शक्तियां प्रदान करता है, अर्थात् (क) नियुक्ति, (ख) पदस्थापन, और (ग) प्रोन्नति, और इनका प्रयोग उच्च न्यायालय के परामर्श से किया जाएगा ।[34]

राज्यपाल जिला न्यायाधीश को एक स्थान से दूसरे को अंतरित नहीं कर सकता । यह शक्ति अनुच्छेद 235 के अधीन उच्च न्यायालय में निहित है ।[34,36]

उच्च न्यायालय का यह अधिकार न्यायिक सेवा के काडर में सम्मिलित पदों पर अंतरण या पदस्थापन तक ही सीमित है । काडर बाह्य पदों पर नहीं । जैसे, सचिवालय के पद — न्यायिक विभाग का पद या विधि परामर्शी का पद । ये पद सरकार द्वारा उच्च न्यायालय की सहमति से लिए गए अधिकारियों द्वारा भरे जा सकते हैं ।[41] परिणामतः —

(i) किसी व्यक्ति को सचिवालय में या न्यायिक काडर से बाहर किसी अन्य पद पर नियुक्त करने का अधिकार अनन्य रूप से सरकार को है ।[40]

(ii) सरकार किसी भी न्यायिक अधिकारी को ऐसे पद को भरने के लिए उच्च न्यायालय की सहमति से ही ले सकती है । किसी विशेष अधिकारी को अनुमति देते समय उच्च न्यायालय यह कह सकता है कि वह नियत अवधि के लिए ही कार्यपालिक पद धारण करेगा । उच्च न्यायालय ऐसे अधिकारी को जब चाहे तब वापस बुला सकता है ।[40]

(iii) कार्यपालिका ही यह तय करेगी कि कोई विशेष अधिकारी उसकी अपेक्षाओं को पूरा करता है या नहीं और उच्च न्यायालय अपनी ओर से कोई अधिकारी सरकार पर लाद नहीं सकता और यह नहीं कह सकता कि उसे न्याय सचिव या विधि परामर्शी नियुक्त किया ही जाए ।[40]

[42]233क. *किसी न्यायालय का कोई निर्णय, डिक्री या आदेश होते हुए भी, —*

कुछ जिला न्यायाधीशों की नियुक्तियों का और उनके द्वारा दिए गए निर्णयों आदि का विधिमान्यकरण ।

(क) (i) उस व्यक्ति की जो राज्य की न्यायिक सेवा में पहले से ही है या उस व्यक्ति की, जो कम से कम सात वर्ष तक अधिवक्ता या प्लीडर रहा है, उस राज्य में जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति की बाबत, और

(ii) ऐसे व्यक्ति की जिला न्यायाधीश के रूप में पदस्थापना, प्रोन्नति या अंतरण की बाबत,

जो संविधान (बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1966 के प्रारंभ से पहले किसी समय अनुच्छेद 233 या अनुच्छेद 235 के उपबंधों के अनुसार न करके अन्यथा किया गया है, केवल इस तथ्य के कारण कि ऐसी नियुक्ति, पदस्थापना, प्रोन्नति या अंतरण उक्त उपबंधों के अनुसार

---

40 *गोकराजू बनाम आंध्र प्रदेश राज्य,* ए. 1981 एस.सी. 1473 (पैरा 4, 17) ।

41. *उड़ीसा राज्य बनाम सुधांशु,* ए. 1968 एस.सी 647 ।

42. संविधान (बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1966 ने तारीख 22-12-1966 से अनुच्छेद 233क अंतःस्थापित किया था जिससे कि उच्चतम न्यायालय द्वारा अविधिमान्य घोषित नियुक्तियों और अंतरणों को, भूतलक्षी प्रभाव से विधिमान्य बनाया जा सके ।

नहीं किया गया था, यह नहीं समझा जाएगा कि वह अवैध या शून्य है या कभी भी अवैध या शून्य रहा था;

(ख) किसी राज्य में जिला न्यायाधीश के रूप में अनुच्छेद 233 या अनुच्छेद 235 के उपबंधों के अनुसार न करके अन्यथा नियुक्त, पदस्थापित, प्रोन्नत या अंतरित किसी व्यक्ति द्वारा या उसके समक्ष संविधान (बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1966 के प्रारंभ से पहले प्रयुक्त अधिकारिता का, पारित किए गए या दिए गए निर्णय, डिक्री, दंडादेश या आदेश की और किए गए अन्य कार्य या कार्यवाही की बाबत, केवल उस तथ्य के कारण कि ऐसी नियुक्ति, पदस्थापना, प्रोन्नति या अंतरण उक्त उपबंधों के अनुसार नहीं किया गया था, यह नहीं समझा जाएगा कि वह अवैध या अविधिमान्य है या कभी भी अवैध या अविधिमान्य रहा था ।

न्यायिक सेवा में जिला न्यायाधीशों से भिन्न व्यक्तियों की भर्ती ।

234. **जिला न्यायाधीशों से भिन्न व्यक्तियों की किसी राज्य की न्यायिक सेवा में नियुक्ति उस राज्य के राज्यपाल द्वारा, राज्य लोक सेवा आयोग से और ऐसे राज्य के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करने वाले उच्च न्यायालय से परामर्श करने के पश्चात्, और राज्यपाल द्वारा इस निमित्त बनाए गए नियमों के अनुसार की जाएगी ।**

अनुच्छेद 234 : **न्यायिक सेवा में भर्ती —** अनुच्छेद 233 जिला न्यायाधीशों की भर्ती से संबंधित है । अनुच्छेद 234 जिला न्यायाधीशों से भिन्न राज्य की न्यायिक सेवा के सदस्यों की भर्ती के बारे में है । यह अभिनिर्धारित किया गया है[43] कि अनुच्छेद 234 में निर्दिष्ट 'परामर्श', राज्यपाल द्वारा भर्ती के नियम बनाने के संबंध में है, नियुक्ति के विषय में नहीं । अनुच्छेद 320(1) न्यायिक सेवा में भर्ती को लागू नहीं होता है ।[44] उसके लिए अनुच्छेद 234 में विशेष उपबंध किए गए है । अनुच्छेद 234 के अधीन बनाए गए नियमों में यह उपबंध किया जा सकता है कि राज्यपाल लोक सेवा आयोग से भर्ती के विभिन्न प्रक्रमों पर परामर्श करेगा । किंतु आयोग नियमों का उल्लंघन नहीं कर सकता ।[44क]

अनुच्छेद 234 के अधीन नियुक्ति की शक्ति में जिला न्यायाधीश से भिन्न अन्य न्यायिक अधिकारियों को पुष्ट या प्रोन्नत करने की शक्ति नहीं है । यह शक्ति अनुच्छेद 235 ने अनन्य रूप से उच्च न्यायालय में निहित की है । यदि कोई नियम यह कहता है कि यह शक्ति राज्यपाल में होगी जो उच्च न्यायालय के परामर्श से उसका प्रयोग करेगा तो वह नियम शून्य होगा ।[45]

अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण ।

235. **जिला न्यायालयों और उनके अधीनस्थ न्यायालयों का नियंत्रण जिसके अंतर्गत राज्य की न्यायिक सेवा के व्यक्तियों और जिला न्यायाधीश के पद से अवर किसी पद को धारण करने वाले व्यक्तियों की पदस्थापना, प्रोन्नति और उनको छुट्टी देना है, उच्च न्यायालय में निहित होगा, किंतु इस अनुच्छेद की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह ऐसे किसी व्यक्ति से उसके अपील के अधिकार को छीनती है जो उसकी सेवा की शर्तों का विनियमन करने वाली विधि के अधीन उसे है या उच्च न्यायालय को इस बात के लिए प्राधिकृत करती है कि वह उससे ऐसी विधि के अधीन विहित उसकी सेवा की शर्तों के अनुसार व्यवहार न करके अन्यथा व्यवहार करे ।**

अनुच्छेद 235 : **अधीनस्थ न्यायपालिका का नियंत्रण —** जिला न्यायाधीशों का पदस्थापन और प्रोन्नति, उच्च न्यायालय के परामर्श से राज्यपाल करता है । जिला न्यायाधीश से भिन्न

43 *देवश्याम बनाम मद्रास राज्य*, ए. 1958 मद्रास 53 (*61*) ।
44. *प्रद्योत बनाम मुख्य न्यायमूर्ति*, ए 1956 एस.सी. 285 ।
44क. *दुर्गाचरण बनाम उड़ीसा राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 2267 ।
45. *असम राज्य बनाम सेन*, ए. 1972 एस.सी. 1028 (पैरा 15) ।

राज्य न्यायिक सेवा अधिकारियों के पदस्थापन, प्रोन्नति और छुट्टी के मामले अनन्य रूप से उच्च न्यायालय के हाथ में होंगे । हां, सेवा की शर्तों को विनियमित करने वाली विधि के *अनुसार अपील का अधिकार होगा ।*[46]

दूसरे शब्दों में, यह अनुच्छेद उच्च न्यायालय को नियंत्रण का पूरा अधिकार देता है । बस, जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, प्रारंभिक पदस्थापन और प्रोन्नति राज्यपाल की शक्ति में है । सुसंगत सेवा नियमों के अनुसार नियुक्ति की शक्ति के अंतर्गत पदच्युति, पद से हटाने और पंक्ति में घटाने के प्रमुख दंड देने की शक्ति भी है ।[47-48]

इस शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय जांच कर सकता है, और पदच्युति या सेवा से हटाने के दंड से भिन्न दंड अधिरोपित कर सकता है । यह सेवा की शर्तों के और अपील के अधिकार के अधीन होगा (यदि सेवा के नियमों में है) । अनुच्छेद 311(2) के अधीन कारण बताने का अवसर दिया जाएगा । राज्यपाल अनुच्छेद 311(2) के परंतुक (ख) या (ग) के अधीन अवसर देने से मना कर सकता है । मना करने की इस शक्ति का प्रयोग उच्च न्यायालय नहीं कर सकता ।[49]

अनुच्छेद 235 मे 'नियंत्रण' शब्द का उपयोग व्यापक अर्थ में हुआ है ।[50] इसके अंतर्गत निम्नलिखित हैं —

(क) अधीनस्थ न्यायालयों के कार्यकरण का साधारण अधीक्षण ।[47]

(ख) पीठासीन न्यायाधीशों का अनुशासनिक नियंत्रण जिसके अंतर्गत उनके आचरण की जांच करने की और पदच्युति,[49] पद से हटाने या पंक्ति में घटाने का दंड अधिरोपित करने से भिन्न दंड अधिरोपित करने की शक्तियां है तथा पदच्युति, पद से हटाने और पंक्ति में घटाने का दंड अधिरोपित करने की सिफारिश करने की शक्ति है ।[47]

(ग) जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्त या प्रोन्नत किए गए व्यक्तियों को पुष्ट करना ।[49-51]

(घ) सीधी भर्ती या प्रोन्नति द्वारा जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्ति के पश्चात, आगे प्रोन्नति (जैसे चयन ग्रेड) ।[49, 52]

(ङ) न्यायाधीशों को छुट्टी देना ।

(च) न्यायिक अधिकारियों की अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश देना - जो पदच्युति, पद से हटाने या पंक्ति में घटाने की कोटि में नही आना ।[51]

(छ) जिला न्यायाधीश से कनिष्ठ न्यायिक अधिकारियो के सबंध मे उच्च न्यायालय की शक्ति पर अनुच्छेद 311 के सिवाय कोई बंधन नहीं है ।[53]

प्रशासनिक नियंत्रण 'उच्च न्यायालय' को सौंपा गया है । उसके किसी न्यायाधीश या किन्हीं न्यायाधीशों को नहीं ।[54] किंतु उच्च न्यायालय, पूरे न्यायालय की ओर से कार्य करने के लिए समिति की स्थापना कर सकता है ।[55]

नियंत्रण उच्च न्यायालय मे निहित है । यदि राज्य सरकार, न्यायालय की सिफारिश के अनुसार कार्य करती है तो कार्यवाही पर इस आधार पर हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता कि उसने आंख मूंदकर उच्च न्यायालय की सिफारिश मान ली है ।[56]

---

46 *उच्च न्यायालय* बनाम *अमल कुमार*, ए 1962 एस.सी 1704 ।

47. *बरदकांत* बनाम *उच्च न्यायालय*, ए 1976 एस.सी 1899 (पैरा 21) ।

48. *उच्च न्यायालय* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए 1975 एस.सी. 613 (सी.बी) ।

49 *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *नृपेन्द्र*, ए 1966 एस.सी. 447; *नागमोती* बनाम *मैसूर राज्य*, (1969) 3 एस.सी.सी 325 (*330*) ।

50. *उच्च न्यायालय* बनाम *कृष्णमूर्ति*, (1979) 2 एस.सी.सी 34 ।

51 *शमशेर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1974 एस.सी 2192 ।

52 *असम राज्य* बनाम *कुशेश्वर*, ए 1970 एस.सी 1616 ।

53. *हरियाणा राज्य* बनाम *इंदर*, ए 1976 एस.सी. 1841 (पैरा 12) ।

54. *नागमोती* बनाम *मैसूर राज्य*, (1969) 3 एस.सी.सी 325 ।

55 *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *बटुक*, (1978) 2 एस.सी.सी. 102 (पैरा 16-18) ।

56. *उच्च न्यायालय* बनाम *अमल कुमार*, ए. 1962 एस.सी. 1704 ।

यदि राज्य सरकार, उच्च न्यायालय की सिफारिश के विरुद्ध किसी न्यायिक अधिकारी को अनिवार्यतः सेवानिवृत्त कर देती है तो सरकार का आदेश अविधिमान्य होगा और विखंडित किया जा सकेगा ।[53]

न्यायिक सेवा के किसी सदस्य से संबंधित उच्च न्यायालय की अनुशासनिक अधिकारिता पर इस बात का कोई प्रभाव नहीं पड़ता कि उसे किस प्राधिकारी ने नियुक्त किया है ।[57]

उच्च न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 235 के अधीन शक्ति के प्रयोग को न्यायालय में तभी प्रश्नगत किया जा सकता है जब संविधान के किसी अन्य उपबंध का उल्लंघन हुआ हो ।[58]

अनुच्छेद 235 के अधीन उच्च न्यायालय के नियंत्रण में अप्रत्यक्ष हस्तक्षेप — अनुच्छेद 235 का उद्देश्य न्यायिक पदों को कार्यपालिका के नियंत्रण में अलग रखकर न्यायिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करना है ।[50-51]

इसके अनुसार मुंसिफ को प्रोन्नत करके अधीनस्थ न्यायाधीश बनाने की शक्ति उच्च न्यायालय में है । यदि सरकार अधीनस्थ न्यायाधीश के पद को 'सहायक जिला न्यायाधीश' के पद के रूप में अभिहित करती है तो मुंसिफों के उच्चतर पद पर प्रोन्नति का काम उच्च न्यायालय के नियंत्रण के बाहर चला जाएगा और अनुच्छेद 233 के अधीन कार्यपालिका के नियंत्रण में पहुंच जाएगा ।[51]

उच्च न्यायालय क्या नहीं कर सकता : अनुच्छेद 233-235 का जो निर्वचन हुआ है उससे यह प्रकट होता है कि उच्च न्यायालय —

(i) किसी न्यायिक अधिकारी की सेवाएं समाप्त नहीं कर सकता या उसे पंक्ति में घटाने का दंड नहीं दे सकता ।[48] यह शक्ति नियुक्त करने वाले प्राधिकारी के रूप में राज्यपाल को दी गई है [अनुच्छेद 311(1)] । अनुच्छेद 235 में प्रयुक्त 'नियंत्रण' शब्द के कारण उच्च न्यायालय जांच कर सकता है और ऐसे अधिकारियों के विरुद्ध प्रशासनिक कार्यवाही कर सकता है[48] और ऐसे दंड अधिरोपित करने की सिफारिश कर सकता है ।[48]

(ii) उच्च न्यायालय अनुच्छेद 235 द्वारा प्रदत्त अपना अधिकार छोड़कर सरकार या उसके द्वारा नामनिर्दिष्ट व्यक्ति को न्यायिक अधिकारी के आचरण की जांच करने की अनुमति नहीं दे सकता ।[59]

(iii) न्यायिक अधिकारियों की ज्येष्ठता के नियम नहीं बना सकता । यह कृत्य राज्यपाल में निहित है ।[60]

(iv) न्यायिक अधिकारियों से उनकी सेवा की शर्तों से संबंधित नियमों के अनुसार ही व्यवहार कर सकता है उनसे हटकर जैसे अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियमों के अधीन प्रदत्त अपील के अधिकार से वंचित नहीं कर सकता ।[60]

सरकार क्या नहीं कर सकती — राज्य सरकार —

(i) उच्च न्यायालय की सिफारिश के बिना या उसके विरुद्ध किसी न्यायिक अधिकारी को अनिवार्यतः सेवानिवृत्त नहीं कर सकता क्योंकि सेवानिवृत्ति, पदच्युति, पद से हटाने या पंक्ति में अवनत करने की कोटि में नहीं आती[61] यद्यपि राज्य सरकार को सेवानिवृत्ति की आयु तय करने का अधिकार है ।[61]

उच्च न्यायालय की सिफारिश प्राप्त होने के पूर्व किसी न्यायिक अधिकारी को समयपूर्व सेवानिवृत्त करने का राज्यपाल का आदेश, शून्य होगा ।[62]

57. *गुजरात राज्य* बनाम *रमेश*, ए. 1977 एस.सी. 1619 (पैरा 5, 8) ।
58. *असम राज्य* बनाम *रंगा मोहम्मद*, ए. 1967 एस.सी. 903 ।
59. *शमशेर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2192 (पैरा 78) ।
60. *यादव* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 561 (पैरा 40-41) ।
61. *हरियाणा राज्य* बनाम *इंदर*, ए. 1976 एस.सी. 1841 (पैरा 11, 16, 49) ।
62. *तेजपाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1985) 3 एस.सी.सी. 604 (पैरा 13); *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *बद्रुक*, (1978) 2 एस.सी.सी. 102 ।

(ii) परिवीक्षाधीन जिला न्यायाधीश को, उच्च न्यायालय की सिफारिश या सहमति के बिना, उसके अधिष्ठायी पद पर वापस नहीं भेज सकता ।[61]

(iii) उच्च न्यायालय के परामर्श के बिना किसी व्यक्ति को जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्त या प्रोन्नत नहीं कर सकता या उसका आरंभिक पदस्थापन नहीं कर सकता ।[63]

(iv) प्रारंभिक पदस्थापन के पश्चात् अर्थात् जिला न्यायाधीश के काडर में पदस्थापन के पश्चात् किसी न्यायाधीश को एक स्थान से दूसरे स्थान पर अंतरित नहीं कर सकता ।[64]

(v) परिवीक्षाधीन जिला न्यायाधीश की पुष्टि नहीं कर सकता क्योंकि अनुच्छेद 233 में प्रयुक्त 'नियुक्ति' के अंतर्गत 'पुष्टि' नहीं है । उक्त अनुच्छेद में केवल जिला न्यायाधीश के रूप में प्रथम नियुक्ति या प्रोन्नति ही आती है ।[65]

निर्वचन ।

236. **इस अध्याय में, —**

(क) "जिला न्यायाधीश" पद के अंतर्गत नगर सिविल न्यायालय का न्यायाधीश, अपर जिला न्यायाधीश, संयुक्त जिला न्यायाधीश, सहायक जिला न्यायाधीश, लघुवाद न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश, मुख्य प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट, अपर मुख्य प्रेसिडेंसी मजिस्ट्रेट, सेशन न्यायाधीश, अपर सेशन न्यायाधीश और सहायक सेशन न्यायाधीश है;

(ख) "न्यायिक सेवा" पद से ऐसी सेवा अभिप्रेत है जो अनन्यतः ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनी है, जिनके द्वारा जिला न्यायाधीश के पद का और जिला न्यायाधीश के पद से अवर अन्य सिविल न्यायिक पदों का भरा जाना आशयित है ।

कुछ वर्ग या वर्गों के मजिस्ट्रेटों पर इस अध्याय के उपबंधों का लागू होना ।

237. **राज्यपाल, लोक अधिसूचना द्वारा, निदेश दे सकेगा कि इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंध और उनके अधीन बनाए गए नियम ऐसी तारीख से, जो वह इस निमित्त नियत करे, ऐसे अपवादों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए जो ऐसी अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं, राज्य में किसी वर्ग या वर्गों के मजिस्ट्रेटों के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे राज्य की न्यायिक सेवा में नियुक्त व्यक्तियों के संबंध में लागू होते हैं ।**

63. *चंद्रमौलेश्वर बनाम पटना उच्च न्यायालय*, ए 1970 एस.सी 370 (*375*) ।

64. *असम राज्य बनाम रंगा मोहम्मद*, ए. 1967 एस.सी. 903; *उच्च न्यायालय बनाम हरियाणा राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 612 (पैरा 34-35) ।

65. *उच्च न्यायालय बनाम हरियाणा राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 613 (पैरा 42, 44, 49) ।

भाग 7

पहली अनुसूची के भाग ख के राज्य

पहली अनुसूची के भाग ख के राज्य ।

238. *संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 29 और अनुसूची द्वारा निरसित ।*

भाग 8

संघ राज्यक्षेत्र[1]

[2]239. *(1) संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा यथा अन्यथा उपबंधित के सिवाय, प्रत्येक संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासन राष्ट्रपति द्वारा किया जाएगा, और वह अपने द्वारा ऐसे पदाभिधान सहित, जो वह विनिर्दिष्ट करे, नियुक्त किए गए प्रशासक के माध्यम से उस मात्रा तक कार्य करेगा जितनी वह ठीक समझता है ।*

संघ राज्यक्षेत्रों का प्रशासन ।

(2) भाग 6 में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति किसी राज्य के राज्यपाल को किसी निकटवर्ती संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासक नियुक्त कर सकेगा और जहां कोई राज्यपाल इस प्रकार नियुक्त किया जाता है वहां वह ऐसे प्रशासक के रूप में अपने कृत्यों का प्रयोग अपनी मंत्रिपरिषद् से स्वतंत्र रूप से करेगा ।

संघ राज्यक्षेत्र — संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 ने पहली अनुसूची के भाग ग राज्य और भाग घ के राज्यक्षेत्रों के स्थान पर 'संघ राज्यक्षेत्र' रख दिया है ।

पश्चात्वर्ती संशोधनों द्वारा संघ राज्यक्षेत्रों की सूची में वृद्धि हुई है । इनमें से कुछ को राज्यों के वर्ग में डाल दिया गया है । पहली नवंबर, 1990 को संघ राज्यक्षेत्रों की सूची इस प्रकार है :

1. दिल्ली, 2. अंदमान और निकोबार द्वीप, 3. लक्षद्वीप, 4. दादरा और नागर हवेली, 5. दमण और दीव, 6. पांडिचेरी, 7. चंडीगढ़ ।

खंड (1) : प्रशासक — प्रशासक की प्रास्थिति राज्यपाल या राज्य सरकार के समान नहीं है ।[3]

[4]239क. *(1) संसद्, विधि द्वारा [5]*** [5क][पांडिचेरी, [5ख]*** संघ राज्यक्षेत्र के लिए,] —*

कुछ संघ राज्यक्षेत्रों के लिए स्थानीय विधान मंडलों या मंत्रि-परिषदों का या दोनों का सृजन ।

(क) उस संघ राज्यक्षेत्र के विधान मंडल के रूप में कार्य करने के लिए निर्वाचित या भागतः नामनिर्देशित और भागतः निर्वाचित निकाय का, या

(ख) मंत्रिपरिषद् का,

या दोनों का सृजन कर सकेगी, जिनमें से प्रत्येक का गठन, शक्तियां और कृत्य वे होंगे जो उस विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं ।

(2) खंड (1) में निर्दिष्ट विधि को, अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान

---

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा 'शीर्षक' प्रतिस्थापित ।
2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा तारीख 1-11-1956 से प्रतिस्थापित ।
3. *गोवा एसोसिएशन बनाम जनरल सुपरिंटेंडेंस कंपनी*, (1985) 1 एस.सी.सी. 206 (पैरा 14, 17) ।
4. संविधान (चौदहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा अनुच्छेद 239क अंतःस्थापित किया गया था ।
5. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 21-1-1972 से कुछ शब्दों का लोप किया गया ।

5क. संविधान (सत्ताईसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा प्रतिस्थापित ।

5ख. मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा तारीख 20-2-1987 से "मिजोरम" शब्द का लोप किया गया ।

का संशोधन इस बात के होते हुए भी नहीं समझा जाएगा कि उसमें कोई ऐसा उपबंध अंतर्विष्ट है जो इस संविधान का संशोधन करता है या संशोधन करने का प्रभाव रखता है ।

संघ राज्यक्षेत्र की बाबत विधायी शक्ति — अनुच्छेद 246(4) के अधीन संसद् राज्यक्षेत्रों के संबंध में उन विषयों की बाबत विधि बनाने के लिए सक्षम है जो राज्य की सूची में आते हैं । उच्चतम न्यायालय के अनुसार जब संसद् इस शक्ति का प्रयोग करती है, तब राज्य सूची की कोई प्रविष्टि उस पर कोई बंधन नहीं लगा सकती ।[6]

संघ राज्यक्षेत्र के लिए विधान मंडल बनाए जाने के पश्चात् भी संसद् को उस क्षेत्र के संबंध में सूची 2 में सम्मिलित किसी विषय की बाबत विधान बनाने की सर्वोपरि शक्ति होगी । दूसरे शब्दों में संघ राज्यक्षेत्र के विधान मंडल को सूची 2 की बाबत उस प्रकार अनन्य शक्ति नहीं है जैसी राज्यों के विधान मंडलों को है [तुलना कीजिए अनुच्छेद 246(3), आगे] ।

दिल्ली के संबंध में विशेष उपबंध ।

[6क]*239कक (1) संविधान (उनहत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1991 के प्रारंभ से, दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र को दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र (जिसे इस भाग में इसके पश्चात् राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र कहा गया है) कहा जाएगा और अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त उसके प्रशासक का पदाभिधान उपराज्यपाल होगा ।*

(2) (क) राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र के लिए एक विधान सभा होगी और ऐसी विधान सभा में स्थान राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र में प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने हुए सदस्यों से भरे जाएंगे ।

(ख) विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या, अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या, राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र के प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में विभाजन (जिसके अंतर्गत ऐसे विभाजन का आधार है) तथा विधान सभा के कार्यकरण से संबंधित सभी अन्य विषयों का विनियमन, संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा, किया जाएगा ।

(ग) अनुच्छेद 324 से अनुच्छेद 327 और अनुच्छेद 329 के उपबंध राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र की विधान सभा और उसके सदस्यों के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे किसी राज्य, किसी राज्य की विधान सभा और उसके सदस्यों के संबंध में लागू होते हैं तथा अनुच्छेद 326 और अनुच्छेद 329 में "समुचित विधान मंडल" के प्रति निर्देश के बारे में यह समझा जाएगा कि वह संसद् के प्रति निर्देश है ।

(3) (क) इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, विधान सभा को राज्य सूची की प्रविष्टि 1, प्रविष्टि 2 और प्रविष्टि 18 से तथा उस सूची की प्रविष्टि 64, प्रविष्टि 65 और प्रविष्टि 66 से, जहां तक उनका संबंध उक्त प्रविष्टि 1, प्रविष्टि 2 और प्रविष्टि 18 से है, संबंधित विषयों से भिन्न राज्य सूची में या समवर्ती सूची में प्रगणित किसी भी विषय के संबंध में, जहां तक ऐसा कोई विषय संघ राज्यक्षेत्रों को लागू है, सम्पूर्ण राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए विधि बनाने की शक्ति होगी ।

(ख) उपखंड (क) की किसी बात से संघ राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए किसी भी विषय के संबंध में इस संविधान के अधीन विधि बनाने की संसद् की शक्ति का अल्पीकरण नहीं होगा ।

(ग) यदि विधान सभा द्वारा किसी विषय के संबंध में बनाई गई विधि का कोई

6. *मिठ्ठन लाल बनाम दिल्ली राज्य*, ए. 1958 एससी 682 (685) ।

6क. संविधान (उनहत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1991 द्वारा तारीख 1-2-1992 से अनुच्छेद 239कक और 239कख अंतःस्थापित किए गए ।

उपबंध, संसद् द्वारा उस विषय के संबंध में बनाई गई विधि के, चाहे वह विधान सभा द्वारा बनाई गई विधि से पहले या उसके बाद में पारित की गई हो, या किसी पूर्वतर विधि के, जो विधान सभा द्वारा बनाई गई विधि से भिन्न है, किसी उपबंध के विरुद्ध है तो, दोनों दशाओं में, यथास्थिति, संसद् द्वारा बनाई गई विधि, या ऐसी पूर्वतर विधि, अभिभावी होगी और विधान सभा द्वारा बनाई गई विधि उस विरोध की मात्रा तक शून्य होगी :

परंतु यदि विधान सभा द्वारा बनाई गई किसी ऐसी विधि को राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखा गया है और उस पर उसकी अनुमति मिल गई है तो ऐसी विधि राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र में अभिभावी होगी :

परंतु यह और कि इस उपखंड की कोई बात संसद् को उसी विषय के संबंध में कोई विधि, जिसके अन्तर्गत ऐसी विधि है जो विधान सभा द्वारा इस प्रकार बनाई गई विधि का परिवर्धन, संशोधन, परिवर्तन या निरसन करती है, किसी भी समय अधिनियमित करने से निवारित नहीं करेगी ।

(4) जिन बातों में किसी विधि द्वारा या उसके अधीन उपराज्यपाल से यह अपेक्षित है कि वह अपने विवेकानुसार कार्य करे उन बातों को छोड़कर, उप-राज्यपाल को, उन विषयों के संबंध में जिनकी बाबत विधान सभा को विधि बनाने की शक्ति है, अपने कृत्यों का प्रयोग करने में सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रि-परिषद् होगी जो विधान सभा की कुल सदस्य संख्या के दस प्रतिशत से अनधिक सदस्यों से मिलकर बनेगी, जिसका प्रधान, मुख्यमंत्री होगा :

परंतु उप-राज्यपाल और उसके मंत्रियों के बीच किसी विषय पर मतभेद की दशा में, उप-राज्यपाल उसे राष्ट्रपति को विनिश्चय के लिए निर्देशित करेगा और राष्ट्रपति द्वारा उस पर किए गए विनिश्चय के अनुसार कार्य करेगा तथा ऐसा विनिश्चय होने तक उप-राज्यपाल किसी ऐसे मामले में, जहां वह विषय, उसकी राय में, इतना आवश्यक है जिसके कारण तुरन्त कार्रवाई करना उसके लिए आवश्यक है वहां, उस विषय में ऐसी कार्रवाई करने या ऐसा निदेश देने के लिए, जो वह आवश्यक समझे, सक्षम होगा ।

(5) मुख्यमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करेगा और अन्य मंत्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति, मुख्यमंत्री की सलाह पर करेगा तथा मंत्री, राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत अपने पद धारण करेंगे ।

(6) मंत्रि-परिषद् विधान सभा के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होगी ।

(7) (क) संसद्, पूर्वगामी खंडों को प्रभावी करने के लिए, या उनमें अंतर्विष्ट उपबंधों की अनुपूर्ति के लिए और उनके आनुषंगिक या पारिणामिक सभी विषयों के लिए, विधि द्वारा, उपबंध कर सकेगी ।

[6ख]*(ख) उपखंड (क) में निर्दिष्ट विधि को, अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन इस बात के होते हुए भी नहीं समझा जाएगा कि उसमें कोई ऐसा उपबंध अन्तर्विष्ट है जो इस संविधान का संशोधन करता है या संशोधन करने का प्रभाव रखता है ।*

(8) अनुच्छेद 239ख के उपबंध, जहां तक हो सके, राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, उप-राज्यपाल और विधान सभा के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे पांडिचेरी संघ राज्यक्षेत्र, प्रशासक और उसके विधान मंडल के संबंध में लागू होते हैं; और उस अनुच्छेद में "अनुच्छेद 239क के खंड (1)" के प्रति निर्देश के बारे में यह समझा जाएगा कि वह, यथास्थिति, इस अनुच्छेद या अनुच्छेद 239कख के प्रति निर्देश है ।

6ख. संविधान (सत्तरवां संशोधन) अधिनियम, 1992 द्वारा तारीख 21-12-1991 से अंतःस्थापित ।

सांविधानिक तंत्र के विफल हो जाने की दशा में उपबंध ।

239कख. यदि राष्ट्रपति का, उप-राज्यपाल से प्रतिवेदन मिलने पर या अन्यथा, यह समाधान हो जाता है कि —

(क) ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र का प्रशासन अनुच्छेद 239कक या उस अनुच्छेद के अनुसरण में बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता है; या

(ख) राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र के उचित प्रशासन के लिए ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है,

तो राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, अनुच्छेद 239कक के किसी उपबंध के अथवा उस अनुच्छेद के अनुसरण में बनाई गई किसी विधि के सभी या किन्हीं उपबंधों के प्रवर्तन को, ऐसी अवधि के लिए और ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट की जाएं, निलंबित कर सकेगा तथा ऐसे आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध कर सकेगा जो अनुच्छेद 239 और अनुच्छेद 239कक के उपबंधों के अनुसार राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र के प्रशासन के लिए उसे आवश्यक या समीचीन प्रतीत हों ।

विधान मंडल के विश्रांतिकाल में अध्यादेश प्रख्यापित करने की प्रशासक की शक्ति ।

[7]239ख. (1) उस समय को छोड़कर जब [7क][पांडिचेरी] संघ राज्यक्षेत्र का विधान मंडल सत्र में है, यदि किसी समय उसके प्रशासक का यह समाधान हो जाता है कि ऐसी परिस्थितियां विद्यमान हैं जिनके कारण तुरंत कार्यवाही करना उसके लिए आवश्यक हो गया है तो वह ऐसे अध्यादेश प्रख्यापित कर सकेगा जो उसे उन परिस्थितियों में अपेक्षित प्रतीत हों :

परंतु प्रशासक, कोई ऐसा अध्यादेश राष्ट्रपति से इस निमित्त अनुदेश अभिप्राप्त करने के पश्चात् ही प्रख्यापित करेगा, अन्यथा नहीं :

परंतु यह और कि जब कभी उक्त विधान मंडल का विघटन कर दिया जाता है या अनुच्छेद 239क के खंड (1) में निर्दिष्ट विधि के अधीन की गई किसी कार्यवाही के कारण उसका कार्यकरण निलंबित रहता है तब प्रशासक ऐसे विघटन या निलंबन की अवधि के दौरान कोई अध्यादेश प्रख्यापित नहीं करेगा ।

(2) राष्ट्रपति के अनुदेशों के अनुसरण में इस अनुच्छेद के अधीन प्रख्यापित अध्यादेश संघ राज्यक्षेत्र के विधान मंडल का ऐसा अधिनियम समझा जाएगा जो अनुच्छेद 239क के खंड (1) में निर्दिष्ट विधि में, उस निमित्त अंतर्विष्ट उपबंधों का अनुपालन करने के पश्चात् सम्यक् रूप से अधिनियमित किया गया है, किंतु प्रत्येक ऐसा अध्यादेश —

(क) संघ राज्यक्षेत्र के विधान मंडल के समक्ष रखा जाएगा और विधान मंडल के पुनः समवेत होने से छह सप्ताह की समाप्ति पर या यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले विधान मंडल उसके अननुमोदन का संकल्प पारित कर देता है तो संकल्प के पारित होने पर प्रवर्तन में नहीं रहेगा; और

(ख) राष्ट्रपति से इस निमित्त अनुदेश अभिप्राप्त करने के पश्चात् प्रशासक द्वारा किसी भी समय वापस लिया जा सकेगा ।

(3) यदि और जहां तक इस अनुच्छेद के अधीन अध्यादेश कोई ऐसा उपबंध करता है जो संघ राज्यक्षेत्र के विधान मंडल के ऐसे अधिनियम में, जिसे अनुच्छेद 239क के खंड (1) में निर्दिष्ट विधि में इस निमित्त अंतर्विष्ट उपबंधों का अनुपालन करने के पश्चात्

---

7. संविधान (सत्ताईसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 30-12-1971 से अनुच्छेद 239ख अंतःस्थापित किया गया था ।

7क. संविधान (सैंतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा "पांडिचेरी और मिजोरम" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

बनाया गया है, अधिनियमित किए जाने पर विधिमान्य नहीं होता तो और वहां तक वह अध्यादेश शून्य होगा ।

[8]* * *

[9]**240.** *(1) राष्ट्रपति —*

कुछ संघ राज्यक्षेत्रों के लिए विनियम बनाने की राष्ट्रपति की शक्ति ।

(क) अंदमान और निकोबार द्वीप,

(ख) लक्षद्वीप,[10]

(ग) दादरा और नागर हवेली,[11]

(घ) दमण और दीव,[12]

(ङ) पांडिचेरी,[13]

[14]* * *

संघ राज्यक्षेत्र की शांति, प्रगति और सुशासन के लिए विनियम बना सकेगा .

[13][*परंतु जब [पांडिचेरी,]* [16]*** *संघ राज्यक्षेत्र] के लिए विधान मंडल के रूप में कार्य करने के लिए अनुच्छेद 239क के अधीन किसी निकाय का सृजन किया जाता है तब राष्ट्रपति विधान मंडल के प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से उस संघ राज्यक्षेत्र की शांति, प्रगति और सुशासन के लिए विनियम नहीं बनाएगा :*

[17][*परंतु यह और कि जब कभी* [15][*पांडिचेरी,]* [16]*** *संघ राज्यक्षेत्र] के विधान मंडल के रूप में कार्य करने वाले निकाय का विघटन कर दिया जाता है या उस निकाय का ऐसे विधान मंडल के रूप में कार्यकरण, अनुच्छेद 239क के खंड (1) में निर्दिष्ट विधि के अधीन की गई कार्यवाही के कारण निलंबित रहता है तब राष्ट्रपति ऐसे विघटन या निलंबन की अवधि के दौरान उस संघ राज्यक्षेत्र की शांति, प्रगति और सुशासन के लिए विनियम बना सकेगा ।*

(2) इस प्रकार बनाया गया कोई विनियम संसद् द्वारा बनाए गए किसी अधिनियम या [18][*किसी अन्य विधि] का, जो उस संघ राज्यक्षेत्र को तत्समय लागू है, निरसन या संशोधन कर सकेगा और राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किए जाने पर उसका वही बल और प्रभाव होगा जो संसद् के किसी ऐसे अधिनियम का है जो उस राज्यक्षेत्र को लागू होता है ।*

8. संविधान (अड़तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से जो खंड (4) अंतःस्थापित किया गया था उसका चवालीसवें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 को लोप कर दिया गया ।

9. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

10. लक्कादीव, मिनिकोय और अमीनदीवी द्वीप (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1973 द्वारा 1-11-1973 से प्रतिस्थापित ।

11. संविधान (दसवां संशोधन) अधिनियम, 1961 द्वारा 16-8-1961 से अंतःस्थापित ।

12. संविधान (बारहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा 20-12-1961 से अंतःस्थापित ।

13. संविधान (चौदहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा 16-8-1962 से अंतःस्थापित ।

14. संविधान (सत्ताईसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 15-2-1972 से खंड (1) में प्रविष्टियां (च) और (छ) जोड़ी गई थी और उनका मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा तारीख 20-2-1987 से तथा अरुणाचल प्रदेश राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा तारीख 20-2-1987 से क्रमशः लोप किया गया ।

15. संविधान (सैंतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा "पांडिचेरी या मिजोरम" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

16. मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा तारीख 20-2-1987 से "मिजोरम" शब्द का लोप किया गया ।

17. संविधान (सत्ताईसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 15-2-1972 से अंतःस्थापित ।

18. संविधान (सत्ताईसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 15-2-1972 से "किसी विद्यमान विधि" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित किया गया ।

संशोधन — अनुच्छेद 240 का सातवें, दसवें, बारहवें, चौदहवें, सताईसवें और सैंतीसवें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधन किया गया है ।

संशोधनों का प्रभाव — अपने वर्तमान रूप में यह अनुच्छेद राष्ट्रपति को खंड (1) में विनिर्दिष्ट संघ राज्यक्षेत्रों के सुशासन के लिए विनियम बनाने की शक्ति देता है । किंतु जब तक (क) दमण और दीव, (ख) पांडिचेरी के संघ राज्यक्षेत्रों में विधान मंडल कार्य करेगा तब तक राष्ट्रपति की यह शक्ति लंबित रहेगी किंतु जैसे ही विधान मंडल का निलंबन या विघटन होगा वैसे ही शक्ति पुन: प्राप्त हो जाएगी ।

संघ राज्यक्षेत्रों के लिए उच्च न्यायालय ।

241. (1) संसद्, विधि द्वारा, किसी [19][*संघ राज्यक्षेत्र*] के लिए उच्च न्यायालय गठित कर सकेगी या [19][*ऐसे राज्यक्षेत्र*] में किसी न्यायालय को इस संविधान के सभी या किन्हीं प्रयोजनों के लिए उच्च न्यायालय घोषित कर सकेगी ।

(2) भाग 6 के अध्याय 5 के उपबंध, ऐसे उपांतरणों या अपवादों के अधीन रहते हुए, जो संसद् विधि द्वारा उपबंधित करे, खंड (1) में निर्दिष्ट प्रत्येक उच्च न्यायालय के संबंध में वैसे ही लागू होंगे जैसे वे अनुच्छेद 214 में निर्दिष्ट किसी उच्च न्यायालय के संबंध में लागू होते हैं ।

[20]*(3) इस संविधान के उपबंधों के और इस संविधान द्वारा या इसके अधीन समुचित विधान मंडल को प्रदत्त शक्तियों के आधार पर बनाई गई उस विधान मंडल की किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रत्येक उच्च न्यायालय, जो संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 के प्रारंभ से ठीक पहले किसी संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग करता था ऐसे प्रारंभ के पश्चात् उस राज्यक्षेत्र के संबंध में उस अधिकारिता का प्रयोग करता रहेगा ।*

[20]*(4) इस अनुच्छेद की किसी बात से किसी राज्य के उच्च न्यायालय की अधिकारिता का किसी संघ राज्यक्षेत्र या उसके भाग पर विस्तार करने या उससे अपवर्जन करने की संसद् की शक्ति का अल्पीकरण नहीं होगा ।*

कोड़गू ।

242. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 29 और अनुसूची द्वारा निरसित ।

---

19. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा 1-11-1956 से प्रतिस्थापित ।
20. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा खंड (3) और (4) प्रतिस्थापित ।

भाग 9

पहली अनुसूची के भाग घ के राज्यक्षेत्र और अन्य राज्यक्षेत्र जो उस अनुसूची में विनिर्दिष्ट नहीं हैं

[1]243. लोप किया गया ।

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा लोप किया गया ।

भाग 10

अनुसूचित और जनजाति क्षेत्र

अनुसूचित क्षेत्रों और जनजाति क्षेत्रों का प्रशासन ।

244. (1) **पांचवीं अनुसूची के उपबंध** [1][*असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिज़ोरम राज्यों से भिन्न*] **किसी राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण के लिए लागू होंगे ।**

(2) **छठी अनुसूची के उपबंध** [1क][*असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यो के*] **जनजाति क्षेत्रों के प्रशासन के लिए लागू होंगे ।**

खंड (2) — इससे यह अभिप्रेत है कि असम, मेघालय और मिजोरम के जनजाति क्षेत्र संविधान के राज्य और संघ राज्यक्षेत्रों से संबधित अन्य उपबंधों से शासित नहीं होंगे बल्कि छठी अनुसूची के उपबधों से शासित होंगे जिसमें जनजाति क्षेत्रों के शासन के लिए एक स्वतपूर्ण संहिता है ।[2] यह ध्यान देने योग्य है कि छठी अनुसूची के पैरा 21 में संसद् को उस अनुसूची के उपबधो में परिवर्तन करने की शक्ति दी गई है । इसके लिए अनुच्छेद 368 की प्रक्रिया अपनाना नही पड़ेगा ।[2]

असम के कुछ जनजाति क्षेत्रों को समाविष्ट करने वाला एक स्वशासी राज्य बनाना और उसके लिए स्थानीय विधान मडल या मत्रिपरिषद् का या दोनो का मृजन ।

[3]244क. *(1) इस सविधान में किसी बात के होते हुए भी, संसद् विधि द्वारा असम राज्य के भीतर एक स्वशासी राज्य बना सकेगी, जिसमें छठी अनुसूची के पैरा 20 से सलग्न सारणी के* [1][*भाग 1*] *में विनिर्दिष्ट सभी या कोई जनजाति क्षेत्र (पूर्णतः या भागतः समाविष्ट होंगे और उसके लिए —*

(क) उस स्वशासी राज्य के विधान मडल के रूप में कार्य करने के लिए निर्वाचित या भागत नामनिर्देशित और भागतः निर्वाचित निकाय का, या

(ख) मंत्रिपरिषद् का,

या दोनों का सृजन कर सकेगी, जिनमे से प्रत्येक का गठन, शक्तियां और कृत्य वे होंगे जो उस विधि मे विनिर्दिष्ट किए जाएं ।

(2) खंड (1) में निर्दिष्ट विधि, विशिष्टतया, —

(क) राज्य सूची या समवर्ती सूची में प्रगणित वे विषय विनिर्दिष्ट कर सकेगी जिनके संबध मे स्वशासी राज्य के विधान मंडल को सपूर्ण स्वशासी राज्य के लिए या उसके किसी भाग के लिए विधि बनाने की शक्ति, असम राज्य के विधान मडल का अपवर्जन करके या अन्यथा, होगी;

(ख) वे विषय परिनिश्चित कर सकेगी जिन पर उस स्वशासी राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार होगा;

1. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 और संविधान (उनचासवां सशोधन) अधिनियम, 1984 द्वारा प्रतिस्थापित ।

1क. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 और मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा प्रतिस्थापित ।

2. *एडविंगसन* बनाम *असम राज्य*, ए 1966 एस.सी. 1220 (*1224*) ।

3. संविधान (बाईसवा संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा 25-9-1969 से अनुच्छेद 244क अतःस्थापित किया गया ।

(ग) यह उपबंध कर सकेगी कि असम राज्य द्वारा उद्गृहीत कोई कर स्वशासी राज्य को वहां तक सौंपा जाएगा जहां तक उसके आगम स्वशासी राज्य से प्राप्त हुए माने जा सकते हैं;

(घ) यह उपबंध कर सकेगी कि इस संविधान के किसी अनुच्छेद में राज्य के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उसके अंतर्गत स्वशासी राज्य के प्रति निर्देश है; और

(ङ) ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक या पारिणामिक उपबंध कर सकेगी जो आवश्यक समझे जाएं ।

(3) पूर्वोक्त प्रकार की किसी विधि का कोई संशोधन, जहा तक वह संशोधन खंड (2) के उपखंड (क) या उपखड (ख) मे विनिर्दिष्ट विषयों में से किसी से संबंधित है, तब तक प्रभावी नहीं होगा जब तक वह संशोधन ससद् के प्रत्येक सदन में उपस्थित और मत देने वाले कम से कम दो-तिहाई सदस्यों द्वारा पारित नहीं कर दिया जाता है ।

(4) इस अनुच्छेद में निर्दिष्ट विधि को अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन इस बात के होते हुए भी नहीं समझा जाएगा कि उसमें कोई ऐसा उपबंध अतर्विष्ट है जो इस संविधान का संशोधन करता है या संशोधन करने का प्रभाव रखता है ।

अनुच्छेद 244क का उद्देश्य — अनुच्छेद 244क संविधान (22वां संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा अंतःस्थापित किया गया था । इसके द्वारा पहाड़ी जनजातियों की पृथक राज्य की मांग को पूरा करने के लिए असम राज्य के भीतर स्वशासी राज्य बनाने की सांविधानिक नींव रखी गई । इसमें वे सब क्षेत्र सम्मिलित थे जो संविधान की छठी अनुसूची के पैरा 20 की सारणी के भाग क में दिए गए हैं । इस शक्ति का प्रयोग करके मेघालय को स्वशासी राज्य बनाया गया था । 1972 से मेघालय को संविधान की पहली अनुसूची के भाग 1 के अधीन पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया है । यह पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा किया गया है । इस प्रकार अनुच्छेद 244क का प्रयोजन सिद्ध हो गया है ।

भाग 11

संघ और राज्यों के बीच संबंध

अध्याय 1 — विधायी संबंध

विधायी शक्तियों का वितरण

245. (1) **इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद् भारत के संपूर्ण राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए विधि बना सकेगी और किसी राज्य का विधान मंडल संपूर्ण राज्य या उसके किसी भाग के लिए विधि बना सकेगा ।**

संसद् द्वारा और राज्यों के विधान मंडलों द्वारा बनाई गई विधियों का विस्तार ।

(2) **संसद् द्वारा बनाई गई कोई विधि इस आधार पर अविधिमान्य नहीं समझी जाएगी कि उसका राज्यक्षेत्रातीत प्रवर्तन होगा ।**

"इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए" — भारत के प्रत्येक विधान मंडल को संविधान के अधीन उसे दी गई शक्तियों के भीतर रहते हुए पूर्ण शक्तियां प्राप्त हैं । संघ और राज्य दोनों के विधान मंडलो की शक्तियो की कुछ मर्यादाएं हैं, —

(क) सातवीं अनुसूची में किया गया शक्तियों का वितरण ।[1]

(ख) भाग 3 में सम्मिलित मौलिक अधिकार ।[1]

(ग) संविधान के अन्य आज्ञापक उपबंध जैसे, अनुच्छेद 286(1),[2] अनुच्छेद 301 ।[3]

(घ) राज्य विधान मंडल की दशा में राज्य की राज्यक्षेत्रीय सीमाएं ।[4]

यदि उपर्युक्त मर्यादाओं में से किसी का उल्लंघन किया जाता है तो न्यायालय प्रश्नगत विधि को अविधिमान्य घोषित कर देगा ।[1] विधि बनाने की किसी विधान मंडल की क्षमता का अवधारण उस विधान मंडल की शक्ति के संबंध में उस विधि के अधिनियमित किए जाने के समय विद्यमान सांविधानिक उपबंधों के प्रति निर्देश से किया जाएगा ।[5]

राज्य विधान का विस्तार — अनुच्छेद 245 के खंड (1) और खंड (2) को, एक साथ पढ़ने पर, यह विवक्षा होती है कि संविधान के अधीन राज्य विधान मंडलों को राज्यक्षेत्रातीत शक्ति नहीं होगी ।[4] जब किसी अधिनियम पर यह आक्षेप किया जाता है कि उसका प्रवर्तन राज्यक्षेत्र के बाहर है तो उस विधान की विधिमान्यता इस बात पर निर्भर करेगी कि जिस प्रयोजन के लिए राज्यक्षेत्र से संबंध जोड़ा गया है वह पर्याप्त है या नहीं ।[6] राज्य का विधान जो राज्यक्षेत्रीय सीमाओं के बाहर की विषय-वस्तु से संबंधित है राज्यक्षेत्रीय संबंध के अभाव में अधिकारातीत माना जाएगा ।

---

1 अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश, ए. 1965 एस.सी. 745 (*762*) ।

2 *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 661 ।

3 *अतियाबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 232 ।

4 *मुंबई राज्य* बनाम *चमरबागवाला*, ए. 1957 एस.सी. 699 (711); *कोचुन्नी* बनाम *मद्रास और केरल राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1080 (*1085*) ।

5. *रहमान* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1 (*6*) ।

6 *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 661 (न्या. वेंकटरामन); *अनंत* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 853, *बिहार राज्य* बनाम *चारूशीला*, ए. 1959 एस.सी. 1002 ।

राज्य विधान मंडल संसद् प्रत्यायोजिती नहीं है — संघ और राज्य के विधान मंडल दोनों ही अपनी शक्ति एक ही संविधान से प्राप्त करते हैं । संविधान ने विधायी शक्ति का विभाजन इन दोनों के बीच किया है । एक विधान मंडल किसी ऐसे विषय का प्रत्यायोजन करके जो अनन्यतः उसके क्षेत्र में आता है दूसरे को उस विषय पर विधि बनाने की क्षमता प्रदान नहीं कर सकता । अतएव संघ का विधान मंडल राज्य विधान मंडल को अपनी शक्तियों का प्रत्यायोजन या अंतरण नहीं कर सकता । इसी प्रकार राज्य विधान मंडल भी प्रत्यायोजन या अंतरण करने में असमर्थ है ।[7]

भूतलक्षी विधान बनाने की क्षमता — विधि बनाने की शक्ति के अंतर्गत उसे भूतलक्षी प्रभाव देने की शक्ति भी है ।[8] भूतलक्षी विधान की शक्ति पर एक ही अभिव्यक्त मर्यादा है और वह है अनुच्छेद 20(1), अर्थात् दांडिक विधियों को भूतलक्षी प्रभाव नहीं दिया जा सकता । शेष प्रत्येक विधि को संविधान के अधीन भूतलक्षी प्रभाव दिया जा सकता है,[8] कराधान विधियों को भी ।[9-10] बस यह देखना होगा कि भूतलक्षी विधान द्वारा कोई विहित अधिकार छीनकर किसी मूल अधिकार का अतिलंघन तो नहीं हो रहा है जैसे अनुच्छेद 14, 19 ।[11]

भूतकाल के लिए विधि बनाने की विधान मंडल की क्षमता उसकी वर्तमान विधायी शक्ति पर निर्भर करती है । वह इस बात पर आधारित नहीं होती कि उस अधिनियम को जब प्रवर्तित किया जा रहा है उस समय उसे शक्ति थी या[12] नहीं ।

विधान मंडल किसी भी अधिनियम को भूतलक्षी प्रभाव से निरसित कर सकता है ।[8] जब दो अधिनियम हैं जिनमें दो अलग-अलग प्रक्रियाएं विहित की गई हैं तो विधान मंडल इन दो प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप होने वाले विभेद को मिटाने के लिए भूतलक्षी प्रभाव से निरसन कर सकता है ।[13]

विधिमान्यकरण अधिनियम को भी भूतलक्षी प्रभाव दिया जा सकता है ।[14] चाहे मूल अधिनियम किसी अन्य विधान मंडल ने पारित किया हो ।[10]

किंतु पश्चात्वर्ती विधिमान्यकरण अधिनियम को राष्ट्रपति की अनुमति मिल जाने पर भी पूर्ववर्ती अधिनियम प्रारंभ से विधिमान्य नहीं होगा यदि वह अनुच्छेद 255 के अधीन राष्ट्रपति की अनुमति के न होने के कारण असांविधानिक हो गया है । कारण यह है कि विधान मंडल को या राष्ट्रपति को यह घोषित करने की शक्ति नहीं है कि संविधान के अनुच्छेद 255 का अनुपालन नहीं करने का कोई प्रभाव नहीं होगा ।[15]

न्यायिक विनिश्चय का अध्यारोहण करने और विधिमान्यकरण करने की क्षमता — भारत में विधान मंडल इस बात के लिए सक्षम है कि वह न्यायिक विनिश्चय की अंतिमता को समाप्त कर दे और ऐसे विवाद को फिर से जीवित कर दे जो समाप्त हो गया था । विधान मंडल

7 दिल्ली विधि अधिनियम, 1912 का मामला, (1951) एस.सी.आर 747, न्या महाजन ।

8 *सुन्दररामियर* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1959) एस.सी.आर 1422, *जे के जूट मिल्स* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी 1534; *जादव* बनाम *नगरपालिका*, ए 1961 एस.सी 1486, *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *एच.एम.टी.*, ए 1975 एस.सी 2037 (पैरा 8) ।

9 *जवाहरमल* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1966 एस.सी 764 (*770*) ।

10. *शेतकारी कारखाना* बनाम *कलक्टर*, ए 1979 एस.सी 1972 (पैरा 6-7) ।

11 *रघुबर* बनाम *भारत संघ*, ए 1962 एस.सी. 263 (*274*); *रामकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1963 एस.सी. 1667; *जावरा शुगर मिल्स* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 416 ।

12 *अब्दुल शकूर* बनाम *राज्य*, ए 1964 एस.सी 1729 (*1735*) ।

13 *मैसूर राज्य* बनाम *अचय्या*, ए 1969 एस.सी 477 (*482*) ।

14. *कलकत्ता गैस कंपनी* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1962 एस.सी 1044 (*1050*); *राय रामकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1963 एस.सी 1667 ।

15. *जवाहरमल* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1966 एस.सी. 764 (*771*); *उत्कल सी एंड जे* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 2310 (पैरा 14-15) ।

विधिमान्यकरण अधिनियम द्वारा ऐसी विधि को विधिमान्य घोषित कर सकता है जिसे न्यायालय ने शून्य घोषित किया था । जब विधान मंडल इस प्रकार अधिनियम बनाता है तब वह न्यायिक कृत्य नहीं करता ।[16]

विधिमान्यकरण अधिनियम की विधिमान्यता के लिए निम्नलिखित कसौटियां हैं[16] :

(क) विधिमान्यकरण अधिनियम बनाने वाले विधान मंडल को उस विषय पर विधि बनाने की क्षमता है या नहीं ।

(ख) क्या विधिमान्यकरण द्वारा विधान मंडल ने वह दोष दूर कर दिया है जो न्यायालयों ने उस विधि में पाया था ।

(ग) क्या विधिमान्यकरण अधिनियम संविधान के भाग 3 के उपबंधों से सुसंगत है ।

यदि पूर्वगामी कसौटी पर अधिनियम खरा उतरता है तो उस अधिनियम को अन्य अधिनियमों के समान ही भूतलक्षी प्रभाव दिया जा सकता है जिससे वह अधिनियम जिसे शून्य घोषित किया गया था उस तारीख से विधिमान्य हो जाएगा जिस तारीख को वह पारित किया गया था ।[17-18] इस बीच परिस्थितियों में जो परिवर्तन हुआ है उससे कोई अंतर नहीं पड़ेगा ।[19] यदि विधिमान्यकरण अधिनियम स्वयं विधिमान्य है तो उस पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता कि उसने संपत्ति के मूल्यांकन के लिए एक मनमानी तारीख नियत की है जिसका अर्जन की कार्यवाहियों से कोई संबंध नहीं है[20] या उसने दो विभिन्न कार्यवाहियों में से एक को समाप्त करके विभेद को मान्यता दी है ।[21] किंतु विधान मंडल किसी अधिनियम के आधार पर किसी मामले का निर्णय करने की शक्ति ग्रहण नहीं कर सकता । उसे न्यायपालिका को पूर्ववर्ती विधि के अनुसार विनिश्चय करने का अधिकार देना होगा ।[22]

विधान मंडल किसी लंबित न्यायिक कार्यवाही को अविधिमान्य और समाप्त घोषित नहीं कर सकता या किसी न्यायिक विनिश्चय का सीधे-सीधे अध्यारोहण नहीं कर सकता ।[23] वह उस अधिनियम में परिवर्तन करके जिसके आधार पर निर्णय दिया गया था सक्षम न्यायालय के निर्णय को निष्प्रभावी कर सकता है ।

विधान मंडल सारवान् कृत्यों का प्रत्यायोजन नहीं कर सकता — हमारे संविधान ने शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत को स्वीकार नहीं किया है और न ही विधान मंडल द्वारा शक्तियों के प्रत्यायोजन के विरुद्ध कोई अभिव्यक्त प्रतिषेध को स्थान दिया है । हमारे उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि हमारे संविधान के अधीन विधान मंडल अपने उन सारवान् कृत्यों का प्रत्यायोजन नहीं कर सकता जो उसे संविधान ने सौंपे हैं ।[24-25]

16 *सक्सेना* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1976 एस सी. 2250 (पैरा 23); *हरि सिंह* बनाम *मिलिट्री एस्टेट आफिसर*, ए 1972 एस.सी. 2205 ।

17. *वैस्ट रामनाड ई डी कंपनी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए 1962 एस सी 1753 ।

18 *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *एच एम टी*, ए 1975 एस सी 2037 (पैरा 8) ।

19 *राय रामकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1963 एस सी 1667 ।

20. *उदय राम* बनाम *भारत संघ*, ए 1968 एस सी 1188 (पैरा 32, 34) ।

21. *मैसूर राज्य* बनाम *अचय्या*, ए 1969 एस सी 477 (*482*) ।

22. *बसंत* बनाम *एम्परर*, ए 1944 एफ सी. 86 ।

23 *इन्दिरा* बनाम *राजनारायण*, ए 1975 एस.सी 2299 (सी.बी.); *कृष्ण* बनाम *भारत संघ*, ए. 1975 एस.सी. 1389 (पैरा 13); *हरि* बनाम *मिलिट्री एस्टेट आफिसर*, ए 1972 एस सी 2205, *मिश्री लाल* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए 1977 एस.सी. 1686 ।

24. दिल्ली विधि अधिनियम, (1951) एस.सी.आर. 51 का मामला (न्या महाजन, मुखर्जी और दास); *एडवर्ड मिल्स* बनाम *अजमेर राज्य*, (1955) 1 एस.सी आर 735 ।

25. *बसनलाल* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 4; *मखन सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 381 ।

(i) सारवान् विधायी कृत्य है विधायी नीति का अवधारण और उसका आचरण के नियम के रूप में अधिनियमन ।[24-26] दूसरे शब्दों में, विधान मंडल किसी अन्य अधिकरण को यह निर्णय करने की शक्ति प्रत्यायोजित नहीं कर सकता कि विधि क्या होनी चाहिए ।[24]

यदि विधान मंडल स्पष्ट और असंदिग्ध शब्दों में नीति बना देता है और उस नीति को क्रियान्वित करने की शक्ति प्रत्यायोजित करने के लिए समुचित नियम बनाने की शक्ति किसी और को देता है तो यह ठीक है ।[27] किंतु यदि नीति संदिग्ध शब्दों में लिखी हुई है तो ऐसा नहीं हो सकता ।[28]

(ii) किसी अधिनियम की सारवान् बातों का उपान्तरण करने की शक्ति भी सारवान् विधायी कृत्य है यदि उपान्तरण से नीति में परिवर्तन होता है ।[27]

"किसी अधिनियम की मूल प्रकृति में परिवर्तन करना या उसकी तात्त्विक बातों को बदलना विधान बनाना है । सभी प्राधिकारी इस बात पर सहमत हैं कि कोई विधान मंडल विधान बनाने की शक्ति का प्रत्यायोजन नहीं कर सकता ।"

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि बिना किसी बंधन के किसी अधिनियम में उपान्तरण करने की शक्ति कार्यपालिका को देना विधायी शक्ति का असांविधानिक प्रत्यायोजन होगा ।[27] उपान्तरण करने की शक्ति का प्रत्यायोजन असांविधानिक नहीं होगा यदि उसका संबंध विधायी नीति से नहीं बल्कि ब्यौरे की ऐसी बातों में है जो विधायी कृत्यों के लिए आवश्यक नहीं हैं ।[29]

(iii) विधान मंडल किसी अधिनियम के प्रवर्तन से छूट देने की शक्ति कार्यपालिका को तभी प्रत्यायोजित कर सकता है जब वह उसके मार्गदर्शन के लिए नीति स्पष्ट कर दे ।[30]

(iv) उच्चतम न्यायालय ने बहुमत से *जालान ट्रेडिंग कंपनी* के वाद में[31] यह अभिनिर्धारित किया है कि किसी अधिनियम को प्रभावित करने के लिए कठिनाइयां दूर करने की शक्ति एक सारवान् विधायी कृत्य है जिसका प्रत्यायोजन कार्यपालिका या अन्य प्रशासनिक प्राधिकारी को नहीं किया जा सकता ।

विधायी नीति का अभिनिश्चय किया जाना — न्यायालय अधिनियम के उपबंधों से और उसकी उद्देशिका से विधायी नीति क्या है यह जानने का प्रयत्न करेगा[32] और जब आक्षेपित अधिनियम किसी अन्य अधिनियम का स्थान ग्रहण करने के लिए है तो न्यायालय यह जानने के लिए कि विधान मंडल ने कार्यपालिका को बिना मार्गदर्शन किए शक्ति प्रदान की है या नहीं उस अधिनियम के उपबंधों को भी देखेगा ।[33]

कौन से कृत्य प्रत्यायोजित किए जा सकते हैं — (क) विधान बनाते समय, विधान मंडल भविष्य में उठने वाली सभी समस्याओं का अनुमान करके उनके लिए उपबंध नहीं कर सकता ।

26. *हरिशंकर* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1954 एस सी 465 (*468*) ।

27. *मखन सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1964 एस.सी. 381 (*401*) ।

28. *खाबलिया नगरपालिका* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1967 एस सी 1048 (*1065*); *देवी* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस सी. 1895 (*1901*); *हरकचंद* बनाम *भारत संघ*, ए 1970 एस सी 1453 (*1465*) ।

29. *बनारसी* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1958 एस सी 909 (मुख्य न्या. एस आर दास, न्या. वेंकटराम अय्यर, दास, सरकार; न्या बोस ने सहमति नहीं दी) ।

30. *द्वारका प्रसाद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1954 एस.सी 224 ।

31. *जालान ट्रेडिंग कंपनी* बनाम *मिल मजदूर सभा*, ए 1967 एस.सी 691 (*703*) [बोनस संदाय अधिनियम] ।

32. *वसनलाल* बनाम *मुंबई राज्य*, (1961) एस.सी.जे. 394 (*397*); *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *चंपालाल*, ए 1965 एस.सी. 124 (*128*); *भारत संघ* बनाम *भानमल*, ए 1960 एस.सी 475 (*479*) ।

33. *भटनागर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी 478 (*480*) ।

जब विधान मंडल कोई नीति निर्धारित कर देता है[34-35] और सम्यकतः प्राधिकृत प्राधिकारी को आकस्मिकताओं और भविष्य में आने वाली विभिन्न परिस्थितियों से निपटने के लिए शक्तियां देता है तो इसमें विधायी प्राधिकार का प्रत्यायोजन नहीं होता ।[36]

(ख) किसी अधिनियम के प्रवर्तन का विस्तार करने की शक्ति का प्रत्यायोजन किया जा सकता है ।[37]

(ग) जहां विधान मंडल कार्यपालिका को अपने विवेकानुसार विद्यमान अधिनियम को अंगीकार करने और उसे नए क्षेत्र में लागू करने की अनुमति देता है जिसमें नाम, स्थान आदि के आनुषंगिक परिवर्तन किए जा सकते हैं तो यह असांविधानिक प्रत्यायोजन नहीं है यदि उस अधिनियम के पीछे जो नीति है उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया जाता है ।[38]

(घ) जब विधान मंडल विधायी नीति की घोषणा करके अपना आवश्यक विधायी कृत्य पूरा कर देता है तो कितना प्रत्यायोजन किया जाए यह विधान मंडल के विवेक पर छोड़ दिया जाता है । न्यायालय यह कहने के लिए सक्षम नहीं है कि विधान मंडल को कुछ और मानदंड अपनाने चाहिए थे ।[39]

(ङ) यदि यह अधिकथित किया गया है कि नियमों को संसद् के समक्ष रखा जाएगा और उसके पश्चात् ही वे प्रवृत्त होंगे तथा संसद् को नियमों का संशोधन, उपान्तरण या निरसन करने की शक्ति होगी तो यह प्रत्यायोजन असांविधानिक नहीं होगा ।[40]

(च) न्यायिक और न्यायिककल्प कृत्यों की दशा में यह सिद्धांत लागू नहीं होता ।[41]

(छ) यदि राज्य सरकार अनुच्छेद 162 के अधीन अपनी कार्यपालक शक्तियों के प्रयोग में कोई कार्य कर सकती है तो इसे विधायी प्रत्यायोजन नहीं माना जाएगा ।[42]

कराधान विधि में अनुज्ञेय प्रत्यायोजन — कर अधिरोपित करना और उसका निर्धारण एक सारवान् विधायी कृत्य है ।[43] अतएव विधान मंडल को कराधान की दर विहित करनी चाहिए या अधीनस्थ प्रक्रिया द्वारा दर नियत करने के लिए नीति स्पष्ट करनी चाहिए ।[44-45] निम्नलिखित मामलों में कोई असांविधानिक प्रत्यायोजन नहीं है —

जहां विधान मंडल अधिकतम दर नियत कर देता है और कार्यपालिका को यह शक्ति दे देता है कि वह सरकारी राजस्व की आवश्यकताओं को देखते हुए उस अधिकतम दर के भीतर ही कोई दर अवधारित करेगी ।[46]

कोई राज्य विधान मंडल किसी स्थानीय प्राधिकारी को दर की अधिकतम सीमा नियत किए बिना कर अधिरोपित करने की शक्ति देने के लिए सक्षम है या नहीं इस बारे में विवाद उठा था । उच्चतम न्यायालय ने यह अधिकथित करते हुए उस प्रश्न को सुलझा दिया कि

34. *इज़हार अहमद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1062 (*1067*) ।

35. *चिंत लिंगम* बनाम *भारत सरकार*, ए. 1971 एस.सी. 474 (*477*); *भारत संघ* बनाम *भानमल*, ए 1960 एस.सी 475 ।

36. *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, (1951) एस.सी.आर. 682; *हुसैन* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 97 (*102*) ।

37. *इंदर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1957 एस.सी. 510 ।

38. *राजनारायण* बनाम *अध्यक्ष, पटना प्रशासन*, ए. 1954 एस.सी. 569 ।

39. *भारत संघ* बनाम *भानमल*, ए. 1960 एस.सी. 475 (*481*) ।

40. *ग्रेवाल* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 512 ।

41. *सहायक आयुक्त* बनाम *बी. एंड सी. कंपनी*, ए. 1970 एस.सी 169 (*178*) ।

42. *एस.एस.ए.वी. संघ* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 2030 (पैरा 9) ।

43. *राजनारायण* बनाम *अध्यक्ष, पटना प्रशासन*, (1955) 1 एस.सी.आर. 290 ।

44. *कलकत्ता निगम* बनाम *लिबर्टी सिनेमा*, ए. 1965 एस.सी. 1107 ।

45. *देवी* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1895 ।

46. *सीताराम* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 1168 ।

कराधान की दर तय करने की शक्ति का प्रत्यायोजन विधिमान्य होगा यदि अधिनियम में प्रत्यायोजिती को यह मार्गदर्शन दिया गया है कि शक्ति का प्रयोग किस प्रकार किया जाएगा[45-48] या विधायी नीति स्पष्ट की गई है[46] या प्रत्यायोजिती सरकार के अनुमोदन से या स्थानीय निवासियों की इच्छाओं को जानकर दर नियत करेगा ।[47]

निम्नलिखित सारवान् विधायी कृत्य नहीं हैं और उनका प्रत्यायोजन किया जा सकता है :

उन व्यक्तियों का और उन संव्यवहारों का चयन करने की शक्ति जिन पर कर लगाया जाएगा,[49] छूट की अनुसूची का संशोधन करने की शक्ति,[50] माल के विभिन्न वर्गों की बाबत कर की दरों का अवधारण,[50] उस अधिनियम के प्रयोजन के लिए उपयुक्त कर क्या होगा,[51] कर के संग्रहण के लिए तंत्र की स्थापना[52] या कराधान विधि के कार्यकरण से संबंधित ब्यौरे की बातों का अवधारण ।[50-52]

सशर्त और अधीनस्थ विधायन अनुज्ञेय है — विधान मंडल अपने सारवान् विधायी कृत्यों का प्रत्यायोजन नहीं कर सकता किंतु वह किसी विधि के प्रशासन या उसे लागू करने को कार्यपालिका पर या किसी अन्य निकाय पर छोड़ सकता है । विधायी नीति अधिकथित करने के पश्चात्, —

(i) विधान मंडल या स्थानीय प्राधिकारी के निर्णय पर छोड़ सकता है कि किसी स्थानीय क्षेत्र में उस अधिनियम को लागू करने की आवश्यकता है या नहीं या ऐसी आकस्मिकता या घटना हुई है या नहीं जिसके होने पर वे विधायी उपबंध प्रवृत्त होंगे । इसे 'सशर्त विधायन' कहा जाएगा,[53]

(ii) विधान मंडल विधान की नीति अधिकथित करके किसी अधीनस्थ अभिकरण या कार्यपालिक प्राधिकारी को विधान के प्रयोजनों को क्रियान्वित करने के लिए नियम और विनियम बनाने की शक्ति सौंप सकता है ।[54-55] जब इस प्रकार कानूनी प्राधिकारी के अधीन कोई प्रशासनिक या अन्य अधीनस्थ विधान बनाने वाला निकाय विधायी शक्ति का प्रयोग करता है तो इसे 'अधीनस्थ विधायन' कहते हैं । विधान मंडल की ओर से तो यह प्रत्यायोजित विधान है किंतु यदि नीति स्पष्ट कर दी गई है तो यह प्रत्यायोजन अनुज्ञेय है ।[55-57]

विधायी शक्ति के कुछ पहलू — पूर्वगामी विचार विमर्श से यह स्पष्ट है कि संसद् और राज्य विधान मंडल दोनों की कुछ सांविधानिक सीमाएं हैं और उस सीमा के भीतर उन्हें प्रभु विधान मंडल के समान ही पूर्ण विधायी शक्तियां प्राप्त हैं । दोनों विधान मंडलों को निम्नलिखित रीति में अपनी विधायी शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार है, —

---

47. *दिल्ली नगरपालिका* बनाम *बी.जी.एस. एंड डब्ल्यू. मिल्स*, ए. 1968 एस.सी. 1232 (*1244, 1247, 1254*); *अविंदर* बनाम *पंजाब राज्य*, (1979) 1 एस.सी.सी. 137 (पैरा 23-24) ।

48. *जे.आर.जी. मैन्यूफैक्चरिंग एसोसिएशन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 1589 (*1594*) ।

49. *हीरालाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1034 ।

50. *बाबू राम* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 1475 ।

51. *वेस्टर्न इंडिया थिएटर्स* बनाम *नगर निगम*, ए. 1959 एस.सी. 586 ।

52. *आय-कर आयुक्त* बनाम *रामगोपाल मिल्स*, ए. 1961 एस.सी. 338 (*342*) ।

53. *के.एस.ई. बोर्ड* बनाम *इंडियन एल्युमिनियम कंपनी*, ए. 1976 एस.सी. 1031 (पैरा 27) ।

54. *एपारी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1581 (*1584*); दिल्ली विधि अधिनियम, (1951) एस.सी.आर. 474 का मामला (मुख्य न्या. कानिया, न्या. महाजन); *भटनागर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी. 478 (*485*); *इंदर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 510 (*515*) ।

55. *हमदर्द दवाखाना* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी. 554 (*556*) ।

56. *श्रीराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 459 (*473-74*) ।

57. *चिनाय* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 1148 (*1190*); *अर्नोल्ड* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1788 ।

(i) वह आत्यंतिक रूप से या सशर्त विधान बना सकता है । सशर्त विधान बनाने में उस विधान को प्रभावी करने के लिए समय और नीति तय करने की शक्ति किसी बाहरी प्राधिकारी के विवेक पर छोड़ सकता है । इसी प्रकार उस अधिनियम का विस्तार किस क्षेत्र पर होगा यह भी किसी और पर छोड़ा जा सकता है ।[58]

(ii) वह अधीनस्थ निकायों को अधिनियम के अधीन उपविधि या विनियम बनाने की शक्ति दे सकती है जिससे वे अपना प्रशासन चला सकें ।[55-57]

(iii) वह स्थायी या अस्थायी अधिनियम दोनों ही बना सकती है ।

(iv) वह भविष्यलक्षी या भूतलक्षी प्रभाव से विधायन कर सकती है ।

(v) विधान मंडल की विधि का निरसन करने, उपान्तरण करने या उसमें उपान्तरण या परिवर्तन करने की शक्ति सांविधानिक रूप से उसकी प्रत्यक्ष विधायन करने की शक्ति के समान होती है । वह पूर्ववर्ती अधिनियमों का संशोधन या निरसन कर सकती है और उसकी विधायी क्षमताओं के भीतर आने वाले विषयों से संबंधित "कामन ला" को भी उपान्तरित कर सकती है या उसका अध्यारोहण कर सकती है ।[59]

(vi) वह "निर्देशी" या "समावेशी" विधायन कर सकती है । जहां किसी विशिष्ट विषय से संबंधित उपबंध किसी पूर्ववर्ती अधिनियम में पहले से विद्यमान हैं वहां विधान मंडल पश्चात्वर्ती अधिनियम में उन उपबंधों को दोहराने के स्थान पर उन उपबंधों के प्रति निर्देश कर सकता है । ऐसे मामलों में यह समझा जाएगा कि वे उपबंध उस पश्चात्वर्ती अधिनियम में पहली बार अधिनियमित किए गए हैं ।[60]

निर्देश द्वारा विधायन का एक विचित्र परिणाम यह होता है कि पूर्ववर्ती अधिनियम का निरसन हो जाने पर उसके वे भाग निरसित नहीं होते जो दूसरे अधिनियम में समाविष्ट हो चुके हैं । दूसरे शब्दों में समाविष्ट धाराएं पश्चात्वर्ती अधिनियम में प्रवृत्त रहती हैं चाहे वह अधिनियम विद्यमान न हो जिसमें वे धाराएं मूलतः अधिनियमित की गई थीं ।[61]

(vii) किसी विधान की विधिमान्यता इस बात पर निर्भर करती है कि क्या उसे बनाने वाले विधान मंडल को संविधान के अधीन विधायन की शक्ति थी या नहीं । यदि विधान मंडल शक्ति विनिर्दिष्ट नहीं करता है या गलत प्राधिकार का उल्लेख करता है तो इससे कोई अन्तर नहीं पड़ेगा ।[62]

(viii) विधान मंडल विधि विरुद्ध कार्यपालक कृत्य को विधिमान्य कर सकता है ।[63] इसके अंतर्गत कर का अप्राधिकृत निर्धारण भी है ।[64]

(ix) जब विधायी क्षमता के अभाव के कारण कोई विधि शून्य मानी जाती है और बाद में विधान मंडल को वह विधायी शक्ति मिल जाती है तो वह नई विधि बनाकर उसे भूतलक्षी प्रभाव दे सकता है ।[64-66]

(x) विधान मंडल विधायी कल्पनाओं का सृजन कर सकता है ।[67]

(xi) किसी विशिष्ट विधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए विधि बनाते समय विधान मंडल उस विधि को प्रभावी करने के लिए सभी आनुषंगिक और समनुषंगी उपबंध कर सकता है[68] किंतु इसका विस्तार उन प्रयोजनों के लिए नहीं होगा जो आनुषंगिक नहीं हैं ।[69]

(xii) विधान मंडल विधि से छूट दे सकता है और उसे वापस ले सकता है ।[70]

आभासी विधान का सिद्धांत — इस सिद्धांत से यह अभिप्रेत है कि यदि राज्य का संविधान

58 *इंदर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1957 एस.सी 510 (*515*) ।

59 *सज्जन सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1965 एस.सी. 845 ।

60 *शाम राव* बनाम *जिला मजिस्ट्रेट*, (1952) एस.सी.ए. 635 (*640*) ।

61 *राज्य सचिव* बनाम *हिंदुस्तान को-आपरेटिव इंश्योरेंस*, (1931) 35 सी.डब्ल्यू.एन. 794 पी.सी.; *रामस्वरूप* बनाम *मुंशी*, ए 1963 एस.सी. 553 (*555*) ।

62. *अहमद* बनाम *निरीक्षक*, ए. 1959 मद्रास 261 (*266*) ।

63 *संयुक्त प्रान्त* बनाम *अतिका*, ए.एफ.सी. 16 ।

64. *पी.सी. मिल्स* बनाम *बड़ौच नगरपालिका*, ए. 1970 एस.सी. 192 (*195*) ।

65. *वैस्ट रामनाड ई.डी कंपनी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1753 ।

66. "विधायन के विधिमान्यकरण" विषय पर देखिए दुर्गादास बसु 'लिमिटेड गवर्मेंट एंड जुडिशियल रिव्यू' पृष्ट 258, 263, 464-66 ।

67. *एन.सी.डी. कारपोरेशन* बनाम *मनमोहन*, ए. 1970 एस.सी. 1223 (*1226*) ।

68. *वैवर्ली जूट मिल्स* बनाम *रेमन एंड कंपनी*, ए. 1963 एस.सी. 90; *वाणिज्यिक कर-आयुक्त* बनाम *रामकिशन*, ए. 1968 एस.सी. 59; *हरकचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 1453 ।

69. *सी.पी. आफिसर* बनाम *अब्दुल्ला*, ए. 1971 एस.सी. 792 (*794*) ।

70. *एम.डी.सी. को. आप. बैंक* बनाम *तृतीय आय-कर अधिकारी*, ए. 1975 एस.सी. 2016 (पैरा 20) ।

विधायी प्रविष्टियों के द्वारा विधान बनाने के क्षेत्र का अवधारण करता है या मूल अधिकारों के रूप में विधान बनाने की शक्ति पर कुछ मर्यादाएं हैं तो ऐसे प्रश्न उठ सकते हैं कि क्या किसी विशेष मामले में विधान मंडल ने उस अधिनियम की विषय-वस्तु की बाबत या उसे अधिनियमित करने की रीति में सांविधानिक शक्ति की सीमाओं का उल्लंघन किया है या नहीं । ऐसा अतिलंघन अप्रकट, स्पष्ट या प्रत्यक्ष हो सकता है किंतु वह छिपा हुआ, अप्रकट या अप्रत्यक्ष भी हो सकता है । इस दूसरे प्रकार के मामलों को कुछ न्यायिक निर्णयों में 'आभासी' विधायन कहा गया है । इस अभिव्यक्ति द्वारा यह भाव अभिव्यक्त किया जाता है कि प्रकटतः तो विधान मंडल ऐसा अधिनियम पारित कर रहा है जो उसकी शक्ति की सीमाओं के भीतर है किंतु सारवान् रूप से और वास्तव में उसने अपनी शक्तियों का अतिलंघन किया है ।[71] यह अतिलंघन परदे के पीछे छिपकर किया गया है और समुचित परीक्षा करने पर यह परदा उठ जाएगा ।[72-73] जैसे लोक प्रयोजन के लिए संपत्ति के अर्जन करने की शक्ति का प्रयोग लाभ के लिए या प्राइवेट संपत्ति के अर्जन के लिए किया जाए ।[74] यदि विधान मंडल कोई विशिष्ट विधि बनाने के लिए सक्षम है या दूसरे शब्दों में विधायन किसी ऐसी विधायी प्रविष्टि से संबंधित है जो उसके क्षेत्र में आती है[75] तो यह सुसंगत नहीं है कि विधान मंडल का मंतव्य क्या था या यह बात कि उसका कुछ व्यक्तियों पर बहुत कठोर प्रभाव पड़ेगा ।[76] इस प्रकार क्षमतावान विधान को केवल इस कारण आभासी कहकर घोषित नहीं किया जा सकता कि पहले विधान मंडल ने एक विधि बनाई थी जिसे इस कारण अविधिमान्य घोषित किया गया था कि उसे उस विषय से संबंधित विधि बनाने की शक्ति नहीं थी ।[77]

किसी अन्य विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि को अंगीकार करने की सक्षम विधान मंडल की शक्ति — कोई भी विधान मंडल अपने विषय से संबंधित विधायी शक्ति के प्रयोग में नया अधिनियम बनाने के स्थान पर किसी दूसरे विधान मंडल की विधि को अपने राज्यक्षेत्र में विस्तारित कर सकता है ।[78]

यदि विधान मंडल बिना सोचे-विचारे किसी दूसरे विधान मंडल द्वारा बनाई गई अधिनियमिति को अंगीकार करता है तो यह विधायी शक्ति का समर्पण होगा और इस कारण वह अधिनियम शून्य माना जाएगा ।[79]

'इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए' — इन शब्दों से यह उपदर्शित होता है कि अनुच्छेद 245(1) का उद्देश्य संघ और राज्य के विधान मंडलों के बीच विधायी शक्तियों का वितरण करना है । उन्हें उन परिसीमाओं से छूट देना नहीं है जो संविधान के अन्य उपबंधों द्वारा विधायी शक्तियों पर लगाए गए हैं । ये परिसीमाएं हैं —

71 *जावरा शुगर मिल्स* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1966 एस.सी. 416 (*421*); *जालान ट्रेडिंग* बनाम *मिल मजदूर सभा*, ए. 1967 एस.सी. 691 (*701*); *अशोक कुमार* बनाम *भारत संघ*, ए. 1991 एस.सी. 1792 ।

72. *के.सी.जी. नारायण देव* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1954 एस.सी 375 (*379*); *कुन्हीकोमन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 723, *हरि* बनाम *भारत संघ*, ए. 1966 एस.सी. 619 ।

73. *सोनापुर टी कंपनी* बनाम *उपायुक्त*, ए. 1962 एस.सी. 137 (*140*); *वज्रवेलु* बनाम *विशेष उप-कलक्टर*, ए. 1965 एस.सी. 1017 ।

74. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 (पैरा 716, 721, 723) ।

75. *अब्दुल कादिर* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1976 एस.सी 182 (पैरा 23) ।

76. *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, (1952) एस.सी.आर 889 (*947*); *नागेश्वर* बनाम *आंध्र प्रदेश ट्रांसपोर्ट कारपोरेशन*, ए. 1959 एस.सी. 308 (*316*); *विंध्य प्रदेश राज्य* बनाम *मोरध्वज*, ए. 1960 एस.सी. 796; *बोर्ड आफ ट्रस्टीज* बनाम *दिल्ली राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 458 ।

77. *पृथ्वी काटन मिल्स* बनाम *भड़ौच नगरपालिका*, ए. 1970 एस.सी. 192 ।

78. *मिठुन लाल* बनाम *दिल्ली राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 682 (*685-86*) ।

79. *श्याम राव* बनाम *संघ राज्यक्षेत्र*, ए. 1967 एस.सी. 1480 ।

(i) संविधान के भाग 3 द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकार[80] चाहे विधान निदेशक तत्वों के अनुसरण में बनाया गया हो,[81]

(ii) संघ और राज्य के विधान मंडल कौन से विषयों के बारे में विधान बना सकते हैं उसके लिए सातवीं अनुसूची की विधायी सूची में दी गई प्रविष्टियों द्वारा लगाई गई परिसीमाएं,[81]

(iii) संविधान के अन्य आज्ञापक उपबंध जो विधायी शक्ति पर परिसीमा के रूप में हैं जैसे अनुच्छेद 286,[82] अनुच्छेद 301,[83] अनुच्छेद 303,[84]

(iv) यदि विधान मंडल सम्यकतः गठित नहीं है तो इसके द्वारा बनाई गई विधि अविधिमान्य होगी,[85]

(v) राज्य द्वारा बनाए गए विधान की दशा में इसके अतिरिक्त भी कुछ परिसीमाएं हैं, जैसे (क) उसके प्रवर्तन का विस्तार राज्य की सीमाओं के बाहर नहीं हो सकता जब तक कि उससे कुछ राज्यक्षेत्रीय संबंध न हो, (ख) वह राज्य के प्रयोजनों के लिए होनी चाहिए ।[86]

विधान मंडल की शक्तियों पर संविधान के बाहर की किसी बात से बंधन नहीं लगाया जा सकता जैसे सरकार द्वारा दिए गए वन की बाध्यता[87] या सम्राट द्वारा दिए गए अनुदान या किसी देशी रियासत के शासक द्वारा दिया गया अनुदान या किया गया करार ।[88]

संसद् द्वारा और राज्यों के विधान मंडलों द्वारा बनाई गई विधियों की विषय-वस्तु ।

246. (1) **खंड (2) और खंड (3) में किसी बात के होते हुए भी, संसद् को सातवीं अनुसूची की सूची 1 में (जिसे इस संविधान में "संघ सूची" कहा गया है) प्रगणित किसी भी विषय के संबंध में विधि बनाने की अनन्य शक्ति है ।**

(2) **खंड (3) में किसी बात के होते हुए भी, संसद् को और खंड (1) के अधीन रहते हुए ***[89] किसी राज्य के विधान मंडल को भी, सातवीं अनुसूची की सूची 3 में (जिसे इस संविधान में "समवर्ती सूची" कहा गया है) प्रगणित किसी भी विषय के संबंध में विधि बनाने की शक्ति है ।**

(3) **खंड (1) और खंड (2) के अधीन रहते हुए ***[89] किसी राज्य के विधान मंडल को सातवीं अनुसूची की सूची 2 में (जिसे इस संविधान में "राज्य सूची" कहा गया है) प्रगणित किसी भी विषय के संबंध में उस राज्य या उसके किसी भाग के लिए विधि बनाने की अनन्य शक्ति है ।**

(4) **संसद् को भारत के राज्यक्षेत्र के ऐसे भाग के लिए [90][*जो किसी राज्य*] के अंतर्गत नहीं है, किसी भी विषय के संबंध में विधि बनाने की शक्ति है, चाहे वह विषय राज्य सूची में प्रगणित विषय ही क्यों न हो ।**

80. *बहराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 123 (*145*); *आर.एम.डी.सी.* बनाम *भारत संघ*, (1957) एस.सी.ए. 912 (*922*) ।

81. तुलना कीजिए, *मुंबई राज्य* बनाम *यूनाइटेड मोटर्स*, (1953) एस.सी.आर. 1069 ।

82. केरल शिक्षा विधेयक, ए. 1958 एस.सी. 956 (*966*) के मामले में ।

83. *आटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1406 ।

84. *मुंबई राज्य* बनाम *चमरबागवाला*, ए. 1957 एस.सी. 699 ।

85. तुलना कीजिए, *विनोद* बनाम *हिमाचल प्रदेश राज्य*, ए 1959 एस.सी. 223 ।

86. *बिहार राज्य* बनाम *चारुशीला*, ए. 1959 एस.सी 1002; *अनंत* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी 853, *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 452 ।

87. *उमेघ सिंह* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 540 (*547*) ।

88. *शुभलक्ष्मी मिल्स* बनाम *भारत संघ*, (1962) 45 आई.टी.आर. 483 (एस.सी.) ।

89. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

90. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में" शब्दों के स्थान पर "जो किसी राज्य" शब्द प्रतिस्थापित किए गए ।

खंड (1) : 'खंड (2) और खंड (3) में किसी बात के होते हुए भी' — इन शब्दों से परिसंघ की सर्वोच्चता स्थापित होती है । अर्थात् संघ और राज्य की शक्तियों की बीच जब टकराव होता है तब सूची 1 में उल्लिखित संघ की शक्तियां सूची 2[91] और सूची 3[92] में प्रमाणित राज्य शक्तियों पर अभिभावी होंगी ।[93]

किंतु संविधान के अनुच्छेद 246(1) में अधिकथित परिसंघ की सर्वोच्चता के नियम का आश्रय तभी लिया जा सकता है जब संघ सूची और राज्य सूची की प्रविष्टियों में ऐसा विरोध है कि उसे सुलझाया नहीं जा सकता । दोनों सूचियों की प्रविष्टियों में परस्पर विरोध होने पर दोनों सूचियों का एक साथ निर्वचन करना चाहिए । किसी को भी संकीर्ण या निर्बन्धित अर्थ नहीं देना चाहिए । दूसरे, दोनों प्रविष्टियों का इस प्रकार अर्थ लगाने का प्रयत्न करना चाहिए जिससे अधिकारिता में टकराव न हो ।[94] तीसरे, यदि *'सार और मर्म'* के सिद्धांत को लागू करने पर आक्षेपित अधिनियम अनन्य रूप से एक सूची में आता है और दूसरी सूची में उसका अतिक्रमण आनुषंगिक है तो यह माना जाएगा कि दोनों सूचियों में कोई संघर्ष नहीं है ।[95]

खंड (3) : 'खंड (1) और खंड (2) के अधीन रहते हुए' — पूर्ववर्ती खंडों के साथ पढ़े जाने पर इस खंड से निम्नलिखित परिणाम निकलते हैं[96] —

(i) जहां सूची 2 में कोई प्रविष्टि साधारण शब्दों में है और उस प्रविष्टि का कुछ भाग स्पष्ट शब्दों में सूची 1 में है तो सूची 2 में की प्रविष्टि के होते हुए भी सूची 1 की प्रविष्टि प्रभावी होगी ।[96]

(ii) जहां सूची 1 की प्रविष्टि का सूची 2 की किसी प्रविष्टि के साथ मेल-मिलाप नहीं हो पाता वहां सूची 1 की प्रविष्टि अभिभावी होगी ।[96]

खंड 4 : संघ राज्यक्षेत्र की बाबत संसद् की शक्ति — इस खंड के आधार पर संघ की विधायी शक्ति और परिणामस्वरूप कार्यपालिका शक्ति का विस्तार संघ राज्यक्षेत्र के संबंध में सभी विधायी सूचियों पर है ।[97] इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि संघ सरकार को संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक को कार्यपालक निदेश देने की शक्ति है और प्रशासक इस बात के लिए आबद्धकर है कि उन्हें क्रियान्वित करे । यदि अनुच्छेद 240 के अधीन राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए विनियम से कार्यपालिक निदेश असंगत हैं तो प्रशासक निदेशों का पालन नहीं करेगा ।[97] अनुच्छेद 240(2) के अधीन विनियमों का अध्यारोही प्रभाव है ।

कुछ अतिरिक्त न्यायालयों की स्थापना का उपबंध करने की संसद् की शक्ति ।

247. **इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, संसद् अपने द्वारा बनाई गई विधियों के या किसी विद्यमान विधि के जो संघ सूची में प्रगणित विषय के संबंध में है, अधिक अच्छे प्रशासन के लिए अतिरिक्त न्यायालयों की स्थापना का विधि द्वारा उपबंध कर सकेगी ।**

अवशिष्ट विधायी शक्तियां ।

248. (1) **संसद् को किसी ऐसे विषय के संबंध में, जो समवर्ती सूची या राज्य सूची में प्रगणित नहीं है, विधि बनाने की अनन्य शक्ति है ।**

91. *सुधीर* बनाम *धन-कर अधिकारी*, ए. 1969 एस.सी. 59 (*62*) ।
92. *इंदु भूषण* बनाम *राम सुंदरी*, ए. 1970 एस.सी. 228 (*235*) ।
93. *सुब्रह्मण्यम्* बनाम *मुत्तुस्वामी*, ए. 1941 एफ.सी. 47 ।
94. *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, (1951) एस.सी.आर 682 ।
95. *एस.पी.सी.* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1863 (पैरा 13-15); *गंगा शुगर कारपोरेशन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 286 (पैरा 28-40); *टीकारामजी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1956 एस.सी. 676 ।
96. *के.एस.ई. बोर्ड* बनाम *इंडियन एल्युमिनियम कंपनी*, ए. 1976 एस.सी. 1031 (पैरा 5) (सी.बी.) ।
97. *फर्नांडिस* बनाम *उप-मुख्य नियंत्रक*, ए. 1975 एस.सी. 1208 (पैरा 24) ।

(2) ऐसी शक्ति के अंतर्गत ऐसे कर के अधिरोपण के लिए जो उन सूचियों में से किसी में वर्णित नहीं है, विधि बनाने की शक्ति है ।

अनुच्छेद 248 : अवशिष्ट विधायी शक्ति — अवशिष्ट शक्ति का प्रयोग तभी किया जाता है जब और कुछ शेष न रहे अर्थात् जब तीनों सूचियों की सभी प्रविष्टियां बिल्कुल समाप्त हो जाएं ।[97] दूसरे शब्दों में जब वह विषय-वस्तु तीनों सूचियों की किसी भी प्रविष्टि में न आती हो ।[98] यदि दो प्रकार के अर्थान्वयन संभव हैं जिनमें से एक में अवशिष्ट शक्ति का आश्रय नहीं लिया जाएगा और दूसरे में इस प्रकार आश्रय लिया जाएगा तो पहले प्रकार के अर्थान्वयन को वरीयता दी जाएगी ।[99]

यह अनुच्छेद संघ और राज्य के बीच लागू होता है । संघ राज्यक्षेत्रों के लिए अनुरूप उपबंध अनुच्छेद 246(4) है ।[100]

राज्य सूची में के विषय के संबंध में राष्ट्रीय हित में विधि बनाने की संसद् की शक्ति ।

249. (1) इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, यदि राज्य सभा ने उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई सदस्यों द्वारा समर्थित संकल्प द्वारा घोषित किया है कि राष्ट्रीय हित में यह आवश्यक या समीचीन है कि संसद् राज्य सूची में प्रगणित ऐसे विषय के संबंध में, जो उस संकल्प में विनिर्दिष्ट है, विधि बनाए तो जब तक वह संकल्प प्रवृत्त है संसद् के लिए उस विषय के संबंध में भारत के संपूर्ण राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए विधि बनाना विधिपूर्ण होगा ।

(2) खंड (1) के अधीन पारित संकल्प एक वर्ष से अनधिक ऐसी अवधि के लिए प्रवृत्त रहेगा जो उसमें विनिर्दिष्ट की जाए :

परंतु यदि और जितनी बार किसी ऐसे संकल्प को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प खंड (1) में उपबंधित रीति से पारित हो जाता है तो और उतनी बार ऐसा संकल्प उस तारीख से, जिसको वह इस खंड के अधीन अन्यथा प्रवृत्त नहीं रहता, एक वर्ष की और अवधि तक प्रवृत्त रहेगा ।

(3) संसद् द्वारा बनाई गई कोई विधि, जिसे संसद् खंड (1) के अधीन संकल्प के पारित होने के अभाव में बनाने के लिए सक्षम नहीं होती, संकल्प के प्रवृत्त न रहने के पश्चात् छह मास की अवधि की समाप्ति पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के सिवाय प्रभावी नहीं रहेगी जिन्हें उक्त अवधि की समाप्ति से पहले किया गया है या करने का लोप किया गया है ।

यदि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में हो तो राज्य सूची में के विषय के संबंध में विधि बनाने की संसद् की शक्ति ।

250. (1) इस अध्याय में किसी बात के होते हुए भी, संसद् को, जब तक आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, राज्य सूची में प्रगणित किसी भी विषय के संबंध में भारत के संपूर्ण राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए विधि बनाने की शक्ति होगी ।

(2) संसद् द्वारा बनाई गई कोई विधि, जिसे संसद् आपात की उद्घोषणा के अभाव में बनाने के लिए सक्षम नहीं होती, उद्घोषणा के प्रवर्तन में न रहने के पश्चात् छह मास की अवधि की समाप्ति पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के सिवाय प्रभावी नहीं रहेगी जिन्हें उक्त अवधि की समाप्ति से पहले किया गया है या करने का लोप किया गया है ।

98. *द्वितीय दान-कर अधिकारी* बनाम *हजरत*, ए. 1970 एस.सी. 999 (*1001*) ।
99. *माणिक्कयसुंदरम्* बनाम *नायडु*, (1946) एफ.सी.आर. 67 ।
100. *जादब* बनाम *हिमाचल प्रदेश प्रशासन*, (1960) 3 एस.सी.आर. 755 (*761*) ।

251. अनुच्छेद 249 और अनुच्छेद 250 की कोई बात किसी राज्य के विधान मंडल की ऐसी विधि बनाने की शक्ति को, जिसे इस संविधान के अधीन बनाने की शक्ति उसको है, निर्बन्धित नहीं करेगी किंतु यदि किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि का कोई उपबंध संसद् द्वारा बनाई गई विधि के, जिसे उक्त अनुच्छेदों में से किसी अनुच्छेद के अधीन बनाने की शक्ति संसद् को है, किसी उपबंध के विरुद्ध है तो संसद् द्वारा बनाई गई विधि अभिभावी होगी चाहे वह राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि से पहले या उसके बाद में पारित की गई हो और राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि उस विरोध की मात्रा तक अप्रवर्तनीय होगी किंतु ऐसा तभी तक होगा जब तक संसद् द्वारा बनाई गई विधि प्रभावी रहती है ।

संसद् द्वारा अनुच्छेद 249 और अनुच्छेद 250 के अधीन बनाई गई विधियों और राज्यों के विधान मंडलों द्वारा बनाई गई विधियों में असंगति ।

252. (1) यदि किन्हीं दो या अधिक राज्यों के विधान मंडलों को यह वांछनीय प्रतीत होता है कि उन विषयों में से, जिनके संबंध में संसद् को अनुच्छेद 249 और अनुच्छेद 250 में यथा उपबंधित के सिवाय राज्यों के लिए विधि बनाने की शक्ति नहीं है, किसी विषय का विनियमन ऐसे राज्यों में संसद् विधि द्वारा करे और यदि उन राज्यों के विधान मंडलों के सभी सदन उस आशय के संकल्प पारित करते हैं तो उस विषय का तदनुसार विनियमन करने के लिए कोई अधिनियम पारित करना संसद् के लिए विधिपूर्ण होगा और इस प्रकार पारित अधिनियम ऐसे राज्यों को लागू होगा और ऐसे अन्य राज्य को लागू होगा, जो तत्पश्चात् अपने विधान मंडल के सदन द्वारा या जहां दो सदन हैं वहां दोनों सदनों में से प्रत्येक सदन इस निमित्त पारित संकल्प द्वारा उसको अंगीकार कर लेता है ।

दो या अधिक राज्यों के लिए उनकी सहमति से विधि बनाने की संसद् की शक्ति और ऐसी विधि का किसी अन्य राज्य द्वारा अंगीकार किया जाना ।

(2) संसद् द्वारा इस प्रकार पारित किसी अधिनियम का संशोधन या निरसन इसी रीति से पारित या अंगीकृत संसद् के अधिनियम द्वारा किया जा सकेगा, किंतु उसका उस राज्य के संबंध में संशोधन या निरसन जिसको वह लागू होता है, उस राज्य के विधान मंडल के अधिनियम द्वारा नहीं किया जाएगा ।

अनुच्छेद 252(1) : प्रायोजित और अंगीकार करने वाले राज्यों को संसद् द्वारा बनाई गई विधि का लागू होना — इस खंड के दोनों भागों को मिलाकर पढ़ने से यह अर्थ निकलता है कि जब दो या अधिक राज्यों द्वारा पारित संकल्पों के अनुसरण में संसद् द्वारा बनाई गई विधि का उस अधिनियम के प्रारंभ की तारीख से प्रायोजक राज्यों पर विस्तार होगा और ऐसे अन्य राज्यों पर जो उस विधि को बाद में अंगीकार करें उस तारीख से विस्तार होगा जिसको अंगीकार करने वाले राज्य अंगीकार करने का संकल्प पारित करते हैं । इस बात से कोई अन्तर नहीं पड़ेगा कि वे प्रायोजक राज्य नहीं थे अर्थात् वे ऐसे राज्य नहीं थे जिन्होंने प्रारंभ में संकल्प पारित करके संसद् को वह विधायी शक्ति दी थी जो पहले से संसद् के पास नहीं थी।[1]

इस प्रकार संसद् जो अधिनियम पारित करती है वह संघ विधि होता है राज्य विधि नहीं ।[2]

253. इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, संसद् को किसी अन्य देश या देशों के साथ की गई किसी संधि, करार या अभिसमय अथवा किसी अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन, संगम या अन्य निकाय में किए गए किसी विनिश्चय के कार्यान्वयन के लिए भारत के संपूर्ण राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग के लिए कोई विधि बनाने की शक्ति है ।

अंतरराष्ट्रीय करारों को प्रभावी करने के लिए विधान ।

1. *भारत संघ बनाम वालवय्या*, ए. 1979 एस.सी. 1415 (पैरा 48-53) ।
2. *आर.एम.डी.सी. बनाम मैसूर राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 594 ।

'इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी' — इन शब्दों का तात्पर्य यह है कि संघ और राज्यों के बीच विधायी शक्तियों का वितरण इस अनुच्छेद 253 के अधीन विधि बनाने की संसद् की शक्ति पर कोई निर्बन्धन नहीं होगा, अर्थात् — संसद् सूची 2 में सम्मिलित विषयों पर विधान बनाने के लिए सक्षम होगी यदि संधि या करार के कार्यान्वयन के लिए ऐसा करना आवश्यक है ।[3] संविधान का संशोधन किए बिना भारत के किसी राज्यक्षेत्र का अध्यर्पण नहीं किया जा सकता ।[4] किंतु सीमा विवाद का निपटारा अध्यर्पण करना नहीं है और बिना संविधान का संशोधन किए या विधान बनाए निपटारे को प्रभावी किया जा सकता है ।[3]

संसद् द्वारा बनाई गई विधियों और राज्यों के विधान मंडलों द्वारा बनाई गई विधियों में असंगति ।

254. (1) **यदि किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि का कोई उपबंध संसद् द्वारा बनाई गई विधि के, जिसे अधिनियमित करने के लिए संसद् सक्षम है, किसी उपबंध के या समवर्ती सूची में प्रगणित किसी विषय के संबंध में विद्यमान विधि के किसी उपबंध के विरुद्ध है तो खंड (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, यथास्थिति, संसद् द्वारा बनाई गई विधि, चाहे वह ऐसे राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि से पहले या उसके बाद में पारित की गई हो, या विद्यमान विधि, अभिभावी होगी और उस राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि उस विरोध की मात्रा तक शून्य होगी ।**

(2) **जहां [5]*** राज्य के विधान मंडल द्वारा समवर्ती सूची में प्रगणित किसी विषय के संबंध में बनाई गई विधि में कोई ऐसा उपबंध अंतर्विष्ट है जो संसद् द्वारा पहले बनाई गई विधि के या उस विषय के संबंध में किसी विद्यमान विधि के उपबंधों के विरुद्ध है तो यदि ऐसे राज्य के विधान मंडल द्वारा इस प्रकार बनाई गई विधि को राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखा गया है और उस पर उसकी अनुमति मिल गई है तो वह विधि उस राज्य में अभिभावी होगी :**

परंतु इस खंड की कोई बात संसद् को उसी विषय के संबंध में कोई विधि, जिसके अंतर्गत ऐसी विधि है, जो राज्य के विधान मंडल द्वारा इस प्रकार बनाई गई विधि का परिवर्धन, संशोधन, परिवर्तन या निरसन करती है, किसी भी समय अधिनियमित करने से निवारित नहीं करेगी ।

खंड (1) : राज्य विधि के संघ विधि से असंगत होने पर संघ विधि का अभिभावी होना — असंगति का प्रश्न[6] समवर्ती सूची में प्रगणित विषयों के संबंध में ही उत्पन्न होता है[7-8] (सातवीं अनुसूची की सूची 3) । इस सूची के संबंध में संघ और राज्य दोनों ही विधान मंडलों को समवर्ती शक्तियां हैं इसलिए दोनों विधान मंडलों द्वारा एक ही विषय से संबंधित विधि के बनाए जाने पर दोनों के बीच संघर्ष का प्रश्न अनिवार्य रूप से उठ जाता है । यदि समवर्ती विषय से संबंधित राज्य विधि उसी विषय से संबंधित संघ विधि से असंगत है तो संघ विधि अभिभावी होगी चाहे वह पहले बनाई गई हो या बाद में और राज्य की विधि विरोध की मात्रा तक शून्य होगी ।

संघ की संसद् द्वारा किसी विषय पर विधायन किए जाने से ही राज्य विधि शून्य नहीं हो जाती । राज्य विधान मंडल को उस समवर्ती विषय की बाबत विधान बनाने से

3 *मगनभाई* बनाम *भारत संघ*, ए 1969 एससी 785 (*798*) ।

4 बेरुबारी यूनियन का मामला, ए 1960 एससी 845 ।

5 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

6 *के.एस.ई. बोर्ड* बनाम *इंडियन एल्युमिनियम कंपनी*, ए 1976 एससी. 1031 (पैरा 11) ।

7 *दीप चंद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1959 एससी 468; *प्रेमनाथ* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1959 एससी. 749; *करुणानिधि* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एससी 898 (पैरा 8) ।

8. *ऊखा* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए 1963 एस.सी. 1531 (*1541*, पैरा 20) ।

निवारित नहीं किया जा सकता जिस पर पहले से संघ की विधि विद्यमान है । अनुच्छेद 254 वहीं लागू होगा जहां राज्य की विधि संघ के अधिनियम से असंगत है[9] जिसका यह अर्थ हुआ कि दोनों एक साथ विद्यमान नहीं रह सकते ।[10] वर्तमान अनुच्छेद के निर्वचन में "*स्थान भरे जाने का सिद्धांत*" लागू होता है ।[11]

अनुच्छेद 254 लागू करने का प्रश्न तभी उत्पन्न होता है जब राज्य विधि "*सार और मर्म*" में[12] समवर्ती सूची से संबंधित विधि है । यदि वह राज्य सूची के अंतर्गत आती है और आनुषंगिक रूप से समवर्ती सूची को छूती है तो अनुच्छेद 254 लागू नहीं होगा ।[13]

जो पक्षकार राज्य विधि की विधिमान्यता पर आक्षेप करता है उस पर यह साबित करने का भार होगा कि असंगतता है और वही यह भी साबित करेगा कि कितनी असंगतता है ।[14]

'विरोध' — राज्य विधि निम्नलिखित रीति में विरोधकारी हो सकती है —

(I) जब दोनों उपबंधों में सीधा संघर्ष हो,[7-8] जैसे

(क) यदि एक का पालन किया जाए तो दूसरे की अवज्ञा हो जाएगी,

(ख) एक का अनुपालन किए बिना भी यदि दोनों का अनुपालन करना संभव है तो भी दो अधिनियमितियां परस्पर असंगत हो सकती हैं । "विरोध" केवल उन मामलों तक ही सीमित नहीं है जिसमें दोनों विधान मंडलों के बीच सीधा टकराव है अर्थात् जहां एक कहता है करो और दूसरा कहता है मत करो । टकराव वहां भी हो सकता है जब दोनों विधियां एक ही क्षेत्र में प्रवृत्त होती हैं और दोनों एक साथ अस्तित्व में नहीं रह सकतीं । जैसे दोनों में एक ही अपराध के लिए दंड विहित किया गया है किंतु दोनों की मात्रा में या प्रकार में अंतर है या दोनों में विहित प्रक्रिया में अंतर है । ऐसे सब मामलों में राज्य विधि पर संसद् द्वारा बनाई गई विधि अनुच्छेद 254(2) के अधीन अभिभावी होगी । अनुच्छेद 254(2) के प्रयोजनों के लिए "विरोध" है या नहीं इसका अवधारण करने के लिए विवक्षित निरसन का सिद्धांत लागू किया जा सकता है ।[8, 15]

(II) संघ और राज्य के विधान के बीच सीधा टकराव न होते हुए भी जहां यह स्पष्ट है कि संघ की संसद् का यह आशय था कि उसका विधान उस विषय पर संपूर्ण और निःशेषकारी संहिता के रूप में हो तो यह माना जाएगा कि संघ विधि ने उस विषय से संबंधित राज्य विधान का स्थान ले लिया है ।[14]

किंतु यदि संघ विधि स्वयं ही यह मानती है कि उसने जो साधारण उपबंध बनाए हैं उन पर अन्य विधियों से निर्बन्धन आदि अधिरोपित किए जा सकते हैं तो राज्य की ऐसी स्थानीय विधियों के विशेष उपबंध, संघ विधि के विरोधी नहीं समझे जा सकते ।[16] राज्य विधि के उन उपबंधों के बारे में भी ऐसी ही स्थिति है जो कि ऐसी विषयवस्तु के संबंध में है जो केन्द्रीय अधिनियम का विषय नहीं है ।[17]

9 *अमलगमेटिड इलैक्ट्रिसिटी कंपनी* बनाम *अजमेर नगरपालिका*, ए. 1969 एस.सी. 227 (*234*) ।

10. *जवेर भाई* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 752 ।

11 *श्यामकांत* बनाम *रामभजन*, ए. 1939 एफ.सी. 74 (*83*) ।

12 *वेस्टर्न कोलफील्ड्स* बनाम *विशेष क्षेत्र विकास*, ए. 1982 एस.सी. 697 (पैरा 26-29) ।

13 *कृष्ण* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 297 (*303*) ।

14 *टीका रामजी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1956) एस.सी.आर. 393; *असम राज्य* बनाम *हरिजन यूनियन*, ए. 1967 एस.सी. 442, *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *फारूकी*, ए. 1972 एस.सी. 1738 ।

15 *नगर निगम* बनाम *शिव शंकर*, ए. 1971 एस.सी. 815 ।

16 *विंध्य प्रदेश राज्य* बनाम *मोरध्वज*, ए. 1960 एस.सी. 796 (*800*); *हरियाणा राज्य* बनाम *चानन*, ए. 1976 एस.सी. 1654 ।

17. *अहमदाबाद एम.ओ. एसोसिएशन* बनाम *ठाकुर*, ए. 1967 एस.सी. 1091 (*1097*) ।

(iii) जहां केन्द्रीय अधिनियम निःशेषकारी नहीं है वहां भी यदि राज्य अधिनियम भी उसी क्षेत्र में प्रवृत्त होता है तो विरोध का प्रश्न खड़ा हो जाएगा ।[14, 18] जब तक संसद् और राज्य विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधियां एक ही क्षेत्र में प्रवृत्त न हों तब तक विरोध का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता ।[18] यदि वे पृथक् और सुभिन्न विषयों के बारे में हैं तो चाहे वे विषय संस्पर्शी और एक-दूसरे से जुड़े हुए हों तो भी विरोध का प्रश्न उत्पन्न नहीं होगा ।[14, 19]

(iv) जब अनुच्छेद 254 के अधीन विरोध का प्रश्न उत्पन्न होता है तब दोनों अधिनियमितियों को सुमेलित करने का पूरा प्रयत्न किया जाना चाहिए और उनका इस प्रकार अर्थ लगाया जाना चाहिए जिससे वे एक-दूसरे के विरोधी न रहें । सावधानीपूर्वक यह प्रयत्न किया जाना चाहिए कि वे दोनों एक-दूसरे पर अतिक्रमण किए बिना विभिन्न क्षेत्रों में प्रवृत्त हों ।[20]

जब दोनों अधिनियम एक-दूसरे के साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते हैं या यदि दोनों साथ-साथ विद्यमान रहें तो उसके विचित्र परिणाम होंगे और ऐसी दशा में वे परस्पर विरोधी माने जाएंगे ।[21]

"विरोध की मात्रा तक" — जब कोई राज्य अधिनियम केन्द्रीय विधि का विरोधी है तो सम्पूर्ण अधिनियम शून्य नहीं होता किंतु उतनी मात्रा में शून्य होता है जितना केन्द्रीय अधिनियम के विरोध में है (पृथक्करण के सिद्धांत के अधीन रहते हुए) ।[22-23] जब वे दोनों एक ही क्षेत्र में प्रवृत्त होते हैं तब वह क्षेत्र उस विषय वस्तु के *"सार और मर्म"* से संबंधित हो सकता है । जब दोनों एक-दूसरे में व्याप्त हों तब विरोध पूर्ण हो जाता है और संपूर्ण अधिनियम शून्य बन जाता है ।[22] ऐसा भी होता है कि संघ की विधि भविष्यलक्षी हो और पहले की गई बातों के बारे में राज्य विधि प्रभावी हो ।[22]

खंड (2) : राष्ट्रपति की अनुमति से विधिमान्यकरण — खंड (1) में अधिकथित साधारण अधिनियम में खंड (2) द्वारा एक अपवाद जोड़ा गया है । यदि राष्ट्रपति किसी ऐसी राज्य विधि को अनुमति देता है जो उसके विचार के लिए आरक्षित रखी गई थी [अनुच्छेद 200] तो पहले से बनी हुई संघ विधि की विरोधी होते हुए भी वह राज्य विधि अभिभावी होगी ।[19, 24] किंतु ऐसी दशा में, —

(i) केन्द्रीय अधिनियम, राज्य विधि के समक्ष, दोनों के बीच असंगतता की मात्रा तक ही अभ्यर्पण करेगा,[15] उससे अधिक नहीं,[25]

(ii) संशोधन अधिनियम को राष्ट्रपति की अनुमति मिलने से मूल अधिनियम में विरोध का जो दोष है वह दूर नहीं होगा ।[26]

(iii) राज्य विधि को जो उच्चता मिली है वह संसद द्वारा खंड (2) के परंतुक के अधीन विधान बनाकर छीनी जा सकती है ।[25]

परंतुक — इस अनुच्छेद के खंड (2) के परंतुक द्वारा संघ की संसद् को यह शक्ति

---

18 *दीपचंद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 648 (*665*); *तनसुख* बनाम *नीलरतन*, ए. 1966 एस.सी. 1780 ।

19 *करुणानिधि* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एस.सी. 898 (पैरा 4, 35) (सी.बी.) ।

20 *श्यामकांत* बनाम *रामभजन*, ए. 1939 एफ.सी. 74 (*83*); *रघुबीर* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 2037 (पैरा 9-10) ।

21. *ओम प्रकाश* बनाम *राज्य*, (1957) एस.सी.आर. 423; *ऊखा* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, (1964) 1 एस.सी.ए. 56 (*76*) ।

22. *आर.एम.डी.सी.* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 594 ।

23. *आर.एम.डी.सी.* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी. 628 ।

24 *यू.पी.ई.एस. कंपनी* बनाम *शुक्ला*, ए. 1970 एस.सी. 237 (*239*) ।

25. *ऊखा* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, (1964) 1 एम.सी.ए. 56 (*75*) ।

26. *ब्रज भूषण* बनाम *एस.डी.ओ.*, ए. 1955 पटना 1 (एस.बी.) ।

दी गई है कि वह विरोधी राज्य विधि का निरसन या संशोधन कर दे चाहे वह विधि राष्ट्रपति की अनुमति के आधार पर विधिमान्य हुई हो ।[10,19]

राज्य की असंगत विधि का निरसन या संशोधन संसद् द्वारा प्रत्यक्ष रूप से किया जा सकता है[14] या उसी विषय पर राज्य विधि के विरोध में विधि बनाकर किया जा सकता है ।[14] संसद् की पश्चात्वर्ती विधि अभिव्यक्त रूप से अनुच्छेद 254(2) के अधीन विधिमान्य की गई राज्य विधि का निरसन न भी करे तो जैसे ही राज्य की पश्चात्वर्ती विधि बनती है वैसे ही राज्य विधि शून्य हो जाएगी ।[27]

परंतुक के लागू होने की शर्तें — इस परंतुक के अधीन संसद् की राज्य विधि का निरसन करने की शक्तियों पर कुछ मर्यादाएं —

(क) संसद् द्वारा बनाई गई विधि (जो राज्य विधि का निरसन करने वाली है) उसी विषय की बाबत होनी चाहिए जिस विषय पर राज्य विधि है ।[27]

(ख) प्रश्नगत राज्य विधि राज्य विधान मंडल द्वारा समवर्ती सूची के विषय पर बनाई गई होनी चाहिए और उसमें ऐसे उपबंध होने चाहिए जो *संसद् की पूर्ववर्ती विधि के विरोध में है* । राज्य विधि को राष्ट्रपति की अनुमति होनी चाहिए । ऐसी विधि का ही इस परंतुक के अधीन संशोधन या निरसन किया जा सकता है । जहां राज्य विधि ऐसे क्षेत्र के लिए बनाई गई है जो संसद् द्वारा पहले से भरी नहीं गई है तो संसद् इस शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकेगी ।[27]

(ग) इस परंतुक द्वारा प्रदत्त निरसन की शक्ति अभिव्यक्त रूप से संसद् में निहित है । संसद् इस शक्ति को किसी कार्यपालक प्राधिकारी को प्रत्यायोजित नहीं कर सकती और संसद् द्वारा प्रत्यायोजित प्राधिकार के आधार पर दिए गए आदेश से किसी राज्य विधि का निरसन नहीं किया जा सकता ।[14]

सिफारिशों और पूर्व मंजूरी के बारे में अपेक्षाओं को केवल प्रक्रिया के विषय मानना ।

255. यदि संसद् के या *[28] किसी राज्य के विधान मंडल के किसी अधिनियम को —**

(क) जहां राज्यपाल की सिफारिश अपेक्षित थी वहां राज्यपाल या राष्ट्रपति ने,

(ख) जहां राजप्रमुख की सिफारिश अपेक्षित थी वहां राजप्रमुख या राष्ट्रपति ने,

(ग) जहां राष्ट्रपति की सिफारिश या पूर्व मंजूरी अपेक्षित थी वहां राष्ट्रपति ने,

अनुमति दे दी है तो ऐसा अधिनियम और ऐसे अधिनियम का कोई उपबंध केवल इस कारण अविधिमान्य नहीं होगा कि इस संविधान द्वारा अपेक्षित कोई सिफारिश नहीं की गई थी या पूर्व मंजूरी नहीं दी गई थी ।

पूर्ववर्ती मंजूरी के अभाव में पश्चात्वर्ती अनुमति से दोष दूर हो जाता है — यदि किसी विधेयक को अनुच्छेद 304 के परंतुक में यथाअपेक्षित पूर्व मंजूरी नहीं है तो इससे उस विधेयक के पारित होने पर जो अधिनियम बनेगा वह अविधिमान्य नहीं होगा — यदि उस विधेयक को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हो गई है । इस अविधिमान्यता के दोष को दूर करने के लिए एक दूसरा तरीका भी है, विधान मंडल अविधिमान्य अधिनियम के उपबंधों को पुनः अधिनियमित करके राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त कर सकता है ।[29] किंतु पश्चात्वर्ती विधेयक को अनुमति देकर राष्ट्रपति किसी पूर्ववर्ती अधिनियम को भूतलक्षी प्रभाव से विधिमान्यता नहीं दे सकता यदि अनुच्छेद 255 के अधीन राष्ट्रपति की अनुमति के अभाव में वह अविधिमान्य हो गया था । अविधिमान्य अधिनियम के अधीन किए गए कार्य भी विधिमान्य नहीं किए जा सकते । ऐसा करने का अर्थ होगा कि अनुच्छेद 255 का पालन करने या न करने का कोई महत्व नहीं है । राष्ट्रपति इस प्रकार की घोषणा करने के लिए सक्षम नहीं है ।[30]

27. *जवेरभाई* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 752 (*756-57*) : (1955) 1 एस.सी.आर. 799 ।
28. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा कुछ शब्दों और अक्षरों का लोप किया गया ।
29. *जवाहरमल* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 765 (*769, 771*) ।
30. *अब्दुल कादिर* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 182 (पैरा 16) ।

अध्याय 2 — प्रशासनिक संबंध

साधारण

राज्यों की और संघ की बाध्यता ।

256. प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका शक्ति का इस प्रकार प्रयोग किया जाएगा जिससे संसद् द्वारा बनाई गई विधियों का और ऐसी विद्यमान विधियों का, जो उस राज्य में लागू हैं, अनुपालन सुनिश्चित रहे और संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार किसी राज्य को ऐसे निदेश देने तक होगा जो भारत सरकार को उस प्रयोजन के लिए आवश्यक प्रतीत हों ।

न्यायालय का प्रवेश नहीं — यह अनुच्छेद किसी प्राइवेट पक्षकार को यह विधिक अधिकार प्रदान नहीं करता कि वह किसी न्यायालय के समक्ष यह कहे कि राज्य ने इस अनुच्छेद के अधीन दिए गए किसी निदेश का पालन नहीं किया है ।[31]

कुछ दशाओं में राज्यों पर संघ का नियंत्रण ।

257. (1) प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका शक्ति का इस प्रकार प्रयोग किया जाएगा जिससे संघ की कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में कोई अड़चन न हो या उस पर कोई प्रतिकूल प्रभाव न पड़े और संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार किसी राज्य को ऐसे निदेश देने तक होगा जो भारत सरकार को इस प्रयोजन के लिए आवश्यक प्रतीत हों ।

(2) संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार राज्य को ऐसे संचार साधनों के निर्माण और बनाए रखने के बारे में निदेश देने तक भी होगा जिनका राष्ट्रीय या सैनिक महत्व का होना उस निदेश में घोषित किया गया है :

परंतु इस खंड की कोई बात किसी राज मार्ग या जल मार्ग को राष्ट्रीय राज मार्ग या राष्ट्रीय जल मार्ग घोषित करने की संसद् की शक्ति को अथवा इस प्रकार घोषित राज मार्ग या जल मार्ग के बारे में संघ की शक्ति को अथवा सेना, नौसेना और वायुसेना संकर्म विषयक अपने कृत्यों के भागरूप संचार साधनों के निर्माण और बनाए रखने की संघ की शक्ति को निर्बन्धित करने वाली नहीं मानी जाएगी ।

(3) संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार किसी राज्य में रेलों के संरक्षण के लिए किए जाने वाले उपायों के बारे में उस राज्य को निदेश देने तक भी होगा ।

(4) जहां खंड (2) के अधीन संचार साधनों के निर्माण या बनाए रखने के बारे में अथवा खंड (3) के अधीन किसी रेल के संरक्षण के लिए किए जाने वाले उपायों के बारे में किसी राज्य को दिए गए किसी निदेश के पालन में उस खर्च से अधिक खर्च हो गया है जो, यदि ऐसा निदेश नहीं दिया गया होता तो राज्य के प्रसामान्य कर्तव्यों के निर्वहन में खर्च होता वहां उस राज्य द्वारा इस प्रकार किए गए अतिरिक्त खर्चों के संबंध में भारत सरकार द्वारा उस राज्य को ऐसी राशि का, जो करार पाई जाए या करार के अभाव में ऐसी राशि का, जिसे भारत के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा नियुक्त मध्यस्थ अवधारित करे, संदाय किया जाएगा ।

संघ के सशस्त्र बलों या अन्य बलों के अभिनियोजन द्वारा राज्यों की सहायता ।

257क. *संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 की धारा 33 द्वारा (20-6-1979 से) निरसित ।*

31. *ए.डी.एम. बनाम शुक्ला*, ए. 1976 एस.सी. 1207 (पैरा 463) ।

258. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति, किसी राज्य की सरकार की सहमति से उस सरकार को या उसके अधिकारियों को ऐसे किसी विषय से संबंधित कृत्य, जिन पर संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है, सशर्त या बिना शर्त सौंप सकेगा ।

कुछ दशाओं में राज्यों को शक्ति प्रदान करने आदि की संघ की शक्ति ।

(2) संसद् द्वारा बनाई गई विधि, जो किसी राज्य को लागू होती है ऐसे विषय से संबंधित होने पर भी, जिसके संबंध में राज्य के विधान मंडल को विधि बनाने की शक्ति नहीं है, उस राज्य या उसके अधिकारियों और प्राधिकारियों को शक्ति प्रदान कर सकेगी और उन पर कर्तव्य अधिरोपित कर सकेगी या शक्तियों का प्रदान किया जाना और कर्तव्यों का अधिरोपित किया जाना प्राधिकृत कर सकेगी ।

(3) जहां इस अनुच्छेद के आधार पर किसी राज्य अथवा उसके अधिकारियों या प्राधिकारियों को शक्तियां प्रदान की गई हैं या उन पर कर्तव्य अधिरोपित किए गए हैं वहां उन शक्तियों और कर्तव्यों के प्रयोग के संबंध में राज्य द्वारा प्रशासन में किए गए अतिरिक्त खर्चों के संबंध में भारत सरकार द्वारा उस राज्य को ऐसी राशि का, जो करार पाई जाए या करार के अभाव में ऐसी राशि का, जिसे भारत के मुख्य न्यायामूर्ति द्वारा नियुक्त मध्यस्थ अवधारित करे, संदाय किया जाएगा ।

खंड (1) : राष्ट्रपति द्वारा प्रत्यायोजन — इस खंड के अधीन संघ के[32] या राष्ट्रपति के,[33] कार्यपालक कृत्य प्रत्यायोजित किए जा सकते हैं — संघ के न्यायिक या विधायी कृत्य नहीं ।[32]

संघ की कार्यपालक शक्ति में अनुच्छेद 298 में विनिर्दिष्ट विषय आते हैं जिसके अंतर्गत संपत्ति के अनिवार्य अर्जन की शक्ति भी है ।[32]

जब खंड (1) द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में राष्ट्रपति किसी राज्य सरकार को या उसके अधिकारी को किसी अधिनियम के अधीन केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति का प्रयोग करने का प्राधिकार देता है तो ऐसे आदेश को निश्चित रूप से विधि का बल प्राप्त होगा ।[32] यदि प्रत्यायोजन प्रशासनिक शक्ति के बारे में है जो असांविधिक है तो उसे विधि का बल नहीं होगा ।

ऐसी दशा में जो कृत्य राज्य सरकार के अधिकारियों द्वारा किए जाते हैं वे केन्द्रीय सरकार के कृत्य होंगे राज्य सरकार के नहीं ।[34]

खंड (2) : संसद् द्वारा प्रत्यायोजन — खंड (1) के अधीन केवल कार्यपालक कृत्य राज्य को प्रत्यायोजित किए जा सकते हैं । खंड (2) के अधीन अधीनस्थ विधान बनाने की शक्ति का भी प्रत्यायोजन किया जा सकता है ।

खंड (1) के अधीन प्रत्यायोजन करने वाला प्राधिकारी राष्ट्रपति है । खंड (2) के अधीन यह कार्य संसद् अपने क्षेत्र में विधि बनाते हुए करती है ।

[35]**258क.** *इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल, भारत सरकार की सहमति से उस सरकार को या उसके अधिकारियों को ऐसे किसी विषय से संबंधित कृत्य, जिन पर उस राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है, सशर्त या बिना शर्त सौंप सकेगा ।*

संघ को कृत्य सौंपने की राज्यों की शक्ति ।

32. *जयंतीलाल* बनाम *राणा*, ए. 1964 एस.सी. 648 (666, न्या. सुब्बा राव और बाचू के अनुसार; बहुमत निर्णय का पृष्ठ 656 भी देखिए) ।

33. *शमशेर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2192 (पैरा 44) ।

34. तुलना कीजिए, *अनवर* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 337 (339) ।

35. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 18 द्वारा अंतःस्थापित ।

अनुच्छेद 258क का प्रविषय — अनुच्छेद 258 संघ को यह प्राधिकार देता है कि वह अपने कृत्य राज्य की सहमति से राज्य को प्रत्यायोजित करे । अनुच्छेद 258क, जिसे 1956 में जोड़ा गया है, राज्य को यह प्राधिकार देता है कि वह अपने कृत्य संघ की सहमति से संघ को प्रत्यायोजित कर दे ।

पहली अनुसूची के भाग ख के राज्यों के सशस्त्र बल ।

259. *संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 29 और अनुसूची द्वारा निरसित ।*

भारत के बाहर के राज्यक्षेत्रों के संबंध में संघ की अधिकारिता ।

260. **भारत सरकार किसी ऐसे राज्यक्षेत्र की सरकार से, जो भारत के राज्यक्षेत्र का भाग नहीं है, करार करके ऐसे राज्यक्षेत्र की सरकार में निहित किन्हीं कार्यपालक, विधायी या न्यायिक कृत्यों का भार अपने ऊपर ले सकेगी, किंतु प्रत्येक ऐसा करार विदेशी अधिकारिता के प्रयोग से संबंधित तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन होगा और उससे शासित होगा ।**

सार्वजनिक कार्य, अभिलेख और न्यायिक कार्यवाहियां ।

261. (1) **भारत के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र, संघ के और प्रत्येक राज्य के सार्वजनिक कार्यों, अभिलेखों और न्यायिक कार्यवाहियों को पूरा विश्वास और पूरी मान्यता दी जाएगी ।**

(2) **खंड (1) में निर्दिष्ट कार्यों, अभिलेखों और कार्यवाहियों को साबित करने की रीति और शर्तें तथा उनके प्रभाव का अवधारण संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा उपबंधित रीति के अनुसार किया जाएगा ।**

(3) **भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग में सिविल न्यायालयों द्वारा दिए गए अंतिम निर्णयों या आदेशों का उस राज्यक्षेत्र के भीतर कहीं भी विधि के अनुसार निष्पादन किया जा सकेगा ।**

जल संबंधी विवाद

अंतरराज्यिक नदियों या नदी-दूनों के जल संबंधी विवादों का न्यायनिर्णयन ।

262. (1) **संसद्, विधि द्वारा, किसी अंतरराज्यिक नदी या नदी-दून के या उसमें जल के प्रयोग, वितरण या नियंत्रण के संबंध में किसी विवाद या परिवाद के न्यायनिर्णयन के लिए उपबंध कर सकेगी ।**

(2) **इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, संसद्, विधि द्वारा, उपबंध कर सकेगी कि उच्चतम न्यायालय या कोई अन्य न्यायालय खंड (1) में निर्दिष्ट किसी विवाद या परिवाद के संबंध में अधिकारिता का प्रयोग नहीं करेगा ।**

उच्चतम न्यायालय को यह अधिकारिता है कि वह अंतरराज्यिक जल विवाद अधिनियम, 1956 के अधीन नियुक्त अधिकरण की अधिकारिता की परिधि निश्चित करे किंतु उसे स्वयं विवाद का विनिश्चय करने की अधिकारिता नहीं है ।[36]

राज्यों के बीच समन्वय

अंतरराज्य परिषद् के संबंध में उपबंध ।

263. **यदि किसी समय राष्ट्रपति को यह प्रतीत होता है कि ऐसी परिषद् की स्थापना से लोक हित की सिद्धि होगी जिसे —**

(क) **राज्यों के बीच जो विवाद उत्पन्न हो गए हों उनकी जांच करने और उन पर सलाह देने,**

36. *तमिलनाडु राज्य बनाम कर्नाटक राज्य,* (1991) सप (1) एस.सी.सी 240

(ख) कुछ या सभी राज्यों के अथवा संघ और एक या अधिक राज्यों के सामान्य हित से संबंधित विषयों के अन्वेषण और उन पर विचार-विमर्श करने, या

(ग) ऐसे किसी विषय पर सिफारिश करने और विशिष्टतया उस विषय के संबंध में नीति और कार्यवाही के अधिक अच्छे समन्वय के लिए सिफारिश करने,

के कर्तव्य का भार सौंपा जाए तो राष्ट्रपति के लिए यह विधिपूर्ण होगा कि वह आदेश द्वारा ऐसी परिषद् की स्थापना करे और उस परिषद् द्वारा किए जाने वाले कर्तव्यों की प्रकृति को तथा उसके संगठन और प्रक्रिया को परिनिश्चित करे ।

डाबर बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*[37] में यह विवाद था कि दो केन्द्रीय अधिनियमों में से कौन सा लागू होना है । उसी के आधार पर यह निर्णय होना था कि कितना शुल्क देय होगा, कौन वसूल करेगा आधि । अर्थात् केन्द्र सरकार लेगी या राज्य सरकार । न्यायालय ने कहा कि इस प्रकार के मामलों के लिए अनुच्छेद 263 के अधीन परिषद् बन ही जानी चाहिए ।

37. ए. 1990 एस सी. 1914 (*1927*)

भाग 12

वित्त, संपत्ति, संविदाएं और वाद

अध्याय 1 — वित्त

साधारण

निर्वचन ।

264. इस भाग में, "वित्त आयोग" से अनुच्छेद 280 के अधीन गठित वित्त आयोग अभिप्रेत है ।

[1]* * *

विधि के प्राधिकार के बिना करों का अधिरोपण न किया जाना ।

265. कोई कर विधि के प्राधिकार से ही अधिरोपित या संगृहीत किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

विधि के प्राधिकार के बिना कोई कराधान नहीं — 1 अनुच्छेद 265 में यह उपबंध है कि कर का उद्ग्रहण और संग्रहण दोनों ही विधि के प्राधिकार के अधीन ही हो सकते हैं । जहां किसी कार्यपालक प्राधिकारी को किसी अविधिमान्य विधि या उसके अधीन बनाए गए नियमो द्वारा कर संग्रहण करने की शक्ति दी गई है वहा न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है ।[2] जहां विधि सांविधानिक है किंतु आक्षेपित कर विधि द्वारा प्राधिकृत नहीं है वहां भी न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है ।[3]

2. यदि कोई विनिर्दिष्ट सांविधानिक प्रतिषेध नहीं है तो विधान मडल एक ही विषय-वस्तु पर एक से अधिक बार कर लगा सकता है ।[4]

'विधि' — 'विधि के प्राधिकार' का अर्थ है विधिमान्य विधि जिससे तात्पर्य है, —

(क) जो कर लगाने का प्रस्ताव है वह कर लगाने वाले विधान मंडल की विधायी क्षमता के भीतर होना चाहिए ।[5-6] कर की विधिमान्यता का अवधारण कराधान विधि के अधिनियमित किए जाने के समय विधान मंडल की क्षमता के प्रति निर्देश से किया जाएगा । पश्चात्‌वर्ती परिवर्तनों की ओर ध्यान नहीं दिया जा सकता ।[7]

(ख) अधिनियम विधिमान्य होना चाहिए अर्थात् ऐसे निकाय द्वारा बना होना चाहिए जिसे विधायी प्राधिकार है और उस रीति का अनुपालन किया जाना चाहिए जिससे उसे विधि का बल प्राप्त होगा ।[8-9] विधि में यह उपधारणा है कि विहित प्रक्रिया का अनुसरण किया गया है ।[10]

---

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा खंड (ख) और (ग) का लोप किया गया ।
2. *छोटाभाई* बनाम *भारत संघ*, ए 1952 नागपुर 139 (*144*) ।
3. *मैसूर राज्य* बनाम *कावसजी*, (1970) 3 एस सी सी 710 (*715*) ।
4. *अविन्दर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1979 एस.सी 312 (पैरा 4) ।
5. *कुन्नाथात* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1961 एस सी. 552; *पूना नगरपालिका* बनाम *दत्तात्रेय*, ए 1965 एस सी. 555 ।
6. *बालाजी* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1962 एस.सी. 123 (*128*) ।
7. *अमलगमेटिड कोलफील्ड्स* बनाम *जनपद सभा*, ए 1961 एस.सी. 964 (*965*) ।
8. *गुलाम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 479 (*484*) ।
9. *भारत कला भंडार* बनाम *धामनगांव नगरपालिका*, ए. 1966 एस.सी. 249 (*262*) ।
10. *गोपाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 370 ।

(ग) विधान मंडल की कर लगाने की शक्ति का आभासी या कपटपूर्ण उपयोग नहीं होना चाहिए ।[5, 11]

(घ) कर अनुच्छेद 13 में अधिकथित शर्तों के उल्लंघन में नहीं होना चाहिए । दूसरे शब्दों में उससे किसी मूल अधिकार का उल्लंघन नहीं होना चाहिए जैसे अनुच्छेद 14,[11-12] अनुच्छेद 19(1)(क), और अनुच्छेद 19(1)(छ) ।[13-14]

(ङ) उससे संविधान के किसी ऐसे विनिर्दिष्ट उपबंध का उल्लंघन नहीं होना चाहिए जिससे किसी विशिष्ट विषय से संबंधित विधायी शक्ति पर कोई मर्यादा लगाई गई है जैसे अनुच्छेद 27,[15] 276(2),[16] 286,[17] 301[18] ।

इस संदर्भ में 'विधि' से विधान मंडल का अधिनियम अभिप्रेत है,[19] और इसमें अभिव्यक्त कानूनी प्राधिकार के बिना कोई कार्यपालक आदेश या नियम या अधीनस्थ विधान नहीं आ सकता ।[19] इस अनुच्छेद में 'प्रतिनिधित्व नहीं तो कर नहीं' का सिद्धांत समाविष्ट है । कार्यपालक आदेश,[8-16] या प्रशासनिक निदेश[20] या रूढ़ि[21] से कर का अधिरोपण न्यायोचित नहीं हो जाता । किंतु इसके अंतर्गत देशी रियासत के शासक का ऐसा आदेश आएगा जिसको विधि का बल है ।[22]

अधीनस्थ विधान की विधिमान्यता — कराधान तभी विधिमान्य होगा जब वह विधि द्वारा प्राधिकृत हो और साथ ही जिस अधिनियम द्वारा प्राधिकृत किया गया है[16] उसका कठोरता से पालन करते हुए उद्गृहीत या संगृहीत किया गया हो ।[23]

(क) किसी उपविधि, नियम या विनियम द्वारा कोई कर तभी अधिरोपित किया जा सकता है जब वह अधिनियम जिसके अधीन अधीनस्थ विधान बनाया गया है विनिर्दिष्ट रूप से कर को प्राधिकृत करता हो ।[24]

(ख) जब विधान मंडल की कराधान शक्ति पर संविधान ने मर्यादाएं लगाई हैं तो विधान मंडल द्वारा बनाई गई नगरपालिका या अन्य प्राधिकारी उन मर्यादाओं का अतिलंघन नहीं कर सकते ।[25]

(ग) अधिनियम द्वारा विहित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना चाहिए[24, 26] जैसे, जहां अधिनियम में यह उपबंध है कि अधिनियम के अधीन नियम बना कर शुल्क अधिरोपित किया जा सकता है वहां नियम बनाए बिना और विहित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना कार्यपालक आदेश द्वारा शुल्क अधिरोपित नहीं किया जा सकता ।[25]

---

11 *जगन्नाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1563 (*1570-72*) ।

12. *सूरजमल* बनाम *विश्वनाथ*, (1951) एस.सी.आर. 448 ।

13. तुलना कीजिए, *एक्सप्रेस न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1958 एस.सी. 578 (*614*) ।

14. *यासिन* बनाम *शहर क्षेत्र समिति*, (1952) एस.सी.आर 572 ।

15 तुलना कीजिए, *आयुक्त एच.आर.ई.* बनाम *लक्ष्मीन्द्र*, (1954) एस.सी.आर 1005 ।

16. *छोटाभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1006; *राम कृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1667 ।

17. तुलना कीजिए, *मुंबई राज्य* बनाम *यूनाइटेड मोटर्स*, (1953) एस.सी.आर. 1069 (*1077*) ।

18. तुलना कीजिए, *सैनिक मोटर्स* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1480 (*1485*); *अतियाबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 232 (*248-49, 256*) ।

19 *बिमल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 517 (*520*) ।

20. *मेहरा* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 1130 (*1131*) ।

21. *केरल राज्य* बनाम *जोसेफ*, ए. 1958 एस.सी. 296 ।

22. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *ग्वालियर शुगर कंपनी*, (1962) 2 एस.सी.आर. 619 ।

23. तुलना कीजिए, *गुलाम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1963 एस.सी. 379 (*384*) ।

24. *गोपाल नारायण* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 370 (*376*) ।

25. *जोषी टिंबर मार्ट* बनाम *कालीकट नगरपालिका*, ए. 1970 एस.सी. 265 (*266*) ।

26. *खुरई नगरपालिका* बनाम *कमल कुमार*, ए. 1965 एस.सी. 1321 (*1325*) ।

(घ) जहां अधिनियम में वे वस्तुएं गिनाई गई हैं जिन पर कर लगाया जा सकता है तो अधीनस्थ प्राधिकारी उस सूची में कुछ और नहीं जोड़ सकता। अधिनियम द्वारा प्रदत्त शक्ति का कठोरता से अर्थान्वयन किया जाना चाहिए।[25]

(ङ) जहां अधिनियम में यह उपबंध है कि अधीनस्थ प्राधिकारी किसी विनिर्दिष्ट कर की मंजूरी से ही कर का उद्ग्रहण कर सकता है तो बिना मंजूरी के किया गया उद्ग्रहण अविधिमान्य होगा।[23]

(च) जहां अधिनियम में अधीनस्थ विधान को भूतलक्षी प्रभाव देने की शक्ति प्रदान नहीं की गई है वहां नियम या अधिसूचना द्वारा किसी को भूतलक्षी प्रभाव से प्राधिकार नहीं दिया जा सकता।[27]

कराधान विधि की सांविधानिक परिसीमाएं — संघ और राज्य के विधान मंडलों के बीच विधायी सूचियों की सुसंगत प्रविष्टियों द्वारा कराधान की शक्तियों का जो विभाजन किया गया है उससे उत्पन्न परिसीमाओं के अतिरिक्त दोनों विधान मंडलों की कर लगाने की शक्ति पर हमारे संविधान के विशिष्ट उपबंधों द्वारा कुछ परिसीमाएं लगाई गई हैं जैसे, —

(i) अनुच्छेद 13 का उल्लंघन नहीं होना चाहिए,[28]

(ii) विधि के समान संरक्षण से वंचित नहीं किया जाना चाहिए[28] [अनुच्छेद 14],

(iii) उस अधिनियम द्वारा कारबार के अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन नहीं लगाए जाने चाहिए [अनुच्छेद 19(1)(छ)],

ऐसी कोई सांविधानिक अपेक्षा नहीं है कि कर लगाने के पहले विधान मंडल उस कर से प्रभावित होने वाले व्यक्तियों के आक्षेपों को सुने,[29]

(iv) कोई ऐसा कर नहीं लगाया जाएगा जिसके आगम किसी विशिष्ट धर्म या धार्मिक संप्रदाय की अभिवृद्धि या पोषण में व्यय किए जाएंगे [अनुच्छेद 27],

(v) कोई राज्य विधान मंडल या राज्य के भीतर कोई प्राधिकारी संघ की संपत्ति पर कर नहीं लगा सकता [अनुच्छेद 285],

(vi) संघ, राज्य की संपत्ति और आय पर कर नहीं लगा सकता [अनुच्छेद 280],

(vii) राज्य की, माल के क्रय या विक्रय पर कर लगाने की शक्ति अनुच्छेद 286 के अधीन है,

(viii) संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध करे उसके सिवाए कोई राज्य अनुच्छेद 287 में विनिर्दिष्ट मामलों में विद्युत के उपभोग या विक्रय पर कर नहीं लगा सकता।

इसके अतिरिक्त, —

(i) विधायी आकस्मिकता जैसे सांविधानिक प्रतिषेध के अभाव में एक ही व्यक्ति या एक ही विषय पर दोहरा कर लगाने के विरुद्ध कोई वर्जन नहीं है। एक ही विधान मंडल या दो विभिन्न विधान मंडल दो बार कर लगा सकते हैं,

(ii) कराधान विधि का प्रवर्तन भूतलक्षी हो सकता है।

हमारे संविधान के अधीन विधान मंडल भूतलक्षी प्रभाव से विधान बना सकते हैं और कराधान विधियां इस शक्ति का अपवाद नहीं हैं [केवल दाण्डिक विधियां अपवाद हैं, अनुच्छेद 20(1)]।[30] किसी कर को भूतलक्षी बनाने के पश्चात् यदि पहले से उद्गृहीत करों को भी उसके अंतर्गत लाया जाता है और यह उपबंध किया जाता है कि ऐसे कर का उद्ग्रहण

27. *आय-कर अधिकारी* बनाम *पुनूस*, ए. 1970 एस.सी. 385 (*387-88*)।

28. *कुन्नाथात* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 552; *केरल राज्य* बनाम *कुट्टि*, ए. 1969 एस.सी. 378; *गंगा शुगर कारपोरेशन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 286 (पैरा 42-46)।

29. *अविन्दर* बनाम *पंजाब राज्य*, (1979) 1 एस.सी.सी. 137 (पैरा 12); *भारत संघ* बनाम *साइनामाइड*, ए. 1987 एस.सी. 1802 (पैरा 5-8)।

30. *मोहम्मदभाई* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1517 (*1524*); *भारत संघ* बनाम *मदन गोपाल*, (1954) एस.सी.आर. 841।

विधिमान्य समझा जाएगा मानो संशोधित विधि कर के उद्ग्रहण के समय प्रवृत्त थी तो यह विधान मंडल द्वारा न्यायपालिका की शक्ति का अतिक्रमण नहीं होगा ।[31]

किंतु यदि न्यायालय के विनिश्चय के आधार को परिवर्तित किए बिना विधान मंडल कार्यपालक या कराधान अधिकारी को सीधे-सीधे निर्धारण करने का आदेश देता है या न्यायालय के प्रतिकूल आदेश के होते हुए भी कर वापस करने से इंकार करने का आदेश देता है तो ऐसी विधि असांविधानिक होगी क्योंकि उसके द्वारा न्यायिक शक्ति में हस्तक्षेप किया गया है ।[31-32]

अनुच्छेद 265 के उल्लंघन के लिए उपचार — 1 अनुच्छेद 265 संविधान के भाग 3 में सम्मिलित नहीं किया गया है इसलिए यह मूल अधिकार नहीं है । यदि कोई कर विधि द्वारा प्राधिकृत नहीं है तो अनुच्छेद 32 के अधीन आवेदन[33] तभी किया जा सकेगा जब किसी मूल अधिकार का भी उल्लंघन हुआ हो ।[34]

2 विधि के प्राधिकार के बिना अधिरोपित कर को या अधिकारातीत विधि के अधीन अधिरोपित कर को विखण्डित करने के लिए परमादेश याचिका की जा सकेगी ।[35-36]

3. विधान मंडल शक्ति बाह्य कर को भूतलक्षी रीति से विधिमान्य कर सकता है यदि विधिमान्यकरण अधिनियम बनाते समय उसे कर उद्ग्रहण करने की शक्ति प्राप्त हो गई है ।[37]

4 अनुच्छेद 265 के उल्लंघन की दशा मे अनुतोष पाने के हकदार पक्षकार का अधिकार उपमति के कारण समाप्त नहीं हो जाता ।[38] यदि अवैध कर का सदाय कर दिया गया है तो करदाता को बाद में उस पर आक्षेप करने से रोका नहीं जा सकता । अर्थात् उसके विरुद्ध विबंध नहीं होगा ।[39]

कराधान विधि में प्रत्यायोजन की अनुमति — देखिए पीछे अनुच्छेद 245 ।

31 *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *एच एम टी*, ए 1975 एस सी 2037 (पैरा 10); *तीरथ राम* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1973 एस सी 405 ।

32 *अहमदाबाद शहर* बनाम *न्यू शरोक स्पिनिंग*, ए 1970 एस सी 1292, *जनपद सभा* बनाम *सी पी सिंडिकेट*, ए 1971 एस सी 57, *तमिलनाडु राज्य* बनाम *रायप्पा*, ए 1971 एस सी 231 ।

33 *रामजीलाल* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1951 एस सी 97 ।

34 *बंगाल इम्युनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, (1955) 2 एस सी आर 303, *हिम्मतलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1954) एस सी आर 1122; *मुंबई राज्य* बनाम *यूनाइटेड मोटर्स*, (1953) एस सी आर 1069 (*1077*), *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *कन्हैया लाल*, ए 1959 एस सी 135 ।

35 *भारत संघ* बनाम *मदन गोपाल*, (1952) एस सी आर 537, *माधवकृष्णय्या* बनाम *आय-कर अधिकारी*, (1954) एस सी आर 537, *हिम्मतलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1954) एस सी आर 1122 ।

36 आगे अनुच्छेद 323ख(2)(क) और (3)(घ) में यह अधिकथित है कि जब समुचित विधान मंडल अधिकरण की स्थापना किसी 'विवाद, परिवाद या अपराध' का न्यायनिर्णयन करने के लिए विधि बनाता है जिसका संबंध (अन्य बातों के साथ-साथ) किसी कर के 'उद्ग्रहण, निर्धारण, संग्रहण और प्रवर्तन' से है तो वह ऐसी विधि द्वारा अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता के सिवाय सभी न्यायालयों की अधिकारिता का, उन विषयों के संबंध में, अपवर्जन कर सकेगा, जो उक्त अधिकरण की अधिकारिता के अंतर्गत आते हैं । किंतु अनुच्छेद 323क-323ख के उपबंध स्वतः निष्पाद्य नहीं हैं, बल्कि ऐसे अधिकरणों की स्थापना और न्यायालयों की अधिकारिता का अपवर्जन करने के विनिर्दिष्ट विधान पर निर्भर है । अतः, जब तक ऐसी कोई विधि नहीं बनाई जाती, उच्च न्यायालय पुनरीक्षित अनुच्छेद 226 के अधीन अपनी अधिकारिता प्रयोग करने से इस आधार पर इंकार नहीं कर सकता कि कोई विशिष्ट मामला अनुच्छेद 323क या 323ख के अधीन किसी अधिकरण द्वारा विचारणीय है । (आगे अनुच्छेद 323क, 323ख के अधीन भी देखिए) ।

37. *पृथ्वी काटन मिल्स* बनाम *भड़ौच नगरपालिका*, ए. 1970 एस.सी. 192; *शिंदे ब्रदर्स* बनाम *उपायुक्त*, ए. 1967 एस.सी. 1512 (*1525*) ।

38. *अमल्गमेटिड कोलफील्ड्स* बनाम *जनपद सभा*, ए. 1961 एस.सी. 964 ।

39. *भारत संघ* बनाम *नगरपरिषद*, (1979) 2 एस.सी.सी. 1 (पैरा 5) ।

भारत और राज्यों की संचित निधियां और लोक लेखे ।

266. (1) अनुच्छेद 267 के उपबंधों के तथा कुछ करों और शुल्कों के शुद्ध आगम पूर्णतः या भागतः राज्यों को सौंप दिए जाने के संबंध में इस अध्याय के उपबंधों के अधीन रहते हुए, भारत सरकार को प्राप्त सभी राजस्व, उस सरकार द्वारा राज हुंडियां निर्गमित करके, उधार द्वारा या अर्थोपाय अग्रिमों द्वारा लिए गए सभी उधार और उधारों के प्रतिसंदाय में उस सरकार को प्राप्त सभी धनराशियों की एक संचित निधि बनेगी जो "भारत की संचित निधि" के नाम से ज्ञात होगी तथा किसी राज्य सरकार को प्राप्त सभी राजस्व, उस सरकार द्वारा राज हुंडियां निर्गमित करके, उधार द्वारा या अर्थोपाय अग्रिमों द्वारा लिए गए सभी उधार और उधारों के प्रतिसंदाय में उस सरकार को प्राप्त सभी धनराशियों की एक संचित निधि बनेगी जो "राज्य की संचित निधि" के नाम से ज्ञात होगी ।

(2) भारत सरकार या किसी राज्य सरकार द्वारा या उसकी ओर से प्राप्त सभी अन्य लोक धनराशियां, यथास्थिति, भारत के लोक लेखे में या राज्य के लोक लेखे में जमा की जाएंगी ।

(3) भारत की संचित निधि या राज्य की संचित निधि में से कोई धनराशियां विधि के अनुसार तथा इस संविधान में उपबंधित प्रयोजनों के लिए और रीति से ही विनियोजित की जाएंगी, अन्यथा नहीं ।

आकस्मिकता निधि ।

267. (1) संसद्, विधि द्वारा, अग्रदाय के स्वरूप की एक आकस्मिकता निधि की स्थापना कर सकेगी जो "भारत की आकस्मिकता निधि" के नाम से ज्ञात होगी जिसमें ऐसी विधि द्वारा अवधारित राशियां समय-समय पर जमा की जाएंगी और अनवेक्षित व्यय का अनुच्छेद 115 या अनुच्छेद 116 के अधीन संसद् द्वारा, विधि द्वारा, प्राधिकृत किया जाना लंबित रहने तक ऐसी निधि में से ऐसे व्यय की पूर्ति के लिए अग्रिम धन देने के लिए राष्ट्रपति को समर्थ बनाने के लिए उक्त निधि राष्ट्रपति के व्ययनाधीन रखी जाएगी ।

(2) राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, अग्रदाय के स्वरूप की एक आकस्मिकता निधि की स्थापना कर सकेगा जो "राज्य की आकस्मिकता निधि" के नाम से ज्ञात होगी जिसमें ऐसी विधि द्वारा अवधारित राशियां समय-समय पर जमा की जाएंगी और अनवेक्षित व्यय का अनुच्छेद 205 या अनुच्छेद 206 के अधीन राज्य के विधान मंडल द्वारा, विधि द्वारा, प्राधिकृत किया जाना लंबित रहने तक ऐसी निधि में से ऐसे व्यय की पूर्ति के लिए अग्रिम धन देने के लिए राज्यपाल को समर्थ बनाने के लिए उक्त निधि राज्य के राज्यपाल [40]* * * के व्ययनाधीन रखी जाएगी ।

संघ और राज्यों के बीच राजस्वों का वितरण

संघ द्वारा उद्‌गृहीत किए जाने वाले किंतु राज्यों द्वारा संगृहीत और विनियोजित किए जाने वाले शुल्क ।

268. (1) ऐसे स्टांप-शुल्क तथा औषधीय और प्रसाधन निर्मितियों पर ऐसे उत्पाद-शुल्क, जो संघ सूची में वर्णित हैं, भारत सरकार द्वारा उद्‌गृहीत किए जाएंगे, किंतु —

(क) उस दशा में, जिसमें ऐसे शुल्क [41][*संघ राज्यक्षेत्र*] के भीतर उद्‌ग्रहणीय हैं भारत सरकार द्वारा, और

(ख) अन्य दशाओं में जिन-जिन राज्यों के भीतर ऐसे शुल्क उद्‌ग्रहणीय हैं, उन-उन राज्यों द्वारा,

संगृहीत किए जाएंगे ।

(2) किसी राज्य के भीतर उद्‌ग्रहणीय किसी ऐसे शुल्क के किसी वित्तीय वर्ष में आगम, भारत की संचित निधि के भाग नहीं होंगे, किंतु उस राज्य को सौंप दिए जाएंगे ।

40. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।
41. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

संघ द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत किंतु राज्यों को सौंपे जाने वाले कर ।

269. (1) निम्नलिखित शुल्क और कर भारत सरकार द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत किए जाएंगे, किंतु खंड (2) में उपबंधित रीति से राज्यों को सौंप दिए जाएंगे, अर्थात् —

(क) कृषि भूमि से भिन्न संपत्ति के उत्तराधिकार के संबंध में शुल्क;

(ख) कृषि भूमि से भिन्न संपत्ति के संबंध में संपदा-शुल्क;

(ग) रेल, समुद्र या वायु मार्ग द्वारा ले जाए जाने वाले माल या यात्रियों पर सीमा-कर;

(घ) रेल भाड़ों और माल भाड़ों पर कर;

(ङ) स्टाक एक्सचेंजों और वायदा बाजारों के संव्यवहारों पर स्टांप-शुल्क से भिन्न कर;

(च) समाचारपत्रों के क्रय या विक्रय पर और उनमें प्रकाशित विज्ञापनों पर कर;

[42]*(छ) समाचारपत्रों से भिन्न माल के क्रय या विक्रय पर उस दशा में कर जिसमें ऐसा क्रय या विक्रय अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान होता है ।*

[43]*(ज) माल के परेषण पर (चाहे परेषण उसके करने वाले व्यक्ति को या किसी अन्य व्यक्ति को किया गया हो) उस दशा में कर जिसमें ऐसा परेषण अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान होता है ।*

(2) किसी वित्तीय वर्ष में किसी ऐसे शुल्क या कर के शुद्ध आगम वहां तक के सिवाय, जहां तक वे आगम [41][*संघ राज्यक्षेत्रों*] से प्राप्त हुए आगम माने जा सकते हैं, भारत की संचित निधि के भाग नहीं होंगे, किंतु उन राज्यों को सौंप दिए जाएंगे जिनके भीतर वह शुल्क या कर उस वर्ष में उद्ग्रहणीय है और वितरण के ऐसे सिद्धांतों के अनुसार, जो संसद् विधि द्वारा बनाए, उन राज्यों के बीच वितरित किए जाएंगे ।

[44]*(3) संसद्, यह अवधारित करने के लिए कि [42][माल का क्रय या विक्रय या परेषण] कब अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान होता है, विधि द्वारा सिद्धांत बना सकेगी ।*

अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान क्रय या विक्रय पर कर — अंतरराज्य व्यापार के दौरान क्रय और विक्रय पर कर लगाने की शक्ति अनुच्छेद 269(1)(छ) और सूची 1 की प्रविष्टि 92क द्वारा अनन्य रूप से संसद् को दी गई है । यह प्रविष्टि संविधान (सातवें संशोधन) अधिनियम 1956 द्वारा अंतःस्थापित की गई थी । इस शक्ति का प्रयोग करते हुए संसद् ने केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 के अध्याय 3 द्वारा अंतरराज्य विक्रयों पर विक्रय कर के उद्ग्रहण का उपबंध किया है ।

इस अनुच्छेद का खंड (3) संसद् को यह शक्ति देता है कि वह यह अवधारित करने के लिए सिद्धांत अधिकथित करे कि कब किसी माल का क्रय या विक्रय अंतरराज्य व्यापार या वाणिज्य के दौरान होता है जिससे वह अनुच्छेद 269(1)(छ) द्वारा अधिरोपित संघ के विक्रय कर का दायी होगा । इस शक्ति के प्रयोग में संसद् ने केन्द्रीय विक्रय कर अधिनियम, 1956 की धारा 3 अधिनियमित की है ।

धारा (3) : खंड (क)-(ख) — इस अधिनियम की धारा 3 के दो खंड परस्पर अपवर्जन-कारी हैं । यह आशय नहीं है कि एक खंड के अधीन जो विक्रय कराधेय हो वह दूसरे खंड के अधीन भी कराधेय हो ।[45]

खंड (क) के अधीन विक्रय के रूप में संपत्ति का अंतरण कराधेय हो जाता है यदि एक राज्य से दूसरे राज्य को माल का संचलन किसी प्रसंविदा या विक्रय की संविदा के अनुषंग के रूप में है और माल में संपत्ति विक्रेता को उस समय अंतरित होती है जब माल एक

42. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा जोड़ा गया ।
43. संविधान (छियालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1982 द्वारा अंतःस्थापित ।
44. संविधान (छियालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1982 द्वारा जोड़ा गया ।
45. *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी बनाम सरकार,* (1961) 1 एस.सी.आर. 379 (*389*) ।

राज्य से दूसरे राज्य में संचलित हो रहे हैं । हक दस्तावेजों के अंतरण द्वारा नहीं । धारा 3 के खंड (क) के अंतर्गत खंड (ख) में सम्मिलित विक्रय से भिन्न विक्रय आते हैं जिनमें एक राज्य से दूसरे राज्य में माल का संचलन किसी प्रसंविदा या विक्रय की संविदा का अनुषंग है और माल में संपत्ति दोनों में से किसी राज्य में अंतरित होती है ।[45]

खंड (ख) के अंतर्गत ऐसा विक्रय आता है जो माल के एक राज्य से दूसरे राज्य में संचलन के दौरान हक दस्तावेज के अंतरण से होता है । जहां माल में संपत्ति संचलन के प्रारंभ होने के पहले अंतरित हो गई है वहां विक्रय खंड (ख) के अधीन नहीं होगा । ऐसा विक्रय भी खंड (ख) में नहीं आएगा जिसमें माल में संपत्ति तब अंतरित होती है जब एक राज्य से दूसरे राज्य को संचलन समाप्त हो जाता है । तदनुसार संचलन प्रारंभ होने के पश्चात् और उसके समाप्त होने के पहले हक दस्तावेज के अंतरण द्वारा होने वाला विक्रय ही धारा 3(ख) के अधीन अंतरराज्य विक्रय समझा जाएगा । स्पष्टीकरण 1 में यह बात स्पष्ट की गई है ।[45]

धारा 3 के खंड (क) के अधीन कोई विक्रय तभी आएगा जब उस संविदा के कारण[45] उस माल के विक्रेता या विनिर्माता से माल का संचलन सीमा के पार एक राज्य से दूसरे राज्य को हो ।[46-49]

'माल का संचलन' — उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट है कि विक्रय के कराधान के प्रयोजन के लिए, अंतरराज्य व्यापार या वाणिज्य गठित करने के लिए यह आवश्यक है कि माल का एक राज्य से दूसरे राज्य को भौतिक संचलन हो । जिस विक्रय के कारण ऐसा अंतरराज्य संचलन होता है वह अंतरराज्य व्यापार या वाणिज्य के दौरान हुआ समझा जाता है, —

(क) माल के वास्तविक संचलन के पूर्व विक्रय को अंतरराज्य व्यापार या वाणिज्य के दौरान हुआ विक्रय तभी समझा जाएगा जब अंतरराज्य संचलन विक्रय की संविदा के अनुसरण में होता हो ।[48]

इस प्रयोजन के लिए, विक्रय के समय या परिवहन के समय पक्षकारों का आशय तात्विक नहीं है । अंतरराज्य व्यापार या वाणिज्य के दौरान विक्रय का परीक्षण विक्रय की संविदा के भाग के रूप में या विक्रय के आवश्यक अंग के रूप में होना या न होना है ।[50]

(ख) अंतरराज्य संचलन की समाप्ति के पश्चात् होने वाले विक्रय को भी यही सिद्धांत लागू होगा ।

संघ द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत तथा संघ और राज्यों के बीच वितरित किए जाने वाले कर ।

270. (1) कृषि आय से भिन्न आय पर कर भारत सरकार द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत किए जाएंगे तथा खंड (2) में उपबंधित रीति से संघ और राज्यों के बीच वितरित किए जाएंगे ।

(2) किसी वित्तीय वर्ष में किसी ऐसे कर के शुद्ध आगमों का ऐसा प्रतिशत, जो विहित किया जाए, वहां तक के सिवाय जहां तक वे आगम [51][*संघ राज्यक्षेत्रों*] से या संघ की उपलब्धियों के संबंध में संदेय करों से प्राप्त हुए आगम माने जा सकते हैं, भारत की संचित निधि का भाग नहीं होगा किंतु उन राज्यों को सौंप दिया जाएगा जिनके भीतर वह कर उस वर्ष में उद्ग्रहणीय है और ऐसी रीति से और ऐसे समय से, जो विहित किया जाए, उन राज्यों के बीच वितरित किया जाएगा ।

46 *सीमेंट मार्केटिंग कंपनी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए 1963 एस.सी. 563 ।
47. *राज्य व्यापार निगम* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 548 ।
48. *सिंगरेनी कोलिरीज़* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 563 ।
49 *मोहनलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 509 (*514*) ।
50. तुलना कीजिए, *आयुक्त* बनाम *हुसैनअली*, ए. 1959 एस.सी. 887 (*893*) ।
51. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

(3) खंड (2) के प्रयोजनों के लिए, प्रत्येक वित्तीय वर्ष में आय पर करों के उतने शुद्ध आगमों का, जितने संघ की उपलब्धियों के संबंध में संदेय करों के शुद्ध आगम नहीं हैं, वह प्रतिशत, जो विहित किया जाए, ऐसा आगम समझा जाएगा जो [51][*संघ राज्यक्षेत्रों*] से प्राप्त हुआ माना जा सकता है ।

(4) इस अनुच्छेद में —

(क) "आय पर कर" के अंतर्गत निगम कर नहीं है;

(ख) "विहित" से अभिप्रेत है —

(i) जब तक वित्त आयोग का गठन नहीं किया जाता है तब तक राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा विहित; और

(ii) वित्त आयोग का गठन किए जाने के पश्चात्, वित्त आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् राष्ट्रपति द्वारा आदेश द्वारा विहित;

(ग) "संघ की उपलब्धि" के अंतर्गत भारत की संचित निधि में से संदेय ऐसी सभी उपलब्धियां और पेंशन हैं जिनके संबंध में आय-कर प्रभार्य है ।

कुछ शुल्कों और करों पर संघ के प्रयोजनों के लिए अधिभार ।

271. अनुच्छेद 269 और अनुच्छेद 270 में किसी बात के होते हुए भी, संसद् उन अनुच्छेदों में निर्दिष्ट शुल्कों या करों में से किसी में किसी भी समय संघ के प्रयोजनों के लिए अधिभार[52] द्वारा वृद्धि कर सकेगी और किसी ऐसे अधिभार के संपूर्ण आगम भारत की संचित निधि के भाग होंगे ।

कर जो संघ द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत किए जाते हैं तथा जो संघ और राज्यों के बीच वितरित किए जा सकेंगे ।

272. संघ सूची में वर्णित औषधीय और प्रसाधन निर्मितियों पर उत्पाद-शुल्क से भिन्न संघ उत्पाद-शुल्क भारत सरकार द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत किए जाएंगे किंतु. यदि संसद् विधि द्वारा इस प्रकार उपबंध करती है तो जिन राज्यों पर शुल्क अधिरोपित करने वाली विधि का विस्तार है उन राज्यों को भारत की संचित निधि में से उस शुल्क के संपूर्ण शुद्ध आगमों के या उनके किसी भाग के बराबर राशियां संदत्त की जाएंगी और वे राशियां वितरण के ऐसे सिद्धांतों के अनुसार, जो उस विधि द्वारा बनाए जाएं, उन राज्यों के बीच वितरित की जाएंगी ।

जूट पर और जूट उत्पादों पर निर्यात शुल्क के स्थान पर अनुदान ।

273 (1) जूट पर और जूट उत्पादों पर निर्यात शुल्क के प्रत्येक वर्ष के शुद्ध आगम का कोई भाग असम, बिहार, उड़ीसा, और पश्चिमी बंगाल राज्यों को सौंप दिए जाने के स्थान पर उन राज्यों के राजस्व में सहायता अनुदान के रूप में प्रत्येक वर्ष भारत की संचित निधि पर ऐसी राशियां भारित की जाएंगी जो विहित की जाएं ।

(2) जूट पर और जूट उत्पादों पर जब तक भारत सरकार कोई निर्यात शुल्क उद्गृहीत करती रहती है तब तक या इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की समाप्ति तक, इन दोनों में से जो भी पहले हो, इस प्रकार विहित राशियां भारत की संचित निधि पर भारित बनी रहेंगी ।

(3) इस अनुच्छेद में, "विहित" पद का वही अर्थ है जो अनुच्छेद 270 में है ।

ऐसे कराधान पर जिसमें राज्य हितबद्ध है, प्रभाव डालने वाले विधेयकों के लिए राष्ट्रपति की पूर्व सिफारिश की अपेक्षा ।

274. (1) कोई विधेयक या संशोधन, जो ऐसा कर या शुल्क, जिसमें राज्य हितबद्ध है, अधिरोपित करता है या उसमें परिवर्तन करता है अथवा जो भारतीय आय-कर से संबंधित अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिए परिभाषित "कृषि-आय" पद के अर्थ में परिवर्तन

---

52. तुलना कीजिए, *एम.डी. सेंट्रल को-आपरेटिव बैंक* बनाम *तृतीय आय-कर अधिकारी*, ए 1975 एस.सी. 2016 (पैरा 23-24) ।

करता है अथवा जो उन सिद्धांतों को प्रभावित करता है जिनसे इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में से किसी उपबंध के अधीन राज्यों को धनराशियां वितरणीय हैं या हो सकेंगी अथवा जो संघ के प्रयोजनों के लिए कोई ऐसा अधिभार अधिरोपित करता है जो इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में वर्णित है, संसद् के किसी सदन में राष्ट्रपति की सिफारिश पर ही पुरःस्थापित या प्रस्तावित किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(2) इस अनुच्छेद में, "ऐसा कर या शुल्क, जिसमें राज्य हितबद्ध हैं" पद से ऐसा कोई कर या शुल्क अभिप्रेत है —

(क) जिसके शुद्ध आगम पूर्णतः या भागतः किसी राज्य को सौंप दिए जाते हैं; या

(ख) जिसके शुद्ध आगम के प्रति निर्देश से भारत की संचित निधि में से किसी राज्य को राशियां तत्समय संदेय हैं ।

कुछ राज्यों को संघ से अनुदान ।

275. (1) ऐसी राशियां, जिनका संसद् विधि द्वारा उपबंध करे, उन राज्यों के राजस्वों में सहायता अनुदान के रूप में प्रत्येक वर्ष भारत की संचित निधि पर भारित होंगी जिन राज्यों के विषय में संसद् यह अवधारित करे कि उन्हें सहायता की आवश्यकता है और भिन्न-भिन्न राज्यों के लिए भिन्न-भिन्न राशियां नियत की जा सकेंगी :

परंतु किसी राज्य के राजस्वों में सहायता अनुदान के रूप में भारत की संचित निधि में से ऐसी पूंजी और आवर्ती राशियां संदत्त की जाएंगी जो उस राज्य को उन विकास स्कीमों के खर्चों को पूरा करने में समर्थ बनाने के लिए आवश्यक हों जिन्हें उस राज्य में अनुसूचित जनजातियों के कल्याण की अभिवृद्धि करने या उस राज्य में अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन स्तर को उस राज्य के शेष क्षेत्रों के प्रशासन स्तर तक उन्नत करने के प्रयोजन के लिए उस राज्य द्वारा भारत सरकार के अनुमोदन से हाथ में लिया जाए :

परंतु यह और कि असम राज्य के राजस्व में सहायता अनुदान के रूप में भारत की संचित निधि में से पूंजी और आवर्ती राशियां संदत्त की जाएंगी —

(क) जो छठी अनुसूची के पैरा 20 से संलग्न सारणी के [53][*भाग 1*] में विनिर्दिष्ट जनजाति क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पूर्ववर्ती दो वर्ष के दौरान औसत व्यय राजस्व से जितना अधिक है, उसके बराबर हैं; और

(ख) जो उन विकास स्कीमों के खर्चों के बराबर हैं जिन्हें उक्त क्षेत्रों के प्रशासन स्तर को उस राज्य के शेष क्षेत्रों के प्रशासन स्तर तक उन्नत करने के प्रयोजन के लिए उस राज्य द्वारा भारत सरकार के अनुमोदन से हाथ में लिया जाए ।

[54]*(1क) अनुच्छेद 244क के अधीन स्वशासी राज्य के बनाए जाने की तारीख को और से —*

(i) खंड (1) के दूसरे परंतुक के खंड (क) के अधीन संदेय कोई राशियां स्वशासी राज्य को उस दशा में संदत्त की जाएंगी जब उसमें निर्दिष्ट सभी जनजाति क्षेत्र उस स्वशासी राज्य में समाविष्ट हों और यदि स्वशासी राज्य में उन जनजाति क्षेत्रों में से केवल कुछ ही समाविष्ट हों तो वे राशियां असम राज्य और स्वशासी राज्य के बीच ऐसे प्रभाजित की जाएंगी जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे;

(ii) स्वशासी राज्य के राजस्वों में सहायता अनुदान के रूप में भारत की संचित निधि में से ऐसी पूंजी और आवर्ती राशियां संदत्त की जाएंगी जो उन विकास स्कीमों के खर्चों के बराबर हैं जिन्हें स्वशासी राज्य के प्रशासन स्तर को शेष असम राज्य के प्रशासन स्तर तक

---

53. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 21-1-1972 से प्रतिस्थापित ।

54. संविधान (बाईसवां संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा तारीख 25-9-1969 से खंड (1क) अंतःस्थापित ।

उन्नत करने के प्रयोजन के लिए स्वशासी राज्य द्वारा भारत सरकार के अनुमोदन से हाथ में लिया जाए ।

(2) जब तक संसद् खंड (1) के अधीन उपबंध नहीं करती है तब तक उस खंड के अधीन संसद् को प्रदत्त शक्तियां राष्ट्रपति द्वारा, आदेश द्वारा, प्रयोक्तव्य होंगी और राष्ट्रपति द्वारा इस खंड के अधीन किया गया कोई आदेश संसद् द्वारा इस प्रकार किए गए किसी उपबंध के अधीन रहते हुए प्रभावी होगा :

परंतु वित्त आयोग का गठन किए जाने के पश्चात्, राष्ट्रपति द्वारा इस खंड के अधीन कोई आदेश वित्त आयोग की सिफारिशों पर विचार करने के पश्चात् ही किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजनों पर कर ।

276. (1) **अनुच्छेद** 246 **में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य के विधान मंडल की ऐसे करों से संबंधित कोई विधि, जो उस राज्य के या उसमें किसी नगरपालिका, जिला बोर्ड, स्थानीय बोर्ड या अन्य स्थानीय प्राधिकारी के फायदे के लिए वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं या नियोजनों के संबंध में है, इस आधार पर अविधिमान्य नहीं होगी कि वह आय पर कर से संबंधित है ।**

(2) राज्य को या उस राज्य में किसी एक नगरपालिका, जिला बोर्ड, स्थानीय बोर्ड या अन्य स्थानीय प्राधिकारी को किसी एक व्यक्ति के बारे में वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजनों पर करों के रूप में संदेय कुल रकम [54क]*दो हजार पांच सौ रुपए* **प्रति वर्ष से अधिक नहीं होगी ।**

[54क]* * *

(3) वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजनों पर करों के संबंध में पूर्वोक्त रूप में विधियां बनाने की राज्य के विधान मंडल की शक्ति का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजनों से प्रोद्भूत या उद्भूत आय पर करों के संबंध में विधियां बनाने की संसद् की शक्ति को किसी प्रकार सीमित करती है ।

खंड (1) : वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजन पर कर — यह अभिव्यक्ति बहुत व्यापक है । यह कर वृत्तियों और नियोजनों पर लगाया जाता है । नियोजन में सेवाएं भी हैं । यदि कर्मचारी पहले से आय-कर दे रहा है तो भी उसे यह कर देना होगा ।[55] यह कर व्यापार और आजीविका पर भी लगाया जा सकता है । जैसे उन लोगो पर जो अनाज की कुटाई या छिलका उतारने का कार्य करते हैं ।[56] या व्यापार की विषय वस्तु पर लगाया जा सकता है । जैसे रुई की प्रत्येक गांठ पर[57] या व्यापार या वृत्ति से होने वाली आय पर ।[56] विनिर्माण की प्रक्रिया पर लगाया कर इस कारण परिवर्तित नहीं हो जाता कि वह कारखाने के प्रबंधक पर उद्गृहीत किया जाता है, विनिर्मित माल के स्वामी पर नहीं ।[58]

यदि कोई कर किसी वस्तु पर इस प्रकार लगाया जाता है कि वृत्ति या व्यापार के क्रियाकलाप से उसका कोई संबंध ही नहीं है तो वह वृत्ति या व्यापार पर कर नहीं होगा ।[59] अनुच्छेद 276 के अधीन कर का आधार या तो वृत्ति होगी या उससे होने वाली आय ।[59] इसी सिद्धांत के अनुसार किसी कारखाने पर उसमें निर्मित कपड़े या सूत के आधार पर लगाया गया कर व्यापार पर कर हो सकता है । किंतु यदि कोई कर कारखाने में काम करने वाले

54क. संविधान (साठवां संशोधन) अधिनियम, 1988 द्वारा तारीख 20-12-1988 से खंड (2) में "दो हजार पांच सौ" शब्द प्रतिस्थापित किए गए और परंतुक का लोप किया गया ।

55. *कामता प्रसाद* बनाम *कार्यपालक अधिकारी*, ए. 1974 एस.सी. 685 (पैरा 9) ।

56. *जिला परिषद्* बनाम *किशोरीलाल*, ए. 1949 नागपुर 190 ।

57. *नगरपालिका समिति* बनाम *एन.ई.आई. प्रेस*, ए. 1948 नागपुर 971; *चोपड़ा नगरपालिका* बनाम *मोतीलाल*, ए. 1958 मुंबई 487 ।

58. *डब्ल्यू.यू.पी. इलैक्ट्रिक पावर कंपनी* बनाम *एन.ई.आई. प्रेस*, ए. 1945 नागपुर 971 ।

59. *अब्राहम* बनाम *त्रावनकोर राज्य*, ए. 1958 केरल 129 (*134*) ।

व्यक्तियों की संख्या या उसमें प्रयुक्त अश्व शक्ति के अनुसार लगाया जाता है तो उसे व्यापार पर कर नहीं कहा जा सकता । वह इस अनुच्छेद के खंड (2) में नहीं आएगा ।[59]

खंड (2) : अधिकतम सीमा — इस अनुच्छेद के अधीन कर विधिमान्य होने की यह शर्त है कि वह 2,500 रु. से अधिक नहीं होना चाहिए । जहां कर प्रतिशत आधार पर लगाया जाता है और अधिकतम सीमा निर्धारित नहीं है वहां उद्ग्रहण 2,500 रु. से अधिक भी हो सकता है । ऐसी स्थिति में उद्ग्रहण अविधिमान्य होगा ।[60] इस खंड के कारण सीमा से अधिक वसूली और निर्धारण दोनों ही अवैध हैं ।[60]

जहां कोई कर जो सांविधानिक सीमा से नीचे है, बढ़ाकर उस सीमा के ऊपर किया जाता है वहां यह वृद्धि असांविधानिक होगी और सीमा से अधिक मात्रा में जो कर लिया गया है उसे वापस करने के लिए वाद लाया जा सकेगा ।[60-62]

वृत्ति कर के लिए 1949 में 250 रु. की अधिकतम सीमा नियत की गई थी, विभिन्न राज्य सरकारों ने यह दलील दी थी कि कीमतों की वृद्धि और अन्य बातों को देखते हुए यह सीमा बहुत कम है । अतएव इस सीमा को बढ़ाकर 2,500 रुपए कर दिया गया है जिससे राज्य सरकारों के वित्तीय स्रोतों में बढ़ोतरी हो जाए । यह संविधान (60वां संशोधन) अधिनियम, 1988 द्वारा 20-12-1988 से किया गया है ।

अनुच्छेद 276 के खंड (2) में एक परंतुक जोड़ा गया था जिससे संविधान के प्रारंभ के ठीक पहले यदि किसी वित्तीय वर्ष में किसी राज्य, नगरपालिका आदि द्वारा 250 रुपए प्रति वर्ष से अधिक की दर से वृत्ति कर लगाया जाता था तो उसे उसी प्रकार चालू रखा जा सकता था । 1950 से अब इतना समय व्यतीत हो जाने के बाद इस परंतुक की आवश्यकता समाप्त हो गई है । अतएव संविधान (60वां संशोधन) अधिनियम, 1988 द्वारा इसका लोप कर दिया गया है ।

व्यावृत्ति ।

277. **ऐसे कर, शुल्क, उपकर या फीसें, जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले किसी राज्य की सरकार द्वारा अथवा किसी नगरपालिका या अन्य स्थानीय प्राधिकारी या निकाय द्वारा उस राज्य, नगरपालिका, जिला या अन्य स्थानीय क्षेत्र के प्रयोजनों के लिए विधिपूर्वक उद्गृहीत की जा रही थीं, इस बात के होते हुए भी कि वे कर, शुल्क, उपकर या फीसें संघ सूची में वर्णित हैं, तब तक उद्गृहीत की जाती रहेंगी और उन्हीं प्रयोजनों के लिए उपयोजित की जाती रहेंगी जब तक संसद् विधि द्वारा इसके प्रतिकूल उपबंध नहीं करती है ।**

अनुच्छेद 277 : व्यावृत्ति — यह अनुच्छेद राज्य या स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा उद्गृहीत उन विद्यमान करों की व्यावृत्ति करता है जो ऐसे विषय में हैं जो संविधान द्वारा राज्य सूची से संघ सूची को अंतरित कर दिए गए हैं ।[63]

इस अनुच्छेद का उद्देश्य और इसके पूर्ववर्ती भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 143(2) का उद्देश्य नए सांविधानिक उपबंधों द्वारा कराधान के शीर्षों के वितरण में परिवर्तन के कारण स्थानीय सरकार और प्राधिकारियों के वित्त को होने वाली गड़बड़ी से बचाना है जहां उपबंधों द्वारा ऐसे परिवर्तन किए गए हैं जो उन उपबंधों के प्रारंभ के पूर्व विद्यमान नहीं थे ।[63]

---

60. *भारत कला भंडार बनाम नगरपालिका समिति*, ए. 1965 एस.सी. 249 ।

61. *रामकृष्ण बनाम जनपद सभा*, 1962 एस.सी. 1073; *लखानी बनाम मल्कापुर नगरपालिका*, ए. 1970 एस.सी. 1002 (*1003*) ।

62. *आकोट नगरपालिका बनाम मणिलाल*, ए. 1967 एस.सी. 1201 (*1204*) ।

63. *रामकृष्ण बनाम जनपद सभा*, ए. 1962 एस.सी. 1073; *उड़ीसा सीमेंट बनाम उड़ीसा राज्य*, ए. 1991 एस.सी. 1676 ।

इस अनुच्छेद या भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 143(2) द्वारा प्रदत्त शक्ति पहले से विद्यमान कर के उद्ग्रहण को बनाए रखने के लिए है । यह उन विषयों पर विधान बनाने की शक्ति नहीं है जो विधान बनाने की अधिकारिता से हटा दिए गए हैं । उन विषयों पर संसद् ही विधान बना सकती है ।[64] अतएव इस अनुच्छेद के आधार पर राज्य विधान मंडल या स्थानीय प्राधिकारी निम्नलिखित कार्य करने के लिए सक्षम नहीं है, —

(क) नया कर अधिरोपित करना,

(ख) विद्यमान कर की दर में वृद्धि,[64]

(ग) कर के मूलाधार में परिवर्तन, जिसके अंतर्गत कर का संग्रहण करने वाले निकाय में, जिस क्षेत्र के फायदे के लिए कर का उपयोग किया जाना है उसमें और उपयोग के प्रयोजनों में परिवर्तन सम्मिलित है,[64]

(घ) कर के आपतन में परिवर्तन अर्थात् कर की विषय-वस्तु, कर संबंधी घटना या शुल्क की दर में परिवर्तन ।[64]

अनुच्छेद 277 [या भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 143(2)] में "उद्गृहीत की जाती रहेंगी" शब्द स्थानीय विधान मंडल को एक सीमित विधायी शक्ति प्रदान करते हैं । यह शक्ति केन्द्रीय विधान मंडल की कर के उद्ग्रहण को समाप्त करने की अध्यारोही शक्ति के अधीन है । स्थानीय विधान मंडल की विधायी शक्ति इतने तक ही सीमित है कि वह "उद्ग्रहण को चालू रखे या नहीं रखे" जिसके अंतर्गत, —

(क) कर समाप्त करने या कराधान विधि का निरसन करने,[64]

(ख) कर की दर घटाने, और

(ग) कर की समाप्ति के पहले विधान बनाने की शक्ति है । इसके लिए अनुच्छेद की अन्य शर्तें पूरी की जानी चाहिएं और विधान को भूतलक्षी प्रभाव देकर उस अवकाश या अवधि को आच्छादित किया जाना चाहिए जिसके दौरान उद्ग्रहण वास्तव में समाप्त कर दिया गया था[64] या अवकाश, यथास्थिति, संविधान या भारत शासन अधिनियम, 1935 के प्रारंभ होने के पश्चात् हो सकता है ।[64]

जहां राज्य विधान मंडल ने संविधान के पूर्व के किसी अधिनियम का निरसन करते हुए कोई कराधान विधि पारित की है और उन निरसित अधिनियमों के अधीन कर के उद्ग्रहण को चालू रखने की इच्छा अभिव्यक्त नहीं की है और यह भी नहीं कहा है कि संविधान के पूर्व के ये कर संविधान के पश्चात् बनाई गई विधि के अधीन उद्गृहीत समझे जाएंगे तो निरसित अधिनियमों के अधीन उद्गृहीत कर अनुच्छेद 277 का आश्रय लेकर बच नहीं सकते ।[65]

कर और फीस के बीच अंतर — कर का उद्ग्रहण करने की शक्ति और फीस उद्ग्रहण करने की शक्ति दोनों एक ही नहीं हैं । सूची 1 और 2 में की विभिन्न प्रविष्टियों द्वारा संघ और राज्य विधान मंडलों के बीच करों का विनिर्दिष्ट रूप से वितरण किया गया है और ऐसे कर उद्ग्रहण करने की शक्ति जो किसी भी प्रविष्टि में नहीं है सूची 1 की प्रविष्टि 97 के अधीन संसद् को दी गई है । तीनों सूचियों के अंत में फीस से संबंधित एक प्रविष्टि है जो इस प्रकार है —

'इस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में फीस . .' इसके परिणाम-स्वरूप प्रत्येक विधान मंडल को यह शक्ति है कि वह जिन अधिष्ठायी विषयों के बारे में विधान बनाता है उसी के समान विस्तार तक वह फीस का उद्ग्रहण भी कर सकता है ।

64. तुलना कीजिए, *रामकृष्ण बनाम जनपद सभा*, ए. 1962 एस.सी. 1073 (*1078*); *अमरावती नगरपालिका बनाम रामचन्द्र*, ए. 1964 एस.सी. 1166 ।

65. *सूरजमल बनाम गंगानगर नगरपालिका*, ए. 1979 एस.सी. 246 (पैरा 7) ।

प्रत्येक विधान मंडल अपनी क्षमता के भीतर आने वाली किसी विषय-वस्तु के बारे में विधि बनाते समय उन सेवाओं के प्रति निर्देश से फीस भी लगा सकता है जो ऐसी विधि के अधीन राज्य द्वारा प्रदान की जाएंगी । जब भी विधायी क्षमता का या किसी कर की विधिमान्यता का प्रश्न उठाया जाता है तो न्यायालय को उसकी वास्तविक प्रकृति क्या है यह देखना होगा और इसके लिए ऊपर बताए गए परीक्षण अपनाने होंगे । यदि किसी लाग को फीस कहा गया है और न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि वह वास्तव में फीस नहीं कर है तो उसे इस प्रश्न का उत्तर खोजना होगा कि क्या उस कर के उद्ग्रहण की शक्ति उस विधान मंडल को सुसंगत सूची की प्रविष्टियों में दी गई है । यदि उत्तर नहीं में है तो न्यायालय को यह घोषित करना होगा कि वह लाग शक्ति बाह्य है ।[66, 67]

कर ऐसी लाग है जो लोक प्रयोजन के लिए लगाई जाती है और इसका राज्य द्वारा प्रदान की जाने वाली सेवा से या करदाता को दिए जाने वाले कोई विशेष फायदे से कोई संबंध नहीं है ।[67] इस उद्ग्रहण का उद्देश्य साधारण राजस्व प्राप्त करना है ।[68]

फीस ऐसा उद्ग्रहण है जो राज्य व्यक्ति के फायदे के लिए कोई सेवा करके उसके बदले में प्राप्त करता है ।[67] इसके उद्ग्रहण का सिद्धांत कर के सिद्धात से विपरीत है । कर का संदाय सरकार द्वारा प्रदत्त सामान्य फायदों के लिए किया जाता है । फीस का संदाय विशेष फायदे के लिए होता है । यह फायदा फीस देने वाले को मिलता है और सामान्यतया संदाय विशेष फायदे के अनुपात में होता है ।[67] फीस की प्रकृति का उद्ग्रहण केवल इस कारण कर नहीं बन जाता कि उसमें अनिवार्यता का भी तत्व है या वास्तविक सेवाओं का उससे कोई सीधा संबंध नहीं है । यदि फीस और सेवा को चलाने के व्यय के बीच युक्तियुक्त संबंध है तो वह उसे फीस के रूप में मान्य करने के लिए पर्याप्त होगा ।[69] फीस द्वारा जो धन प्राप्त होता है उसे अलग रखा जाता है और उसे उस सेवा के लिए विनिर्दिष्ट रूप से खर्च किया जाता है जिसके लिए फीस ली गई थी । इसे राज्य के साधारण राजस्व में मिलाया नहीं जाता ।[70]

यदि विशेष सेवा सुभिन्न रूप से और प्राथमिक रूप से एक विनिर्दिष्ट वर्ग या क्षेत्र के फायदे के लिए है तो यह तथ्य कि उस वर्ग या क्षेत्र के फायदे से अन्ततोगत्वा और अप्रत्यक्ष रूप से समस्त राज्य का फायदा होगा, उस फीस का स्वरूप नहीं बदल देगा । किंतु जहां विनिर्दिष्ट सेवा और लोकसेवा में कोई अंतर नहीं दिखाई पड़ता और वह सारवान् रूप से लोकसेवा का अंग ही है तो वहां स्थिति भिन्न ही होगी । ऐसी दशा में यह देखना होगा कि उस उद्ग्रहण का प्राथमिक उद्देश्य क्या है और किस प्रयोजन के लिए उसे लिया जा रहा है ।[62, 67]

कर की दशा में करदाता और राज्य के बीच में कुछ *"तत्प्रतितत्"* नहीं होता । किंतु फीस और फीस के लिए आशयित सेवा के बीच में संबंध होना आवश्यक है ।[70] फीस की रकम का संबंध राज्य द्वारा सेवा उपलब्ध करने में उपगत व्यय से होना चाहिए (इतना हो

66. *राजस्थान राज्य* बनाम *सज्जनलाल*, ए. 1975 एस.सी. 796 (पैरा 40); *मद्रास सरकार* बनाम *जेनिथ लैंप*, ए. 1973 एस.सी. 724 ।

67. *आयुक्त, एच.आर.ई.* बनाम *लक्ष्मीन्द्र*, (1954) एस.सी.आर. 1005 (*1041*); *हिंगीर-रामपुर कोल कंपनी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 459 (*464*) ।

68. *शक्ति औषधालय* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 622, *एच.सी. एंड पी. वर्क्स* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1870 ।

69. *दिल्ली क्लाथ मिल्स* बनाम *मुख्य आयुक्त*, ए. 1971 एस.सी. 344 (*347*); *सुधीन्द्र तीर्थ* बनाम *आयुक्त, एच.आर.ई.*, ए. 1963 एस.सी. 966; *अदमरमठ* बनाम *आयुक्त*, ए. 1980 एस.सी. 1 (पैरा 15) ।

70. तुलना कीजिए, *जगन्नाथ* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1046, *रतीलाल* बनाम *मुंबई राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 1055 ।

सकता है कि किसी विशेष फीस की रकम व्यय की रकम के ठीक बराबर न हो) ।[71-72] फीस का निर्धारण करते समय विभिन्न निर्धारितियों की योग्यताओं को ध्यान में नहीं रखा जाता । कर का अध्यारोपण करते समय कर की मात्रा करदाता की संदाय करने की क्षमता पर निर्भर करती है । जहां तत्प्रतिरत् के आधार पर फीस का निर्धारण नहीं किया जाता वहां उसे फीस मानना उचित नहीं होगा ।[70] किसी विशेष प्रकार की सेवा प्रदान करने के प्रतिफल के रूप में यदि कोई उद्ग्रहण किया जाता है तो उसे केवल इस कारण कर नहीं माना जा सकता कि —

(क) उसके आपतन में एकरूपता नहीं है,[73]
(ख) उसके संग्रहण में अनिवार्यता है,[73] या
(ग) अभिदाय करने वालों में से कुछ लोगों को उतनी सेवा नहीं मिलती है जितनी दूसरों को ।[73]

ऐसे भी मामले हो सकते हैं जिनमें विधान मंडल फीस के उद्ग्रहण के बहाने छिपकर कर अधिरोपित करने का प्रयास करे । यदि शक्ति का ऐसा आभासी उपयोग किया जाता है तो न्यायालय को उद्ग्रहण की स्कीम की बारीकी से संवीक्षा करनी होगी और यह अवधारण करना होगा कि क्या वास्तव में सेवा और उद्ग्रहण के बीच कोई संबंध है या उद्ग्रहण इतना अधिक है कि वह केवल नाम के लिए फीस है वास्तव में नहीं ।[74] जैसे किसी फीस के उद्ग्रहण से सरकार के पास इतना अधिक धन आ जाता है कि सरकार उसका प्रशासन के सामान्य प्रयोजन के लिए उपयोग करती है ।[75]

कर और फीस दोनों ही विशेषाधिकार की कीमत नहीं हैं, उससे अलग हैं (जैसे शराब बेचने का विशेषाधिकार पाने के लिए लाइसेंस के लिए दी जाने वाली फीस)[76] । यह कीमत कोई व्यापार या कारबार चलाने के लिए कोई क्रेता देता है ।[76] यह आवश्यक नहीं कि ऐसी कीमत का अनुज्ञप्तिधारी को दी जाने वाली सेवा से कोई युक्तियुक्त संबंध हो ।[76]

कुछ वित्तीय विषयों के संबंध में पहली अनुसूची के भाग ख के राज्यों से करार ।

[77]278. *संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 29 और अनुसूची द्वारा निरसित ।*

"शुद्ध आगम" आदि की गणना ।

279. (1) इस अध्याय के पूर्वगामी उपबंधों में "शुद्ध आगम" से किसी कर या शुल्क के संबंध में उसका वह आगम अभिप्रेत है जो उसके संग्रहण के खर्चों को घटाकर आए और उन उपबंधों के प्रयोजनों के लिए किसी क्षेत्र में या उससे प्राप्त हुए माने जा सकने वाले किसी कर या शुल्क का अथवा किसी कर या शुल्क के किसी भाग का शुद्ध आगम भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा अभिनिश्चित और प्रमाणित किया जाएगा और उसका प्रमाणपत्र अंतिम होगा ।

(2) जैसा ऊपर कहा गया है उसके और इस अध्याय के किसी अन्य अभिव्यक्त उपबंध के अधीन रहते हुए, किसी ऐसी दशा में, जिसमें इस भाग के अधीन किसी शुल्क या कर का आगम किसी राज्य को सौंप दिया जाता है या सौंप दिया जाए, संसद् द्वारा बनाई गई विधि या राष्ट्रपति का कोई आदेश उस रीति का, जिससे आगम की गणना की जानी है, उस समय का, जिससे या जिसमें

---

71. *लखनलाल* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1968 एस सी 1408 ।

72. *इंडियन माइका इंडस्ट्रीज* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1971 एस सी 1182 (*1186*) ।

73. *हिंगीर, रामपुर कोल कंपनी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए 1961 एस सी 459 ।

74. *सुधीन्द्र तीर्थ* बनाम *आयुक्त, एच आर ई*, ए 1963 एस सी 966 ।

75. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *मालवेशन आर्मी*, ए 1975 एस सी 846 (पैरा 23-24); *नगर महापालिका* बनाम *दुर्गा दास*, ए 1968 एस सी 1119 (*1125*) ।

76. *हरशंकर* बनाम *त्याद-शुल्क उपायुक्त*, ए 1975 एस सी 1121 (पैरा 59); *सदर्न फार्मास्यूटिकल्स* बनाम *केरल राज्य*, ए 1981 एस सी 1863 (पैरा 25-28) ।

77. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अनुच्छेद 278 का लोप किया गया ।

और उस रीति का, जिससे कोई संदाय किए जाने हैं, एक वित्तीय वर्ष और दूसरे वित्तीय वर्ष में समायोजन करने का और अन्य आनुषंगिक या सहायक विषयों का उपबंध कर सकेगा ।

वित्त आयोग ।

280. (1) राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारंभ से दो वर्ष के भीतर और तत्पश्चात् प्रत्येक पांचवें वर्ष की समाप्ति पर या ऐसे पूर्वतर समय पर, जिसे राष्ट्रपति आवश्यक समझता है, आदेश द्वारा, वित्त आयोग का गठन करेगा जो राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए जाने वाले एक अध्यक्ष और चार अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा ।

(2) संसद्, विधि द्वारा, उन अर्हताओं का, जो आयोग के सदस्यों के रूप में नियुक्ति के लिए अपेक्षित होंगी और उस रीति का, जिससे उनका चयन किया जाएगा, अवधारण कर सकेगी ।

(3) आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह —

(क) संघ और राज्यों के बीच करों के शुद्ध आगमों के, जो इस अध्याय के अधीन उनमें विभाजित किए जाने हैं या किए जाएं, वितरण के बारे में और राज्यों के बीच ऐसे आगमों के तत्संबंधी भाग के आबंटन के बारे में,

(ख) भारत की संचित निधि में से राज्यों के राजस्व में सहायता अनुदान को शासित करने वाले सिद्धांतों के बारे में,

[78]* * *

[78][(ग)] सुदृढ़ वित्त के हित में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को निर्दिष्ट किए गए किसी अन्य विषय के बारे में,

राष्ट्रपति को सिफारिश करे ।

(4) आयोग अपनी प्रक्रिया अवधारित करेगा और अपने कृत्यों के पालन में उसे ऐसी शक्तियां होंगी जो संसद्, विधि द्वारा, उसे प्रदान करे ।

वित्त आयोग की सिफारिशें ।

281. राष्ट्रपति इस संविधान के उपबंधों के अधीन वित्त आयोग द्वारा की गई प्रत्येक सिफारिश को, उस पर की गई कार्यवाही के स्पष्टीकारक ज्ञापन सहित, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा ।

प्रकीर्ण वित्तीय उपबंध

संघ या राज्य द्वारा अपने राजस्व से किए जाने वाले व्यय ।

282. संघ या राज्य किसी लोक प्रयोजन के लिए कोई अनुदान इस बात के होते हुए भी दे सकेगा कि वह प्रयोजन ऐसा नहीं है जिसके संबंध में, यथास्थिति, संसद् या उस राज्य का विधान मंडल विधि बना सकता है ।

संचित निधियों, आकस्मिकता निधियों और लोक लेखाओं में जमा धनराशियों की अभिरक्षा आदि ।

283. (1) भारत की संचित निधि और भारत की आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी निधियों में धनराशियों के संदाय, उनसे धनराशियों के निकाले जाने, ऐसी निधियों में जमा धनराशियों से भिन्न भारत सरकार द्वारा या उसकी ओर से प्राप्त लोक धनराशियों की अभिरक्षा, भारत के लोक लेखे में उनके संदाय और ऐसे लेखे से धनराशियों के निकाले जाने का तथा पूर्वोक्त विषयों से संबंधित या उनके आनुषंगिक अन्य सभी विषयों का विनियमन संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा किया जाएगा और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक राष्ट्रपति द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा किया जाएगा ।

(2) राज्य की संचित निधि और राज्य की आकस्मिकता निधि की अभिरक्षा, ऐसी निधियों

78. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा खंड (3) के उपखंड (ग) का लोप किया गया और उपखंड (घ) को उपखंड (ग) के रूप में पुनःअक्षरांकित किया गया ।

में धनराशियों के संदाय, उनसे धनराशियों के निकाले जाने, ऐसी निधियों में जमा धनराशियों से भिन्न राज्य की सरकार द्वारा या उसकी ओर से प्राप्त लोक धनराशियों की अभिरक्षा, राज्य के लोक लेखे में उनके संदाय और ऐसे लेखे से धनराशियों के निकाले जाने का तथा पूर्वोक्त विषयों से संबंधित या उनके आनुषंगिक अन्य सभी विषयों का विनियमन राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि द्वारा किया जाएगा और जब तक इस निमित्त इस प्रकार उपबंध नहीं किया जाता है तब तक राज्य के राज्यपाल [79]* * * द्वारा बनाए गए नियमों द्वारा किया जाएगा ।

लोक सेवकों और न्यायालयों द्वारा प्राप्त वादकर्ताओं की जमा राशियों और अन्य धनराशियों की अभिरक्षा ।

284. **ऐसी सभी धनराशियां, जो —**

(क) यथास्थिति, भारत सरकार या राज्य की सरकार द्वारा जुटाए गए या प्राप्त राजस्व या लोक धनराशियों से भिन्न हैं, और संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप के संबंध में नियोजित किसी अधिकारी को उसकी उस हैसियत में, या

(ख) किसी वाद, विषय, लेखे या व्यक्तियों के नाम में जमा भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर किसी न्यायालय को,

प्राप्त होती हैं या उसके पास निक्षिप्त की जाती हैं, यथास्थिति, भारत के लोक लेखे में या राज्य के लोक लेखे में जमा की जाएंगी ।

संघ की संपत्ति को राज्य के करों से छूट ।

285. (1) **वहां तक के सिवाय, जहां तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध करे, किसी राज्य द्वारा राज्य के भीतर किसी प्राधिकारी द्वारा अधिरोपित सभी करों से संघ की संपत्ति को छूट होगी ।**

(2) **जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक खंड (1) की कोई बात किसी राज्य के भीतर किसी प्राधिकारी को संघ की किसी संपत्ति पर कोई ऐसा कर, जिसका दायित्व इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले, ऐसी संपत्ति पर था या माना जाता था, उद्‌गृहीत करने से तब तक नहीं रोकेगी जब तक वह कर उस राज्य में उद्‌गृहीत होता रहता है ।**

संघ की संपत्ति को राज्य के करों से छूट — परिसंघ संविधान द्वारा जो दोहरी शासन प्रणाली अपनाई जाती है उसे सुचारु रूप से चलाने के लिए यह आवश्यक है कि एक सरकार की संपत्ति को दूसरी सरकार के कराधान से निर्मुक्त रखा जाए । हमारे संविधान में यह सिद्धांत अनुच्छेद 285 और 289 में है । अनुच्छेद 285 में संघ की संपत्ति को राज्य के कराधान से छूट दी गई है ।

खंड (1) : संपत्ति — इस अनुच्छेद में "संपत्ति" का प्रयोग साधारण अर्थ में किया गया है और इसके अंतर्गत भूमि, भवन, वस्तु, शेयर, ऋण और ऐसी वस्तुएं हैं जिनका बाजार में धन के रूप में मूल्य है और जो किसी भी कराधान अधिनियम की परिधि में आ सकती हैं ।[80] सूची 1(4) में विनिर्दिष्ट नौसेना, सेना और वायुसेना संकर्म इस अभिव्यक्ति में आते हैं ।

यह हो सकता है कि भूमि और उस पर बने हुए भवन के स्वामी भिन्न-भिन्न व्यक्ति हों ।[80] ऐसी परिस्थितियों में भवन के कराधान का दायित्व भूमि से भिन्न हो सकता है ।

संघ की संपत्ति — संघ की संपत्ति पर वह कर उद्‌गृहीत नहीं किया जा सकता चाहे उसके निर्धारण का ढंग कोई भी क्यों न हो ।[81]

---

79. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

80. *कलकत्ता निगम* बनाम *सेंट थामस स्कूल,* (1948) 53 सी.डब्ल्यू.एन. 231, (1949) एफ.सी.आर. 368 द्वारा अभिपुष्टि ।

81. *टर्फ प्रोपरटीज* बनाम *कलकत्ता निगम,* ए. 1957 कलकत्ता 431 (*437*) ।

किंतु यह छूट सरकारी कंपनियों को नहीं मिल सकती । निगमित होने के कारण उनका पृथक् अस्तित्व है और वे संघ से भिन्न व्यक्ति हैं ।[82]

"वहां के सिवाए, जहां तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध करे" — इन शब्दों से यह प्रतीत होता है कि संसद् विधि द्वारा राज्य को या राज्य के भीतर किसी प्राधिकारी को संघ की संपत्ति पर कर लगाने की अनुमति दे सकती है । खंड (1) का उद्देश्य राज्य या स्थानीय प्राधिकारी को संघ की संपत्ति पर कर लगाने से बिलकुल रोक देना नहीं है बल्कि इस कराधान को संसद् के नियंत्रण में रखना है ।

"सभी करों" — इस संदर्भ में "कर" शब्द का व्यापक अर्थ लिया जाना चाहिए । इसके अंतर्गत कर की प्रकृति के सभी लाग या उद्ग्रहण आएंगे । यदि इस प्रकार निर्वचन नहीं किया गया तो राज्य सरकार अप्रत्यक्ष रूप से वह सब कर सकेगी जो वह प्रत्यक्ष रूप से नहीं कर सकती । अनुच्छेद 366(28) से भी यही निष्कर्ष निकलता है ।

"राज्य के भीतर किसी प्राधिकारी द्वारा" — इस अभिव्यक्ति से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह छूट केवल राज्य द्वारा अधिरोपित कर तक ही सीमित नहीं है बल्कि ऐसे करों को भी लागू होती है जो नगरपालिका और अन्य स्थानीय प्राधिकारी लगाते हैं । जब राज्य को यह शक्ति नहीं है तो राज्य द्वारा सृजित निकायों को यह शक्ति कैसे मिल सकती है ।[83]

"वह कर" — इन शब्दों से यह प्रकट होता है कि यदि जो कर लगाया जा रहा है वह संविधान के पहले के उद्ग्रहण से भिन्न प्रकृति[84] का है तो संसद् की विधायी मंजूरी के बिना राज्य अनुच्छेद 285(2) के अधीन शक्ति का दावा नहीं कर सकता ।

यदि संविधान के बाद बनाई गई राज्य विधि के अधीन संदेय कर की रकम में कोई परिवर्तन किया जाता है तो वह नया अधिरोपण नहीं होगा ।[85]

खंड (2) : "ऐसी संपत्ति पर था या मानी जाती थी" — इन शब्दों से यह तात्पर्य निकलता है कि वही संपत्ति परंतुक के अंतर्गत आएगी जो संविधान के प्रारंभ के ठीक पूर्व विद्यमान थी । जो वस्तु विद्यमान नहीं है उस पर कोई दायित्व नहीं डाला जा सकता । अविद्यमान वस्तु के साथ कोई व्यवहार नहीं हो सकता । पूर्वोक्त तारीख के पश्चात् भूमि पर बनाए गए नए भवन और संरचनाओं को कर से छूट होगी चाहे जिस भूमि पर वे बनाए गए हैं वे खंड (2) के अधीन कर की दायी हो ।[83]

"वह राज्य" — इन शब्दों से अभिप्रेत है कि यदि वह स्थानीय प्राधिकारी जिसने कर लगाया है उस राज्य से भिन्न किसी राज्य में स्थित है जिसमें वह संविधान के पूर्व सम्मिलित था तो वह संविधान के पूर्व के कर को चालू नहीं रख सकता ।[85-86]

82 *वेस्टर्न कोलफील्ड्स* बनाम *एस ए डी ए*, ए 1982 एस सी. 697 (पैरा 21-21क) ।

83 तुलना कीजिए, *सपरिषद् गवर्नर जनरल* बनाम *कलकत्ता निगम*, ए 1948 कलकत्ता 116 (*122*), *कलकत्ता निगम* बनाम *सेंट थामस स्कूल*, (1949) एफ सी आर 368 द्वारा अभिपुष्टि ।

84. *शहर नगरपालिका समिति* बनाम *रामचन्द्र*, ए 1964 एस.सी. 1166 ।

85 *भारत संघ* बनाम *शहर नगरपालिका परिषद्*, (1979) 2 एस.सी.सी. 1 (पैरा 9) ।

86. इस विनिश्चय से सब लोग सहमत नहीं हैं क्योंकि पहली अनुसूची के साथ पठित अनुच्छेद 1 के अनुसार 'राज्य' शब्द से अभिप्रेत है वह राज्य जो संविधान के पश्चात् बनाया गया है और पहली अनुसूची में भी सम्मिलित है । पहली अनुसूची में सम्मिलित प्रत्येक राज्य के राज्यक्षेत्र में तत्स्थानी प्रांत के राज्यक्षेत्र के भाग हैं जिनमें कुछ परिवर्तन या परिवर्धन किया गया है । संविधान से पूर्व कोई 'राज्य' नहीं था । खंड (2) के पाठ का एकमात्र तर्कसंगत अर्थ यही हो सकता है कि यदि संविधान के ठीक पहले किसी राज्यक्षेत्र में कर उद्गृहीत किया जाता था तो यह उस राज्य, में भी उद्गृहीत किया जाता रहेगा जिसमें वह राज्यक्षेत्र सम्मिलित किया गया है ।

286. (1) राज्य की कोई विधि, माल के क्रय या विक्रय पर, जहां ऐसा क्रय या विक्रय —

माल के क्रय या विक्रय पर कर के अधिरोपण के बारे में निर्बन्धन ।

(क) राज्य के बाहर, या

(ख) भारत के राज्यक्षेत्र में माल के आयात या उसके बाहर निर्यात के दौरान,

होता है वहां, कोई कर अधिरोपित नहीं करेगी या अधिरोपित करना प्राधिकृत नहीं करेगी ।

[87]* * *

[87]*(2) संसद, यह अवधारित करने के लिए कि माल का क्रय या विक्रय खंड (1) में वर्णित रीतियों में से किसी रीति से कब होता है, विधि द्वारा, सिद्धांत बना सकेगी ।*

[88]*(3) जहां तक किसी राज्य की कोई विधि —*

(क) ऐसे माल के, जो संसद् द्वारा विधि द्वारा अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य में विशेष महत्व का माल घोषित किया गया है, क्रय या विक्रय पर कोई कर अधिरोपित करती है या कर का अधिरोपण प्राधिकृत करती है; या

(ख) माल के क्रय या विक्रय पर ऐसा कर अधिरोपित करती है या ऐसे कर का अधिरोपण प्राधिकृत करती है, जो अनुच्छेद 366 के खंड (29क) के उपखंड (ख), उपखंड (ग) या उपखंड (घ) में निर्दिष्ट प्रकृति का कर है,

वहां तक वह विधि, उस कर के उद्ग्रहण की पद्धति, दरों और अन्य प्रसंगतियों के संबंध में ऐसे निबंधनों और शर्तों के अधीन होगी जो संसद् विधि द्वारा विनिर्दिष्ट करे ।

अनुच्छेद 286 : राज्य द्वारा विक्रय कर के अधिरोपण पर निर्बन्धन — समाचारपत्रों से भिन्न माल के क्रय या विक्रय पर कर लगाने की शक्ति राज्य को है (सूची 2, प्रविष्टि 54) । किंतु आयात और निर्यात पर कर (सूची 1, प्रविष्टि 84) और "अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य पर कर" (सूची 1, प्रविष्टि 92क) अनन्य रूप से संघ के विषय है । अनुच्छेद 286 यह सुनिश्चित करने के लिए है कि राज्यों द्वारा लगाए गए विक्रय कर आयात और अंतरराज्य व्यापार और वाणिज्य में हस्तक्षेप नहीं करते हैं । ये राष्ट्रीय महत्व के विषय हैं और इन पर कर लगाना राज्य की शक्ति के बाहर है । अतएव वर्तमान अनुच्छेद में राज्य की विक्रय कर लगाने की शक्ति पर कुछ परिसीमाएं लगाई गई है ।[89] ये परिसीमाएं हैं, —

(क) ऐसे विक्रय या क्रय पर कोई कर नहीं लगाया जाएगा जो राज्य के बाहर होता है [खंड (1)(क)] ।

(ख) ऐसे क्रय या विक्रय पर कोई कर नहीं लगाया जाएगा जो भारत के राज्यक्षेत्र में आयात या उसके बाहर निर्यात के दौरान होता है [खंड (1)(ख)] ।

अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य के संबंध में दो परिसीमाएं है, —

(क) अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य के दौरान होने वाले विक्रय पर कर लगाने की शक्ति अनन्य रूप से संसद् को है [अनुच्छेद 269(1)(छ), सूची 1 की प्रविष्टि 82(क)] ।

(ख) चाहे विक्रय अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान न हो तो भी राज्य का कराधान संसद् द्वारा अधिरोपित निर्बन्धनों और शर्तों के अधीन होगा यदि विक्रय ऐसे माल के संबंध में है जिन्हें संसद् ने अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य में विशेष महत्व का माल घोषित किया है [खंड (3)] । ये परिसीमाएं अलग-अलग है और एक दूसरे से स्वतंत्र है । उन्हें एक दूसरे का अपवाद या परंतुक मानकर निर्वचन नहीं किया जाना चाहिए ।[89]

क्रय या विक्रय पर कर — जिस संव्यवहार पर कर लगाया जाता है वह विक्रय का संव्यवहार है जिससे अभिप्रेत है स्वामित्व का एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को अंतरण ।

87. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा 1-11-1956 से खंड (1) के स्पष्टीकरण का लोप किया गया और खंड (2) प्रतिस्थापित किया गया ।

88. संविधान (छियालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1982 द्वारा तारीख 12-3-1983 से प्रतिस्थापित ।

89. *मद्रास राज्य बनाम हबीबुर*, (1968) 1 एस.सी.जे. 759 ।

उपर्युक्त अभिव्यक्ति से यह स्पष्ट है कि कर संव्यवहार के किसी भी पक्षकार पर लगाया जा सकता है ।

(क) जब वह विक्रेता पर लगाया जाता है तो यह आवश्यक नहीं कि वह इस अनुच्छेद के अर्थान्तर्गत विक्रय पर कर तभी होगा जब कि व्यौहारी उसे विक्रेता से वसूल नहीं कर सकता ।[90]

(ख) जब कोई विक्रय-कर क्रेता पर लाद दिया जाता है और विक्रय की कीमत में, विक्रय-कर के रूप में संदेय रकम सम्मिलित कर ली जाती है तो सक्षम विधान मंडल कर की रकम को आवर्त में सम्मिलित कर सकता है । विधान मंडल उस कुल रकम को हिसाब में ले सकता है जिसके लिए माल बेचा और खरीदा गया था और आवर्त पर कर लगा सकता है । इस प्रकार आवर्त पर जो कर लगाया जाता है वह "कर के ऊपर कर" नहीं होता । वह सूची 2 की प्रविष्टि 54 की परिधि के भीतर विक्रय पर कर ही होता है ।[91]

"विक्रय" — इस शब्द के अर्थ के लिए सातवीं अनुसूची की सूची 2 की प्रविष्टि 54 के नीचे दिए गए टिप्पण को देखिए ।

खंड (1)(ख) : भारत में माल के आयात या उसके बाहर निर्यात के दौरान विक्रय पर कोई कर नहीं — यह उपखंड राज्य को इस प्रकार विक्रय-कर लगाने से रोकता है कि वह सीमा शुल्क रेखा के उस पार से आयात और निर्यात की बाबत संघ की विधायी शक्ति में हस्तक्षेप हो जाए (सूची 1 की प्रविष्टि 41) । इसी प्रकार सीमा शुल्क और निर्यात शुल्क में भी हस्तक्षेप की अनुमति नहीं दी जा सकती (सूची 1 की प्रविष्टि 83) । वर्तमान खंड द्वारा विक्रय को कराधान से दी जाने वाली छूट का उद्देश्य यह है कि अपने देश के विदेश व्यापार पर दोहरा कराधान न हो, क्योंकि राष्ट्र की अर्थव्यवस्था के लिए विदेश व्यापार का बहुत महत्व है ।[92]

खंड (क) और खंड (ख) में जो प्रतिबंध लगाए गए हैं वे परस्पर स्वतंत्र हैं । कोई राज्य माल के क्रय और विक्रय पर जब कर लगाता है तो उसे इन उपबंधों को ध्यान में रखना होता है ।[93]

यदि कोई निर्धारिती यह दावा करता है कि उसका माल अनुच्छेद 286(1)(ख) के अधीन आता है तो यह साबित करने का भार उस पर होगा कि उसे उस उपबंध के अधीन छूट है ।[94]

"आयात या निर्यात के दौरान" — केन्द्रीय विक्रय-कर अधिनियम, 1956 की धारा 5 इस अनुच्छेद के खंड (2) द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अनुसरण में अधिनियमित की गई है । उसमें यह अवधारण करने के सिद्धांत दिए गए हैं कि कब कोई क्रय या विक्रय आयात या निर्यात के दौरान होता है । निर्यात या आयात के दौरान दो या अधिक विक्रय नहीं हो सकते । अनुच्छेद 286(1)(ख) के अधीन केवल एक ही विक्रय आएगा अर्थात् वह विक्रय जिसके कारण निर्यात होता है या जो निर्यात की प्रक्रिया में आता है ।[95] यह हो सकता है कि कोई विक्रय निर्यात के प्रयोजन के लिए हो किंतु निर्यात के दौरान न हो ।[95-98]

90. *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 452; *सलारजंग मिल्स* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 87 (*101*) ।

91. *जार्ज ओक्स* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1962 एस.सी 1352 ।

92. *त्रावनकोर राज्य* बनाम *षण्मुख कैश्यूनट फैक्ट्री*, (1954) एस.सी आर. 53 ।

93. *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 661 ।

94. *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *शिव रतन*, ए. 1966 एस.सी. 142 (*144*) ।

95. *काफी बोर्ड* बनाम *सी.टी.ओ.*, (1970) 11 एस.सी.ए. 457 (*470*) ।

96. *बिहार राज्य* बनाम *टाटा इंजीनियरिंग*, (1970) 3 एस.सी.सी. 696 (*703*) ।

97. *बिनानी ब्रदर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1974 एस.सी. 1510 ।

98. *सिराजुद्दीन* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1564 ।

पूर्वगामी धारा के अनुसार, कोई क्रय या विक्रय आयात या निर्यात के दौरान इस प्रकार हो सकता है,[95] जैसे, –

(i) जहां क्रय या विक्रय के कारण भारत के राज्यक्षेत्र में कोई आयात या उसके बाहर निर्यात होता है ।[99]

(ii) जहां माल के भारत की सीमा शुल्क रेखा को पार करने के पश्चात् या उसके पूर्व पोत दस्तावेजों के अंतरण द्वारा कोई क्रय या विक्रय होता है ।[100]

I. *क्रय या विक्रय जिसके कारण निर्यात या आयात होता है* — इस अभिव्यक्ति से यह विवक्षा होती है कि – सीमा के आरपार माल का आना-जाना संविदा में किसी अनुबंध के कारण होता है या दूसरे शब्दों में संविदा में ही ऐसा संचलन अंतर्वलित है ।[1-3] विदेशी विक्रेताओं को, वस्तुओं के निर्यात के लिए लागत, बीमा, ढुलाई या पोत तक निःशुल्क निर्बन्धन के आधार पर जो विक्रय किए जाते हैं वे इस खंड के अधीन छूट की परिधि में आते हैं । कारण यह है कि पोत तक निःशुल्क वाली संविदा में माल में संपत्ति तब तक अंतरित नहीं होती जब तक माल वास्तव में पोत पर लाद न दिया जाए ।[4]

(क) जब विदेशी क्रेता से विक्रय की संविदा की जाती है जिसके अधीन विक्रेता किसी सामान्य वाहक को माल सुपुर्द कर देता है तब यह निर्यात के दौरान विक्रय होगा चाहे सामान्य वाहक को परिदान सीधे किया गया हो या अभिकर्ता के माध्यम से ।[5]

(ख) जहां निर्यातकर्ता सीधे विदेशी क्रेता को विक्रय करता है वहां यदि संपत्ति विदेशी क्रेता के हाथ अंतरित हो जाती है और विक्रय, भारत से बाहर की ओर यात्रा प्रारंभ होने के पहले ही राज्य के भीतर पूरा हो जाता है तो भी यह समझा जाएगा कि विक्रय निर्यात व्यापार के दौरान हुआ है और उसे अनुच्छेद 286(1)(ख) के अधीन छूट होगी । इस खंड में यह उपधारणा की गई है कि विक्रय राज्य की सीमाओं के भीतर किया गया है और यदि वह निर्यात के दौरान हुआ है तो उसे छूट दी जाती है ।[6]

इस संबंध में अन्य ध्यान देने योग्य स्थल इस प्रकार हैं –

(i) निर्यातकर्ता द्वारा, पहले से प्राप्त आदेशों को पूरा करने के लिए निर्यात के प्रयोजन के लिए यदि माल खरीदा जाता है तो वह निर्यात के दौरान विक्रय नहीं है और उस पर कर लगाया जा सकता है ।[98, 7] इस नियम के लागू होने के लिए यह बात तात्विक नहीं है कि निर्यात की जाने वाली वस्तु ठीक वही वस्तु है जो आंतरिक बाजार से खरीदी गई थी[8] या उस पर कोई और प्रक्रिया की गई है[92] या खरीदी गई वस्तु को विशेष रूप से पैक करके उसे "निर्यात के लिए" चिन्हित किया गया है । कोई व्यक्ति जिसने अपने आपको व्यौहारी के रूप में रजिस्टर कराया है और उस रीति में विवरणी देता है यदि ऐसे व्यौहारी के रूप में खरीद करता है और निर्यातकर्ता को बेच देता है तो उसे निर्यातकर्ता का अभिकर्ता

99 *इंदुपुरी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1962) 1 एस.सी.आर. 314 ।

100. तुलना कीजिए, *नरसिंहमन्* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1344 ।

1. *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी* बनाम *सरकार*, ए. 1961 एस.सी. 65 (*72*) ।

2 *सीमेंट मार्केटिंग कंपनी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए 1963 एस.सी. 980 (*983*) ।

3 तुलना कीजिए, *मोहनलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर. 509 ।

4. *वर्डेयर* बनाम *दौलतराम*, ए 1961 1 एस.सी.आर. (अनुच्छेद) 924 ।

5 *बेन गोर्म प्लांटेशन्स* बनाम *विक्रय कर अधिकारी*, ए. 1964 एस.सी. 1752 (*1756*) ।

6. *त्रावनकोर राज्य* बनाम *बांबे कंपनी*, (1052) एस.सी.आर. 112 (*1102*) ।

7 नेशनल ट्रैक्टर्स बनाम कमिश्नर, ए 1971 एस.सी. 2277; *पंजाब राज्य* बनाम *एन आर एम सिंडिकेट*, ए 1975 एस.सी. 1652 ।

8. मैसूर राज्य बनाम मैसूर स्पिनिंग एंड मैन्यूफैक्टरिंग कंपनी, ए. 1958 एस.सी. 1002 ।

नहीं समझा जा सकता चाहे वे माल निर्यातकर्ता के अनुदेश के अनुसार विदेशी क्रेता को भेज दिए जाते हैं; निर्यातकर्ता को नहीं दिए जाते ।[9]

(ii) जिस विक्रय के कारण निर्यात होता है उसके पहले के सभी विक्रय कराधेय होते हैं चाहे माल का विनिर्माण निर्यात के उद्देश्य से ही क्यों न हुआ हो[9-10] जैसे, विदेशी क्रेताओं के अभिकर्ताओं को नीलामी द्वारा विक्रय, निर्यात का कारण नहीं होता इसलिए उसे विक्रय-कर से छूट नहीं होगी ।[5]

(iii) खंड (1)(ख) लागू करने के लिए इतना पर्याप्त नहीं है कि माल भारत के राज्यक्षेत्र के बाहर चला जाए । यह आवश्यक है कि यह आशय हो कि माल भारत के बाहर किसी गंतव्य स्थान पर ले जाया जाए[11] जैसे किसी भारतीय पत्तन पर जहाज में खपत के लिए कोयले का विक्रय "निर्यात के दौरान" विक्रय नहीं है चाहे जहाज विदेश जा रहा हो ।

संक्षेप में, किसी वस्तु के निर्यात के पूर्व का विक्रय का संव्यवहार तभी निर्यात के दौरान विक्रय होगा जब ऐसे विक्रय और निर्यात के बीच एक अटूट बंधन हो । विक्रय की संविदा इस प्रकार होनी चाहिए कि (संविदा या कानून के आधार पर) क्रेता पर निर्यात करने की बाध्यता हो । यदि क्रेता को इस बात की जानकारी है कि माल निर्यात के आशय से खरीदे जा रहे हैं, तो इतना ही होना पर्याप्त नहीं है ।[12] यदि कोई स्थानीय फर्म जो निर्यात का कारबार कर रही है कोई वस्तु क्रय करती है तो यह निर्यात के दौरान क्रय नहीं होगा चाहे उसका उद्देश्य निर्यात करना हो[13] और चाहे विक्रेता को इस बात की जानकारी हो कि क्रेता किसी विदेशी स्वामी की ओर से कार्य कर रहा है । यदि विधि में इस बात का प्रतिबंध है कि माल को आंतरिक उपभोग के लिए उपयोग में नहीं लाया जा सकता तो स्थिति दूसरी हो सकती है ।[12]

(iv) इसी प्रकार आयात के लिए किए गए क्रय को भी विक्रय-कर से छूट है ।[14]

(क) आयातकर्ता कमीशन एजेंटों के माध्यम से विक्रय करता है और ये एजेंट दूसरे राज्य में रहते हैं इससे कोई अंतर नहीं पड़ेगा यदि माल आयातकर्ता की ओर से ख़रीदे जाते हैं और विदेश से सीधे आयातकर्ता के राज्य में भेजे जाते हैं ।[15-16]

(ख) इस संदर्भ में निर्यात का अर्थ केवल देश से बाहर ले जाना नहीं है । निर्यात का परीक्षण यह है कि माल का विदेशी गंतव्य होना चाहिए जहां वे आयातित समझे जाएं । यदि गंतव्य स्थान पर प्राप्त करने वाले की ओर से कोई मूल्यवान प्रतिफल नहीं है तो भी इसमें अंतर नहीं पड़ेगा ।[15]

यदि माल किसी विदेशी गंतव्य स्थान को भेजे जाते हैं जहां वे आयात की कोटि में होंगे तो उस निर्यात के दौरान किए गए क्रय और विक्रय को उपखंड (ख) से छूट होगी ।[15]

जहां कोई विदेशी गंतव्य नहीं है वहां इस उपखंड के अर्थान्तर्गत कोई निर्यात नहीं हो सकता ।[14] यदि देश से बाहर माल का संचलन होता है किंतु किसी विदेशी पत्तन में माल के उतारने का कोई आशय नहीं है तो निर्यात नहीं होता ।[17]

---

9. *गोर्धन दास* बनाम *बनर्जी*, ए. 1958 एस.सी 1006 ।

10. तुलना कीजिए, *बर्मा शैल* बनाम *सी.टी.ओ.*, ए. 1961 एस.सी. 315; *ईस्ट इंडिया टोबैको कंपनी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए 1962 एस.सी. 1733 (*1737*) ।

11. *केरल राज्य* बनाम *कोचीन कोल कंपनी*, (1961) 2 एस.सी.आर. 219 ।

12. *बेन गोर्म प्लांटेशन्स* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए. 1964 एस.सी. (*1756-58*) ।

13. *ईस्ट इंडिया टोबैको कंपनी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1733 ।

14. *बंगाल इम्यूनिटी कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 661 ।

15. तुलना कीजिए, *बर्मा शैल* बनाम *सी.टी.ओ.*, ए. 1961 एस.सी. 315; *ईस्ट इंडिया टोबैको कंपनी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1733 (*1739*) ।

16. *त्रावनकोर राज्य* बनाम *षण्मुख कैश्यूनट फैक्ट्री*, (1954) एस.सी.आर. 53 ।

17 *केरल राज्य* बनाम *कोचीन कोल कंपनी*, ए. 1961 एस.सी. 408 ।

संक्षेप में इस संदर्भ में कारण से अभिप्रेत है प्रत्यक्ष और अव्यवहित हेतुक ।[18]

II. *हक दस्तावेजों के अंतरण द्वारा क्रय या विक्रय* — आयातकर्ता या निर्यातकर्ता द्वारा, जब माल सीमा-शुल्क के बाहर है तब पोत दस्तावेजों के अंतरण द्वारा राज्य के भीतर किए गए क्रय और विक्रय को भी इस उपखंड द्वारा प्रदत्त छूट मिलेगी ।[19]

इसका कारण यह है कि "के दौरान" अभिव्यक्ति में संचलन की विवक्षा है । इसमें ऐसे संव्यवहार आते हैं जो उस समय होते हैं जब कि माल अभिवहन में है या निर्यात या आयात के दौरान संचलन में है । भारत के राज्यक्षेत्र से बाहर निर्यात या उसके भीतर आयात के दौरान संचलन तब तक प्रारंभ या समाप्त नहीं होता जब तक कि माल सीमा-शुल्क की रेखा पार नहीं कर लेते हैं । यदि उनके इस प्रकार पार करने के पश्चात् संपत्ति का अंतरण क्रेता को होता है और उसका प्रयोजन विदेश को निर्यात करना है तो यह विक्रय निर्यात के दौरान हुआ है ऐसा माना जाएगा ।[20]

III. निम्नलिखित संव्यवहार आयात या निर्यात के दौरान हुए नहीं समझे जा सकते और इसलिए उन्हें खंड (1)(ख) की छूट नहीं मिलेगी :

(क) निर्यातकर्ता को जो आर्डर मिले हैं उन्हें पूरा करने के लिए यदि वह माल क्रय करता है तो अंतिम क्रय को छूट नहीं मिलेगी । आर्डर विदेशी क्रेता से पहले से प्राप्त हो सकता है या कारबार के दौरान बाद में प्राप्त होने की संभावना हो सकती है ।[21]

संक्षेप में ऐसा क्रय अनुच्छेद 286(1)(ख) की परिधि में नहीं आता जो उस विक्रय के पहले होता है जिसके अधीन निर्यात किया गया है चाहे उसका उद्देश्य निर्यात करना हो ।[22-23]

(ख) आयात के पश्चात् किए गए पहले विक्रय को भी यही बात लागू होती है । यह एक पृथक् स्थानीय संव्यवहार है जो माल के सीमा-शुल्क रेखा पार करने के पश्चात् किया जाता है अर्थात् माल का देश में आयात पूरा हो जाने के पश्चात् । इसका आयात से कोई अभिन्न संबंध नहीं होता ।

(iv) माल के क्रय या विक्रय के संव्यवहार की बाबत विक्रय-कर से इस आधार पर छूट का दावा करने के लिए कि वह क्रय या विक्रय आयात या निर्यात के दौरान हुआ है, यह साबित करना होगा कि वे माल वही हैं जिनका निर्यात किया गया था ।[21] यदि किसी भी प्रक्रिया से माल में कोई परिवर्तन होता है और उनकी मूल पहचान मिट जाती है तो छूट का दावा नहीं किया जा सकता ।[21]

खंड (3) : अंतरराज्यिक व्यापार में विशेष महत्व के माल के विक्रय पर राज्य द्वारा कराधान के बारे में निर्बन्धन और शर्तें — 1956 में इस खंड के संशोधन का यह प्रभाव है कि 11-9-1956 के पश्चात् संसद् (क) यह घोषित कर सकती है कि कौन से माल अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य में विशेष महत्व के हैं, और (ख) ऐसे माल के क्रय या विक्रय पर विक्रय-कर लगाने के बारे में निर्बन्धन और शर्तें विनिर्दिष्ट कर सकती हैं । संसद् के ऐसा करने पर राज्य विधान मंडल ऐसे माल पर विक्रय-कर उन्हीं शर्तों और निर्बन्धनों के अधीन रहते हुए लगा सकता है जो संसद् ने विनिर्दिष्ट किए हैं ।

18. *सिराजुद्दीन* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1564 (पैरा 25) ।
19. *गोकल एंड कंपनी* बनाम *सहायक कलक्टर*, (1960) 2 एस.सी.आर. 852 ।
20. *बर्बेयर* बनाम *दौलतराम*, (1961) एस.सी.आर. 924 (*927*) ।
21. *त्रावनकोर राज्य* बनाम *षण्मुख कैश्यूनट फैक्ट्री*, (1954) एस.सी.आर. 53 (*94*) ।
22. *मैसूर राज्य* बनाम *मैसूर स्पिनिंग कंपनी*, ए. 1958 एस.सी. 333; *मद्रास राज्य* बनाम *गुरुय्या*, ए. 1956 एस.सी. 158; *ईस्ट इंडिया टोबैको कंपनी* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1733 (*1737*) ।
23. *कॉफी बोर्ड* बनाम *सी.टी.ओ.*, (1969) 3 एस.सी.सी. 349 (*362*) ।

जब कभी संसद् उस घोषणा को वापस ले लेती है तो राज्य का कर पुनरुज्जीवित हो जाएगा ।[24]

अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य के दौरान विक्रय — कोई विक्रय अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य के दौरान तभी समझा जाएगा जब दो शर्तें पूरी हों, — (i) माल का विक्रय हो, और (ii) विक्रय संविदा के अधीन उस माल का एक राज्य से दूसरे में परिवहन किया जाए । यदि दोनों शर्तें पूरी नहीं होती हैं तो अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य के दौरान विक्रय नहीं होगा ।[14, 25] अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य के लिए यह आवश्यक है कि माल का संचलन राज्य की सीमा के आरपार हो,[26-27] और ऐसा संचलन विक्रय संविदा के अधीन हो । दूसरे शब्दों में यह अनुबंध होना चाहिए कि माल का परिदान राज्य के बाहर होगा ।[28]

विद्युत पर करों से छूट ।

287. **जहां तक के सिवाय, जहां तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध करे, किसी राज्य की कोई विधि (किसी सरकार द्वारा या अन्य व्यक्तियों द्वारा उत्पादित) विद्युत के उपभोग या विक्रय पर जिसका —**

(क) भारत सरकार द्वारा उपभोग किया जाता है या भारत सरकार द्वारा उपभोग किए जाने के लिए उस सरकार को विक्रय किया जाता है, या

(ख) किसी रेल के निर्माण, बनाए रखने या चलाने में भारत सरकार या किसी रेल कंपनी द्वारा, जो उस रेल को चलाती है, उपभोग किया जाता है अथवा किसी रेल के निर्माण, बनाए रखने या चलाने में उपभोग के लिए उस सरकार या किसी ऐसी रेल कंपनी को विक्रय किया जाता है,

कोई कर अधिरोपित नहीं करेगी या कर का अधिरोपण प्राधिकृत नहीं करेगी और विद्युत के विक्रय पर कोई कर अधिरोपित करने या कर का अधिरोपण प्राधिकृत करने वाली कोई ऐसी विधि यह सुनिश्चित करेगी कि भारत सरकार द्वारा उपभोग किए जाने के लिए उस सरकार को, या किसी रेल के निर्माण, बनाए रखने या चलाने में उपभोग के लिए यथापूर्वोक्त किसी रेल कंपनी को विक्रय की गई विद्युत की कीमत, उस कीमत से जो विद्युत का प्रचुर मात्रा में उपभोग करने वाले अन्य उपभोक्ताओं से ली जाती है, उतनी कम होगी जितनी कर की रकम है ।

जल या विद्युत के संबंध में राज्यों द्वारा कराधान से कुछ दशाओं में छूट ।

288. (1) **जहां तक के सिवाय जहां तक राष्ट्रपति आदेश द्वारा अन्यथा उपबंध करे, इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले किसी राज्य की कोई प्रवृत्त विधि किसी जल या विद्युत के संबंध में, जो किसी अंतरराज्यिक नदी या नदी-दून के विनियमन या विकास के लिए किसी विद्यमान विधि द्वारा या संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा स्थापित किसी प्राधिकारी द्वारा संचित, उत्पादित, उपभुक्त, वितरित या विक्रीत की जाती है, कोई कर अधिरोपित नहीं करेगी या कर का अधिरोपण प्राधिकृत नहीं करेगी ।**

***स्पष्टीकरण* — इस खंड में, "किसी राज्य की कोई प्रवृत्त विधि" पद के *अंतर्गत* किसी राज्य की ऐसी विधि होगी जो इस संविधान के प्रारंभ से पहले पारित या बनाई गई है और जो पहले ही**

24. *पंजाब राज्य* बनाम *संसारी मल*, ए. 1968 एस.सी. 331 ।

25. *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *कॉलटेक्स*, ए. 1966 एस.सी. 1350 (*1353*) ।

26. *मोहनलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 886 : (1955) 2 एस.सी.आर. 509 ।

27. *सीमेंट मार्केटिंग कंपनी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 980; *बिहार राज्य* बनाम *टाटा इंजीनियरिंग*, (1970) 3 एस.टी.सी. 697 (*703*); *इंदुपुरी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1961) 12 एस.टी.सी. 282 ।

28. *सिंगरेनी कोलीरीज* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 563; *राज्य व्यापार निगम* बनाम *मैसूर राज्य*, (1963) 14 एस.टी.सी. 188 ।

निरसित नहीं कर दी गई है, चाहे वह या उसके कोई भाग उस समय बिल्कुल या विशिष्ट क्षेत्रों में प्रवर्तन में न हों ।

(2) किसी राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, खंड (1) में वर्णित कोई कर अधिरोपित कर सकेगा या ऐसे कर का अधिरोपण प्राधिकृत कर सकेगा, किंतु ऐसी किसी विधि का तब तक कोई प्रभाव नहीं होगा जब तक उसे राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखे जाने के पश्चात् उसकी अनुमति न मिल गई हो और यदि ऐसी कोई विधि ऐसे करों की दरों और अन्य प्रसंगतियों को किसी प्राधिकारी द्वारा, उस विधि के अधीन बनाए जाने वाले नियमों या आदेशों द्वारा, नियत किए जाने का उपबंध करती है तो वह विधि ऐसे किसी नियम या आदेश के बनाने के लिए राष्ट्रपति की पूर्व सहमति अभिप्राप्त किए जाने का उपबंध करेगी ।

राज्यों की संपत्ति और आय को संघ के कराधान से छूट ।

289. (1) **किसी राज्य की संपत्ति और आय को संघ के करों से छूट होगी ।**

(2) खंड (1) की कोई बात संघ को किसी राज्य की सरकार द्वारा या उसकी ओर से किए जाने वाले किसी प्रकार के व्यापार या कारबार के संबंध में अथवा उससे संबंधित किन्हीं क्रियाओं के संबंध में अथवा ऐसे व्यापार या कारबार के प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त या अधिभुक्त किसी संपत्ति के संबंध में अथवा उसके संबंध में प्रोद्भूत या उद्भूत किसी आय के बारे में, किसी कर को ऐसी मात्रा तक, यदि कोई हो, जिसका संसद् विधि द्वारा उपबंध करे, अधिरोपित करने या कर का अधिरोपण प्राधिकृत करने से नहीं रोकेगी ।

(3) खंड (2) की कोई बात किसी ऐसे व्यापार या कारबार अथवा व्यापार या कारबार के किसी ऐसे वर्ग को लागू नहीं होगी जिसके बारे में संसद् विधि द्वारा घोषणा करे कि वह सरकार के मामूली कृत्यों का आनुषंगिक है ।

अनुच्छेद 289 का प्रविषय — अनुच्छेद 289 का खंड (1) राज्य की आय को संघ के कराधान से छूट देता है चाहे ऐसी आय शासकीय या अशासकीय क्रियाकलाप से प्राप्त हुई हो । खंड (2) में इसका अपवाद है । राज्य को व्यापार या कारबार से होने वाली आय कराधेय होगी किंतु इसके लिए संसद् को विधि बनानी होगी । खंड (3) पूर्ववर्ती खंड (2) के अपवाद का अपवाद है और उसमें यह उपबंध है कि यदि संसद् यह घोषित करे कि कोई व्यापार या कारबार सरकार के मामूली कृत्यों का आनुषंगिक है तो उस व्यापार या कारबार को संसद् के कराधान से छूट होगी ।[29]

खंड (1) : संपत्ति — खंड (1) द्वारा दी गई उन्मुक्ति संपत्ति पर कर की बाबत ही है । अनुच्छेद 289 संघ को राज्य द्वारा आयातित या विनिर्मित माल पर सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क लगाने से नहीं रोकता है चाहे उनका उपयोग व्यापार और कारबार के प्रयोजनों के लिए हो या नहीं ।[30]

राज्य की आय — यदि आय राज्य से भिन्न किसी प्राधिकारी की है तो खंड (1) के अधीन छूट का दावा नहीं किया जा सकता जैसे किसी कानूनी निकाय की आय क्योंकि वह एक पृथक् विधिक व्यक्ति है । इससे कोई अंतर नहीं पड़ेगा कि राज्य ही उसके शेयरों का स्वामी है[31] या उस निगम पर राज्य का नियंत्रण है ।[31]

खंड (2) : राज्य का कारबार — राज्य द्वारा किए गए कारबार को संघ के कराधान

29. *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए 1964 एससी. 1486 (*1491*) ।

30. सागर सीमा-शुल्क अधिनियम, 1963 एस.सी. 1760 का मामला ।

31. *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम* बनाम *आय-कर अधिकारी*, ए. 1964 एस.सी. 1486 (*1491, 1493*) ।

से तभी छूट मिलती है जब संसद् यह घोषणा करे कि ऐसा कारबार सरकार के कृत्यों का आनुषंगिक है ।[31] यदि सरकार लाभ कमाने के उद्देश्य से कोई काम करती है तो वह इस अभिव्यक्ति के अधीन आएगी चाहे वह लोक उपयोगिता की सेवा ही क्यों न हो ।[32] खंड (1) के अधीन छूट राज्य की संपत्ति या आय तक ही सीमित है इसलिए कानूनी निगम द्वारा किए गए कारबार को खंड (3) के अधीन छूट नहीं मिल सकती ।[31]

कुछ व्ययों और पेंशनों के संबंध में समायोजन ।

290. **जहां इस संविधान के उपबंधों के अधीन किसी न्यायालय या आयोग के व्यय अथवा किसी व्यक्ति को या उसके संबंध में, जिसने इस संविधान के प्रारंभ से पहले भारत में क्राउन के अधीन अथवा ऐसे प्रारंभ के पश्चात् संघ के या किसी राज्य के कार्यकलाप के संबंध में सेवा की है, संदेय पेंशन भारत की संचित निधि या किसी राज्य की संचित निधि पर भारित है वहां, यदि —**

(क) भारत की संचित निधि पर भारित होने की दशा में, वह न्यायालय या आयोग किसी राज्य की पृथक् आवश्यकताओं में से किसी की पूर्ति करता है या उस व्यक्ति ने किसी राज्य के कार्यकलाप के संबंध में पूर्णतः या भागतः सेवा की है, या

(ख) किसी राज्य की संचित निधि पर भारित होने की दशा में, वह न्यायालय या आयोग संघ की या अन्य राज्य की पृथक् आवश्यकताओं में से किसी की पूर्ति करता है या उस व्यक्ति ने संघ या अन्य राज्य के कार्यकलाप के संबंध में पूर्णतः या भागतः सेवा की है,

तो, यथास्थिति, उस राज्य की संचित निधि पर अथवा, भारत की संचित निधि अथवा अन्य राज्य की संचित निधि पर, व्यय या पेंशन के संबंध में उतना अंशदान, जितना करार पाया जाए या करार के अभाव में, जितना भारत के मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा नियुक्त मध्यस्थ अवधारित करे, भारित किया जाएगा और उसका उस निधि में से संदाय किया जाएगा ।

कुछ देवस्वम् निधियों को वार्षिक संदाय ।

[33]290क. *प्रत्येक वर्ष छियालीस लाख पचास हजार रुपए की राशि केरल राज्य की संचित निधि पर भारित की जाएगी और उस निधि में से तिरुवांकुर देवस्वम् निधि को संदत्त की जाएगी और प्रत्येक वर्ष तेरह लाख पचास हजार रुपए की राशि [34][तमिलनाडु] राज्य की संचित निधि पर भारित की जाएगी और उस निधि में से 1 नवंबर, 1956 को उस राज्य को तिरुवांकुर-कोचीन राज्य से अंतरित राज्यक्षेत्रों के हिंदू मंदिरों और पवित्र स्थानों के अनुरक्षण के लिए उस राज्य में स्थापित देवस्वम् निधि को संदत्त की जाएगी ।*

शासकों की निजी थैली की राशि ।

291. *संविधान (छब्बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 की धारा 2 द्वारा निरसित ।*

अध्याय 2 — उधार लेना

भारत सरकार द्वारा उधार लेना ।

292. **संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार, भारत की संचित निधि की प्रतिभूति पर ऐसी सीमाओं के भीतर, यदि कोई हों, जिन्हें संसद् समय-समय पर विधि द्वारा नियत करे, उधार लेने तक और ऐसी सीमाओं के भीतर, यदि कोई हों, जिन्हें इस प्रकार नियत किया जाए, प्रत्याभूति देने तक है ।**

---

32. तुलना कीजिए, *सत्य नारायण* बनाम *जिला इंजीनियर,* ए 1965 एससी. 1160 (*1163*) ।
33. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।
34. मद्रास राज्य (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1968 द्वारा तारीख 14-1-1969 से प्रतिस्थापित ।

293. (1) इस अनुच्छेद के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार, उस राज्य की संचित निधि की प्रतिभूति पर ऐसी सीमाओं के भीतर, यदि कोई हों, जिन्हें ऐसे राज्य का विधान मंडल समय-समय पर विधि द्वारा नियत करे, भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर उधार लेने तक और ऐसी सीमाओं के भीतर, यदि कोई हों, जिन्हें इस प्रकार नियत किया जाए, प्रत्याभूति देने तक है ।

राज्यों द्वारा उधार लेना ।

(2) भारत सरकार, ऐसी शर्तों के अधीन रहते हुए, जो संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन अधिकथित की जाएं, किसी राज्य को उधार दे सकेगी या जहां तक अनुच्छेद 292 के अधीन नियत किन्हीं सीमाओं का उल्लंघन नहीं होता है वहां तक किसी ऐसे राज्य द्वारा लिए गए उधारों के संबंध में प्रत्याभूति दे सकेगी और ऐसे उधार देने के प्रयोजन के लिए अपेक्षित राशियां भारत की संचित निधि पर भारित की जाएंगी ।

(3) यदि किसी ऐसे उधार का, जो भारत सरकार ने या उसकी पूर्ववर्ती सरकार ने उस राज्य को दिया था अथवा जिसके संबंध में भारत सरकार ने या उसकी पूर्ववर्ती सरकार ने प्रत्याभूति दी थी, कोई भाग अभी भी बकाया है तो वह राज्य, भारत सरकार की सहमति के बिना कोई उधार नहीं ले सकेगा ।

(4) खंड (3) के अधीन सहमति उन शर्तों के अधीन, यदि कोई हों, दी जा सकेगी जिन्हें भारत सरकार अधिरोपित करना ठीक समझे ।

अध्याय 3 — संपत्ति, संविदाएं, अधिकार, दायित्व, बाध्यताएं और वाद

294. इस संविधान के प्रारंभ से ही —

कुछ दशाओं में संपत्ति, आस्तियों, अधिकारों, दायित्वों और बाध्यताओं का उत्तराधिकार ।

(क) जो संपत्ति और आस्तियां ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन की सरकार के प्रयोजनों के लिए हिज मजेस्टी में निहित थीं और जो संपत्ति और आस्तियां ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्रत्येक राज्यपाल वाले प्रांत की सरकार के प्रयोजनों के लिए हिज मजेस्टी में निहित थीं, वे सभी इस संविधान के प्रारंभ से पहले पाकिस्तान डोमिनियम के या पश्चिमी बंगाल, पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब प्रांतों के सृजन के कारण किए गए या किए जाने वाले किसी समायोजन के अधीन रहते हुए क्रमशः संघ और तत्स्थानी राज्य में निहित होंगी; और

(ख) जो अधिकार, दायित्व और बाध्यताएं भारत डोमिनियन की सरकार की और प्रत्येक राज्यपाल वाले प्रांत की सरकार की थीं, चाहे वे किसी संविदा से या अन्यथा उद्भूत हुई हों, वे सभी इस संविधान के प्रारंभ से पहले पाकिस्तान डोमिनियन के या पश्चिमी बंगाल, पूर्वी बंगाल, पश्चिमी पंजाब और पूर्वी पंजाब प्रांतों के सृजन के कारण किए गए या किए जाने वाले किसी समायोजन के अधीन रहते हुए क्रमशः भारत सरकार और प्रत्येक तत्स्थानी राज्य की सरकार के अधिकार, दायित्व और बाध्यताएं होंगी ।

295. (1) इस संविधान के प्रारंभ से ही —

अन्य दशाओं में संपत्ति, आस्तियों, अधिकारों, दायित्वों और बाध्यताओं का उत्तराधिकार ।

(क) जो संपत्ति और आस्तियां ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले पहली अनुसूची के भाग ख में विनिर्दिष्ट राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य में निहित थीं, वे सभी ऐसे करार के अधीन रहते हुए, जो भारत सरकार इस निमित्त उस राज्य की सरकार से करे, संघ में निहित होंगी यदि वे प्रयोजन जिनके लिए ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले ऐसी संपत्ति और आस्तियां धारित थीं, तत्पश्चात् संघ सूची में प्रगणित किसी विषय से संबंधित संघ के प्रयोजन हों, और

(ख) जो अधिकार, दायित्व और बाध्यताएं पहली अनुसूची के भाग ख में विनिर्दिष्ट राज्य के तत्स्थानी किसी देशी राज्य की सरकार की थीं, चाहे वे किसी संविदा से या अन्यथा उद्भूत हुई हों, वे सभी ऐसे करार के अधीन रहते हुए, जो भारत सरकार इस निमित्त उस राज्य की सरकार से करे,

भारत सरकार के अधिकार, दायित्व और बाध्यताएं होंगी यदि वे प्रयोजन, जिनके लिए ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले ऐसे अधिकार अर्जित किए गए थे अथवा ऐसे दायित्व या बाध्यताएं उपगत की गई थीं, तत्पश्चात् संघ सूची में प्रगणित किसी विषय से संबंधित भारत सरकार के प्रयोजन हों ।

(2) जैसा ऊपर कहा गया है उसके अधीन रहते हुए, पहली अनुसूची के भाग ख में विनिर्दिष्ट प्रत्येक राज्य की सरकार, उन सभी संपत्ति और आस्तियों तथा उन सभी अधिकारों, दायित्वों और बाध्यताओं के संबंध में, चाहे वे किसी संविदा से या अन्यथा उद्भूत हुई हों, जो खंड (1) में निर्दिष्ट से भिन्न हैं, इस संविधान के प्रारंभ से ही तत्स्थानी देशी राज्य की सरकार की उत्तराधिकारी होगी ।

खंड (1)(ख) : देशी राज्यों के अधिकार, दायित्व और बाध्यताएं — अनुच्छेद 295 दायित्व के न्यागमन से संबंधित है, दायित्व के आधार से नहीं । आधार के लिए हमें अनुच्छेद 300 को देखना होगा ।[35] अनुच्छेद 295 समुचित विधान मंडल के ऐसे अधिकारों या दायित्वों को उपांतरित करने की विधायी क्षमता पर कोई प्रभाव नहीं डालता है ।[35-36]

इस उपखंड के आधार पर देशी रियासतों के, संविधान के प्रारंभ के पूर्व विद्यमान दायित्व भारत सरकार होंगे परंतु यह तब जब कि वे प्रयोजन जिनके लिए ऐसे दायित्व या बाध्यताएं उपगत की गई थीं संविधान की सूची 1 के अनुसार संघ के प्रयोजन हैं । किंतु, —

(i) संविधान के अनुच्छेद 363 को दृष्टि में रखते हुए कुछ ऐसे दायित्व हैं जिनका न्यायालय द्वारा निर्णय नहीं हो सकता । देशी रियासत द्वारा की गई प्रसंविदा जिसके बारे में रियासत के संघ में विलय के समय भारत के डोमिनियन ने प्रत्याभूति दी है भारत सरकार पर आबद्धकर है किंतु ऐसी प्रसंविदा से उद्भूत होने वाले दायित्व की बाबत न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती ।[37] कार्यवाही तभी होगी जब देशी रियासत के विरुद्ध होने वाले दावे को नए प्रभु ने स्वीकार किया है ।[37-38] स्वीकृति अभिव्यक्त हो सकती है या विवक्षित ।[38-39] जैसे यह उपबंध करके कि पुरानी विधियां निरसित होने तक बनी रहेंगी । जब नए प्रभु ने कोई ऐसी विधि अधिनियमित की है जिससे मान्यता अस्वीकार हो जाती है तो मान्यता की कोई विवक्षा नहीं होगी ।[39]

(ii) इस खंड द्वारा भारत सरकार पर ऐसी कोई बाध्यता नहीं डाली गई है कि वह उन संविदाओं को पूरा करेगी चाहे वे मूल रियासतों पर आबद्धकर रही हो या नहीं । और चाहे संविधान लागू होने के पश्चात् पारित किसी विधि द्वारा वे प्रभावित की जा सकती हों ।[31]

(iii) संसद् किसी भी ऐसी संविदा से उत्पन्न बाध्यता को समाप्त करने या मिटा सकने के लिए सक्षम है जो वर्तमान अनुच्छेद के आधार पर उस पर न्यागत हुई हैं ।[36] दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 295 केवल दायित्व के न्यागमन की बात करता है । वह संघ या उस राज्य के विधान मंडल की विधायी क्षमता पर कोई परिसीमा या बंधन नहीं लगाता ।[40]

खंड (2) : जैसा ऊपर कहा गया है "उसके अधीन रहते हुए" — इससे यह अभिप्रेत है कि केवल वे ही कर या दायित्व उत्तरवर्ती सरकार पर न्यागत होंगे जो पूर्ववर्ती सरकार के पक्ष में या उसके विरुद्ध उपलब्ध थे । जहां किसी वाद हेतुक के लिए शासक के विरुद्ध वाद नहीं लाया जा सकता था वहां पर संविधान के पश्चात् उत्तरवर्ती राज्य के विरुद्ध भी कोई वाद नहीं लाया जा सकता यदि वाद संविधान के पूर्व हुई किसी बात के लिए है ।[41]

35. *राजस्थान राज्य* बनाम *विद्यावती*, ए 1962 एस.सी. 933 (*936*) ।
36. *भारत संघ* बनाम *जी आर सिल्क मैन्यूफैक्चरिंग कंपनी*, ए. 1964 एस.सी. 1903 (*1915*) ।
37. *राजस्थान राज्य* बनाम *श्याम लाल*, ए. 1964 एस.सी. 1495; *सुधांशुशेखर* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 196 ।
38. *डालमिया सीमेंट कंपनी* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1958 एस.सी. 816 ।
39. *अमरसिंहजी* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 504 (*533*); *अमर चंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1658 (*1662*) ।
40. *उमेद मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 953; *एसोसिएटेड स्टोन इंडस्ट्रीज* बनाम *भारत संघ*, (1961) एस.सी. [सिविल अपील 58/61, तारीख 27-11-1961] ।
41. *उमेद सिंह* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 540 ।

राजगामी या व्यपगत या स्वामीविहीन होने से प्रोद्भूत संपत्ति ।

296. इसमें इसके पश्चात् यथा उपबंधित के अधीन रहते हुए, भारत के राज्यक्षेत्र में कोई संपत्ति जो यदि यह संविधान प्रवर्तन में नहीं आया होता तो राजगामी या व्यपगत होने से या अधिकारवान् स्वामी के अभाव में स्वामीविहीन होने से, यथास्थिति, हिज मजेस्टी को या किसी देशी राज्य के शासक को प्रोद्भूत हुई होती, यदि वह संपत्ति किसी राज्य में स्थित है तो ऐसे राज्य में और किसी अन्य दशा में संघ में निहित होगी :

परंतु कोई संपत्ति, जो उस तारीख को जब वह इस प्रकार हिज मजेस्टी को या देशी राज्य के शासक को प्रोद्भूत हुई होती, भारत सरकार के या किसी राज्य की सरकार के कब्जे या नियंत्रण में थी तब, यदि वे प्रयोजन, जिनके लिए वह उस समय प्रयुक्त या धारित थीं, संघ के थे तो वह संघ में या किसी राज्य के थे तो वह उस राज्य में निहित होगी ।

स्पष्टीकरण — **इस अनुच्छेद में, "शासक" और "देशी राज्य" पदों के वही अर्थ हैं जो अनुच्छेद 363 में हैं ।**

राज्यक्षेत्रीय सागर-खंड या महाद्वीपीय मग्नतट भूमि में स्थित मूल्यवान चीजों और अनन्य आर्थिक क्षेत्र के संपत्ति स्रोतों का संघ में निहित होना ।

297. (1) *भारत के राज्यक्षेत्रीय सागर-खंड या महाद्वीपीय मग्नतट भूमि या अनन्य आर्थिक क्षेत्र में समुद्र के नीचे की सभी भूमि, खनिज और अन्य मूल्यवान चीजें संघ मे निहित होंगी और संघ के प्रयोजनों के लिए धारण की जाएंगी ।*

(2) *भारत के अनन्य आर्थिक क्षेत्र के अन्य सभी संपत्ति स्रोत भी संघ में निहित होंगे और संघ के प्रयोजनों के लिए धारण किए जाएंगे ।*

(3) *भारत के राज्यक्षेत्रीय सागर-खंड, महाद्वीपीय मग्नतट भूमि, अनन्य आर्थिक क्षेत्र और अन्य सामुद्रिक क्षेत्रों की सीमाएं वे होंगी जो संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन समय-समय पर विनिर्दिष्ट की जाएं ।*

संशोधन — 1. यह अनुच्छेद सबसे पहले संविधान (15वां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा संशोधित किया गया था और इसमें "महाद्वीपीय मग्नतट भूमि" शब्द अंतःस्थापित किए गए थे ।

2. इस अनुच्छेद के स्थान पर नया अनुच्छेद संविधान (चालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 27-5-1976 से रखा गया था । मूल पाठ को खंड (1) बना दिया गया है और खंड (2) और (3) नए जोड़े गए हैं ।

संशोधनों का प्रभाव — 1963 में यथासंशोधित इस अनुच्छेद ने भारत को अपने राज्यक्षेत्रीय सागर खंड या महाद्वीपीय मग्नतट भूमि या अनन्य आर्थिक क्षेत्र में सभी संपत्ति स्रोतों पर प्रमुख अधिकार प्रदान किए हैं । विद्यमान विधि के अधीन ऐसे सागर खंड या मग्नतट भूमि या आर्थिक क्षेत्र को राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा विनिर्दिष्ट करेगा ।

1976 में किए गए संशोधन से विधि में दो परिवर्तन हुए हैं :

(क) सागर खंड या मग्नतट भूमि के अतिरिक्त भारत के आर्थिक क्षेत्र के नीचे की भी सभी मूल्यवान वस्तुएं ही नहीं बल्कि आर्थिक क्षेत्र के अन्य सभी संपत्ति स्रोत भी संघ के प्रयोजन के लिए भारत में निहित होंगे ।

(ख) भारत के (i) सागर खंड, (ii) मग्नतट भूमि, और (iii) आर्थिक क्षेत्र की सीमाएं अब राष्ट्रपति विहित नहीं करेंगे । ये सीमाएं संसद् द्वारा विधि द्वारा विनिर्दिष्ट की जाएंगी ।

व्यापार करने आदि की शक्ति ।

[42]298. *संघ की और प्रत्येक राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार, व्यापार या कारबार करने और किसी प्रयोजन के लिए संपत्ति का अर्जन, धारण और व्ययन तथा संविदा करने पर, भी होगा :*

42. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

परंतु —

(क) जहां तक ऐसा व्यापार या कारबार या ऐसा प्रयोजन वह नहीं है जिसके संबंध में संसद् विधि बना सकती है वहां तक संघ की उक्त कार्यपालिका शक्ति प्रत्येक राज्य में उस राज्य के विधान के अधीन होगी; और

(ख) जहां तक ऐसा व्यापार या कारबार या ऐसा प्रयोजन वह नहीं है जिसके संबंध में राज्य का विधान मंडल विधि बना सकता है वहां तक प्रत्येक राज्य की उक्त कार्यपालिका शक्ति संसद् के विधान के अधीन होगी ।

व्यापार करने आदि की शक्ति : खंड (1) — 1 ये कृत्य अभिव्यक्त रूप से कार्यपालिका शक्ति में सम्मिलित किए गए हैं इसलिए यह स्पष्ट है कि इन कृत्यों को करने के लिए किसी विधायी मंजूरी की आवश्यकता नहीं है । सरकार इस बात के लिए सक्षम है कि वह अपनी कार्यपालिका शक्ति के प्रयोग में बैंकिंग का कारबार प्रारंभ करे या खनिज का विदोहन करे और प्राइवेट व्यापार से प्रतियोगिता करे ।[43]

2. अनुच्छेद 73 और 298 को एक साथ पढ़ने पर यह प्रतीत होता है कि व्यापार या कारबार करने की राज्य की कार्यपालिका शक्ति, राज्य और संघ की संसद् के विधान के अधीन है । किंतु यह संघ की कार्यपालिका शक्ति के अधीन नहीं है ।[44]

3. अपने राज्य में लाटरी चलाने में या उस पर प्रतिबंध लगाने में राज्य अन्य राज्यों द्वारा चलाई जाने वाली लाटरियों के टिकट की बिक्री को प्रतिषिद्ध नहीं कर सकता ।[44]

4 संसद् के विधान के अधीन रहते हुए यह है कि राज्य सरकार के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अनुच्छेद 298 के अधीन कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करने के पहले संघ सरकार से अनुमति प्राप्त करे । अनुच्छेद 258(1) में की कोई बात इसे प्रभावित नहीं करती ।[44]

5 संघ सरकार अनुच्छेद 258(1) के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए व्यापार या कारबार की बावत अनुच्छेद 298 के अधीन अपनी शक्ति सौंप नहीं सकती ।[44]

राज्य की शक्ति — अनुच्छेद 298 में ऐसी कोई बात नहीं है जिससे यह प्रकट होता हो कि राज्य द्वारा किया जाने वाला व्यापार या कारबार उसकी राज्यक्षेत्रीय सीमाओं के भीतर ही बंधा रहे ।[45] यदि एक राज्य दूसरे राज्य के राज्यक्षेत्र में कारबार करता है तो इससे उस राज्य की कार्यपालिका शक्ति का अतिक्रमण नहीं होता ।[45]

भाग 3 का लागू होना — अनुच्छेद 298 द्वारा प्रदत्त शक्ति अर्थात् व्यापार करना या संविदा करना, संघ या राज्य की कार्यपालिका शक्ति है । ऐसी शक्ति का प्रयोग संविधान के भाग 3 के अधीन ही हो सकता है । राज्य, प्राइवेट पक्षकारों से संविदा करते समय विभेद करके, अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं कर सकता ।[46] यह सिद्धांत विशेषाधिकार प्रदान करने वाली निविदाओं के स्वीकार करने के मामलों को भी लागू होता है । जैसे, किसी बात का लाइसेंस देना ।[47]

जब कोई पक्षकार कोई संविदा करता है तब उस संविदा के अनुषंग संविदा के उपबंधों से ही शासित होंगे संविधान के उपबंधों से नहीं ।[48] अतएव सरकार को किसी संविदा को रद्द करने के पहले कारण बताने का अवसर देना तभी आवश्यक होगा जब उससे सिविल

43. *नारायणप्पा बनाम मैसूर राज्य*, (1960) 3 एस.सी.आर. 743 (*749*) ।
44. *अनराज बनाम महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1984 एस.सी. 781 (पैरा 9, 10) ।
45. *सज्जन सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 669 (पैरा 9) ।
46. *इरूसियन इक्विपमेंट बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 266
47. *रमण बनाम अंतरराष्ट्रीय विमानपत्तन*, (1979) यू.जे.एस.सी. 115 एन. ।
48. *राधाकृष्ण बनाम बिहार राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 1496 ।

अधिकारों को क्षति पहुंचती हो (जैसे काली सूची में नाम दर्ज करना) । ऐसा होने पर नैसर्गिक न्याय के नियमों के अनुसार अवसर प्रदान किया जाना चाहिए ।[46, 49]

संविदाएं ।

299. (1) संघ की या राज्य की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करते हुए की गई सभी संविदाएं, यथास्थिति, राष्ट्रपति द्वारा या उस राज्य के राज्यपाल[50]* द्वारा की गई कही जाएंगी और वे सभी संविदाएं और संपत्ति संबंधी हस्तांतरण-पत्र, जो उस शक्ति का प्रयोग करते हुए किए जाएं, राष्ट्रपति या राज्यपाल[50]*** की ओर से ऐसे व्यक्तियों द्वारा और रीति से निष्पादित किए जाएंगे जिसे वह निर्दिष्ट या प्राधिकृत करे ।**

(2) राष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल[50]* इस संविधान के प्रयोजनों के लिए या भारत सरकार के संबंध में इससे पूर्व प्रवृत्त किसी अधिनियमिति के प्रयोजनों के लिए की गई या निष्पादित की गई किसी संविदा या हस्तांतरण-पत्र के संबंध में वैयक्तिक रूप से दायी नहीं होगा या उनमें से किसी की ओर से ऐसी संविदा या हस्तांतरण-पत्र करने या निष्पादित करने वाला व्यक्ति उसके संबंध में वैयक्तिक रूप से दायी नहीं होगा ।**

अनुच्छेद 299 का उद्देश्य — सरकार को आबद्ध करने के लिए यह आवश्यक है कि उसके अभिकर्ता एक निश्चित प्रक्रिया के अनुसार संविदा करें । यदि ऐसा नहीं हुआ तो लोकसेवक लुकछिप कर संविदा करेगा जिनका प्रभाव सरकारी कोष पर पड़ेगा ।[51] इसीलिए यह उपबंध किया गया है कि ऐसी संविदाओं के लिए राज्य पर कोई दायित्व नहीं होगा जिनसे यह प्रकट नहीं होता है कि वे राज्य की ओर से की गई हैं ।[52]

अनुच्छेद 299 सरकार द्वारा की गई संविदा की प्ररूपिकता के बारे में ही है । यह संविदा अधिनियम के उपबंधों का या संविदा से संबंधित साधारण विधि का अतिक्रमण नहीं करती ।[53]

खंड (1) : सरकार की ओर से की जाने वाली संविदा की प्ररूपिकता — "की गई कही जाएंगी" और "निष्पादित किए जाएंगे" शब्दों से यह प्रकट होता है कि इस अनुच्छेद द्वारा सम्यकतः प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा एक प्ररूपिक लिखित संविदा का दस्तावेज होना चाहिए ।[52, 54-55] पत्राचार द्वारा की गई संविदा या मौखिक संविदा सरकार पर आबद्धकर नहीं होगी ।[54] यदि संविदा करने वाला व्यक्ति इस अनुच्छेद के अधीन इस निमित्त राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा प्राधिकृत नहीं है तो भी संविदा शून्य होगी ।[52-54] यह स्पष्ट है कि इस अनुच्छेद की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए संविदा —

(क) ऐसे व्यक्ति द्वारा निष्पादित की जानी चाहिए जो, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा सम्यकतः प्राधिकृत है,[52]

(ख) ऐसे व्यक्ति द्वारा, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल की ओर से निष्पादित की जानी चाहिए,[51-52]

(ग) यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा की गई कही जानी चाहिए ।

निविदा और स्वीकृति द्वारा की गई संविदा विधिमान्य होगी यदि राष्ट्रपति की ओर

49 *जोसेफ* बनाम *कार्यपालक इंजीनियर*, ए. 1978 एस.सी. 930 (*933*) ।
50 संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।
51. *चतुरभुज* बनाम *मोरेश्वर*, (1954) एस.सी.आर. 817 (*835*) ।
52. *भीकराज* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 113 ।
53. *भारत संघ* बनाम *एस.एस.एच सिंडिकेट*, ए. 1976 एस.सी. 879 (पैरा 7) ।
54. *करमशी* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1714 (*1721*) ।
55. *न्यू मैरीन कोल कंपनी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 152 ।

से सम्यकतः प्राधिकृत व्यक्ति ने उसे स्वीकार किया है ।[56] किंतु जहां प्राधिकरण का कोई सबूत नहीं है वहां तार द्वारा संविदा की स्वीकृति से इस अनुच्छेद के अधीन संविदा का निर्माण नहीं होगा ।[57]

इस अनुच्छेद के अधीन संविदा की विवक्षा नहीं की जा सकती थी जैसे इस तथ्य से कि अर्जीदार ने सरकार द्वारा की गई नीलामी में बोली लगाई थी और वह सफल हुआ था ।[58]

"ऐसे व्यक्तियों द्वारा . . . . जैसे वह निर्दिष्ट या प्राधिकृत करे — इस अनुच्छेद में यह विहित नहीं किया गया है कि किस ढंग से राष्ट्रपति या राज्यपाल प्राधिकार प्रदान करेंगे । इसलिए यह साधारण आदेश द्वारा भी हो सकता है या किसी विशिष्ट संविदा के प्रयोजन के लिए किसी विशिष्ट अधिकारी को भी तदर्थ आदेश द्वारा प्राधिकार दिया जा सकता है । ऐसा आदेश राजपत्र में प्रकाशित किया जा सकता है या अन्य साक्ष्य द्वारा साबित किया जा सकता है ।[52, 54]

अनुच्छेद 299(1) की अपेक्षाओं का पालन न किए जाने का प्रभाव — इस अनुच्छेद के उपबंध आज्ञापक हैं,[59-60] और कोई भी पक्षकार उनका अधित्यजन नहीं कर सकता ।[56]

यदि पूर्वगामी शर्तों को पूरा नहीं किया जाता है तो संविदा शून्य होगी और सरकार के विरुद्ध प्रवृत्त नहीं की जा सकेगी ।[59-60] जिस अधिकारी ने संविदा की थी उसके विरुद्ध व्यक्तिगत हैसियत में वाद लाया जा सकता है[55] (यदि संविदा विधिमान्य है) । ऐसी संविदा का अनुसमर्थन हो सकता है ।[60]

यह ठीक है कि ऐसी दोषपूर्ण संविदा के आधार पर सरकार के विरुद्ध कोई वाद नहीं हो सकता किंतु संविदा का दूसरा पक्षकार सरकार के विरुद्ध भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 65 से 70[59, 61] के अधीन करार के अधीन प्राप्त फायदे या संविदा के लिए अनुतोष प्राप्त कर सकता है । यह अनुतोष साम्या के सिद्धांतों पर आधारित है ।[61-62]

लोक अधिकारी के व्यपदेशन के कारण सरकार के विरुद्ध वचन विबंध का नियम लागू किया गया है । यह तब भी लागू किया जाता है जब संविदा अनुच्छेद 299 के अधीन बताए गए प्ररूप में नहीं है ।[63] साक्ष्य अधिनियम की धारा 115 के निबंधनों के पूरा न होते हुए भी वचन विबंध लागू किया जा सकता है ।

ऐसे प्राइवेट पक्षकार के विरुद्ध विबंध लागू किया गया है जिसने ऐसी संविदा के अधीन फायदा प्राप्त किया था जो अनुच्छेद 299 के अनुसार निष्पादित नहीं की गई थी ।[64]

किंतु, —

---

56. *भारत संघ* बनाम *रलिया राम*, ए 1963 एस.सी 1685, *भारत संघ* बनाम *एन.के लिमिटेड*, ए. 1972 एस.सी 915 ।

57. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *रतनलाल*, (1967) एम.पी.एल.जे 104 (एस.सी), *अब्दुल* बनाम *सदाशिव*, (1969) 1 एस.सी.आर 350 (*357*) ।

58. *के.पी चौधरी* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1967 एस.सी 203 ।

59. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *बी.के मंडल*, ए 1962 एस.सी 779 (*783*); *के.पी चौधरी* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 203 ।

60. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *मुरारी*, (1971) 2 एस.सी.सी. 449 (*451*) ।

61. *मुलायमचंद* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1968 एस.सी 1218; *बिहार को-आपरेटिव सोसाइटी* बनाम *सिपाही*, ए. 1977 एस.सी. 2149 (पैरा 9) ।

62. *हंसराज* बनाम *भारत संघ*, ए. 1974 एस.सी. 2724 (पैरा 12) ।

63. *भारत संघ* बनाम *एंग्लो-अफगान एजेंसीस*, ए. 1968 एस.सी. 718 (*727*); *ललितेश्वर* बनाम *बटेश्वर*, ए. 1966 एस.सी. 580; *सेंचुरी स्पिनिंग* बनाम *यू.एम.सी.*, ए. 1971 एस.सी. 1021; *एम.पी शुगर मिल्स* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 621 (*632*) ।

64. *टिंबर काश्मीर* बनाम *कंजरवेटर*, ए. 1977 एस.सी 151 ।

(क) ऐसी संविदाएं सांपार्श्विक प्रयोजन के आधार पर शून्य नहीं हैं ।[63]

(ख) इस तथ्य से कि वह संविदा अनुच्छेद 299(1) का अनुपालन न होने के कारण सरकार के विरुद्ध शून्य है ऐसे अनुतोष या परिणाम पाने में कोई बाधा नहीं पड़ती जो अनुच्छेद 299(1) में अधिकथित संविदा की प्ररूपिकताओं से बंधे हुए नहीं है ।[51] जैसे लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के अधीन निरर्हता के प्रयोजन के लिए ।[65-66] किंतु यदि सरकार ने ऐसी संविदा का अनुमोदन करने से वस्तुतः इंकार कर दिया है तो उस संविदा को सांपार्श्विक प्रयोजन के लिए भी संविदा नहीं माना जा सकता ।[66]

(ग) यदि संविदा पर ऐसे व्यक्ति ने हस्ताक्षर किए हैं जिसे (यथास्थिति), राष्ट्रपति या राज्यपाल ने सम्यक्तः प्राधिकृत किया है तो वह केवल इस कारण अविधिमान्य नहीं हो जाएगी कि उसमें "सरकार की ओर से" शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है ।[67] यदि अन्यथा यह प्रतीत होता है कि संविदा सरकार की ओर से निष्पादित की गई है तो यह पर्याप्त होगा ।[67]

(घ) यदि अनुतोष का दावा संविदा के आधार पर नहीं किया गया है बल्कि कानूनी उपबंधों के या न्यायालय की डिक्री के आधार पर किया गया है, जिसका संविदा से कोई संबंध नहीं है, तो अनुच्छेद 299 लागू न होगा ।[68] यदि किसी विशेष अधिनियम द्वारा कोई फायदा दिया गया है तो सरकार उसके विपरीत संविदा नहीं कर सकती ।[68क]

सरकार के विरुद्ध वचन विबंध का सिद्धांत लागू किए जाने के लिए साधारण नियम ।

अ. 1. जहां कोई अधिकारी अपने प्राधिकार की परिधि के भीतर किसी स्कीम के अधीन काम करते हुए कोई व्यपदेशन करता है और उस व्यपदेशन पर काम करते हुए कोई व्यक्ति किसी अलाभप्रद स्थिति में हो जाता है तो न्यायालय उस अधिकारी से यह अपेक्षा करेगा कि वह उस स्कीम और अपने व्यपदेशन के अनुसार कार्य करे ।[69]

2. ऐसी दशा में अधिकारी किसी अस्पष्ट या अप्रकट आवश्यकता के आधार पर अपने वचन की उपेक्षा नहीं कर सकता ।[69]

3. साम्या पर आधारित यह सिद्धांत प्रतिरक्षा के भी काम आता है और कार्यवाही करने के लिए भी ।[70]

आ. किंतु —

1. अधिकारी विशेष कारणों से करार या व्यपदेशन के निबंधनों को बदल सकता है जैसे विदेशी मुद्रा की कठिनाई या कोई अन्य विषय जिसका राज्य के साधारण हित से संबंध है,[69] या कोई पश्चात्‌वर्ती घटनाएं ऐसी हुई हैं जिनसे सरकार अपने दायित्व से मुक्त हुई है ।

2. वचन विबंध की दलील (क) राज्य के विधायी कृत्यों के प्रयोग या (ख) विधि के अधीन कृत्यों के निर्वहन या किसी कानून द्वारा सौंपे गए कर्तव्य के पालन के विरुद्ध नहीं लागू होगी ।[69]

3. जहां अधिकारी अपने प्राधिकार की परिधि के बाहर काम करता है वहां सरकार

---

65. *अब्दुल बनाम सदाशिव*, ए. 1969 एस.सी. 302 ।

66 *ललितेश्वर बनाम बटेश्वर*, ए. 1966 एस.सी 580 (*585*) ।

67. *डेवकोस गार्मेंट्स फैक्ट्री बनाम राजस्थान राज्य*, (1970) 3 एस.सी.सी. 874 ।

68. *दामोदरन बनाम केरल राज्य*, ए. 1976 एस.सी 1533 (पैरा 7-8); *मुलायमचंद बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 1218 ।

68क. *जोगेंद्र लाल साह बनाम बिहार राज्य*, ए. 1991 एस.सी. 1148 ।

69. *जीत राम बनाम हरियाणा राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 1285 (*1302*) ।

70. *एम.पी. शुगर मिल्स बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 621 (*632, 644*) ।

के विरुद्ध वचन विबंध का अभिवाक नहीं लागू हो सकता क्योंकि सरकार अपने अधिकारियों के ऐसे कृत्यों से आबद्धकर नहीं हो सकती जो शक्ति बाह्य है ।[69]

वाद और कार्यवाहियां ।

300. (1) भारत सरकार भारत संघ के नाम से वाद ला सकेगी या उस पर वाद लाया जा सकेगा और किसी राज्य की सरकार उस राज्य के नाम से वाद ला सकेगी या उस पर वाद लाया जा सकेगा और ऐसे उपबंधों के अधीन रहते हुए, जो इस संविधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों के आधार पर अधिनियमित संसद् के या ऐसे राज्य के विधान मंडल के अधिनियम द्वारा किए जाएं, वे अपने-अपने कार्यकलाप के संबंध में उसी प्रकार वाद ला सकेंगे या उन पर उसी प्रकार वाद लाया जा सकेगा जिस प्रकार, यदि यह संविधान अधिनियमित नहीं किया गया होता तो, भारत डोमिनियन और तत्स्थानी प्रांत या तत्स्थानी देशी राज्य वाद ला सकते थे या उन पर वाद लाया जा सकता था ।

(2) यदि इस संविधान के प्रारंभ पर —

(क) कोई ऐसी विधिक कार्यवाहियां लंबित हैं जिनमें भारत डोमिनियन एक पक्षकार है तो उन कार्यवाहियों में उस डोमिनियन के स्थान पर भारत संघ प्रतिस्थापित किया गया समझा जाएगा; और

(ख) कोई ऐसी विधिक कार्यवाहियां लंबित हैं जिनमें कोई प्रांत या कोई देशी राज्य एक पक्षकार है तो उन कार्यवाहियों में उस प्रांत या देशी राज्य के स्थान पर तत्स्थानी राज्य प्रतिस्थापित किया गया समझा जाएगा ।

अनुच्छेद 300 का प्रविषय : राज्य द्वारा या राज्य के विरुद्ध वाद और कार्यवाहियां — इस अनुच्छेद से कोई वादहेतुक उत्पन्न नहीं होता । यह केवल इतना ही कहता है कि राज्य विधिक व्यक्ति के रूप में वाद ला सकता है या उसके विरुद्ध वाद लाया जा सकता है ।[71] वाद उन्हीं मामलों में लाया जा सकेगा जिनमें वह तब लाया जा सकता था जब कि संविधान नहीं बना था । यह उपबंध समुचित विधान मंडल के विधान के अध्यधीन होगा ।

अ. संविदा — अनुच्छेद 299 द्वारा लगाई गई शर्तों के अधीन रहते हुए, हमारे संविधान के अधीन राज्य का संविदात्मक दायित्व वही है जो संविदा की सामान्य विधि के अधीन किसी व्यक्ति का होता है ।[61]

आ. अपकृत्य — जब तक संसद् या राज्य विधान मंडल इस विषय में विधान न बनाए तब तक संघ या राज्य सरकार के विरुद्ध वाद लाया जा सकता है या नहीं इसका निर्णय उस विधि के प्रति निर्देश से किया जाएगा जो संविधान के प्रारंभ के समय थी ।[72] विद्यमान विधि के अधीन सरकार के विरुद्ध वाद लाने के उपबंध इस प्रकार हैं :

(I) सरकार के प्रभु कृत्यों के प्रयोग के दौरान यदि किसी व्यक्ति को कोई क्षति पहुंचती है तो सरकार के विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं हो सकती । प्रभु कृत्य के उदाहरण हैं :

(i) युद्ध के दौरान माल ग्रहण करना,[73] (ii) सैनिक सडक बनाना या उसकी मरम्मत करना, (iii) न्याय प्रशासन, (iv) पुलिस अधिकारी द्वारा कानूनी शक्तियों के प्रयोग में आंशिक गिरफ्तारी,[74] (v) उपेक्षा या अतिक्रमण ।[75]

सरकार द्वारा किए गए अपकृत्य के लिए राज्य उन्मुक्ति के लिए दावा तभी कर सकता

71. *पंजाब राज्य* बनाम *ओ.जी.बी. सिंडिकेट*, ए 1964 एस.सी. 669 (*679*) ।

72. *कस्तूरी लाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 1039 ।

73. *केसोराम* बनाम *राज्य सचिव*, (1926) 54 कलकत्ता 969 ।

74. *राज्य सचिव* बनाम *कोकक्राफ्ट*, (1914) 39 मद्रास 351 ।

75. *शिवभजन* बनाम *राज्य सचिव*, (1904) 28 मुंबई 314; *रोस* बनाम *राज्य सचिव*, (1913) 37 मद्रास 55 ।

है जब वह यह दर्शाए कि वह नियोजन के दौरान किया गया था और साथ ही यह भी कि जिस कार्य से क्षति पहुंची है वह प्रभु कृत्यों का प्रयोग करते हुए किया गया था । राज्य सरकार की जीप के उपेक्षापूर्ण चालन से किसी व्यक्ति को हुई क्षति के लिए उन्मुक्ति केवल इस आधार पर नहीं हो सकती कि जीप सरकारी थी । उसे यह भी दिखाना होगा कि जब घटना हुई तब कार का प्रयोग किसी प्रभु कृत्य के लिए किया जा रहा था ।[76] जिस लोकसेवक ने अपकृत्य किया वह उस समय कोई कानूनी कृत्य कर रहा था यह दिखाने मात्र से राज्य को उन्मुक्ति नहीं मिलेगी । यह दिखाना आवश्यक है कि वह कानूनी कृत्य राज्य की संप्रभु शक्ति से जुड़ा हुआ था जैसे पुलिस अधिकारी के रूप में अपनी कानूनी शक्ति का प्रयोग करते हुए किसी पुलिस अधिकारी द्वारा की गई गिरफ्तारी या अभिग्रहण ।[72]

(II) लोकसेवकों द्वारा ऐसे संव्यवहार के दौरान किए गए दोष के लिए सरकार के विरुद्ध वाद लाया जा सकता है जो कोई व्यापारी कंपनी या प्राइवेट व्यक्ति कर सकता था ।[77] इसके उदाहरण हैं —

(i) किसी गोदी,[77] या रेलवे में नियोजित सरकारी सेवक द्वारा की गई उपेक्षा से कोई क्षति, (ii) जब कभी सरकार को अपने सेवकों के दोषपूर्ण कार्य से कोई फायदा पहुंचता है तो चाहे वह कानूनी शक्ति के अधीन किया गया हो या नहीं राज्य पर अवैध रूप से किए गए लाभ को वापस करने के लिए वाद लाया जा सकेगा ठीक वैसे ही जैसे किसी प्राइवेट स्वामी के विरुद्ध होता है,[77] जैसे, जहां सरकार ने अपने अधिकारी द्वारा अवैध रूप से अभिगृहीत संपत्ति या धन को अपने पास रख लिया गया है[78] वहां उस संपत्ति को ब्याज सहित[79] प्राप्त करने के लिए सरकार के विरुद्ध वाद लाया जा सकेगा,[80] (iii) सरकार द्वारा पारित संकल्प में मानहानि,[81] (iv) सरकारी कर्मचारियों की सेवा में[82] या दुर्भिक्ष[83] राहत कार्यों में लगे हुए वाहनों द्वारा की गई क्षति ।

(III) कुछ कार्यवाहियां सरकार के विरुद्ध नहीं हो सकतीं उदाहरणार्थ, —

1. यह नहीं कहा जा सकता कि राज्य ने कोई अपराध किया है इसलिए राज्य के विरुद्ध न्यायालय के आपराधिक अवमान के लिए कोई कार्यवाही नहीं हो सकती । वह अधिकारी जिसके विरुद्ध यह कहा गया है कि उसने अवमान किया है राज्य को पक्षकार नहीं बना सकता । इस मामले में उपचार विशिष्ट अधिकारी के विरुद्ध ही मिल सकता है ।

सिविल न्यायालयों द्वारा राज्य के विरुद्ध दिए गए अस्थायी या स्थायी न्यादेश की अवज्ञा के लिए सिविल अवमान के मामले में स्थिति भिन्न है ।[84]

2. *'राजकृत्य'* के लिए सरकार को पूरी उन्मुक्ति है अर्थात् ऐसे कृत्य जो विदेशियों के विरुद्ध किए जा सकते हैं, जो देश की किसी विधि के अधीन नहीं आते किंतु राज्य की प्रभु शक्ति के प्रयोग में किए जाते हैं । किंतु राजकृत्य का यह अभिवाक् विदेशियों के विरुद्ध ही किया जा सकता है अपनी प्रजा के विरुद्ध नहीं ।[85]

76. *राजस्थान राज्य* बनाम *विद्यावती*, ए. 1962 एस सी 933 ।
77. *पी. एंड ओ. स्टीम नेविगेशन कंपनी* बनाम *राज्य सचिव*, (1861) 5 मुंबई एच सी आर परिशिष्ट क ।
78. *रामब्रह्म* बनाम *भारत डोमिनियन*, ए 1958 कलकत्ता 183 ।
79. *वासप्पा* बनाम *राज्य सचिव*, (1915) 40 मुंबई 200 ।
80. *कैलाश* बनाम *राज्य सचिव*, (1912) 40 कलकत्ता 452; *शिवभजन* बनाम *राज्य सचिव*, (1904) 28 मुंबई 314 ।
81. *जहांगीर* बनाम *राज्य सचिव*, 6 मुंबई एल आर 131, *विद्यावती* बनाम *लोहूमल*, ए 1957 राज. 305 ।
82. *भारत संघ* बनाम *सुगराबाई*, ए 1969 मुंबई 13 ।
83. *श्याम सुंदर* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1974 एस.सी 890 (पैरा 21) ।
84. *बिहार राज्य* बनाम *सोनावती*, ए. 1961 एस.सी. 221 (*228*) ।
85. *वीरेन्द्र* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर 415 (*436*) ।

अध्याय 4 — संपत्ति का अधिकार

विधि के प्राधिकार के बिना व्यक्तियों को संपत्ति से वंचित न किया जाना ।

[86]**300क.** *किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से विधि के प्राधिकार से ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।*

अनुच्छेद 300क — 1 यह अनुच्छेद 44वां संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अंतःस्थापित किया गया है । इस संशोधन के पहले संपत्ति के अधिकार की प्रत्याभूति अनुच्छेद 19(1)(च) और अनुच्छेद 31 द्वारा दी गई थी । अनुच्छेद 19(1)(च) का निरसन कर दिया गया है । अनुच्वेद 31 के खंड (1) को भाग 3 से हटाकर अनुच्छेद 300क में रखा गया है । उस अनुच्छेद के खंड (2) का जो संपत्ति के अनिवार्य अर्जन से संबंधित था निरसन कर दिया गया है । इस प्रकार संपत्ति धारण करने का अधिकार अब भारत के संविधान के अधीन मूल अधिकार नहीं रहा । अब यह विधान मंडल पर छोड़ दिया गया है कि विधि के प्राधिकार से किस व्यक्ति को संपत्ति से वंचित करे । यदि ऐसी विधि द्वारा किसी व्यक्ति की संपत्ति बिना प्रतिकर दिए छीन ली जाती है तो उसे न्यायालय में कोई उपचार नहीं मिलेगा और ऐसी विधि की विधिमान्यता पर इस आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता कि ऐसी विधि द्वारा कोई प्रतिकर संदत्त नहीं किया गया या संदेय नहीं है ।[87]

2 यदि किसी की संपत्ति कार्यपालिका द्वारा बिना विधि के प्राधिकार के छीन ली जाती है तो उसे इस आधार पर विधिक अनुतोष प्राप्त होगा कि कार्यपालिका की इस कार्यवाही से अनुच्छेद 300क का उल्लंघन होता है ।[88] यह उपबंध भाग 3 की परिधि से बाहर है अतएव व्यथित व्यक्ति अनुच्छेद 300क के उल्लंघन के लिए अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय की शरण में नहीं जा सकता । उसे अनुच्छेद 226 के अधीन उपचार मिलेगा या वह सिविल वाद लाएगा या कोई और कानूनी उपचार प्राप्त करेगा ।[88]

3 अनुच्छेद 300क में "विधि" से अभिप्रेत है संसद् या राज्य विधान मंडल का कोई अधिनियम या विधि का बल रखने वाला कोई नियम, आदेश आदि । केवल कार्यपालिका द्वारा दिया गया आदेश नहीं ।[88]

86. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से अध्याय 4 और अनुच्छेद 300क अंतःस्थापित ।

87. जब तक उच्चतम न्यायालय से कोई निर्णय प्राप्त न हो तब तक यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि क्या ऐसी विधि को 'मनमानी' होने के कारण अनुच्छेद 14 के अधीन अविधिमान्य किया जा सकता है ।

88. इस पुस्तक के अंग्रेजी के पांचवें संस्करण के पृष्ठ 317 पर डा. दुर्गादास बसु के दृष्टिकोण की *बिशम्भर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1982 एस.सी. 33 (पैरा 41-43) में अभिपुष्टि की गई है ।

भाग 13

भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर व्यापार, वाणिज्य और समागम

व्यापार, वाणिज्य और समागम की स्वतंत्रता ।

301. इस भाग के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, भारत के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र व्यापार, वाणिज्य और समागम अबाध होगा ।

अनुच्छेद 301 का विषय और उद्देश्य — अनुच्छेद 301 विधायी शक्ति के प्रयोग पर एक मर्यादा लगाता है । शक्ति चाहे संघ की हो या राज्य की ।[1] इस अनुच्छेद द्वारा घोषित स्वतंत्रता का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि भारत की आर्थिक एकता को आंतरिक चौहद्दियों द्वारा तोड़ा न जाए ।[2]

यह स्वतंत्रता अनुच्छेद 302 और 304 द्वारा प्राधिकृत विधियों द्वारा अधिरोपित निर्बन्धनों के अधीन तो होगी किंतु इसे कार्यपालिका की किसी कार्यवाही द्वारा छीना नहीं जा सकता ।[3]

अनुच्छेद 19(1)(छ) और 301 — प्रथमदृष्ट्या ऐसा प्रतीत होता है कि अनुच्छेद 19(1)(छ) और अनुच्छेद 301 में कुछ परस्पर व्याप्ति है क्योंकि दोनों ही व्यापार और कारबार की स्वतंत्रता से संबंधित हैं और इन दोनों उपबंधों में से यदि किसी का भी उल्लंघन किया जाता है तो व्यथित व्यक्ति उस दोषपूर्ण विधायी या कार्यपालिक कार्यवाही के विरुद्ध न्यायालय में उपचार प्राप्त कर सकता है । कारण यह है कि अनुच्छेद 301 के उल्लंघन से सामान्य नागरिक के अनुच्छेद 19(1)(छ) के मूल अधिकार का भी अतिलंघन होगा[4] जिससे अनुच्छेद 32 के अधीन याचिका दी जा सकेगी ।

इनमें कुछ अंतर भी है जैसे —

(क) अनुच्छेद 19(1)(छ) एक मूल अधिकार है जब कि अनुच्छेद 301 केवल न्यायनिर्णेय अधिकार है,[5]

(ख) अनुच्छेद 19(1)(छ) केवल नागरिकों को दिया गया है, अनुच्छेद 301 सबके लिए है,

(ग) अनुच्छेद 301 के उल्लंघन से अनुच्छेद 19(1)(छ) का अतिलंघन तभी होता है जब मूल अधिकार पर कोई प्रत्यक्ष आघात[4] हो । जैसे, जहां कोई विधि, व्यापार या कारबार की स्वतंत्रता को विनियमित करती है । किंतु अनुच्छेद 301 का उल्लंघन ऐसी विधि से भी हो सकता है जो विनियामक नहीं है ।[6]

व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता कब आहत होती है — अनुच्छेद 301 द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता का उल्लंघन तभी होता है जब कोई विधायी या कार्यपालिका कृत्य व्यापार, वाणिज्य या समागम को प्रत्यक्ष और अव्यवहित रूप में निर्बन्धित करता है । अप्रत्यक्ष या छोटी-मोटी बाधा को दूरस्थ माना जाता है ।[7]

---

1. *आटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1405 (*1448*) ।
2. *अतियाबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 232 (*247*); *मुंबई राज्य* बनाम *चमरबागवाला*, ए. 1957 एस.सी. 699 ।
3. *जिला कलक्टर* बनाम *इब्राहिम*, (1970) 1 एस.सी.सी. 386 (*391*) ।
4. *सय्यद अहमद* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1443 (पैरा 6) ।
5. *अतियाबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 232 ।
6. *आटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1406 ।
7. *मद्रास राज्य* बनाम *नटराज*, ए. 1969 एस.सी. 147 ।

पूर्वगामी प्रस्थापना से यह निष्कर्ष निकलता है कि विनियामक[8] या प्रतिकरात्मक[9] उपबंध को स्वतंत्रता का उल्लंघन करने वाला नहीं समझा जा सकता,[7] जैसे, यातायात का विनियम। वाहनों को लाइसेंस देना, सड़क की मरम्मत के लिए प्रभार लगाना,[10] बाजार और स्वास्थ्य के विनियम, मूल्य नियंत्रण, आर्थिक और सामाजिक योजना, न्यूनतम मजदूरी विहित करना।[7, 11] इनसे निर्बाध व्यापार में बाधा नहीं पहुंचती बल्कि निर्बाध व्यापार और वाणिज्य के मुक्त संचलन में सहायता मिलती है। उन्हें अनुच्छेद 301 द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं कहा जा सकता। ऐसा तभी हो सकता है जब व्यापार, वाणिज्य या समागम के संचलन में निर्बन्धन लगाए जाएं।

पूर्वगामी शर्त के अधीन रहते हुए, व्यापार, वाणिज्य और समागम की स्वतंत्रता को धन संबंधी[11] और धन से सरोकार न रखने वाले उपबंध से भी चोट पहुंचाई जा सकती है।

जब एक बार यह निर्धारित हो जाता है कि जो निर्बन्धन लगाया गया है वह विनियामक नहीं है बल्कि वह सीधा और अव्यवहित रूप से व्यापार या वाणिज्य के बहाव में हस्तक्षेप करता है तो वह अनुच्छेद 301 द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता में हस्तक्षेप होगा चाहे यह निर्बन्धन राज्य की सीमा में लगाया गया हो या उसके पहले या बाद के किसी चरण में।

अनुच्छेद 301 भौगोलिक सीमाओं से तो मुक्ति प्रदान करता ही है बल्कि व्यक्ति के व्यापार या कारबार करने के अधिकार को भी बंधन मुक्त रखता है। केवल विनियामक उपबंध ही लगाए जा सकते हैं।[12]

कराधान और अनुच्छेद 301 — कराधान विधियां भी संविधान के भाग 13 की परिधि के बाहर नहीं हैं।[11-12] किंतु ऐसे ही कर अनुच्छेद 301 के दायरे में आएंगे जो व्यापार पर प्रत्यक्ष और अव्यवहित रूप से निर्बन्धन लगाते हैं।

यह अवधारण करने के लिए कि क्या कोई कर अनुच्छेद 301 के विरुद्ध प्रत्यक्ष रूप से है या नहीं, यह ध्यान में रखना होगा कि माल का संचलन ही व्यापार का विषय है।[11-12] यदि कर केवल इस आधार पर लगाया जाता है कि माल कहीं ले जाए जाते हैं या वहन किए जाते हैं तो यह अनुच्छेद 301 में अनुध्यात व्यापार की स्वतंत्रता पर प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डालेगा।[11]

यदि किसी राज्य द्वारा अधिरोपित कर उस राज्य के बाहर व्यक्तियों के या माल के आवागमन को प्रभावित नहीं करता तो वह अनुच्छेद 301 का उल्लंघन नहीं करता है। जैसे, यात्री और माल पर कोई कर जो उस राज्य में होकर जाने वाले मार्ग के अनुपात में किराए और ढुलाई भाड़े पर लगाया गया है।[13] क्रय और विक्रय पर लगाया गया कोई कर व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप नहीं है।[14]

(क) ऐसा विक्रय-कर जिसमें एक राज्य और दूसरे राज्य में बनाए गए माल के बीच विभेद किया गया है अनुच्छेद 301 का उल्लंघन करने वाला होगा। इसे अनुच्छेद 304(क) द्वारा बचाया जा सकता है।[15]

8. *तमिलनाडु राज्य* बनाम *हिंद स्टोन*, ए. 1981 एस.सी. 711 (पैरा 11)।
9. *कृष्णन* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 583 (पैरा 13, 15)।
10. *असम राज्य* बनाम *लावण्य प्रभा*, ए. 1967 एस.सी. 1574 (*1578*)।
11. *अतियाबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 232; *केरल राज्य* बनाम *अब्दुल कादिर*, (1969) 2 एस.सी.सी. 363।
12. *आटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1405 (*1418*)।
13. *सैनिक मोटर्स* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1480 (*1485*)।
14. *हंसराज* बनाम *बिहार राज्य*, (1971) 1 एस.सी.सी. 59 (*64*); *आंध्र शुगर्स* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1968) 1 एस.सी.जे. 694; *वेंकटरमन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1969) 2 एस.सी.सी. 299।
15. *महताब* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 928।

(ख) अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य में प्रयुक्त किसी वस्तु पर कर अनुच्छेद 301 को चोट पहुंचाएगा यदि वह इतना अधिक है कि व्यापार और वाणिज्य के निर्बाध वहन में उससे अवरोध हो जाएगा,[11] जैसे, विदेशी शराब पर उत्पाद-शुल्क ।[16]

निम्नलिखित से अनुच्छेद 301 द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता का अतिलंघन नहीं होगा :

(i) ऐसे विनियामक अध्युपाय जिनसे व्यापार की स्वतंत्रता में वृद्धि होती है जैसे पुलिस अध्युपाय, चाहे उनमें प्रतिकर का उपबंध हो या नहीं ।

(ii) व्यापार की संविदाओं के उपयोग के लिए प्रतिकरात्मक कर जैसे सड़क, पुल आदि के अनुरक्षण के लिए कर ।[17]

यदि कोई कर किसी विधान मंडल की विधायी क्षमता के भीतर है और अन्यथा विधिक है तो उसे इस आधार पर कराधान शक्ति का आभासी प्रयोग कहकर अवैध घोषित नहीं किया जा सकता कि उससे ऐसे प्रयोग के गलत कारण दिए जा सकते हैं या उसका प्रयोग ऐसे क्रियाकलाप के विनियमन के लिए किया जा सकता है जो राज्य की शक्ति में है जैसे प्रतियोगिता समाप्त करना ।[18]

व्यापार, वाणिज्य और समागम पर निर्बन्धन अधिरोपित करने की संसद् की शक्ति ।

302. **संसद् विधि द्वारा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग के भीतर व्यापार, वाणिज्य या समागम की स्वतंत्रता पर ऐसे निर्बन्धन अधिरोपित कर सकेगी जो लोक हित में अपेक्षित हों ।**

विनियमन और निर्बन्धन — अनुच्छेद 302(5) के विनिर्दिष्ट उपबंधो के अतिरिक्त संघ और राज्य के विधान मंडलों को व्यापार और वाणिज्य की स्वतंत्रता पर ऐसा विनियामक नियंत्रण करने की शक्ति है जो निर्बन्धन की कोटि में नहीं आता है । वस्तुतः विधिसंगत विनियम से अनुच्छेद 301 की स्वतंत्रता का अतिलंघन नहीं होता ।[19] इसलिए आवश्यकता यह है कि विनियमन और निर्बन्धन के बीच अंतर रखा जाए । अनुच्छेद 302 और अनुच्छेद 304ख में "निर्बन्धन" शब्द का प्रयोग किया गया है । निर्बन्धन से अंतरराज्यिक संव्यवहारों के संचलन की स्वतंत्रता को बाधा पहुंचती है । विनियमन से उसमें बढोतरी होती है ।[19]

अ निम्नलिखित अध्युपाय विनियामक माने गए हैं :

(क) पुलिस विनियम, जैसे सड़क पर प्रकाश या सड़क के प्रयोग आदि के नियम जिनसे संचलन में सुविधा होती है,

(ख) अनुज्ञप्ति के ऐसे उपबंध जिनमें प्रतिकरात्मक फीस ली जाती है,

(ग) निर्बाध संचलन के लिए आवश्यक सेवाओं का उपबंध, चाहे उसके लिए प्रभार लिया जाए या नहीं ।[20]

आ. निम्नलिखित को निर्बन्धन माना गया है :

(i) कोई नियम जिससे विनिर्दिष्ट कालावधि में कुछ माल के संचलन को पूर्णतया प्रतिषिद्ध किया गया है ।[21]

(ii) कोई भी बात जो भारत के दो भागों के बीच व्यापार, वाणिज्य और समागम के निर्बाध संचलन को बाधा पहुंचाती है अनुच्छेद 302, 304 के अर्थान्तर्गत निर्बन्धन है जैसे किसी माल से संबंधित किसी वर्ग के वाणिज्यिक या वित्तीय संव्यवहारों का प्रतिषेध (अग्रिम संविदा) ।[22]

---

16. *कल्याणी स्टोर्स* बनाम *राज्य*, (1966) 1 एस.सी.आर. 865 (*827, 874*) ।

17. *कृष्णन* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 583 (*587*) [यदि कोई सुविधाएं नहीं दी जाती है तो कर प्रतिकरात्मक नहीं होगा (*कमलजीत* बनाम *नगरपालिका बोर्ड*, ए. 1987 एस.सी. 56)] ।

18. *तमिलनाडु राज्य* बनाम *एस.डी.ओ. एसोसिएशन*, ए. 1975 एस.सी. 1006 (पैरा 2) ।

19. *आटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1406 (*1430*) ।

20. *विशंभर* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1982 एस.सी. 33 (पैरा 37, 50) ।

21. *मैसूर राज्य* बनाम *संजीवय्या*, ए. 1967 एस.सी. 1190 ।

22. *कोटेश्वर* बनाम *के.आर.बी. कंपनी*, ए. 1969 एस.सी. 504 (*510*) ।

निर्बन्धन तभी विधिमान्य होगा जब वह, यथास्थिति, अनुच्छेद 302 या 304ख के अनुरूप हो ।

"लोकहित में" — यदि संसद् द्वारा लगाया गया कोई निर्बंधन अनुच्छेद 301 का उल्लंघन करता है तो भी वह अनुच्छेद 302 के अधीन विधिमान्य होगा यदि वह लोकहित में लगाया गया है । इसका उदाहरण है, —

(i) कर के वंचन का निवारण करने के लिए अंतरराज्यिक व्यापार को रजिस्ट्रीकृत व्यौहारियों के माध्यम से सरणीबद्ध करना[23] (अर्थात् केवल रजिस्ट्रीकृत व्यौहारी ही ऐसा व्यापार कर सकेंगे),
(ii) भारत की प्रतिरक्षा,[24]
(iii) किसी नियोजक को हानि वाले वर्ष में भी बोनस देने के लिए विवश करना,[25]
(iv) आवश्यक वस्तु अधिनियम के अधीन अधिरोपित निर्बन्धन ।[26-27]

व्यापार और वाणिज्य के संबंध में संघ और राज्यों की विधायी शक्तियों पर निर्बन्धन ।

303. (1) **अनुच्छेद 302 में किसी बात के होते हुए भी, सातवीं अनुसूची की सूचियों में से किसी में व्यापार और वाणिज्य संबंधी किसी प्रविष्टि के आधार पर, संसद् को या राज्य के विधान मंडल को, कोई ऐसी विधि बनाने की शक्ति नहीं होगी जो एक राज्य को दूसरे राज्य से अधिमान देती है या दिया जाना प्राधिकृत करती है अथवा एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच कोई विभेद करती है या किया जाना प्राधिकृत करती है ।**

(2) **खंड (1) की कोई बात संसद् को कोई ऐसी विधि बनाने से नहीं रोकेगी जो कोई ऐसा अधिमान देती है या दिया जाना प्राधिकृत करती है अथवा कोई ऐसा विभेद करती है या किया जाना प्राधिकृत करती है, यदि ऐसी विधि द्वारा यह घोषित किया जाता है कि भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग में माल की कमी से उत्पन्न किसी स्थिति से निपटने के प्रयोजन के लिए ऐसा करना आवश्यक है ।**

अनुच्छेद 303 का प्रविषय — जहां तक संसद् का प्रश्न है अनुच्छेद 303, एक प्रकार से अनुच्छेद 302 का अपवाद है । संसद् को व्यापार की स्वतंत्रता पर निर्बन्धन लगाने का प्राधिकार है । वह ऐसे निर्बन्धन लगा सकती है जो लोकहित में आवश्यक हैं किंतु ऐसा करते समय वह एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच विभेद नहीं कर सकती । यह तभी किया जा सकता है जब भारत के किसी भाग में माल की कमी से उत्पन्न किसी स्थिति से निपटने के लिए अधिमान देना या विभेद करना आवश्यक है ।

राज्य विधान मंडल भी एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच अधिमान नहीं दे सकता या विभेद नहीं कर सकता । यह प्रतिषेध अनुच्छेद 304 में विनिर्दिष्ट अपवादों के अधीन रहते हुए है । यदि ऐसा विभेद अनुच्छेद 304 के दोनों खंडों में से किसी में नहीं आता तो वह अनुच्छेद 301 और 303(1) के अधीन अमान्य हो जाएगा, जैसे, जहां राज्य विधान मंडल ने अंतरराज्यिक परिवहन परमिट देने में उन लोगों को अधिमान दिया है जो मार्ग के उस राज्य में पड़ने वाले हिस्से पर गाड़ी चलाते हैं ।[28]

अधिमान या विभेद — यह नहीं कहा जा सकता कि किसी राज्य विधान मंडल द्वारा कर लगाने से ही दूसरे राज्य के प्रति अधिमान या विभेद हो गया है क्योंकि विभिन्न राज्यों में कर की विभिन्न दरें वर्तमान हैं ।[29] इसमें अधिमान या विभेद तभी होगा जब एक राज्य

23. *तमिलनाडु राज्य बनाम सीतालक्ष्मी मिल्स*, ए. 1974 एस.सी. 1505 (पैरा 10-11) ।
24. *रशीद बनाम केरल राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2249 (पैरा 23) ।
25. *जालान ट्रेडिंग बनाम अणे*, ए. 1979 एस.सी. 233 ।
26. *कृष्ण बनाम राजस्थान राज्य*, ए. 1982 एस.सी. 29 (पैरा 5) ।
27. *विशंभर बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1982 एस.सी. 33 (पैरा 25, 28) ।
28. *रघुनाथ बनाम आंध्र प्रदेश सरकार*, ए. 1979 आंध्र प्रदेश 92 (पैरा 35) ।
29. *केरल राज्य बनाम अब्दुल कादिर*, (1969) 2 एस.सी.सी. 363 ।

में उत्पादित माल पर कर लगाया जाए और कर लगाने वाले राज्य में उत्पादित उसी प्रकार के माल को छूट दी जाए ।[30]

विद्यमान विधि — देखिए आगे अनुच्छेद 305 ।

राज्यों के बीच व्यापार, वाणिज्य और समागम पर निर्बन्धन ।

304. अनुच्छेद 301 या अनुच्छेद 303 में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, —

(क) अन्य राज्यों [31][*या संघ राज्यक्षेत्रों*] से आयात किए गए माल पर कोई ऐसा कर अधिरोपित कर सकेगा जो उस राज्य में विनिर्मित या उत्पादित वैसे ही माल पर लगता है, किंतु इस प्रकार कि उससे इस तरह आयात किए गए माल और ऐसे विनिर्मित या उत्पादित माल के बीच कोई विभेद न हो; और

(ख) उस राज्य के साथ या उसके भीतर व्यापार, वाणिज्य और समागम की स्वतंत्रता पर ऐसे युक्तियुक्त निर्बन्धन अधिरोपित कर सकेगा जो लोक हित में अपेक्षित हों :

परंतु खंड (ख) के प्रयोजनों के लिए कोई विधेयक या संशोधन राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना किसी राज्य के विधान मंडल में पुरःस्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा ।

अनुच्छेद 304 के खंड (क) का उद्देश्य — अनुच्छेद 301 में अंतरराज्य व्यापार और वाणिज्य की जिस स्वतंत्रता की घोषणा की गई है उसे यह खंड दूसरे राज्य से आयातित माल पर कर लगाने की शक्ति से नीचे का स्थान देता है । इसमें शर्त यह है कि स्थानीय उद्भव के उसी प्रकार के माल के पक्ष में कोई विभेद नहीं किया जाना चाहिए । राज्य विधान मंडल, अन्य राज्यों से लाए गए माल पर कर लगा सकता है परंतु यह तभी हो सकेगा जब कि उस राज्य के भीतर उत्पादित उसी प्रकार के माल पर भी वैसा ही कर लगाया जाता हो ।[32]

यह कहना ठीक नहीं है कि यह खंड सीमा पर लगाई जाने वाली लाग के संबंध में है अर्थात् ऐसे कर जो राज्य में प्रवेश के बिंदु पर लगाए जाते हैं । यह माल पर लगाए गए सभी करों को लागू होता है जिसमें विक्रय-कर भी सम्मिलित है ।[33] दूसरे शब्दों में यह खंड ऐसे सभी कराधान को विधिमान्य ठहराता है जो अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य पर निश्चित रूप से बंधनकारी है परंतु शर्त यह होनी चाहिए कि वह कर विभेदकारी न हो ।[34]

आयात पर अविभेदकारी कराधान — यह अवधारण करने में कि क्या कोई आयातित माल पर उस कर से अधिक कर लगाया गया है जो स्थानीय माल पर लगाया जाता है, आयातित माल पर कर के प्रभाव का अध्ययन करना होगा ।[35]

अनुच्छेद 304 के अधीन शक्ति का प्रयोग तभी प्रभावी होगा जब अन्य राज्य से आयातित माल पर अधिरोपित कर या शुल्क और राज्य के भीतर विनिर्मित या उत्पादित उसी प्रकार के माल पर लगाया गया कर या शुल्क इस प्रकार के है कि आयातित माल के विरुद्ध कोई विभेद नहीं होता है ।[32] यदि राज्य के भीतर कोई विदेशी शराब नहीं बनती है तो वह राज्य सूची 2 की प्रविष्टि 51 के साथ पठित अनुच्छेद 304क के अधीन आयातित

30. *राजस्थान राज्य* बनाम *मांगीलाल*, (1969) 2 एस.सी.सी. 710 ।
31. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा जोड़ा गया ।
32. *कल्याणी स्टोर्स* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1686 (*1691*); *राजस्थान राज्य* बनाम *मांगीलाल*, (1969) 2 एस.सी.सी. 710 (*712*) ।
33. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *आबदिअली*, ए. 1963 एस.सी. 1237 ।
34. *मुंबई राज्य* बनाम *यूनाइटेड मोटर्स*, (1953) एस.सी.आर. 1069 (*1081*) ।
35. *अब्दुल शुकूर एंड कंपनी* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1729 (*1733*) ।

विदेशी शराब पर शुल्क अधिरोपित नहीं कर सकता ।[32] किंतु अनुच्छेद 304 के लागू होने का प्रश्न तभी उत्पन्न होगा जब यह अभिनिर्धारित किया जाए कि प्रश्नगत कर अनुच्छेद 301 के विरुद्ध है ।

जब दो वस्तुएं वाणिज्यिक रूप से सुभिन्न हैं तो उनके बीच विभेद का प्रश्न नहीं होता ।[36]

"इसी प्रकार आयात किए गए माल और ऐसे विनिर्मित या उत्पादित माल" — इस खंड के अधीन विभेद का प्रश्न तभी उत्पन्न होगा जब वे माल जो आयात किए गए हैं और वे माल जिनका उसी स्थान में विनिर्माण किया गया है एक ही प्रकार के हैं । यह समानता माल की क्वालिटी और प्रकार में होगी । इस बात के बारे में नहीं कि उन पर पहले से कर लगाया गया था या नहीं ।[37]

खंड (ख) का प्रविषय — जब तक यह साबित न कर दिया जाए कि अनुच्छेद 301 का अतिलंघन हुआ है तब तक अनुच्छेद 304 के लागू होने का प्रश्न उपस्थित नहीं होता ।[38]

युक्तियुक्त निर्बन्धन — अनुच्छेद 19(6) के अधीन युक्तियुक्तता का अवधारण करने के लिए जो परीक्षण लागू किए जाते हैं वे ही अनुच्छेद 304(ख) के अधीन युक्तियुक्तता के अवधारण में लागू होंगे ।[39-40] जहां राज्य नागरिकों के कल्याण को क्षति न पहुंचने देने के बहाने अंतरराज्यिक व्यापार की वस्तुओं के आवागमन को रोकता है या इस प्रकार की भारयुक्त शर्तें एक से अधिक रूप से लगाता है जिनसे वाणिज्य में बाधा पहुंचती है तो "युक्तियुक्त" शब्द के कारण न्यायालय हस्तक्षेप कर सकता है ।[39] कोई भी अध्युपाय जो विनियामक है[41] या कर जो प्रतिकरात्मक है अयुक्तियुक्त निर्बन्धन नहीं कहा जा सकता ।[42] निर्बन्धन की युक्तियुक्तता का निर्णय उस प्रयोजन के प्रकाश में करना होगा जिसके लिए निर्बन्धन लगाया गया था अर्थात् लोकहित में उसकी आवश्यकता । यह कहा जा सकता है कि अनुच्छेद 304(ख) के अधीन ऐसे निर्बन्धन विधिमान्य रूप से लागू किए जा सकते हैं जो राज्यक्षेत्र के भीतर लोक स्वास्थ्य, सुरक्षा, नैतिकता और संपत्ति के संरक्षण के लिए हों ।[43]

अनुच्छेद 304(ख) की परिधि के भीतर आने वाला अधिरोपण केवल इस आधार पर अयुक्तियुक्त नहीं हो जाता कि उसे भूतलक्षी प्रभाव दिया गया है और न्यायालय द्वारा अवैध ठहराए गए किसी उद्ग्रहण को विधिमान्य किया गया है[44] अथवा भूतलक्षी प्रभाव समय के एक बहुत बड़े अंतराल को आच्छादित करता है ।[45] इस पूरे समय में कर की विधिमान्यता से संबंधित कार्यवाहियां न्यायालय में लंबित रही थीं ।[46] इस कारण कोई अधिनियम

36. *वेंकटरमन* बनाम *मद्रास राज्य*, (1969) 2 एस सी सी 299 (*304*) ।

37. *महताब* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1963 एस सी 928 ।

38. *केरल राज्य* बनाम *अब्दुल कादिर*, (1969) 2 एस सी सी 363 (*371*) ।

39 *टीका रामजी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1956) एस.सी.आर. 393; *ब्रजलाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 129; *अवध शुगर मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1970 एस.सी. 1070 ।

40. *सैरबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 925 ।

41. *आटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1962 एस.सी. 1406 ।

42. *कृष्णन* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए 1975 एस सी. 583 (पैरा 29) ।

43. *कल्याणी स्टोर्स* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1686 (*1691*) ।

44. *अतियाबारी टी कंपनी* बनाम *असम राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 232 (*253*); *आटोमोबाइल ट्रांसपोर्ट* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1962 एस सी. 1406 (*1416*) ।

45 *रामकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1667 (*1675-76*) ।

46. *अब्दुल* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 182 (पैरा 19) ।

अयुक्तियुक्त नहीं माना जाएगा कि वाहनों का कोई स्वामी उस भूतकाल की अवधि की बाबत यात्रियों से कर वसूल नहीं कर सकता या कोई व्यौहारी उस बीती हुई अवधि की बाबत क्रेताओं से विक्रय-कर नहीं ले सकता ।[46]

निम्नलिखित को युक्तियुक्त निर्बन्धन नहीं माना जा सकता, किसी विद्यमान कर का लगाया जाना या उसकी वृद्धि जिसका एकमात्र उद्देश्य धन प्राप्त करना है ।[43] व्यापार की स्वतंत्रता पर लगाया गया कोई निर्बन्धन अनुच्छेद 304(ख) के अधीन विधिमान्य तभी होगा जब यह साबित कर दिया जाए कि वह लोकहित में है और युक्तियुक्त है । यह साबित करने का भार राज्य पर होगा ।[45]

लोकहित में — लोकहित में लगाए गए निर्बन्धनों के उदाहरण हैं, —

स्वास्थ्य के लिए खतरनाक किसी वस्तु के विक्रय पर विनियम, जैसे तम्बाकू,[46] शराब या अन्य नशीली वस्तुओं के *आयात पर कर* ।[47]

ऊपर अनुच्छेद 302 भी देखिए ।

परंतुक : खंड (ख) के अधीन राज्य विधि के लिए राष्ट्रपति की मंजूरी की अपेक्षा — परंतुक में यह कहा गया है कि राज्य विधान मंडल को व्यापार, वाणिज्य या समागम की स्वतंत्रता पर लोकहित में खंड (ख) द्वारा युक्तियुक्त निर्बन्धन लगाने के लिए सशक्त किया गया है किंतु राज्य विधान मंडल में इस प्रयोजन के लिए कोई विधि या संशोधन राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना प्रस्तुत नहीं किया जाएगा ।

पूर्व मंजूरी के बिना यदि कोई विधेयक या संशोधन प्रस्तुत किया जाता है तो इस दोष को बाद में राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त करके ठीक किया जा सकता है ।[44] यह अनुच्छेद 255 में बताया गया है ।

विधेयक ही नहीं यदि कोई संशोधन भी निर्बन्धन लगाता है तो अनुच्छेद 304(ख) के अनुसार उसके लिए भी राष्ट्रपति की मंजूरी की अपेक्षा होगी । किंतु जहां किसी विद्यमान विधि या आदेश ने[48] पहले से ही ऐसे निर्बन्धन अधिरोपित कर दिए हैं और यदि किसी अन्य विषय की बाबत उस विधि या आदेश का संशोधन किया जाता है तो उक्त मंजूरी आवश्यक नहीं होगी चाहे संशोधन संविधान के प्रारंभ के बाद किया जा रहा हो । यदि कोई संशोधन विनियामक है और मूल अधिनियम ने जो निर्बन्धन लगाए थे उनके अतिरिक्त कोई निर्बन्धन नहीं लगाता है तथा मूल अधिनियम को राष्ट्रपति की मंजूरी मिल गई थी तो संशोधन के लिए मंजूरी लेना आवश्यक नहीं है ।[49]

कराधान विधि की युक्तियुक्तता — अनुच्छेद 19 के समान ही अनुच्छेद 304ख के अधीन कराधान विधि द्वारा अधिरोपित निर्बन्धन की युक्तियुक्तता का न्यायालय पुनर्विलोकन कर सकते हैं ।[50]

कोई कर केवल इस कारण अयुक्तियुक्त या अधिहरणकारी नहीं माना जा सकता कि —

(i) उसमें एक सपाट दर लगाई गई है यद्यपि उसका उद्देश्य सड़क में सुधार करने के लिए निधि एकत्र करना है,[50] या

(ii) वह एक पुरानी विधि को जिसे *अविधिमान्य* घोषित किया गया था विधिमान्य करके कर वसूल करने के लिए है ।

47. *कल्याणी स्टोर्स बनाम उड़ीसा राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1686; *सतपाल बनाम उपराज्यपाल*, ए. 1979 एस.सी. 1553 (पैरा 17) ।

48. *टीका रामजी बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, (1956) एस.सी.आर. 393 ।

49. *सय्यद अहमद बनाम मैसूर राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 1443 (पैरा 22, 24) ।

50. *खैरबारी टी कंपनी बनाम असम राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 925 (*937, 942*) ।

विद्यमान विधियों और राज्य के एकाधिकार का उपबंध करने वाली विधियों की व्यावृत्ति ।

305. जहां तक के सिवाय जहां तक राष्ट्रपति आदेश द्वारा अन्यथा निदेश दे [51]अनुच्छेद 301 और अनुच्छेद 303 की कोई बात किसी विद्यमान विधि के उपबंधों पर कोई प्रभाव नहीं डालेगी और [52][*अनुच्छेद 301 की कोई बात संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 के प्रारंभ से पहले बनाई गई किसी विधि के प्रवर्तन पर वहां तक कोई प्रभाव नहीं डालेगी जहां तक वह विधि किसी ऐसे विषय से संबंधित है, जो अनुच्छेद 19 के खंड (6) के उपखंड (ii) में निर्दिष्ट है या वह विधि ऐसे किसी विषय के संबंध में, जो अनुच्छेद 19 के खंड (6) के उपखंड (ii) में निर्दिष्ट है, विधि बनाने से संसद् या किसी राज्य के विधान मंडल को नहीं रोकेगी* ।]

पहली अनुसूची के भाग ख के कुछ राज्यों की व्यापार और वाणिज्य पर निर्बन्धनों के अधिरोपण की शक्ति

306. *संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 29 और अनुसूची द्वारा निरसित ।*

अनुच्छेद 301 से अनुच्छेद 304 के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए प्राधिकारी की नियुक्ति ।

307. **संसद् विधि द्वारा, ऐसे प्राधिकारी की नियुक्ति कर सकेगी जो वह अनुच्छेद 301, अनुच्छेद 302, अनुच्छेद 303 और अनुच्छेद 304 के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए समुचित समझे और इस प्रकार नियुक्त प्राधिकारी को ऐसी शक्तियां प्रदान कर सकेगी और ऐसे कर्तव्य सौंप सकेगी जो वह आवश्यक समझे ।**

---

51. *प्रीतिपाल* बनाम *मुख्य आयुक्त*, ए. 1966 पंजाब 4 (एफ.बी.) देखिए ।

52. संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा कोष्ठक में दिए गए शब्द जोड़े गए

भाग 14

संघ और राज्यों के अधीन सेवाएं

अध्याय 1 — सेवाएं

सेवाओं पर प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 का प्रभाव — संविधान के बयालीसवें संशोधन अधिनियम, 1976 में सेवाओं के संबंध में सांविधानिक विधि में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। इस संशोधन द्वारा संविधान में एक अनुच्छेद 323क जोड़ा गया जिससे संघ और राज्य की लोक सेवा में भर्ती और सेवा की शर्तों से संबंधित विवादों का न्यायनिर्णयन सिविल न्यायालय और उच्च न्यायालयों के हाथ से निकाल लिया गया है और उसे संघ या राज्य के प्रशासनिक अधिकरण को सौंप दिया गया है । संविधान का यह उपबंध तभी प्रभावी होने वाला था जब उसे लागू करने के लिए संसद् कोई विधि बनाए । 1985 में संसद् ने यह विधि बना दी और उसे 2 अक्तूबर, 1985 को प्रवृत्त करते हुए केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण की स्थापना कर दी गई जिसकी शाखाएं विनिर्दिष्ट नगरों में हैं ।[1]

1986 में यथासंशोधित प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 के अनुसार केन्द्रीय प्रशासनिक अधिकरण संघ या किसी राज्य के अथवा संघ सरकार के नियंत्रण के अधीन निगम और अन्य प्राधिकरण के कार्यकलाप से संबंधित लोक सेवाओं और पदों के लिए भर्ती तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों के संबंध में विवादों और परिवादों के न्यायनिर्णयन का कार्य करेगा । इसके निम्नलिखित अपवाद हैं —

(क) प्रतिरक्षा सेवाओं के सदस्य,

(ख) उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के अधिकारी और सेवक,

(ग) संसद् या किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र के विधान मंडल के सचिवालय के कर्मचारिवृन्द के सदस्य ।

इन प्रवर्गों को छोड़कर संघ का कोई भी लोक सेवक जो अपनी नियुक्ति, हटाए जाने या पंक्ति में घटाए जाने या इसी प्रकार के किसी विषय मे व्यथित है उसे अधिकरण से न्याय पाकर संतोष करना होगा । वह न्यायालय के समक्ष नहीं जा सकता । वह केवल एक ही न्यायालय में जा सकता है और वह है उच्चतम न्यायालय । उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता अनुच्छेद 32 और 136 के अधीन है ।

अतएव प्रशासनिक अधिकरण के विनिश्चयों पर केवल उच्चतम न्यायालय में ही आक्षेप किया जा सकता है । उच्चतम न्यायालय अनुच्छेद 226 या 227 के अधीन हस्तक्षेप नहीं कर सकता । अनुच्छेद 323क के खंड (3) के कारण अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा भी प्रशासनिक अधिकरण की अधिकारिता को प्रभावित नहीं किया जा सकता । अधिकरण की अधिकारिता संघ की विनिर्दिष्ट लोक सेवाओं में भर्ती और सेवाओं की शर्तों से संबंधित विवादों या परिवादों तक ही सीमित हैं ।

राज्य की लोक सेवाओं के संबंध में न्यायालय की अधिकारिता तब तक बनी रहेगी जब तक कि उस राज्य के लिए प्रशासनिक अधिकरण की स्थापना नहीं कर दी जाती । अनुच्छेद 309 के अधीन आने वाले सभी कर्मचारियों की भर्ती और सेवा की शर्तों के बारे में अधिष्ठायी

1. *एस. पी. संपतकुमार बनाम भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी. 386 में उच्चतम न्यायालय ने यह कहा कि जहां-जहां उच्च न्यायालय है वहां-वहां प्राधिकरण होना चाहिए ।

विधि पहले जैसी ही है और वह उक्त अनुच्छेद के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा शासित होता रहेगा, केवल निर्णय करने वाली पीठ के बारे में परिवर्तन किया गया है ।

प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 द्वारा जो व्यापक परिवर्तन किए गए हैं उनके कारण इस अध्याय में सेवाओं से संबंधित विधि का जो वर्णन किया गया है उसे अधिकरण की अधिकारिता के प्रति निर्देश से समझना चाहिए । जहां भी संविधान के अनुच्छेद 226 या 227 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता बताई गई है वहां बदली हुई परिस्थिति में अधिकरण वही कार्य करेगा [देखिए आगे अनुच्छेद 323(क)] ।

निर्वचन ।

308. इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, "राज्य" पद [1क][*के अंतर्गत जम्मू-कश्मीर राज्य नहीं है*] ।

संघ या राज्य की सेवा करने वाले व्यक्तियों की भर्ती और सेवा की शर्तें ।

309. इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, समुचित विधान मंडल के अधिनियम संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप से संबंधित लोक सेवाओं और पदों के लिए भर्ती का और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का विनियमन कर सकेंगे :

परंतु जब तक इस अनुच्छेद के अधीन समुचित विधान मंडल के अधिनियम द्वारा या उसके अधीन इस निमित्त उपबंध नहीं किया जाता है तब तक, यथास्थिति, संघ के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों की दशा में राष्ट्रपति या ऐसा व्यक्ति जिसे वह निर्दिष्ट करे और राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों की दशा में राज्य का राज्यपाल [2]***** या ऐसा व्यक्ति जिसे वह निर्दिष्ट करे, ऐसी सेवाओं और पदों के लिए भर्ती का और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का विनियमन करने वाले नियम बनाने के लिए सक्षम होगा और इस प्रकार बनाए गए नियम किसी ऐसे अधिनियम के उपबंधों के अधीन रहते हुए प्रभावी होंगे ।**

"इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए" — अनुच्छेद 309 द्वारा प्रदत्त शक्ति इस अनुच्छेद के प्रारम्भिक शब्दों के अध्यधीन है । ये शब्द न केवल विधान मंडल की शक्ति को शासित करते हैं बल्कि परंतुक द्वारा प्रदत्त नियम बनाने की शक्ति को भी ।[3] अतएव यदि कोई नियम संविधान के किसी उपबंध का उल्लंघन करता है, जैसे अनुच्छेद 14, 15, 16, 19, 229, 234,[4] 310(1), 311(1)[5] या 311(2)[6] का, तो वह नियम शून्य होगा । संविधान में यह उपबंध है कि संघ और राज्य के क्रियाकलाप से संबंधित कुछ अधिकारी किस प्रकार नियुक्त किए जाएंगे और उनकी सेवा की शर्तें क्या होंगी, जैसे महान्यायवादी [अनुच्छेद 76] । इसी प्रकार संविधान में कुछ अन्य उपबंध हैं जिनके द्वारा लोकसेवकों के कुछ वर्ग की सेवाओं के संबंध में नियम बनाने की शक्ति कुछ अन्य प्राधिकारियों को दी गई हैं जैसे अनुच्छेद 98 और 187 [संसद् के दोनों सदनों और राज्य विधान मंडल के कर्मचारियों के संबंध में], अनुच्छेद 146(2) [उच्चतम न्यायालय के अधिकारों के संबंध में], अनुच्छेद 148(5) [भारतीय संपरीक्षा और लेखा विभाग में काम करने वाले व्यक्ति], अनुच्छेद 229(2) [उच्च न्यायालय के अधिकारी] । अतएव अनुच्छेद 309 इन वर्गों के सरकारी सेवकों को लागू नहीं होगा ।[7]

1क. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "प्रथम अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट राज्य अभिप्रेत है" शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

3. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *बाबूराम*, ए. 1961 एस.सी. 751 (*761*) ।

4. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *नृपेन बागची*, ए. 1966 एस.सी. 447 (*450*) ।

5. *सरदारी लाल* बनाम *भारत संघ*, (1971) 1 एस.सी.सी. 411 (*414*) ।

6. *मोती राम* बनाम *एन.ई.एफ. रेलवे*, ए. 1964 एस.सी. 600 (*610*); *मैसूर राज्य* बनाम *पद्मनाभाचार्य*, ए. 1966 एस.सी. 602 (*605*) ।

7. तुलना कीजिए, *पी.के. बोस* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एस.सी.आर. 1331 ।

परंतुक का प्रविषय — 1. *यह एक अंतःकालीन उपबंध है जिससे कार्यपालिका को उपरोक्त विषय में विधि का बल रखने वाले नियम बनाने की शक्ति दी गई है । इसका प्रयोग तभी तक किया जा सकेगा जब तक समुचित विधान मंडल इस विषय पर विधान न बनाए । अनुच्छेद 313 में यह कहा गया है कि यदि विद्यमान नियम संविधान के उपबंधों से असंगत नहीं हैं तो वे तब तक बने रहेंगे जब तक कि इस अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त शक्तियों के प्रयोग में नियम नहीं बनाए जाते । यह एक समर्थ बनाने वाला उपबंध है ।*

2. इसका यह अर्थ नहीं है कि जब तक अनुच्छेद 309 के अधीन नियम न बनाया जाए तब तक किसी पद का सृजन नहीं हो सकता या किसी व्यक्ति को किसी पद पर नियुक्त नहीं किया जा सकता ।[8]

नियम बनाने की शक्ति की प्रकृति — अनुच्छेद 309 के परंतुक द्वारा प्रदत्त शक्ति ऐसे नियम बनाने की शक्ति है जो साधारण है यद्यपि उन्हें सरकारी सेवकों के विशिष्ट वर्ग को लागू किया जा सकता है । उसका उपयोग तदर्थ घोषणा करने के लिए नहीं किया जा सकता जैसे यह घोषणा नहीं की जा सकती कि अवैध रूप से सेवानिवृत्त किए गए व्यक्ति विधि के अनुसार सेवा निवृत्त किए गए समझे जाएंगे ।[9] अनुच्छेद 309 के अधीन बनाया गया नियम उसी अनुच्छेद के अधीन बनाए गए नियम या अधिसूचना द्वारा संशोधित किया जा सकता है।[10] इस परंतुक के अधीन कार्यपालिका की नियम बनाने की शक्ति अनुच्छेद 309 के मुख्य पैरा के अधीन विधान मंडल की शक्ति के समान विस्तार वाली है ।[11] अतएव यह नहीं कहा जा सकता कि राज्यपाल विधान बनाए बिना सेवा निवृति की आयु में परिवर्तन नहीं कर सकता ।[12]

सेवा के नियमों का कानूनी बल — 1. अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियम या पहले के संविधान अधिनियम के अधीन बनाए गए नियम जो अनुच्छेद 313 द्वारा चालू रखे गए हैं,[13] विधि का बल रखते हैं ।[14-15] संविधान के पहले स्थिति इससे भिन्न थी । ये नियम विधि का बल तभी पाते हैं जब कि वे संविधान के उपबंधों से असंगत न हों । इसमें अनुच्छेद 310 भी सम्मिलित है जिसमें प्रसाद का सिद्धांत समाविष्ट है ।[16] इसलिए यह नियम कर्मचारी और सरकार दोनों पर आबद्धकर है ।[17]

2. यहां यह उपधारणा की गई है कि सरकार के निर्णय को कानूनी नियम के रूप में अभिव्यक्त और प्रकाशित किया गया है । यदि ऐसा नहीं किया गया है तो उसे कार्यपालिका के निर्देश के बराबर ही महत्व मिलेगा । अनुदेश के आधार पर ऐसा कोई आदेश नहीं दिया जा सकता जो सरकारी सेवक पर प्रतिकूल प्रभाव डालता हो ।[18]

3. असांविधिक नियमों द्वारा कानूनी नियमों में उपान्तरण नहीं किया जा सकता ।[10]

---

8. *रमेश बनाम बिहार राज्य*, ए. 1978 एस.सी. 327 (पैरा 5) ।
9. *मद्रास राज्य बनाम पद्मनाभाचार्य*, ए. 1966 एस.सी. 602 (*605*) ।
10. *सक्सेना बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1967 एस.सी. 1264 (*1267-68*); *करसनिस बनाम भारत संघ*, ए. 1974 एस.सी. 2302 (पैरा 4) ।
11. *वडेरा बनाम भारत संघ*, ए. 1969 एस.सी. 118 (*123*) ।
12. *लक्ष्मण बनाम कर्नाटक राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1646 (पैरा 27-29) ।
13. *वेंकट बनाम राज्य सचिव*, ए. 1937 पी.सी. 31 ।
14. *मैसूर राज्य बनाम बेल्लारी*, ए. 1965 एस.सी. 868; *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम बाबूराम*, ए. 1961 एस.सी. 751 (*763*) ।
15. *लेख राज बनाम भारत संघ*, (1971) 1 एस.सी.सी. 780 (*784*); *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अयोध्या*, (1961) 2 एस.सी.आर. 671 ।
16. *शुक्ला बनाम गुजरात राज्य*, (1970) 1 एस.सी.सी. 419 (*425*) ।
17. *दिनेश बनाम असम राज्य*, ए. 1978 एस.सी. 17 (पैरा 13) ।
18. *सक्सेना बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1264 (*1266-67*) ।

किंतु सरकार ऐसे विषयों के बारे में प्रशासनिक निदेश दे सकती है जिन पर कानूनी नियम मौन है ।[19] *यदि अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियमों में कोई बात छूटी नहीं है* तो उसके बारे में अन्य प्रशासनिक आदेश या अनुदेश नहीं दिया जा सकता । *यदि दिया* गया तो वह अविधिमान्य होगा ।[20]

सेवा नियमों की प्रवर्तनीयता — सेवा नियमों की प्रवर्तनीयता का प्रश्न इस बात से भिन्न है कि वह नियम कानूनी है या अन्यथा । सभी कानूनी नियम विधि द्वारा प्रवर्तनीय हों यह आवश्यक नहीं है । यदि कोई नियम आज्ञापक है और उसका भंग होता है तो न्यायालय हस्तक्षेप करेगा ।

अ. *अप्रवर्तनीय नियम* — निम्नलिखित प्रवर्ग के सेवा नियम विधिक रूप से प्रवर्तनीय नहीं है यद्यपि वे कानूनी हैं और विधि का बल रखते है ।

I. *ऐसे नियम जो निदेशात्मक हैं* — जैसे उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है[21] कि यद्यपि उत्तर प्रदेश पुलिस विनियम की रचना पुलिस अधिनियम, 1861 के अधीन की गई है उसके कुछ नियम निदेशात्मक हैं और उन्हें विधिक कार्यवाहियों द्वारा प्रवृत्त नहीं कराया जा सकता ।

II. *ऐसे नियम जो विवेक शक्ति प्रदान करते हैं कर्तव्य का सृजन नहीं करते* — जहां प्रशासन को कुछ फायदे या विशेषाधिकार देने के लिए विवेकाधिकार प्रदान किया जाता है वहां सरकारी सेवक के पक्ष में कोई विधिक अधिकार उत्पन्न नहीं होता । अतएव ऐसे अधिकथित अधिकार को प्रवृत्त करने के लिए कोई विधिक कार्यवाही नहीं की जा सकती,—

(क) *महगाई भत्ता* — जिस व्यक्ति को महंगाई भत्ता नहीं दिया गया है वह कोई विधिक अनुतोष की मांग नहीं कर सकता ।[22] वह ऐसा तभी कर सकेगा जब अनुच्छेद 14 जैसे किसी सांविधानिक उपबंध का उल्लंघन किया गया हो ।[22]

(ख) *ज्येष्ठता और प्रोन्नति* — प्रोन्नति[23] या ज्येष्ठता में किसी विशिष्ट पंक्ति[24] के लिए दावे के बारे में भी यह बात लागू होती है । दावा तभी किया जा सकता है जब कानूनी बल रखने वाले नियमों द्वारा वह शासित हो ।[25-26] ऐसा होने पर ज्येष्ठता सूची रद्द करते हुए उसके पुनरीक्षण का निदेश दिया जा सकता है ।[26]

काडर बाह्य पद पर काम करने से किसी कर्मचारी को उस विभाग में ज्येष्ठता पाने का अधिकार नहीं मिलता ।[27]

किंतु, —

अनुच्छेद 14 और 16(1) के कारण सरकारी सेवक को यह अधिकार है कि जब कोई रिक्ति हो तब उच्चतर पद पर प्रोन्नति के लिए उसके नाम पर विचार किया जाए ।[23]

आ. *आज्ञापक नियम* — जब कोई नियम आज्ञापक होता है[28] (और वह संविधान

19. *संतराम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1910 (*1914*); *भारत संघ* बनाम *जोसेफ*, ए. 1973 एस.सी. 303; *अमरजीत* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 984 (पैरा 8) ।

20. *जिला रजिस्ट्रार* बनाम *कौय्याकुट्टि*, ए. 1979 एस.सी. 1060 ।

21. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *बाबूराम*, ए. 1961 एस.सी. 751 (*763*) ।

22. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *मंडावर*, ए. 1954 एस.सी. 493 ।

23. *संतराम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1910 ।

24. *उच्च न्यायालय* बनाम *अमलकुमार*, ए. 1962 एस.सी. 1704 ।

25. *डी.आर. निम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1301; *जयसिंघानी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1427 ।

26. *मैसूर राज्य* बनाम *चंद्रशेखर*, ए. 1965 एस.सी. 532 (*537-38*) ।

27. *नोहिरिया राम* बनाम *महानिदेशक*, ए. 1958 एस.सी. 113 ।

28. *निरंजन सिंह* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1957 एस.सी. 142; तुलना कीजिए, *मुंबई राज्य* बनाम *नूरुल लतीफ*, (1965) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 667 ।

से असंगत नहीं है) तो वह उसी प्रकार प्रवृत्त किया जाएगा जिस प्रकार अन्य कानूनी नियम । उसे प्रशासनिक निदेश मात्र नहीं कहा जा सकता । यदि उस नियम के उल्लंघन से कर्मचारी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है तो उसे प्रवृत्त किया जाएगा ।[29]

इ. *अनुशासनिक कार्यवाहियां* — जहां कोई नियम, पदच्युति, पद से हटाया जाना या पंक्ति में अवनत किए जाने से संबंधित है और अनुच्छेद 311 द्वारा दिए गए रक्षोपाय जैसी ही कोई बात अधिकथित करता है तो उस नियम के प्रवृत्त कराने का प्रश्न केवल शास्त्रिक विचार रह जाता है क्योंकि उस प्रश्न का जो भी निर्णय हो व्यथित कर्मचारी को अनुतोष अवश्य मिलेगा ।

किंतु यदि नियम किसी ऐसे विषय के संबंध में है जो अनुच्छेद 311 में नहीं आता है या अनुशासनिक कार्यवाही के संबंध में है किंतु उसमें ऐसा रक्षोपाय दिया गया है जो अनुच्छेद 311 के अतिरिक्त है तो ऐसे नियम का उल्लंघन होने पर क्या कर्मचारी को न्यायालय में अनुतोष मिल सकेगा यद्यपि अनुच्छेद 311 का उल्लंघन नहीं हुआ है?

(i) यदि अनुच्छेद 310 या 311 अथवा संविधान के किसी अन्य उपबंध का उल्लंघन होता है तो वह नियम शून्य हो जाएगा । यदि नियम में यह उपबंध है कि सरकारी सेवक को हटाया ही नहीं जा सकता तो वह राष्ट्रपति या राज्यपाल के प्रसाद पर निर्बन्धन के रूप में होगा और तदनुसार उसे प्रवृत्त नहीं किया जा सकता ।[30]

(ii) किंतु यदि नियम अनुच्छेद 311(2) में अधिकथित प्रक्रिया के अतिरिक्त कोई प्रक्रिया अधिरोपित करता है और अनुच्छेद 310 के अधीन सरकार के प्रसाद पर कोई बंधन नहीं लगाता है तो कानून का बल रखने वाले ऐसे नियम को प्रवृत्त न करने का कोई कारण नहीं ।[30]

उदाहरण के लिए, —

(क) जहां नियम यह कहता है कि पुलिस अधिकारियों के विरुद्ध कुछ अपराधों से संबंधित आरोप की बाबत विभागीय कार्यवाही तभी की जा सकेगी जब ऐसे आरोपों के बारे में पुलिस अन्वेषण किया गया हो । पुलिस अन्वेषण के बिना की गई विभागीय कार्यवाही परमादेश द्वारा विखंडित कर दी जाएगी ।[30]

(ख) जहां कानूनी नियम यह कहता है कि यदि अभियुक्त व्यक्ति यह चाहता है तो उसके हटाए जाने या पदच्युत किए जाने के पहले मौखिक जांच होनी चाहिए वहां यदि ऐसी जांच किए बिना पदच्युति की जाती है या उसे हटाया जाता है तो वह अविधिमान्य होगा ।[31]

(ग) यदि कानूनी नियम (जैसे रेलवे स्थापन संहिता का नियम, 1721) यह उपबंध करता है कि, --

(i) अपराधी अधिकारी को किसी अन्य रेल सेवक या ट्रेड यूनियन के अधिकारी की (जो विधि व्यवसायी नहीं है) सहायता लेने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए, ।[32]

(ii) यदि अपील प्राधिकारी से अनुरोध किया जाता है तो वह अपीलार्थी की व्यक्तिगत सुनवाई करेगा ।[32]

(iii) अपील प्राधिकारी कुछ विनिर्दिष्ट बातों पर आवश्यक विचार करेगा[32] और यदि ऐसा प्रतीत होता है कि उन कानूनी अपेक्षाओं में से किसी का पालन नहीं किया गया है तो आदेश विखंडित किया जा सकेगा ।[32]

(iv) नियम की विषय-वस्तु सेवा के पर्यवसान से भिन्न किसी विषय से संबंधित हो सकती है । यदि ऐसा नियम आज्ञापक है तो उसे प्रवृत्त करने पर प्रसाद के नियम पर कोई बंधन नहीं लगेगा । जैसा उच्चतम न्यायालय ने कहा है[33] कि सेवा की पदावधि राज्य के प्रसाद पर है तो इसका अर्थ यह नहीं कि सेवा की अन्य शर्तें भी राज्य के प्रसाद पर आधारित हों ।

29. *शर्मा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1976 एस.सी. 2037 (पैरा 6) ।

30. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *बाबूराम*, ए. 1961 एस.सी. 751 (*758, 765-66*); *भारत संघ* बनाम *तुलसीराम*, ए. 1985 एस.सी. 1416 (पैरा 54) ।

31. *मुंबई राज्य* बनाम *नूरुल लतीफ*, (1965) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 667 ।

32. *गोस्वामी* बनाम *महाप्रबंधक, दक्षिण-पूर्व रेलवे*, ए. 1965 कलकत्ता 557 (*561*) ।

33. *रामनाथ* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 2641 (सी.बी.) ।

क्या नियमों को भूतलक्षी प्रभाव से परिवर्तित किया जा सकता है ? — क्या सरकार अनुच्छेद 309 के अधीन नियम बनाकर नियम को परिवर्तित कर सकती है । इस प्रश्न का उत्तर उच्चतम न्यायालय ने हां में दिया है ।[34-36] किंतु यदि नियमों को भूतलक्षी प्रभाव देने से किसी स्वतंत्र सांविधानिक उपबंध का उल्लंघन होता है[34] जैसे अनुच्छेद 14,[37] 16[38] या कोई अन्य[35] तो प्रभावित व्यक्ति कार्यवाही कर सकता है ।[16]

यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि किसी व्यक्ति को "ज्येष्ठता-सह-योग्यता" के नियम के आधार पर प्रोन्नति प्रदान की गई है तो बाद में प्रोन्नति के नियम को बदलकर उस पद को चयन पद बनाकर उस व्यक्ति को प्रभावित नहीं किया जा सकता ।[39]

इस संदर्भ में यह ध्यान देने योग्य है कि जहां किसी नियम या संशोधन को उसके प्रवृत्त होने की तारीख से ही प्रभावी किया जाता है, किसी पहले की तारीख से नहीं, तो केवल इस कारण यह नहीं कहा जा सकता कि वह भूतलक्षी प्रभाव रखता है । वह ऐसे व्यक्तियों को प्रभावित करता है जो उस नियम या संशोधन के प्रारंभ होने की तारीख से पहले सेवा में आ गए थे ।[40] संशोधन को भूतलक्षी प्रभाव तभी दिया जाएगा जब भूतलक्षी प्रभाव देने के लिए अभिव्यक्त उपबंध हो ।[40क]

सेवा नियमों की सांविधानिकता

I. **अनुच्छेद 14 का लागू होना** :

राज्य के अधीन नियोजन को अनुच्छेद 14 लागू होता है जिससे नियोजन से संबंधित नियम या आदेश जो विभेदकारी है अविधिमान्य हो जाते हैं ।[41-42] नियोजन प्रारम्भिक नियुक्ति से सेवा की समाप्ति तक होता है ।[43] यदि किसी नियम या आदेश द्वारा किया गया वर्गीकरण अयुक्तियुक्त है तो वह विभेदकारी होगा ।[41] यदि नियम में एक ही वर्ग के कर्मचारियों के बीच विभेद किया गया है[44] या नियम मनमाना, ऋजुताहीन और न्याय विरुद्ध है तो ऐसा नियम अवैध होगा ।[45]

अनुच्छेद 14 को तभी लागू किया जा सकता है जब वास्तव में विभेद हुआ हो । सैद्धान्तिक असमानता के आधार पर उसे लागू नहीं किया जा सकता ।[42]

(क) नियुक्ति — यदि किसी नियुक्ति के लिए अर्हताएं नियत करते समय राज्य ने

---

34 *वडेरा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1969 एस.सी. 118 (*125*) ।

35 *रोशन लाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1889 (*1894*) ।

36. किंतु *सिंघल* बनाम *महानिदेशक*, ए. 1972 एस.सी. 628 (*630*) में, खंड न्यायपीठ ने, पूर्व विनिश्चयों को निर्दिष्ट किए बिना, यह अभिनिर्धारित किया कि एक पक्ष नियमों में भूतलक्षी रूप से परिवर्तन करके, सेवा की शर्तें परिवर्तित नहीं कर सकता ।

37. *मैसूर राज्य* बनाम *पदमनाभाचार्य*, ए. 1966 एस.सी. 602 (*605*); *इंद्रवदन* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1986 एस.सी. 1035 ।

38. *मैसूर राज्य* बनाम *कृष्णमूर्ति*, (1972) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 591 (*596*) ।

39. *भारत सरकार* बनाम *बालकृष्णन*, ए. 1975 एस.सी. 1498 (पैरा 5) ।

40. *बिशुन नारायण* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1956 एस.सी. 1567; *भारत संघ* बनाम *रवि वर्मा*, ए. 1972 एस.सी. 670; *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *खोसा*, ए. 1974 एस.सी. 1 (पैरा 22) ।

40क. *महेन्द्रन* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1990 एस.सी. 405 (पैरा 5) ।

41 *पंजाब राज्य* बनाम *जोगिन्द्र*, ए. 1963 एस.सी. 913 ।

42. *किशोरी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1139; *उस्मान* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 188 (*191*) ।

43 *गंगा राम* बनाम *भारत संघ*, (1970) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 221 (*224*) ।

44 *पंडित* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 252 (*254*) ।

45. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *राम*, ए. 1981 एस.सी. 1041 (पैरा 15) ।

ऐसी अर्हताएं रखी हैं जिनका उसके उद्देश्य से कोई संबंध नहीं है तो ऐसा नियम या आदेश अविधिमान्य होगा ।[46]

यह अनुच्छेद चयन के लिए[43] या नियुक्ति की अर्हताओं के लिए[46] या दक्षता सुनिश्चिय करने के लिए[43] या एक सेवा को दो काडरों या स्कंधों में बांटने के लिए युक्तियुक्त नियम बनाने का प्रतिषेध नहीं करता ।[47]

किंतु जब किसी पद के लिए अर्हताएं विहित कर दी जाती हैं तो ऐसे व्यक्तियों को नियुक्त करके जिनके पास वे अर्हताएं नहीं हैं उन नियमों को मिटाया नहीं जा सकता ।[48]

(ख) प्रोन्नति — यह सिद्धांत उच्चतर पदों के लिए प्रोन्नति को भी लागू होता है । किंतु चयन पदों के लिए प्रोन्नति ज्येष्ठता से नहीं होती बल्कि योग्यता और उपयुक्तता के आधार पर होती है ।[49]

(ग) पुष्टि — किसी कर्मचारी की पुष्टि के लिए या ज्येष्ठता के अवधारण के लिए यदि मनमानी तारीख नियत की जाती है तो यह विभेद होगा और अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा ।[50]

(घ) ज्येष्ठता — इसी प्रकार पुष्टि के किसी मनमानी तारीख के आधार पर ज्येष्ठता तय करना अनुच्छेद 14 का उल्लंघन है ।[51] किंतु यदि वह सुसंगत बातों पर आधारित है तो ऐसा नहीं होगा ।[52]

निम्नलिखित में कोई उल्लंघन नहीं हुआ है, —

(i) किसी व्यक्ति को जिसने पहले ही विभागीय परीक्षा पास कर ली है, परीक्षा पास करने के आधार पर ज्येष्ठता नहीं दी गई[52] क्योंकि सुसंगत नियमों के अनुसार परीक्षा पास कर लेने मात्र से प्रोन्नति का अधिकार नहीं मिल जाता ।[43]

(ii) जहां सेवा में नियत अनुपात में सीधे भर्ती किए गए और प्रोन्नति पाए हुए लोग हैं और ज्येष्ठता चक्रीय क्रम से दी जाती है ।[53]

यदि अर्जीदार बहुत पहले तय की गई ज्येष्ठता को उलटना चाहता है और उसने देरी या गफलत के लिए कोई समाधानप्रद स्पष्टीकरण नहीं दिया है तो उसका दावा गफलत के सिद्धांत के आधार पर नामंजूर किया जाएगा ।[54-55]

(ङ) वेतन — समान वेतन के लिए समान कार्य के अमूर्त सिद्धांत का अनुच्छेद 14 से कोई संबंध नहीं है ।[56]

अनुच्छेद 14, राज्य को अपने कर्मचारियों को वरिष्ठ और कनिष्ठ सेवाओं में बांटकर

46 *वेंकटेश्वरराव* बनाम *आंध्र प्रदेश लोक सेवा आयोग*, ए 1963 एस.सी. 268 (271); *जयसिंघानी* बनाम *भारत संघ*, ए 1967 एस.सी. 1427 ।

47. *केरल राज्य* बनाम *कृष्णन*, ए 1978 एस.सी 747 (पैरा 11) ।

48. *सुभाष* बनाम *दिल्ली विद्युत प्रदाय संस्थान*, ए. 1981 एस.सी 75 (पैरा 7) ।

49 *जयनारायण* बनाम *बिहार राज्य*, (1971) 1 एस.सी.सी. 30, *गुमान सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी 452 (467) ।

50. *नागराजन* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1942 ।

51. *डी आर निम* बनाम *भारत संघ*, ए 1967 एस.सी 1301; *पटवर्धन* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1977 एस.सी. 2051 ।

52 *उड़ीसा राज्य* बनाम *महापात्र*, ए 1969 एस.सी. 1249, *मेहता* बनाम *भारत संघ*, ए. 1971 एस.सी. 1673 (पैरा 8-9) ।

53. *मर्विन* बनाम *सीमा-शुल्क कलक्टर*, (1966) 3 एस.सी.आर 600 ।

54. *डिसूजा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1975 एस.सी. 1269 (पैरा 8-9) ।

55. *जोगिन्द्र* बनाम *भारत संघ*, ए. 1975 एस.सी. 511 (पैरा 9) ।

56. *किशोरी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1139 ।

उन्हें विभिन्न वेतनमान देने से नहीं रोकता । अधिकारियों की सेवा की अवधि के आधार पर उसे वेतनमान में वेतन वृद्धि भी दी जा सकती है ।[56] एक ही पद में नियोजित व्यक्तियों के लिए विभिन्न वेतनमान भी हो सकते हैं जिनका आधार यह हो सकता है कि उनकी भर्ती अलग-अलग स्रोतों से की गई थी या उनकी भर्ती के ढंग अलग-अलग थे ।[57]

(च) प्रत्यावर्तन — यदि प्रत्यावर्तन का आदेश मनमाना है और किसी सिद्धांत पर आधारित नहीं है तो अनुच्छेद 14 उस पर प्रहार करेगा ।[58]

(छ) अधिवर्षिता — यदि सरकार आदेश देकर किसी विशेष सरकारी सेवक को अधिवर्षिता की आयु हो जाने के पश्चात् भी सेवा में रखती है तो यह विभेदकारी नहीं है क्योंकि अधिवर्षिता की आयु सरकार को यह शक्ति देती है कि वह उस आयु पर पहुंचने वाले सरकारी सेवक को सेवानिवृत्त कर दे किंतु वह सरकार को, किसी ऐसे व्यक्ति को अपने पास रखने से नहीं रोकती जो दक्ष है ।[59-60] यदि किसी विनिर्दिष्ट तारीख के पहले और उस तारीख के पश्चात् सेवानिवृत्त होने वाले व्यक्तियों के बारे में अलग-अलग उपबंध बनाए जाते हैं तो यह भी विभेदकारी नहीं है ।[61]

सरकार समय-समय पर अधिवर्षिता की आयु को बढ़ा सकती है या घटा सकती है ।[60]

(ज) अनिवार्य सेवानिवृत्ति — 25 वर्ष की सेवा के पश्चात् सरकारी सेवक को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने का प्राधिकार देने वाला उपबंध केवल इस कारण अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करने वाला नहीं माना जा सकता कि सामान्यतया सेवानिवृत्ति 30 वर्ष की सेवा के पश्चात् होती है । यदि नियम सभी वर्ग के सरकारी सेवकों को लागू होता है तो वह विभेदकारी नहीं होगा । यदि उसे दुर्भावपूर्वक लागू किया जाता है तो दुर्भावपूर्ण आदेश को खंडित किया जा सकता है ।[62]

(i) सेवामुक्ति और अनुशासनिक कार्यवाहियां — यदि कोई नियम कार्यपालिका को यह शक्ति देता है कि वह विशेष प्रक्रिया अपनाकर कुछ कर्मचारियों को चुन ले और उनकी सेवाओं को समाप्त कर दे तथा ऐसे चयन के लिए कोई मार्गदर्शन नहीं दिया गया है तो यह नियम अनुच्छेद 14 पर प्रहार करेगा । किंतु जहां किसी सुभिन्न आधार पर वर्गीकरण किया गया है और वर्गीकरण का नियम के प्रयोजनों से युक्तियुक्त संबंध है तो वह नियम विधिमान्य होगा । उदाहरण के लिए, राष्ट्रीय सुरक्षा को बनाए रखने के लिए ऐसे व्यक्तियों के विरुद्ध कार्यवाही का उपबंध जो तोड़फोड़ के काम में लगे हुए हैं — विधिमान्य होगा । यदि नियम को लागू करने में पक्षपात बरता जाता है तो भी यह अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा ।[63]

यदि सरकार को यह शक्ति दी जाती है कि वह निदेश देकर अपने अस्थायी कर्मचारियों की सेवाएं समाप्त कर दे तो केवल इस कारण कि सरकार को कार्यवाही करने का विवेकाधिकार है, अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं होगा ।[64]

57. *मेनन* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 81 (*84*) ।

58. *पदमनाभन* बनाम *डी.पी.आई.*, ए. 1981 एस.सी. 64 (पैरा 12) ।

59. *बिशुन नारायण* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1965) II एस.सी.ए. 95 ।

60. *असम राज्य* बनाम *प्रेमधर*, (1970) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 197 (*205*); *नारायण* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 425 (*432*); *शंकरनारायण* बनाम *केरल राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 361 (*365*) ।

61. *कैलाश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1961 एस.सी. 1346 ।

62. *शिवचरण* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 280 (*282*) ।

63. *उड़ीसा राज्य* बनाम *धीरेन्द्रनाथ*, ए. 1961 एस.सी. 1715; *भंडारी* बनाम *आई.टी.डी.सी.*, ए. 1987 एस.सी. 111 ।

64. *रामगोपाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1970) I एल.एल.जे. 367 (*368*) एस.सी. ।

जहां किसी सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध जांच की जा रही थी उसमें अनुशासनिक कार्यवाहियों से संबंधित दो प्रकार के नियम प्रवृत्त थे और जांच ऐसे नियमों के अधीन की जा रही थी जो कड़े थे और जिनका सरकारी कर्मचारी के हित पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था, वहां उसके विरुद्ध कार्यवाहियां खंडित कर दी जाएंगी क्योंकि वे अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करती हैं ।[63] दूसरे शब्दों में यदि दो ऐसे लोकसेवकों के विरुद्ध जो एक-सी परिस्थिति में हैं कार्यपालिका के विवेकानुसार भिन्न-भिन्न प्रक्रिया के अनुसार जांच की जा सकती है और इस विवेक का प्रयोग किसी ऐसे सिद्धांत के अनुसार नहीं होता जिसका जांच के प्रयोजन से कोई संबंध हो और आदेश में ऐसी प्रक्रिया अपनाई जाती है जो कर्मचारियों पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है तो वह आदेश अनुच्छेद 14 का उल्लंघन होगा ।[63]

यदि दो भिन्न प्रकार के नियम विद्यमान हैं और उनमें से एक प्रक्रिया अपनाई गई है तो इतने मात्र से यह निष्कर्ष नहीं निकल सकता कि अवैध रूप से विभेद किया गया है । यह दिखलाना होगा कि उसका लोकसेवक पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है[65] या उन दोनों नियमों में विहित प्रक्रिया के बीच पर्याप्त अन्तर है ।[66]

यह अभिनिर्धारित किया गया है कि निम्नलिखित मामलों में कोई विभेद नहीं है, —

(i) एक नियमावली अधिक ब्यौरेवार है किंतु उसमें विहित प्रक्रिया दूसरी नियमावली से तात्विक रूप में भिन्न नहीं है ।[64]

(ii) एक में विभागीय वरिष्ठ अधिकारी द्वारा शास्ति दी जाती है और उसकी अपील राज्यपाल को होती है, दूसरी में राज्यपाल स्वयं शास्ति देता है और उसकी अपील नहीं होती । कारण यह है कि दोनों मामलों में अन्तिम आदेश राज्यपाल द्वारा दिया जाता है ।[66, 67]

II. **अनुच्छेद 15 का लागू होना** :

अनुच्छेद 15(1) वहां लागू होगा जहां राज्य के अधीन नियोजन के विषय में धर्म, जाति, वंश,[68] लिंग या जन्म स्थान[69] के आधार पर ही विभेद किया गया है चाहे यह दिखलाया गया हो कि यह विभेद पिछड़े वर्गों के हित में है ।[70]

III. **अनुच्छेद 16 का लागू होना** :

1. अनुच्छेद 16(1) द्वारा प्रत्याभूत लोक नियोजन के विषय में अवसर की समानता इतनी व्यापक है कि इसके अन्तर्गत नियोजन से संबंधित सभी विषय आ जाते हैं चाहे वे नियोजन के पहले हों या बाद में ।[71] जैसे प्रारम्भिक नियुक्ति, जिस पद पर नियुक्ति की गई है उसकी सेवा की शर्तें, उदाहरण के लिए वेतन, आवधिक वृद्धि, प्रोन्नति, ज्येष्ठता,[72] छुट्टी की शर्तें, उपदान, पेंशन, अधिवर्षिता की आयु ।

2. इसमें जिस अवसर की समता की बात कही गई है उससे अभिप्रेत है एक वर्ग के कर्मचारियों के बीच समता । एक-दूसरे से पृथक् और स्वतंत्र वर्गों के बीच समता नहीं ।[66]

3. जहां इस नियम द्वारा प्रदान किया गया अवसर अवास्तविक है वहां यह माना जाएगा कि कोई अवसर नहीं दिया गया ।[73]

65. *कपूर सिंह* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी. 493 ।
66. *जगन्नाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1245 (*1252*) ।
67. *उड़ीसा राज्य* बनाम *विद्याभूषण*, ए. 1963 एस.सी. 779 ।
68. तुलना कीजिए, *आल इंडिया स्टेशन मास्टर्स एसोसिएशन* बनाम *महाप्रबंधक*, ए. 1960 एस.सी. 384; *पंजाब राज्य* बनाम *जोगिन्द्र*, ए. 1963 एस.सी. 913 ।
69. *वेंकटरमन* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1951 एस.सी. 229 ।
70. *रामाराव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 564 (*570*) ।
71. *महाप्रबंधक* बनाम *रंगाचारी*, ए. 1962 एस.सी. 36 (*40-41*) ।
72. *भारत संघ* बनाम *वसंत*, ए. 1970 एस.सी. 2092 ।
73. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *रामगोपाल*, ए. 1981 एस.सी. 1041 (पैरा 15) ।

(क) नियुक्ति — इस अनुच्छेद द्वारा जिस समता की प्रत्याभूति दी गई है वह किसी पद के लिए आवेदन करने और उस पद पर नियुक्ति के लिए विचार किए जाने के अवसर की समता है । इस अधिकार का अर्थ वास्तव में नियुक्ति किया जाना नहीं है ।[74-77]

अनुच्छेद 16 के खंड (1) का उल्लंघन निम्नलिखित दशाओं में होगा, —

(क) एक अस्थायी कर्मचारी की सेवा को समाप्त करते समय भविष्य में उसके नियोजन पर प्रशासनिक प्रतिबंध लगा दिया जाता है जो ऐसे आधार पर है जिसका सरकार के किसी कार्यालय में उसकी नियुक्ति से कोई संबंध नहीं है ।[77]

(ख) पिछड़े वर्गों के लिए पदों का आरक्षण इतना अधिक है कि खंड (1) के अधीन प्रत्याभूति दिखावा मात्र हो जाती है ।[78]

(ग) यदि किसी लोक सेवा परीक्षा में कम अंक प्राप्त करने वाले अभ्यर्थियों को नियुक्त किया जाता है और अधिक अंक पाने वालों को नहीं किया जाता तथा उनके तुलनात्मक गुणागुण पर विचार नहीं किया जाता ।[79]

(घ) सीधे भर्ती और प्रोन्नति द्वारा कुछ पदों पर नियुक्ति के लिए कोटा नियत करने के बाद सरकार अपनी इच्छानुसार कोटा वाले नियम का उल्लंघन करके तदर्थ नियुक्तियां करती है ।[80]

अनुच्छेद 16(2) ऐसी विधि या नियम या आदेश को अविधिमान्य करेगा[81] जो राज्य के अधीन नियुक्ति के विषय में उस अनुच्छेद में विनिर्दिष्ट किसी आधार पर विभेद करने का अधिकार देता है जैसे उद्भव,[82] जाति[81] या धर्म[76] के आधार पर, चाहे यह दिखावा किया गया हो कि यह आरक्षण पिछड़े वर्गों के हित में है[81] या जहां किसी ज्येष्ठ कर्मचारी के आवेदन पर विचार नहीं किया गया है और प्रोन्नति ज्येष्ठता-सह-गुणागुण के आधार पर की जानी है ।[83]

(ख) ज्येष्ठता और प्रोन्नति — 1 राज्य, सेवा में ज्येष्ठता अवधारित करने के लिए कोई भी नियम बना सकता है । न्यायालय उसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता । हस्तक्षेप तभी हो सकता है जब उसके परिणामस्वरूप एक ही वर्ग के कर्मचारियों में अवसर की असमानता हो ।[84] जहां लिपिकीय और गैर-लिपिकीय काडर को मिलाने में एक ही काडर के कर्मचारियों की विद्यमान ज्येष्ठता में कोई अन्तर नहीं किया जाता और काडर में प्रवेश करने वाले कर्मचारियों को पहले से विद्यमान काडर में समायोजित किया जाता है, तो अनुच्छेद 16 का उल्लंघन नहीं होता ।[84]

2. एक विशिष्ट पंक्ति में प्रोन्नत किए गए अधिकारियों के बीच ज्येष्ठता प्रोन्नति की तारीख से अवधारित की जानी चाहिए, पुष्टि की तारीख से नहीं । पुष्टि की तारीख तो एक अनिश्चित बात है जो भाग्य पर निर्भर करती है ।[85]

74. *संतराम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए 1967 एस.सी. 1910 (*1915*) ।

75. *उच्च न्यायालय* बनाम *अमल कुमार*, ए 1962 एस.सी. 1704 ।

76. *महाप्रबंधक* बनाम *रंगाचारी*, ए. 1962 एस सी 36, *कृष्णचंद्र* बनाम *सेंट्रल ट्रैक्टर आर्गेनाइजेशन*, ए 1962 एस सी. 602 ।

77. *कृष्णचंद्र* बनाम *सेंट्रल ट्रैक्टर आर्गेनाइजेशन*, ए 1962 एस सी 602 ।

78. *देवदासन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस सी. 179 ।

79. *चेन्नवासवय्या* बनाम *मैसूर राज्य*, ए 1965 एस.सी. 1293 ।

80. *जयसिंघानी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी 1427 ।

81. *वेंकटरमन* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1951 एस.सी. 229 ।

82. *रामाराव* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 565 (*573*) ।

83. ऐसे भी नियम हो सकते है जिनके अधीन किसी कर्मचारी का नाम ज्येष्ठता सूची में दर्ज करने मात्र से उसे वही ज्येष्ठता बनाए रखने का अजेय अधिकार नहीं मिल जाता [तुलना कीजिए, *रामास्वामी* बनाम *आइ.जी.पी.*, ए. 1966 एस.सी. 175 (*179, 181*)] ।

84. *भारतीय रिज़र्व बैंक* बनाम *पालीवाल*, (1976) यू.जे.एस.सी. 129 (*130एन.*) ।

85. *गोयल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 228 (पैरा 20, 23) (पांच न्यायाधीश) ।

3. प्रोन्नति के विषय में अवसर की समानता से अभिप्रेत है एक ही ग्रेड में पद धारण करने वाले सभी कर्मचारी[86] गुणागुण के आधार पर उच्चतर ग्रेड में नियुक्ति के लिए समान रूप से पात्र होंगे ।[87] एक ही ग्रेड में विभिन्न पद धारण करने वाले नागरिकों के बीच प्रोन्नति के लिए अवसर की असमानता से अनुच्छेद 16 का अतिलंघन होगा ।[88]

4. किंतु अनुच्छेद 16(1) निम्नलिखित का निषेध नहीं करता —

(i) सरकारी सेवा में विभिन्न ग्रेडों का सृजन ।[88]

(ii) प्रोन्नति के लिए पात्र होने के लिए दक्षता या अन्य अर्हताओं का शर्त के रूप में रखा जाना जिससे सर्वोत्तम सेवा प्राप्त हो सके ।[88] यह आवश्यक नहीं कि ये अर्हताएं तकनीकी हों ।

(iii) विभिन्न स्रोतों से भर्ती किए गए कर्मचारियों के साथ अलग-अलग व्यवहार[89] या एक ही स्थापना की विभिन्न इकाइयों के बीच अलग-अलग व्यवहार ।[90]

5. यदि कानून में कोई उपबंध नहीं है[91] तो केवल ज्येष्ठता के आधार पर प्रोन्नति का कोई विधिक अधिकार नहीं मिलता । जहां ज्येष्ठता के अनुसार अधिकारियों को रखकर सूची तैयार की गई है वहां भी यही बात लागू होती है ।[92] यदि अन्य लोगों के साथ ज्येष्ठ अधिकारी के आवेदन पर भी विचार किया गया है[92] किंतु सरकार ने उससे नीचे के किसी व्यक्ति को उच्चतर पद के योग्य पाया है तो इससे अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन नहीं होता ।[86]

जहां वह अधिकारी जिसने विभेद का परिवाद किया है प्रोन्नति पाने वाले व्यक्ति से भिन्न वर्ग का है तो अनुच्छेद 16 का उल्लंघन नहीं होता जैसे, अर्जीदार की भर्ती प्रोन्नति से हुई थी या युद्ध सेवा के कारण हुई थी,[93] जब कि दूसरे व्यक्ति को प्रतियोगी परीक्षा से भर्ती किया गया था[94] या जहां अर्जीदार को अलग सेवा या स्रोत से भर्ती किया गया था[89] जब कि दूसरे व्यक्ति को उसी सेवा से भर्ती किया गया था ।[92] निम्नलिखित दशाओं में अधिकारी के अधिकार का उल्लंघन होता है, —

(i) यदि भर्ती का स्रोत एक ही है[95] या विभिन्न स्रोतों से भर्ती किए गए व्यक्ति एक ही वर्ग में रखे जाते हैं तो उसके पश्चात् एक स्रोत से भर्ती किए गए व्यक्तियों के साथ पक्षपात करने पर अन्य व्यक्तियों के साथ विभेद होगा । यह बात ज्येष्ठता, प्रोन्नति और सेवा की अन्य शर्तों के संबंध में लागू होती है ।[96] यदि किसी ग्रुप की अर्हताएं या पद के कर्तव्य ऐसे हैं कि उसे दूसरे ग्रुप की अपेक्षा अधिमान मिलना चाहिए और ऐसे वर्गीकरण के लिए कोई युक्तियुक्त आधार है तो यह विभेद न्यायोचित हो सकता है ।[97]

(ii) यदि किसी अधिकारी की ज्येष्ठता तय करने के विषय में किसी कानूनी नियम का उल्लंघन किया

86 *उच्च न्यायालय* बनाम *अमल कुमार*, ए 1962 एस सी 1704 (*1711*) ।

87 तुलना कीजिए, *कृष्णचंद्र* बनाम *सेंट्रल ट्रेक्टर आर्गेनाइजेशन*, ए 1962 एस सी 602 ।

88 *आल इंडिया स्टेशन मास्टर्स एसोसिएशन* बनाम *महाप्रबंधक*, ए 1960 एस सी 284 : (1960) 2 एस.सी.आर. 311; *महाप्रबंधक* बनाम *रंगाचारी*, ए 1962 एस सी 36 (*40-41*) ।

89 *जयसिंघानी* बनाम *भारत संघ*, ए 1967 एस.सी. 1427 (*1431*) : (1967) 2 एस सी.आर. 703 (*718*) ।

90 *मैसूर राज्य* बनाम *नरसिंह राव*, ए. 1968 एस सी 349 (*352*) ।

91. तुलना कीजिए, *मैसूर राज्य* बनाम *बेल्लरी*, ए 1965 एस सी. 868 (*871*); *डी आर. निम* बनाम *भारत संघ*, (1967) 2 एस सी.आर. 325 ।

92 *गुलाम* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, (1967) एस सी [रिट याचिका 175/66]; *मैसूर राज्य* बनाम *पुरोहित*, (1967) एस सी. [सिविल अपील 281/66] ।

93. *गोविन्द दत्तात्रेय* बनाम *मुख्य नियंत्रक*, ए. 1967 एस.सी. 839; *संत राम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1910 ।

94. *मल्होत्रा* बनाम *भारत संघ*, (1967) एस.सी. [सिविल अपील 1039/65] ।

95. *मर्विन* बनाम *सीमा-शुल्क कलक्टर*, ए. 1967 एस.सी. 52 ।

96. *रोशन लाल* बनाम *भारत संघ*, ए 1967 एस.सी. 1889 (*1893*); *जिला रजिस्ट्रार* बनाम *कोय्यकुट्टि*, ए. 1979 एस.सी. 1060 (पैरा 28-29) ।

97. *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *त्रिलोकी*, ए. 1974 एस.सी. 1 ।

जाता है तो सरकार का आदेश शक्ति बाह्य होगा और न्यायालय सरकार को यह निदेश देगा कि वह विधि के अनुसार ज्येष्ठता तय करे ।[98-99]

(iii) जब एक बार ज्येष्ठता तय कर दी गई है और उसके अनुसार कार्य किया गया है तो उसमें कोई हस्तक्षेप या परिवर्तन करके कर्मचारियों के भावी प्रोन्नति के अधिकार को प्रभावित करने से अनुच्छेद 16 का उल्लंघन होगा और ऐसे पुनरीक्षण को विखंडित किया जा सकेगा ।[100]

6. चयन पद पर प्रोन्नति की दशा में यदि अर्जीदार के मामले पर भली भांति विचार किया गया है और विभागीय प्रोन्नति समिति ने यह पाया है कि वह चयन के लिए उपयुक्त नहीं है तो न्यायालय हस्तक्षेप नहीं करेगा ।[1]

(ग) पर्यवसान — 1. राज्य के अधीन नियोजन राज्य के प्रसाद पर होता है । यह सिद्धांत नियोजन के ऐसे पर्यवसान के विषय को लागू नहीं होता है जहां किसी कर्मचारी की सेवाओं का पर्यवसान करने में मनमाना विभेद किया गया है ।[2-4] जैसे, इस आधार पर कि वह एक खास वर्ण (रंग) या ऊंचाई का है ।[5] ऐसे में अनुच्छेद 16(1) लागू होगा ।

2. यह तथ्य कि किसी कर्मचारी की इस आधार पर छटनी की गई है कि उसे निवारक निरोध विधि के अधीन निरुद्ध किया गया था,[6] या वह विध्वंसक कार्यवाही में लगा हुआ है,[7] मनमाना या विभेदकारी आधार नहीं है । यदि यह दर्शाया जाता है कि जो सेवा में रखे गए हैं वे भी इसी प्रकार के हैं तो यह माना जाएगा कि विभेद किया गया है ।[6] केवल इस बात से विभेद का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता कि ज्येष्ठ कर्मचारी की छटनी की गई है जब कि उससे कनिष्ठ कर्मचारियों को रहने दिया गया है ।[7]

3. जो कर्मचारी मूलतः एक ही सेवा में भर्ती किए गए थे उन्हें सेवानिवृत्ति के लिए भिन्न आयु लागू करने से अनुच्छेद 16(1) का उल्लंघन होगा ।[7क]

IV. **अनुच्छेद 19(1)(क) और (1)(ख) का लागू होना** :

सरकार अपनी सेवा में एकता और अनुशासन बनाने के लिए सरकारी सेवक पर कुछ प्रतिबंध लगा सकती है, जैसे वह —

(क) सामाजिक रूप से सरकार की किसी नीति या कार्यवाही की आलोचना नहीं करेगा,[8]

(ख) कर्मचारियों के हित में ऐसा प्रदर्शन नहीं करेगा जिसमें हिंसा का प्रयोग किया जाए,[9] शांतिपूर्ण या मौन प्रदर्शन किये जा सकते हैं,

(ग) हड़ताल में भाग नहीं लेगा,[10]

(घ) अपने शासकीय कर्तव्य के पालन के दौरान प्राप्त किसी जानकारी को प्रकट नहीं करेगा जैसे आय-कर, निर्वाचन आदि के संबंध में,[8]

(ङ) ऐसे स्थान पर बैठक नहीं करेगा जो सबके लिए खुला नहीं है ।[11]

98. *डी.आर. निम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1301 (*1305*) ।
99. *भारत संघ* बनाम *वसंत*, ए. 1970 एस.सी. 2092 ।
100. *एस.के. घोष* बनाम *भारत संघ*, ए. 1968 एस.सी. 1385 ।
1. *भारत संघ* बनाम *दुर्गादास*, ए. 1978 एस.सी. 1132 ।
2. *भारत संघ* बनाम *पांडुरंग*, ए. 1962 एस.सी. 630 (*633*) ।
3. *उड़ीसा राज्य* बनाम *दुर्गाचरण*, ए. 1966 एस.सी. 1547 (*1551*) ।
4. तुलना कीजिए, *महाप्रबंधक* बनाम *रंगाचारी*, ए. 1962 एस.सी. 36 ।
5. *कृष्णचंद्र* बनाम *सेंट्रल ट्रेक्टर आर्गेनाइजेशन*, ए. 1962 एस.सी. 602 ।
6. *भारत संघ* बनाम *पांडुरंग*, ए. 1962 एस.सी. 630 ।
7. *जावली* बनाम *मैसूर राज्य*, (1962) I एल.एल.जे. 134 (एस.सी.) ।
7क. *भारत संघ* बनाम *शास्त्री*, ए. 1990 एस.सी. 593 (पैरा 5) ।
8. *कामेश्वर* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1166 (*1170*) ।
9. *रामू* बनाम *भारत सरकार*, (1970) I एल.एल.जे. 299 (*30*) ।
10. *राधे श्याम* बनाम *पोस्ट-मास्टर जनरल*, ए. 1965 एस.सी. 311 ।
11. *रेलवे बोर्ड* बनाम *निरंजन*, ए. 1969 एस.सी. 966 ।

किंतु यदि निर्बन्धन का अनुच्छेद 19 के खंड (2) में विनिर्दिष्ट आधारों से कोई निकट का संबंध नहीं है तो वह निर्बन्धन शून्य होगा ।

V. अनुच्छेद 19(1)(ग) का लागू होना :

सरकारी सेवक के संगम बनाने की स्वतंत्रता में अनुशासन आदि के हित में निर्बन्धन लगाए जा सकते हैं । ये निर्बन्धन अनुच्छेद 19(4) में उल्लिखित लोक व्यवस्था या नैतिकता के अन्तर्गत होने चाहिए।[8] यदि कोई निर्बन्धन पूर्व सेंसर के रूप में है[12] या अपेक्षा से अधिक है[13] या जो इतना अस्पष्ट है कि प्रशासन दंड देने के लिए या विभेदकारी व्यवहार करने के लिए कर्मचारियों को छांट सकता है तो ऐसे निर्बन्धन अवैध होंगे ।[13] अनुच्छेद 19(1)(ग) द्वारा प्रत्याभूत संगम बनाने के अधिकार में हड़ताल करने का अधिकार नहीं आता ।[14]

VI. अनुच्छेद 20(2) का लागू होना :

अनुच्छेद 20(2) न्यायिक कार्यवाहियों में दिए गए दंड को ही लागू होता है जहां दाण्डिक कार्यवाही में अभियोजन या दोषमुक्ति के पश्चात् सरकारी सेवक के विरुद्ध कोई विभागीय कार्यवाही की जाती है या विभागीय कार्यवाही के पश्चात् अभियोजन किया जाता है वहां यह अनुच्छेद लागू नहीं होगा ।[15]

VII. अनुच्छेद 20(3) का लागू होना :

अनुच्छेद 20 का खंड (3) वहां लागू होता है जहां किसी व्यक्ति पर किसी अपराध के लिए अभियोग चलाया जाता है ।[16] जहां किसी सरकारी सेवक के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही की जाती है वहां उसका अभियोजन नहीं होता इसलिए यह अनुच्छेद लागू नहीं होता ।

VIII. अनुच्छेद 310(1) का लागू होना :

यदि कोई नियम राष्ट्रपति या राज्यपाल की सरकारी सेवक को अपने प्रसाद से पदच्युत करने की शक्ति पर बंधन लगाता है तो वह शून्य होगा[17] (यह अनुच्छेद 311 के अध्यधीन है) ।

IX. अनुच्छेद 311(1) का लागू होना :

यदि कोई नियम यह कहता है कि किसी सरकारी सेवक को उसको नियुक्त करने वाले अधिकारी से निम्नतर पंक्ति का अधिकारी पदच्युत कर सकेगा तो ऐसा शून्य होगा ।[18]

X. अनुच्छेद 311(2) का लागू होना :

कोई भी नियम जो अनुच्छेद 311(2) द्वारा प्रदान किए गए संरक्षण को कम करता है शून्य होगा,[19] जैसे —

(i) कोई नियम जिसमें यह उपबंध है कि अवैध रूप से किए गए सरकारी कर्मचारियों को वैध रूप से सेवानिवृत्त किया गया समझा जाएगा ।[17]

12 *घोष बनाम भारत सरकार,* (1970) I एल.एल.जे. 299 (*30*) ।

13 *बालकोटय्या बनाम भारत संघ,* ए. 1958 एस.सी. 232 (*238*) ।

14 *आल इंडिया बैंक एम्प्लाईज एसोसिएशन बनाम राष्ट्रीय औद्योगिक अधिकरण,* ए. 1962 एस.सी. 171 ।

15. *वेंकटरमन बनाम भारत संघ,* (1954) एस.सी.आर. 1150 ।

16 *मकबूल बनाम मुंबई राज्य,* ए. 1953 एस.सी. 325; *नारायणलाल बनाम मानेक,* ए. 1961 एस.सी. 29 (*38*) ।

17 *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम बाबूराम,* ए. 1961 एस.सी. 751; *जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य,* ए. 1961 एस.सी. 1245 ।

18. *बालकदास बनाम सहायक सुरक्षा अधिकारी,* ए. 1960 मध्य प्रदेश 183 ।

19. *मोतीराम बनाम महाप्रबंधक,* ए. 1964 एस.सी. 600 ।

(ii) कोई नियम जिसमें यह उपबंध है कि स्थायी सरकारी कर्मचारी की सेवाओं का पर्यवसान उसे सूचना देकर किया जा सकेगा, अनुच्छेद 311(2) के अनुपालन की आवश्यकता नहीं है ।[19]

(iii) कोई नियम जिसमें किसी प्राधिकारी को किसी कर्मचारी को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने की शक्ति दी गई है और न्यूनतम सेवा की अवधि नियत नहीं की गई जिसके पश्चात् सेवानिवृत्ति का आदेश दिया जा सकता है या जो नियमों द्वारा नियत अधिवर्षिता की आयु के पहले किसी भी समय सेवानिवृत्त करने का प्राधिकार देता है ।[20]

(iv) कोई नियम जिसमें यह उपबंध है कि किसी कर्मचारी को इस आधार पर दण्डित किया जा सकता है कि बहुत से मामलों में उसके विरुद्ध भ्रष्टाचार में लिप्त होने का संदेह था । इस नियम में दोष साबित किये जाने की अपेक्षा नहीं है ।[21]

सरकारी सेवकों के मूल अधिकार — संविधान द्वारा प्रत्याभूत मूल अधिकार सभी नागरिकों को दिए गए हैं । यह स्पष्ट है कि इसके अन्तर्गत सरकारी कर्मचारी भी आते हैं ।[22] किंतु संसद् अनुच्छेद 33 के अधीन सशस्त्र बलों और पुलिस बलों के सदस्यों को लागू होने में मूल अधिकारों में उपान्तरण कर सकती है । यह तर्क नहीं दिया जा सकता है कि सरकारी सेवकों ने सरकार के अधीन नियोजन स्वीकार करत समय अपने मूल अधिकारों का अधित्यजन कर दिया है ।[23]

अतएव अनुच्छेद 19 के अधीन लोक सेवकों के अधिकारों पर निर्बन्धन खंड (2) से खंड (6) में विनिर्दिष्ट आधारों पर लगाए जा सकते हैं और उसी विस्तार तक लगाए जा सकते हैं जब तक वे निर्बन्धन युक्तियुक्त रहें ।[22]

अनुच्छेद 309 से भिन्न असांविधिक प्रशासनिक नियम और आदेश — अनुच्छेद 309 का परंतुक शक्ति प्रदान करने वाला उपबंध है । जब तक अनुच्छेद 309 के अधीन नियम न बनाए जाएं तब तक प्रशासन को प्रशासनिक नियम या आदेशों द्वारा अपने काम चलाने से रोका नहीं जा सकता । किंतु ये नियम या आदेश निम्नलिखित शर्तों के अधीन होंगे :

(i) ऐसे प्रशासनिक नियमों या अनुदेशों से किसी मूल अधिकार का, जैसे अनुच्छेद 14 या 16 का,[24] उल्लंघन नहीं होना चाहिए और वे मनमाने या अऋजु नहीं होने चाहिए ।[24]

(ii) जब अनुच्छेद 309 के अधीन शक्ति का प्रयोग करके नियम बना दिए जाते हैं तो अनुच्छेद 162 के अधीन कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करके प्रशासनिक आदेश देकर उनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता । जो प्रशासनिक आदेश नियमों के प्रतिकूल होगा वह शक्ति बाह्य माना जाएगा ।[25]

संघ या राज्य की सेवा करने वाले व्यक्तियों की पदावधि ।

310. (1) इस संविधान द्वारा अभिव्यक्त रूप से यथाउपबंधित के सिवाय, प्रत्येक व्यक्ति जो रक्षा सेवा का या संघ की सिविल सेवा का या अखिल भारतीय सेवा का सदस्य है अथवा रक्षा से संबंधित कोई पद या संघ के अधीन कोई सिविल पद धारण करता है, राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त पद धारण करता है और प्रत्येक व्यक्ति जो किसी राज्य की सिविल सेवा का सदस्य है या राज्य के अधीन कोई सिविल पद धारण करता है, उस राज्य के राज्यपाल[26]* * * के प्रसादपर्यन्त पद धारण करता है ।

(2) इस बात के होते हुए भी कि संघ या किसी राज्य के अधीन सिविल पद धारण करने

---

20. *गुरदेव सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1585 ।

21. *मद्रास राज्य* बनाम *श्रीनिवासन*, ए. 1966 एस.सी. 1827 ।

22. *कामेश्वर* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1166 (*1170*); *घोष* बनाम *जोसेफ*, ए. 1963 एस.सी. 812 ।

23. *पंजाब राज्य* बनाम *जोगिन्द्र*, ए. 1963 एस.सी. 913 ।

24. *पदमनाभन* बनाम *डी.पी.आई.*, ए. 1981 एस.सी. 64 (पैरा 12) ।

25. *नागराजन* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 1676 (पैरा 5) ।

26. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "राजप्रमुख" निर्देशों का लोप किया गया ।

वाला व्यक्ति, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्य के राज्यपाल[26] के प्रसादपर्यन्त पद धारण करता है, कोई संविदा जिसके अधीन कोई व्यक्ति जो रक्षा सेवा का या अखिल भारतीय सेवा का या संघ या राज्य की सिविल सेवा का सदस्य नहीं है, ऐसे किसी पद को धारण करने के लिए इस संविधान के अधीन नियुक्त किया जाता है, उस दशा में, जिसमें, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल[26]*** विशेष अर्हताओं वाले किसी व्यक्ति की सेवाएं प्राप्त करने के लिए आवश्यक समझता है, यह उपबंध कर सकेगी कि यदि करार की गई अवधि की समाप्ति से पहले वह पद समाप्त कर दिया जाता है या ऐसे कारणों से, जो उसके किसी अवचार से संबंधित नहीं हैं, उससे वह पद रिक्त करने की अपेक्षा की जाती है तो, उसे प्रतिकर दिया जाएगा ।***

अनुच्छेद 310 : सरकार के प्रसादपर्यन्त पद धारण करना — 1. इस अनुच्छेद के खंड (1) में यह उपबंध है कि इस निमित्त संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए सरकार के अधीन सभी सिविल पद उस सरकार के जिसके अधीन वह आधारित है प्रसादपर्यन्त धारण किए जाते हैं । सरकार का यह अधिकार अनुच्छेद 310(2) और अनुच्छेद 311(1) और (2) में लगाए गए निर्बन्धनों के अधीन है ।[27] अतएव यदि किसी सिविल सेवक को पदच्युत किया जाता है तो अनुच्छेद 311 द्वारा अधिकथित प्रक्रिया का पालन होना चाहिए । अनुच्छेद 311(2) के उल्लंघन को न्यायोचित ठहराने के उद्देश्य से अनुच्छेद 310(1) लागू नहीं किया जा सकता ।[28] जब अनुच्छेद 311(2) की प्रक्रिया का पालन किया गया है तब न्यायालय यह अवधारित करने के हकदार नहीं हैं कि जिस आधार या आरोप पर सरकारी सेवक के विरुद्ध कार्यवाही की गई है वह पदच्युति के लिए पर्याप्त आधार नहीं है ।[29] किंतु यदि कोई नियम ऐसे आधार पर पदच्युति का उपबंध करता है जो सरकारी सेवक के मूल अधिकार पर अयुक्तियुक्त निर्बन्धन है तो उस पर असांविधानिक होने का आक्षेप किया जा सकता है ।

क्या राष्ट्रपति या राज्यपाल का प्रसाद प्रत्यायोजित किया जा सकता है — उच्चतम न्यायालय की सात न्यायाधीशों की एक न्यायपीठ ने[31] अपने पूर्व निर्णय को[30] उलटते हुए यह अधिकथित किया है कि —

(क) राष्ट्रपति या राज्यपाल (उन शक्तियों को छोड़कर जो राज्यपाल अभिव्यक्त रूप से अपने विवेकानुसार करने के लिए संविधान द्वारा सशक्त किया गया है) कार्यपालिका का सांविधानिक प्रमुख है ।[31]

(ख) यह आवश्यक नहीं है कि राष्ट्रपति प्रत्येक शक्ति का प्रयोग स्वतः करे । संविधान द्वारा राष्ट्रपति या राज्यपाल में निहित शक्तियां क्रमशः संघ और राज्य की शक्तियां हैं और उनका प्रयोग मंत्रिपरिषद् की सहायता और सलाह से किया जा सकता है । अनुच्छेद 166(3) के अधीन बनाए गए कार्य संचालन के नियमों[32] द्वारा या अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा इन शक्तियों का प्रत्यायोजन किया जा सकता है ।[30]

(ग) अनुच्छेद 311(1) में प्रयुक्त शब्द "उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी के

27. *पुरुषोत्तम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी. 36 (*41*); *खेमचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 300 (*304*) ।

28. *मोतीराम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1965 एस.सी. 600 (*610*) ।

29. *उड़ीसा राज्य* बनाम *विद्याभूषण*, ए 1963 एस.सी. 779 (*786*) ।

30. *सरदारी लाल* बनाम *भारत संघ*, ए 1971 एस.सी 1547; *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *बाबूराम*, ए. 1961 एस.सी. 751 ।

31. *शमशेर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 2192 (पैरा 47, 53) [देखिए दुर्गादास बसु *"शार्टर कांस्टीट्यूशन आफ इंडिया"*, छठा संस्करण, जिल्द 1, पृष्ठ 296] ।

32. *भारत संघ* बनाम *श्रीपति*, (1976) I एस.सी.डब्ल्यू.आर. 173 ।

अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा" शब्दों से यह स्पष्ट होता है कि अनुच्छेद 310 राष्ट्रपति या राज्यपाल की पदच्युत करने की शक्ति का प्रत्यायोजन किया जा सकता है ।[31]

(घ) यह आवश्यक नहीं है कि किसी कर्मचारी को पदच्युत करने के लिए सक्षम प्राधिकारी स्वयं अनुशासनिक कार्यवाहियां प्रारम्भ करे या उनका संचालन करे ।[33]

खंड (1) : "इस संविधान द्वारा अभिव्यक्त रूप से यथाउपबन्धित के सिवाए" — 1. ये शब्द अनुच्छेद 124, 148, 217, 218 और 324 के प्रति निर्देश करते हैं जिनमें यह उपबंध है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, महालेखापरीक्षक, उच्च न्यायालय के न्यायाधीश और मुख्य निर्वाचन आयुक्त को उन अनुच्छेदों में अधिकथित रीति से ही अपने पद से हटाया जाएगा ।[34] इन पदों के धारक राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त पद धारण नहीं करते किंतु सदाचार-पर्यन्त पद धारण करते हैं ।

2. जैसा इस अनुच्छेद के खंड (1) में कहा गया है, इस अनुच्छेद को अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए नियमों[35] और अनुच्छेद 311 के खंड (1)[28] तथा (2) द्वारा अधिरोपित शर्तों के और मूल अधिकारों के अधीन समझा जाना चाहिए ।[35]

क्या अनुच्छेद 310(1) मूल अधिकारों द्वारा नियंत्रित होता है? — इस प्रश्न का उत्तर उच्चतम न्यायालय के अनेकों विनिश्चयों में हां में दिया गया है ।[36]

क्या राष्ट्रपति के प्रसाद पर संविदा द्वारा बंधन लगाया जा सकता है? — अनुच्छेद 310(1) किसी संविदा के उपबंधों के अधीन नहीं है ।

राष्ट्रपति, किसी संविदा के होते हुए भी सरकारी संविदा की अवधि की समाप्ति के पहले किसी भी कर्मचारी की सेवाओ को प्रतिकर दिए बिना समाप्त कर सकता है ।[37] उन मामलों में जो अनुच्छेद 310 के खंड (2) में आते है प्रतिकर का संदाय करना होगा ।

जहां सरकार के प्रसाद पर संविधान के किसी अभिव्यक्त उपबंध द्वारा बंधन लगाया गया है वहां सरकार सांविधानिक उपबंध का संविदा द्वारा अध्यारोहण नहीं कर सकती । किसी अस्थायी नियोजन की संविदा मे रखा गया यह उपबंध कि ऐसे नियोजन को बिना कारण दिए एक मास की सूचना पर समाप्त किया जा सकता है, विधिमान्य है ।[38-39] किंतु यदि ऐसा उपबंध है कि कदाचार या अदक्षता के आधार पर ऐसे नियोजन का पर्यवसान करने पर सूचना देने की अपेक्षा नहीं होगी, वहां यह उपबंध अनुच्छेद 311(2) का उल्लंघन होने के कारण शून्य होगा ।[38, 40]

"किसी राज्य की सिविल सेवा का सदस्य है या राज्य के अधीन कोई सिविल पद धारण करता है" — इस अभिव्यक्ति के अन्तर्गत उच्च न्यायालय के कर्मचारिवृन्द के सदस्य भी हैं ।[41]

33 *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *शार्दूल सिंह*, ए 1970 एस सी 1228 ।

34. *प्रद्योत* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एस.सी आर. 1331 ।

35. *दिनेश* बनाम *असम राज्य*, ए. 1978 एस सी 17 (पैरा 8) ।

36. *भारत संघ* बनाम *मोरे*, ए. 1962 एस.सी. 630 (*633*); *उड़ीसा राज्य* बनाम *धीरेन्द्र नाथ*, ए. 1961 एस.सी 1715; *कपूर सिंह* बनाम *भारत संघ*. (1960) 2 एस.सी.आर. 569; *जगन्नाथ* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1245 (*1252*); *कामेश्वर* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1166 (*1172*); *घोष* बनाम *जोसेफ*, ए. 1963 एस.सी. 812 (*814*) ।

37. *सरदारी लाल* बनाम *भारत संघ*, (1971) 1 एस.सी.सी. 411 (*414*) ।

38. *पुरुषोत्तम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1957 एस.सी. 36 (*41*) · (1958) एस.सी.आर. 828 ।

39. *सतीश आनंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1953 एस.सी. 250 ।

40. *मोतीराम* बनाम *एन.ई.एफ. रेलवे*, ए. 1964 एस.सी. 600 (*610*) ।

41. *प्रद्योत* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एस.सी.आर. 1331 ।

संघ या राज्य के अधीन सिविल हैसियत में नियोजित व्यक्तियों का पदच्युत किया जाना, पद से हटाया जाना या पंक्ति में अवनत किया जाना ।

311. (1) किसी व्यक्ति को जो संघ की सिविल सेवा का या अखिल भारतीय सेवा का या राज्य की सिविल सेवा का सदस्य है अथवा संघ या राज्य के अधीन कोई सिविल पद धारण करता है, उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी के अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा पदच्युत नहीं किया जाएगा या पद से नहीं हटाया जाएगा ।

[42]*(2) यथापूर्वोक्त किसी व्यक्ति को, ऐसी जांच के पश्चात् ही, जिसमें उसे अपने विरुद्ध आरोपों की सूचना दे दी गई है और उन आरोपों के संबंध में [43]*** सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दे दिया गया है, पदच्युत किया जाएगा या पद से हटाया जाएगा या पंक्ति में अवनत किया जाएगा, अन्यथा नहीं :*

[44]*परंतु जहां ऐसी जांच के पश्चात् उस पर ऐसी कोई शास्ति अधिरोपित करने की प्रस्थापना है वहां ऐसी शास्ति ऐसी जांच के दौरान दिए गए साक्ष्य के आधार पर अधिरोपित की जा सकेगी और ऐसे व्यक्ति को प्रस्थापित शास्ति के विषय में अभ्यावेदन करने का अवसर देना आवश्यक नहीं होगा :*

परंतु यह और कि यह खंड वहां लागू नहीं होगा —

(क) जहां किसी व्यक्ति को ऐसे आचरण के आधार पर पदच्युत किया जाता है या पद से हटाया जाता है या पंक्ति में अवनत किया जाता है जिसके लिए आपराधिक आरोप पर उसे सिद्धदोष ठहराया गया है; या

(ख) जहां किसी व्यक्ति को पदच्युत करने या पद से हटाने या पंक्ति में अवनत करने के लिए सशक्त प्राधिकारी का यह समाधान हो जाता है कि किसी कारण से, जो उस प्राधिकारी द्वारा लेखबद्ध किया जाएगा, यह युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है कि ऐसी जांच की जाए; या

(ग) जहां, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल का यह समाधान हो जाता है कि राज्य की सुरक्षा के हित में यह समीचीन नहीं है कि ऐसी जांच की जाए ।

(3) यदि यथापूर्वोक्त किसी व्यक्ति के संबंध में यह प्रश्न उठता है कि खंड (2) में निर्दिष्ट जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य है या नहीं तो उस व्यक्ति को पदच्युत करने या पद से हटाने या पंक्ति में अवनत करने के लिए सशक्त प्राधिकारी का उस पर विनिश्चय अंतिम होगा ।

संशोधन — 1. यह अनुच्छेद सबसे पहले 15वें संशोधन अधिनियम, 1963 द्वारा संशोधित किया गया था । उसमें खंड (2) और (3) में कुछ संशोधन किए गए थे । यह संशोधन शाब्दिक था ।

2. 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा किए गए अन्य संशोधन अधिष्ठायी हैं, — (क) खंड (2) में अंत में आने वाले कुछ शब्दों का लोप किया गया है, और (ख) खंड (2) के परंतुक के स्थान पर नया परंतुक रखा गया है जिससे जांच की समाप्ति के पश्चात् शास्ति अधिरोपित करने के चरण में सुनवाई का दूसरा अवसर प्रदान करने की आवश्यकता न हो ।[45]

अनुच्छेद 323क का प्रभाव — देखिए इस अध्याय के प्रारम्भ में ।

अनुच्छेद 310 और 311 का प्रविषय — अनुच्छेद 311 इस सिद्धांत में कोई परिवर्तन नहीं करता है कि सरकारी सेवक, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल के प्रसादपर्यन्त पद धारण करता है । अनुच्छेद 311 यह कहता है कि इस प्रसाद का प्रयोग उस अनुच्छेद में अधिकथित दो शर्तों के अधीन होगा । दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 311 के उपबंध सिविल पद धारण करने वाले व्यक्तियों के संबंध में अनुच्छेद 310(1) के परंतुक के रूप में कार्य करते हैं ।[41-46]

42. संविधान (पंद्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा प्रतिस्थापित ।

43. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से कुछ शब्दों का लोप किया गया ।

44. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से प्रतिस्थापित ।

45. *भारत संघ* बनाम *तुलसीराम*, ए. 1985 एस.सी. 1416 में इस दृष्टिकोण की अभिपुष्टि की गई ।

46. *मोतीराम* बनाम *महाप्रबंधक*, ए. 1964 एस.सी. 600 ।

ये दो शर्तें हैं, —

(i) कि किसी कर्मचारी को उसकी नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी के अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा पदच्युत नहीं किया जाएगा या पद से नहीं हटाया जाएगा,

(ii) कि ऐसे कर्मचारी को ऐसी जांच के पश्चात् ही पदच्युत किया जाएगा या पद से हटाया जाएगा या पंक्ति में अवनत किया जाएगा जिसमें उसे अपने विरुद्ध आरोपों की सूचना दे दी गई है और उन आरोपों के संबंध में सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दे दिया गया है ।

अनुच्छेद 311 के उपबंध अनुच्छेद 309, अनुच्छेद 310 या संविधान के किसी अन्य उपबंध के अधीन नहीं हैं ।[46] इस अनुच्छेद में सेवा के स्थायी और अस्थायी सदस्यों के बीच या स्थायी या अस्थायी पद धारण करने वाले व्यक्तियों के बीच कोई अन्तर नहीं किया गया है ।[47-48]

किंतु अनुच्छेद 311 निम्नलिखित को लागू नहीं होगा —

(क) उन व्यक्तियों को जो सैनिक सेवा में हैं जिसके अन्तर्गत प्रतिरक्षा सेवा के सिविलियन भी हैं,

(ख) उन व्यक्तियों को जो संघ या राज्य के अधीन सेवा नहीं करते बल्कि किसी कानूनी निगम में सेवा करते हैं जैसे जीवन बीमा निगम,[49] या हिंदुस्तान स्टील लिमिटेड,[50]

(ग) पदच्युति, पद से हटाए जाने या पंक्ति में अवनत किए जाने से भिन्न किसी शास्ति की दशा में जैसे गोपनीय रिपोर्ट में प्रतिकूल प्रविष्टि ।[51]

उपचार — *अ. 1976 के पहले,* अनुच्छेद 311 के अधीन रक्षोपायों के उल्लंघन के कारण व्यथित व्यक्ति को सिविल न्यायालय में दोषपूर्ण पदच्युति के लिए वाद लाने का[52] या सांविधानिक उपबंध के उल्लंघन के लिए[53] या अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए आज्ञापक नियमों के उल्लंघन के लिए अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय में अभ्यावेदन करने का अधिकार था ।

आ *42वें संशोधन अधिनियम, 1976* में इस विषय में क्रांतिकारी परिवर्तन किए गए हैं ।

अनुच्छेद 323क में यह उपबंध किया गया है कि लोकसेवाओं में नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों की बाबत सभी विवादों का निर्णय संसद् द्वारा स्थापित प्रशासनिक अधिकरणों द्वारा किया जाएगा । ऐसी विधि में अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता के सिवाए सभी न्यायालयों की अधिकारिता का अपवर्जन किया जा सकेगा । अतएव केन्द्रीय प्रशासनिक अधिनियम, 1985 के पारित किए जाने के पश्चात् अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता और सिविल न्यायालय की अधिकारिता का अपवर्जन कर दिया गया है ।[54]

व्यथित व्यक्ति अनुच्छेद 32 के अधीन सीधे उच्चतम न्यायालय में नहीं जा सकता क्योंकि अनुच्छेद 311 का उल्लंघन किसी मूल अधिकार का उल्लंघन नहीं है ।[55] यदि इसके

47. *पुरुषोत्तम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 36; *मदन* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1133 (*1134*) ।

48. *प्रभागीय कार्मिक अधिकारी* बनाम *रामचेन्द्राचार* (1966) 2 एस.सी.आर. 106 (*110*) ।

49. *लेखराज* बनाम *भारत संघ*, (1971) 1 एस.सी.सी. 780 (*783*) ।

50. *अग्रवाल* बनाम *हिंदुस्तान स्टील*, ए. 1970 एस.सी. 1150; *मफतलाल* बनाम *प्रभागीय नियंत्रक*, (1966) 3 एस.सी.आर. 40 (*42*) ।

51. *बुटेल* बनाम *भारत संघ*, (1970) 2 एस.सी.सी. 876 ।

52. *बिहार राज्य* बनाम *अब्दुल मजीद*, (1954) एस.सी.आर. 786 ।

53. *भारत संघ* बनाम *वर्मा*, (1958) एस.सी.आर. 499 (*507*) ।

54. न्यायालयों की विद्यमान अधिकारिता हटाने वाली ऐसी विधि है प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 । (देखिए पूर्व पृष्ठ 359 और आगे अनुच्छेद 323क के अधीन) ।

55. *राधाकृष्ण* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1977) यू.जे.एस.सी. 84 (पैरा 6) ।

साथ ही किसी मूल अधिकार का उल्लंघन होता है तो व्यथित व्यक्ति सीधे उच्चतम न्यायालय में जा सकेगा ।

खंड (1)

अधीनस्थ — अधीनस्थ से पंक्ति में अधीन के प्रति निर्देश है कार्य की बाबत नहीं । नियुक्त करने वाले प्राधिकारी से पंक्ति में अधीनस्थ किसी प्राधिकारी द्वारा की गई पदच्युति शून्य होगी ।[56]

यदि किसी नियम में पदच्युत करने की शक्ति नियुक्त प्राधिकारी के अधीनस्थ प्राधिकारी को दी जाती है तो ऐसा नियम शून्य होगा ।[57]

यह भी ध्यान देने योग्य है कि, —

(i) इस खंड में यह अपेक्षा नहीं की गई है कि पदच्युति या पद से हटाने का आदेश वही प्राधिकारी दे जिसने नियुक्ति की थी या उसका अव्यवहित वरिष्ठ व्यक्ति दे । यदि पदच्युत करने वाला प्राधिकारी नियुक्त करने वाले प्राधिकारी से पंक्ति या ग्रेड में निम्न नहीं है तो इस खंड का अनुपालन हो जाता है ।[58]

(ii) यदि पदच्युत करने वाला प्राधिकारी नियुक्त करने वाले प्राधिकारी से पंक्ति में अधीनस्थ नहीं है तो पदाभिधान में अन्तर होने से कोई अन्तर नहीं होता ।[59]

(iii) इस प्रयोजन के लिए कोई अधिकारी पंक्ति में अधीनस्थ है या नहीं यह नियुक्ति की तारीख को विद्यमान परिस्थिति के प्रति निर्देश से तय किया जाएगा । अनुच्छेद 311(1) मामले के उसी बिंदु पर लागू होता है । नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा बाद में किए गए प्रत्यायोजन से उस व्यक्ति द्वारा पदच्युति का आदेश दोषहीन नहीं हो जाता जो अर्जीदार की नियुक्ति के समय नियुक्त करने वाले प्राधिकारी का अधीनस्थ था ।[60]

नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी — नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी से वह प्राधिकारी अभिप्रेत है जिसने उस अधिकारी की सेवा में नियुक्ति की थी जिसकी सेवा का पर्यवसान कर दिया गया है । जब किसी कर्मचारी को दूसरे विभाग में प्रतिनियुक्ति पर भेजा जाता है —

(क) तो किसी प्रतिकूल बाद के न होने पर वह अपने मूल आवेदक के अनुशासनिक नियंत्रण में बना रहता है ।[61]

(ख) किंतु यदि प्रतिनियुक्ति के आदेश में उसे नए विभाग में किसी विनिर्दिष्ट अधिकारी के अनुशासनिक नियंत्रण में सौंप दिया जाता है और ऐसा अधिकारी उस कर्मचारी को नियुक्त करने वाले अधिकारी के अधीनस्थ नहीं है तो वह नियुक्ति करने वाले अधिकारी के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन नहीं रहता है ।[61]

(ग) ऐसे मूल विभाग का नियंत्रण वहां भी समाप्त हो जाता है जहां कर्मचारियों को स्थायी रूप से नए विभाग में अन्तरित कर दिया जाता है या कर्मचारी अपने मूल विभाग में वापस न जाने का निर्णय करता है ।[61]

अनुच्छेद 311(1) में निर्दिष्ट नियुक्ति करने वाले प्राधिकारी से अभिप्रेत है वह प्राधिकारी जिसने सरकारी सेवक को उस पद पर नियुक्त किया था जिससे उसकी पदच्युति की गई है या उसे हटा दिया गया है । वह उस प्राधिकारी से भिन्न प्राधिकारी हो सकता

---

56. *बिहार राज्य* बनाम *एस.बी. मिश्रा*, (1970) 2 एस.सी.सी. 871 (*873*); *मैसूर राज्य सड़क परिवहन निगम* बनाम *मिर्जा*, (1977) यू.जे.एस.सी. 31*एन* ।

57. *एन.डब्ल्यू.एफ.पी.* बनाम *सूरज नारायण*, ए. 1949 पी.सी. 112 ।

58. *महेश प्रसाद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 70 (*73*)

59. *भारत संघ* बनाम *जगजीत सिंह*, (1969) 2 एस.सी.सी. 108; *भारत संघ* बनाम *राम किशन*, (1971) 2 एस.सी.सी. 349 ।

60. *कृष्ण* बनाम *प्रभागीय सहायक इंजीनियर*, ए. 1979 एस.सी. 1912 (पैरा 5-7) ।

61. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *राम नरेश*, (1970) 3 एस.सी.सी. 173 (*176-77*) ।

है जिसने उस कर्मचारी की आर्थिक नियुक्ति की थी । यदि किसी कर्मचारी को उसके उच्चतर स्थानापन्न पद से अधिष्ठायी पद पर वापस आने के पश्चात् पदच्युत किया जाता है और यह पाया जाता है कि उसका प्रत्यावर्तन अवैध था तो अधिष्ठायी पद से नियुक्त करने वाले प्राधिकारी द्वारा की गई पदच्युति अवैध होगी ।[62] यदि किसी व्यक्ति को उस उच्चतर पद पर पुष्ट किया जाता है जिसमें वह स्थानापन्न है तो वह अधिकारी जो पुष्टि का आदेश निकालता है उसका नियुक्त करने वाला प्राधिकारी बन जाता है । वह उच्चतर अधिकारी नहीं जिसने ऐसी पुष्टि के लिए उसका चयन किया हो ।[63]

जहां किसी कानूनी उपबंध द्वारा नियुक्त करने की शक्ति किसी प्राधिकारी को दी जाती है और उसमें यह शर्त होती है कि वह उसका प्रयोग किसी अन्य व्यक्ति की सलाह से करेगा तो पहला व्यक्ति ही नियुक्त करने वाला प्राधिकारी समझा जाएगा ।[64]

पदच्युत करने की शक्ति का प्रत्यायोजन नहीं किया जा सकता — नियुक्त करने वाला प्राधिकारी किसी अधीनस्थ प्राधिकारी की पदच्युति या पद से हटाने की शक्ति का प्रत्यायोजन करके[65] संविधान के अनुच्छेद 311(1) द्वारा दी गई सुरक्षा को नष्ट नहीं कर सकता । यह तभी हो सकेगा जब संविधान स्वयं ऐसे प्रत्यायोजन का प्राधिकार देता हो ।

अनुशासनिक प्राधिकारी — प्रस्तावित दंड के विरुद्ध हेतुक दर्शित करने की सूचना देगा और अन्तिम आदेश देने के पूर्व अपराधी के अपराध पर विचार करने के पश्चात् उसके द्वारा बताए गए हेतुक पर विचार करेगा ।[66] इसका यह अर्थ नहीं है कि सरकार नियुक्त करने वाले प्राधिकारी से भिन्न किसी अधिकारी को सरकारी कर्मचारी को पदच्युत करने का प्राधिकार नहीं दे सकती । देने के लिए शर्त यह है कि ऐसा अधिकारी नियुक्त करने वाले प्राधिकारी के अधीनस्थ न हो ।[67]

आरोपों की जांच करने की शक्ति का प्रत्यायोजन किया जा सकता है — किसी अधिकारी को नियुक्त करने या पदच्युत करने की शक्ति प्रशासनिक शक्ति है, न्यायिक शक्ति नहीं । यह ठीक है कि कारण बताने के लिए अवसर दिया जाता है और न्यायिक मानकों के अनुसार जांच की जाती है और तभी पदच्युत करने की शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है । अतएव पदच्युत करने वाला प्राधिकारी इस शक्ति के प्रयोग में किसी अधीनस्थ प्राधिकारी की सहायता ले सकता है जैसे उसे जांच करने और रिपोर्ट देने के लिए कह सकता है ।[67] इसमें प्रतिबंध यह है कि पदच्युति करने की शक्ति का प्रयोग करने का अन्तिम उत्तरदायित्व उस व्यक्ति में होना चाहिए जिसे इस अनुच्छेद के खंड (1) के अधीन पदच्युति करने की शक्ति है ।[65]

किंतु खंड (2) के साथ पढ़े जाने पर खंड (1) में यह विवक्षा है कि पदच्युत करने वाले प्राधिकारी को ही खंड (2) द्वारा अनुध्यात कारण बताओ सूचना निकालनी चाहिए और पदच्युति या पद से हटाने का आदेश देने के पहले उस पर विचार करना चाहिए ।[66]

"व्यक्ति जो सिविल पद धारण करता है" — अनुच्छेद 311 के उपबंध उन सभी व्यक्तियों को लागू होते हैं जो संघ या राज्य के अधीन कोई सिविल पद धारण करते हैं । इसके अन्तर्गत अखिल भारतीय और राज्य सेवाओं के सदस्य भी आते हैं । प्रतिरक्षा सेवाओं के सदस्य इस अनुच्छेद की परिधि से बाहर हैं किंतु पुलिस अधिकारी नहीं ।[68]

62. *बिहार राज्य बनाम एस.बी. मिश्रा*, (1970) 2 एस.सी.सी. 871 (*873*) ।
63. *असम राज्य बनाम एम.के. दास*, ए. 1970 एस.सी 1255 (*1262*) ।
64. तुलना कीजिए, *असम राज्य बनाम कृपानाथ*, ए 1967 एस.सी. 459 (*462*) ।
65. *प्रद्योत बनाम मुख्य न्यायमूर्ति*, ए. 1956 एस.सी. 285 (*291*) ।
66. *ग्रेवाल बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 512 (*519*) ।
67. *मध्य प्रदेश राज्य बनाम शार्दूल सिंह*, (1970) 1 एस.सी.सी. 108 ।
68. *जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1245 (*1250*) ।

सिविल पद — प्रथमदृष्टया सिविल पद अभिव्यक्ति से प्रशासन के सिविल पक्ष में नियुक्ति या पद अभिप्रेत है । इसे प्रतिरक्षा बलों के अधीन पदों से सुभिन्न रखना चाहिए । केवल वे ही व्यक्ति अनुच्छेद 311(1) की परिधि से बाहर हैं जो, — (क) प्रतिरक्षा सेवाओं के सदस्य हैं, और (ख) प्रतिरक्षा से संबंधित पद धारण करने वाले व्यक्ति हैं ।[69] यह ध्यान में रखना होगा कि अनुच्छेद 311(1) स्वयं भी अनुच्छेद 310(1) का अपवाद है ।

इन दो वर्गों को छोड़ कर वे सभी व्यक्ति जो संघ या राज्य के अधीन कोई पद धारण करते हैं सिविल पद धारण करने वाले कहे जाते हैं । यह अभिव्यक्ति इतनी व्यापक है कि इसके अधीन सभी कर्मचारी आ जाते हैं चाहे स्थायी हों या अस्थायी[70] या परिवीक्षा पर हों या स्थानापन्न ।[70]

इस संदर्भ में 'पद' से अभिप्रेत है 'कार्यासन' ।[71] राज्य के अधीन पद ऐसा कार्यासन या प्रास्थिति होती है जिससे राज्य के क्रियाकलाप से संबंधित कुछ कर्तव्य जुड़े होते हैं । ऐसे पद पर किसी व्यक्ति की नियुक्ति की जाती है और यह पद उसके धारणकर्ता से स्वतंत्र रूप से विद्यमान होता है । अनुच्छेद 310(2) में यह अनुध्यात है कि पद का उत्सादन किया जा सकता है और उस पद को धारण करने वाले व्यक्ति से पद रिक्त करने की अपेक्षा की जा सकती है । इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कोई पद उसके धारणकर्ता के बिना भी विद्यमान रह सकता है । पद का सृजन नियुक्ति के पहले भी किया जा सकता है और नियुक्ति के साथ-साथ भी । हर एक पद एक प्रकार से नियोजन है किंतु प्रत्येक नियोजन पद नहीं है । आकस्मिक श्रमिक कोई पद धारण नहीं करता । राज्य के अधीन पद से अभिप्रेत है ऐसा पद जो राज्य के नियंत्रण में है । राज्य किसी भी पद का सृजन कर सकता है या उसका उत्सादन कर सकता है और उस पद पर नियुक्त व्यक्तियों की सेवाओं की शर्तों का विनियमन कर सकता है ।[72]

इस प्रक्रम पर इस प्रश्न का उत्तर दिया जाना चाहिए कि क्या सरकार और कर्मचारी के बीच स्वामी और सेवक का संबंध होता है[71] और क्या प्रत्येक मामले में सुसंगत परिस्थितियों पर विचार करके इसका अवधारण होना चाहिए ।[72] साधारणतया नियोजक द्वारा चयन, वेतन और पारिश्रमिक का संदाय, कार्य की रीति पर नियंत्रण करने का अधिकार और नियोजन से निलंबित करने या हटाने की शक्ति से स्वामी और सेवक का संबंध प्रकट होता है ।[72] किंतु प्रत्येक मामले में स्वामी और सेवक से संबंधित यह स्पष्ट चिह्न एक साथ नहीं मिलते ।[71] सामान्यतया कार्य की रीति को नियंत्रित करने का नियोजक का अधिकार, अधीक्षण की शक्ति तथा प्रशासनिक नियंत्रण से संबंध स्पष्ट रूप से प्रकट हो जाता है । इसमें न केवल यह निदेश देने की शक्ति है कि कोई काम किया जाए बल्कि यह बताने की शक्ति भी है कि वह काम किस रीति से किया जाए । यदि नियोजक को यह शक्ति है तो स्वामी और सेवक का संबंध विद्यमान है ।[73] यह स्वतंत्र संविदा से भिन्न है ।[73-74] यदि प्रशासनिक नियंत्रण और स्वामी और सेवक का संबंध साबित होता है तो यह तथ्य कि धारक को कोई निश्चित वेतन नहीं दिया जाता बल्कि वह कमीशन पर काम करता है[71] या वह अंशकालिक कर्मचारी है,[71] उसे सरकार के अधीन सिविल पद धारण करने वाले प्रवर्ग से अपवर्जित नहीं करता ।[71]

69. *लेखराज* बनाम *भारत संघ*, (1971) 1 एस.सी.सी. 780 (*783*) ।
70. *पुरुषोत्तम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 36 : (1958) एस.सी.आर. 838 ।
71. *असम राज्य* बनाम *कनक*, ए. 1967 एस.सी. 884 ।
72. तुलना कीजिए, *प्रद्योत* बनाम *मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एस.सी.आर. 1331 (*1350*) ।
73. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *अवध नारायण*, ए. 1965 एस.सी. 360 (*363*) ।
74. *शिवनंदन* बनाम *पंजाब नेशनल बैंक*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1427; *प्यारेलाल* बनाम *आय-कर आयुक्त*, (1960) 3 एस.सी.आर. 669 ।

अ. स्वामी और सेवक के परीक्षण को लागू करके यह अभिनिर्धारित किया गया है कि निम्नलिखित लोग इस अनुच्छेद के अर्थान्तर्गत सिविल पद धारण करते हैं —

(i) पुलिस बल के सदस्य ।[75]
(ii) उच्च न्यायालय द्वारा नियुक्त अधिकारी ।[76]
(iii) सरकारी कोषाध्यक्ष की सहायता करने के लिए उत्तर प्रदेश में नियुक्त एक तहसीलदार ।[77]
(iv) असम घाटी में मौजादार ।

आ. जब तक कोई पद या कार्यासन ऐसा न हो जो नियोजित व्यक्ति के रहने या न रहने पर भी विद्यमान रहेगा तब तक वह सिविल पद नहीं हो सकता ।[78] यह अभिनिर्धारित हुआ है कि निम्नलिखित कर्मचारी सिविल पद धारण नहीं करते —

(i) आकस्मिक श्रमिक[78]
(ii) किसी रेलवे स्टेशन में रेलवे स्टाल का अनुज्ञप्तिधारी — यद्यपि उसे रेल प्रशासन के निदेशों के अधीन काम करना पड़ता है ।[79]

कानूनी प्राधिकरणों के कर्मचारी — कानूनी प्राधिकरण राज्य से भिन्न विधिक व्यक्ति है[80] इसलिए कानूनी प्राधिकरण के कर्मचारी राज्य के अधीन कोई सिविल पद नहीं धारण करते । अतएव उन्हें अनुच्छेद 311 लागू नहीं होगा ।[81]

खंड (2)

खंड (2) : यह कब प्रवृत्त होता है — अब यह सुस्थापित हो गया है कि अनुच्छेद 311(2) तभी लागू होता है जब किसी सिविल सेवक को पंक्ति में अवनत किया जाता है[82] या पदच्युत किया जाता है और यह उसकी इच्छा के विरुद्ध सेवा की सामान्य अवधि के समाप्त होने के पहले शास्ति के रूप में किया जाता है ।[83]

आक्षेपित आदेश में जिन शब्दों का प्रयोग किया जाता है वे इस प्रश्न के लिए निश्चायक नहीं होते हैं कि क्या यह दंडस्वरूप किया गया है । इस बात का प्रत्येक मामले में परिस्थितियों के आधार पर निर्णय करना चाहिए और एक दोहरा परीक्षण लागू किया जाना चाहिए,[84-85] अर्थात् :

(क) क्या वह सरकारी सेवक जिसकी सेवाएं समाप्त की गई हैं उस पद या पंक्ति का अधिकारी था,

(ख) क्या उसे बुरे परिणाम भुगतने पड़े हैं अर्थात् क्या उसे जो फायदे मिले हुए थे वे छीने गए हैं ।

75. *जगन्नाथ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1245 (*1250*) ।
76. *प्रद्योत बनाम मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एस.सी.आर. 1331 ।
77. *उत्तर प्रदेश राज्य बनाम अवध नारायण*, (1964) 9 एफ.एल.आर. 238 (एस.सी.) ।
78. *असम राज्य बनाम कनक*, ए. 1967 एस.सी. 884 (*887*) ।
79. *नमिक बनाम भारत संघ*, (1970) एस.सी.डी. 878 (*879*) ।
80. *वेलजीभाई बनाम मुंबई राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1890 (*1894*); *आंध्र प्रदेश राज्य सड़क परिवहन निगम बनाम आय-कर अधिकारी*, ए. 1964 एस.सी. 1486 (*1493*) ।
81. *गुरुशांतप्पा बनाम अनवर*, (1969) 1 एस.सी.सी. 466 (*474*); *प्रागा टूल्स कारपोरेशन बनाम इमानुअल*, (1969) 19 एफ.एल.आर. 140 (*144*) एस.सी.; *अग्रवाल बनाम हिंदुस्तान स्टील*, ए. 1970 एस.सी. 1150 ।
82. *श्यामलाल बनाम उत्तर प्रदेश राज्य*, (1954) एस.सी.आर. 476 ।
83. *जयशंकर बनाम राजस्थान राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 492 ।
84. *पुरुषोत्तम बनाम भारत संघ*, (1958) एस.सी.आर. 828 : ए. 1958 एस.सी. 36 ।
85. *चंपकलाल बनाम भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1854 ।

यदि इन दो प्रश्नों में से किसी का भी उत्तर हां में होता है तो यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि उस सेवक को दण्डित किया गया है और परिणामस्वरूप अनुच्छेद 311(2) लागू होगा ।[83-85]

अ. जहां किसी सरकारी सेवक को अपनी सेवा की संविदा या शर्त के अनुसार कोई पद धारण करने का अधिकार है वहां यदि उसकी सेवाएं समाप्त की जाती हैं तो यह स्वतः सिद्ध मान लिया जाएगा कि ऐसा दंडस्वरूप किया गया है और अनुच्छेद 311(2) लागू होगा चाहे ऐसी समाप्ति के लिए कारण दिए गए हों या नहीं ।[84] सरकारी सेवकों के निम्नलिखित वर्गों की सेवा अनुच्छेद 311(2) का अनुपालन किए बिना समाप्त नहीं की जा सकती, अर्थात् :

(i) किसी स्थायी पद को अधिष्ठायी रूप से धारण करने वाले सरकारी सेवक की सेवाओं का अधिवर्षिता की आयु के पहले पर्यवसान ।[86] किंतु नियमों के अनुसार अनिवार्य सेवानिवृत्ति की जा सकती है[86] या यह हो सकता है कि उस व्यक्ति को अनुच्छेद 311 का संरक्षण प्राप्त न हो, जैसे प्रतिरक्षा से संबंधित कोई व्यक्ति ।[87]

(ii) किसी नियत अवधि के लिए अस्थायी पद धारण करने वाले सरकारी सेवक की सेवाओं का समय से पूर्व पर्यवसान ।[84]

(iii) किसी स्थायीकल्प व्यक्ति की सेवाओं का ऐसा पर्यवसान जो केन्द्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियम, 1949 के नियम 6 के अनुसार नहीं है ।[85]

पूर्वगामी मामलों में सेवा का पर्यवसान स्वतः ही पदच्युति या पद से हटाए जाने की कोटि में आएगा चाहे दंड देने का आशय हो या नहीं अथवा दंडस्वरूप कुछ और अतिरिक्त परिणाम हों या नहीं । कारण यह है कि, कर्मचारी को, यथास्थिति, अधिवर्षिता की आयु तक या किसी विनिर्दिष्ट सीमा तक अपने पद को धारण करने का अधिकार है[86] और ऐसे अधिकार से वंचित किया जाना अपने आप में शास्ति है । किसी प्रशासनिक आवश्यकता के आधार पर इस अधिकार को छीना नहीं जा सकता क्योंकि उस सरकारी सेवक को अधिवर्षिता तक या नियमानुसार अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त किए जाने तक वह पद धारण करने का अधिकार था ।[83] यह अधिकार संविधान के अनुच्छेद 311(2) द्वारा अधिकथित रीति में ही छीना जा सकता है।[83, 86]

ऊपर बताए गए मामलों में भी अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा, यदि (क) सरकार को किसी कर्मचारी की सेवा की शर्तें या संविदा के अधीन उसे सेवोन्मुक्त या सेवानिवृत्त करने का अधिकार है ।[84] और (ख) ऐसी सेवोन्मुक्ति या सेवानिवृत्ति से दंडस्वरूप कोई परिणाम नहीं निकलता है जैसे वेतन, भत्ते, पेंशन या पहले की गई सेवाओं के आधार पर प्राप्त कोई अन्य फायदे नष्ट नहीं होते हैं ।[88] हरएक दशा में आदेश के पीछे का मंतव्य तात्विक नहीं है ।[88]

आ. ऊपर बताए गए मामलों को छोड़कर, सरकारी सेवक को अपने द्वारा धारित पद के लिए कोई अधिकार नहीं होता जैसे, जब किसी व्यक्ति को परिवीक्षा पर किसी पद पर नियुक्त किया जाता है या स्थानापन्न हैसियत में नियुक्त किया जाता है या कोई व्यक्ति अस्थायी रूप से पद धारण करता है जो नियत अवधि के लिए नहीं है और जिसमें वह स्थायीकल्प सेवा की हैसियत प्राप्त नहीं कर लेता ।[84] अतएव हर समय सेवा के पर्यवसान से अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा क्योंकि नियत दिन से अभिव्यक्त या विवक्षित शर्तों द्वारा सेवा का किसी भी समय पर्यवसान किया जा सकता था और ऐसे पर्यवसान को दंड नहीं माना जा सकता । यदि किसी सरकारी सेवक को अस्थायी आधार पर नियुक्त किया

86. *मोतीराम* बनाम *एन.ई.एफ. रेलवे*, ए. 1964 एस.सी. 600 (*610, 612*) ।

87. *भारत संघ* बनाम *सुब्रमण्यम*, (1976) यू.जे.एस.सी. 717 (पैरा 19); *खुराना* बनाम *भारत संघ*, (1971) 3 एस.सी.आर. 908 ।

88. *बालकोटय्या* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 232; *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 449 (*456*); *स्याल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 1317 ।

जाता है और जिस पद पर उसे नियुक्त किया गया था उस पद को बाद में स्थायी पद बना दिया जाता है तो इससे उस सेवक की प्रास्थिति नहीं बढ़ जाती ।[89]

किंतु इस वर्ग के मामलों में भी अनुच्छेद 311(2) लागू होगा यदि सरकार ने यह दृष्टिकोण अपनाया है कि सेवा का सादा पर्यवसान मात्र पर्याप्त नहीं है । उस सरकारी सेवक को दंड दिया जाना चाहिए । अनुच्छेद 311(2) के लागू होने की दो आवश्यक शर्तें इस प्रकार हैं, —

(i) कि ऐसा दंड सरकारी सेवक के कदाचार, अदक्षता, उपेक्षा आदि के आधार पर दिया जाना है,[88]

(ii) कि सरकार दंड के रूप में सरकारी सेवक से उसके द्वारा पहले से अर्जित फायदे छीन लेना चाहती है (जैसे उसके द्वारा अर्जित वेतन के कुछ अंश को विघारित करके)[90] या उसकी ज्येष्ठता कम करना चाहती है या अधिष्ठायी पंक्ति में उसकी प्रोन्नति के अवसर कम करना चाहती है या उस आदेश से कोई कलंक लग जाता है,[88] —

(क) परंतु यह सुस्थापित हो चुका है कि यदि सेवा का पर्यवसान दंडस्वरूप है तो अनुच्छेद 311 लागू होता है । यही नहीं जहां किसी ऐसे आधार पर पर्यवसान किया जाता है जिसके बारे में स्पष्टीकरण दिया जा सकता था अर्थात् जिसके विरुद्ध सरकारी सेवक कारण बता सकता था और अनुच्छेद 311(2) लागू होता था जैसे, जहां सेवा का पर्यवसान अदक्षता,[91] शारीरिक या मानसिक अक्षमता,[84] अपने पद के कार्य करने में इच्छा का अभाव या उपेक्षा, बिना इजाजत और बिना युक्तियुक्त कारण के अनुपस्थिति[92] या छुट्टी समाप्त होने पर काम पर न आना ।[93]

जहां नियुक्ति विधिमान्य नहीं थी वहां पर सेवा समाप्त करने में कोई दंड अन्तर्वलित नहीं है,[94] जैसे जहां नियुक्ति लोक सेवा आयोग से परामर्श के बिना[71] की गई थी और इसी आधार पर अब सेवा समाप्त की जा रही है[94] या पहले जो पुष्टि का आदेश दिया गया था वह भूल से दिया गया था ।[95]

(ख) जहां परिणाम दंडस्वरूप नहीं है वहां यह बात तात्त्विक नहीं है कि पर्यवसान सरकारी सेवक के विरुद्ध किए गए अभिकथन या आरोपों के परिणामस्वरूप है[96] या जहां इस बात की अनौपचारिक जांच की गई थी कि क्या वह व्यक्ति सेवा में रखने योग्य है ।

संक्षेप में, —

(i) जहां किसी व्यक्ति की सेवाएं उस अवधि की समाप्ति पर पर्यवसित की जाती है जिसके लिए वह नियुक्त किया गया था[97] या सूचना की उस अवधि की समाप्ति पर पर्यवसित होती हैं जिसके लिए उसे नियोजन की संविदा के अनुसार सूचना दी गई थी तो इसमें कोई शास्ति अन्तर्वलित नहीं है तथा अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा ।

(ii) जहां सरकारी सेवक को पहले की सेवाओं के लिए अर्जित फायदों को नष्ट करने के रूप में कोई शास्ति नहीं दी जाती है जैसे अनिवार्य सेवानिवृत्ति, वहां अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होता ।[98]

89. निदेशक, *पंचायत राज* बनाम *बाबू सिंह*, ए. 1972 एस.सी. 420 (*425*); *नागालैंड राज्य* बनाम *बसंत*, ए. 1970 एस.सी. 537 ।

90. *भारत संघ* बनाम *जीवन राम*, ए. 1958 एस.सी. 905 ।

91. *पंजाब राज्य* बनाम *चुन्नीलाल*, (1970) 1 एस.सी.सी. 479 (*484*) ।

92. तुलना कीजिए, *मफतलाल* बनाम *सिविल नियंत्रक*, (1966) 13 एफ.एल.आर. 77 एस.सी. ।

93. *जयशंकर* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 492 (*494*) ।

94. *श्रीनिवासन* बनाम *भारत संघ*, ए 1958 एस.सी. 419 ।

95. *पंजाब राज्य* बनाम *जगदीश*, ए. 1964 एस.सी. 521 ।

96. *मुंबई राज्य* बनाम *सौभागमल*, ए. 1957 एस.सी. 892 ।

97. *सतीशचंद्र* बनाम *भारत संघ*, (1953) एस.सी.आर. 655 ।

98. *श्यामलाल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1954 एस.सी.आर. 476 ।

(iii) जब सिविल सेवक को पदच्युति, पद से हटाए जाने या पंक्ति में अवनत किए जाने से भिन्न कोई दंड दिया जाता है तो अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होता।[84] विद्यमान सिविल सेवा (वर्गीकरण नियंत्रण और अपील) नियम के नियम 49 में कई शास्तियों का उल्लेख है, — (क) परिनिन्दा, (ख) वेतन, भत्ते या प्रोन्नति विधारित करना, (ग) निम्नतर पद या वेतनमान में भेजा जाना, (घ) उपेक्षा या आदेश भंग द्वारा सरकार को हुई दंड की हानि को उसके वेतन से पूर्णतः या भागतः वसूल करना, (ङ) निलम्बन, (च) सेवा से हटाना, (छ) पदच्युति। अनुच्छेद 311(2) वहीं प्रवृत्त होता है जहां पदच्युति, पद से हटाना या पंक्ति में अवनत करना, ये तीन शास्तियां दी जाती हैं।[84] यदि सरकारी सेवक को किसी अन्य रीति से दंडित किया जाता है तो यह अनुच्छेद लागू नहीं होता जैसे पेंशन का घटाया जाना।[99]

(iv) दाण्डिक परिणाम वही परिणाम हो सकता है जो सेवाओं के पर्यवसान के आदेश के परिणामस्वरूप दिया गया हो कोई अन्य नहीं, जैसे निलम्बन की अवधि के दौरान भरण-पोषण भत्ता देने से इंकार करना। इसका सेवा के पर्यवसान से कोई संबंध नहीं है।[100]

पदच्युति या पद से हटाया जाना — विभागीय नियमों के अनुसार पदच्युति और पद से हटाए जाने में उनके परिणामों को देखते हुए कुछ अन्तर है। पदच्युत व्यक्ति सरकार के अधीन दोबारा नियोजित नहीं हो सकता। पद से हटाए गए व्यक्ति के लिए ऐसी कोई निरर्हता नहीं है।[97] जहां आदेश में यह कहा गया है कि किसी व्यक्ति की सेवाएं नहीं चाहिए वहां यह हटाए जाने का आदेश माना जाएगा।[1] सांविधानिक दृष्टि से ये दोनों एक ही हैं। इनमें दो बातें समान हैं, —

(क) दोनों शास्तियां हैं[2] जो इस आधार पर दी गई हैं कि सरकारी सेवक का आचरण दोषपूर्ण है या त्रुटिपूर्ण है।[3]

(ख) दोनों में दंडस्वरूप परिणाम भुगतने पड़ते हैं जैसे वेतन, भत्ते या भूतकाल की सेवाओं के द्वारा अर्जित पेंशन के अधिकार का नष्ट हो जाना [मूल नियम 52]।

(अ) अधिकारी की सेवा को समाप्त करने वाले आदेश में कौन-सा शब्द प्रयोग किया गया है यह महत्व का नहीं होता।[3-4] सेवोन्मुक्ति या छटनी वास्तव में पदच्युति या पद से हटाया जाना भी हो सकती है। यह इस पर निर्भर करेगा कि आदेश के कोई दाण्डिक परिणाम हैं या नहीं। एक पद से दूसरे पद का अन्तरण भी हटाया जाना हो सकता है जिसके परिणामस्वरूप अनुच्छेद 311(2) लागू हो जाएगा। यदि अन्य परिस्थितियों के साथ देखने पर ऐसे अन्तरण का परिणाम यह है कि कर्मचारी सरकारी सेवक के रूप में अपनी प्रास्थिति खो देता है तो अन्तरण का अर्थ पद से हटाया जाना होगा।[5] आदेश के पीछे मंतव्य क्या है यह महत्व का नहीं होता। महत्व की बात यह है कि उसके कुछ दंडस्वरूप परिणाम हैं या नहीं। यदि ऐसा है तो अनुच्छेद 311 लागू होगा।

(आ) 1. अनुच्छेद 311(2) लागू होने के लिए सेवा की समाप्ति सिविल सेवक की इच्छा के विरुद्ध होनी चाहिए अर्थात् उसकी इच्छा तो सेवा करने की थी।[93] यह अनुच्छेद

99. *नरसिंहाचार बनाम मैसूर राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 247 (*251*)।

100. *भारत संघ बनाम पांडुरंग*, ए. 1962 एस.सी. 630।

1. *उड़ीसा राज्य बनाम गोविन्ददास*, (1959) एस.सी. [सिविल अपील 412/58]।

2. *जगदीश बनाम भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 449; *चंपकलाल बनाम भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1854।

3. *पुरुषोत्तम बनाम भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 36।

4. *उड़ीसा राज्य बनाम राम नारायण*, ए. 1961 एस.सी. 176 (*180*); *जीवनलाल बनाम भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 905 (*908*)।

5. *मैसूर राज्य बनाम पपन्ना*, (1970) 2 एस.सी.सी. 545 (*547*)।

वहां लागू नहीं होता जहां सेवोन्मुक्ति कर्मचारी की इच्छानुसार की गई है । जैसे, उसने सेवानिवृत्ति के लिए आवेदन किया था जो मंजूर किया गया ।[6-7]

2. निम्नलिखित आदेश पदच्युति या पद से हटाया जाना नहीं है, —

(क) नियोजन की संविदा के निबन्धनों के अनुसार सेवा का पर्यवसान ।[8]

(ख) सरकारी सेवक को लागू विभागीय नियमों में समाविष्ट सेवा की शर्तों के अनुसार पर्यवसान ।[9]

(ग) सिविल सेवा विनियम के अनुच्छेद 465क के अधीन[10] या इसी प्रकार के अन्य नियमों के अधीन अनिवार्य सेवा निवृत्ति, जिसमें कोई कलंक नहीं लगता ।[11]

(घ) अधिवर्षिता की आयु में परिवर्तन के कारण सेवानिवृत्ति ।[12] उस सेवानिवृत्ति की आयु नियत करने या उसे परिवर्तित करने में अनुच्छेद 311 लागू नहीं होता ।[13]

(ङ) रेल सेवा (राष्ट्रीय सुरक्षा) नियम के अधीन सेवाओं का पर्यवसान ।[14]

(च) यदि किसी पद का सद्‌भावपूर्वक उत्सादन किया जाता है और ऐसे उत्सादन के परिणामस्वरूप सेवा का पर्यवसान होता है ।[15] किंतु यदि पद का उत्सादन दुर्भावपूर्वक किया जाता है तो अनुच्छेद 311(2) लागू होगा अर्थात् किसी विशिष्ट कर्मचारी से छुट्टी पाने के लिए या दाण्डिक कार्यवाही को छिपाने के लिए ।[15]

इसी संबंध में यह ध्यान देने योग्य है कि पद के उत्सादन पर उस पद का धारण करने वाले को अपने अधिष्ठायी पद पर वापस जाने का अधिकार है जिस पर उसका धारणाधिकार था ।[15-16]

ऐसे पद के उत्सादन पर उस पद को धारण करने का अधिकार समाप्त हो जाता है इसलिए अनुच्छेद 19(1)(च) या अनुच्छेद 31 का उल्लंघन नहीं होता ।[15]

किंतु यदि पद के उत्सादन के पश्चात् उसी के समान कर्मचारियों को सेवा में पुनः रहने दिया जाता है तो अनुच्छेद 14 लागू होगा ।[15]

बिना छुट्टी के अनुपस्थिति — कुछ सेवा नियमों में यह उपबंध है कि यदि कर्मचारी बिना छुट्टी या अनुमति के अनुपस्थित रहता है तो यह समझा जाएगा कि उसने पद त्याग कर दिया या वह सरकारी सेवा में नहीं है । यह उपबंध हटाए जाने की कोटि में नहीं आता है क्योंकि इसमें विगत सेवाओं का लाभ नहीं मिलता है ।[17] अतएव किसी उपबंध के अनुसरण में सेवा का पर्यवसान तब तक नहीं किया जा सकता जब तक कि कर्मचारी को अनुच्छेद 311(2) के अनुसार कारण बताने का अवसर नहीं दिया जाता है ।[18] किंतु

6. *राजकुमार* बनाम *भारत संघ*, ए. 1969 एस.सी. 180 ।
7. *जयराम* बनाम *भारत संघ*, ए 1954 एस.सी. 584 ।
8. *सतीश चंद्र* बनाम *भारत संघ*, ए. 1953 एस.सी. 250 ।
9. *हार्टवैल* बनाम *उत्तर प्रदेश सरकार*, ए. 1957 एस.सी. 886 ।
10. *श्यामलाल* बनाम *उत्तर प्रदेश सरकार*, (1955) 1 एस.सी.आर. 26, *शिवचरण* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 280 (*283*) ।
11. *सक्सेना* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1264 (*1266*); *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *श्यामलाल*, (1971) 2 एस.सी.सी. 514 (*520*); *तारा सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1487; *हरियाणा राज्य* बनाम *इंदर*, ए. 1976 एस.सी. 1841 (पैरा 9-10) ।
12. *विशुन नारायण* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 1567 (*1569*) ।
13. *लक्ष्मण* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1646 (पैरा 26, 30) ।
14. *बालकोटय्या* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 223 (*238*) ।
15. *रामनाथ* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 2641 (पैरा 36, 38); *हरियाणा राज्य* बनाम *सेगर*, ए. 1976 एस.सी. 1199 (पैरा 7) ।
16. *शर्मा* बनाम *पृथ्वी सिंह*, ए. 1976 एस.सी. 367 ।
17. *देवकीनंदन* बनाम *बिहार राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 330 (*340*) ।
18. *असम राज्य* बनाम *अक्षय*, ए. 1976 एस.सी. 37 (पैरा 23) ।

यदि ऐसा अवसर दिए जाने के पश्चात् कर्मचारी अपना त्यागपत्र दे देता है या जांच में भाग लेने से इंकार कर देता है तो वह बाद में परिवाद नहीं कर सकता ।[19]

अनिवार्य सेवानिवृत्ति — ऐसे अधिकारी की अनिवार्य सेवानिवृत्ति को जिसने अधिवर्षिता के पूर्व सेवा के पच्चीस वर्ष पूरे कर लिए हैं[20] संविधान का अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा चाहे सेवानिवृत्ति कदाचार, अदक्षता या इसी प्रकार के किसी आधार पर की गई हो ।[21] कारण यह है कि नियम के अनुसार अनिवार्य सेवानिवृत्ति में सरकारी सेवक को सभी फायदे मिलते हैं (जैसे वेतन, भत्ता या आनुपातिक पेंशन) ।[21] इसमें दंडस्वरूप कोई परिणाम नहीं भुगतना होता इसलिए यह ऐसी पदच्युति या पद से हटाया जाना नहीं है जिसको अनुच्छेद 311(2) लागू होता है ।[20] जहां सरकारी सेवक के विरुद्ध आरोप तैयार किए जाते हैं और वास्तव में जांच की जाती है वहां यह माना जाता है कि वह केवल अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश देने वाले प्राधिकारी के समाधान के लिए है ।[20-22]

(क) संक्षेप में यदि कोई अतिरिक्त हानि नहीं है तो अनिवार्य सेवानिवृत्ति को अनुच्छेद 211 लागू नहीं होता चाहे आदेश करने में सरकार ने कदाचार या अदक्षता को ध्यान में रखा हो ।[20]

(ख) यदि आदेश में अभिव्यक्त रूप से कोई कलंक या दोष लगाया गया है । जैसे यह कहा गया है कि अधिकारी अब उपयोगी नहीं रह गया[23-24] या अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश विभागीय कार्यवाहियों में उसे दोषी पाए जाने के पश्चात् किया गया है[25] या ऐसी रिपोर्ट के आधार पर किया गया है, तो मामला दूसरे प्रकार का हो जाता है ।[22] यदि आदेश में सरकारी सेवक पर अभिव्यक्त रूप से कोई कलंक नहीं लगाया गया है तो न्यायालय सचिवालय की फाइल में यह नहीं खोज सकता कि क्या कोई कलंक लगाया गया था ।[24-26]

(ग) सेवा में पच्चीस वर्ष पूरे हो जाने के पश्चात् किसी कर्मचारी को सरकार में रखना लोकहित में है या नहीं इसका विनिश्चय सरकार करेगी और इस बारे में सरकार की राय पर न्यायालय में आक्षेप नहीं किया जा सकता । आक्षेप एक ही आधार पर हो सकता है और वह है दुर्भावना ।[27] यह कहा जा सकता है कि सेवानिवृत्ति दुर्भावना के कारण या प्राधिकारवान व्यक्ति के व्यक्तिगत पक्षपात के कारण[28] ऐसे आधार पर की गई है जिनका लोकहित से कोई संबंध नहीं है ।[29] जैसे गोपनीय पंजी में ऐसी प्रतिकूल टिप्पणी के आधार पर की गई है जो बीस वर्ष पुरानी है या जिस टिप्पणी के बाद अर्जीदार को प्रोन्नति दी गई थी ।[29] यह आवश्यक नहीं है कि आदेश में यह कहा जाए कि सरकारी सेवक को लोकहित

19. *सी.बी. हप्पाली* बनाम *मैसूर राज्य*, (1971) 1 एस.सी.सी. 1 (*3*) ।

20. *मोतीराम* बनाम *महाप्रबंधक*, ए 1964 एस.सी. 600 (*607, 617*); *भारत संघ* बनाम *सिन्हा*, (1970) 2 एस.सी.सी. 458 (*462*) ।

21. *दलीप सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1305 (*1308*) ।

22. *मदन गोपाल* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 531 ।

23. *सक्सेना* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1967 एस.सी 1264 (*1266*) ।

24. *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 449 ।

25. *मुंबई राज्य* बनाम *नूरुल लतीफ*, ए. 1966 एस.सी. 269 ।

26. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *मदन मोहन*, ए. 1967 एस.सी. 1260; *तारा सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1487 (पैरा 26) ।

27. *शिवचरण* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 280 (*282*); *भारत संघ* बनाम *सिन्हा*, ए. 1971 एस.सी. 40 ।

28. *गुरप्रताप* बनाम *पंजाब राज्य*, (1976) यू.जे.एस.सी. 189 (पैरा 5) ।

29. *श्रीवास्तव* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1984 एस.सी. 630 (पैरा 4-5); *बृजमोहन* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 948 (पैरा 7-8); *बलदेव* बनाम *भारत संघ*, ए. 1981 एस.सी. 70 ।

में अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश दे दिया गया है ।[30] प्राधिकारी अपने शपथ पत्र में यह कह सकता है । यदि अभिलेख से दुर्भाव साबित नहीं होता है तो उस पर विश्वास किया जाना चाहिए । जैसे, जहां यह स्वीकार किया गया कि अभिलेख में ऐसा कुछ नहीं है जिससे अनिवार्य सेवानिवृत्ति करना लोकहित में उचित होगा यह निष्कर्ष निकला है ।[31]

(घ) पहले से जो फायदे उद्भूत हो गए हैं उनकी हानि होना शास्ति है किंतु सेवानिवृत्ति के आदेश से जो भविष्य में होने वाले लाभ समाप्त होते हैं वह शास्ति नहीं है ।[32]

अनिवार्य सेवानिवृत्ति से संबंधित नियमों की सांविधानिकता — यदि कोई नियम किसी भी समय अनिवार्य सेवानिवृत्ति का उपबंध करता है और कोई ऐसी न्यूनतम अवधि नहीं बताई गई है जिसके पश्चात् ही अनिवार्य सेवानिवृत्ति की जा सकेगी तो यह नियम अनुच्छेद 311(2) का उल्लंघन करने वाला होगा और शून्य समझा जाएगा क्योंकि स्थायी सरकारी सेवक की दशा में ऐसी अनिवार्य सेवानिवृत्ति का अर्थ है सेवा से हटाया जाना ।[33 34]

जहां नियम में अनिवार्य सेवानिवृत्ति की आयु नियत नहीं की गई है किंतु सरकार को प्रशासनिक कारणों से किसी सरकारी सेवक को किसी भी समय सेवानिवृत्त करने की शक्ति दी गई है वहां यदि पेंशन या अन्य फायदे नष्ट हो जाते हैं तो यह सेवानिवृत्ति, सेवा से हटाया जाना होगा ।[33] किंतु यदि फायदे नष्ट नहीं होते हैं और नियम में ही यह उपबंध है कि ऐसी सेवानिवृत्ति पर पूरी पेंशन दी जाएगी तो वह अवैध होगा, चाहे कार्यवाही करने में सरकार के सामने अधिकारी का कदाचार रहा हो ।[34]

जहां नियम में अनिवार्य सेवानिवृत्ति की आयु नियत की गई है किंतु सरकारी सेवक को उसके सेवा अभिलेख में दी गई आयु के पहले ही सेवानिवृत्त किया जाता है तो अनुच्छेद 311(2) का पालन करना होगा ।[35] किंतु जहां सरकारी सेवक स्वयं ही सेवा अभिलेख में दी गई अपनी आयु के सही होने के बारे में विवाद उठाता है तो वहां यह अनुच्छेद लागू नहीं होगा ।[36]

किंतु यदि अधिवर्षिता की आयु या अनिवार्य सेवानिवृत्ति की आयु से संबंधित नियम को परिवर्तित किया जाता है तो अनुच्छेद 311(2) या अनुच्छेद 14 लागू नहीं होंगे ।[37] अधिवर्षिता की आयु बढ़ाते समय सरकार पुराने नियम के अनुसार अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने के पश्चात् सरकारी सेवक को अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करने के अधिकार का पुनरीक्षण कर सकती है । किंतु इसमें शर्त यही है कि अर्हक सेवा अयुक्तियुक्त रूप से छोटी नहीं होनी चाहिए ।[38] यदि किसी नियम में अनिवार्य सेवानिवृत्ति के लिए अर्हक सेवा की अवधि युक्तियुक्त रूप से लम्बी है तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह अनुच्छेद 14, 19, 31 या 311 का उल्लंघन करती है ।[39]

30. *राजमोहन* बनाम *मुख्य आयुक्त*, (1976) एस.सी. [सिविल अपील 2022/69, तारीख 1-11-1976] ।

31. *वेंकटरमन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1979 एस.सी. 49 ।

32. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *श्याम लाल*, (1971) 2 एस.सी.सी. 514 (*518*) ।

33. *मोतीराम* बनाम *एन.ई.एफ. रेलवे*, ए. 1964 एस.सी. 600 (*617*) ।

34. *गुरदेव सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1585 ।

35. *उड़ीसा राज्य* बनाम *बीनापाणि*, ए. 1967 एस.सी. 1269 ।

36. *असम राज्य* बनाम *डेका*, (1970) 3 एस.सी.सी. 624 (*626*) ।

37. *शंकरनारायण* बनाम *केरल राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 361 (*365*) ।

38. *बटहरी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 222 (*234*) ।

39. *तारा सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1487 (पैरा 27); *भारत संघ* बनाम *सिन्हा*, ए. 1971 एस.सी. 40 ।

ऐसे अस्थायी अधिकारी की सेवोन्मुक्ति जो नियत अवधि के लिए पद नहीं धारण कर रहा है या जिसकी सेवा स्थायीकल्प नहीं है — 1. जब कोई व्यक्ति कोई अस्थायी पद धारण करता है या किसी स्थायी पद पर अस्थायी रूप से नियुक्त किया जाता है और उसके लिए कोई नियत अवधि विनिर्दिष्ट नहीं की जाती है और ऐसे अस्थायी अधिकारी को स्थायीकल्प हैसियत प्राप्त नहीं हुई है वहां उसको सेवोन्मुक्त करने का अर्थ पदच्युति या पद से हटाया जाना नहीं होगा और अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा ।[40-41] यह अनुच्छेद तभी लागू होगा जब सरकार का यह आशय है कि उसे दंड दिया जाए तथा अपनी सेवाओं द्वारा उसने जो फायदे अर्जित किए हैं उन्हें छीन लिया जाए ।[42]

2. जैसे, —

(क) जब किसी अस्थायी पद के उत्सादन पर अस्थायी अधिकारी को सेवोन्मुक्त कर दिया जाता है तो इसमें कोई शास्ति अन्तर्वलित नहीं है ।[43]

(ख) जहां सेवोन्मुक्ति के परिणामस्वरूप कोई शास्ति नहीं है वहां अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा । जैसे, सेवोन्मुक्ति के पूर्व निलम्बन की अवधि के दौरान भरणपोषण भत्ते का न दिया जाना ।[44]

3 अस्थायी सेवक की सेवाओं को समाप्त करने में प्राधिकारी के मस्तिष्क में जो भी बात रही हो उससे सेवोन्मुक्ति की प्रकृति नहीं बदलती और इस बात को तय करने के लिए यह तात्विक नहीं है कि ऐसी सेवोन्मुक्ति को अनुच्छेद 311(2) लागू होगा या नहीं ।[41 45] जहां यह विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए कि क्या सेवोन्मुक्ति की संविदाजात शक्ति का प्रयोग किया जाए या नहीं या कर्मचारी को सेवा में बनाए रखा जाए या नहीं, सरकारी सेवक के आचरण की जाच की जाती है और बिना किसी कलंक के इस अनौपचारिक कार्यवाही को समाप्त करते हुए सेवोन्मुक्ति का आदेश दिया जाता है वहां उस आदेश पर आक्षेप करते हुए अनुच्छेद 311(2) की सहायता नहीं ली जा सकती ।[46]

4. किंतु यदि अस्थायी या स्थानापन्न नियुक्ति को ऐसे आदेश से समाप्त किया जाता है जिसमें दंड दिया जा रहा है तो अनुच्छेद 311(2) अवश्य लागू होगा । जैसे, यदि वेतन का अधिहरण किया जा रहा है या पहले से प्राप्त वेतन वृद्धि को विधारित किया (रोका) जा रहा है[40] या सरकारी सेवक पर उसकी सेवोन्मुक्ति के आदेश में कलंक लगाया जा रहा है ।[47] जैसे, यह कहा जा रहा है कि उसे सरकारी सेवा में रखना अवांछनीय है ।[48]

5. अनुच्छेद 311(2) वहां भी लागू होगा जहां सूचना द्वारा सेवा का पर्यवसान करने के स्थान पर प्राधिकारी उसके अधिकथित कदाचार की जांच करने का निर्णय करता है[49] या कोई अन्य परिस्थितियां हैं जिनसे अर्जीदार यह दिखा सकता है कि उसके विरुद्ध

40. *पुरुषोतम* बनाम *भारत संघ*, ए 1958 एस.सी 36; *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 449 ।

41. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *रामचंद्र*, ए. 1976 एस.सी 2547 (पैरा 23) ।

42. *पंजाब राज्य* बनाम *सुखराज*, ए. 1968 एस.सी. 1089; *नागालैंड राज्य* बनाम *वसंधा*, (1970) II यू.जे.एस.सी. 86 ।

43. *चंपकलाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1854 ।

44. *भारत संघ* बनाम *मोरे*, ए 1962 एस.सी. 630 (*632*) ।

45. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *भूप सिंह*, ए 1979 एस.सी. 684 (पैरा 7) ।

46. *रामगोपाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1969) 2 एस.सी.सी. 240 (*244*) ।

47. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *मदन मोहन*, (1967) 14 एफ.एल.आर. 262 (*265*) एस.सी.; *बिहार राज्य* बनाम *गोपीकिशोर*, ए. 1960 एस.सी. 689 ।

48. *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 449 ।

49. *मदनगोपाल* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 531 ।

कदाचार का अभिकथन ही उस आदेश का वास्तविक आधार है ।[50] यदि ऐसा है तो अनुच्छेद 311(2) का पालन न करने पर आदेश अविधिमान्य होगा ।

6. यह ध्यान देने योग्य है कि अस्थायी सरकारी सेवक की सेवाएं बिना कारण बताए समाप्त की जा सकती हैं और वह अनुच्छेद 311(2) लागू करने की मांग नहीं कर सकता किंतु फिर भी यदि वह दिखा सकता है कि सेवोन्मुक्ति के लिए उसे अलग करके उसके साथ मनमाने ढंग से विभेद किया गया है और उससे कनिष्ठ व्यक्ति को सेवा में रखा गया है और ऐसे विभेद के लिए या अर्जीदार को अलग करने के लिए कोई कारण नहीं है तो अनुच्छेद 14-16 के अधीन अनुतोष मिल जाएगा ।[51]

परिवीक्षाधीन अधिकारी की सेवोन्मुक्ति : क्या अनुच्छेद 311(2) लागू होता है? — इस प्रश्न का निर्णय उच्चतम न्यायालय की सात न्यायाधीशों की एक पीठ ने *शमशेर सिंह* के वाद में किया ।[52] अतएव इसके पहले के जितने भी निर्णय हैं उन्हें इसी निर्णय के प्रकाश में पढ़ना चाहिए । इस निर्णय से निम्नलिखित सिद्धांत प्रकट होते हैं, अर्थात् :—

1 परिवीक्षाधीन अधिकारी को उसके पुष्ट किए जाने के पहले किसी भी समय बिना आरोप लगाए और बिना दंड दिए सेवोन्मुक्त किए जाने पर अनुच्छेद 311(2) नहीं लागू होगा ।[52 54] जब किसी व्यक्ति को परिवीक्षा के अधीन किसी पद पर नियुक्त किया जाता है तो उसे पद पर नियुक्ति का कोई अधिकार नहीं मिलता । इसलिए यदि बिना जांच के उसे सेवोन्मुक्त किया जाता है तो उससे उस पद का अधिकार नहीं छीना जाता । दूसरे अर्थों में कोई दंड नहीं दिया जाता ।[53-55]

2. जहां सेवा के नियमों में यह अधिकथित है कि विनिर्दिष्ट आदेश के आधार पर परिवीक्षाधीन अधिकारी की सेवोन्मुक्ति, पद से हटाए जाने की कोटि में आएगी वहां स्थिति भिन्न होगी ।[55] यदि ऐसे नियमों में यह उपबंध है कि परिवीक्षाधीन अधिकारी को बिना कारण बताए, विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर सेवोन्मुक्त किया जा सकता है तो उस अवधि के समाप्त होने के पश्चात् उसकी सेवाएं अनुच्छेद 311(2) के अनुसार ही समाप्त की जा सकती हैं ।[56]

3. किंतु यदि नियोजन की संविदा में या सुसंगत सेवा नियमों में बिना कारण बताए ऐसे नियोजन के पर्यवसान का उपबंध है तो सामान्यतया यह बात महत्वहीन है कि उस शक्ति का प्रयोग करते समय प्राधिकारी के मस्तिष्क में क्या था ।[52, 57]

4. संविदा द्वारा या सेवा के नियमों द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए परिवीक्षाधीन अधिकारी को सेवोन्मुक्त करने का सादा आदेश देने के स्थान पर यदि सरकार उसके विरुद्ध कार्यवाहियां प्रारम्भ करने का कठिन मार्ग चुनती है और उस पर बेईमान या अक्षम अधिकारी का ठप्पा लगा देती है तो इसमें दंड अन्तर्वलित है और अनुच्छेद 311(2) लागू होगा ।

---

50. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *राम*, (1977) 1 एस.सी.आर. 462 (*475*); *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *साबोजी*, ए. 1980 एस.सी 42 (*51*) ।

51. *गवर्नमेंट ब्रांच प्रेस* बनाम *बेलिअप्पा*, ए. 1972 एस.सी 429 (पैरा 18, 21) ।

52. *शमशेर सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2192 (पैरा 62 और आगे) ।

53 *बिहार राज्य* बनाम *गोपीकिशोर*, ए. 1960 एस.सी 689 (*691*); *उड़ीसा राज्य* बनाम *राम नारायण*, ए. 1961 एस.सी. 177 ।

54 *पंजाब राज्य* बनाम *सुखराज*, ए. 1968 एस.सी 1089 ।

55 *राणेन्द्र* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 1552 (*1554*) ।

56. *पुलिस अधीक्षक* बनाम *द्वारका*, ए. 1979 एस.सी. 336 ।

57. *पुरुषोत्तम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 36; *बनर्जी* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 1552 ।

(क) सेवोन्मुक्ति के आदेश के पहले जांच की गई थी, इस तथ्य से यह निष्कर्ष नही निकाला जा सकता कि यह दंडस्वरूप है । जैसे, जहां उक्त प्रारम्भिक जांच करके यह तय किया जा रहा है कि परिवीक्षाधीन अधिकारी का काम समाधानप्रद है या नहीं अथवा वह अपने पद पर पुष्ट किए जाने के लिए उपयुक्त है या नहीं[58] या जहां उसके विरुद्ध आरोप लगाकर नियमित कार्यवाही की जा रही है ।[59]

(ख) जहां किसी जांच के पश्चात् परिवीक्षाधीन अधिकारी की सेवाओं की समाप्ति का आदेश दिया जाता है वहां यह बात निश्चायक है कि क्या आदेश दंडस्वरूप है[52] या वास्तव में उसका दाण्डिक परिणाम है ।[60] ऐसे मामलों में सेवोन्मुक्ति शब्द का प्रयोग निश्चायक नहीं होता ।[52, 61]

5. जहां अर्जीदार का यह कहना है कि यह सेवोन्मुक्ति दंड की कोटि में है तो न्यायालय को चाहिए कि वह मामले की सब परिस्थितियों की परीक्षा करे जैसे, —

(i) जहां आदेश ऐसे रूप में है कि उस पर आक्षेप नहीं किया जा सकता और कोई जांच नहीं की गई थी वहां यह दिखलाया जा सकता है कि वह आदेश कदाचार की रिपोर्ट पर आधारित था और इसलिए वह दाण्डिक है ।[62]

(ii) इसी कारणवश जहां सेवोन्मुक्ति का आदेश सतर्कता अधिकारी की प्रतिकूल रिपोर्ट पर आधारित है वहां भी आदेश दाण्डिक है यह माना जाएगा ।[52]

(iii) यदि कदाचार के आरोपों की जांच की जाती है और जांच के आधार पर उसे सेवोन्मुक्त किया जाता है और यदि अनुच्छेद 311(2) का पालन नहीं हुआ है तो आदेश को विखंडित किया जाएगा क्योंकि इस आदेश से अर्जीदार पर कलंक लगता है और उसका भविष्य धूमिल हो जाता है ।[63]

(ग) जहां सेवोन्मुक्ति का कोई कारण नहीं दिया गया है वहां पूर्ववृत्त और अन्य परिस्थितियों से यह दिखाया जा सकता है कि यह दुर्भावपूर्ण था और दंड के रूप में दिया गया था ।[60, 64]

(घ) किंतु निम्नलिखित दशाओं में परिवीक्षाधीन अधिकारी की सेवोन्मुक्ति का आदेश दाण्डिक नहीं है —

(i) आदेश मे यह कहा गया है कि उसका कार्य और आचरण समाधानप्रद नहीं थे और इसी आधार पर उसे सेवोन्मुक्त किया जा रहा है ।[64-65]

(ii) यह निश्चित करने के लिए कि उसकी सेवा पुष्ट की जाए या नहीं, जांच की गई थी और उसके परिणामस्वरूप उसे सेवोन्मुक्त किया गया है । यहां भी अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा ।[66] काम करने की योग्यता का अभाव ही सेवोन्मुक्ति का एकमात्र कारण नहीं था तो भी अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा ।[67]

58. *बिशनलाल* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1978 एस.सी. 363 ।

59. *शर्मा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1976 एस.सी. 2037 (पैरा 7); *असम राज्य* बनाम *जे.एन. राय*, ए. 1975 एस.सी. 2277 ।

60. *उड़ीसा राज्य* बनाम *रामनारायण*, ए. 1961 एस.सी. 177 ।

61. *मदनगोपाल* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 531; *फड़नीस* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 998 ।

62. *बिहार राज्य* बनाम *शिव भिक्षुक*, ए. 1971 एस.सी. 1011 ।

63. *सुखवंश* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1711 ।

64. *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 449 (*455*) ।

65. *राणेन्द्र* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी. 1552 (*1554*) ।

66. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *अकबर अली*, ए. 1966 एस.सी. 1842 (*1846*); *पंजाब राज्य* बनाम *सुखराज*, ए. 1968 एस.सी. 1089 । किंतु यदि जांच किसी कदाचार के बारे में थी और पद मुक्ति के आदेश में कलंक लगाया गया है तो अनुच्छेद 311(2) लागू होगा, जैसा *उड़ीसा राज्य* बनाम *रामनारायण*, ए. 1961 एस.सी. 177 (*180*) में अवधारित हुआ ।

67. *पिल्लै* बनाम *भारतीय संस्थान*, (1971) 2 एस.सी.सी. 257 (*264*) ।

(iii) जहां कोई व्यक्ति किसी उच्चतर पद पर परिवीक्षा में था और उसे प्रत्यावर्तित करते हुए यह अतिरिक्त शास्ति लगा दी गई है कि उसे प्रत्यावर्तन की तारीख से सात वर्ष की अवधि तक प्रोन्नति न दी जाए तो भी न्यायालय ने यह कहा कि अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा । क्योंकि इस आदेश का जो बाद वाला भाग है उसे सरकार अपने कर्मचारी के अभ्यावेदन पर रद्द कर सकती है ।[66]

6. जब परिवीक्षाधीन अधिकारी की पुष्टि कर दी जाती है तो वह स्थायी सरकारी सेवक बन जाता है । उसके बाद उसे परिवीक्षा अधिकारी के समान सेवोन्मुक्त नहीं किया जा सकता । किंतु पुष्टि के लिए सक्षम प्राधिकारी का अभिव्यक्त और प्रारूपिक[68] आदेश होना आवश्यक है ।[69-70] यह विवक्षा नहीं की जा सकती थी कि परिवीक्षाधीन अधिकारी की पुष्टि हो गई है, —

(i) यदि नियमों में इस प्रकार का उपबंध नहीं है तो परिवीक्षा की अवधि समाप्त हो जाने पर पुष्टि हो गई है यह नहीं माना जा सकता,[71] या

(ii) परिवीक्षाधीन सेवा के पूरा हो जाने पर यदि कोई व्यक्ति उच्चतर पद पर स्थानापन्न रूप से नियुक्त किया गया है तो उसकी पुष्टि हो गई है यह उपधारणा नहीं की जा सकती ।[70]

जब तक पुष्टि का अभिव्यक्त आदेश न हो जाए तब तक यह माना जाता है कि वह परिवीक्षाधीन है ।[72]

अनुच्छेद 311(2) लागू करने के प्रयोजन के लिए कलंक क्या है ? - 1 कुछ मामलों में यह अभिनिर्धारित हुआ है कि अनुच्छेद 311(2) वहां लागू होगा जहां कर्मचारी के आचरण के विरुद्ध कलंक या दोषारोपण अभिव्यक्त रूप से किया गया है और ये शब्द उसकी सेवोन्मुक्ति या प्रत्यावर्तन या अनिवार्य सेवोन्मुक्ति के आदेश में थे ।[73] यदि कदाचार या उपेक्षा उस आदेश का हेतु है तो भी यदि अभिव्यक्त रूप से ऐसा नहीं कहा गया है तो अनुच्छेद 311(2) लागू नहीं होगा ।[74]

2. अन्य मामलों में यह मत प्रकट किया गया है,[75] जो उचित भी प्रतीत होता है, कि आदेश में कलंक लगाने वाले कोई शब्द नहीं हैं यह बात निश्चायक नहीं हो सकती थी । यह साक्ष्य के आधार पर पता लगाया जा सकता है कि आदेश दंडस्वरूप दिया गया था या सेवा की एक सामान्य घटना के रूप में था ।[76] आक्षेपित आदेश के पहले की परिस्थितियां और उसके साथ की बातों की परीक्षा की जानी चाहिए और यह देखा जाना चाहिए कि क्या आदेश का आधार कदाचार था ।[75] यदि आदेश कदाचार पर आधारित था और उसे छिपाने के लिए आदेश का प्ररूप दूसरे प्रकार का रखा गया है तो ऐसे आदेश को अपास्त किया जाएगा ।[75, 77]

अ निम्नलिखित मामले में परिस्थितियों से यह निष्कर्ष निकाला गया है कि कलंक लगाया गया था और इसलिए अनुच्छेद 311(2) लागू किया गया, —

68. *केदार नाथ* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1979 एस.सी. 220 (पैरा 21) ।
69. *केदार* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1972 एस.सी. 873 ।
70. *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *साबोजी*, ए 1980 एस.सी. 42 (पैरा 7) ।
71. *पुलिस अधीक्षक* बनाम *द्वारका*, ए. 1979 एस.सी. 336 (पैरा 5) ।
72. *पंजाब राज्य* बनाम *धरम*, (1968) 3 एस.सी.आर 1 (4) ।
73. *भारत संघ* बनाम *ढाबा*, (1969) 3 एस.सी.सी. 603 ।
74. *चंपकलाल* बनाम *भारत संघ*, (1964) 5 एस.सी.आर. 190 ।
75. *बिहार राज्य* बनाम *एस.बी. मिश्रा*, (1970) 2 एस.सी.सी. 871 (*875*), *पंजाब राज्य* बनाम *सुखराज*, ए. 1968 एस.सी. 1089 (*1094*) ।
76. *देवेश चन्द्र* बनाम *भारत संघ*, (1969) 2 एस.सी.सी. 158 (*165*) ।
77. *अनूप* बनाम *भारत सरकार*, ए. 1984 एस.सी. 636 (पैरा 11-13), *शमशेर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2192 (सात न्यायाधीश) ।

(i) जहां अखिल भारतीय सेवा के एक सदस्य को संघ से राज्य में एक निम्नतर पद पर भेजने का आदेश देने के पहले कुछ पत्राचार हुआ था जिसमें यह कहा गया है कि अर्जीदार उस स्तर तक नहीं आता और उसे यह विकल्प दिया गया था कि वह संघ के अधीन कोई निम्नतर पद स्वीकार कर ले,[76]

(ii) जहां अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश देते हुए यह टिप्पणी की जाती है उस अधिकारी की उपयुक्तता समाप्त हो गई है,[78]

(iii) जहां किसी अस्थायी कर्मचारी की सेवोन्मुक्ति का आदेश जांच के पश्चात् उस कर्मचारी के कदाचार के दोषी पाए जाने के आधार पर किया गया है [जांच में अनुच्छेद 311(2) का पालन नहीं किया गया है]।[77]

आ. किंतु निम्नलिखित मामलों में कोई कलंक नहीं, —

(i) उन्मुक्ति के आदेश के पश्चात् और कर्मचारी के अभ्यावेदनों के उत्तर में यह बताया गया कि उसे फिर से नियोजन में इसलिए नहीं लिया जा सकता कि वह सिद्धदोष व्यक्ति है,[79]

(ii) जहां सेवोन्मुक्ति या प्रत्यावर्तन के आदेश के पहले अनौपचारिक जांच की गई थी जो इस बात को देखने के लिए थी कि सरकारी कर्मचारी सेवा या पद में बने रहने योग्य है या नहीं और तब तक उस पद पर उसका कोई विधिक अधिकार नहीं था,[80]

(iii) जहां नियमानुसार किए गए अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश के पहले उसकी गोपनीय रिपोर्ट में प्रतिकूल प्रविष्टि की गई थी,[81]

(iv) जहां अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश में कलंकित करने वाले कोई शब्द नहीं है और आदेश ऐसे नियम के अधीन किया गया है जिसमें यह कहा गया है कि ईमानदारी का न होना एक ऐसा तथ्य है जिसको उस नियम के अधीन आदेश देते समय ध्यान में रखा जाएगा,[82]

(v) जहां अनिवार्य सेवानिवृत्ति का प्रस्ताव करने वाले पत्र में कलंक था किंतु आदेश में कोई कलक नहीं है,[83]

(vi) जहां स्थानापन्न नियुक्ति से प्रत्यावर्तन करने के आदेश में यह कहा गया है कि अर्जीदार उच्चतर पदों के लिए अनुपयुक्त है,[84]

(vii) जहां कदाचार के बारे में अनौपचारिक जांच करने के पश्चात् अनुच्छेद 311(2) के अधीन नियमित कार्यवाही करने का आशय था किंतु वास्तव में वह नहीं की गई और कोई दंड नहीं दिया गया किंतु अस्थायी सरकारी सेवक को सेवा के नियमों के अनुसार सूचना देकर सेवोन्मुक्त कर दिया गया ।[85]

स्थानापन्न नियुक्ति से सरकारी सेवक के प्रत्यावर्तन के पहले ऐसी ही परिस्थितियां होने पर यही दृष्टिकोण अपनाया गया ।[80]

किंतु यदि सरकार यह मान लेती है कि चरित्र पंजी में प्रतिकूल प्रविष्टि होने के कारण या अन्य खराब रिपोर्टों के होने के कारण सूचना देकर सेवोन्मुक्त किया गया है तो मामला भिन्न होगा ।[86-87]

3. कुछ मामलों में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि किसी आक्षेपित आदेश में सरकारी सेवक को कलंक लगाने वाले कोई अभिव्यक्त शब्द नहीं हैं तो न्यायालय विभागीय फाइलों में खोज करके यह पता नहीं लगाएगा कि क्या कोई कलंक दिखाई पड़ता है ।[88]

78. *सक्सेना* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 449 ।

79. *संघ राज्यक्षेत्र* बनाम *गोपाल*, ए. 1963 एस.सी. 601 ।

80. *पंजाब राज्य* बनाम *सुखराज*, ए. 1968 एस.सी. 1089 (*1095*); *रामगोपाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, (1969) 2 एस.सी.सी. 240 (*244*) ।

81. तुलना कीजिए, *बुटेल* बनाम *भारत संघ*, (1970) 2 एस.सी.सी. 876 ।

82. *भाटहरि* बनाम *उड़ीसा राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी. 232 (*236*) ।

83. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *श्याम लाल*, (1971) 2 एस.सी.सी. 514 ।

84. *भारत संघ* बनाम *ढाबा*, (1969) 3 एस.सी.सी. 603 (*606*); *हरि सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1974 एस.सी. 2263 ।

85. *चंपकलाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1854 ।

86. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *सीघर*, ए. 1974 एस.सी. 423; इसे *क्षेत्रीय प्रबंधक* बनाम *पवन*, ए. 1976 एस.सी. 1766 में स्पष्ट किया गया; *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *रामचन्द्र*, ए. 1976 एस.सी. 2547 (पैरा 21) ।

87. *पंजाब राज्य* बनाम *चीमा*, ए. 1975 एस.सी. 1096 ।

88. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *रामचन्द्र*, ए. 1976 एस.सी. 2547 (पैरा 24) ।

वर्तमान मत है कि सामान्यतया फाइल की टिप्पणियां सुसंगत नहीं हैं किंतु उनकी बिलकुल उपेक्षा भी नहीं की जा सकती ।[89] किंतु जहां यह अभिकथन है कि परिवीक्षार्थी की सेवोन्मुक्ति का आदेश वास्तव में कदाचार के लिए पदच्युति का आदेश है जिसे छिपाया जा रहा है, वहां न्यायालय को उस वरिष्ठ अधिकारी की सिफारिश पढ़नी चाहिए जिसके आधार पर सेवोन्मुक्ति का आदेश दिया गया है जिससे न्यायालय यह अवधारित कर सके कि वह आदेश वास्तव में किस प्रकार का है, और यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि उस सिफारिश में अभिकथित कदाचार ही आदेश का हेतुक है तो न्यायालय उसे अनुच्छेद 311(2) के विरुद्ध होने के कारण विखंडित कर देगा ।[89]

निलम्बन :

(अ) *विभागीय जांच के दौरान* — विभागीय जांच के दौरान निलम्बन अस्थायी होता है और इसमें दंड अन्तर्वलित नहीं होता । इसका अर्थ है कि अधिकारी को अस्थायी रूप से अपना कार्य करने के या अपने कर्तव्य के निर्वहन के अधिकार से वंचित किया गया है किंतु इसका यह अर्थ नहीं है कि उसे पंक्ति में अवनत किया गया है या उसकी हैसियत घटा दी गई है । अतएव इस प्रकार के निलम्बन के पहले अनुच्छेद 311(2) के अधीन कारण बताने का अवसर देना आवश्यक नहीं है ।[90]

जांच के लम्बित रहते समय किया गया निलम्बन एक प्रशासनिक आदेश है, न्यायिककल्प आदेश नहीं । ऐसा आदेश करने के पहले कदाचार के आरोप की जांच करना या सरकारी सेवक का स्पष्टीकरण प्राप्त करना आवश्यक नहीं है । यदि परिवाद पाने पर सपृक्त प्राधिकारी यह समझता है कि अभिकथित आरोप आधारहीन नहीं प्रतीत होता है और जांच करने की आवश्यकता है तथा जांच के दौरान सरकारी सेवक को निलम्बित करना आवश्यक है, तो वह आदेश कर सकता है ।[90] यह आदेश उस समय किया जा सकता है जब अनुशासनिक कार्यवाहियां लम्बित हैं । उस समय भी किया जा सकता है जब अभिकथन की प्रारम्भिक जांच करने के पश्चात् अनुशासनिक कार्यवाही करने का आशय है ।[91-92]

(आ) *अधिष्ठायी शास्ति के रूप में* — सिविल सेवा विनियम के अधीन अधिष्ठायी शास्ति के रूप में निलंबन किया जा सकता है । यह अनुच्छेद 311 के अर्थान्तर्गत हटाए जाने की कोटि में आएगा और उस अनुच्छेद की शर्तों का पालन करना होगा ।[93-94]

क्या जांच के दौरान निलम्बित करने की विवक्षित शक्ति है — उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि सरकारी सेवा में भी मोटे तौर से स्वामी और सेवक के बारे में साधारण विधि लागू होती है । परिणामस्वरूप, —

(क) नियोजन की संविदा का निलम्बन तभी किया जा सकता है जब नियोजन की संविदा में या सेवा को शासित करने वाले कानूनी नियमों में ऐसे निलम्बन के लिए अभिव्यक्त रूप से उपबंध हो ।[95-96] जहां संविदा या नियमों द्वारा ऐसी शक्ति दी गई है वहां सरकारी

89. *अनूप बनाम भारत सरकार*, ए 1984 एस.सी. 636 (पैरा 12-13) ।

90. *घोष बनाम आंध्र प्रदेश राज्य*, ए 1958 एस.सी. 246 (*249*); *प्रताप सिंह बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 72 (*98*) ।

91. *गोविन्द मेनन बनाम भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी 1274 ।

92. *भारत सरकार बनाम तारक नाथ*, (1971) 1 एस.सी.सी. 734 (*741*) ।

93. *कपूर बनाम भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 787 ।

94. *बलवंतराय पटेल बनाम महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 800 (*803*) ।

95. *गिंदरोनिया बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, (1970) I एस.सी.डब्ल्यू.आर. 294 (*299-300*) : ए. 1970 एस.सी. 1495 ।

96. *पंजाब राज्य बनाम खेमी राम*, (1969) II एस.सी.डब्ल्यू.आर. 718 ।

सेवक निलम्बन की अवधि के दौरान सेवा करने के लिए आबद्ध नहीं होगा । सरकार पर भी उसको पारिश्रमिक देने की बाध्यता नहीं होगी ।[91-92]

(ख) नियोजन कर्ता संविदा को निलम्बित करने की यह शक्ति नियोजन की विवक्षित शर्त नहीं हो सकती ।[93] यदि नियोजन की संविदा या सेवा के नियमों में अभिव्यक्त रूप से ऐसी शक्ति नहीं दी गई है तो सरकार केवल यह कह सकती है कि वह कर्मचारी उसके विरुद्ध जांच लम्बित रहने के दौरान काम नहीं करेगा किंतु ऐसी दशा में नियोजन की संविदा निलम्बित नहीं होगी ।[95] परिणामस्वरूप, —

(i) कर्मचारी कोई और नियोजन नहीं ले सकता,

(ii) नियोजक वेतन का संदाय करेगा,

(iii) संविदा विद्यमान है इसलिए दोनों पक्षकार सूचना देकर संविदा समाप्त कर सकते है यदि नियमों में दोनों पक्षकारों को इस प्रकार की शक्ति दी गई है जैसे अस्थायी सेवा की दशा में होता है ।[95]

(ग) किंतु जहां जांच के लम्बित रहने के समय नियोजन की संविदा को निलम्बित करने की कोई संविदाजात कानूनी शक्ति नहीं है वहां यदि कर्मचारी को काम करने से मना किया जाता है तो उस अवधि में कर्मचारी को कितना वेतन दिया जाएगा यह नियमों पर निर्भर करेगा, —

(i) यदि सरकारी सेवक को निलम्बन के दौरान कोई पारिश्रमिक या भत्ते का संदाय करने का उपबन्ध है तो उसके अनुसार संदाय किया जाएगा,[94-96]

(ii) यदि निलम्बन के दौरान पूरा वेतन विधारित करने के लिए कोई नियम नहीं है तो सरकारी सेवक को उसके निलम्बन की अवधि के दौरान पूरा वेतन दिया जाएगा ।[95]

(घ) जहां नियुक्त करने की शक्ति किसी अधिनियम या संविधान द्वारा प्रदत्त की गई है वहां साधारण खंड अधिनियम की धारा 16 के आधार पर "नियुक्ति" शब्द के अन्तर्गत निलम्बन की शक्ति भी है ।[97]

पंक्ति में अवनति — पंक्ति में अवनति से अभिप्रेत है अधिकारी की पंक्ति या हैसियत को शास्ति के रूप में घटाना ।[98-99] इसमें दो तत्व होते हैं, — (क) भौतिक रूप में घटाना जो सरकारी सेवक के रूप में उसके वर्गीकरण से संबंधित है,[99] (ख) ऐसा घटाया जाना या अपनयन शास्ति के रूप में है ।

अ. जब सरकारी सेवक को किसी निम्नतर पद या पंक्ति में भेज दिया जाता है[98] या निम्नतर वेतनमान दे दिया जाता है तो भौतिक रूप से पंक्ति में अवनति हो जाती है । यह ज्येष्ठता की हानि, प्रोन्नति के अवसर के कम हो जाने या उसी पंक्ति या काडर में किसी विशिष्ट पद की हानि से भिन्न है ।[100, 1]

(क) अनुच्छेद 311(2) में पंक्ति से उस व्यक्ति का वर्गीकरण अभिप्रेत है । सेवा के सोपान क्रम में उसके काडर में उसका स्थान अभिप्रेत नहीं है । अतएव यदि ज्येष्ठता में वह कुछ स्थान नीचे आ जाता है तो यह पंक्ति में अवनति नहीं है ।[2] कारण यह है कि एक ही काडर के अधिकारी एक ही पंक्ति धारण करते हैं ।[98-100]

किंतु यदि स्थानापन्न या अस्थायी नियुक्ति से प्रत्यावर्तन के परिणामस्वरूप कर्मचारी अपनी अधिष्ठायी पंक्ति में अपनी ज्येष्ठता खो देता है तो यह पंक्ति में अवनति होगी परन्तु

---

97. *प्रद्योत बनाम मुख्य न्यायमूर्ति*, (1955) 2 एस.सी.आर. 1331 (*1345*) ।

98. *उच्च न्यायालय बनाम अमल कुमार*, ए. 1962 एस.सी. 1704 ।

99. *चंपकलाल बनाम भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1854 ।

100. *पंजाब राज्य बनाम किशन दास*, (1971) 1 एस.सी.सी. 319 (*323-24*) ।

1. *शीतल बनाम पूर्वोत्तर रेलवे*, ए. 1966 एस.सी. 1197 (*1200*); *दक्षिण रेलवे बनाम राघवेन्द्राचार*, ए. 1966 एस.सी. 1529 ।

2. *बरदकांत बनाम उड़ीसा उच्च न्यायालय*, ए. 1976 एस.सी. 1899 (पैरा 22) ।

यह तब जब कि वह दंड के रूप में हो । प्रशासनिक कारणों से नहीं ।[3-4] अनुच्छेद 311(2) लागू होगा या नहीं इसका वास्तविक परीक्षण यह है कि क्या आक्षेपित आदेश शास्ति के रूप में किया गया था ।

(ख) जहां वेतन, पेंशन या उपदान आदि के अधिकार में कोई कमी नहीं हुई है वहां केवल इस तथ्य से कि अर्जीदार को ऐसे पद से जिसमें वह विभाग का अध्यक्ष था किसी दूसरे पद पर अन्तरित कर दिया गया है जो विभागीय अध्यक्ष का पद नहीं है, यह नहीं माना जाएगा कि पंक्ति में अवनति हुई है ।[5]

(ग) यदि कर्मचारी को उस वेतन वृद्धि से वंचित किया गया है जो उसने भूतकाल में की गई सेवाओं के आधार पर पाई थीं तो इतने मात्र से यह नहीं कहा जा सकता कि पंक्ति में अवनति हुई है ।[6]

(घ) पेंशन या उपदान में कटौती पंक्ति मे अवनति नहीं है फिर भी यह अभिनिर्धारित किया गया है कि नैसर्गिक न्याय के साधारण सिद्धातों के अनुसार पेंशन घटाने के पहले पेंशनभोगी को कारण बताने का अवसर दिया जाना चाहिए ।[7] पेंशन का आदेश दाण्डिक है या नहीं यह एक सारवान प्रश्न है और इसका उत्तर सुसंगत परिस्थितियों में ढूंढा जाना चाहिए कि जो किया गया वह प्रशासनिक कारणो से[8] सेवा को घटाने के या दंड के रूप में किया गया है ।[9-10]

आ. उच्चतम न्यायालय ने "अवनति" के दाण्डिक स्वरूप के बारे में जो परीक्षण लागू किया है[11] उसे "पंक्ति का अधिकार" कहते हैं । यह उसी प्रकार लागू किया जाता है जैसे पदच्युति या हटाए जाने के मामलों में "पद का अधिकार" लागू किया जाता है ।[12]

(i) जहां सरकारी सेवक किसी विशिष्ट पंक्ति का अधिकारी है वहां उस पंक्ति से अवनत किया जाना ही यह अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त होगा[12-13] कि वह शास्ति के रूप में है और अनुच्छेद 311(2) लागू होगा,

(ii) जहां सरकारी सेवक को नियोजन की संविदा या सेवा की शर्तों के अधीन किसी विशिष्ट पंक्ति का अधिकार नहीं है वहां सामान्यतया अनुच्छेद 311(2) के अर्थान्तर्गत पंक्ति में अवनति नहीं होगी । जैसे, जहां किसी व्यक्ति का नाम अन्तिम रूप से किसी प्रोन्नति या चयन की सूची में रखा गया है और वहां से काट दिया गया है[99] या जहां अस्थायी रूप से जैसे किसी उच्चतर पद के अधिकारी की अनुपस्थिति में उसे वहां रखा गया था ।[14]

स्थानापन्न नियुक्ति से प्रत्यावर्तन — जहां किसी व्यक्ति को किसी उच्चतर पद पर स्थानापन्न हैसियत में नियुक्त किया जाता है वहां उसे किसी भी अवधि के लिए उस पद

3. *माधव* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 8 (*11*) ।
4. तुलना कीजिए, *पंजाब राज्य* बनाम *जगदीप*, ? 1964 एस.सी. 521 ।
5. *गोपाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 1864 ।
6. *पंजाब राज्य* बनाम *किशन दास*, (1971) 1 एस.सी.सी. 319 ।
7. *पंजाब राज्य* बनाम *इकबाल सिंह*, (1976) यू.जे.एस.सी. 260 (पैरा 6) ।
8. *गुरुदेव सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, (1971) 1 एस.सी.सी. XX ।
9. *फड़नीस* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, (1971) 1 एस.सी.सी. 790 (*794*) ।
10. *क्षेत्रीय प्रबंधक* बनाम *पवन*, (1976) यू.जे.एस.सी. 410 (पैरा 17); *बिहार राज्य* बनाम *शिव भिक्षुक*, (1971) 2 एस.सी.आर. 191 ।
11. *हार्टवैल* बनाम *उत्तर प्रदेश सरकार*, ए. 1957 एस.सी. 250 ।
12. *पुरुषोत्तम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 36 ।
13. *शीतल* बनाम *पूर्वोत्तर रेलवे*, ए 1966 एस.सी. 1197 ।
14. *नरेश* बनाम *संघ राज्यक्षेत्र*, (1969) I यू.जे.एस.सी. 728 ।

को धारण करने का कोई विधिक अधिकार प्राप्त नहीं होता ।[15] तदनुसार यदि उसे अपने अधिष्ठायी पद पर प्रत्यावर्तित किया जाता है तो अनुच्छेद 311(2) के अर्थान्तर्गत पंक्ति में अवनति नहीं होती ।[16] यदि ऐसे प्रत्यावर्तन के पीछे कारण, कदाचार, अदक्षता, अनुपयुक्तता आदि रहे हों[17] और उस पद के लिए उसकी योग्यता का अवधारण करने के लिए जांच करके प्रत्यावर्तन का आदेश दिया गया हो[18] या यह अवधारित करने के लिए कि उसके विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही की जाए या नहीं[19] या उसके विरुद्ध पदच्युति के आदेश के अपास्त किए जाने के पश्चात् उसके बहाल किए जाने पर आदेश किया जाता है तो यह पंक्ति में अवनति नहीं होगी ।[20]

स्थानापन्न पद से प्रत्यावर्तन के आदेश को अनुच्छेद 311(2) तभी लागू होगा जब आदेश द्वारा सेवक को दण्डित किया जा रहा है और यह दंड प्रत्यावर्तन से भिन्न है,[20] जैसे, —

(क) भविष्य में उसके प्रोन्नयन के अवसर को रोकना या स्थगित करना चाहे वह सीमित अवधि के लिए ही क्यों न हो,[21]

(ख) अधिष्ठायी रैंक में उसकी ज्येष्ठता को प्रभावित करना,[21-22]

(ग) उसके वेतन और भत्ते अधिहृत करना या उसकी वेतन वृद्धि रोकना,[20]

(घ) उसके शील या ईमानदारी पर आक्षेप करना ।[9]

I. स्थानापन्न पद के उच्चतर वेतन से वंचित किया जाना इस प्रयोजन के लिए दंड नहीं है क्योंकि स्थानापन्न पद से प्रत्यावर्तन के आदेश का वह सामान्य परिणाम है और वह पद धारण करना उचित अधिकार नहीं था ।[12, 23] जहां किसी कर्मचारी का नाम अनन्तिम रूप से किसी ज्येष्ठता सूची में रखा जाता है,[20, 24] और प्रश्नगत नियमों में उसे अपनी ज्येष्ठता रखने का कोई अधिकार नहीं है तो उस सूची में से किसी व्यक्ति को प्रत्यावर्तित करने से केवल इस आधार पर पंक्ति में अवनति नहीं हो जाती कि उस सूची में नीचे के स्थान के लोग प्रत्यावर्तित नहीं किए गए हैं ।[25] जहां पर अनुपयुक्तता के आधार पर प्रत्यावर्तन का आदेश दिया जाता है और उसके साथ कोई दाण्डिक कारण नहीं होते हैं वहां प्रत्यावर्तन पंक्ति में अवनति की कोटि में नहीं आता यद्यपि आदेश करने के पहले कर्मचारी की उस पद के लिए जिसमें वह स्थानापन्न था उपयुक्तता का अवधारण करने के प्रयोजन के लिए जांच की गई थी ।[25-26] यदि उससे कनिष्ठ व्यक्ति को भी उच्चतर पद में बनाए रखा जाता है तो भी यह पंक्ति में अवनति नहीं है ।[25] यदि प्रत्यावर्तन प्रशासनिक कारणों से किया

15. किसी स्थानापन्न नियुक्ति से स्थायित्व का कोई अधिकार नहीं मिल जाता [*मैसूर राज्य* बनाम *नारायणप्पा*, (1966) एस.सी. (सिविल अपील 1420/66)] ।

16. *पुरुषोतम* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 36 · (1958) एस.सी आर. 36; *रामास्वामी* बनाम *पुलिस महानिरीक्षक*, ए. 1966 एस.सी. 175 (*180-81*); *असम राज्य* बनाम *बिरजा*, (1969) I यू.जे.एस.सी. 675 ।

17. *मुंबई राज्य* बनाम *अब्राहम*, ए 1962 एस.सी. 794 (*796-97*) ।

18. तुलना कीजिए, *उड़ीसा राज्य* बनाम *राम नारायण*, ए. 1961 एस सी. 177; *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 449 (*455*) ।

19. *लेखी* बनाम *बिहार राज्य*, (1963) एस.सी. [सिविल अपील 590/62, तारीख 23-10-1963] ।

20. *भारत संघ* बनाम *जीवन राम*, ए. 1958 एस.सी. 905 ।

21. *माधव* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 8 : (1962) 1 एस.सी.आर. 886 (*891*) ।

22. *वाधवा* बनाम *भारत संघ*, ए 1964 एस.सी. 423 ।

23. *मुंबई राज्य* बनाम *अब्राहम*, ए. 1962 एस.सी. 794 ।

24. *गुरुदेव सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, (1971) 1 एस.सी.सी. XX ।

25 *प्रभागीय कार्मिक अधिकारी* बनाम *राघवेन्द्राचार*, (1966) 3 एस.सी.आर. 106 ।

26. *मुंबई राज्य* बनाम *अब्राहम*, (1962) सप. 2 एस.सी.आर 92 । [किंतु देखिए *देवेश चन्द्र* बनाम *भारत संघ*, जो 'सेवाधृति' वाले पद से परिवर्तन का मामला था, आगे ।]

जाता है तो सामान्यता "बाद में आओ पहले जाओ" का नियम लागू होगा ।[27] किंतु यदि प्रश्नगत कर्मचारी के विचारण के पश्चात् उसे अनुपयुक्त होने के आधार पर प्रत्यावर्तन का आदेश दिया जाता है तो यह नियम लागू नहीं होगा ।

II. किंतु, –

1. यदि प्रत्यावर्तन किसी विभागीय निकाय की सिफारिश के अनुसरण में किया जाता है जिसने कर्मचारी के विरुद्ध अभिकथन का अन्वेषण किया था तो यह पंक्ति में अवनति की कोटि में आएगा ।[28]

2. यह दाण्डिकस्वरूप का होगा और अनुच्छेद 311(2) लागू होगा, जैसे –

जहां चरित्र पंजी में प्रतिकूल प्रविष्टि के संसूचित किए जाने के पश्चात् स्थानापन्न पद से यह टिप्पणी देते हुए प्रत्यावर्तन किया गया था कि वह उस पद के लिए अयोग्य है और उससे कनिष्ठ व्यक्तियों को पद पर बने रहने दिया गया है तथा अर्जीदार का उसके कनिष्ठ व्यक्तियों के साथ गुणागुण का तुलनात्मक निर्धारण नहीं किया गया था और प्रत्यर्थियों ने प्रत्यावर्तन के कोई अन्य प्रशासनिक कारण नहीं दिए थे ।[29]

3. ऐसे भी मामले हो सकते हैं जहां किसी व्यक्ति को सेवा में ज्येष्ठता के आधार पर उच्चतर पद धारण करने का अधिकार हो, जैसे कनिष्ठ वेतनमान पाने वाले पुलिस अधिकारी को उस वेतनमान में अपनी ज्येष्ठता के आधार पर वरिष्ठ वेतनमान में प्रोन्नति पाने का अधिकार है ।[22] इसमें शर्त यही होती है कि अखिल भारतीय सेना अधिनियम, 1961 और भारतीय पुलिस सेवा (ज्येष्ठता का विनियमन) नियम 1954 के उपबंधों के अधीन वरिष्ठ वेतनमान में पद उपलब्ध हो । ऐसे मामलों में यदि किसी ज्येष्ठ वेतनमान पाने वाले अधिकारी को उसकी ज्येष्ठता के कारण वरिष्ठ वेतनमान के पद पर नियुक्त किया जाता है, चाहे वह स्थानापन्न हैसियत में क्यों न हो, तो उसका स्थानापन्न नियुक्ति से प्रत्यावर्तन किए जाने पर अनुच्छेद 311(2) का पालन करना होगा, –

(i) यदि प्रत्यावर्तन प्रशासनिक कारण से नहीं किया जाता है जैसे, स्थायी पदधारी का छुट्टी या प्रतिनियुक्ति से वापस आना[27] या लोकसेवक द्वारा चयन किए गए व्यक्ति द्वारा उच्चतर पद का भरा जाना,[30] किंतु कदाचार के आधार पर या अदक्षता या पद के लिए अयोग्य होने के आरोप के आधार पर किया जाता है,[31] या

(ii) यदि उसका निम्नतर पद पर प्रत्यावर्तन नहीं किया जाता है किंतु कनिष्ठ सूची में उसकी ज्येष्ठता कम हो जाती है या ज्येष्ठ वेतनमान में उसका प्रोन्नयन विधारित कर दिया जाता है या भविष्य में ज्येष्ठता के आधार पर ज्येष्ठ वेतनमान में उसके प्रोन्नयन के अवसर इस बात से कम हो जाते हैं कि उच्चतर पद पर नियुक्त उससे कनिष्ठ व्यक्तियों को प्रोन्नति दे दी गई है ।[31]

अन्य विभागों में प्रतिनियुक्ति से प्रत्यावर्तन – किसी अन्य विभाग या कार्यालय को प्रतिनियुक्ति पर भेजे गए अधिकारी की सेवा के बारे में यह समझा जाता है कि वह उसके मूल विभाग में की गई सेवा के समतुल्य है ।[32]

अपने मूल विभाग में प्रत्यावर्तन होने पर वह प्रतिनियुक्ति पर की गई सेवा के लिए मान्यता पाने का हकदार होता है । मूल विभाग में प्रोन्नति के लिए उन पदों के लिए जिनमें ज्येष्ठता-सह-योग्यता के आधार पर प्रोन्नति की जानी है उसकी सेवा गिनती में ली जाएगी । इस नियम के अनुसार यदि नए विभाग में उसे कोई प्रतिकूल टिप्पणी या दंड दिया गया है तो मूल विभाग में उसे हिसाब में लिया जाएगा ।[32] मूल विभाग में प्रत्यावर्तन पर वह

27. *रामास्वामी* बनाम *पुलिस महानिरीक्षक*, ए. 1966 एस.सी. 175 ।

28. *अप्पार* बनाम *पंजाब राज्य*, (1970) 3 एस.सी.सी 338 ।

29. *क्षेत्रीय प्रबंधक* बनाम *पवन*, (1976) यू.जे.एस.सी. 410 (पैरा 17) ।

30. *नरेश* बनाम *संघ राज्यक्षेत्र*, (1969) I यू.जे.एस.सी. 728 (*730*) ।

31. *माधव* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 8 ।

32. *मैसूर राज्य* बनाम *बेल्लारी*, ए. 1965 एस.सी. 868 (*871*) [बाम्बे सिविल सर्विस रूल्स के नियम 50(ख) का निर्वचन करते हुए] ।

कालिक वेतनमान में वेतनवृद्धि का और उन सभी प्रोन्नतियों का दावा कर सकता है जो उसे मिलती यदि वह प्रतिनियुक्ति पर नहीं गया होता ।[32] यदि प्रतिनियुक्ति से प्रत्यावर्तन पर अधिकारी को मूल विभाग में उस पद से निम्नतर पद पर नियुक्त किया जाता है जो वह प्रतिनियुक्ति के समय धारण कर रहा था तो प्रथमदृष्ट्या यह पंक्ति में अवनति होगी ।[33] जहां, जिस पद पर उस अधिकारी की प्रतिनियुक्ति की गई थी वह उच्चतर वेतनमान में था वहां, मूल विभाग में निम्नतर पद पर उसका प्रत्यावर्तन पंक्ति में अवनति नहीं होगा यदि ऐसा प्रत्यावर्तन प्रशासनिक कारणों से किया गया है और उसके चरित्र या ईमानदारी पर कोई आक्षेप नहीं किया गया है । यदि आदेश दंडस्वरूप किया गया है तो यह पंक्ति में अवनति होगी और अनुच्छेद 311 लागू होगा[34] जैसे उसके चरित्र के विरुद्ध कुछ कथन किया गया या उसे प्रतिनियुक्ति वाले पद पर बने रहने के लिए अनुपयुक्त पाया गया ।[35] इस कारण नहीं कि वह पद समाप्त कर दिया गया था या मूल विभाग उसे प्रतिनियुक्ति से वापस बुलाना चाहता था ।[35]

अनुच्छेद 312 के कारण अखिल भारतीय सेवा के अधिकारी संघ और राज्य दोनों के लिए होते हैं । जब उन्हें संघ से राज्य को या राज्य से संघ को अन्तरित किया जाता है तो यह नहीं माना जाता कि वे प्रतिनियुक्ति पर हैं । ऐसा तभी माना जाएगा जब अन्तरण के आदेश में अभिव्यक्त रूप से यह कहा गया हो । किंतु वे पद जिन्हें सामान्यतया "पदावधि वाले पद" कहा जाता है, "प्रतिनियुक्ति वाले पद" हों, यह आवश्यक नहीं ।[34] अखिल भारतीय सेवा के किसी सदस्य का राज्य के पद से संघ के पद पर नियुक्त किया जाना उच्चतर पद पर प्रोन्नति है ।[34]

1976 में यथासंशोधित अनुच्छेद 311(2) के अधीन प्रक्रियात्मक रक्षोपाय — जैसा पहले बताया गया है 1976 में संशोधन करके अनुच्छेद 311 में कुछ परिवर्तन किए गए हैं जो अपराधी के हित के प्रतिकूल हैं :

अ. 1976 के पहले अपराधी को सुनवाई का या अभ्यावेदन करने का अवसर दो चरणों में दिया जाता था, — (i) आरोप की जांच के समय, और (ii) आरोप की समाप्ति पर किंतु जांच के निष्कर्ष के आधार पर दंड देने के पहले ।

आ. 1976 के संशोधन के बाद दंड देने के पहले अब दूसरा अवसर देना आवश्यक नहीं है किंतु यह रक्षोपाय अभी है कि दंड जांच के निष्कर्ष के आधार पर ही दिया जा सकता है किसी अन्य बात के आधार पर नहीं ।

1976 के उपबंध के अधीन रक्षोपायों का विश्लेषण नीचे किया जा रहा है :

I. आरोप की जांच

यह जांच नैसर्गिक न्याय की अपेक्षा के अनुरूप होना चाहिए ।[36] "संशोधित खंड में आरोपों के संबंध में सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दे दिया गया है" शब्दों का प्रयोग करके इसे सुनिश्चित किया गया है । उच्चतम न्यायालय के अनुसार[37] संशोधन के पूर्व इस खंड का अर्थ था, —

(क) आरोप से इंकार करने और अपनी निर्दोषिता साबित करने का अवसर,

(ख) साक्षियों की परीक्षा करके और अपने विरुद्ध पेश किए गए साक्ष्य की प्रतिपरीक्षा करके अपनी प्रतिरक्षा करने का अवसर । इसके अन्तर्गत निम्नलिखित अवयव हैं, —

33. *बी.के. राय बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य,* (1965) 69 सी.डब्ल्यू.एन. 106 (*1069*) ।

34. *देवेश चन्द्र बनाम भारत संघ,* (1969) 2 एस.सी.सी. 158 (*166*) ।

35. *फड़नीस बनाम महाराष्ट्र राज्य,* (1971) 1 एस.सी.सी. 790 ।

36. *जान बनाम त्रावनकोर कोचीन राज्य,* ए. 1955 एस.सी. 160; *भारत संघ बनाम गोयल,* ए. 1964 एस.सी. 364 (*369*); *भारत संघ बनाम वर्मा,* (1958) एस.सी.आर. 499 (*507*) ।

37. *खेमचंद बनाम भारत संघ,* ए. 1958 एस.सी. 300 ।

(i) *आरोप* — आरोप विनिर्दिष्ट होने चाहिए ।[38] इसके साथ ही उन अभिकथनों का विवरण होना चाहिए[39] जिस पर वे आधारित हैं और साथ ही ऐसी विशिष्टि और ब्योरे[40] होने चाहिएं जो प्रतिरक्षा का युक्तियुक्त अवसर देने के लिए आवश्यक हैं ।

(ग) इन आरोपों की सूचना अपराधी को दी जानी चाहिए ।[39-40]

(घ) आरोप पत्र में जो अभिकथन किए गए हैं उनका उत्तर देने का अपराधी को युक्तियुक्त समय और अवसर दिया जाना चाहिए ।[40]

अतएव किसी भी सरकारी सेवक को किसी अन्य सरकारी सेवक के विरुद्ध कार्यवाही में उसके द्वारा की गई स्वीकृति के आधार पर, उसके विरुद्ध नई जांच किए बिना पदच्युत नहीं किया जा सकता ।[40]

(ii) *जांच* — उन मामलों को छोड़ कर जो खंड (2) के परंतुक के अधीन आते हैं, आरोपों के विरुद्ध जांच की जानी चाहिए । किंतु अपराधी अपने आचरण द्वारा आरोपों की सुनवाई की आवश्यकता समाप्त कर सकता है । उसे खंड (2) के अधीन आरोपों की बाबत सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर पाने का अधिकार है । यह अवसर देकर सरकार अपनी बाध्यता से मुक्त हो जाती है ।[41] यदि अपराधी अपना दोष स्वीकार कर लेता है[42] या अवसर का लाभ नहीं उठाता है[43] तो वह बाद में यह परिवाद नहीं कर सकता कि विस्तृत जांच नहीं की गई थी ।

(क) *अभियोजन साक्षी की परीक्षा* — अभियोजन साक्षियों की परीक्षा सामान्यतया अपराधी की उपस्थिति में की जानी चाहिए जिससे वह आरोप के समर्थन में उनका साक्ष्य सुन सके और अपना प्रतिवाद प्रस्तुत करने के पहले उनकी प्रतिपरीक्षा कर सके ।[44] अपराधी को उन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा का युक्तियुक्त अवसर दिया जाना जाहिए जिनकी विभागीय जांच में अभियोजन ने परीक्षा की है ।[37] यदि अपराधी की अनुपस्थिति में कार्यवाही के किसी पूर्वतर चरण में किसी साक्ष्य की परीक्षा की गई है और आरोप की जांच करते समय उसकी प्रतिपरीक्षा करने का अवसर अपराधी को दिया जा रहा है और पहले दिए गए साक्ष्य की प्रतिलिपियां भी प्रदान की जा रही है तो यह अपेक्षा पूरी हो जाएगी ।[45]

अपराधी को, अभियोजन साक्षी की प्रतिपरीक्षा करने का अधिकार है किंतु जांच अधिकारी को यह अधिकार है कि वह असंगत प्रतिपरीक्षा को रोक दे और इसके कारण अभिलिखित करे ।[46]

अभियोजन साक्षियों की प्रतिपरीक्षा का अवसर वास्तविक होना चाहिए । यदि प्रतिपरीक्षा के प्रयोजन के लिए जो दस्तावेज सुसंगत हैं वे नहीं दिए जाते हैं तो नैसर्गिक न्याय का पालन नहीं होगा ।[47]

यदि अभियोजन ने आरोप के समर्थन में तात्विक साक्षियों की परीक्षा नहीं की है तो इससे कार्यवाही दोषपूर्ण हो जाएगी ।[48] जैसे उस अधिकारी को नहीं बुलाया गया है

38. *सुरथ बनाम पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1971 एस.सी 752 ।
39. *जगदीश बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी 1070 (*1074*) ।
40. *पंजाब राज्य बनाम अमर सिंह*, ए. 1966 एस.सी 1313 (*1317*) ।
41. *जान बनाम त्रावनकोर कोचीन राज्य*, ए 1958 एस.सी. 160 ।
42. *चेन्नबासप्पा बनाम मैसूर राज्य*, (1971) 1 एस.सी.सी. 1 (*3*) ।
43. *भट्ट बनाम भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1344 (*1348*); *चंपकलाल बनाम भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 1854 ।
44. *मीनग्लास टी एस्टेट बनाम कर्मकार*, ए. 1963 एस.सी. 1719 (*1720*) ।
45. *मैसूर राज्य बनाम शिवबासप्पा*, ए. 1963 एस.सी. 375; *मध्य प्रदेश राज्य बनाम ओम प्रकाश*, (1969) 3 एस.सी.सी. 775 (*782*) ।
46. *मुंबई राज्य बनाम नूरुल लतीफ*, (1965) 3 एस.सी.आर. 135 ।
47. *मध्य प्रदेश राज्य बनाम चिंतामन*, ए. 1961 एस.सी. 1623 ।
48. *पंजाब राज्य बनाम चुन्नीलाल*, (1970) 1 एस.सी.सी. 479 (*485*) ।

जिसने अर्जीदार की चरित्र पंजी में प्रतिकूल प्रविष्टियां की थीं और जिनका उपयोग आरोप के समर्थन में उसके विरुद्ध किया जा रहा है ।[48]

(ख) *अपराधी से प्रश्न पूछा जाना* — सामान्यतया जब तक कोई साक्षी या कुछ साक्षियों को आरोप के समर्थन में परीक्षा नहीं हो जाती है तब तक अपराधी से प्रश्न नहीं पूछा जाना चाहिए । उसे आरोप के समर्थन में साक्ष्य सुनने का और प्रतिपरीक्षा में अपनी इच्छानुसार सुसंगत प्रश्न करने का उचित अवसर दिया जाना चाहिए । इसके बाद उसे अपने विरुद्ध दिए गए साक्ष्य को खंडित करने का मौका मिलना चाहिए ।[49]

इसका यह अर्थ नहीं है कि अनुशासनिक कार्यवाही में अपराधी से कोई प्रश्न नहीं पूछा जा सकता । प्रश्न उससे तभी पूछे जा सकते हैं जब वह अभियोजन की समाप्ति पर अपनी प्रतिपरीक्षा में कोई कथन स्वेच्छा से करना चाहता है[50] और तब भी जब जांच के प्रारम्भ पर उससे प्रश्न पूछना उसके फायदे के लिए है क्योंकि वह अपनी किसी स्वीकृति को स्पष्ट कर देगा[51] या अभियोग पूर्णतया अभिलेख पर आधारित है ।[52]

जहां अपराधी से किसी प्रश्नावली का उत्तर देने के लिए कहा जाता है जिसमें ऐसे प्रश्न हैं जो अनुचित हैं[53] या अपराधी की परीक्षा इस प्रकार की जा रही है कि मालूम होता है कि उसे पहले ही दोषसिद्ध मान लिया गया है ।[49]

(ग) *प्रतिरक्षा साक्षियों के संबंध में अधिकार* — जहां अपराधी को तात्विक प्रतिरक्षा साक्षियों को[46-48] बुलाने का[54] या उनकी परीक्षा करने का[50] या अपनी स्वयं की परीक्षा करने का मौका नहीं दिया जाता है वहां नैसर्गिक न्याय का हनन होता है ।

किंतु जांच अधिकारी ऐसे साक्षी को बुलाने से इंकार करेगा जिसका साक्ष्य आरोप से सुसंगत नहीं है ।[46]

(घ) *आरोप का सबूत* — आरोप साबित होना चाहिए ।[55]

अ. निम्नलिखित मामलों में नैसर्गिक न्याय की अपेक्षाओं का अनुपालन नहीं किया गया है, —

(i) जहां सरकारी कर्मचारी के अभिकथित कदाचार के विरुद्ध जांच नहीं की जा रही है किंतु एक साधारण अन्वेषण करके यह ढूंढा जा रहा है कि किसी दुर्घटना के लिए कौन व्यक्ति उत्तरदायी है । किसी विशिष्ट व्यक्ति के विरुद्ध कोई आरोप नहीं है और ऐसे अन्वेषण के आधार पर शास्ति देने का प्रस्ताव है ।[56]

(ii) यदि दंड देने वाले या अपीली प्राधिकारी भ्रम उत्पन्न कर देते हैं और किसी विभागीय नियम के उल्लंघन का उसे दोषी ठहराते हैं ।[57]

(iii) जब तक आरोप साबित नहीं हो जाता तब तक दंड देने का प्रश्न ही नहीं उठता और उस समय तक सक्षम प्राधिकारी को अपना दिमाग खुला रखना चाहिए ।[58] जहां अभिलेख पर साक्ष्य से यह प्रकट होता है कि अनुशासनिक प्राधिकारी प्रारम्भ से ही सरकारी कर्मचारी को दंड देने के लिए कृतसंकल्प था वहां कार्यवाही विखंडित की जानी चाहिए ।[59]

---

49. *मीनाग्लास टी एस्टेट* बनाम *कर्मकार*, ए. 1963 एस.सी. 1719 (*1720*), *एसोसिएटिड सीमेंट कंपनी* बनाम *कर्मकार*, (1964) 3 एस.सी.आर 652 (*661*) ।

50. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *शर्मा*, ए. 1968 एस.सी. 158 (*160*) ।

51. *सेंट्रल बैंक आफ इंडिया* बनाम *करुणामय*, ए. 1968 एस.सी. 266 ।

52. *फायरस्टोन टायर कंपनी* बनाम *कर्मकार*, ए. 1968 एस.सी. 236 ।

53. *पंजाब राज्य* बनाम *अमर सिंह*, ए. 1966 एस.सी. 1313 (*1317*) ।

54. *कपूर सिंह* बनाम *भारत संघ*, (1960) 2 एस.सी.आर. 569 (*590*) ।

55. तुलना कीजिए, *टाटा आयल मिल्स* बनाम *कर्मकार*, ए. 1965 एस.सी. 155 ।

56. *अमलेन्दु* बनाम *डी.टी.एस.*, ए. 1960 एस.सी. 992 ।

57. तुलना कीजिए, *लक्ष्मी शुगर मिल्स* बनाम *रामस्वरूप*, ए. 1957 एस.सी. 916 ।

58. *खेमचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 300 (*308*); *असम राज्य* बनाम *बिमल*, ए. 1963 एस.सी. 1612; *हुकम चंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1959 एस.सी. 536 (*540*) ।

59. *के.आर. देब* बनाम *केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क कलक्टर*, (1971) 2 एस.सी.सी. 102 (*106*) ।

(iv) यदि लोकसेवक को बहुत से आरोपों के लिए दोषी पाया जाता है और बाद में यह पाया जाता है कि उनमें से कुछ आरोपों की बाबत नैसर्गिक न्याय के नियमों का पालन नहीं किया गया था या निष्कर्ष साक्ष्य पर आधारित नहीं था किंतु कुछ ऐसे आरोप थे जिनके बारे में ठीक निष्कर्ष निकाला गया था तो न्यायालय दंड को विखंडित नहीं करेगा ।[60-61]

आ. इसके विपरीत —

(i) विभागीय कार्यवाही दाण्डिक अभियोजन के समतुल्य नहीं है । दाण्डिक अभियोजन में सबूत का मान अधिक होता है ।[62] यदि अनुच्छेद 311(2) की अपेक्षाओं का पालन हो गया है[63] तो न्यायालय यह नहीं देख सकता कि क्या पदच्युति को उचित ठहराने के लिए पर्याप्त साक्ष्य है । क्योंकि वह उसकी अपील नहीं सुन रहा है । न्यायालय केवल यही देखेगा कि क्या अपराधी को किसी ऐसे साक्ष्य या जानकारी को स्पष्ट करने के लिए जिस पर प्राधिकारी कार्य करना चाहता है, पर्याप्त अवसर दिया गया था या नहीं ।[63]

(ii) ऐसी कार्यवाही को साक्ष्य की विधि लागू नहीं होती — केवल एकमात्र बाध्यता यह है कि सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए ।[62-63]

(ङ) *जांच अधिकारी का प्रतिवेदन* — अनुच्छेद 311(2) के अधीन जो जांच का प्रकरण है वह न्यायिककल्प कार्यवाही है ।[64] इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जांच अधिकारी को आरोपों पर अपना निष्कर्ष उसके कारण देते हुए प्रतिवेदन देना चाहिए ।[65]

जब अपराधी को जांच के परिणामस्वरूप या प्रतिवेदन के निष्कर्षों के आधार पर दंड देने का प्रस्ताव है तो जांच अधिकारी के निष्कर्ष सहित[66] प्रतिवेदन की एक प्रति[67-68] संबद्ध व्यक्ति को दी जानी चाहिए । यदि प्रतिवेदन में दंड के बारे में कोई सिफारिश की गई है[69] तो उसकी प्रतिलिपि भी दी जानी चाहिए चाहे दंड देने वाले प्राधिकारी पर वे सिफारिशें आबद्धकर हों या नहीं ।

किंतु जहां प्रस्तावित कार्यवाही किसी प्रतिवेदन पर आधारित नहीं है वहां प्रतिलिपि न देने से कार्यवाहियां दूषित नहीं होतीं ।[69]

II. **जांच के पश्चात्**

अ. जैसा ऊपर कहा गया है 1976 के पहले इस अनुच्छेद के अनुसार जांच समाप्त होने के पश्चात् प्रशासनिक अधिकारी को दो बातें करनी पड़ती थीं जिससे अपराधी लोकसेवक को दो अधिकार प्राप्त होते थे, —

(क) प्रस्तावित दंड की संसूचना,
(ख) प्रस्तावित शास्ति के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का युक्तियुक्त अवसर ।

पूर्वगामी शीर्षों के अधीन अनेक निर्णय दिए गए थे जिनके अनुसार यदि प्रशासनिक

60. *उड़ीसा राज्य* बनाम *विद्याभूषण*, (1963) सप. 1 एस.सी.आर. 648 ।
61. *रेलवे बोर्ड* बनाम *निरंजन*, (1969) II एल.एल.जे. 743 (*746*) एस.सी.; *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *ओम प्रकाश*, ए. 1970 एस.सी. 670 ।
62. *शिंदे* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 1080 (पैरा 9) ।
63. *मैसूर राज्य* बनाम *शिवबासप्पा*, ए. 1963 एस.सी. 375 ।
64. *बछित्तर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 395 ।
65. *भारत संघ* बनाम *गोयल*, ए. 1964 एस.सी. 364 ।
66. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *चिंतामन*, ए. 1961 एस.सी 1623; *जगदीश* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी 1070 ।
67. *असम राज्य* बनाम *बिमल*, ए. 1963 एस.सी. 1612 (*1618*) ।
68. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *ओम प्रकाश*, (1969) 3 एस.सी.सी. 775 (*781*), *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *जोशी*, ए. 1969 एस.सी. 1302 ।
69. *गुजरात राज्य* बनाम *सरदेसाई*, (1969) 2 एस.सी.सी. 128 (*131*), *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *भाईशंकर*, ए. 1969 एस.सी. 1534 ।

अधिकारी इन अपेक्षाओं में से किसी का भी उल्लंघन करता था तो उसके द्वारा दिया गया दंड विखंडित किया जा सकता था ।[70]

आ. संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा इस अनुच्छेद का संशोधन करने के पश्चात् उपर्युक्त सभी विनिश्चय[71] व्यर्थ हो गए हैं । अब प्रस्तावित शास्ति के विरुद्ध अभ्यावेदन करने का अवसर देना आवश्यक नहीं है ।[72]

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अपराधी को प्रस्तावित संशोधन की सूचना देने की बाध्यता भी अब आवश्यक नहीं है क्योंकि न्यायालय ने यह कहा था कि यह इसलिए जरूरी है जिससे वह अभ्यावेदन कर सके ।

किंतु प्रशासनिक अधिकारी पर अभी भी यह बाध्यता है कि वह जांच में प्रस्तुत किए गए साक्ष्य के आधार पर ही शास्ति अधिरोपित करे ।[70] वह ऐसी सामग्री को आधार नहीं बना सकता जो जांच के प्रक्रम पर साक्ष्य में नहीं दी गई थी या जिसका उत्तर देने का अवसर अपराधी को नहीं दिया गया ।[71] जांच के दौरान दिए गए साक्ष्य के आधार पर दंड देने की बाध्यता में यह विवक्षा नहीं है कि प्रशासनिक अधिकारी जांच अधिकारी के निष्कर्ष से आबद्ध है या वह जांच अधिकारी की सिफारिश के विरुद्ध दंड नहीं दे सकता ।

प्रशासनिक प्राधिकारी को यह अधिकार है कि वह जांच अधिकारी के निष्कर्ष से भिन्न मत अपनाए और अभिलेख पर साक्ष्य के आधार पर दूसरे निष्कर्ष निकाले ।[73] जहां उसे यह प्रतीत होता है कि जांच दोषपूर्ण है वहां वह नई जांच करने का निदेश दे सकता है ।[74] किंतु जांच अधिकारी के यह निष्कर्ष देने पर कि अभियुक्त निर्दोष है प्रशासनिक अधिकारी नए सिरे से जांच करने के निदेश देता ही जाता है और उसका यह आशय प्रकट होता है कि किसी भी प्रकार सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध कोई प्रतिवेदन प्राप्त किया जाए तो ऐसी कार्यवाहियां विखंडित की जाएंगी ।[71] वह जांच अधिकारी से भिन्न किसी व्यक्ति के प्रतिवेदन के आधार पर कार्य नहीं कर सकता और अपराधी को प्रतिवेदन का उत्तर देने का अवसर दिए बिना भी कोई कदम नहीं उठा सकता ।[71]

अधिकरण के विनिश्चय से उच्चतम न्यायालय को अपील की जा सकती है । इसलिए प्रशासनिक प्राधिकारी (या अधिकरण) के लिए आवश्यक है कि वह यह कारण बताए कि क्यों वह जांच अधिकारी के निष्कर्ष से सहमत नहीं है ।[75] यदि जांच अधिकारी ने कारण दिए हैं और प्रशासनिक अधिकारी उसकी सिफारिशों से सहमत है तो फिर कारण देना आवश्यक नहीं है ।[75]

यदि प्राधिकारी ने मामले की परिस्थिति के अनुसार उचित शास्ति चुनने में ऋजुतापूर्ण, न्यायसंगत और युक्तियुक्त कार्य नहीं किया है तो न्यायालय हस्तक्षेप कर सकेगा ।[76]

जब युक्तियुक्त अवसर नहीं दिया गया है — 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधित अधिनियम 311(2) के अधीन अपराधी को जांच के प्रक्रम पर ही सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर दिया जाना चाहिए और वह भी आरोपों की बाबत । ऐसा अवसर दिया गया है

70. उदाहरणार्थ, *खेमचंद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1958 एस.सी. 300; *मैसूर राज्य* बनाम *मंचेगोड़ा*, ए. 1964 एस.सी. 506 (*509*); *भारत संघ* बनाम *राजप्पा*, (1969) 2 एस.सी.आर. 343; *मद्रास राज्य* बनाम *श्रीनिवासन*, ए. 1966 एस.सी. 1827 ।

71. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *निजामुद्दीन*, ए. 1976 एस.सी. 1964 (पैरा 19) ।

72. *भारत संघ* बनाम *तुलसीराम*, ए. 1985 एस.सी. 1416 ।

73. *भारत संघ* बनाम *गोयल*, ए. 1964 एस.सी. 364 (*369-70*) ।

74. *के.आर. देव* बनाम *उत्पाद-शुल्क कलक्टर*, (1971) 2 एस.सी.सी. 102 (*106*) ।

75. *मैसूर राज्य* बनाम *श्रीनिवासन*, ए. 1966 एस.सी. 1827 ।

76. *शंकर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1985 एस.सी. 772 (पैरा 7) ।

या नहीं यह तथ्य का प्रश्न है और इसका निर्णय मामले की परिस्थितियों को देखकर[77-78] और उसका जो प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है उसको देखकर किया जाएगा ।[77, 79]

अ. अपराधी को अपनी प्रतिरक्षा करने के अवसर से वंचित किया गया है ऐसा निम्नलिखित मामलों में समझा गया, —

(i) जहां भरणपोषण भत्ता न पाने के कारण और धन की कमी के कारण वह जांच के स्थान पर उपस्थित होने में असमर्थ था तथा जांच का स्थान भी दूर था ।[80]

(ii) जहां मौखिक और लिखित हर साक्ष्य की सुसंगत प्रतियां नहीं देने के कारण अपराधी अपनी प्रतिरक्षा ठीक से नहीं कर पाया ।[81]

आ. इसके विपरीत निम्नलिखित मामलों में अपनी निर्दोषिता साबित करने का युक्तियुक्त अवसर दिया गया था, —

(i) जहां उसके आने-जाने पर कुछ निर्बन्धन लगाए गए थे किंतु जांच के स्थान पर उसके उपस्थित होने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं था और उसने जांच में वास्तव में भाग भी लिया ।[78]

(ii) रेल अधिकारी की भारत से किसी रेल कर्मचारी की सहायता प्राप्त करने के अनुरोध को अस्वीकार किया गया । जांच लंदन में हो रही थी किंतु उससे यह कहा गया कि वह लंदन में स्थित किसी भी रेल अधिकारी की सहायता ले ले ।[79]

(iii) जहां किसी विधि व्यवसायी की सहायता लेने की अनुमति नहीं दी जाती वहां इतने मात्र से नैसर्गिक न्याय से वंचित किया गया है यह नहीं कहा जा सकता ।[79] यह तभी होगा जब कि अभियोग इस प्रकार का था कि प्रतिरक्षा में किसी विशेषज्ञ की आवश्यकता हो ।[79]

अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालय की अधिकारिता — लोकसेवक के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही न्यायिककल्प कार्यवाही है । व्यथित लोकसेवक अपनी सेवा की समाप्ति या पंक्ति में अवनति के आदेश पर इस आधार पर आक्षेप कर सकता है कि उसे अपने विरुद्ध आरोपों की बाबत सुनवाई का वैसा युक्तियुक्त अवसर नहीं दिया गया है जैसा कि अनुच्छेद 311(2) में अपेक्षित है ।

जहां सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर नहीं दिया गया है जैसा ऊपर के उदाहरणों में है वहां उच्च न्यायालय अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप कर सकता है ।[82] उच्च न्यायालय की यह अधिकारिता अब प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 द्वारा प्रशासनिक अधिकरणों को प्राप्त हो गई है ।

उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता — 1. यह हम बता ही चुके हैं कि अनुच्छेद 323क(2)(घ) द्वारा उच्चतम न्यायालय की अनुच्छेद 32 तथा 136 के अधीन अधिकारिता यथावत् बनी हुई है ।

2. अनुच्छेद 136 के अधीन अपील में न्यायालय विभागीय कार्यवाहियों में दिए गए निर्णय का पुनर्मूल्यांकन करके यह अवधारण नहीं करेगा कि क्या आदेश को न्यायोचित ठहराने के लिए पर्याप्त साक्ष्य था ।[78] वह तभी हस्तक्षेप करेगा जब, —

(क) अनुच्छेद 311 या किसी कानूनी नियम की अपेक्षाओं का उल्लंघन हुआ है जिससे अपीलार्थी पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है ।[83-84]

77. *शर्मा* बनाम *भारत संघ*, (1976) यू.जे.एस.सी. 576 (पैरा 6) ।
78. *शिंदे* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 1080 (पैरा 7-8) ।
79. *सरीन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1976 एस.सी. 1686 ।
80. *घनश्याम* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1183 ।
81. *काशीनाथ* बनाम *भारत संघ*, ए. 1986 एस.सी. 2118 (पैरा 12); *पंजाब राज्य* बनाम *भगत*, ए. 1974 एस.सी. 2335 ।
82. *आंध्र प्रदेश राज्य* बनाम *वेंकटराव*, ए. 1975 एस.सी. 2151 ।
83. *मोहन* बनाम *पंजाब राज्य*, (1976) यू.जे.एस.सी. 426 (पैरा 7) ।
84. *शर्मा* बनाम *भारत संघ*, (1976) यू.जे.एस.सी. 576 ।

(ख) किसी मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ है ।

(ग) प्रशासनिक प्राधिकारी या अधिकरण को कोई अधिकारिता नहीं थी या आदेश में अभिलेख से प्रकट होने वाली भूल है ।

सेवानिवृत्ति के पश्चात् अनुशासनिक कार्यवाही — अ कुछ विभागीय नियमों में यह उपबंध है कि सरकारी सेवक को उसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाहियां समाप्त करने के प्रयोजन के लिए अधिवर्षिता के पश्चात् सेवा में रखा जाएगा ।[85-86] इस प्रकार रखे जाने का आदेश सरकारी सेवक की सेवानिवृत्ति की तारीख के पहले किया जाना चाहिए ।[87] सरकारी सेवक की सेवाओं के पर्यवसान के पश्चात् यदि भूतलक्षी प्रभाव से ऐसा आदेश किया जाता है तो वह शून्य होगा[85] क्योंकि वह एकपक्षीय कार्यवाही है । सरकार सेवा की नई संविदा नहीं कर सकती । किंतु यदि सेवानिवृत्ति के पहले कर्मचारी को निलम्बित किया जाता है तो सेवानिवृत्ति नहीं होगी[88] चाहे निलम्बन का आदेश उसे उस तारीख के पश्चात् प्राप्त हुआ हो जब सेवानिवृत्ति होने वाली थी ।[87] ऐसी दशा में सेवानिवृत्ति के ठीक पहले की छुट्टी रद्द कर दी गई थी यह समझा जाएगा ।[88]

जहां अस्थायी सरकारी सेवक की सेवाएं नियमों के अनुसार उस पर सूचना की तामील करके समाप्त कर दी गई हैं वहां सरकार उसके विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही प्रारम्भ नहीं कर सकती ।[89]

आ किंतु जहां ऐसा कोई नियम नहीं है कि विभागीय जांच करने के लिए या विभागीय कार्यवाही करने के लिए उसे सेवा में बनाए रखा जाएगा, जो नियम है वह केवल यही कहता है कि किसी व्यक्ति को लोक आधार पर अधिवर्षिता की आयु के पश्चात् सेवा में रखा जाएगा तो अनुशासनिक कार्यवाही करने के प्रयोजन के लिए उसे सेवानिवृत्ति के पश्चात् सेवा में रखना न्यायोचित नहीं होगा । इस संदर्भ में लोक आधार से अभिप्रेत है कि उस व्यक्ति का अभिलेख इतना अच्छा है कि उसे विनिर्दिष्ट आयु के पश्चात् भी सेवा में रखना लोकहित में होगा ।[86]

परंतुक — परंतुकों के द्वारा खंड (2) का लागू होना अपवर्जित किया जाता है ।[90]

परंतुक 1 — यह परंतुक 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित किया गया है जिससे जांच के प्रक्रम के पश्चात् दंड देने के प्रयोजन के लिए अपराधी को अभ्यावेदन करने का अवसर देने की बाध्यता समाप्त हो जाए ।[72] इसलिए अब प्रस्तावित दंड की सूचना देना भी आवश्यक नहीं है । जांच के प्रक्रम पर जो साक्ष्य दिया गया है उसके आधार पर दंड देने की बाध्यता अभी भी बनी हुई है ।

परंतुक 2 — इसमें मूल परंतुक को ही बिना परिवर्तन किए दुबारा रखा गया है । इसके तीन खंड हैं ।

परंतुक 2(क) "आपराधिक आरोप पर सिद्धदोष ठहराया गया है" — यदि किसी अधिकारी को आपराधिक आरोप पर सिद्धदोष ठहराया गया है तो उसे अनुच्छेद 311(2) के अधीन कोई और कार्यवाही किए बिना पदच्युत किया जा सकता है । इसके अन्तर्गत ऐसी विधि

85 *असम राज्य* बनाम *पदम राम*, ए 1965 एससी 473 ।

86 *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *नृपेन्द्र*, ए 1966 एससी 447 (*449*); *प्रताप सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1963 एससी 72 ।

87 *पंजाब राज्य* बनाम *खेमी राम*, (1969) 1 यूजेएससी 721 (*724*) ।

88 *खेमी राम* बनाम *पंजाब राज्य*, (1976) यूजेएससी 665 (पैरा 8) ।

89 *गिवरोनिया* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1970 एससी 1494 ।

90 *बीसी दास* बनाम *असम राज्य*, (1971) 2 एससीसी 168 (*174*) ।

के अधीन दोषसिद्धि भी है जिसमें किसी आपराधिक आरोप के लिए जुर्माना या कारावास से दण्डित किए जाने का उपबंध है ।[91]

यह उपबंध प्राधिकारी को कुछ शक्ति प्रदान करता है । इसका यह अर्थ नहीं है कि प्रशासनिक प्राधिकारी प्रत्येक दोषसिद्धि के मामले में पदच्युति की ही शास्ति दे । जैसे, ऐसे अपराधों के लिए जिसमें नैतिक अधमता अन्तर्वलित नहीं है ।[92]

इस परंतुक को लागू करने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि सरकार दोषसिद्धि के विरुद्ध अपील या पुनरीक्षण के समाप्त होने की प्रतीक्षा करे ।[93] किंतु यदि बाद में अपील में या अन्यथा दोषसिद्धि को अपास्त कर दिया जाता है तो पदच्युति का आदेश भी निष्प्रभावी हो जाएगा, और कर्मचारी को पुनः सेवा में लेना पड़ेगा । तथा कर्मचारी पदच्युति की तारीख से अपने वेतन की बकाया रकम भी प्राप्त कर सकेगा ।[94]

परंतुक 2(ख) : जहां युक्तियुक्त रूप से अवसर देना साध्य नहीं है, वहां प्राधिकारी का यह विनिश्चय — परंतुक में यह उपबंध है कि यदि नियुक्त करने वाला प्राधिकारी यह लेखबद्ध करता है कि उस व्यक्ति को कारण बताने का अवसर देना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है तो कोई जांच नहीं की जाएगी । पदच्युति के आदेश को यह संरक्षण तभी लागू होगा जब निम्नलिखित शर्तें पूरी की जाएं, —

1. यह समाधान उस प्राधिकारी को होना चाहिए जिसे पदच्युति, पद से हटाने या पंक्ति में अवनत करने की शक्ति है और वह उस पर विचार करे ।[95] जहां वह अपने वरिष्ठ अधिकारी का केवल आदेश पालन करता है और सीधे-सीधे अपने अधीनस्थ कर्मचारी को पदच्युत कर देता है तो इस आदेश की विधिमान्यता इस आधार पर उचित नहीं ठहराई जा सकती कि उक्त परंतुक के अधीन शक्ति का प्रयोग किया गया था ।[90] खंड (3) स्पष्ट रूप से यह कहता है कि पदच्युति करने वाले प्राधिकारी का विनिश्चय होना चाहिए और यदि ऐसा होता है तभी उस विनिश्चय की युक्तियुक्तता पर न्यायालय में आक्षेप नहीं किया जा सकता ।

2. आदेश में इस बात के कारण दिए जाने चाहिए कि क्या अनुशासनिक जांच करना युक्तियुक्त रूप से साध्य नहीं है ।[96]

3. ये कारण विवाद से संबद्ध होने चाहिए ।[96]

परंतुक 2(ग) : "राज्य की सुरक्षा के हित में" — कुछ ऐसे भी मामले हो सकते हैं जहां आरोप को प्रकट करने से राज्य की सुरक्षा पर प्रभाव पड़े । ऐसी दशा में राष्ट्रपति या राज्यपाल अनुच्छेद 311(2) द्वारा अपेक्षित जांच नहीं करने का या अभ्यावेदन का अवसर नहीं देने का आदेश दे सकते हैं ।[72, 97]

राष्ट्रपति या राज्यपाल का समाधान — परंतुक के इस खंड में जिस समाधान का उल्लेख

91. *नागभूषण*, ए. 1966 आंध्र प्रदेश 72 के मामले में. *जगदीन्द्र* बनाम *महानिरीक्षक*, ए. 1959 असम 134; *सुनील* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य* ए. 1970 कलकत्ता 384 ।

92. *भारत संघ* बनाम *तुलसीराम*, ए. 1985 एस.सी. 1416 (पैरा 67-70, 127); *शंकर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1985 एस.सी. 772 (पैरा 7); *रोशन* बनाम *जैन*, ए. 1987 एस.सी. 385 (पैरा 2) ।

93. तुलना कीजिए, *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *नूह*, ए. 1958 एस.सी. 86 (*95*); *कुंवर* बनाम *भारत संघ*, (1969) लेबर एंड इंडस्ट्रियल केसेस 990 (*993*) ।

94. *भारत संघ* बनाम *अकबर*, ए. 1961 मद्रास 486 (*491*); *तरिणी* बनाम *मुख्य अधीक्षक*, ए. 1965 कलकत्ता 75 ।

95. *उड़ीसा राज्य* बनाम *कृष्णस्वामी*, ए. 1964 उड़ीसा 29 ।

96. *कर्मकार* बनाम *हिन्दुस्तान स्टील*, (1984) सप. एस.सी.सी. 554 (पैरा 4) [किंतु *शिवाजी* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1986 एस.सी. 617 (पैरा 7) में सेवा की समाप्ति के आदेश के पश्चात् कारणों का अभिलेखन ठीक माना गया] ।

97. *सत्यवीर* बनाम *भारत संघ*, (1986) 1 एस.एल.आर. 1 (एस.सी.) ।

है उसमें कोई शर्त नहीं लगाई गई है । परिणामस्वरूप राष्ट्रपति या राज्यपाल कोई जांच करे यह आवश्यक नहीं है और इस खंड के अधीन आदेश में कारण देना भी जरूरी नहीं है ।[72] **इस खंड के अधीन राष्ट्रपति का समाधान न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जा सकता**[98] **और परंतुक के इस खंड के अधीन आदेश देने के पहले लोक सेवा आयोग से परामर्श करना भी आवश्यक नहीं है ।**

यह समाधान राष्ट्रपति या राज्यपाल का व्यक्तिगत समाधान नहीं है ।[99] इसका यह अर्थ है कि मंत्रिपरिषद् की सलाह पर कार्य करते हुए राष्ट्रपति या राज्यपाल कोई आदेश करे तो यह कृत्य अनुच्छेद 77 या 166 के अधीन प्रत्यायोजित भी किया जा सकता है ।[99]

जहां राष्ट्रपति या राज्यपाल ने अनुच्छेद 309 के अधीन नियम बनाए हैं और उन नियमों के अधीन कार्य किया है जैसे, सुरक्षा नियम, तो उन नियमों द्वारा विहित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए । यदि नियमों की अपेक्षाओं का पालन नहीं किया जाता है तो राष्ट्रपति या राज्यपाल इस परंतुक के इस खंड के अधीन शक्ति का अवलम्ब नहीं ले सकता ।[100, 1]

अखिल भारतीय सेवाएं ।

312. (1) [2]*भाग 6 के अध्याय 6 या भाग 11* **में किसी बात के होते हुए भी, यदि राज्य सभा ने उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई सदस्यों द्वारा समर्थित संकल्प द्वारा यह घोषित किया है कि राष्ट्रीय हित में ऐसा करना आवश्यक या समीचीन है तो संसद्, विधि द्वारा, संघ और राज्यों के लिए सम्मिलित एक या अधिक अखिल भारतीय सेवाओं के** [2क]*जिनके अंतर्गत अखिल भारतीय न्यायिक सेवा*[2ख] **है, सृजन के लिए उपबंध कर सकेगी और इस अध्याय के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी ऐसी सेवा के लिए भर्ती का और नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का विनियमन कर सकेगी ।**

(2) इस संविधान के प्रारंभ पर भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा के नाम से ज्ञात सेवाएं इस अनुच्छेद के अधीन संसद् द्वारा सृजित सेवाएं समझी जाएंगी ।

[2क]*(3) खंड (1) में निर्दिष्ट अखिल भारतीय न्यायिक सेवा के अंतर्गत अनुच्छेद 236 में परिभाषित जिला न्यायाधीश के पद से अवर कोई पद नहीं होगा ।*

(4) पूर्वोक्त अखिल भारतीय न्यायिक सेवा के सृजन के लिए उपबंध करने वाली विधि में भाग 6 के अध्याय 6 के संशोधन के लिए ऐसे उपबंध अन्तर्विष्ट हो सकेंगे जो उस विधि के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक हों और ऐसी कोई विधि अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए संविधान का संशोधन नहीं समझी जाएगी ।

खंड (1) : संघ और राज्यों के लिए सम्मिलित — अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्य संघ और राज्यों के लिए सम्मिलित हैं इसलिए एक राज्य में काम करने वाले ऐसी सेवा के किसी सदस्य की संघ के अधीन पदस्थापना को प्रतिनियुक्ति नहीं समझा जा सकता जब तक कि उस आदेश में विनिर्दिष्ट रूप से ऐसा न कहा गया हो ।[3]

---

98. *जगदीश* बनाम *महालेखाकार*, ए. 1958 मुंबई 283 (*290*); *आज़म* बनाम *हैदराबाद राज्य*, ए 1958 आंध्र प्रदेश 619 (*621*) ।

99. *शमशेर* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1974 एस.सी 2192 (सात न्यायाधीश), *सरदारी लाल* बनाम *भारत संघ*, (1971) 1 एस.सी.सी 411 (*415*) को उलट दिया गया ।

100. *बालकोटय्या* बनाम *भारत संघ*, ए 1958 एस.सी. 232 (*239*) ।

1. *मेनन* बनाम *भारत संघ*, ए 1963 एस.सी 1160 (*1164*) ।

2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से "भाग 11" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

2क. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से अंतःस्थापित ।

2ख. *आल इंडिया जजेस एसोसिएशन* बनाम *भारत संघ*, जे.टी 1991 (4) एस.सी. 285 ।

3. *देवेश चंद्र* बनाम *भारत संघ*, (1969) 2 एस.सी.सी 158 (*166*) ।

[4]312क. (1) संसद्, विधि द्वारा –

कुछ सेवाओं के अधिकारियों की सेवा की शर्तों में परिवर्तन करने या उन्हें प्रतिसंहृत करने की संसद् की शक्ति ।

(क) उन व्यक्तियों के, जो सेक्रेटरी आफ स्टेट द्वारा या सेक्रेटरी आफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा इस संविधान के प्रारंभ से पहले भारत में क्राउन की किसी सिविल सेवा में नियुक्त किए गए थे और जो संविधान (अट्ठाईसवां संशोधन) अधिनियम, 1972 के प्रारंभ पर और उसके पश्चात्, भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी सेवा या पद पर बने रहते हैं, पारिश्रमिक, छुट्टी और पेंशन संबंधी सेवा की शर्तें तथा अनुशासनिक विषयों संबंधी अधिकार, भविष्यलक्षी या भूतलक्षी रूप से परिवर्तित कर सकेगी या प्रतिसंहृत कर सकेगी;

(ख) उन व्यक्तियों की, जो सेक्रेटरी आफ स्टेट द्वारा या सेक्रेटरी आफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा इस संविधान के प्रारंभ से पहले भारत में क्राउन की किसी सिविल सेवा में नियुक्त किए गए थे और जो संविधान (अट्ठाईसवां संशोधन) अधिनियम, 1972 के प्रारंभ से पहले किसी समय सेवा से निवृत्त हो गए हैं या अन्यथा सेवा में नहीं रहे हैं, पेंशन संबंधी सेवा की शर्तें भविष्यलक्षी या भूतलक्षी रूप से परिवर्तित कर सकेगी या प्रतिसंहृत कर सकेगी

परंतु किसी ऐसे व्यक्ति की दशा में, जो उच्चतम न्यायालय या किसी उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति या अन्य न्यायाधीश, भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक, संघ या किसी राज्य के लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या अन्य सदस्य अथवा मुख्य निर्वाचन आयुक्त का पद धारण कर रहा है या कर चुका है, उपखंड (क) या उपखंड (ख) की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह संसद् को, उस व्यक्ति की उक्त पद पर नियुक्ति के पश्चात्, उसकी सेवा की शर्तों में, वहां तक के सिवाय जहां तक ऐसी सेवा की शर्तें उसे सेक्रेटरी आफ स्टेट द्वारा या सेक्रेटरी आफ स्टेट इन कौंसिल द्वारा भारत में क्राउन की किसी सिविल सेवा में नियुक्त किया गया व्यक्ति होने का कारण लागू हैं, उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन करने के लिए या उन्हें प्रतिसंहृत करने के लिए सशक्त करती है ।

(2) वहां तक के सिवाय जहां तक संसद्, विधि द्वारा, इस अनुच्छेद के अधीन उपबंध करे इस अनुच्छेद की कोई बात खंड (1) में निर्दिष्ट व्यक्तियों की सेवा की शर्तों का विनियमन करने की इस संविधान के किसी अन्य उपबंध के अधीन किसी विधान मंडल या अन्य प्राधिकारी की शक्ति पर प्रभाव नहीं डालेगी

(3) उच्चतम न्यायालय को या किसी अन्य न्यायालय को निम्नलिखित विवादों में कोई अधिकारिता नहीं होगी, अर्थात् –

(क) किसी प्रसंविदा, करार या अन्य ऐसी ही लिखत के, जिसे खंड (1) में निर्दिष्ट किसी व्यक्ति ने किया है या निष्पादित किया है, किसी उपबंध से या उस पर किए गए किसी पृष्ठांकन से उत्पन्न कोई विवाद अथवा ऐसे व्यक्ति को, भारत में क्राउन की किसी सिविल सेवा में उसकी नियुक्ति या भारत डोमिनियन की या उसके किसी प्रांत की सरकार के अधीन सेवा में उसके बने रहने के संबंध में भेजे गए किसी पत्र के आधार पर उत्पन्न कोई विवाद;

(ख) मूल रूप में यथा अधिनियमित अनुच्छेद 314 के अधीन किसी अधिकार, दायित्व या बाध्यता के संबंध में कोई विवाद ।

(4) इस अनुच्छेद के उपबंध मूल रूप में यथा अधिनियमित अनुच्छेद 314 में या इस संविधान के किसी अन्य उपबंध में किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे ।

4. संविधान (अठाईसवां संशोधन) अधिनियम, 1972 द्वारा तारीख 29-8-1972 से अनुच्छेद 312क अंतःस्थापित किया गया । [टिप्पणी के लिए देखिए *भारत संघ बनाम जयराजन*, ए 1976 एससी 218।]

संक्रमणकालीन उपबंध ।

313. जब तक इस संविधान के अधीन इस निमित्त अन्य उपबंध नहीं किया जाता है तब तक ऐसी सभी विधियां जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले प्रवृत्त हैं और किसी ऐसी लोक सेवा या किसी ऐसे पद को, जो इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् अखिल भारतीय सेवा से अथवा संघ या किसी राज्य के अधीन सेवा या पद के रूप में बना रहता है, लागू हैं वहां तक प्रवृत्त बनी रहेंगी जहां तक वे इस संविधान के उपबंधों से संगत है ।

अनुच्छेद 313 : **सेवाओं से संबंधित विद्यमान विधि** — संविधान के अनुसार संघ और राज्य के विधान मंडलों को क्रमशः संघ और राज्य की सरकारों के अधीन विभिन्न सेवाओं का विनियमन करने के लिए विधि बनाने की शक्ति है (सूची 1 की प्रविष्टि 70 और सूची 2 की प्रविष्टि 41) । किंतु जब तक ऐसी विधियां नहीं बनाई जाती हैं तब तक सेवाओं से संबंधित विद्यमान विधियां प्रवृत्त बनी रहेंगी ।

"जब तक . . . अन्य उपबंध नहीं किया जाता है" — ये शब्द अनुच्छेद 309 के अधीन बनाए गए अधिनियम या नियम दोनों के प्रति निर्देश करते हैं ।

सेवा की विद्यमान शर्तें अनुच्छेद 314 द्वारा दी गई प्रत्याभूति का विषय हैं और संविधान का संशोधन किए बिना किसी नियम या विधान द्वारा उनमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता ।[5]

कुछ सेवाओं के विद्यमान अधिकारियों के संरक्षण के लिए उपबंध ।

314. *संविधान (अट्ठाईसवां संशोधन) अधिनियम, 1972 की धारा 3 द्वारा (29-8-1972 से) निरसित ।*

अध्याय 2 — लोक सेवा आयोग

संघ और राज्यों के लिए लोक सेवा आयोग ।

315. (1) इस अनुच्छेद के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संघ के लिए एक लोक सेवा आयोग और प्रत्येक राज्य के लिए एक लोक सेवा आयोग होगा ।

(2) दो या अधिक राज्य यह करार कर सकेंगे कि राज्यों के उस समूह के लिए एक ही लोक सेवा आयोग होगा और यदि इस आशय का संकल्प उन राज्यों में से प्रत्येक राज्य के विधान मंडल के सदन द्वारा या जहां दो सदन हैं वहां प्रत्येक सदन द्वारा पारित कर दिया जाता है तो संसद् उन राज्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए विधि द्वारा संयुक्त राज्य लोक सेवा आयोग की (जिसे इस अध्याय में "संयुक्त आयोग" कहा गया है) नियुक्ति का उपबंध कर सकेगी ।

(3) पूर्वोक्त प्रकार की किसी विधि में ऐसे आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध हो सकेंगे जो उस विधि के प्रयोजनों को प्रभावी करने के लिए आवश्यक या वांछनीय हों ।

(4) यदि किसी राज्य का राज्यपाल [6]* संघ लोक सेवा आयोग से ऐसा करने का अनुरोध करता है तो वह राष्ट्रपति के अनुमोदन से उस राज्य की सभी या किन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए सहमत हो सकेगा ।**

(5) इस संविधान में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो संघ लोक सेवा आयोग या किसी राज्य लोक सेवा आयोग के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे ऐसे आयोग के प्रति निर्देश हैं जो प्रश्नगत किसी विशिष्ट विषय के संबंध में, यथास्थिति, संघ की या राज्य की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है ।

5. *महालेखाकार* बनाम *बक्शी*, ए. 1962 एस.सी. 505 (*510*) ।

6. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

सदस्यों की नियुक्ति और पदावधि।

316. (1) लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष और अन्य सदस्यों की नियुक्ति, यदि वह संघ आयोग या संयुक्त आयोग है तो, राष्ट्रपति द्वारा और, यदि वह राज्य आयोग है तो, राज्य के राज्यपाल [6]*** द्वारा की जाएगी :

परंतु प्रत्येक लोक सेवा आयोग के सदस्यों में से यथाशक्य निकटतम आधे ऐसे व्यक्ति होंगे जो अपनी-अपनी नियुक्ति की तारीख पर भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन कम से कम दस वर्ष तक पद धारण कर चुके हैं और उक्त दस वर्ष की अवधि की संगणना करने में इस संविधान के प्रारंभ से पहले की ऐसी अवधि भी सम्मिलित की जाएगी जिसके दौरान किसी व्यक्ति ने भारत में क्राउन के अधीन या किसी देशी राज्य की सरकार के अधीन पद धारण किया है ।

[7](1क) यदि आयोग के अध्यक्ष का पद रिक्त हो जाता है या यदि कोई ऐसा अध्यक्ष अनुपस्थिति के कारण या अन्य कारण से अपने पद के कर्तव्यों का पालन करने में असमर्थ है तो, यथास्थिति, जब तक रिक्त पद पर खंड (1) के अधीन नियुक्त कोई व्यक्ति उस पद का कर्तव्य भार ग्रहण नहीं कर लेता है या जब तक अध्यक्ष अपने कर्तव्यों को फिर से नहीं संभाल लेता है तब तक आयोग के अन्य सदस्यों में से ऐसा एक सदस्य, जिसे संघ आयोग या संयुक्त आयोग की दशा में राष्ट्रपति और राज्य आयोग की दशा में उस राज्य का राज्यपाल इस प्रयोजन के लिए नियुक्त करे, उन कर्तव्यों का पालन करेगा ।

(2) लोक सेवा आयोग का सदस्य, अपने पद ग्रहण की तारीख से छह वर्ष की अवधि तक या संघ आयोग की दशा में पैंसठ वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने तक और राज्य आयोग या संयुक्त आयोग की दशा में [8][*बासठ वर्ष*] की आयु प्राप्त कर लेने तक, इनमें से जो भी पहले हो, अपना पद धारण करेगा :

परंतु —

(क) लोक सेवा आयोग का कोई सदस्य, संघ आयोग या संयुक्त आयोग की दशा में राष्ट्रपति को और राज्य आयोग की दशा में राज्य के राज्यपाल [6]*** को संबोधित अपने हस्ताक्षर सहित लेख द्वारा अपना पद त्याग सकेगा;

(ख) लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य को, अनुच्छेद 317 के खंड (1) या खंड (3) में उपबंधित रीति से उसके पद से हटाया जा सकेगा ।

(3) कोई व्यक्ति जो लोक सेवा आयोग के सदस्य के रूप में पद धारण करता है, अपनी पदावधि की समाप्ति पर उस पद पर पुनर्नियुक्ति का पात्र नहीं होगा ।

लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य का हटाया जाना और निलंबित किया जाना ।

317. (1) खंड (3) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य को केवल कदाचार के आधार पर किए गए राष्ट्रपति के ऐसे आदेश से उसके पद से हटाया जाएगा जो उच्चतम न्यायालय को राष्ट्रपति द्वारा निर्देश किए जाने पर उस न्यायालय द्वारा अनुच्छेद 145 के अधीन इस निमित्त विहित प्रक्रिया के अनुसार की गई जांच पर, यह प्रतिवेदन किए जाने के पश्चात् किया गया है कि, यथास्थिति, अध्यक्ष या ऐसे किसी सदस्य को ऐसे किसी आधार पर हटा दिया जाए ।

(2) आयोग के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य को, जिसके संबंध में खंड (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय को निर्देश किया गया है, संघ आयोग या संयुक्त आयोग की दशा में राष्ट्रपति और राज्य आयोग की दशा में राज्यपाल [6]*** उसके पद से तब तक के लिए निलंबित कर सकेगा जब तक राष्ट्रपति ऐसे निर्देश पर उच्चतम न्यायालय का प्रतिवेदन मिलने पर अपना आदेश पारित नहीं कर देता है ।

---

7. संविधान (पंद्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा खंड (1क) जोड़ा गया ।

8. संविधान (इकतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 7-9-1976 से "साठ वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(3) खंड (1) में किसी बात के होते हुए भी, यदि लोक सेवा आयोग का, यथास्थिति, अध्यक्ष या कोई अन्य सदस्य —

(क) दिवालिया न्यायनिर्णीत किया जाता है, या

(ख) अपनी पदावधि में अपने पद के कर्तव्यों के बाहर किसी सवेतन नियोजन में लगता है, या

(ग) राष्ट्रपति की राय में मानसिक या शारीरिक शैथिल्य के कारण अपने पद पर बने रहने के लिए अयोग्य है,

तो राष्ट्रपति, अध्यक्ष या ऐसे अन्य सदस्य को आदेश द्वारा पद से हटा सकेगा ।

(4) यदि लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष या कोई अन्य सदस्य, निगमित कंपनी के सदस्य के रूप में और कंपनी के अन्य सदस्यों के साथ सम्मिलित रूप से अन्यथा, उस संविदा या करार से, जो भारत सरकार या राज्य सरकार के द्वारा या निमित्त की गई या किया गया है, किसी प्रकार से संपृक्त या हितबद्ध है या हो जाता है या उसके लाभ या उससे उद्भूत किसी फायदे या उपलब्धि में भाग लेता है तो वह खंड (1) के प्रयोजनों के लिए कदाचार का दोषी समझा जाएगा ।

राष्ट्रपति द्वारा किए गए निर्देश[9] में उच्चतम न्यायालय ने आयोग के सदस्य को दोषी पाया । सदस्य की पदावधि समाप्त हो जाने पर भी उसके आचारण पर विचार किया जा सकता है ।

आयोग के सदस्यों और कर्मचारिवृंद की सेवा की शर्तों के बारे में विनियम बनाने की शक्ति ।

318. संघ आयोग या संयुक्त आयोग की दशा में राष्ट्रपति और राज्य आयोग की दशा में उस राज्य का राज्यपाल [6]*** विनियमों द्वारा —

(क) आयोग के सदस्यों की संख्या और उनकी सेवा की शर्तों का अवधारण कर सकेगा; और

(ख) आयोग के कर्मचारिवृंद के सदस्यों की संख्या और उनकी सेवा की शर्तों के संबंध में उपबंध कर सकेगा :

परंतु लोक सेवा आयोग के सदस्य की सेवा की शर्तों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

आयोग के सदस्यों द्वारा ऐसे सदस्य न रहने पर पद धारण करने के संबंध में प्रतिषेध ।

319. पद पर न रह जाने पर —

(क) संघ लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी भी और नियोजन का पात्र नहीं होगा;

(ख) किसी राज्य लोक सेवा आयोग का अध्यक्ष संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या अन्य सदस्य के रूप में अथवा किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त होने का पात्र होगा, किंतु भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी अन्य नियोजन का पात्र नहीं होगा;

(ग) संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष से भिन्न कोई अन्य सदस्य संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में या किसी राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त होने का पात्र होगा, किंतु भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी अन्य नियोजन का पात्र नहीं होगा;

(घ) किसी राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष से भिन्न कोई अन्य सदस्य संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या किसी अन्य सदस्य के रूप में अथवा उसी या किसी अन्य राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में नियुक्त होने का पात्र होगा, किंतु भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी अन्य नियोजन का पात्र नहीं होगा ।

भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अधीन नियोजन — 1. इस अनुच्छेद में यह उपबंध है कि कोई व्यक्ति जो किसी लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष या सदस्य का पद धारण

9. राष्ट्रपति द्वारा किया गया निर्देश, (1990) 4 एस.सी.सी. 262 ।

कर चुका है उस आयोग में उस पद पर न रहने पर भारत सरकार या राज्य सरकार के अधीन कोई अन्य पद धारण करने का पात्र नहीं होगा । यह स्पष्ट है कि इस उपबंध का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि लोक सेवा आयोग के सदस्य स्वाधीन और निष्पक्ष बने रहें । इसके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें आयोग में अपने पद की समाप्ति पर सरकार के अधीन किसी नियुक्ति का लालच न रहे ।[10]

2. किंतु यह प्रतिबंध तभी लागू होगा जब कि नई नियुक्ति दो शर्तों को पूरा करती हों, अर्थात् — (क) वह नियोजन हो, और (ख) सरकार के अधीन हो । उच्चतम न्यायालय ने दोनों ही शर्तों के संबंध में जो परीक्षण लागू किए हैं, वे हैं — (i) स्वामी और सेवक का संबंध, तथा (ii) पद के कृत्य और कर्तव्यों के निर्वहन में नियोजक का नियोजिती पर नियंत्रण ।[10] इस दोहरे परीक्षण को लागू करके उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि कोई सांविधानिक पद भारत सरकार या राज्य के अधीन नियोजन नहीं कहा जा सकता चाहे नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती हो क्योंकि जो व्यक्ति संविधान के अधीन पद धारण करते हैं वे भारत सरकार के अधीनस्थ नहीं होते हैं ।[10-11] जैसे ऐसा पद जो संविधान द्वारा अधिकथित शर्तों पर धारण किया जाता है, उदाहरण के लिए राज्यपाल[10] या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद ।[10, 12]

लोक सेवा आयोगों के कृत्य ।

320. (1) संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों का यह कर्तव्य होगा कि वे क्रमशः संघ की सेवाओं और राज्य की सेवाओं में नियुक्तियों के लिए परीक्षाओं का संचालन करें ।

(2) यदि संघ लोक सेवा आयोग से कोई दो या अधिक राज्य ऐसा करने का अनुरोध करते हैं तो उसका यह भी कर्तव्य होगा कि वह ऐसी किन्हीं सेवाओं के लिए, जिनके लिए विशेष अर्हताओं वाले अभ्यर्थी अपेक्षित हैं, संयुक्त भर्ती की स्कीमें बनाने और उनका प्रवर्तन करने में उन राज्यों की सहायता करे ।

(3) यथास्थिति, संघ लोक सेवा आयोग या राज्य लोक सेवा आयोग से —

(क) सिविल सेवाओं में और सिविल पदों के लिए भर्ती की पद्धतियों से संबंधित सभी विषयों पर,

(ख) सिविल सेवाओं और पदों पर नियुक्ति करने में तथा एक सेवा से दूसरी सेवा में प्रोन्नति और अंतरण करने में अनुसरण किए जाने वाले सिद्धांतों पर और ऐसी नियुक्ति, प्रोन्नति या अंतरण के लिए अभ्यर्थियों की उपयुक्तता पर,

10. *हरगोविंद* बनाम *रघुकुल*, ए 1979 एस.सी. 1109 ।

11. *भारत संघ* बनाम *सेठ*, ए 1977 एस.सी. 2328 ।

12. ऐसा प्रतीत होता है कि उच्चतम न्यायालय ने एक पहलू पर विचार नहीं किया । उच्चतम न्यायालय के या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की सेवाएं महाभियोग की कार्यवाही होने के पश्चात् ही राष्ट्रपति द्वारा समाप्त की जा सकती है । किंतु राज्यपाल, राष्ट्रपति के प्रसादपर्यन्त पद धारण करता है । [अनुच्छेद 156(1)] । यह ठीक है कि राज्यपाल को राज्य की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग मंत्रि परिषद् की सलाह पर करना पड़ता है, वह केवल ऐसे कार्य ही अपने विवेकानुसार कर सकता है जिन्हें इस प्रकार करने की शक्ति संविधान द्वारा उसे दी गई है । किंतु क्या राज्यपाल विधिक अर्थ में राष्ट्रपति के अधीन नहीं है । इस निर्णय का परिणाम कुछ विचित्र सा है । लोक सेवा आयोग का सदस्य भारत सरकार का या राज्य सरकार का सचिव नियुक्त नहीं किया जा सकता किंतु राज्यपाल नियुक्त किया जा सकता है । क्या राज्यपाल का पद, आयोग के सदस्य के सामने लालच के रूप में नहीं लटकाया जा सकता ।

यह भी ध्यान देने योग्य है कि यदि सभी सांविधानिक पदों को "सरकार के अधीन नियोजन" के निषेध से बाहर रखा जाए तो भी कुछ पद लोक सेवा आयोग के सेवानिवृत्त सदस्य के लिए उपलब्ध होंगे (यदि वह अर्हित है तो) । जैसे भारत का महान्यायवादी या राज्य का महाधिवक्ता, जो, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल द्वारा नियुक्त किए जाते हैं और उनके प्रसादपर्यन्त पद धारण करते हैं ।

(ग) ऐसे व्यक्ति पर, जो भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार की सिविल हैसियत में सेवा कर रहा है, प्रभाव डालने वाले, सभी अनुशासनिक विषयों पर, जिनके अंतर्गत ऐसे विषयों से संबंधित अभ्यावेदन या याचिकाएं हैं,

(घ) ऐसे व्यक्ति द्वारा या उसके संबंध में, जो भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के अधीन या भारत में क्राउन के अधीन या किसी देशी राज्य की सरकार के अधीन सिविल हैसियत में सेवा कर रहा है या कर चुका है, इस दावे पर कि अपने कर्तव्य के निष्पादन में किए गए या किए जाने के लिए तात्पर्यित कार्यों के संबंध में उसके विरुद्ध संस्थित विधिक कार्यवाहियों की प्रतिरक्षा में उसके द्वारा उपगत खर्च का, यथास्थिति, भारत की संचित निधि में से या राज्य की संचित निधि में से संदाय किया जाना चाहिए,

(ङ) भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार या भारत में क्राउन के अधीन या किसी देशी राज्य की सरकार के अधीन सिविल हैसियत में सेवा करते समय किसी व्यक्ति को हुई क्षतियों के बारे में पेंशन अधिनिर्णीत किए जाने के लिए किसी दावे पर और ऐसे अधिनिर्णय की रकम विषयक प्रश्न पर,

परामर्श किया जाएगा और इस प्रकार उसे निर्देशित किए गए किसी विषय पर तथा ऐसे किसी अन्य विषय पर, जिसे, यथास्थिति, राष्ट्रपति या उस राज्य का राज्यपाल [6]* उसे निर्देशित करे, परामर्श देने का लोक सेवा आयोग का कर्तव्य होगा :**

परंतु अखिल भारतीय सेवाओं के संबंध में तथा संघ के कार्यकलाप से संबंधित अन्य सेवाओं और पदों के संबंध में भी राष्ट्रपति तथा राज्य के कार्यकलाप से संबंधित अन्य सेवाओं और पदों के संबंध में राज्यपाल [6]* उन विषयों को विनिर्दिष्ट करने वाले विनियम बना सकेगा जिनमें साधारणतया या किसी विशिष्ट वर्ग के मामले में या किन्हीं विशिष्ट परिस्थितियों में लोक सेवा आयोग से परामर्श किया जाना आवश्यक नहीं होगा ।**

(4) खंड (3) की किसी बात से यह अपेक्षा नहीं होगी कि लोक सेवा आयोग से उस रीति के संबंध में, जिससे अनुच्छेद 16 के खंड (4) में निर्दिष्ट कोई उपबंध किया जाना है या उस रीति के संबंध में, जिससे अनुच्छेद 335 के उपबंधों को प्रभावी किया जाना है, परामर्श किया जाए ।

(5) राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल [6]* द्वारा खंड (3) के परंतुक के अधीन बनाए गए सभी विनियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, यथास्थिति, संसद् के प्रत्येक सदन या राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के समक्ष कम से कम चौदह दिन के लिए रखे जाएंगे और निरसन या संशोधन द्वारा किए गए ऐसे उपांतरणों के अधीन होंगे जो संसद् के दोनों सदन या उस राज्य के विधान मंडल का सदन या दोनों सदन उस सत्र में करें जिसमें वे इस प्रकार रखे गए हैं ।**

खंड (1) : परीक्षाएं — 1. पक्षपात का साधारण सिद्धांत लोक सेवा आयोग के सदस्यों को लागू होता है किंतु आयोग की चयन समिति के सदस्य के स्थान पर दूसरे को रखना संभव नहीं होता इसलिए यहां अनिवार्य रूप से उस सिद्धांत को सीमित ढंग से लागू किया जाता है । जब किसी चयन समिति का सदस्य किसी अभ्यर्थी से संबंधित होता है तो उसे समिति से बिल्कुल अलग हो जाने की आवश्यकता नहीं है । यदि वह सदस्य के अभ्यर्थी के साक्षात्कार में भाग नहीं लेता और उस अभ्यर्थी के गुणागुण पर विचार करने से अलग रहता है तो नैसर्गिक न्याय की अपेक्षाएं पूरी हो जाएंगी ।[13]

2. आयोग चयन के लिए कोई भी रीति अपना सकता है शर्त यह है कि वह मनमानी या अनुचित न हो या नियमों के बाहर की न हो ।[14] प्रोन्नति से चयन के मामले में यदि

13 *अशोक* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 454 (पैरा 18, 20-21) । *अजय* बनाम *खालिद*, ए. 1981 एस.सी. 487; *लीलाधर* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1981 एस.सी. 1777; *केशव* बनाम *उत्तर प्रदेश उच्च शिक्षा सेवा आयोग*, ए. 1986 एस.सी. 597 (पैरा 2) भी देखिए ।

14. तुलना कीजिए, *नीलिमा* बनाम *हरियाणा राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 169 (पैरा 2-3) ।

चयन केवल सेवा के अभिलेखों के आधार पर किया जाता है तो इसे मनमाना नहीं कहा जा सकता ।[15]

खंड (3) : आज्ञापक नहीं — यद्यपि यह सुस्थापित हो चुका है[16] कि "परामर्श किया जाएगा" का यह अर्थ नहीं है कि परामर्श न करने पर इस खंड के उपखंडों के अधीन सरकार द्वारा की गई कार्यवाही शून्य और बातिल होगी ।

उपखंड (ख) — इस उपखंड में यह अपेक्षा है कि अभ्यर्थियों की नियुक्ति के लिए उपयुक्तता, प्रोन्नति और अन्तरण के मामलों में आयोग से परामर्श किया जाएगा । संविधान में ऐसी कोई अपेक्षा नहीं है कि अभ्यर्थियों का साक्षात्कार अवश्य होना चाहिए या यह कि आयोग अपने एक या अधिक सदस्यों की समिति को चयन का काम नहीं सौंप सकता । यदि आयोग ने समिति की रिपोर्ट के अनुमोदन करने या न करने का अधिकार अपने पास रखा है और इस प्रकार अपने कृत्यों का उत्तरदायित्व अपने पास ही रखा है तो यह संविधान के उपबंधों के अनुसार है ।[17]

उपखंड (ग) — जो न्यायिक अधिकारी अनुच्छेद 235 द्वारा शासित होता है वह संघ या राज्य सरकार के अधीन सेवा करने वाला अधिकारी नहीं है यद्यपि वह राज्य के क्रियाकलाप से संबंधित पद धारण करता है ।[18] अतएव राज्यपाल न्यायिक अधिकारी को हटाने के लिए लोक सेवा आयोग से परामर्श नहीं कर सकता या आयोग की सिफारिश के अनुसार कार्य नहीं कर सकता । न्यायिक अधिकारी पूरे तौर से अनुशासन और नियंत्रण के मामलों में उच्च न्यायालय के अधीन है ; अतएव न्यायिक अधिकारी के अनुशासनिक मामलों में राज्यपाल को उच्च न्यायालय की सिफारिश के अनुसार आदेश पारित करना होगा ।

लोक सेवा आयोगों के कृत्यों का विस्तार करने की शक्ति ।

321. **यथास्थिति, संसद् द्वारा या किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाया गया कोई अधिनियम संघ लोक सेवा आयोग या राज्य लोक सेवा आयोग द्वारा संघ की या राज्य की सेवाओं के संबंध में और किसी स्थानीय प्राधिकारी या विधि द्वारा गठित अन्य निगमित निकाय या किसी लोक संस्था की सेवाओं के संबंध में भी अतिरिक्त कृत्यों के प्रयोग के लिए उपबंध कर सकेगा ।**

लोक सेवा आयोगों के व्यय ।

322. **संघ या राज्य लोक सेवा आयोग के व्यय, जिनके अंतर्गत आयोग के सदस्यों या कर्मचारिवृंद को या उनके संबंध में संदेय कोई वेतन, भत्ते और पेंशन हैं, यथास्थिति, भारत की संचित निधि या राज्य की संचित निधि पर भारित होंगे ।**

लोक सेवा आयोगों के प्रतिवेदन ।

323. (1) **संघ आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह राष्ट्रपति को आयोग द्वारा किए गए कार्य के बारे में प्रतिवर्ष प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसा प्रतिवेदन प्राप्त होने पर उन मामलों के संबंध में, यदि कोई हों, जिनमें आयोग की सलाह स्वीकार नहीं की गई थी, ऐसी अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाले ज्ञापन सहित उस प्रतिवेदन की प्रति संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा ।**

---

15. *दास* बनाम *भारत संघ*, ए 1987 एस.सी 593 (पैरा 29); *परवेज़* बनाम *भारत संघ*, ए. 1975 एस.सी. 446 ।

16. *उत्तर प्रदेश राज्य* बनाम *श्रीवास्तव*, ए 1957 एस.सी 922; *राम गोपाल* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 158 (*160*) ।

17. *जम्मू-कश्मीर राज्य* बनाम *राजदुलारी*, ए. 1979 एस.सी. 586 ।

18. *बलदेव* बनाम *पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय*, (1976) यू.जे.एस.सी 131 (*132*) : ए. 1976 एस.सी. 2490 ।

(2) राज्य आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह राज्य के राज्यपाल [6]*** को आयोग द्वारा किए गए कार्य के बारे में प्रतिवर्ष प्रतिवेदन दे और संयुक्त आयोग का यह कर्तव्य होगा कि ऐसे राज्यों में से प्रत्येक के, जिनकी आवश्यकताओं की पूर्ति संयुक्त आयोग द्वारा की जाती है, राज्यपाल [6]*** को उस राज्य के संबंध में आयोग द्वारा किए गए कार्य के बारे में प्रतिवर्ष प्रतिवेदन दे और दोनों में से प्रत्येक दशा में ऐसा प्रतिवेदन प्राप्त होने पर, राज्यपाल [6]*** उन मामलों के संबंध में, यदि कोई हों, जिनमें आयोग की सलाह स्वीकार नहीं की गई थी, ऐसी अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाले ज्ञापन सहित उस प्रतिवेदन की प्रति राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखवाएगा ।

[1]भाग 14क

अधिकरण

323क. (1) संसद्, विधि द्वारा, संघ या किसी राज्य के अथवा भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर या भारत सरकार के नियंत्रण के अधीन किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अथवा सरकार के स्वामित्व या नियंत्रण के अधीन किसी निगम के कार्यकलाप से संबंधित लोक सेवाओं और पदों के लिए भर्ती तथा नियुक्त व्यक्तियों की सेवा की शर्तों के संबंध में विवादों और परिवादों के प्रशासनिक अधिकरणों द्वारा न्यायनिर्णयन या विचारण के लिए उपबंध कर सकेगी ।

प्रशासनिक अधिकरण ।

(2) खंड (1) के अधीन बनाई गई विधि —

(क) संघ के लिए एक प्रशासनिक अधिकरण और प्रत्येक राज्य के लिए अथवा दो या अधिक राज्यों के लिए एक पृथक् प्रशासनिक अधिकरण की स्थापना के लिए उपबंध कर सकेगी;

(ख) उक्त अधिकरणों में से प्रत्येक अधिकरण द्वारा प्रयोग की जाने वाली अधिकारिता, शक्तियां (जिनके अंतर्गत अवमान के लिए दंड देने की शक्ति है) और प्राधिकार विनिर्दिष्ट कर सकेगी,

(ग) उक्त अधिकरणों द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया के लिए (जिसके अंतर्गत परिसीमा के बारे में और साक्ष्य के नियमों के बारे में उपबंध हैं) उपबंध कर सकेगी;

(घ) अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता के सिवाय सभी न्यायालयों की अधिकारिता का खंड (1) में निर्दिष्ट विवादों या परिवादों के संबंध में अपवर्जन कर सकेगी;

(ङ) प्रत्येक ऐसे प्रशासनिक अधिकरण को उन मामलों के अंतरण के लिए उपबंध कर सकेगी जो ऐसे अधिकरण की स्थापना से ठीक पहले किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित हैं और जो यदि ऐसे वाद हेतुक, जिन पर ऐसे वाद या कार्यवाहियां आधारित हैं, अधिकरण की स्थापना के पश्चात् उत्पन्न होते तो, ऐसे अधिकरण की अधिकारिता के भीतर होते;

(च) राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद 371घ के खंड (3) के अधीन किए गए आदेश का निरसन या संशोधन कर सकेगी;

(छ) ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध (जिनके अंतर्गत फीस के बारे में उपबंध हैं) अंतर्विष्ट कर सकेगी जो संसद् ऐसे अधिकरणों के प्रभावी कार्यकरण के लिए और उनके द्वारा मामलों के शीघ्र निपटारे के लिए और उनके आदेशों के प्रवर्तन के लिए आवश्यक समझे ।

(3) इस अनुच्छेद के उपबंध इस संविधान के किसी अन्य उपबंध में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे ।

323ख. (1) समुचित विधान मंडल, विधि द्वारा, ऐसे विवादों, परिवादों या अपराधों के अधिकरणों द्वारा न्यायनिर्णयन या विचारण के लिए उपबंध

अन्य विषयों के लिए अधिकरण ।

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से भाग 14क, जिसमें अनुच्छेद 323क और 323ख हैं, अंतःस्थापित ।

कर सकेगा जो खंड (2) में विनिर्दिष्ट उन सभी या किन्हीं विषयों से संबंधित हैं जिनके संबंध में ऐसे विधान मंडल को विधि बनाने की शक्ति है ।

(2) खंड (1) में निर्दिष्ट विषय निम्नलिखित हैं, अर्थात् —

(क) किसी कर का उद्ग्रहण, निर्धारण, संग्रहण और प्रवर्तन;

(ख) विदेशी मुद्रा, सीमाशुल्क सीमांतों के आर-पार आयात और निर्यात;

(ग) औद्योगिक और श्रम विवाद;

(घ) अनुच्छेद 31क में यथापरिभाषित किसी संपदा या उसमें किन्हीं अधिकारों के राज्य द्वारा अर्जन या ऐसे किन्हीं अधिकारों के निर्वापन या उपांतरण द्वारा या कृषि भूमि की अधिकतम सीमा द्वारा या किसी अन्य प्रकार से भूमि सुधार;

(ङ) नगर संपत्ति की अधिकतम सीमा;

(च) संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचन, किंतु अनुच्छेद 329 और अनुच्छेद 329क में निर्दिष्ट विषयों को छोड़कर;

(छ) खाद्य पदार्थों का (जिनके अंतर्गत खाद्य तिलहन और तेल हैं) और ऐसे अन्य माल का उत्पादन, उपापन, प्रदाय और वितरण, जिन्हें राष्ट्रपति, लोक अधिसूचना द्वारा, इस अनुच्छेद के प्रयोजन के लिए आवश्यक माल घोषित करे और ऐसे माल की कीमत का नियंत्रण;

(ज) उपखंड (क) से उपखंड (छ) में विनिर्दिष्ट विषयों में से किसी विषय से संबंधित विधियों के विरुद्ध अपराध और उन विषयों में से किसी की बाबत फीस;

(झ) उपखंड (क) से उपखंड (ज) में विनिर्दिष्ट विषयों में से किसी का आनुषंगिक कोई विषय ।

(3) खंड (1) के अधीन बनाई गई विधि —

(क) अधिकरणों के उत्क्रम की स्थापना के लिए उपबंध कर सकेगी;

(ख) उक्त अधिकरणों में से प्रत्येक अधिकरण द्वारा प्रयोग की जाने वाली अधिकारिता, शक्तियां (जिनके अंतर्गत अवमान के लिए दंड देने की शक्ति है) और प्राधिकार विनिर्दिष्ट कर सकेगी;

(ग) उक्त अधिकरणों द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया के लिए (जिसके अंतर्गत परिसीमा के बारे में और साक्ष्य के नियमों के बारे में उपबंध हैं) उपबंध कर सकेगी;

(घ) अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता के सिवाय सभी न्यायालयों की अधिकारिता का उन सभी या किन्हीं विषयों के संबंध में अपवर्जन कर सकेगी जो उक्त अधिकरणों की अधिकारिता के अंतर्गत आते हैं;

(ङ) प्रत्येक ऐसे अधिकरण को उन मामलों के अंतरण के लिए उपबंध कर सकेगी जो ऐसे अधिकरण की स्थापना से ठीक पहले किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित हैं और जो, यदि ऐसे वाद हेतुक जिन पर ऐसे वाद या कार्यवाहियां आधारित हैं, अधिकरण की स्थापना के पश्चात् उत्पन्न होते तो ऐसे अधिकरण की अधिकारिता के भीतर होते;

(च) ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध (जिनके अंतर्गत फीस के बारे में उपबंध हैं) अंतर्विष्ट कर सकेगी जो समुचित विधान मंडल ऐसे अधिकरणों के प्रभावी कार्यकरण के लिए और उनके द्वारा मामलों के शीघ्र निपटारे के लिए और उनके आदेशों के प्रवर्तन के लिए आवश्यक समझे ।

(4) इस अनुच्छेद के उपबंध इस संविधान के किसी अन्य उपबंध में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे ।

स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद में, किसी विषय के संबंध में, "समुचित विधान मंडल" से, यथास्थिति, संसद् या किसी राज्य का विधान मंडल अभिप्रेत है, जो भाग 11 के उपबंधों के अनुसार ऐसे विषय के संबंध में विधि बनाने के लिए सक्षम है ।

अनुच्छेद 323क-323ख का प्रविषय — ये दो अनुच्छेद जो संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित किए गए थे, भारत की सांविधानिक और प्रशासनिक विधि में एक नया अध्याय जोड़ते हैं । इनके द्वारा प्रशासनिक विनिश्चयों के न्यायिक पुनर्विलोकन को सारवान् रूप से अपवर्जित किया गया है ।

अ. कुछ लक्षण इन दोनों अनुच्छेदों में पाए जाते हैं :

(i) इनके द्वारा विधान मंडल को राज्य और व्यक्ति के बीच विवादों के निपटारे के लिए प्रशासनिक अधिकरण स्थापित करने की शक्ति दी गई है । ये अधिकरण कुछ विनिर्दिष्ट मामलों के संबंध में हो सकते हैं । विधान मंडल ऐसे अधिकरणों की अधिकारिता और शक्ति अधिकथित कर सकता है ।

(ii) ऐसी शक्तियों के लिए अवमान के लिए दंड देने की शक्ति सम्मिलित है ।

(iii) ऐसी विधि में अधिकरण द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया अधिकथित की जा सकती है जिसमें परिसीमा और साक्ष्य से संबंधित नियम भी सम्मिलित हो सकते हैं ।

(iv) ऐसी विधि में अधिकरण की स्थापना के समय किसी न्यायालय या अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित वादों के ऐसे अधिकरणों को अंतरित करने का उपबंध हो सकता है ।

(v) ऐसी विधि में अधिकरण के प्रभावी कार्यकरण के लिए अनुषंगी उपबंध हो सकते हैं ।

(vi) ऐसी विधि में अनुच्छेद 136 के अधीन उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता को छोड़कर सभी न्यायालयों की अधिकारिता को ऐसे विषय की बाबत अपवर्जित किया जा सकता है ।

(vii) इन दोनों अनुच्छेदों के उपबंध संविधान या किसी अन्य विधि में किसी प्रतिकूल उपबंध के होते हुए भी प्रभावी होंगे ।

आ. इन दोनों अनुच्छेदों में निम्नलिखित बातों के बारे में अंतर है :

अनुच्छेद 323क :	**अनुच्छेद 323ख :**
1. अनुच्छेद 323क लोकसेवाओं से संबंधित विषय तक ही सीमित है ।	1. अनुच्छेद 323ख उन अधिकरणों से संबंधित है जो खंड (2) में विनिर्दिष्ट विषयों से संबंधित है जैसे कराधान, विदेशी मुद्रा, श्रमिक विवाद, भूमि सुधार, निर्वाचन, आवश्यक वस्तु, और ऐसे विषयों से संबंधित अपराध तथा आनुषंगिक विषय ।
2. संघ के लिए केवल एक ही ऐसा अधिकरण स्थापित किया जा सकता है और प्रत्येक राज्य के लिए या दो या अधिक राज्यों के लिए एक अधिकरण हो सकता है (ये सोपान क्रम में नहीं होंगे) ।	2. समुचित विधान मंडल खंड (2) में विनिर्दिष्ट विषय में से प्रत्येक के संबंध में सोपान क्रम में अधिकरणों की स्थापना कर सकता है ।
3. ऐसी विधि बनाने की शक्ति अनन्य रूप से संसद् को है ।	3. विधायी शक्ति का विभाजन संघ और राज्य के विधान मंडलों के बीच विभिन्न विषयों पर उनकी विधायी क्षमता के अनुसार किया गया है ।

अनुच्छेद 323ख(3)(ग) की प्रक्रिया — 1. संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम जिसके द्वारा अनुच्छेद 323ख अंतःस्थापित किया गया था इस बात की कोई शर्तें नहीं लगाता कि प्रशासनिक अधिकरण किस प्रकार अपने विनिश्चय पर पहुंचेंगे । वह यह भी नहीं कहता कि वे नैसर्गिक न्याय के नियमों के अनुकूल न्यायिककल्प प्रक्रिया का अनुसरण करेंगे । हर एक बात का उपबंध विभिन्न विषयों से संबंधित विधियों में किया जाएगा । इस प्रकार की कोई विधि नहीं बनाई गई है इसलिए इन उपबंधों पर कोई टिप्पणी नहीं की जा सकती ।

2. यदि विधान मंडल का आशय विधिक सिद्धांतों का उल्लंघन करना न हो तो

यह आशा की जाती है कि वह न्यायिककल्प कार्य करने की बाध्यता उन पर डालेगा। अधिकरणों के विनिश्चयों से अनुच्छेद 136 के अधीन अपील उच्चतम न्यायालय को होगी और उच्चतम न्यायालय ने यह पहले ही अधिकथित कर दिया है कि निम्नलिखित प्रकार के कृत्य न्यायिककल्प हैं —

(i) निर्वाचन विवाद का निपटारा।[2]
(ii) कर निर्धारण।[3]
(iii) औद्योगिक विवाद का न्यायनिर्णयन।[4]
(iv) सेवाओं का पर्यवसान।[5]
(v) राजस्व प्राधिकारी द्वारा शास्ति अधिरोपित किया जाना,[6] जैसे, सीमाशुल्क प्राधिकारी द्वारा।
(vi) किसी व्यक्ति की संपत्ति को प्रभावित करने वाला आदेश।[7]

न्यायालयों की अधिकारिता का अपवर्जन — यह ध्यान देने योग्य है कि अनुच्छेद 323क और 323ख ऐसे उपबंध नहीं हैं जो स्वयं हो सकें। ये विनिर्दिष्ट विधान मंडल को अधिकरण की स्थापना के लिए विधि बनाने के लिए प्राधिकृत करते हैं। उस विधि में अनुषंगी उपबंध भी किए जा सकते हैं। दूसरे शब्दों में ये ऐसे विधान के लिए सांविधानिक प्राधिकार प्रदान करते हैं।

अनुच्छेद 323क(1) द्वारा प्रदत्त शक्ति के आधार पर[8] संसद् ने प्रशासनिक अधिकरण अधिनियम, 1985 अधिनियमित किया है। इस अधिनियम ने सरकारी कर्मचारियों की सेवा से संबंधित विषयों पर सिविल न्यायालयों की[9] और अनुच्छेद 226-227 के अधीन उच्च न्यायालयों की अधिकारिता का उत्सादन कर दिया है। यह अधिकारिता अधिनियम के अधीन स्थापित प्रशासनिक अधिकरणों को दे दी गई है।

इस अधिनियम ने अधिकरण की अधिकारिता से कुछ लोकसेवकों को बाहर रखा है जैसे संघ के सशस्त्र सेवा के सदस्य।[10] सरकार द्वारा नियंत्रित लोक निगमों या प्राधिकारियों के कर्मचारी [जब तक केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम की धारा 14(2) के अधीन अधिसूचना न निकाले][11] या स्थानीय प्राधिकारी।[12] जो लोकसेवक इसकी अधिकारिता के अधीन आते हैं उनके बारे में अधिकरण उन सब शक्तियों का प्रयोग कर सकता है और वे सभी अनुदेश दे सकता है जो कोई सिविल न्यायालय दे सकता था या अनुच्छेद 226-227 के अधीन उच्च न्यायालय दे सकता था।[13]

2. *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए. 1976 एस.सी. 2299 (पैरा 329)।

3. *सूरजमल* बनाम *विश्वनाथ*, ए. 1954 एस.सी. 545; *दिल्ली क्लाथ मिल्स* बनाम *आय-कर आयुक्त*, (1955) 1 एस.सी.आर. 941।

4. *एक्सप्रेस न्यूज़पेपर्स* बनाम *कर्मकार*, ए. 1963 एस.सी. 569।

5. *कलकत्ता डॉक लेबर बोर्ड* बनाम *इमाम*, (1965) II एस.सी.ए. 226 (*230*); *उड़ीसा राज्य* बनाम *बीनापाणि*, ए. 1967 एस.सी. 1269।

6. *पायोनियर ट्रेडर्स* बनाम *मुख्य नियंत्रक*, ए. 1963 एस.सी. 734 (*740*); *लियो राय* बनाम *अधीक्षक*, ए. 1958 एस.सी. 119 (*121*)।

7. *डी.एफ.ओ.* बनाम *राम सनेही*, ए. 1973 एस.सी. 205; *श्री भगवान* बनाम *रामचंद*, ए. 1965 एस.सी. 1767 (*1771*)।

8. *सिमामोनी* बनाम *भारत संघ*, (1986) ए.टी.सी. 785 (पैरा 6) कटक।

9. तुलना कीजिए, *भटनागर* बनाम *भारत संघ*, (1986) ए.टी.सी. 394 (पैरा 3) एन.डी.।

10. *आनंद* बनाम *भारत संघ*, (1986) ए.टी.सी. 366 (एन.डी.)।

11. *बालकृष्ण* बनाम *के.वी.एस.*, (1986) ए.टी.सी. 372 (पैरा 3) दिल्ली; *नरिन्द्र* बनाम *भारत संघ*, (1986) ए.टी.सी. 414 (पैरा 21) एन.डी.; *केदार* बनाम *भारत संघ*, (1986) ए.टी.सी. 523।

12. *जगदीश* बनाम *भारत संघ*, (1986) ए.टी.सी. 789 (पैरा 4) जबलपुर।

13. *चोपड़ा* बनाम *भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी. 357; *संपत* बनाम *भारत संघ*, ए. 1987 एस.सी. 386।

भाग 15

निर्वाचन

324. (1) इस संविधान के अधीन संसद् और प्रत्येक राज्य के विधान मंडल के लिए कराए जाने वाले सभी निर्वाचनों के लिए तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के लिए निर्वाचनों के लिए निर्वाचक-नामावली तैयार कराने का और उन सभी निर्वाचनों के संचालन का अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण, [1]* एक आयोग में निहित होगा (जिसे इस संविधान में निर्वाचन आयोग कहा गया है) ।**

निर्वाचनों के अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण का निर्वाचन आयोग में निहित होना ।

(2) निर्वाचन आयोग मुख्य निर्वाचन आयुक्त और उतने अन्य निर्वाचन आयुक्तों से, यदि कोई हों, जितने राष्ट्रपति समय-समय पर नियत करे, मिलकर बनेगा तथा मुख्य निर्वाचन आयुक्त और अन्य निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति, संसद् द्वारा इस निमित्त बनाई गई विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राष्ट्रपति द्वारा की जाएगी ।

(3) जब कोई अन्य निर्वाचन आयुक्त इस प्रकार नियुक्त किया जाता है तब मुख्य निर्वाचन आयुक्त निर्वाचन आयोग के अध्यक्ष के रूप में कार्य करेगा ।

(4) लोक सभा के और प्रत्येक राज्य की विधान सभा के प्रत्येक साधारण निर्वाचन से पहले तथा विधान परिषद् वाले प्रत्येक राज्य की विधान परिषद् के लिए प्रथम साधारण निर्वाचन से पहले और उसके पश्चात् प्रत्येक द्विवार्षिक निर्वाचन से पहले, राष्ट्रपति निर्वाचन आयोग से परामर्श करने के पश्चात्, खंड (1) द्वारा निर्वाचन आयोग को सौंपे गए कृत्यों के पालन में आयोग की सहायता के लिए उतने प्रादेशिक आयुक्तों की भी नियुक्ति कर सकेगा जितने वह आवश्यक समझे ।

(5) संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, निर्वाचन आयुक्तों और प्रादेशिक आयुक्तों की सेवा की शर्तें और पदावधि ऐसी होंगी जो राष्ट्रपति नियम द्वारा अवधारित करे :

परंतु मुख्य निर्वाचन आयुक्त को उसके पद से उसी रीति से और उन्हीं आधारों पर ही हटाया जाएगा, जिस रीति से और जिन आधारों पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाया जाता है अन्यथा नहीं और मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सेवा की शर्तों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसके लिए अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जाएगा :

परंतु यह और कि किसी अन्य निर्वाचन आयुक्त या प्रादेशिक आयुक्त को मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सिफारिश पर ही पद से हटाया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(6) जब निर्वाचन आयोग ऐसा अनुरोध करे तब, राष्ट्रपति या किसी राज्य का राज्यपाल [2]* निर्वाचन आयोग या प्रादेशिक आयुक्त को उतने कर्मचारिवृंद उपलब्ध कराएगा जितने खंड (1) द्वारा निर्वाचन आयोग को सौंपे गए कृत्यों के निर्वहन के लिए आवश्यक हों ।**

निर्वाचन आयोग की अधिकारिता का प्रविषय — 1. अधीक्षण, निदेशन और नियंत्रण शब्द इतने व्यापक हैं कि निर्वाचन आयोग को ऐसी सभी आकस्मिकताओं में कार्य करने की शक्ति मिल जाती है[3] जिनके बारे में विधि मे उपबंध नहीं किया गया हो ।[4] आयोग निर्वाचन

1. संविधान (उन्नीसवां संशोधन) अधिनियम, 1966 द्वारा कुछ शब्दों का लोप किया गया । धारा 80क द्वारा लोक प्रतिनिधित्व (संशोधन) अधिनियम, 1966 द्वारा निर्वाचन याचिका के विचारण की अधिकारिता निर्वाचन-अधिकरण के स्थान पर उच्च न्यायालय में निहित की गई है ।

2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

3. *कन्हैया* बनाम *त्रिवेदी*, ए. 1986 एस.सी. 111 ।

4. *जोसे* बनाम *सिवान*, ए. 1984 एस.सी. 921 (पैरा 25, 29, 33, 35) ।

के संचालन के लिए आवश्यक आदेश पारित कर सकता है । जैसे, किसी पोलिंग स्टेशन पर पुनः मतदान होगा या नहीं ।[5]

2. निर्वाचन आयोग राजनीतिक दलों को प्रतीक के आबंटन से संबंधित विवादों का विनिश्चय करने के लिए[6] और राजनीतिक दलों को मान्यता देने या मान्यता छीनने के लिए सक्षम है ।[6]

3. किंतु, —

(क) संपत्ति से संबंधित प्रश्नों का विनिश्चय करना न्यायालयों का काम है निर्वाचन आयोग का नहीं ।[6]

(ख) निर्वाचन आयोग ऐसे प्रश्न का विनिश्चय नहीं कर सकता जो निर्वाचन प्रतीक (आरक्षण और आबंटन) आदेश की परिधि के बाहर है जैसे दल परिवर्तन होने के पश्चात् कोई राजनीतिक दल वह दल रह गया है या नहीं यद्यपि उस प्रतीक आदेश के अधीन आबंटित प्रतीक अपने पास रखने के लिए उसके पास आवश्यक सदस्य संख्या है ।[7]

4 इस अनुच्छेद में आने वाले शब्द "सभी निर्वाचनों के संचालन . . . और नियंत्रण" के अंतर्गत शक्ति भी है और कर्तव्य भी । अतएव लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम और उस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा प्रदत्त शक्तियों के अतिरिक्त निर्वाचन आयोग को अनुच्छेद 324(1) के अधीन पर्याप्त शक्तियां हैं जिनका प्रयोग करके वह निर्वाचन के संचालन के लिए समुचित आदेश कर सकता है जैसे विशेष क्षेत्रों की परिस्थितियों के अनुसार मतदान को रद्द करके फिर से मतदान करने का आदेश देना ।

5. इस अनुच्छेद द्वारा प्रदत्त अधीक्षण की शक्ति से आयोग को निर्वाचन से संबंधित विधायी शक्ति नहीं मिलती । यह शक्ति सूची 1 की प्रविष्टि 72 के अधीन संसद् में और सूची 2 की प्रविष्टि 37 के अधीन राज्य के विधान मंडल में निहित है ।[4] जब संसद् ने लोकप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 द्वारा मतदान करने की रीति का उपबंध किया है और उसके अधीन अधिकार की सीमा के भीतर नियम बनाए गए हैं तो निर्वाचन आयोग बिना समुचित विधायन के, अधिनियम और नियमों द्वारा विहित प्रक्रिया के प्रतिकूल मशीन द्वारा मतदान प्रारंभ नहीं कर सकता ।[4]

6 निर्वाचन आयोग अनुच्छेद 136 की परिधि के भीतर अधिकरण है ।

बहुसदस्यीय निर्वाचन आयोग — उच्चतम न्यायालय ने यह संप्रेक्षण किया है[7क] कि आयोग को बहुसदस्यीय होना चाहिए । किंतु यह भी कि बहुसदस्यीय बनाना या नहीं यह निर्णय कार्यपालिका ही करेगी ।

धर्म, मूलवंश, जाति या लिंग के आधार पर किसी व्यक्ति का निर्वाचक-नामावली में सम्मिलित किए जाने के लिए अपात्र न होना और उसके द्वारा किसी विशेष निर्वाचक-नामावली में सम्मिलित किए जाने का दावा न किया जाना ।

325. **संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचन के लिए प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्र के लिए एक साधारण निर्वाचक-नामावली होगी और केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या इनमें से किसी के आधार पर कोई व्यक्ति ऐसी किसी नामावली में सम्मिलित किए जाने के लिए अपात्र नहीं होगा या ऐसे किसी निर्वाचन-क्षेत्र के लिए किसी विशेष निर्वाचक-नामावली में सम्मिलित किए जाने का दावा नहीं करेगा ।**

5. *महेन्द्र बनाम मुख्य निर्वाचन आयुक्त*, ए 1978 एस.सी. 851 (पैरा 91, 114-15, 121) ।
6. *सादिक अली बनाम निर्वाचन आयुक्त*, ए. 1972 एस.सी. 187 ।
7 *ए.पी.एच.एल. बनाम संगमा*, ए. 1977 एस.सी. 2155 (पैरा 55) ।
7क. *एस.एस. धनोआ बनाम भारत संघ*, ए. 1991 एस.सी. 1745 ।

326. **लोक सभा और प्रत्येक राज्य की विधान सभा के लिए निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होंगे अर्थात् प्रत्येक व्यक्ति, जो भारत का नागरिक है और ऐसी तारीख को, जो समुचित विधान मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन इस निमित्त नियत की जाए, कम से कम अठारह वर्ष**[7क] **की आयु का है और इस संविधान का समुचित विधान मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन अनिवास, चित्तविकृति, अपराध या भ्रष्ट या अवैध आचरण के आधार पर अन्यथा निरर्हित नहीं कर दिया जाता है, ऐसे किसी निर्वाचन में मतदाता के रूप में रजिस्ट्रीकृत होने का हकदार होगा ।**

लोक सभा और राज्यों की विधान सभाओं के लिए निर्वाचनों का वयस्क मताधिकार के आधार पर होना ।

अनुच्छेद 326 का प्रविषय — 1. इस अनुच्छेद में मतदाता की अनर्हताएं बताई गई हैं । संसदीय विधान द्वारा भ्रष्ट आचरण और निरर्हता आदि के बारे में विधि बनाई जा सकती है । अतएव कोई व्यक्ति जिसका नाम निर्वाचन नामावली में प्रविष्ट है संविधान के अधीन अर्ह है या नहीं और क्या वह विधि द्वारा अधिकथित किसी निरर्हता से ग्रस्त है यह प्रश्न न्यायिक पुनर्विलोकन के विषय हैं क्योंकि इससे निर्वाचक नामावली और निर्वाचन प्राधिकारी की अधिकारिता का आधार सिद्ध होता है ।[8]

2. अनुच्छेद 327 में संसद् को यह शक्ति दी गई है कि संविधान के अधीन रहते हुए वह निर्वाचक नामावली तैयार करने का ढंग विहित करेगी जिसके अंतर्गत किसी निर्वाचक नामावली में किसी व्यक्ति के निवास के बारे में गलत विशिष्टि पर आधारित किसी प्रविष्टि को ठीक करने की न्यायालय की अधिकारिता को अपवर्जित करने की शक्ति है ।[8] जब विधान मंडल ने इस प्रकार का कोई अपवर्जन किया है तो निर्वाचन अर्जी पर न्यायालय या अधिकरण ऐसी प्रविष्टि की वैधता के प्रश्न पर विचार करने का हकदार नहीं होगा ।[8]

3. अनुच्छेद 326 में मतदाता की अर्हताएं दी गई हैं । विधान मंडल के लिए निर्वाचन के लिए खड़े होने के अधिकार का उससे कोई संबंध नहीं है । संसद् के निर्वाचन की अर्हताएं अनुच्छेद 84 में हैं और राज्य विधान मंडल के लिए निर्वाचन की अनुच्छेद 173 में । किंतु इन उपबंधों से ऐसे विधान मंडल के निर्वाचन के लिए खड़े होने का कोई सांविधानिक अधिकार नहीं मिलता क्योंकि विधान मंडल को यह शक्ति है कि वह निरर्हताओं का उपबंध करे और अनुच्छेद 327 के अधीन कुछ प्ररूपिकताएं भी अधिकथित करे । लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के नामनिर्देशन, संवीक्षा आदि से संबंधित उपबंध संविधान के अनुकूल हैं ।[9]

327. **इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, संसद् समय-समय पर, विधि द्वारा, संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचनों से संबंधित या संसक्त सभी विषयों के संबंध में, जिनके अंतर्गत निर्वाचक-नामावली तैयार कराना, निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन और ऐसे सदन या सदनों का सम्यक् गठन सुनिश्चित करने के लिए अन्य सभी आवश्यक विषय हैं, उपबंध कर सकेगी ।**

विधान मंडलों के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध करने की संसद् की शक्ति ।

328. **इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए और जहां तक संसद् इस निमित्त उपबंध नहीं करती है वहां तक, किसी राज्य का विधान मंडल समय-समय पर, विधि द्वारा, उस राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए निर्वाचनों से संबंधित या संसक्त सभी विषयों के संबंध में, जिनके अंतर्गत निर्वाचक-नामावली तैयार कराना और ऐसे सदन**

किसी राज्य के विधान मंडल के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध करने की उस विधान मंडल की शक्ति ।

7क. संविधान (इकसठवां संशोधन) अधिनियम, 1988 द्वारा प्रतिस्थापित ।
8. *त्रिवेदी* बनाम *राजू*, ए. 1973 एस.सी. 2602 (पैरा 23-27) ।
9. *राजू* बनाम *गुजरात राज्य*, ए. 1976 गुजरात 66 (पैरा 5, 7, 11-12) ।

या सदनों का सम्यक् गठन सुनिश्चित करने के लिए अन्य सभी आवश्यक विषय हैं, उपबंध कर सकेगा ।

अनुच्छेद 327-328 का प्रविषय — ये दो अनुच्छेद संघ और राज्य के विधान मंडलों को अपने-अपने स्थानों के निर्वाचन के लिए आवश्यक बातें विहित करने के लिए सशक्त करती है जिससे निर्वाचन सुचारु रूप से हो सके । अनुच्छेद 329(क) के कारण ऐसी विधियों का न्यायिक पुनर्विलोकन नहीं हो सकता ।[9]

329. *इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी* [10]***—

निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन ।

(क) अनुच्छेद 327 या अनुच्छेद 328 के अधीन बनाई गई या बनाई जाने के लिए तात्पर्यित किसी ऐसी विधि की विधिमान्यता, जो निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन या ऐसे निर्वाचन-क्षेत्रों को स्थानों के आबंटन से संबंधित है, किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं की जाएगी;

(ख) संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन के लिए कोई निर्वाचन ऐसी निर्वाचन अर्जी पर ही प्रश्नगत किया जाएगा, जो ऐसे प्राधिकारी को और ऐसी रीति से प्रस्तुत की गई है जिसका समुचित विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन उपबंध किया जाए, अन्यथा नहीं ।

अनुच्छेद 329 का प्रविषय : निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन — खंड (ख) को खंड (क) का अनुपूरक समझा जाना चाहिए । खंड (क) अनुच्छेद 327-328 के अधीन बनाई गई विधियों के बारे में न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन करता है (जैसे, लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम) । ये विधियां निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन या ऐसे निर्वाचन क्षेत्रों को सीट के आबंटन से संबंधित हो सकती हैं । उनके अंतर्गत परिसीमा आयोग अधिनियम के अधीन परिसीमा आयोग द्वारा दिए गए आदेश भी आते हैं ।[11] खंड (ख) मतदान के प्रारंभ और निर्वाचन की घोषणा के बीच उठने वाले सभी मामलों के बारे में न्यायालय की अधिकारिता का अपवर्जन करता है ।[12]

खंड (ख) : निर्वाचन विवाद में न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन — यह खंड निर्वाचन से संबंधित सभी विषयों में न्यायालयों की अधिकारिता का अपवर्जन करता है । इन विषयों को समुचित विधान मंडल द्वारा विहित विधि के अधीन निर्वाचन अर्जी द्वारा ही प्रश्नगत किया जा सकता है । अतएव निर्वाचन को अपास्त करने के लिए वाद नहीं लाया जा सकता ।[13]

इस संदर्भ में निर्वाचन से अभिप्रेत है वह सभी प्रक्रिया जिसकी समाप्ति किसी अभ्यर्थी को निर्वाचित घोषित करने में होती है । यह केवल अंतिम परिणाम तक ही सीमित नहीं है ।[12]

इस खंड के कारण निम्नलिखित विषयों के बारे में वाद नहीं लाया जा सकता । उनके लिए एकमात्र उपचार निर्वाचन अर्जी है :

10. संविधान (उनतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा "अनुच्छेद 329क के अधीन रहते हुए" शब्द अंतःस्थापित किए गए थे, इनका चवालीसवां संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा लोप किया गया । इसी अधिनियम से अनुच्छेद 329क का लोप किया गया ।

11. *मेघराज* बनाम *परिसीमन आयुक्त*, ए. 1967 एस.सी. 669 (*671*) ।

12. *पुन्नुस्वामी* बनाम *रिटर्निंग आफिसर*, (1952) एस.सी.आर. 218 ।

13. *हरि विष्णु* बनाम *अहमद*, (1955) 1 एस.सी.आर. 380; *जगन्नाथ* बनाम *जसवंत*, ए. 1954 एस.सी. 210 ।

14. *रामपकावी* बनाम *जत्ती*, (1970) 3 एस.सी.सी. 147 (*151*); *रामस्वामी* बनाम *कृष्णमूर्ति*, ए. 1963 एस.सी. 458 (*461*); *इंद्रजीत* बनाम *निर्वाचन आयुक्त*, ए. 1986 एस.सी. 103; *काबुल* बनाम *कुंदन*, ए. 1970 एस.सी. 340 ।

15. *दुर्गाशंकर* बनाम *रघुराज*, ए. 1954 एस.सी. 520 ।

(i) किसी निर्वाचन अधिकारी द्वारा नामनिर्देशन पत्र का स्वीकार या नामंजूर किया जाना ।[13]

(ii) कोई विषय जो तब उत्पन्न होता है जब निर्वाचन चल रहे हैं । जैसे, नामनिर्देशन की तारीख नियत करने के लिए अधिसूचना निकालने के समय से परिणाम की घोषणा तक का प्रत्येक प्रक्रम ।[14]

(iii) निर्वाचन नामावली का सही नहीं होना,[14] केवल इस आधार पर आक्षेप किया जा सकता है कि संविधान के अनुच्छेद 173 का उल्लंघन हुआ है ।[15]

निर्वाचन अर्जियों के न्यायनिर्णयन के लिए अधिकरण — I. लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम के अधीन 1966 के पूर्व तक निर्वाचन अर्जी की सुनवाई के लिए निर्वाचन अधिकरण थे ।

II. 1966 में संशोधन करके यह अधिकारिता उच्च न्यायालय को अंतरित की गई । न्यायालय यह कार्य कानूनी अधिकरण के रूप में करते थे । अधिनियम की धारा 116क के अधीन इससे अपील उच्चतम न्यायालय को होती थी ।

III. **संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम** द्वारा उच्च न्यायालय की कानूनी अधिकारिता छीन ली गई और निम्नलिखित परिवर्तन करते हुए 1966 की स्थिति पुनः कायम की गई :

साधारण मामलों और प्रधान मंत्री और लोक सभा के अध्यक्ष के निर्वाचन के मामलों में अंतर किया गया :

अ. जो व्यक्ति आगे चल कर प्रधान मंत्री या लोक सभा का अध्यक्ष बन गया उसके निर्वाचन के लिए, प्राधिकारी की स्थापना संसद् द्वारा विधि द्वारा की जाएगी । यह अधिकरण आवश्यक नहीं कि निर्वाचन अधिकरण हो ।

अनुच्छेद 329क का **संविधान (44वां संशोधन) अधिनियम**, 1978 द्वारा लोप कर दिया गया ।

आ. संघ की संसद् या राज्य के विधान मंडल के लिए अन्य सभी व्यक्तियों के निर्वाचन को अनुच्छेद 323ख(2)(च) के अधीन निर्वाचन अर्जी द्वारा ही प्रश्नगत किया जा सकता है । इसका विचारण समुचित विधान मंडल द्वारा स्थापित प्रशासनिक अधिकरण या अधिकरणों द्वारा किया जाएगा (अर्थात् संघ की संसद् या राज्य का विधान मंडल) और किसी भी न्यायालय को अनुच्छेद 323ख के अधीन समुचित विधान मंडल द्वारा विधि बनाए जाने के पश्चात् ऐसे विषय में अधिकारिता नहीं होगी ।

किंतु अनुच्छेद 323ख(3) को लागू करने के लिए अभी तक कोई विधान नहीं बनाया गया है । इसलिए निर्वाचन अर्जी को सुनने की उच्च न्यायालय की अधिकारिता बनी हुई है ।

निर्वाचन अधिकरण की अधिकारिता के बाहर के प्रश्न — संविधान के विभिन्न उपबंधों के कारण कोई भी न्यायालय या निर्वाचन अधिकरण निम्नलिखित प्रश्न विचारण के लिए ग्रहण नहीं कर सकता —

(i) अनुच्छेद 327-328 के अधीन आने वाले विषय और उनके अधीन बनाई गई विधियों की विधिमान्यता[16] [देखिए ऊपर खंड (क)] ।

(ii) परिसीमा आयोग द्वारा दिया गया आदेश ।[17]

(iii) कौन से मामले निर्वाचन अर्जी के विषय हो सकते हैं यह अनुच्छेद 329ख के अधीन बनाई गई विधि पर आधारित होगा ।

प्रधान मंत्री और अध्यक्ष के मामले में संसद् के लिए निर्वाचनों के बारे में विशेष उपबंध ।

[18]**329क.** *संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 की धारा 36 द्वारा (20-6-1979 से) निरसित ।*

16. *राजू बनाम राज्य*, ए. 1976 गुजरात 66 (पैरा 12) ।

17. *मेघराज बनाम परिसीमन आयुक्त*, ए. 1967 एस.सी. 669 (*671*) ।

18. संविधान (उनतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा जो अनुच्छेद 329क अंतःस्थापित किया गया था उसे चवालीसवां संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा निरसित कर दिया गया ।

भाग 16

कुछ वर्गों के संबंध में विशेष उपबंध

330. (1) **लोक सभा में —**

लोक सभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण।

(क) अनुसूचित जातियों के लिए,

[1]*(ख) असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों को छोड़कर अन्य अनुसूचित जनजातियों के लिए, और*

(ग) असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों के लिए,

स्थान आरक्षित रहेंगे।

(2) खंड (1) के अधीन किसी राज्य [2]*या संघ राज्यक्षेत्र* **में अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, लोक सभा में उस राज्य** [2]*या संघ राज्यक्षेत्र* **को आबंटित स्थानों की कुल संख्या से यथाशक्य वही होगा जो, यथास्थिति, उस राज्य** [2]*या संघ राज्यक्षेत्र* **की अनुसूचित जातियों की अथवा उस राज्य** [2]*या संघ राज्यक्षेत्र* **की या उस राज्य** [2]*या संघ राज्यक्षेत्र* **के भाग की अनुसूचित जनजातियों की, जिनके संबंध में स्थान इस प्रकार आरक्षित हैं, जनसंख्या का अनुपात उस राज्य** [2]*या संघ राज्यक्षेत्र* **की कुल जनसंख्या से है।**

[2क]*(3) खंड (2) में किसी बात के होते हुए भी, लोक सभा में असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस राज्य को आबंटित स्थानों की कुल संख्या के उस अनुपात से कम नहीं होगा जो उक्त स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों की जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की कुल जनसंख्या से है।*

[3]*स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद में और अनुच्छेद 332 में, "जनसंख्या" पद से ऐसी अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना में अभिनिश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गए हैं :*

परंतु इस स्पष्टीकरण में अंतिम पूर्ववर्ती जनगणना के प्रति, जिसके सुसंगत आंकड़े प्रकाशित हो गए हैं, निर्देश का, जब तक सन् 2000 के पश्चात् की गई पहली जनगणना के सुसंगत आंकड़े प्रकाशित नहीं हो जाते हैं, यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह 1971 की जनगणना के प्रति निर्देश है।

आरक्षण का प्रभाव — अनुसूचित जाति (यथास्थिति, अनुसूचित जनजाति) के लिए स्थानों के आरक्षण का प्रभाव अनुसूचित जातियों के सदस्यों को यह गारंटी देना है कि उनके लिए कम से कम इतने स्थान अवश्य होंगे। इससे अनुसूचित जाति के सदस्य का किसी साधारण सीट के लिए चुनाव लड़ने का अधिकार छिनता नहीं है। यह अधिकार प्रत्येक वयस्क नागरिक को है। वह आरक्षित स्थान के लिए नामनिर्देशन के आधार पर भी साधारण स्थान से निर्वाचन लड़ सकता है।[4]

1. संविधान (इक्यावनवां संशोधन) अधिनियम, 1984 द्वारा तारीख 16-6-1986 से प्रतिस्थापित।
2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित।

2क. संविधान (इकतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1973 द्वारा अंतःस्थापित।

3. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से अंतःस्थापित।
4. *गिरि* बनाम *डोरा*, ए. 1959 एस.सी. 1318; 1065।

लोक सभा में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व ।

331. अनुच्छेद 81 में किसी बात के होते हुए भी, यदि राष्ट्रपति की यह राय है कि लोक सभा में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है तो वह लोक सभा में उस समुदाय के दो से अनधिक सदस्य नामनिर्देशित कर सकेगा ।

राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण ।

332. (1) [4क]* प्रत्येक राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जातियों के लिए और [5]*असम के स्वशासी जिलों की अनुसूचित जनजातियों को छोड़कर* अन्य अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थान आरक्षित रहेंगे ।**

(2) असम राज्य की विधान सभा में स्वशासी जिलों के लिए भी स्थान आरक्षित रहेंगे ।

(3) खंड (1) के अधीन किसी राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जातियों या अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या से यथाशक्य वही होगा जो, यथास्थिति, उस राज्य की अनुसूचित जातियों की अथवा उस राज्य की या उस राज्य के भाग की अनुसूचित जनजातियों की, जिनके संबंध में स्थान इस प्रकार आरक्षित हैं, जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की कुल जनसंख्या से है ।

[5क](3क) खंड (3) में किसी बात के होते हुए भी, सन् 2000 के पश्चात् की गई पहली जनगणना के आधार पर, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम और नागालैंड राज्यों की विधान सभाओं में स्थानों की संख्या के, अनुच्छेद 170 के अधीन, पुन: समायोजन के प्रभावी होने तक, जो स्थान ऐसे किसी राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षित किए जाएंगे वे —

(क) यदि संविधान (सत्तावनवां संशोधन) अधिनियम, 1987 के प्रवृत्त होने की तारीख को ऐसे राज्य की विद्यमान विधान सभा में (जिसे इस खंड में इसके पश्चात् विद्यमान विधान सभा कहा गया है) सभी स्थान अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों द्वारा धारित हैं तो, एक स्थान को छोड़कर सभी स्थान होंगे; और

(ख) किसी अन्य दशा में, उतने स्थान होंगे, जिनकी संख्या का अनुपात, स्थानों की कुल संख्या के उस अनुपात से कम नहीं होगा जो विद्यमान विधान सभा में अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों की (उक्त तारीख को यथाविद्यमान) संख्या का अनुपात विद्यमान विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या से है ।

(4) असम राज्य की विधान सभा में किसी स्वशासी जिले के लिए आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात, उस विधान सभा में स्थानों की कुल संख्या के उस अनुपात से कम नहीं होगा जो उस जिले की जनसंख्या का अनुपात उस राज्य की कुल जनसंख्या से है ।

(5) [6]* असम के किसी स्वशासी जिले के लिए आरक्षित स्थानों के निर्वाचन-क्षेत्रों में उस जिले के बाहर का कोई क्षेत्र समाविष्ट नहीं होगा ।**

(6) कोई व्यक्ति जो असम राज्य के किसी स्वशासी जिले की अनुसूचित जनजाति का सदस्य नहीं है, उस राज्य की विधान सभा के लिए [6]* उस जिले के किसी निर्वाचन-क्षेत्र से निर्वाचित होने का पात्र नहीं होगा ।**

4क. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

5. संविधान (सत्तावनवां संशोधन) अधिनियम, 1987 द्वारा अंतःस्थापित ।

5क. संविधान (सत्तावनवां संशोधन) अधिनियम, 1987 द्वारा तारीख 21-9-1987 से खंड (3क) अंतःस्थापित किया गया ।

6. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 21-1-1972 से लोप किया गया ।

333. अनुच्छेद 170 में किसी बात के होते हुए भी, यदि किसी राज्य के राज्यपाल[7]* * * की यह राय है कि उस राज्य की विधान सभा में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व आवश्यक है और उसमें उसका प्रतिनिधित्व पर्याप्त नहीं है तो वह उस विधान सभा में [8]*उस समुदाय का एक सदस्य नामनिर्देशित कर सकेगा* ।

राज्यों की विधान सभाओं में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व ।

334. इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, —

स्थानों के आरक्षण और विशेष प्रतिनिधित्व का [9]*पचास वर्ष* के पश्चात् न रहना ।

(क) लोक सभा में और राज्यों की विधान सभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों के आरक्षण संबंधी, और

(ख) लोक सभा में और राज्यों की विधान सभाओं में नामनिर्देशन द्वारा आंग्ल-भारतीय समुदाय के प्रतिनिधित्व संबंधी,

इस संविधान के उपबंध इस संविधान के प्रारंभ से [9]*पचास वर्ष* की अवधि की समाप्ति पर प्रभावी नहीं रहेंगे :

परंतु इस अनुच्छेद की किसी बात से लोक सभा में या किसी राज्य की विधान सभा में किसी प्रतिनिधित्व पर तब तक कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जब तक, यथास्थिति, उस समय विद्यमान लोक सभा या विधान सभा का विघटन नहीं हो जाता है ।

335. संघ या किसी राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों के लिए नियुक्तियां करने में, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के दावों का, प्रशासन की दक्षता बनाए रखने की संगति के अनुसार ध्यान रखा जाएगा ।

सेवाओं और पदों के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावे ।

"प्रशासन की दक्षता बनाए रखने की आवश्यकता के अनुसार" — 1. इस अनुच्छेद और अनुच्छेद 16(4) में कुछ परस्पर व्याप्ति है । अनुच्छेद 16(4) में पिछड़े वर्गों के लिए जो आरक्षण है उसमें अनुसूचित जाति और जनजाति के सदस्यों का आरक्षण भी सम्मिलित है ।[10-12] यह अनुच्छेद मूल अधिकारों वाले भाग के बाहर है और निदेशात्मक है, आज्ञापक नहीं । किंतु इससे कोई अंतर नहीं पड़ता क्योंकि अनुच्छेद 16(4) शक्ति प्रदान करने वाला उपबंध है ।[12] उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके कि अनुच्छेद 335 एक प्रकार से अनुच्छेद 16(4) के उपबंध की परिसीमा है इन दोनों के बीच टकराव को समाप्त कर दिया है । वैसे, अनुच्छेद 16(4) में अनुच्छेद 335 के प्रति विनिर्दिष्ट रूप से निर्देश नहीं हैं और उसमें प्रशासन की दक्षता बनाए रखने का प्रश्न भी नहीं उठाया गया है ।[10] यदि पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण अयुक्तियुक्त रूप से अधिक है तो वह अनुच्छेद 14 और 16(1) का

7. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

8. संविधान (तेईसवां संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा 23-1-1970 से कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

9. संविधान (आठवां संशोधन) अधिनियम, 1959 द्वारा "दस वर्ष" के स्थान पर "बीस" शब्द प्रतिस्थापित किया गया था; संविधान (तेईसवां संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा 23-1-1970 से "तीस" शब्द प्रतिस्थापित किया गया था; और संविधान (पैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1980 द्वारा "चालीस" शब्द प्रतिस्थापित किया गया; संविधान (बासठवां संशोधन) अधिनियम, 1989 द्वारा "पचास" शब्द 20-12-1989 से प्रतिस्थापित किया गया ।

10. *देवदासन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1964 एस.सी. 179 (*188*) ।

11. *महाप्रबंधक* बनाम *रंगाचारी*, ए. 1962 एस.सी. 36 (*46*) ।

12. तुलना कीजिए, *बालाजी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 649 (*664*) ।

उल्लंघन करने के आधार पर शून्य घोषित किया जा सकता है ।[12-13] इस परिसीमा के अधीन रहते हुए, अनुच्छेद 335 अनुसूचित जातियों और जनजातियों के सदस्यों की प्रोन्नति के लिए परीक्षण को अस्थायी रूप से शिथिल करने की अनुमति देता है ।[13]

2. अनुच्छेद 335 को अनुच्छेद 46 के साथ पढ़ा जाना चाहिए ।[14]

3. यह ध्यान देने योग्य है कि अनुच्छेद 335 के अधीन अधिमानी व्यवहार केवल अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के साथ ही किया जा सकता है । पिछड़े वर्गों के लोगों के साथ नहीं, जैसा कि अनुच्छेद 16(4) में है ।[15]

कुछ सेवाओं में आंग्ल-भारतीय समुदाय के लिए विशेष उपबंध ।

336. (1) इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात्, प्रथम दो वर्ष के दौरान, संघ की रेल, सीमाशुल्क, डाक और तार संबंधी सेवाओं में पदों के लिए आंग्ल-भारतीय समुदाय के सदस्यों की नियुक्तियां उसी आधार पर की जाएंगी जिस आधार पर 15 अगस्त, 1947 से ठीक पहले की जाती थीं ।

प्रत्येक उत्तरवर्ती दो वर्ष की अवधि के दौरान उक्त समुदाय के सदस्यों के लिए, उक्त सेवाओं में आरक्षित पदों की संख्या ठीक पूर्ववर्ती दो वर्ष की अवधि के दौरान इस प्रकार आरक्षित संख्या से यथासंभव निकटतम दस प्रतिशत कम होगी :

परंतु इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष के अंत में ऐसे सभी आरक्षण समाप्त हो जाएंगे ।[16]

(2) यदि आंग्ल-भारतीय समुदाय के सदस्य अन्य समुदायों के सदस्यों की तुलना में गुणागुण के आधार पर नियुक्ति के लिए अर्हित पाए जाएं तो खंड (1) के अधीन उस समुदाय के लिए आरक्षित पदों से भिन्न या उनके अतिरिक्त पदों पर आंग्ल-भारतीय समुदाय के सदस्यों की नियुक्ति को उस खंड की कोई बात वर्जित नहीं करेगी ।

आंग्ल-भारतीय समुदाय के फायदे के लिए शैक्षिक अनुदान के लिए विशेष उपबंध ।

337. इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात्, प्रथम तीन वित्तीय वर्षों के दौरान आंग्ल-भारतीय समुदाय के फायदे के लिए शिक्षा के संबंध में संघ और [17]* प्रत्येक राज्य द्वारा वही अनुदान, यदि कोई हों, दिए जाएंगे जो 31 मार्च, 1948 को समाप्त होने वाले वित्तीय वर्ष में दिए गए थे ।**

प्रत्येक उत्तरवर्ती तीन वर्ष की अवधि के दौरान अनुदान ठीक पूर्ववर्ती तीन वर्ष की अवधि की अपेक्षा दस प्रतिशत कम हो सकेंगे :

परंतु इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष के अंत में ऐसे अनुदान, जिस मात्रा तक वे आंग्ल-भारतीय समुदाय के लिए विशेष रियायत हैं उस मात्रा तक, समाप्त हो जाएंगे :[16]

परंतु यह और कि कोई शिक्षा संस्था इस अनुच्छेद के अधीन अनुदान प्राप्त करने की तब तक हकदार नहीं होगी जब तक उसके वार्षिक प्रवेशों में कम से कम चालीस प्रतिशत प्रवेश आंग्ल-भारतीय समुदाय से भिन्न समुदायों के सदस्यों के लिए उपलब्ध नहीं किए जाते हैं ।

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग ।

[17क]338. (1) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए एक आयोग होगा जो राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग के नाम से ज्ञात होगा ।

13. *केरल राज्य* बनाम *थॉमस*, ए. 1976 एस.सी. 490 (पैरा 26, 41, 42, 216) ।
14. *नियंत्रक* बनाम *जगन्नाथन*, ए. 1987 एस.सी. 537 (पैरा 21-22) ।
15. *केरल राज्य* बनाम *थॉमस*, ए. 1976 एस.सी. 490 (पैरा 168, 179) ।
16. संविधान (आठवां संशोधन) अधिनियम, 1959 द्वारा अनुच्छेद 336-337 का संशोधन नहीं किया गया है, अतः आंग्ल-भारतीयों के पक्ष में आरक्षण तारीख 25 जनवरी, 1960 के पश्चात् प्रवर्तन में नहीं रहा ।
17. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

17क. संविधान (पैंसठवां संशोधन) अधिनियम, 1990 द्वारा तारीख 12-3-1992 से प्रतिस्थापित ।

(2) संसद् द्वारा इस निमित्त बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, आयोग एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और पांच अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा और इस प्रकार नियुक्त किए गए अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों की सेवा की शर्तें और पदावधि ऐसी होंगी जो राष्ट्रपति नियम द्वारा अवधारित करे ।

(3) राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर और मुद्रासहित अधिपत्र द्वारा आयोग के अध्यक्ष, उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों को नियुक्त करेगा ।

(4) आयोग को अपनी प्रक्रिया स्वयं विनियमित करने की शक्ति होगी ।

(5) आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह, —

(क) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए इस संविधान या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि या सरकार के किसी आदेश के अधीन उपबंधित रक्षोपायों से संबंधित सभी विषयों का अन्वेषण करे और उन पर निगरानी रखे तथा ऐसे रक्षोपायों के कार्यकरण का मूल्यांकन करे;

(ख) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को उनके अधिकारों और रक्षोपायों से वंचित करने की बाबत विनिर्दिष्ट शिकायतों की जांच करे;

(ग) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सामाजिक-आर्थिक विकास की योजना प्रक्रिया में भाग ले और उन पर सलाह दे तथा संघ और किसी राज्य के अधीन उनके विकास की प्रगति का मूल्यांकन करे;

(घ) उन रक्षोपायों के कार्यकरण के बारे में प्रतिवर्ष, और ऐसे अन्य समयों पर, जो आयोग ठीक समझे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे;

(ङ) ऐसे प्रतिवेदनों में उन उपायों के बारे में जो उन रक्षोपायों के प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा किए जाने चाहिए, तथा अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण और सामाजिक-आर्थिक विकास के लिए अन्य उपायों के बारे में सिफारिश करे;

(च) अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण, विकास तथा उन्नयन के संबंध में ऐसे अन्य कृत्यों का निर्वहन करे जो राष्ट्रपति, संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, नियम द्वारा विनिर्दिष्ट करे ।

(6) राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और उसके साथ संघ से संबंधित सिफारिशों पर की गई या किए जाने के लिए प्रस्थापित कार्यवाही तथा यदि कोई ऐसी सिफारिश अस्वीकृत की गई है तो अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाला ज्ञापन भी होगा ।

(7) जहां कोई ऐसा प्रतिवेदन, या उसका कोई भाग किसी ऐसे विषय से संबंधित है जिसका किसी राज्य सरकार से संबंध है तो ऐसे प्रतिवेदन की एक प्रति उस राज्य के राज्यपाल को भेजी जाएगी जो उसे राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखवाएगा और उसके साथ राज्य से संबंधित सिफारिशों पर की गई या किए जाने के लिए प्रस्तावित कार्यवाही तथा यदि कोई ऐसी सिफारिश अस्वीकृत की गई है तो अस्वीकृति के कारणों को स्पष्ट करने वाला ज्ञापन भी होगा ।

(8) आयोग को खंड (5) के उपखंड (क) में निर्दिष्ट किसी विषय का अन्वेषण करते समय या उपखंड (ख) में निर्दिष्ट किसी परिवाद के बारे में जांच करते समय, विशिष्टतया निम्नलिखित विषयों के संबंध में, वे सभी शक्तियां होंगी जो वाद का विचारण करते समय सिविल न्यायालय को है, अर्थात् —

(क) भारत के किसी भी भाग से किसी व्यक्ति को समन करना और हाजिर कराना तथा शपथ पर उसकी परीक्षा करना;

(ख) किसी दस्तावेज को प्रकट और पेश करने की अपेक्षा करना;

(ग) शपथपत्रों पर साक्ष्य ग्रहण करना;

(घ) किसी न्यायालय या कार्यालय से किसी लोक अभिलेख या उसकी प्रति की अपेक्षा करना;

(ङ) साक्षियों और दस्तावेजों की परीक्षा के लिए कमीशन निकालना;

(च) कोई अन्य विषय जो राष्ट्रपति, नियम द्वारा, अवधारित करे ।

(9) संघ और प्रत्येक राज्य सरकार अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों को प्रभावित करने वाले सभी महत्वपूर्ण नीतिगत विषयों पर आयोग से परामर्श करेगी ।

(10) इस अनुच्छेद में, अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि इसके अंतर्गत ऐसे अन्य पिछड़े वर्गों के प्रति निर्देश, जिनको राष्ट्रपति अनुच्छेद 340 के खंड (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन की प्राप्ति पर आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे, और आंग्ल-भारतीय समुदाय के प्रति निर्देश भी है ।

संशोधन का उद्देश्य — संविधान के अनुच्छेद 338 में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए एक विशेष अधिकारी का उपबंध है जो संविधान के अधीन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए उपबंधित रक्षोपायों के सभी विषयों का अन्वेषण करे और उनके कार्यकरण के बारे में राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे । ऐसा समझा गया है कि वर्तमान उपबंध के अनुसार एक विशेष अधिकारी के स्थान पर अनुच्छेद 338 के अधीन एक पांच सदस्यों वाला उच्च स्तरीय आयोग अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सांविधानिक रक्षोपायों के बारे में अधिक प्रभावी होगा । यह आवश्यक समझा गया है कि उक्त आयोग के कृत्यों का विस्तार से वर्णन कर दिया जाए जिससे वे सब बातें उसके अंदर आ जाएं जो उन रक्षोपायों के प्रभावी अनुपालन के लिए संघ और राज्यों द्वारा किए जाने हैं । अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और सामाजिक-आर्थिक विकास का कार्य आयोग को सौंपा गया है । अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के संरक्षण, कल्याण, विकास और उन्नयन के संबंध में ऐसे अन्य कृत्य भी उसे सौंपे जा सकेंगे जो राष्ट्रपति नियम द्वारा विनिर्दिष्ट करे । राष्ट्रपति की यह शक्ति संसद् द्वारा बनाई गई विधि के अधीन होगी । उक्त आयोग के लिए प्रतिवेदन संसद् के और राज्यों के विधान मंडलों के समक्ष रखे जाएंगे ।[17ख]

अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के बारे में संघ का नियंत्रण ।

339. (1) राष्ट्रपति, [17]* राज्यों के अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और अनुसूचित जातियों के कल्याण के बारे में प्रतिवेदन देने के लिए आयोग की नियुक्ति, आदेश द्वारा, किसी भी समय कर सकेगा और इस संविधान के प्रारंभ से दस वर्ष की समाप्ति पर करेगा ।**

आदेश में आयोग की संरचना, शक्तियां और प्रक्रिया परिनिश्चित की जा सकेगी और उसमें ऐसे आनुषंगिक या सहायक उपबंध समाविष्ट हो सकेंगे जिन्हें राष्ट्रपति आवश्यक या वांछनीय समझे ।

(2) संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार [17ग]*किसी राज्य* को ऐसे निदेश देने तक होगा जो उस राज्य की अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के लिए निदेश में आवश्यक बताई गई स्कीमों के बनाने और निष्पादन के बारे में हैं ।

पिछड़े वर्गों की दशाओं के अन्वेषण के लिए आयोग की नियुक्ति ।

340. (1) राष्ट्रपति भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की दशाओं के और जिन कठिनाइयों को वे झेल रहे हैं उनके अन्वेषण के लिए और उन कठिनाइयों को दूर करने और उनकी दशा को सुधारने के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा जो उपाय किए जाने

17ख. संविधान (पैंसठवां संशोधन) अधिनियम का उद्देश्यों और कारणों का कथन ।

17ग. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

चाहिए उनके बारे में और उस प्रयोजन के लिए संघ या किसी राज्य द्वारा जो अनुदान किए जाने चाहिए और जिन शर्तों के अधीन वे अनुदान किए जाने चाहिए उनके बारे में सिफारिश करने के लिए, आदेश द्वारा, एक आयोग नियुक्त कर सकेगा जो ऐसे व्यक्तियों से मिलकर बनेगा जो वह ठीक समझे और ऐसे आयोग को नियुक्त करने वाले आदेश में आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया परिनिश्चित की जाएगी ।

(2) इस प्रकार नियुक्त आयोग अपने को निर्देशित विषयों का अन्वेषण करेगा और राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देगा, जिसमें उसके द्वारा पाए गए तथ्य उपवर्णित किए जाएंगे और जिसमें ऐसी सिफारिशें की जाएंगी जिन्हें आयोग उचित समझे ।

(3) राष्ट्रपति, इस प्रकार दिए गए प्रतिवेदन की एक प्रति, उस पर की गई कार्यवाही को स्पष्ट करने वाले ज्ञापन सहित, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा ।

अनुसूचित जातियां ।

341. (1) **राष्ट्रपति,** [17घ]*किसी राज्य* [18]*[या संघ राज्यक्षेत्र] के संबंध में और जहां वह* [19]**** राज्य है वहां उसके राज्यपाल* [20]**** से परामर्श करने के पश्चात्* **लोक अधिसूचना द्वारा, उन जातियों, मूलवंशों या जनजातियों, अथवा जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भागों या उनमें के यूथों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए,** [18]*यथास्थिति* **उस राज्य** [18]*या संघ राज्यक्षेत्र* **के संबंध में अनुसूचित जातियां समझा जाएगा ।**

(2) संसद्, विधि द्वारा, किसी जाति, मूलवंश या जनजाति को अथवा जाति, मूलवंश या जनजाति के भाग या उसमें के यूथ को खंड (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उसमें से अपवर्जित कर सकेगी, किंतु जैसा ऊपर कहा गया है उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन निकाली गई अधिसूचना में किसी पश्चात्वर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

राष्ट्रपति के आदेश का निःशेषकारी होना — 1. खंड (1) का उद्देश्य इन सब विवादों को समाप्त करना है कि कोई जाति संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुसूचित जाति है या नहीं । जैसा खंड (1) में उपबंध है, इस अनुच्छेद के अधीन राष्ट्रपति द्वारा निकाली गई अधिसूचना से यह अवधारित होगा कि संविधान के प्रयोजनों के लिए कौन अनुसूचित जाति का सदस्य समझा जाएगा ।[21] इस शक्ति के अधीन राष्ट्रपति ने अनुसूचित जातियां आदेश 1950 प्रख्यापित किया है । अतएव यह जानने के लिए कि कोई जाति अनुच्छेद 341 के अर्थान्तर्गत अनुसूचित जाति है या नहीं, इस आदेश को ही देखना होगा ।[21]

2. कोई भी व्यक्ति यह साक्ष्य प्रस्तुत करके आदेश का उपांतर नहीं करा सकता कि *क* नाम की जाति का आदेश में उल्लेख है और *ख* नाम की जाति भी *क* जाति का भाग है इसलिए *ख* जाति भी अनुसूचित जाति समझी जाएगी ।[22] संविधान के प्रयोजनों के लिए कोई जाति जनजाति है या नहीं यह साबित करने के लिए गजेटियरों या शब्दकोषों के प्रति निर्देश करना व्यर्थ है[23] यदि राष्ट्रपति के आदेश में उस जाति का उल्लेख नहीं है ।[21] कोई व्यक्ति किसी अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति का सदस्य है या नहीं

17घ. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा प्रतिस्थापित ।

18. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा जोड़ा गया ।

19. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

20. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

21. *भैयालाल* बनाम *हरिकिशन*, ए. 1965 एस.सी. 1557 (1560) ।

22. *बासवलिंगप्पा* बनाम *मुनिचिनप्पा*, ए. 1965 एस.सी. 1260 ।

23. *परसराम* बनाम *शिवचंद*, ए. 1969 एस.सी. 59 ।

यह विधि का प्रश्न है और उस व्यक्ति की स्वीकृति इस बात का निश्चायक नहीं हो सकती ।[24]

3. किसी राज्य के भाग के संबंध में किसी जाति को अनुसूचित जाति के रूप में विनिर्दिष्ट किया जा सकता है

4. कोई न्यायालय राष्ट्रपति के इस निर्णय को प्रश्नगत नहीं कर सकता है कि कौन-सी जाति अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति है ।[21, 25] किसी जाति को अनुसूचित जाति के रूप में वर्गीकृत करने के पहले राष्ट्रपति ने जो प्रशासनिक जांच करवाई थी उसकी विधिमान्यता पर भी आक्षेप नहीं किया जा सकता ।[26]

5. किंतु इस आदेश के अधीन कोई व्यक्ति अनुसूचित जाति का तभी हो सकता है जब कि वह हिंदू या सिख हो ।[27-28] जहां किसी व्यक्ति ने सार्वजनिक रूप से यह घोषणा की है कि उसने बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया है वहां वह इस आधार पर अनुसूचित जाति का होने का दावा नहीं कर सकता कि बौद्ध धर्म में उसका संपरिवर्तन प्रभावी नहीं था ।[27] यदि हिंदू धर्म छोडकर किसी अन्य धर्म में सम्मिलित होने का कोई सबूत नहीं है,[29] उस व्यक्ति ने कुछ सिद्धांत ही स्वीकार किए हैं तो वह अनुसूचित जाति का सदस्य बना रहेगा ।[30]

अनुसूचित जनजातियां ।

342. (1) **राष्ट्रपति,** [30क]*किसी राज्य* [31][*या संघ राज्यक्षेत्र*] *के संबंध में और जहां वह*[32]* * * *राज्य है वहां उसके राज्यपाल* [33]*** *से परामर्श करने के पश्चात्* **लोक अधिसूचना द्वारा, उन जनजातियों या जनजाति समुदायों अथवा जनजातियों या जनजाति समुदायों के भागों या उनमें के यूथों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा, जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए,** [34]*यथास्थिति* **उस राज्य** [34]*या संघ राज्यक्षेत्र* **के संबंध में अनुसूचित जनजातियां समझा जाएगा ।**

(2) संसद्, विधि द्वारा, किसी जनजाति या जनजाति समुदाय को अथवा किसी जनजाति या जनजाति समुदाय के भाग या उसमें के यूथ को खंड (1) के अधीन निकाली गई अधिसूचना में विनिर्दिष्ट अनुसूचित जनजातियों की सूची में सम्मिलित कर सकेगी या उसमें से अपवर्जित कर सकेगी, किंतु जैसा ऊपर कहा गया है उसके सिवाय उक्त खंड के अधीन निकाली गई अधिसूचना में किसी पश्चात्वर्ती अधिसूचना द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

"जनजातियों या जनजाति समुदायों के भागों या उनमें के यूथों को" — इन शब्दों के कारण

---

24 *भैयाराम* बनाम *अनिरुद्ध*, (1970) 2 एस सी सी 825 ।

25 *केरल राज्य* बनाम *थॉमस*, ए. 1976 एस.सी 490 (पैरा 43) ।

26 *मंगतराम* बनाम *कलक्टर*, ए 1976 मध्य प्रदेश 44 ।

27 *पंजाब राव* बनाम *मेशराम*, (1966) II एस सी ए 85; *सूसई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1986 एस.सी 733 (पैरा 5-7) ।

28 यह कहना कि हिंदू धर्म छोडकर जाने पर भी अनुसूचित जाति के सदस्य, उस जाति के सदस्य माने जाते रहेंगे [जैसे, *गोपालकृष्णन* बनाम *मुंबई राज्य*, ए 1987 मुंबई 123 (पैरा 49-52, 68) एफ बी.] उच्चतम न्यायालय के निर्णयों के प्रतिकूल है (पाद टिप्पणी 27) । यही नहीं यह कथन अनुसूचित जाति आदेश के पैरा 3 के भी विरुद्ध है । उन्हें अनुच्छेद 15(4) या अनुच्छेद 16(4) के अधीन पिछडे वर्ग के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है या अनुच्छेद 46 में 'दुर्बल वर्ग' कहा जा सकता है ।

29. *गणपत* बनाम *पीठासीन आफिसर*, ए. 1975 एस.सी 420 ।

30. *चतुर्भुज* बनाम *मोरेश्वर*, (1954) एस सी.आर. 816 (*841*) ।

30क. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा प्रतिस्थापित ।

31. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।

32. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

33. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

34. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।

अनुसूचित जाति आदेश की किसी एक प्रविष्टि के अधीन किसी जनजाति समुदाय के एक समूह को विनिर्दिष्ट करने की शक्ति मिलती है । इससे यह निष्कर्ष भी निकलता है कि किसी एक प्रविष्टि में उल्लिखित समुदायों में परस्पर विशेष संबंध है जिसके कारण वे एक ही जनजाति में माने जाते हैं । इस प्रविष्टि का इस प्रकार निर्वचन किया जाना चाहिए ।[35]

"जनजाति समुदाय" — अनुसूचित जनजाति के भीतर न केवल वे लोग आते हैं जो जन्म से किसी जनजाति के सदस्य हैं बल्कि वे स्त्रियां भी आती हैं जो जनजाति के पुरुष से विवाह करके जनजाति की सदस्य हो गई हैं ।[36]

साक्ष्य — कोई व्यक्ति अनुसूचित जनजाति का सदस्य है या नहीं यह विधि का प्रश्न है और इसे साक्ष्य के आधार पर तय किया जाएगा । साक्ष्य में उस व्यक्ति की स्वीकृति भी सम्मिलित होगी किंतु यह स्वीकृति निश्चायक नहीं हो सकती ।[37]

---

35. *दादाजी* बनाम *सुखदेव*, ए. 1980 एस.सी. 150 ।
36. *होरो* बनाम *जहांआरा*, ए. 1972 एस.सी. 1840 ।
37. *भैया* बनाम *अनिरुद्ध*, ए. 1971 एस.सी. 2533 ।

भाग 17

राजभाषा

अध्याय 1—संघ की भाषा

संघ की राजभाषा ।

343. (1) संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी ।

संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप होगा ।

(2) खंड (1) में किसी बात के होते हुए भी, इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले किया जा रहा था :

परंतु राष्ट्रपति उक्त अवधि के दौरान, आदेश द्वारा, संघ के शासकीय प्रयोजनों में से किसी के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिंदी भाषा का और भारतीय अंकों के अंतरराष्ट्रीय रूप के अतिरिक्त देवनागरी रूप का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा ।

(3) इस अनुच्छेद में किसी बात के होते हुए भी, संसद् उक्त पंद्रह वर्ष की अवधि के पश्चात्, विधि द्वारा —

(क) अंग्रेजी भाषा का, या

(ख) अंकों के देवनागरी रूप का,

ऐसे प्रयोजनों के लिए प्रयोग कर सकेगी जो ऐसी विधि में विनिर्दिष्ट किए जाएं ।

संघ की राजभाषा — 1. इस अनुच्छेद में यह उपबंध है कि संघ की राजभाषा हिंदी होगी [खंड (1)] ।

2. किंतु संविधान के प्रारंभ होने के पंद्रह वर्ष पश्चात् (अर्थात् 26-1-1965) तक संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी का उपयोग वैसे ही होता रहेगा जैसा संविधान के पूर्व होता था । संसद् विधि द्वारा इस पंद्रह वर्ष की अवधि को बढ़ा सकेगी [खंड (3)(क)] । संसद् ने राजभाषा अधिनियम, 1963 बनाकर इसका विस्तार कर दिया । परिणामस्वरूप संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी के अतिरिक्त अंग्रेजी का अभी भी प्रयोग हो रहा है ।[1]

3. खंड (3) के अधीन संसद् को यह शक्ति है कि वह यह बता सकती है कि किन प्रयोजनों के लिए 26 जनवरी, 1965 के पश्चात् संघ में अंग्रेजी का उपयोग चलता रहेगा । राजभाषा के रूप में हिंदी की प्रगति को देखकर ऐसा किया जाएगा । राजभाषा अधिनियम, 1963 बनाकर अंग्रेजी का उपयोग अनिश्चित काल के लिए चालू रखा गया है ।

राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद् की समिति ।

344. (1) राष्ट्रपति, इस संविधान के प्रारंभ से पांच वर्ष की समाप्ति पर और तत्पश्चात् ऐसे प्रारंभ से दस वर्ष की समाप्ति पर, आदेश द्वारा, एक आयोग गठित करेगा जो एक अध्यक्ष और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट विभिन्न भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले ऐसे अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा जिनको राष्ट्रपति नियुक्त करे और आदेश में आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया परिनिश्चित की जाएगी ।

---

1. *भारत संघ* बनाम *मुरासोली*, ए. 1977 एस.सी. 225, *मुरासोली* बनाम *भारत संघ*, ए. 1972 मद्रास 40 (*45*) को उलटते हुए ।

(2) आयोग का यह कर्तव्य होगा कि वह राष्ट्रपति को —

(क) संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग,

(ख) संघ के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निर्बन्धनों,

(ग) अनुच्छेद 348 में उल्लिखित सभी या किन्हीं प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा,

(घ) संघ के किसी एक या अधिक विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने वाले अंकों के रूप,

(ङ) संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की भाषा और उनके प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को निर्देशित किए गए किसी अन्य विषय,

के बारे में सिफारिश करे ।

(3) खंड (2) के अधीन अपनी सिफारिशें करने में, आयोग भारत की औद्योगिक, सांस्कृतिक और वैज्ञानिक उन्नति का और लोक सेवाओं के संबंध में अहिंदी भाषी क्षेत्रों के व्यक्तियों के न्यायसंगत दावों और हितों का सम्यक् ध्यान रखेगा ।

(4) एक समिति गठित की जाएगी जो तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे और दस राज्य सभा के सदस्य होंगे जो क्रमशः लोक सभा के सदस्यों और राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे ।

(5) समिति का यह कर्तव्य होगा कि वह खंड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों की परीक्षा करे और राष्ट्रपति को उन पर अपनी राय के बारे में प्रतिवेदन दे ।

(6) अनुच्छेद 343 में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति खंड (5) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् उस संपूर्ण प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश दे सकेगा ।

अध्याय 2—प्रादेशिक भाषाएं

राज्य की राजभाषा या राजभाषाएं ।

345. अनुच्छेद 346 और अनुच्छेद 347 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, उस राज्य में प्रयोग होने वाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक भाषाओं को या हिंदी को उस राज्य के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा या भाषाओं के रूप में अंगीकार कर सकेगा :

परंतु जब तक राज्य का विधान मंडल, विधि द्वारा, अन्यथा उपबंध न करे तब तक राज्य के भीतर उन शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग किया जाता रहेगा जिनके लिए उसका इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले प्रयोग किया जा रहा था ।

एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा ।

346. संघ में शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जाने के लिए तत्समय प्राधिकृत भाषा, एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा होगी :

परंतु यदि दो या अधिक राज्य यह करार करते हैं कि उन राज्यों के बीच पत्रादि की राजभाषा हिंदी भाषा होगी तो ऐसे पत्रादि के लिए उस भाषा का प्रयोग किया जा सकेगा ।

किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जाने वाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध ।

347. यदि इस निमित्त मांग किए जाने पर राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि किसी राज्य की जनसंख्या का पर्याप्त भाग यह चाहता है कि उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा को राज्य द्वारा मान्यता दी जाए तो वह निदेश दे सकेगा कि ऐसी भाषा को

भी उस राज्य में सर्वत्र या उसके किसी भाग में ऐसे प्रयोजन के लिए, जो वह विनिर्दिष्ट करे, शासकीय मान्यता दी जाए ।

अध्याय 3—उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में और अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा ।

348. (1) इस भाग के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, जब तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध न करे तब तक —

(क) उच्चतम न्यायालय और प्रत्येक उच्च न्यायालय में सभी कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी,

(ख) (i) संसद् के प्रत्येक सदन या किसी राज्य के विधान मंडल के सदन या प्रत्येक सदन में पुरःस्थापित किए जाने वाले सभी विधेयकों या प्रस्तावित किए जाने वाले उनके संशोधनों के,

(ii) संसद् या किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा पारित सभी अधिनियमों के और राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल [2]* द्वारा प्रख्यापित सभी अध्यादेशों के, और**

(iii) इस संविधान के अधीन अथवा संसद् या किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई किसी विधि के अधीन निकाले गए या बनाए गए सभी आदेशों, नियमों, विनियमों और उपविधियों के,

प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे ।

(2) खंड (1) के उपखंड (क) में किसी बात के होते हुए भी, किसी राज्य का राज्यपाल [2]* राष्ट्रपति की पूर्व सहमति से उस उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों में, जिसका मुख्य स्थान उस राज्य में है, हिंदी भाषा का या उस राज्य के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग प्राधिकृत कर सकेगा :**

परंतु इस खंड की कोई बात ऐसे उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश को लागू नहीं होगी ।

(3) खंड (1) के उपखंड (ख) में किसी बात के होते हुए भी, जहां किसी राज्य के विधान मंडल ने, उस विधान मंडल में पुरःस्थापित विधेयकों या उसके द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल [2]* द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में अथवा उस उपखंड के पैरा (iii) में निर्दिष्ट किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहां उस राज्य के राजपत्र में उस राज्य के राज्यपाल [2]*** के प्राधिकार से प्रकाशित अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद इस अनुच्छेद के अधीन उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।**

खंड (1)(क) : वरिष्ठ न्यायालयों की भाषा — उच्चतम न्यायालय (और उच्च न्यायालयों) की भाषा अंग्रेजी है (जब तक कि संसद् अन्यथा उपबंध न करे) इसलिए यदि स्वयं उपस्थित होकर कोई व्यक्ति मध्यक्षेप करता है तो उसे भी हिंदी में बहस करने की अनुमति नहीं दी जा सकती ।[3] राजभाषा अधिनियम की धारा 7 के अधीन उच्च न्यायालय में अंग्रेजी से भिन्न किसी भाषा के प्रयोग की अनुमति दी जा सकती है । अभी तक बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और राजस्थान में ऐसा किया गया है ।

खंड (3) : प्राधिकृत पाठ — 1. यह खंड, खंड (1)(ख) का अपवाद है । इसमें राज्य विधान मंडल को कुछ शक्तियां दी गई हैं । इन दोनों उपबंधों को एक साथ पढ़ने पर यह

2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।
3. *मधु लिमये बनाम वेद मूर्ति*, ए. 1971 एस.सी. 2608 ।

उपदर्शित होता है कि राज्य विधान मंडल स्वयं ही विधेयकों के लिए या अपने द्वारा पारित अधिनियमों के लिए या उनके अधीन बनाए गए अधीनस्थ विधान के लिए अंग्रेजी से भिन्न किसी भाषा के प्रयोग को विहित कर सकता है । किंतु ऐसा होने पर खंड (3) के अधीन सम्यकतः प्रकाशित विधेयक या अधिनियम के अंग्रेजी अनुवाद को उसका अंग्रेजी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।[1-4]

2. इसका यह अर्थ नहीं है कि राज्यपाल पर कोई बाध्यता है कि वह किसी हिंदी विधेयक का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित करे या यह कि जब तक वह नहीं किया जाता है तब तक हिंदी का विधेयक अस्तित्ववान नहीं है ऐसा समझा जाएगा ।[5] कारण यह है कि जहां किसी राज्य के विधान मंडल ने अनुच्छेद 348 के खंड (3) के अधीन अंग्रेजी से भिन्न किसी भाषा को विहित किया है वहां उस भाषा में पारित विधेयक खंड (3) के बल पर अधिनियम के रूप में प्रभावी होगा ।[5] खंड (3) के अधीन विधि के प्रवृत्त होने के लिए अंग्रेजी अनुवाद का होना पुरोभावी शर्त नहीं है ।[6]

3. इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि यदि हिंदी अधिनियम के प्रकाशन और उसके अंग्रेजी अनुवाद के प्रकाशन के बीच कोई समय का अंतराल है तो अधिनियम उस दिन प्रवृत्त होगा जिस तारीख को हिंदी विधेयक को अनुमति मिली थी, अंग्रेजी रूपान्तर के प्रकाशन की तारीख से नहीं ।[6] ऐसा कोई अंतराल नही हो सकता जिसमें कोई अधिनियम न हो ।[6]

4. हिंदी अधिनियम अपने ही बल पर प्रवृत्त होता है । अंग्रेजी अनुवाद के प्रकाशन से उसका कोई संबंध नहीं होता । जब तक अंग्रेजी पाठ प्रकाशित नही होता तब तक हिंदी पाठ ही सभी प्रयोजनों के लिए प्राधिकृत पाठ होगा ।[4-5, 7]

5. जहां अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित हो जाता है वहां अंग्रेजी अनुवाद ही विधेयक का प्राधिकृत पाठ होगा, जहां तक अंग्रेजी भाषा का प्रश्न है । और अंग्रेजी तथा गैर हिंदी रूपांतर में मतभेद होने पर अंग्रेजी पाठ अभिभावी होगा ।[6, 8] यदि अंग्रेजी पाठ संदिग्धार्थी है तो निर्वाचन के बाह्य साधन के रूप में गैर अंग्रेजी पाठ के प्रति निर्देश किया जा सकता है ।[9]

खंड (1)(ख) और (3) का प्रविषय — खंड (1) के अधीन सभी अधिनियमों का प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होगा और संसद् को यह शक्ति दी गई है कि वह यह घोषित कर सके कि किसी अन्य भाषा का पाठ प्राधिकृत पाठ होगा । खंड (3) द्वारा राज्य विधान मंडल के विधेयकों और उसके द्वारा पारित अधिनियम के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी से भिन्न किसी भाषा को अंगीकार करने की शक्ति दी गई है । खंड (3) अभिव्यक्त रूप से खंड (1)(ख) का अपवाद है । इससे यह अभिप्रेत है कि जब राज्य विधान मंडल खंड (3) के अधीन अपनी शक्ति का प्रयोग करके अंग्रेजी से भिन्न किसी भाषा को अंगीकार कर लेता है तो वह पाठ प्राधिकृत पाठ के रूप में प्रवृत्त होगा । खंड (1) उसके आड़े नहीं आएगा । किंतु जब अंग्रेजी पाठ प्रकाशित हो जाता है तो अंग्रेजी भाषा में वही प्राधिकृत पाठ होगा ।[10]

4 *जसवंत शुगर मिल्स* बनाम *औद्योगिक अधिकरण*, ए. 1962 इला 240 (एफ.बी.); *भीकम चंद* बनाम *राज्य*, ए. 1966 राज. 142 (*149*) ।

5. *मथुरा* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1975 पटना 295 (पैरा 8) ।

6. *आलोक* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1976 पटना 392 (पैरा 7) ।

7 *जे.के. जूट मिल्स* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1534 ।

8. *सगीर अहमद* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1954 इला. 257 (*278*) ।

9. *गोबिन्द राम* बनाम *निर्धारण प्राधिकारी*, ए. 1958 मध्य प्रदेश 16 (*19*) ।

10. *आलोक* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1976 पटना 392 (पैरा 7) ।

खंड (1) का प्रयोजन सीमित है । वह है अंग्रेजी भाषा का प्राधिकृत पाठ तैयार करना । वह अंग्रेजी से भिन्न भाषाओं में अधिनियमों का पारित किया जाना प्रतिबंधित नहीं करता है । उसके लिए खंड (3) में प्राधिकार है ।[11-12]

भाषा से संबंधित कुछ विधियां अधिनियमित करने के लिए विशेष प्रक्रिया ।

349. इस संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की अवधि के दौरान, अनुच्छेद 348 के खंड (1) में उल्लिखित किसी प्रयोजन के लिए प्रयोग की जाने वाली भाषा के लिए उपबंध करने वाला कोई विधेयक या संशोधन संसद् के किसी सदन में राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी के बिना पुरःस्थापित या प्रस्तावित नहीं किया जाएगा और राष्ट्रपति किसी ऐसे विधेयक को पुरःस्थापित या किसी ऐसे संशोधन को प्रस्तावित किए जाने की मंजूरी अनुच्छेद 344 के खंड (1) के अधीन गठित आयोग की सिफारिशों पर और उस अनुच्छेद के खंड (4) के अधीन गठित समिति के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ही देगा, अन्यथा नहीं ।

अध्याय 4—विशेष निदेश

व्यथा के निवारण के लिए अभ्यावेदन में प्रयोग की जाने वाली भाषा ।

350. प्रत्येक व्यक्ति किसी व्यथा के निवारण के लिए संघ या राज्य के किसी अधिकारी या प्राधिकारी को, यथास्थिति, संघ में या राज्य में प्रयोग होने वाली किसी भाषा में अभ्यावेदन देने का हकदार होगा ।

प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं ।

[13]**350क.** *प्रत्येक राज्य और राज्य के भीतर प्रत्येक स्थानीय प्राधिकारी भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के बालकों को शिक्षा के प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की पर्याप्त सुविधाओं की व्यवस्था करने का प्रयास करेगा और राष्ट्रपति किसी राज्य को ऐसे निदेश दे सकेगा जो वह ऐसी सुविधाओं का उपबंध सुनिश्चित कराने के लिए आवश्यक या उचित समझता है ।*

भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए विशेष अधिकारी ।

[13]**350ख.** *(1) भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा ।*

(2) विशेष अधिकारी का यह कर्तव्य होगा कि वह इस संविधान के अधीन भाषाई अल्पसंख्यक-वर्गों के लिए उपबंधित रक्षोपायों से संबंधित सभी विषयों का अन्वेषण करे और उन विषयों के संबंध में ऐसे अंतरालों पर जो राष्ट्रपति निदिष्ट करे, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन दे और राष्ट्रपति ऐसे सभी प्रतिवेदनों को संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखवाएगा और संबंधित राज्यों की सरकारों को भिजवाएगा ।

हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश ।

351. संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिंदी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिंदुस्तानी में और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो

11. *रायचंद* बनाम *संचालक*, ए. 1957 मध्य प्रदेश 26 ।
12. *मथुरा* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1975 पटना 295 ।
13. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।

वहां उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे ।

अनुच्छेद 351 **का प्रविषय** — यद्यपि अनुच्छेद 351 अनुदेश के रूप में है, इसे भाग 4 में सम्मिलित नहीं किया गया है । उच्चतम न्यायालय ने मद्रास सरकार के एक आदेश को शून्य घोषित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि इस अनुच्छेद पर न्यायालय विचार कर सकता है । मद्रास सरकार ने हिंदी विरोधी आंदोलनकारियों को पेंशन दी थी । उच्चतम न्यायालय ने यह कहा कि इस प्रकार पेंशन देने से हिंदी का प्रोन्नयन नहीं होगा बल्कि उसके विरुद्ध भावना जागृत होगी । अतएव वह आदेश शून्य घोषित किया गया ।[14]

14. *दलवी* बनाम *तमिलनाडु राज्य*, ए. 1976 एस.सी. 1559 (पैरा 4, 6)

भाग 18

आपात उपबंध[1]

352. (1) यदि राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि गंभीर आपात विद्यमान है जिससे युद्ध या बाह्य आक्रमण या [2]*सशस्त्र विद्रोह* **के कारण भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा संकट में है तो वह उद्घोषणा द्वारा** [3]*संपूर्ण भारत या उसके राज्यक्षेत्र के ऐसे भाग के संबध में जो उद्घोषणा में विनिर्दिष्ट किया जाए* **इस आशय की घोषणा कर सकेगा ।**

आपात की उद्घोषणा ।

[4]*स्पष्टीकरण — यदि राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि युद्ध या बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह का संकट सन्निकट है तो यह घोषित करने वाली आपात की उद्घोषणा कि युद्ध या बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा संकट मे है, युद्ध या ऐसे किसी आक्रमण या विद्रोह के वास्तव में होने से पहले भी की जा सकेगी ।*

[5]*(2) खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा मे किसी पश्चात्वर्ती उद्घोषणा द्वारा परिवर्तन किया जा सकेगा या उसको वापस लिया जा सकेगा ।*

[5]*(3) राष्ट्रपति, खंड (1) के अधीन उद्घोषणा या ऐसी उद्घोषणा में परिवर्तन करने वाली उद्घोषणा तब तक नहीं करेगा जब तक संघ के मंत्रिमंडल का (अर्थात् उस परिषद् का जो अनुच्छेद 75 के अधीन प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल स्तर के अन्य मंत्रियो से मिलकर बनती है) यह विनिश्चय कि ऐसी उद्घोषणा की जाए, उसे लिखित रूप में संसूचित नहीं किया जाता है ।*

[5]*(4) इस अनुच्छेद के अधीन की गई प्रत्येक उद्घोषणा संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी और जहां वह पूर्ववर्ती उद्घोषणा को वापस लेने वाली उद्घोषणा नहीं है वहां वह एक मास की समाप्ति पर, यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले संसद् के दोनों सदनों के संकल्पों द्वारा उसका अनुमोदन नहीं कर दिया जाता है तो, प्रवर्तन में नहीं रहेगी :*

परंतु यदि ऐसी कोई उद्घोषणा (जो पूर्ववर्ती उद्घोषणा को वापस लेने वाली उद्घोषणा नहीं है) उस समय की जाती है जब लोक सभा का विघटन हो गया है या लोक सभा का विघटन इस खंड में निर्दिष्ट एक मास की अवधि के दौरान हो जाता है और यदि उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प राज्य सभा द्वारा पारित कर दिया गया है, किंतु ऐसी उद्घोषणा के संबंध में कोई संकल्प लोक सभा द्वारा उस अवधि की समाप्ति से पहले पारित नहीं किया गया है तो, उद्घोषणा उस तारीख से जिसको लोक सभा अपने पुनर्गठन के पश्चात् प्रथम बार बैठती है, तीस दिन की समाप्ति पर, प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उक्त तीस दिन की अवधि की समाप्ति से पहले उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प लोक सभा द्वारा भी पारित नहीं कर दिया जाता है ।

---

1. आपात उपबंध और उनका लागू होना विषयक साधारण अध्ययन के लिए दुर्गादास बसु "इंट्रोडक्शन टू दि कांस्टीट्यूशन आफ इंडिया", नवा संस्करण (प्रेंटिस हाल आफ इंडिया), पृष्ठ 302 और उससे आगे पढ़ें ।
2. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से "आभ्यंतरिक अशांति" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
3. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से अंतःस्थापित ।
4. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से जोड़ा गया ।
5. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से प्रतिस्थापित ।

[5](5) इस प्रकार अनुमोदित उद्घोषणा, यदि वापस नहीं ली जाती है तो, खंड (4) के अधीन उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाले संकल्पों में से दूसरे संकल्प के पारित किए जाने की तारीख से छह मास की अवधि की समाप्ति पर प्रवर्तन में नहीं रहेगी :

परंतु यदि और जितनी बार ऐसी उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प संसद् के दोनों सदनों द्वारा पारित कर दिया जाता है तो और उतनी बार वह उद्घोषणा, यदि वापस नहीं ली जाती है तो, उस तारीख से जिसको वह इस खंड के अधीन अन्यथा प्रवर्तन में नहीं रहती, छह मास की और अवधि तक प्रवृत्त बनी रहेगी :

परंतु यह और कि यदि लोक सभा का विघटन छह मास की ऐसी अवधि के दौरान हो जाता है और ऐसी उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प राज्य सभा द्वारा पारित कर दिया गया है, किंतु ऐसी उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने के संबंध में कोई संकल्प लोक सभा द्वारा उक्त अवधि के दौरान पारित नहीं किया गया है तो, उद्घोषणा उस तारीख से जिसको लोक सभा अपने पुनर्गठन के पश्चात् प्रथम बार बैठती है, तीस दिन की समाप्ति पर, प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उक्त तीस दिन की अवधि की समाप्ति से पहले उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला सकल्प लोक सभा द्वारा भी पारित नहीं कर दिया जाता है ।

[5](6) खंड (4) और खंड (5) के प्रयोजनों के लिए, संकल्प संसद् के किसी सदन द्वारा उस सदन की कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उस सदन के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों में से कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा ही पारित किया जा सकेगा ।

[5](7) पूर्वगामी खंडों में किसी बात के होते हुए भी, यदि लोक सभा खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा या ऐसी उद्घोषणा में परिवर्तन करने वाली उद्घोषणा का, यथास्थिति, अननुमोदन या उसे प्रवृत्त बनाए रखने का अननुमोदन करने वाला संकल्प पारित कर देती है तो राष्ट्रपति ऐसी उद्घोषणा को वापस ले लेगा ।

[5](8) जहां खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा या ऐसी उद्घोषणा में परिवर्तन करने वाली उद्घोषणा का, यथास्थिति, अननुमोदन या उसको प्रवृत्त बनाए रखने का अननुमोदन करने वाले संकल्प को प्रस्तावित करने के अपने आशय की सूचना लोक सभा की कुल सदस्य संख्या के कम से कम दसवें भाग द्वारा हस्ताक्षर करके लिखित रूप में, —

(क) यदि लोक सभा सत्र में है तो अध्यक्ष को, या

(ख) यदि लोक सभा सत्र में नही है तो राष्ट्रपति को,

दी गई है वहां ऐसे संकल्प पर विचार करने के प्रयोजन के लिए लोक सभा की विशेष बैठक, यथास्थिति, अध्यक्ष या राष्ट्रपति को ऐसी सूचना प्राप्त होने की तारीख से चौदह दिन के भीतर की जाएगी ।

(9) इस अनुच्छेद द्वारा राष्ट्रपति को प्रदत्त शक्ति के अंतर्गत, युद्ध या बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह के अथवा युद्ध या बाह्य आक्रमण या [2]सशस्त्र विद्रोह का संकट सन्निकट होने के विभिन्न आधारों पर विभिन्न उद्घोषणाएं करने की शक्ति होगी चाहे राष्ट्रपति ने खंड (1) के अधीन पहले ही कोई उद्घोषणा की है या नहीं और ऐसी उद्घोषणा प्रवर्तन में है या नहीं ।[6-7]

6. संविधान (अड़तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से यथा अंतःस्थापित खंड (4), संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से, परिवर्तनों सहित, खंड (9) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया ।

7. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा यथा संशोधित अनुच्छेद 352 के पाठ के लिए, दुर्गादास बसु *"कांस्टीट्यूशनल लॉ आफ इंडिया"* (प्रेंटिस हाल आफ इंडिया), प्रथम संस्करण, 1977, पृष्ठ 419-20 देखिए ।

44वें संशोधन अधिनियम द्वारा यथासंशोधित अनुच्छेद 352 का विश्लेषण — अ. *आपात की उद्घोषणा के लिए आधार* — 1. राष्ट्रपति अनुच्छेद 352 के अधीन आपात की उद्घोषणा निम्नलिखित में से किसी भी आधार पर सकते हैं: (i) युद्ध या बाह्य आक्रमण, या (ii) सशस्त्र विद्रोह । यदि इन दोनों परिस्थितियों के कारण भारत या उसके किसी भाग की सुरक्षा संकट में है [खंड (1)] ।

2. यह उद्घोषणा उस समय भी की जा सकती है जब कि युद्ध बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह वास्तव में हो गया है और उस समय भी जब कि उसका संकट सन्निकट है [अनुच्छेद 352(1) का स्पष्टीकरण] ।

3. विभिन्न आधारों पर विभिन्न उद्घोषणाएं की जा सकती हैं । एक उद्घोषणा के रहते हुए भी दूसरे आधार पर दूसरी उद्घोषणा हो सकती है [खंड (9)] ।

4. यह आवश्यक नहीं कि उद्घोषणा का विस्तार संपूर्ण भारत पर हो । उद्घोषणा को विनिर्दिष्ट राज्यक्षेत्र तक सीमित भी किया जा सकता है [खंड (1)]

आ. *उद्घोषणा की प्रक्रिया* — 1 राष्ट्रपति ऐसी उद्घोषणा तभी कर सकता है जब उसका यह समाधान हो जाता है कि भारत या उसके राज्यक्षेत्रों के किसी भाग को ऐसा संकट है या संकट सन्निकट है । इस संकट के आधार पूर्वोक्त बातें हो सकती हैं [खंड (1)] ।

2. राष्ट्रपति का समाधान उसका व्यक्तिगत समाधान नहीं है । उसका समाधान तभी हो सकता है जब मंत्रिमंडल स्तर के संघ के मंत्रियों ने प्रधान मंत्री के नेतृत्व में उससे लिखित रूप में यह सिफारिश की है कि वह ऐसी घोषणा करे [खंड (3)] ।

"प्रधान मंत्री और मंत्रिमंडलीय स्तर के अन्य मंत्री" शब्दों से ऐसा प्रतीत होता है कि राष्ट्रपति तभी कार्य करेगा जब मंत्रिमंडल का एकमत से यह निर्णय हो और सभी मंत्रिमंडलीय स्तर के मंत्रियों के उस संसूचना पर हस्ताक्षर होने चाहिए ।

3 उद्घोषणा उसके निकाले जाने की तारीख से एक मास की अवधि के पश्चात् प्रवृत्त नहीं रहेगी जब तक कि उस अवधि के समाप्त होने के पहले दोनों सदनों ने संकल्प द्वारा उसका अनुमोदन न कर दिया हो [खंड (4)] ।

4. विद्यमान उद्घोषणा में परिवर्तन करने की प्रक्रिया भी वही है जो ऊपर दी गई है [खंड (3) और (4)] ।

इ. *उद्घोषणा का वापस लिया जाना* — 1. 44वें संशोधन अधिनियम, 1978 तक उद्घोषणा के वापस लेने पर संसद् का कोई नियंत्रण नहीं था । संकल्प द्वारा उद्घोषणा का अनुमोदन कर देने पर संसद् के सदन निःशक्त हो जाते थे ।

2. 44वें संशोधन के पश्चात् अनुच्छेद 352 के अधीन उद्घोषणा निम्नलिखित रीति से समाप्त हो सकती है ।

(क) उद्घोषणा, उसके निकाले जाने की तारीख से एक मास की समाप्ति पर निष्प्रभाव हो जाती है यदि उस अवधि की समाप्ति के पहले ही संसद् के दोनों सदन संकल्प द्वारा उसका अनुमोदन नहीं कर देते हैं । यदि उद्घोषणा निकालने की तारीख को या उसके एक मास के भीतर लोक सभा का विघटन हो गया है तो उद्घोषणा सदन के पुनर्गठन के बाद उसकी पहली बैठक की तारीख से तीस दिन तक बनी रहेगी किंतु यह भी तभी होगा जब राज्य सभा ने इस बीच संकल्प द्वारा उसका अनुमोदन कर दिया हो [खंड (4)] ।

(ख) संसद् के दोनों सदनों द्वारा संकल्प द्वारा उसका अनुमोदन हो जाने पर वह उस तारीख से छह मास तक बनी रहेगी । अर्थात् वह संकल्प की तारीख से ठीक छह मास पश्चात् समाप्त होगी [खंड (5)] ।

(ग) खंड (4) और (5) के अधीन ऐसा प्रत्येक संकल्प सदन के विशेष बहुमत द्वारा पारित किया जाना चाहिए [खंड (6)] ।

(घ) जब कभी लोक सभा उद्घोषणा के निकाले जाने का या उसके बने रहने का निरनुमोदन करने का संकल्प पारित करती है तब राष्ट्रपति को वापस लेने की उद्घोषणा निकालनी पड़ेगी [खंड (7)] । ऐसे निरनुमोदन का संकल्प पारित करने के लिए लोक सभा की विशेष बैठक आहूत करने के पहले लोक सभा के एक बटा दस से अन्यून सदस्यों को यह शक्ति दी गई है कि वे लोक सभा के अध्यक्ष या राष्ट्रपति को लिखित सूचना देकर इस प्रयोजन के लिए सदन की विशेष बैठक बुलाने को कहें [खंड (8)] । यथास्थिति, अध्यक्ष या राष्ट्रपति को ऐसी सूचना के तामील होने की तारीख से चौदह दिन के भीतर विशेष बैठक बुलाई जाएगी ।

खंड (1) — यह आवश्यक नहीं है कि राष्ट्रपति उद्घोषणा में यह उल्लेख करे कि आपात के बारे में उसका समाधान हो गया है ।[8]

भारत के किसी भाग के बारे में आपात की उद्घोषणा — खंड (1) में प्रयुक्त शब्द "इस आशय की" से, एक समय, यह विवाद हुआ कि क्या अनुच्छेद 352 के अधीन आपात की उद्घोषणा संपूर्ण भारत की बाबत होनी चाहिए । यह तर्क दिया गया कि भारत के राज्यक्षेत्र में किसी भाग में कोई गड़बड़ी होती है तो पूरे भारत की सुरक्षा पर इसका प्रभाव पड़ेगा । 1975 तक की गई आपात की सभी उद्घोषणाओं का विस्तार संपूर्ण भारत पर था । 42वें (संशोधन) अधिनियम, 1976 में यह स्पष्ट कर दिया है कि जब विक्षोभ या बाह्य आक्रमण किसी विशिष्ट क्षेत्र तक सीमित है तो आपात की उद्घोषणा भी उसी क्षेत्र के बारे में की जा सकती है । भारत के शेष भाग में सामान्य परिस्थितियो पर उसका प्रभाव नहीं पड़ेगा ।[9]

353. **जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब —**

आपात की उद्घोषणा का प्रभाव ।

(क) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार किसी राज्य को इस बारे में निदेश देने तक होगा कि वह राज्य अपनी कार्यपालिका शक्ति का किस रीति से प्रयोग करे;

(ख) किसी विषय के संबंध में विधियां बनाने की संसद् की शक्ति के अंतर्गत, इस बात के होते हुए भी कि वह संघ सूची में प्रगणित विषय नहीं है, ऐसी विधियां बनाने की शक्ति होगी जो उस विषय के संबंध में संघ को या संघ के अधिकारियों और प्राधिकारियों को शक्तियां प्रदान करती हैं और उन पर कर्तव्य अधिरोपित करती हैं या शक्तियों का प्रदान किया जाना और कर्तव्यों का अधिरोपित किया जाना प्राधिकृत करती हैं :

[10]*परंतु जहां आपात की उद्घोषणा भारत के राज्यक्षेत्र के केवल किसी भाग में प्रवर्तन में है वहां यदि और जहां तक भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा, भारत के राज्यक्षेत्र के उस भाग में या उसके संबंध में, जिसमें आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, होने वाले क्रियाकलाप के कारण संकट में है तो और वहां तक, —*

(i) खंड (क) के अधीन निदेश देने की संघ की कार्यपालिका शक्ति का, और

(ii) खंड (ख) के अधीन विधि बनाने की संसद् की शक्ति का,

विस्तार किसी ऐसे राज्य पर भी होगा जो उस राज्य से भिन्न है जिसमें या जिसके किसी भाग में आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है ।

परंतुक — 42वें संशोधन द्वारा जो यह परंतुक जोड़ा गया है वह अनुच्छेद 352(1) में किए गए संशोधन का अनुपूरक है । इसके द्वारा आपात की उद्घोषणा भारत के राज्यक्षेत्र के किसी भाग तक ही सीमित की जा सकती है या पहले से घोषित उद्घोषणा को उपान्तरित

---

8. *लखनपाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1967 एस.सी. 243 (*244*) ।
9. अनुच्छेद 353, 358 के नए परंतुकों के उपबंधों के अधीन रहते हुए ।
10. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से परंतुक जोड़ा गया ।

करके इस प्रकार सीमित किया जा सकता है । इसमें यह उपबंध है कि आपात की दशा में उसे किसी विशिष्ट क्षेत्र तक सीमित किया जाएगा । किंतु संघ की अनुच्छेद 353(क) के अधीन राज्य को निदेश देने की अध्यारोही शक्ति या अनुच्छेद 353(ख) के अधीन राज्य के विषयों के संबंध में विधि बनाने की शक्ति का विस्तार उन राज्यों पर भी होगा जिन पर आपात की उद्घोषणा लागू नहीं होती है ।

एक प्रकार से देखा जाए तो अनुच्छेद 352 में जो संशोधन किया गया है जिसके द्वारा भारत के किसी भाग की बाबत ही उद्घोषणा की जा सकती है उसे इस परंतुक में कुछ छोटा कर दिया है । किंतु इसे इसलिए रखा गया है जिससे कि आपात वाले क्षेत्र में आपात को प्रभावी ढंग से लागू किया जा सके और उससे जुड़े हुए क्षेत्रों में अवांछनीय गतिविधियों को रोका जा सके । वे लोग इस बात का फायदा नहीं उठा सकें कि यह उद्घोषणा उस स्थान को लागू नहीं होती है जहां पर अवांछनीय क्रियाकलाप किए जा रहे हैं ।

जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब राजस्वों के वितरण संबंधी उपबंधों का लागू होना ।

354. (1) जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, यह निदेश दे सकेगा कि इस संविधान के अनुच्छेद 268 से अनुच्छेद 279 के सभी या कोई उपबंध ऐसी किसी अवधि के लिए, जो उस आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए और जो किसी भी दशा में उस वित्तीय वर्ष की समाप्ति से आगे नहीं बढ़ेगी, जिसमें ऐसी उद्घोषणा प्रवर्तन में नहीं रहती है, ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होंगे जो वह ठीक समझे ।

(2) खंड (1) के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, किए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

बाह्य आक्रमण और आंतरिक अशांति से राज्य की संरक्षा करने का संघ का कर्तव्य ।

355. संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह बाह्य आक्रमण और आंतरिक अशांति से प्रत्येक राज्य की संरक्षा करे और प्रत्येक राज्य की सरकार का इस संविधान के उपबंधों के अनुसार चलाया जाना सुनिश्चित करे ।

राज्यों में सांविधानिक तंत्र के विफल हो जाने की दशा में उपबंध ।

356. (1) यदि राष्ट्रपति का, किसी राज्य के राज्यपाल [11]* से प्रतिवेदन मिलने पर या अन्यथा, यह समाधान हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें उस राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता है तो राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा —**

(क) उस राज्य की सरकार के सभी या कोई कृत्य और राज्यपाल [11]* में या राज्य के विधान मंडल से भिन्न राज्य के किसी निकाय या प्राधिकारी में निहित या उसके द्वारा प्रयोक्तव्य सभी या कोई शक्तियां अपने हाथ में ले सकेगा;**

(ख) यह घोषणा कर सकेगा कि राज्य के विधान मंडल की शक्तियां संसद् द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन प्रयोक्तव्य होंगी;

(ग) राज्य के किसी निकाय या प्राधिकारी से संबंधित इस संविधान के किन्हीं उपबंधों के प्रवर्तन को पूर्णतः या भागतः निलंबित करने के लिए उपबंधों सहित ऐसे आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध कर सकेगा जो उद्घोषणा के उद्देश्यों को प्रभावी करने के लिए राष्ट्रपति को आवश्यक या वांछनीय प्रतीत हों :

परंतु इस खंड की कोई बात राष्ट्रपति को उच्च न्यायालय में निहित या उसके द्वारा प्रयोक्तव्य

11. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "राजप्रमुख" के प्रति निर्देशों का लोप किया गया ।

किसी शक्ति को अपने हाथ में लेने या उच्च न्यायालयों से संबंधित इस संविधान के किसी उपबंध के प्रवर्तन को पूर्णतः या भागतः निलंबित करने के लिए प्राधिकृत नहीं करेगी ।

(2) ऐसी कोई उद्घोषणा किसी पश्चात्‌वर्ती उद्घोषणा द्वारा वापस ली जा सकेगी या उसमें परिवर्तन किया जा सकेगा ।

(3) इस अनुच्छेद के अधीन की गई प्रत्येक उद्घोषणा संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी और जहां वह पूर्ववर्ती उद्घोषणा को वापस लेने वाली उद्घोषणा नहीं है वहां वह दो मास की समाप्ति पर प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले संसद् के दोनों सदनों के संकल्पों द्वारा उसका अनुमोदन नहीं कर दिया जाता है :

परंतु यदि ऐसी कोई उद्घोषणा (जो पूर्ववर्ती उद्घोषणा को वापस लेने वाली उद्घोषणा नहीं है) उस समय की जाती है जब लोक सभा का विघटन हो गया है या लोक सभा का विघटन इस खंड में निर्दिष्ट दो मास की अवधि के दौरान हो जाता है और यदि उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प राज्य सभा द्वारा पारित कर दिया गया है, किंतु ऐसी उद्घोषणा के संबंध में कोई संकल्प लोक सभा द्वारा उस अवधि की समाप्ति से पहले पारित नहीं किया गया है तो, उद्घोषणा उस तारीख से जिसको लोक सभा अपने पुनर्गठन के पश्चात् प्रथम बार बैठती है, तीस दिन की समाप्ति पर, प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उक्त तीस दिन की अवधि की समाप्ति से पहले उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प लोक सभा द्वारा भी पारित नहीं कर दिया जाता है ।

(4) इस प्रकार अनुमोदित उद्घोषणा, यदि वापस नहीं ली जाती है तो, [12]*ऐसी उद्घोषणा के किए जाने की तारीख से छह मास* **की अवधि की समाप्ति पर प्रवर्तन में नहीं रहेगी :**

परंतु यदि और जितनी बार ऐसी उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प संसद् के दोनों सदनों द्वारा पारित कर दिया जाता है तो और उतनी बार वह उद्घोषणा, यदि वापस नहीं ली जाती है तो, उस तारीख से जिसको वह इस खंड के अधीन अन्यथा प्रवर्तन में नहीं रहती, [12]*छह मास* **की और अवधि तक प्रवृत्त बनी रहेगी, किंतु ऐसी उद्घोषणा किसी भी दशा में तीन वर्ष से अधिक प्रवृत्त नहीं रहेगी :**

परंतु यह और कि यदि लोक सभा का विघटन [12]*छह मास* **की ऐसी अवधि के दौरान हो जाता है और ऐसी उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प राज्य सभा द्वारा पारित कर दिया गया है, किंतु ऐसी उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने के संबंध में कोई संकल्प लोक सभा द्वारा उक्त अवधि के दौरान पारित नहीं किया गया है तो, उद्घोषणा उस तारीख से, जिसको लोक सभा अपने पुनर्गठन के पश्चात् प्रथम बार बैठती है, तीस दिन की समाप्ति पर, प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उक्त तीस दिन की अवधि की समाप्ति से पहले उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प लोक सभा द्वारा भी पारित नहीं कर दिया जाता है ।**

[12क]*परंतु यह भी कि पंजाब राज्य की बाबत 11 मई, 1987 को खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा की दशा में, इस खंड के पहले परंतुक मे "तीन वर्ष" के प्रति निर्देश का इस प्रकार अर्थ लगाया जाएगा मानो वह* [12ख]*[पांच वर्ष] के प्रति निर्देश हो ।*

[13]*(5) खंड (4) में किसी बात के होते हुए भी, खंड (3) के अधीन अनुमोदित उद्घोषणा के किए जाने की तारीख से एक वर्ष की समाप्ति से आगे किसी अवधि के लिए ऐसी उद्घोषणा*

---

12. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से "छह मास" की अवधि जो बढ़ाकर "एक वर्ष" कर दी गई थी, उसे चवालीसवां संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से पुनः "छह मास" कर दिया गया ।

12क. खंड (4) का दूसरा परंतुक, संविधान (चौंसठवां संशोधन) अधिनियम, 1990 द्वारा तारीख 16-4-1990 से अंतःस्थापित किया गया ।

12ख. संविधान (अड़सठवां संशोधन) अधिनियम, 1991 द्वारा तारीख 12-3-1991 से प्रतिस्थापित ।

13. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से खंड (5) के स्थान पर प्रतिस्थापित, जो संविधान (अड़तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से अंतःस्थापित किया गया था ।

को प्रवृत्त बनाए रखने के संबंध में कोई संकल्प संसद् के किसी सदन द्वारा तभी पारित किया जाएगा जब —

(क) ऐसे संकल्प के पारित किए जाने के समय आपात की उद्घोषणा, यथास्थिति, संपूर्ण भारत में अथवा संपूर्ण राज्य या उसके किसी भाग में प्रवर्तन में है; और

(ख) निर्वाचन आयोग यह प्रमाणित कर देता है कि ऐसे संकल्प में विनिर्दिष्ट अवधि के दौरान खंड (3) के अधीन अनुमोदित उद्घोषणा को प्रवृत्त बनाए रखना, संबंधित राज्य की विधान सभा के साधारण निर्वाचन कराने में कठिनाइयों के कारण, आवश्यक है :

[14]*परंतु इस खंड की कोई बात पंजाब राज्य की बाबत 11 मई, 1987 को खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा को लागू नहीं होगी ।*

उद्घोषणा का न्यायनिर्णय होना — 1 संविधान (38वां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा खंड (5) अंतःस्थापित किया गया था । इसके स्थान पर संविधान 44वां संशोधन, 1978 से दूसरा खंड रखा गया है । मूल खंड में यह उपबंध था कि अनुच्छेद 356 के अधीन उद्घोषणा का न्यायिक पुनर्विलोकन किसी आधार पर नहीं हो सकता ।

2 यह सांविधानिक प्रतिबंध अब हटा दिया गया है । अब अनुच्छेद 356 के अधीन उद्घोषणा का न्यायिक पुनर्विलोकन उसी आधार पर हो सकता है जिस पर व्यक्तिगत समाधान पर आधारित कार्यपालिका का कोई निर्णय प्रश्नगत किया जा सकता है जैसे, —

(क) संविधान के अनुच्छेद 356 द्वारा शक्ति जिस प्रयोजन के लिए दी गई है उससे उद्घोषणा के आधार का कोई संबंध नहीं है या वह उससे सुसंगत नहीं है ।[15] दूसरे शब्दों में जहां राष्ट्रपति के समाधान और बताए गए कारणों के बीच कोई युक्तियुक्त संबंध नहीं है ।[15] क्योंकि ऐसी परिस्थिति में यह कहा जा सकता है कि राष्ट्रपति का समाधान नहीं हुआ है और अनुच्छेद 356 के अधीन शक्ति के प्रयोग के लिए समाधान का होना पुरोभावी शर्त है ।

(ख) अनुच्छेद 356 के अधीन शक्ति का प्रयोग दुर्भावपूर्ण है[16] क्योंकि ऐसे कानूनी आदेश का जो सद्भावपूर्ण नहीं है विधि में कोई अस्तित्व नहीं होता ।[16]

खंड (1) : उपखंड (क) — राष्ट्रपति, राज्य सरकार, के समस्त कृत्य और शक्तियां स्वयं ग्रहण करते हुए यह घोषणा कर सकता है कि वह अपने कृत्यों का प्रयोग राज्यपाल के माध्यम से करेगा या यह कह सकता है कि अनुच्छेद 356(1)(क) के अधीन उसके द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियों का प्रयोग राज्यपाल द्वारा किया जाएगा किंतु यह राष्ट्रपति के अधीक्षण, निदेश और नियंत्रण के अधीन होगा । ऐसा होने पर राज्यपाल के कृत्य राष्ट्रपति के ही कृत्य माने जाएंगे ।[17]

खंड (3) : उद्घोषणा का पर्यवसान — 1. इस खंड में यह बताया गया है कि किस-किस प्रकार से अनुच्छेद 356 के अधीन उद्घोषणा समाप्त हो सकती है । यह स्पष्ट है कि खंड (1) के उपखंड (क) से (ग) तक के उपखंडों के अधीन प्रयोग की जाने वाली शक्तियां तभी विधिमान्य होंगी जब उद्घोषणा की समाप्ति के पहले उनका बताई गई रीति से प्रयोग किया जाता है ।

2 यह प्रश्न उपस्थित हुआ था कि क्या अनुच्छेद 357(1)(क) के साथ पठित

14. परंतुक संविधान (चौसठवां संशोधन) अधिनियम, 1990 द्वारा तारीख 16-4-1990 से अंतःस्थापित ।

15. *राजस्थान राज्य* बनाम *भारत संघ*, ए. 1977 एस.सी. 1361 [पैरा 124 (न्या. चंद्रचूड़), 144 (न्या. भगवती और गुप्ता)] । [*राव* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 710 (पैरा 27) में अनुसरण किया गया] ।

16. *राजस्थान राज्य* बनाम *भारत संघ*, ए 1977 एस.सी. 1361, पैरा 123 (न्या. चंद्रचूड़); 170 (न्या. गोस्वामी); 178-79 (न्या. उंटवालिया); 203, 206, 208 (न्या. फजल अली) ।

17. *एसोसिएटेड ट्रांसपोर्टर्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 मद्रास 173 ।

अनुच्छेद 356(1)(ख) के अधीन राष्ट्रपति को प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए जब राष्ट्रपति द्वारा कोई आदेश दिया जाता है जो उद्घोषणा की समाप्ति की तारीख के पश्चात् राजपत्र में प्रकाशित होता है तो ऐसा आदेश विधिमान्य होगा या नहीं । उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि राजपत्र में पश्चात्वर्ती तारीख में प्रकाशित होना तात्विक नहीं है क्योंकि आदेश में यह अभिव्यक्त रूप से कहा गया है कि वह तुरन्त प्रवृत्त होगा अर्थात् उस तारीख से जिसको राष्ट्रपति ने आदेश दिया था ।[18]

अनुच्छेद 356 के अधीन की गई उद्घोषणा के अधीन विधायी शक्तियों का प्रयोग ।

357. (1) **जहां अनुच्छेद 356 के खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा द्वारा यह घोषणा की गई है कि राज्य के विधान मंडल की शक्तियां संसद् द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन प्रयोक्तव्य होंगी वहां —**

(क) राज्य के विधान मंडल की विधि बनाने की शक्ति राष्ट्रपति को प्रदान करने की और इस प्रकार प्रदत्त शक्ति का किसी अन्य प्राधिकारी को, जिसे राष्ट्रपति इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, ऐसी शर्तों के अधीन, जिन्हें राष्ट्रपति अधिरोपित करना ठीक समझे, प्रत्यायोजन करने के लिए राष्ट्रपति को प्राधिकृत करने की संसद् को,

(ख) संघ या उसके अधिकारियों और प्राधिकारियों को शक्तियां प्रदान करने या उन पर कर्तव्य अधिरोपित करने के लिए अथवा शक्तियों का प्रदान किया जाना या कर्तव्यों का अधिरोपित किया जाना प्राधिकृत करने के लिए, विधि बनाने की संसद् को अथवा राष्ट्रपति को या ऐसे अन्य प्राधिकारी को, जिसमें ऐसी विधि बनाने की शक्ति उपखंड (क) के अधीन निहित है,

(ग) जब लोक सभा सत्र में नहीं है तब राज्य की संचित निधि में से व्यय के लिए, संसद् की मंजूरी लंबित रहने तक ऐसे व्यय को प्राधिकृत करने की राष्ट्रपति को,

क्षमता होगी ।

(2) [19]*राज्य के विधान मंडल की शक्ति का प्रयोग करते हुए संसद् द्वारा, अथवा राष्ट्रपति या खंड (1) के उपखंड (क) में निर्दिष्ट अन्य प्राधिकारी द्वारा, बनाई गई ऐसी विधि, जिसे संसद् अथवा राष्ट्रपति या ऐसा अन्य प्राधिकारी अनुच्छेद 356 के अधीन की गई उद्घोषणा के अभाव में बनाने के लिए सक्षम नहीं होता, उद्घोषणा के प्रवर्तन में न रहने के पश्चात् तब तक प्रवृत्त बनी रहेगी जब तक सक्षम विधान मंडल या अन्य प्राधिकारी द्वारा उसका परिवर्तन या निरसन या संशोधन नहीं कर दिया जाता है ।*

खंड (1) — इस खंड में यह उपबंध है कि अनुच्छेद 352(1) के अधीन आपात की उद्घोषणा के प्रवृत्त रहने के दौरान विधायी शक्तियों का परिसंघ में जो विभाजन किया गया है वह विभिन्न उपखंडों में उपबंधित रीति से उपांतरित हो जाएगा ।[20]

यद्यपि अनुच्छेद 357(1) के अधीन विधियां राष्ट्रपति द्वारा बनाई जाती हैं किंतु वे पूर्ण रूप से विधान ही होती हैं ।[21]

खंड (2) : आपात के दौरान संघ द्वारा बनाई गई विधियों का बने रहना — 1. अनुच्छेद 356(1)(ख) और 357(1)(क) के अधीन राज्य की विधायी शक्ति का प्रयोग संघ द्वारा किया जा सकता है । अनुच्छेद 357 के *मूल खंड (2)* के अधीन ये विधियां उद्घोषणा के वापस लिए जाने से एक वर्ष की अवधि की समाप्ति पर स्वतः ही प्रवृत्त नहीं रह जाती थीं ।

2. राज्य विषय से संबंधित ऐसी संघ विधियां पूर्वोक्त एक वर्ष की समय सीमा के समाप्त होने पर व्यपगत हो जाती थीं इसलिए यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि क्या ऐसी विधि

18. *राम प्रसाद* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1607 (*1610*) ।
19. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से प्रतिस्थापित ।
20. *अपर जिला मजिस्ट्रेट* बनाम *शुक्ला*, ए. 1976 एस.सी. 1207 (पैरा 39) ।
21. *राय* बनाम *भारत संघ*, ए. 1982 एस.सी. 710 (पैरा 15) ।

के अधीन जो किया गया था वह विधि के समाप्त होने पर भी बना रहेगा । खंड (2) के मूलरूप में 'की गई किसी बात या लोप' की व्यावृत्ति की गई थी । इस उपबंध से यह विवाद उत्पन्न हुआ कि "की गई बात या लोप" का क्या अर्थ है ।[22] कारण यह था कि ऐसी विधि का विधान मंडल द्वारा अभिव्यक्त रूप से निरसन नहीं होता था ।

3. 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा खंड (2) का जो नया प्ररूप बनाया गया है उससे यह विवाद अब नहीं उठेगा । इस खंड में यह उपबंध है कि यद्यपि आपात की उद्घोषणा के वापस लिए जाने के पश्चात् संघ को राज्य से संबंधित विषयों पर विधान बनाने की शक्ति नहीं रहेगी तो भी उद्घोषणा के विद्यमान रहते हुए जो विधियां बनाई गई थीं वे तब तक प्रवृत्त बनी रहेंगी जब तक कि राज्य विधान मंडल उन्हें परिवर्तित या निरसित न करे । दूसरे शब्दों में संघ द्वारा आपात के समय सातवीं अनुसूची की राज्य सूची से संबंधित राज्य विधान मंडल की शक्तियों के प्रयोग से बनाई गई विधियों के प्रवर्तन को समाप्त करने के लिए राज्य विधान मंडल का स्पष्ट नकारात्मक कार्य आवश्यक होगा । यह भी परिसंघ की शक्ति के विस्तार का एक उदाहरण है, यद्यपि है यह बड़े तकनीकी रूप में ।

आपात के दौरान अनुच्छेद 19 के उपबंधों का निलबन ।

358. (1) [23]*जब युद्ध या बाह्य आक्रमण के कारण भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा के संकट मे होने की घोषणा करने वाली आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है* **तब अनुच्छेद 19 की कोई बात भाग 3 में यथापरिभाषित राज्य की कोई ऐसी विधि बनाने की या कोई ऐसी कार्यपालिका कार्यवाही करने की शक्ति को, जिसे वह राज्य उस भाग में अंतर्विष्ट उपबंधों के अभाव में बनाने या करने के लिए सक्षम होता, निर्बन्धित नहीं करेगी, किंतु इस प्रकार बनाई गई कोई विधि उद्घोषणा के प्रवर्तन में न रहने पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के सिवाय तुरंत प्रभावहीन हो जाएगी, जिन्हें विधि के इस प्रकार प्रभावहीन होने के पहले किया गया है या करने का लोप किया गया है** :

[24]*परंतु* [23]*जहां आपात की ऐसी उद्घोषणा भारत के राज्यक्षेत्र के केवल किसी भाग में प्रवर्तन में है वहां, यदि और जहां तक भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा, भारत के राज्यक्षेत्र के उस भाग में या उसके संबंध में, जिसमे आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, होने वाले क्रियाकलाप के कारण सकट में है तो और वहा तक, ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में या उसके सबंध में, जिसमें या जिसके किसी भाग में आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में नहीं है, इस अनुच्छेद के अधीन ऐसी कोई विधि बनाई जा सकेगी या ऐसी कोई कार्यपालिका कार्यवाही की जा सकेगी ।*

[25]*(2) खंड (1) की कोई बात —*

(क) किसी ऐसी विधि को लागू नही होगी जिसमें इस आशय का उल्लेख अंतर्विष्ट नहीं है कि ऐसी विधि उसके बनाए जाने के समय प्रवृत्त आपात की उद्घोषणा के संबंध में है; या

(ख) किसी ऐसी कार्यपालिका कार्यवाही को लागू नहीं होगी जो ऐसा उल्लेख अंतर्विष्ट करने वाली विधि के अधीन न करके अन्यथा की गई है ।

अनुच्छेद 358 **और** 359 — इन दो अनुच्छेदों के बीच विभेद को उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार स्पष्ट किया है,[26] —

22. तुलना कीजिए, *राम प्रसाद* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1607 (*1610*) ।
23. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से प्रतिस्थापित ।
24. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 3-1-1977 से परतुक जोड़ा गया ।
25. संविधान (चवालीसवा संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से खंड (2) अंतःस्थापित ।
26. *मखनसिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 381 ।

(i) जैसे ही अनुच्छेद 352 के अधीन आपात की उद्घोषणा की जाती है वैसे ही अनुच्छेद 19 का निलंबन हो जाता है और विधान मंडल तथा कार्यपालिका की शक्तियां उस विस्तार तक और व्यापक हो जाती हैं । यह स्थिति उद्घोषणा के विद्यमान रहने तक बनी रहती है [*किंतु यह नए खंड (2) के अधीन रहते हुए है*] । आपात की उद्घोषणा के दौरान अनुच्छेद 19 के निलंबन से वे बंधन हट जाते हैं जो अनुच्छेद 19 के द्वारा कार्यपालिका और विधायिका पर लगाए गए हैं । यदि विधान मंडल कोई विधि बनाता है या कार्यपालिका[27] कोई कार्य करती है जो अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों से संगत नहीं है तो आपात के दौरान या उसके पश्चात् भी उनकी विधिमान्यता पर आक्षेप नहीं किया जा सकता । जैसे ही उद्घोषणा प्रवृत्त नहीं रहती है वैसे ही जो विधायी अधिनियम पारित किए गए हैं और जो कार्यपालिका ने कार्यवाही की है वह उस विस्तार तक अप्रवृत्त हो जाएगी जिस तक वह अनुच्छेद 19 द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों के विपरीत है । कारण यह है कि जैसे ही आपात उठाया जाता है वैसे ही अनुच्छेद 19 अपने आप पुनरुज्जीवित हो जाएगा और प्रवृत्त हो जाएगा । अनुच्छेद 358 यह स्पष्ट करता है कि उन बातों पर जिन्हें आपात के दौरान किया गया है या करने का लोप किया गया है, आपात की समाप्ति के पश्चात् भी आक्षेप नहीं किया जा सकता । दूसरे शब्दों में प्रश्नगत अवधि में अनुच्छेद 19 का निलंबन पूरी तरह से होता है । अनुच्छेद 19 के उल्लंघन में की गई विधायी और कार्यपालिका कार्यवाहियों को आपात के समाप्त होने के पश्चात् भी प्रश्नगत नहीं किया जा सकता ।[28]

(ii) अनुच्छेद 359 में अभिव्यक्त रूप से किसी मूल अधिकार को निलंबित नहीं किया गया है ।[29] इसमें राष्ट्रपति को यह प्राधिकार दिया गया है वह आदेश निकाल कर यह घोषित कर सकता है कि उस आदेश में उल्लिखित भाग 3 के ऐसे अधिकारों को जो आदेश में उल्लिखित हैं किसी न्यायालय में प्रवृत्त कराने के लिए अभ्यावेदन करने का अधिकार निलंबित रहेगा । वह यह भी घोषित कर सकता है कि ऐसे अधिकारों को प्रवृत्त कराने के लिए न्यायालय में सभी कार्यवाहियां उद्घोषणा के प्रवृत्त रहने के दौरान निलंबित रहेंगी या उससे छोटी ऐसी अवधि के लिए निलंबित रहेंगी जो आदेश में विनिर्दिष्ट किया जाए । अनुच्छेद 359(1) द्वारा राष्ट्रपति को दी गई शक्ति के आधार पर राष्ट्रपति-आदेश निकालकर नागरिकों के न्यायालय में अभ्यावेदन करके विनिर्दिष्ट अधिकारों को प्रवृत्त कराने का उपचार रोक दिया जाता है । इन अधिकारों को अभिव्यक्त रूप से निलबित नहीं किया जाता किंतु नागरिक का उन अधिकारों को प्रवृत्त कराने के लिए न्यायालय में जाने का अधिकार छीन लिया जाता है [नए खंड (1क) के अधीन रहते हुए] ।[26]

(iii) अनुच्छेद 358 में, अनुच्छेद 19 के निलंबन के लिए उपबंध है । यह निलंबन तब तक बना रहता है जब तक आपात की उद्घोषणा प्रवृत्त रहती है । अनुच्छेद 359(1) के अधीन राष्ट्रपति आदेश से न्यायालय में अभ्यावेदन करने का अधिकार या तो उद्घोषणा की अवधि तक निलंबित रहता है या उससे छोटी ऐसी अवधि के लिए जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए ।

खंड (2) — यह 44वें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 359 में अंतःस्थापित खंड (1ख) के समान है । यह दोनों एक साथ अंतःस्थापित किए गए थे । इसके परिणामस्वरूप उसके आधार पर बनाई गई विधि या की गई कार्यवाही को अनुच्छेद 358 या अनुच्छेद 359 के अधीन संरक्षण तभी मिलेगा जब कि विधि में यह कथन हो कि यह उसके बनाए जाने के समय प्रवृत्त आपात उद्घोषणा के संबंध में है [देखिए आगे अनुच्छेद 359(1ख)] ।

---

27. *जिला कलक्टर बनाम इब्राहीम एंड कंपनी*, ए. 1970 एस.सी. 1275 (*1278*) ।

28. *अमदबलास को-आपरेटिव सोसाइटी बनाम भारत संघ*, ए. 1976 एस.सी. 958 (पैरा 26); *महाराष्ट्र राज्य बनाम लोक शिक्षण संस्था*, (1971) 2 एस.सी.सी. 410 (*419*) ।

29. *भारत संघ बनाम भानुदास*, ए. 1977 एस.सी. 1027 (पैरा 10-12) ।

विवाद अभी भी है — 1. अनुच्छेद 19 के उपबंधों के उल्लंघन में विधि बनाने की राज्य की शक्ति पर निर्बंधनों को अनुच्छेद 358 केवल आपात के दौरान निलंबित करता है । वह उद्घोषणा के पहले बनाई गई विधि की विधिमान्यता के बारे में कुछ नहीं कहता । वह यह नहीं कहता कि उस पर अनुच्छेद 19 के उपबंधों के उल्लंघन के आधार पर आक्षेप नहीं किया जा सकता ।[30]

2. न्यायालय किसी कार्यपालिका कार्य या अधीनस्थ विधान को शक्ति बाह्य होने के आधार पर शून्य घोषित कर सकते हैं यदि वह कानून के प्रविषय के बाहर है ।[31] दूसरे शब्दों में अनुच्छेद 358 के अधीन केवल वही कार्यपालिका आदेश उन्मुक्त है जो ऐसा आदेश है जो राज्य वैसे तो करने में सक्षम है किंतु अनुच्छेद 19 के कारण नहीं कर सकते थे । यदि कार्यपालिका कृत्य किसी अन्य रूप में अविधिमान्य है तो अनुच्छेद 358 के आधार पर उसे कोई उन्मुक्ति नहीं है ।[27]

आपात के दौरान भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों के प्रवर्तन का निलंबन ।

359. (1) **जहां आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है वहां राष्ट्रपति, आदेश द्वारा यह घोषणा कर सकेगा कि** [32]*(अनुच्छेद 20 और अनुच्छेद 21 को छोड़कर) भाग 3 द्वारा प्रदत्त ऐसे अधिकारों* **को प्रवर्तित कराने के लिए, जो उस आदेश में उल्लिखित किए जाएं, किसी न्यायालय को समावेदन करने का अधिकार और इस प्रकार उल्लिखित अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए किसी न्यायालय में लंबित सभी कार्यवाहियां उस अवधि के लिए जिसके दौरान उद्घोषणा प्रवृत्त रहती है या उससे लघुतर ऐसी अवधि के लिए जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, निलंबित रहेंगी ।**

[33]*(1क) जब* [32]*(अनुच्छेद 20 और अनुच्छेद 21 को छोड़कर) भाग 3 द्वारा प्रदत्त किन्हीं अधिकारों को उल्लिखित करने वाला खंड (1) के अधीन किया गया आदेश प्रवर्तन में है तब उस भाग में उन अधिकारों को प्रदान करने वाली कोई बात उस भाग में यथापरिभाषित राज्य की कोई ऐसी विधि बनाने की या कोई ऐसी कार्यपालिका कार्यवाही करने की शक्ति को, जिसे वह राज्य उस भाग में अंतर्विष्ट उपबंधों के अभाव में बनाने या करने के लिए सक्षम होता, निर्बन्धित नहीं करेगी, किंतु इस प्रकार बनाई गई कोई विधि पूर्वोक्त आदेश के प्रवर्तन में न रहने पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के सिवाय तुरंत प्रभावहीन हो जाएगी जिन्हें विधि के इस प्रकार प्रभावहीन होने के पहले किया गया है या करने का लोप किया गया है :*

[33]*परंतु जहां आपात की उद्घोषणा भारत के राज्यक्षेत्र के केवल किसी भाग में प्रवर्तन में है वहां, यदि और जहां तक भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा, भारत के राज्यक्षेत्र के उस भाग में या उसके संबंध में, जिसमें आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, होने वाले क्रियाकलाप के कारण संकट में है तो और वहां तक, ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में या उसके संबंध में, जिसमें या जिसके किसी भाग में आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में नहीं है, इस अनुच्छेद के अधीन ऐसी कोई विधि बनाई जा सकेगी या ऐसी कोई कार्यपालिका कार्यवाही की जा सकेगी ।*

[32]*(1ख) खंड (1क) की कोई बात —*

(क) किसी ऐसी विधि को लागू नहीं होगी जिसमें इस आशय का उल्लेख अंतर्विष्ट नहीं है कि ऐसी विधि उसके बनाए जाने के समय प्रवृत्त आपात की उद्घोषणा के संबंध में है; या

30. *मध्य प्रदेश राज्य बनाम भरत सिंह*, ए. 1967 एस.सी. 1170 ।
31. *चानण बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1965 पंजाब 74 *(77)* ।
32. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से अंतःस्थापित ।
33. संविधान (अड़तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से अंतःस्थापित ।

(ख) किसी ऐसी कार्यपालिका कार्यवाही को लागू नहीं होगी जो ऐसा उल्लेख अंतर्विष्ट करने वाली विधि के अधीन न करके अन्यथा की गई है ।

(2) पूर्वोक्त रूप में किए गए आदेश का विस्तार भारत के संपूर्ण राज्यक्षेत्र या उसके किसी भाग पर हो सकेगा :

[33]*परंतु जहां आपात की उद्घोषणा भारत के राज्यक्षेत्र के केवल किसी भाग में प्रवर्तन में है वहां किसी ऐसे आदेश का विस्तार भारत के राज्यक्षेत्र के किसी अन्य भाग पर तभी होगा जब राष्ट्रपति, यह समाधान हो जाने पर कि भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा, भारत के राज्यक्षेत्र के उस भाग में या उसके संबंध में, जिसमें आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, होने वाले क्रियाकलाप के कारण संकट में है, ऐसा विस्तार आवश्यक समझता है ।*

(3) खंड (1) के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, किए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखा जाएगा ।

44वां संशोधन अधिनियम का प्रभाव — इस संशोधन ने अनुच्छेद 359 में दो प्रकार से क्रांतिकारी परिवर्तन किए हैं :

(क) राष्ट्रपति आदेश से अनुच्छेद 20 और 21 द्वारा प्रदत्त अधिकारों के प्रवर्तन को निलंबित नहीं किया जा सकता । आपात की उद्घोषणा के प्रवृत्त रहते हुए भी किसी विधि या कार्यपालिका आदेश को अनुच्छेद 20 और 21 द्वारा प्रत्याभूत अधिकारों के उल्लंघन के आधार पर आक्षेप करने के लिए उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय में अभ्यावेदन करने का अधिकार बना रहेगा । इससे अब *ए.डी.एम.* बनाम *शुक्ला* में प्रकट किया गया मत लागू नहीं होगा ।[34] उसमें यह कहा गया था कि जब अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश द्वारा अनुच्छेद 21 का निलंबन किया गया है तो जिस व्यक्ति को जेल में रखा गया है या निरुद्ध किया गया है वह स्वतंत्रता पाने का अपना अधिकार खो देता है[34] और किसी भी आधार पर स्वतंत्रता की मांग नहीं कर सकता ।

(ख) अनुच्छेद 20 और 21 से भिन्न मूल अधिकारों के बारे में भी अब स्थिति यह है कि यदि किसी विधि में यह उल्लेख नहीं है कि वह आपात की उद्घोषणा के संबंध में है तो उस विधि को न्यायालय में प्रश्नगत किया जा सकेगा । विधि में ऐसे उल्लेख के अभाव में न तो उस विधि को और न उसके अधीन की गई कार्यपालिका कार्यवाही को, आपात के प्रवृत्त रहने के दौरान, मूल अधिकारों का उल्लंघन करने के आक्षेप से उन्मुक्ति होगी [खंड (1ख)] । यह खंड अनुच्छेद 358 के खंड (2) के समान है ।

अनुच्छेद 359 का प्रविषय — अनुच्छेद 359, अनुच्छेद 358 की अपेक्षा अधिक व्यापक है । अनुच्छेद 359 अपने आप ही किसी मूल अधिकार को प्रभावित नहीं करता किंतु वह राष्ट्रपति को यह शक्ति देता है कि वह संविधान के भाग 3 में उल्लिखित किसी भी मूल अधिकार के प्रवर्तन को निलंबित कर दे । जबकि अनुच्छेद 358 केवल अनुच्छेद 19 का निलंबन करता है ।[34]

अनुच्छेद 359 मूल अधिकार के प्रवर्तन के लिए ऐसी सभी लंबित कार्यवाहियों को निलंबित कर देता है जो राष्ट्रपति आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए । अनुच्छेद 358 का ऐसा कोई प्रभाव नहीं है ।[34] संक्षेप में अनुच्छेद 359 उस अनुच्छेद के अधीन निकाले गए आदेश में विनिर्दिष्ट मूल अधिकारों के उल्लंघन के आधार पर न्यायालय में अभ्यावेदन करने के अधिकार को छीन लेता है ।[34]

मूल अधिकार के प्रवर्तन के लिए कार्यवाही — 1 अनुच्छेद 359(1) के अधीन राष्ट्रपति

34. *अपर जिला मजिस्ट्रेट* बनाम *शुक्ला*, ए. 1976 एस.सी. 1207; देखिए दुर्गादास बसु "कांस्टीट्यूशन लॉ आफ इंडिया" (*प्रेंटिस हाल आफ इंडिया*), प्रथम संस्करण, पृष्ठ 428-29 ।

आदेश द्वारा जिन कार्यवाहियों को वर्जित किया जा सकता है वह ऐसी कार्यवाहियां हैं जो कोई नागरिक आदेश में उल्लिखित भाग 3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों के प्रवर्तन के लिए कर सकता है । यदि नागरिक इस आधार पर अनुतोष पाने के लिए न्यायालय में जाता है कि आदेश में विनिर्दिष्ट किसी मूल अधिकार का उल्लंघन किया गया है तो उसे सुना नहीं जाएगा । यह अवधारित करने के लिए कि क्या कोई कार्यवाही राष्ट्रपति आदेश के अंतर्गत आती है या नहीं उस कार्यवाही के प्ररूप को या उसमें दावा किए गए अनुतोष को देखना उचित नहीं होगा । उसकी विषय-वस्तु को देखना होगा और तब यह विचार करना होगा कि क्या नागरिक को अनुतोष देने के पहले यह आवश्यक होगा कि न्यायालय इस प्रश्न का उत्तर दे कि क्या विनिर्दिष्ट मूल अधिकार का उल्लंघन हुआ है । यदि विनिर्दिष्ट मूल अधिकारों के अतिलंघन के प्रश्न का उत्तर दिए बिना नागरिक को अनुतोष नहीं दिया जा सकता तो वह ऐसी कार्यवाही है जो अनुच्छेद 359(1) के अधीन आती है और उक्त अनुच्छेद के अधीन निकाले गए राष्ट्रपति आदेश के अंतर्गत आएगी । अनुच्छेद 359(1) और उसके अधीन निकाले गए राष्ट्रपति आदेश की परिधि इतनी व्यापक है कि उसके अंतर्गत सक्षम अधिकारिता वाले न्यायालय में किए गए सभी दावे आ जाएंगे । यदि यह दर्शाया जाता है तो उन दावों का न्यायनिर्णयन करने के पहले इस प्रश्न का उत्तर देना होगा कि नागरिक विनिर्दिष्ट मूल अधिकारों में से किस को प्रवृत्त कराना चाहता है ।[35]

2. न्यायालय को यह भी देखना होगा कि क्या प्रश्नगत विधि में खंड (1ख) में विनिर्दिष्ट उल्लेख है । यदि नहीं है तो अनुच्छेद 359 का अभिवाक् तत्काल अस्वीकार किया जाएगा ।

3 राष्ट्रपति आदेश में विनिर्दिष्ट मूल अधिकारों से भिन्न किसी मूल अधिकार के उल्लंघन के आधार पर किसी भी विधि या आदेश पर आक्षेप किया जा सकता है ।[36] या मूल अधिकार से भिन्न किसी अधिकार के उल्लंघन के मामले पर भी उसे प्रश्नगत किया जा सकता है[37] जैसे, अनुच्छेद 301-304 ।[38]

खंड (1क) — 1. अनुच्छेद 359 में एक कमी थी । इसमें इस बारे कोई उपबंध नहीं था कि अनुच्छेद 352 के अधीन उद्घोषणा वापस लिए जाने पर जब अनुच्छेद 359 का प्रतिबंध उठा लिया जाएगा तब क्या होगा । 38वें संशोधन अधिनियम, 1975 द्वारा इस खंड को अंतःस्थापित किया गया है । इसके और अनुच्छेद 358 के नए परंतुक के शब्द एक से हैं ।

2. अनुच्छेद 359(1) के अधीन आदेश के पर्यवसान पर निम्नलिखित परिणाम होंगे ।

(i) आपात के दौरान किसी अधिनियम या कार्यपालिका आदेश द्वारा मूल अधिकार के अतिलंघन पर न्यायालय में आक्षेप किया जा सकता है ।[35]

अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश में उल्लिखित मूल अधिकार निलंबित नहीं होते केवल उनका प्रवर्तन नहीं होता है । जब प्रतिबंध उठा लिया जाता है तब वे मूल अधिकार जिनका प्रवर्तन निलंबित था उस विधान पर प्रहार करेंगे जो अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश के न होने पर शून्य हो जाता ।[39]

दूसरे शब्दों में जो विधिमान्य दावे हैं वे आपात के कारण सदैव के लिए समाप्त नहीं हो जाते (जैसे कर्मचारी और नियोजक के बीच किसी समझौते के अधीन बोनस का दावा) । ऐसे दावे आपात के प्रवृत्त रहने के दौरान पारित विधि द्वारा निलंबित हो सकते हैं । "उन

35. *मखन सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 381 ।
36. तुलना कीजिए, *मोहन* बनाम *मुख्य आयुक्त*, ए 1964 एस.सी. 173 (*177*) ।
37. *आनंद* बनाम *मुख्य सचिव*, ए. 1966 एस.सी. 657 (*660*) ।
38. *सदानंदन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 1275 (*1278*) ।
39. *पाठक* बनाम *भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 803 (पैरा 14-15) ।

बातों के सिवाए जो पहले की गई हैं या जिनके करने का लोप किया गया है" शब्दों का संकुचित निर्वचन होना चाहिए । आपात के समाप्त होते ही अधिकार पुनः जागृत हो जाएंगे और आपात की अवधि के बाद भी उन्हें प्रवृत्त किया जा सकेगा ।[39]

(ii) ऐसी कार्यवाही में यदि कोई कानून या कार्यपालिका कृत्य को असांविधानिक घोषित किया जाता है तो भी उससे अनुच्छेद 359 के अधीन आदेश के प्रवृत्त रहने की अवधि में की गई किसी बात या लोप को अविधिमान्य नहीं ठहराया जाएगा । [आपात के दौरान किए गए अवैध कार्यों को विधिमान्य बनाने के लिए कोई उन्मुक्ति अधिनियम की आवश्यकता नहीं होगी । ऐसे कार्यों के लिए उत्तरदायी प्राधिकारियों की उन्मुक्ति के लिए भी किसी विधान की आवश्यकता नहीं होगी । इसमें शर्त यही है कि ऐसे कार्य ऐसी विधि के अधीन किए गए हों जिसमें खंड (1ख) में निर्दिष्ट उल्लेख किया गया हो ।]

इस भाग का पंजाब राज्य को लागू होना ।

359क. *संविधान (तिरसठवां संशोधन) अधिनियम, 1989 की धारा 3 द्वारा (6-1-1990 से) निरसित ।*

वित्तीय आपात के बारे में उपबंध ।

360. (1) **यदि राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिससे भारत या उसके राज्यक्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व या प्रत्यय संकट में है तो वह उद्घोषणा द्वारा इस आशय की घोषणा कर सकेगा ।**

[40]*(2) खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा —*

(क) किसी पश्चात्वर्ती उद्घोषणा द्वारा वापस ली जा सकेगी या परिवर्तित की जा सकेगी;

(ख) संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष रखी जाएगी;

(ग) दो मास की समाप्ति पर, प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले संसद् के दोनों सदनों के संकल्पों द्वारा उसका अनुमोदन नहीं कर दिया जाता है :

परंतु यदि ऐसी कोई उद्घोषणा उस समय की जाती है जब लोक सभा का विघटन हो गया है या लोक सभा का विघटन उपखंड (ग) में निर्दिष्ट दो मास की अवधि के दौरान हो जाता है और यदि उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प राज्य सभा द्वारा पारित कर दिया गया है, किंतु ऐसी उद्घोषणा के संबंध में कोई संकल्प लोक सभा द्वारा उस अवधि की समाप्ति से पहले पारित नहीं किया गया है तो उद्घोषणा उस तारीख से, जिसको लोक सभा अपने पुनर्गठन के पश्चात् प्रथम बार बैठती है, तीस दिन की समाप्ति पर प्रवर्तन में नहीं रहेगी यदि उक्त तीस दिन की अवधि की समाप्ति से पहले उद्घोषणा का अनुमोदन करने वाला संकल्प लोक सभा द्वारा भी पारित नहीं कर दिया जाता है ।

(3) उस अवधि के दौरान, जिसमें खंड (1) में उल्लिखित उद्घोषणा प्रवृत्त रहती है, संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार किसी राज्य को वित्तीय औचित्य संबंधी ऐसे सिद्धांतों का पालन करने के लिए निदेश देने तक, जो निदेशों में विनिर्दिष्ट किए जाएं और ऐसे अन्य निदेश देने तक होगा जिन्हें राष्ट्रपति उस प्रयोजन के लिए देना आवश्यक और पर्याप्त समझे ।

(4) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी —

(क) ऐसे किसी निदेश के अंतर्गत —

(i) किसी राज्य के कार्यकलाप के संबंध में सेवा करने वाले सभी या किसी वर्ग के व्यक्तियों के वेतनों और भत्तों में कमी की अपेक्षा करने वाला उपबंध,

---

40. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से खंड (2) प्रतिस्थापित ।

(ii) धन विधेयकों या अन्य ऐसे विधेयकों को, जिनको अनुच्छेद 207 के उपबंध लागू होते हैं, राज्य के विधान मंडल द्वारा पारित किए जाने के पश्चात् राष्ट्रपति के विचार के लिए आरक्षित रखने के लिए उपबंध,

हो सकेंगे;

(ख) राष्ट्रपति, उस अवधि के दौरान, जिसमें इस अनुच्छेद के अधीन की गई उद्घोषणा प्रवृत्त रहती है, संघ के कार्यकलाप के संबंध में सेवा करने वाले सभी या किसी वर्ग के व्यक्तियों के, जिनके अंतर्गत उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश हैं, वेतनों और भत्तों में कमी करने के लिए निदेश देने के लिए सक्षम होगा ।

[41]* * *

41. संविधान (अड़तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से खंड (5) अंतःस्थापित किया गया था और चवालीसवां संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 26-6-1979 से उसका लोप किया गया ।

भाग 19

प्रकीर्ण

361. (1) राष्ट्रपति अथवा राज्य का राज्यपाल या राजप्रमुख अपने पद की शक्तियों के प्रयोग और कर्तव्यों के पालन के लिए या उन शक्तियों का प्रयोग और कर्तव्यों का पालन करते हुए अपने द्वारा किए गए या किए जाने के लिए तात्पर्यित किसी कार्य के लिए किसी न्यायालय को उत्तरदायी नहीं होगा :

राष्ट्रपति और राज्यपालों और राजप्रमुखों का संरक्षण ।

परंतु अनुच्छेद 61 के अधीन आरोप के अन्वेषण के लिए संसद् के किसी सदन द्वारा नियुक्त या अभिहित किसी न्यायालय, अधिकरण या निकाय द्वारा राष्ट्रपति के आचरण का पुनर्विलोकन किया जा सकेगा :

परंतु यह और कि इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार के विरुद्ध समुचित कार्यवाहियां चलाने के किसी व्यक्ति के अधिकार को निर्बन्धित करती है ।

(2) राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल [1]* के विरुद्ध उसकी पदावधि के दौरान किसी न्यायालय में किसी भी प्रकार की दांडिक कार्यवाही संस्थित नहीं की जाएगी या चालू नहीं रखी जाएगी ।**

(3) राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल [1]* की पदावधि के दौरान उसकी गिरफ्तारी या कारावास के लिए किसी न्यायालय से कोई आदेशिका निकाली नहीं जाएगी ।**

(4) राष्ट्रपति या किसी राज्य के राज्यपाल [1]* के रूप में अपना पद ग्रहण करने से पहले या उसके पश्चात्, उसके द्वारा अपनी वैयक्तिक हैसियत में किए गए या किए जाने के लिए तात्पर्यित किसी कार्य के संबंध में कोई सिविल कार्यवाहियां, जिनमें राष्ट्रपति या ऐसे राज्य के राज्यपाल [1]*** के विरुद्ध अनुतोष का दावा किया जाता है, उसकी पदावधि के दौरान किसी न्यायालय में तब तक संस्थित नहीं की जाएंगी जब तक कार्यवाहियों की प्रकृति, उनके लिए वाद हेतुक, ऐसी कार्यवाहियों को संस्थित करने वाले पक्षकार का नाम, वर्णन, निवास-स्थान और उस अनुतोष का जिसका वह दावा करता है, कथन करने वाली लिखित सूचना, यथास्थिति, राष्ट्रपति या राज्यपाल [1]*** को परिदत्त किए जाने या उसके कार्यालय में छोड़े जाने के पश्चात् दो मास का समय समाप्त नहीं हो गया है ।**

खंड (1) : दूसरा परंतुक — कार्यपालिका का प्रधान[2] व्यक्तिगत रूप से न्यायालय की प्रक्रिया से परे है । किंतु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वह संविधान के अनुसरण में जो कार्य करता है उनकी कोई न्यायालय संवीक्षा नहीं कर सकता । परंतुक में यह स्पष्ट किया गया है कि राज्य के प्रधान की व्यक्तिगत उन्मुक्ति से सरकार के विरुद्ध वाद लाने या कोई अन्य कार्यवाही करने पर कोई निर्बन्धन नहीं है । परंतुक में यह स्पष्ट किया गया है कि अनुच्छेद 32(2) और 226 में उल्लिखित न्यायिक रिटों को सरकार के विरुद्ध जारी करने के लिए कोई वर्जना नहीं है । शर्त यह है कि उनके लागू होने के लिए आवश्यक बातें विद्यमान

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

2. संघ के प्रधान मंत्री या राज्य के मुख्य मंत्री पर भी उन्मुक्ति का विस्तार करने के लिए अनुच्छेद 361 का संशोधन करने के लिए एक विधेयक [संविधान (इकतालीसवां संशोधन) विधेयक, 1975, जो राज्य सभा द्वारा पारित किए जाने के पश्चात्, लोक सभा की प्रवर समिति के समक्ष लंबित था] लाया गया था । यह विधेयक जनवरी, 1977 में लोक सभा के विघटन पर व्यपगत हो गया । इसमें यह भी उपबंध था कि उन्मुक्ति पदावधि के पश्चात् भी बनी रहेगी ।

हों । राष्ट्रपति या राज्यपाल के विरुद्ध परमादेश नहीं दिया जा सकता । किंतु सरकार के विरुद्ध या संबद्ध अधिकारी के विरुद्ध परमादेश दिया जा सकता है ।[3] अनुच्छेद 226 में विनिर्दिष्ट रूप से सरकार का उल्लेख है ।

संसद् और राज्यों के विधान मंडलों की कार्यवाहियों के प्रकाशन का संरक्षण ।

[4]**361क.** *(1) कोई व्यक्ति संसद् के किसी सदन या, यथास्थिति, किसी राज्य की विधान सभा या किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन की किन्हीं कार्यवाहियों के सारतः सही विवरण के किसी समाचारपत्र में प्रकाशन के संबंध में किसी न्यायालय में किसी भी प्रकार की सिविल या दांडिक कार्यवाही का तब तक भागी नहीं होगा जब तक यह साबित नहीं कर दिया जाता है कि प्रकाशन विद्वेषपूर्वक किया गया है :*

परंतु इस खंड की कोई बात संसद् के किसी सदन या, यथास्थिति, किसी राज्य की विधान सभा या किसी राज्य के विधान मंडल के किसी सदन की गुप्त बैठक की कार्यवाहियों के विवरण के प्रकाशन को लागू नहीं होगी ।

(2) खंड (1) किसी प्रसारण केंद्र के माध्यम से उपलब्ध किसी कार्यक्रम या सेवा के भागरूप बेतार तारयांत्रिकी के माध्यम से प्रसारित रिपोर्टों या सामग्री के संबंध में उसी प्रकार लागू होगा जिस प्रकार वह किसी समाचारपत्र में प्रकाशित रिपोर्टों या सामग्री के संबंध में लागू होता है ।

स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद में, "समाचारपत्र" के अंतर्गत समाचार एजेंसी की ऐसी रिपोर्ट है जिसमें किसी समाचारपत्र में प्रकाशन के लिए सामग्री अंतर्विष्ट है ।

अनुच्छेद 361क का प्रविषय — 1 44वें संशोधन अधिनियम, 1978 द्वारा अनुच्छेद 361क के अन्तःस्थापित किए जाने के दूरगामी प्रभाव हैं ।

2 1976 के पहले संघ और राज्य विधान मंडलों के बीच इस बात पर भिन्न-भिन्न विधियां थी । संसद् ने संसदीय कार्यवाहियां (प्रकाशन का संरक्षण) अधिनियम, 1956 अधिनियमित किया था जो सारवान् रूप से अनुच्छेद 361क के समान था । कुछ राज्य विधान मंडलो ने पूर्वोक्त संसदीय अधिनियम के समान विधि बनाई थी किंतु शेष विधान मंडलों में भारतीय दंड संहिता की धारा 499 से कोई छूट नहीं थी चाहे मानहानि राज्य विधान मंडल की कार्यवाहियों के प्रकाशन से ही हुई हो ।[5]

3 आपात के दौरान श्रीमती गांधी की सरकार को यह लगा कि उच्च पदधारियों को प्रेस में मानहानि कारक प्रकाशनों से संरक्षण दिया जाना चाहिए चाहे वे संसद् की कार्यवाही की रिपोर्ट से ही संबंधित क्यों न हों । इसलिए संसदीय कार्यवाही (प्रकाशन संरक्षण) अधिनियम, 1956 का एक अध्यादेश द्वारा निरसन किया गया और बाद में 1976 में अध्यादेश के स्थान पर एक अधिनियम बनाया गया ।

4 जनता सरकार के सत्ता में आने के पश्चात् उन्होंने स्थिति को उलट दिया । श्रीमती गांधी की सरकार ने जिस अधिनियम का निरसन किया था उसे फिर से अधिनियमित किया गया । उसका नाम है संसदीय कार्यवाही (प्रकाशन संरक्षण) अधिनियम, 1977 । जनता सरकार इतने से ही नहीं रुकी । इसे एक सांविधानिक आधार प्रदान करने के लिए 44वें संशोधन द्वारा अनुच्छेद 361क अंतःस्थापित किया गया । इसका विस्तार राज्य विधान मंडलों

---

3. तुलना कीजिए, *कुवरजी* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, ए. 1954 एस.सी. 220; *गुरुस्वामी* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 592; *मुंबई राज्य* बनाम *कृष्णन*, ए. 1960 एस.सी. 1223; *प्रताप सिंह* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 83 ।

4. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 20-6-1979 से अंतःस्थापित ।

5. *जतीश* बनाम *हरिसाधन*, (1956) 60 सी.डब्ल्यू.एन. 971 ।

की कार्यवाहियों पर किया गया । अतएव राज्य में अलग-अलग विधान बनाने की आवश्यकता नहीं रही । अनुच्छेद 361क द्वारा प्रदत्त उन्मुक्ति संघ और राज्य दोनों के विधान मंडलों को समान रूप से उपलब्ध होगी । सिविल और दाण्डिक कार्यवाही या दायित्व के बीच भी कोई अंतर नहीं । यह सांविधानिक उपबंध है इसलिए भारतीय दंड संहिता की धारा 499 का भी यह अध्यारोहण करेगा ।

अनुच्छेद 361क के लागू होने की शर्तें — इस अनुच्छेद के अधीन विधिक कार्यवाहियों से उन्मुक्ति का दावा करने के लिए निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिए ।

I. विवरण, संघ या राज्य विधान मंडल के किसी सदन की कार्यवाही का विवरण होना चाहिए । अतएव उसे सदन के समक्ष किसी प्रस्ताव या अन्य कार्यवाही से संगत होना चाहिए[6] और ऐसा न हो जिसे कार्यवाही से निकाल दिया गया है ।[7]

II. वह विवरण होना चाहिए लेख या टिप्पणी नहीं ।

III. ऐसा विवरण सारवान रूप से सत्य होना चाहिए । ऐसे विवरण के सार संक्षेप को या उलटे-पुलटे विवरण को संरक्षण प्राप्त नहीं होगा ।[8]

IV. विवरण विद्वेष से प्रेरित नहीं होना चाहिए ।[9]

देशी राज्यों के शासकों के अधिकार और विशेषाधिकार ।

362. *संविधान (छब्बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 की धारा 2 द्वारा निरसित ।*

संशोधन का प्रभाव — अनुच्छेद 291 और 362 के निरसन से और अनुच्छेद 363क के अंतःस्थापन से देशी रियासतों के राजाओं और शासकों के अधिकारों का उत्सादन कर दिया गया है । इसके परिणामस्वरूप हुए विधिक संघर्ष में न्यायालय से जो निर्णय हुआ था वह है *माधव राव* बनाम *भारत संघ* ।[10]

कुछ संधियों, करारों आदि से उत्पन्न विवादों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन ।

363. (1) **इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, किंतु अनुच्छेद 143 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उच्चतम न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय को किसी ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबंध, सनद या वैसी ही अन्य लिखत के किसी उपबंध से, जो इस संविधान के प्रारंभ से पहले किसी देशी राज्य के शासक द्वारा की गई थी या निष्पादित की गई थी और जिसमें भारत डोमिनियन की सरकार या उसकी पूर्ववर्ती कोई सरकार एक पक्षकार थी और जो ऐसे प्रारंभ के पश्चात् प्रवर्तन में है या प्रवर्तन में बनी रही है, उत्पन्न किसी विवाद में या ऐसी संधि, करार, प्रसंविदा, वचनबंध, सनद या वैसी ही अन्य लिखत से संबंधित इस संविधान के किसी उपबंध के अधीन प्रोद्भूत किसी अधिकार या उससे उद्भूत किसी दायित्व या बाध्यता के संबंध में किसी विवाद में अधिकारिता नहीं होगी ।**

(2) **इस अनुच्छेद में —**

(क) **"देशी राज्य" से ऐसा राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है जिसे हिज मजेस्टी से या भारत डोमिनियन की सरकार से इस संविधान के प्रारंभ से पहले ऐसे राज्य के रूप में मान्यता प्राप्त थी; और**

(ख) **"शासक" के अंतर्गत ऐसा राजा, प्रमुख या अन्य व्यक्ति है जिसे हिज मजेस्टी से या भारत डोमिनियन की सरकार से ऐसे प्रारंभ से पहले किसी देशी राज्य के शासक के रूप में मान्यता प्राप्त थी ।**

6. तुलना कीजिए, *तेज किरण* बनाम *संजीव*, ए. 1970 एस.सी. 1573 (1574) ।
7. *शर्मा* बनाम *श्रीकृष्ण*, ए. 1959 एस.सी. 395 ।
8. तुलना कीजिए, *जतीश* बनाम *हरिसाधन*, ए. 1961 एस.सी. 613 (पैरा 6) ।
9. अनुच्छेद 361क पर विस्तृत टिप्पणी के लिए, देखिए दुर्गादास बसु "ला आफ दि प्रेस इन इंडिया" (प्रेंटिस हाल आफ इंडिया), 1980, अध्याय 8 ।
10. *माधव राव* बनाम *भारत संघ*, ए. 1971 एस.सी. 530 ।

अनुच्छेद 363(1) का प्रविषय — देशी राज्य के *शासकों और भारत सरकार के बीच* की गई किसी संधि आदि से उत्पन्न होने वाले किसी विवाद को ग्रहण करने की अधिकारिता किसी न्यायालय को नहीं होगी । अनुच्छेद 131 के परंतुक (i) द्वारा उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता भी वर्जित है । यदि वह ऐसा राज्य है जो विलय के कारण या अन्यथा समाप्त हो गया है तो अधिकारिता का वर्जन अनुच्छेद 363(1) के आधार पर होगा । ऐसे विवाद से संबंधित कार्यवाही का हेतुक राजनीतिक[11] है और संविधान में उसके लिए जो उपचार दिया गया है वह है राष्ट्रपति द्वारा उच्चतम न्यायालय को अनुच्छेद 143 के अधीन निर्देश ।[12]

खंड (1) के पहले भाग के अधीन न्यायालय की अधिकारिता का वर्जन संधि के उपबंधों से उद्‌भूत होने वाले विवादों के संबंध में है । दूसरे भाग के अधीन ऐसे विवाद होते हैं जो संविधान के किसी उपबंध के अधीन उद्‌भूत होने वाले अधिकार या दायित्व की बाबत हैं ।[10]

अनुच्छेद 363(1) के अधीन वर्जना के लागू होने के लिए यह आवश्यक है कि वह संधि लिखित संविधान के प्रवृत्त होने के पहले निष्पादित की गई हो और संविधान के प्रवृत्त होने के पश्चात् भी विद्यमान हो । किंतु वह विवाद जो न्यायालय के समक्ष विचार की विषय-वस्तु है पहले भी उत्पन्न हो सकता है और बाद में भी ।[12]

अनुच्छेद 131 के परंतुक में ऐसी संधियों और करारों से उद्‌भूत होने वाले विवाद में उच्चतम न्यायालय की मूल अधिकारिता का वर्जन किया गया है । अनुच्छेद 363 में सभी न्यायालयों की अधिकारिता का सभी कार्यवाहियों की बाबत वर्जन है ।[12] जहां किसी प्राइवेट व्यक्ति को कुछ विशेषाधिकार हैं या कुछ संविदाजात अधिकार हैं[13] या फायदे हैं[14] या कराधान से कुछ छूट हैं[15] और यह सब किसी पूर्व शासक के साथ की गई प्रसंविदा के आधार पर है तो वह उस प्रसंविदा को न्यायालय द्वारा प्रवृत्त नहीं करा सकता चाहे वह प्रसंविदा का पक्षकार रहा हो या नहीं ।

अनुच्छेद 363(1) का वर्जन तभी लागू होगा जब विवाद प्रसंविदा से उद्‌भूत हुआ हो । जैसे, —

(i) जहां किसी व्यक्ति को विधि के अधीन ऐसा अधिकार है जो प्रसंविदा पर आधारित नहीं है और न उससे प्रभावित है[16] तो ऐसा व्यक्ति अपने विधिक अधिकार को न्यायालय में प्रवृत्त करा सकेगा ।[17]

(ii) विलय, करार या इसी प्रकार के प्रसंविदा करार से कोई अधिकार उत्पन्न नहीं हो सकते । किंतु यदि नया प्रभु अर्थात् संघ या राज्य सरकार करार से उद्‌भूत होने वाले अधिकारों की पुष्टि करती है या उन्हें मान्यता देती है तो ऐसी मान्यता के आधार पर न्यायालय में नए प्रभु के विरुद्ध उन अधिकारों को प्रवृत्त किया जा सकता है ।[18]

देशी राज्यों के शासकों को दी गई मान्यता की समाप्ति और निजी थैलियों का अंत ।

[19]**363क.** *इस संविधान या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि में किसी बात के होते हुए भी —*

(क) ऐसा राजा, प्रमुख या अन्य व्यक्ति, जिसे संविधान (छब्बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 के प्रारंभ से पहले किसी समय राष्ट्रपति से किसी देशी राज्य के शासक के रूप

11. *उस्मान अली* बनाम *सागरमल*, ए. 1965 एस.सी. 1798 (1802) ।
12. *सरायकेला राज्य* बनाम *भारत संघ*, (1951) एस.सी.आर. 474 ।
13. *डालमिया सीमेंट कंपनी* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1958 एस.सी. 816 ।
14. *रघुबर* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 909 ।
15. *सुधांशु* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 196 (199) ।
16. *जगन्नाथ* बनाम *हरिहर*, ए. 1958 एस.सी. 239; (1958) एस.सी.आर. 1067 ।
17. *भोलानाथ* बनाम *सौराष्ट्र राज्य*, ए. 1954 एस.सी. 680 ।
18. *वीरेन्द्र* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 415 (429) ।
19. संविधान (छब्बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 28-12-1971 से अंतःस्थापित ।

में मान्यता प्राप्त थी, या ऐसा व्यक्ति, जिसे ऐसे प्रारंभ से पहले किसी समय राष्ट्रपति से ऐसे शासक के उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता प्राप्त थी, ऐसे प्रारंभ को और से ऐसे शासक या ऐसे शासक के उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता प्राप्त नहीं रह जाएगा;

(ख) संविधान (छब्बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 के प्रारंभ को और से निजी थैली का अंत किया जाता है और निजी थैली की बाबत सभी अधिकार, दायित्व और बाध्यताएं निर्वापित की जाती हैं और तदनुसार खंड (क) में निर्दिष्ट, यथास्थिति, शासक या ऐसे शासक के उत्तराधिकारी को या अन्य व्यक्ति को किसी राशि का निजी थैली के रूप में संदाय नहीं किया जाएगा ।

निजी थैली का उत्सादन — 28-12-1971 से राजाओं को प्रिवी पर्स देना बंद कर दिया गया [देखिए ऊपर अनुच्छेद 362] ।

महापत्तनों और विमानक्षेत्रों के बारे में विशेष उपबंध ।

364. (1) **इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति लोक अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि ऐसी तारीख से, जो उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट की जाए —**

(क) संसद् या किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई कोई विधि किसी महापत्तन या विमानक्षेत्र को लागू नहीं होगी अथवा ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए लागू होगी जो उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं; या

(ख) कोई विद्यमान विधि किसी महापत्तन या विमानक्षेत्र में उन बातों के सिवाय प्रभावी नहीं रहेगी जिन्हें उक्त तारीख से पहले किया गया है या करने का लोप किया गया है अथवा ऐसे पत्तन या विमानक्षेत्र को लागू होने में ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगी जो उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किए जाएं ।

(2) इस अनुच्छेद में —

(क) "महापत्तन" से ऐसा पत्तन अभिप्रेत है जिसे संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि या किसी विद्यमान विधि द्वारा या उसके अधीन महापत्तन घोषित किया गया है और इसके अंतर्गत ऐसे सभी क्षेत्र हैं जो उस समय ऐसे पत्तन की सीमाओं के भीतर हैं;

(ख) "विमानक्षेत्र" से वायु मार्गों, वायुयानों और विमान चालन से संबंधित अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिए यथा परिभाषित विमानक्षेत्र अभिप्रेत है ।

संघ द्वारा दिए गए निदेशों का अनुपालन करने में या उनको प्रभावी करने में असफलता का प्रभाव ।

365. **जहां इस संविधान के किसी उपबंध के अधीन संघ की कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग करते हुए दिए गए किन्हीं निदेशों का अनुपालन करने में या उनको प्रभावी करने में कोई राज्य असफल रहता है वहां राष्ट्रपति के लिए यह मानना विधिपूर्ण होगा कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें उस राज्य का शासन इस संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता है ।**

परिभाषाएं ।

366. **इस संविधान में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, निम्नलिखित पदों के निम्नलिखित अर्थ हैं, अर्थात् : —**

(1) "कृषि-आय" से भारतीय आय-कर से संबंधित अधिनियमितियों के प्रयोजनों के लिए यथापरिभाषित कृषि-आय अभिप्रेत है;

(2) "आंग्ल-भारतीय" से ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसका पिता या पितृ-परंपरा में कोई अन्य पुरुष जनक यूरोपीय उद्‌भव का है या था, किंतु जो भारत के राज्यक्षेत्र में अधिवासी है और जो ऐसे राज्यक्षेत्र में ऐसे माता-पिता से जन्मा है या जन्मा था जो वहां साधारणतया निवासी रहे हैं और केवल अस्थायी प्रयोजनों के लिए वास नहीं कर रहे हैं;

(3) "अनुच्छेद" से इस संविधान का अनुच्छेद अभिप्रेत है;

(4) "उधार लेना" के अंतर्गत वार्षिकियां देकर धन लेना है और "उधार" का तदनुसार अर्थ लगाया जाएगा;

[20](4क) * * *

(5) "खंड" से उस अनुच्छेद का खंड अभिप्रेत है जिसमें वह पद आता है;

(6) "निगम कर" से कोई आय पर कर अभिप्रेत है, जहां तक वह कर कंपनियों द्वारा संदेय है और ऐसा कर है जिसके संबंध में निम्नलिखित शर्तें पूरी होती हैं, अर्थात् : —

(क) वह कृषि-आय के संबंध में प्रभार्य नहीं है;

(ख) कंपनियों द्वारा संदत्त कर के संबंध में कंपनियों द्वारा व्यष्टियों को संदेय लाभांशों में से किसी कटौती का किया जाना उस कर को लागू अधिनियमितियों द्वारा प्राधिकृत नहीं है;

(ग) ऐसे लाभांश प्राप्त करने वाले व्यष्टियों की कुल आय की भारतीय आय-कर के प्रयोजनों के लिए गणना करने में अथवा ऐसे व्यष्टियों द्वारा संदेय या उनको प्रतिदेय भारतीय आय-कर की गणना करने में, इस प्रकार संदत्त कर को हिसाब में लेने के लिए कोई उपबंध विद्यमान नहीं है;

(7) शंका की दशा में, "तत्स्थानी प्रांत", "तत्स्थानी देशी राज्य" या "तत्स्थानी राज्य", से ऐसा प्रांत, देशी राज्य या राज्य अभिप्रेत है जिसे राष्ट्रपति प्रश्नगत किसी विशिष्ट प्रयोजन के लिए, यथास्थिति, तत्स्थानी प्रांत, तत्स्थानी देशी राज्य या तत्स्थानी राज्य अवधारित करे;

(8) "ऋण" के अंतर्गत वार्षिकियों के रूप में मूलधन के प्रतिसंदाय की किसी बाध्यता के संबंध में कोई दायित्व और किसी प्रत्याभूति के अधीन कोई दायित्व है और "ऋणभार" का तदनुसार अर्थ लगाया जाएगा;

(9) "संपदा शुल्क" से वह शुल्क अभिप्रेत है जो ऐसे नियमों के अनुसार जो संसद् या किसी राज्य के विधान मंडल द्वारा ऐसे शुल्क के संबंध में बनाई गई विधियों द्वारा या उनके अधीन विहित किए जाएं, मृत्यु पर संक्रांत होने वाली या उक्त विधियों के उपबंधों के अधीन इस प्रकार संक्रांत हुई समझी गई सभी संपत्ति के मूल मूल्य पर या उसके प्रति निर्देश से, निर्धारित किया जाए;

(10) "विद्यमान विधि" से ऐसी विधि, अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम या विनियम अभिप्रेत है जो इस संविधान के प्रारंभ से पहले ऐसी विधि, अध्यादेश, आदेश, उपविधि, नियम या विनियम बनाने की शक्ति रखने वाले किसी विधान मंडल, प्राधिकारी या व्यक्ति द्वारा पारित किया गया है या बनाया गया है;

खंड (10) : "विधि" — इस खंड में विधि से प्राथमिक रूप से अधिनियमित विधि अभिप्रेत है जिसके अधीन अधीनस्थ विधान भी है अर्थात् ऐसे नियम, विनियम या आदेश जो कानूनी प्राधिकार के अधीन बनाए गए हैं ।[21] इस खंड में अधिसूचनाओं का उल्लेख नहीं है । जब कानूनी शक्ति के प्रयोग में अधिसूचनाएं निकाली जाती हैं तो उन्हें विधि का बल प्राप्त होता है[22] (कार्यपालिका की अधिसूचनाओं से भिन्न) । संविधान के प्रारंभ के पश्चात् किसी विद्यमान अधिनियम के अधीन निकाली गई अधिसूचना विद्यमान विधि नहीं होगी यदि वह विधि में परिवर्तन करने के लिए है ।[23]

(11) "फेडरल न्यायालय" से भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन गठित फेडरल न्यायालय अभिप्रेत है;

(12) "माल" के अंतर्गत सभी सामग्री, वाणिज्या और वस्तुएं हैं;

---

20. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 1-2-1977 से खंड (4क) अंतःस्थापित, और संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा तारीख 13-4-1978 से लोप किया गया ।

21. *एडवर्ड मिल* बनाम *अजमेर राज्य*, ए. 1955 एस.सी. 25 : (1955) 1 एस.सी.आर. 735 ।

22. *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, ए. 1951 एस.सी. 318 ।

23. *कल्याणी स्टोर्स* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1686 (1691) ।

(13) "प्रत्याभूति" के अंतर्गत ऐसी बाध्यता है जिसका, किसी उपक्रम के लाभों के किसी विनिर्दिष्ट रकम से कम होने की दशा में, संदाय करने का वचनबंध इस संविधान के प्रारंभ से पहले किया गया है;

(14) "उच्च न्यायालय" से ऐसा न्यायालय अभिप्रेत है जो इस संविधान के प्रयोजनों के लिए किसी राज्य के लिए उच्च न्यायालय समझा जाता है और इसके अंतर्गत —

(क) भारत के राज्यक्षेत्र में इस संविधान के अधीन उच्च न्यायालय के रूप में गठित या पुनर्गठित कोई न्यायालय है, और

(ख) भारत के राज्यक्षेत्र में संसद् द्वारा विधि द्वारा इस संविधान के सभी या किन्हीं प्रयोजनों के लिए उच्च न्यायालय के रूप में घोषित कोई अन्य न्यायालय है;

(15) "देशी राज्य" से ऐसा राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है जिसे भारत डोमिनियन की सरकार से ऐसे राज्य के रूप में मान्यता प्राप्त थी;

(16) "भाग" से इस संविधान का भाग अभिप्रेत है;

(17) "पेंशन" से किसी व्यक्ति को या उसके संबंध में संदेय किसी प्रकार की पेंशन अभिप्रेत है चाहे वह अभिदायी है या नहीं है और इसके अंतर्गत इस प्रकार संदेय सेवानिवृत्ति वेतन, इस प्रकार संदेय उपदान और किसी भविष्य निधि के अभिदानों की, उन पर ब्याज या उनमें अन्य परिवर्धन सहित या उसके बिना, वापसी के रूप में इस प्रकार संदेय कोई राशि या राशियां हैं;

(18) "आपात की उद्घोषणा" से अनुच्छेद 352 के खंड (1) के अधीन की गई उद्घोषणा अभिप्रेत है;

(19) "लोक अधिसूचना" से, यथास्थिति, भारत के राजपत्र में या किसी राज्य के राजपत्र में अधिसूचना अभिप्रेत है;

(20) "रेल" के अंतर्गत —

(क) किसी नगरपालिक क्षेत्र में पूर्णतया स्थित ट्राम नहीं है, या

(ख) किसी राज्य में पूर्णतया स्थित संचार की ऐसी अन्य लाइन नहीं है जिसकी बाबत संसद् ने विधि द्वारा घोषित किया है कि वह रेल नहीं है;

[24](21) * * *

[25](22) *"शासक" से ऐसा राजा, प्रमुख या अन्य व्यक्ति अभिप्रेत है जिसे संविधान (छब्बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 के प्रारंभ से पहले किसी समय, राष्ट्रपति से किसी देशी राज्य के शासक के रूप में मान्यता प्राप्त थी या ऐसा व्यक्ति अभिप्रेत है जिसे ऐसे प्रारंभ से पहले किसी समय, राष्ट्रपति से ऐसे शासक के उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता प्राप्त थी;*

(23) "अनुसूची" से इस संविधान की अनुसूची अभिप्रेत है;

(24) "अनुसूचित जातियों" से ऐसी जातियां, मूलवंश या जनजातियां अथवा ऐसी जातियों, मूलवंशों या जनजातियों के भाग या उनमें के यूथ अभिप्रेत हैं जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 341 के अधीन अनुसूचित जातियां समझा जाता है;

(25) "अनुसूचित जनजातियों" से ऐसी जनजातियां या जनजाति समुदाय अथवा ऐसी जनजातियों या जनजाति समुदायों के भाग या उनमें के यूथ अभिप्रेत हैं जिन्हें इस संविधान के प्रयोजनों के लिए अनुच्छेद 342 के अधीन अनुसूचित जनजातियां समझा जाता है;

(26) "प्रतिभूतियों" के अंतर्गत स्टाक है;

[26](26क) * * *

24. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा खंड (21) का लोप किया गया ।

25. संविधान (छब्बीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा प्रतिस्थापित ।

26. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा तारीख 1-12-1977 से खंड (26क) अंतःस्थापित किया गया और उसका संविधान (तैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1977 द्वारा तारीख 13-4-1978 से लोप किया गया ।

(27) "उपखंड" से उस खंड का उपखंड अभिप्रेत है जिसमें वह पद आता है;

(28) "कराधान" के अंतर्गत किसी कर या लाग का अधिरोपण है चाहे वह साधारण या स्थानीय या विशेष है और "कर" का तदनुसार अर्थ लगाया जाएगा;

(29) "आय पर कर" के अंतर्गत अतिलाभ-कर की प्रकृति का कर है;

[27]*(29क) "माल के क्रय या विक्रय पर कर" के अंतर्गत —*

(क) वह कर है जो नकदी, आस्थगित संदाय या अन्य मूल्यवान प्रतिफल के लिए किसी माल में संपत्ति के ऐसे अंतरण पर है जो किसी संविदा के अनुसरण में न करके अन्यथा किया गया है,

(ख) वह कर है जो माल में संपत्ति के (चाहे वह माल के रूप में हो या किसी अन्य रूप में) ऐसे अंतरण पर है जो किसी संकर्म संविदा के निष्पादन में अंतर्वलित है,

(ग) वह कर है जो अवक्रय या किस्तों में संदाय की पद्धति से माल के परिदान पर है,

(घ) वह कर है जो नकदी, आस्थगित संदाय या अन्य मूल्यवान प्रतिफल के लिए किसी माल का किसी प्रयोजन के लिए उपयोग करने के अधिकार के (चाहे वह विनिर्दिष्ट अवधि के लिए हो या नहीं) अंतरण पर है,

(ङ) वह कर है जो नकदी, आस्थगित संदाय या अन्य मूल्यवान प्रतिफल के लिए किसी माल के प्रदाय पर है जो किसी अनिगमित संगम या व्यक्ति-निकाय द्वारा अपने किसी सदस्य को किया गया है,

(च) वह कर है, जो ऐसे माल के, जो खाद्य या मानव उपभोग के लिए कोई अन्य पदार्थ या कोई पेय है (चाहे वह मादक हो या नहीं) ऐसे प्रदाय पर है, जो किसी सेवा के रूप में या सेवा के भाग के रूप में या किसी भी अन्य रीति से किया गया है और ऐसा प्रदाय या सेवा नकदी, आस्थगित संदाय या अन्य मूल्यवान प्रतिफल के लिए की गई है,

और माल के ऐसे अंतरण, परिदान या प्रदाय के बारे में यह समझा जाएगा कि वह उस व्यक्ति द्वारा, जो ऐसा अंतरण, परिदान या प्रदाय कर रहा है उस माल का विक्रय है, और उस व्यक्ति द्वारा, जिसको ऐसा अंतरण, परिदान या प्रदाय किया जाता है, उस माल का क्रय है ।

[28]*(30) "संघ राज्यक्षेत्र" से पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट कोई संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत ऐसा अन्य राज्यक्षेत्र है जो भारत के राज्यक्षेत्र में समाविष्ट है किंतु उस अनुसूची में विनिर्दिष्ट नहीं है ।*

निर्वचन ।

367. (1) **जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, इस संविधान के निर्वचन के लिए साधारण खंड अधिनियम, 1897, ऐसे अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए, जो अनुच्छेद 372 के अधीन उसमें किए जाएं, वैसे ही लागू होगा जैसे वह भारत डोमिनियन के विधान मंडल के किसी अधिनियम के निर्वचन के लिए लागू होता है ।**

(2) इस संविधान में संसद्‌ के या उसके द्वारा बनाए गए अधिनियमों या विधियों के प्रति किसी निर्देश का अथवा [29]* किसी राज्य के विधान मंडल के या उसके द्वारा बनाए गए अधिनियमों**

27. संविधान (छियालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1982 द्वारा अंतःस्थापित ।

28. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

29. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

या विधियों के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि उसके अंतर्गत, यथास्थिति, राष्ट्रपति द्वारा निर्मित अध्यादेश या किसी राज्यपाल [30]* * * द्वारा निर्मित अध्यादेश के प्रति निर्देश है ।

(3) इस संविधान के प्रयोजनों के लिए, "विदेशी राज्य" से भारत से भिन्न कोई राज्य अभिप्रेत है :

परंतु संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राष्ट्रपति आदेश द्वारा यह घोषणा कर सकेगा कि कोई राज्य उन प्रयोजनों के लिए, जो उस आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, विदेशी राज्य नहीं है ।

खंड (1) : साधारण खंड अधिनियम — इस खंड के कारण अनुच्छेद 3 में "राज्य" के अंतर्गत संघ राज्यक्षेत्र है ।[31] अनुच्छेद 370 के निर्वचन के लिए साधारण खंड अधिनियम की धारा 21 लागू होगी ।[32]

---

30. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।
31. *राम किशोर* बनाम *भारत संघ*, ए. 1966 एस.सी. 644 (*648*) ।
32. *संपत* बनाम *जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1970 एस.सी. 1118 (*1124*) ।

भाग 20

संविधान का संशोधन

368. [1]*(1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, संसद् अपनी संविधायी शक्ति का प्रयोग करते हुए इस संविधान के किसी उपबंध का परिवर्धन, परिवर्तन या निरसन के रूप में संशोधन इस अनुच्छेद में अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार कर सकेगी ।*

[1]*संविधान का संशोधन करने की संसद् की शक्ति और उसके लिए प्रक्रिया ।*

(2) इस संविधान के संशोधन का आरंभ संसद् के किसी सदन में इस प्रयोजन के लिए विधेयक पुरःस्थापित करके ही किया जा सकेगा और जब वह विधेयक प्रत्येक सदन में उस सदन की कुल सदस्य संख्या के बहुमत द्वारा तथा उस सदन के उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के कम से कम दो-तिहाई बहुमत द्वारा पारित कर दिया जाता है तब [1][*राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा, जो विधेयक को अपनी अनुमति देगा और तब*] संविधान उस विधेयक के निबंधनों के अनुसार संशोधित हो जाएगा :

परंतु यदि ऐसा संशोधन —

(क) अनुच्छेद 54, अनुच्छेद 55, अनुच्छेद 73, अनुच्छेद 162 या अनुच्छेद 241 में, या

(ख) भाग 5 के अध्याय 4, भाग 6 के अध्याय 5 या भाग 11 के अध्याय 1 में, या

(ग) सातवीं अनुसूची की किसी सूची में, या

(घ) संसद् में राज्यों के प्रतिनिधित्व में, या

(ङ) इस अनुच्छेद के उपबंधों में,

कोई परिवर्तन करने के लिए है तो ऐसे संशोधन के लिए उपबंध करने वाला विधेयक राष्ट्रपति के समक्ष अनुमति के लिए प्रस्तुत किए जाने से पहले उस संशोधन के लिए [2]*** कम से कम आधे राज्यों के विधान मंडलों द्वारा पारित इस आशय के संकल्पों द्वारा उन विधान मंडलों का अनुसमर्थन भी अपेक्षित होगा ।

[1]*(3) अनुच्छेद 13 की कोई बात इस अनुच्छेद के अधीन किए गए किसी संशोधन को लागू नहीं होगी ।*

[3]*(4) इस संविधान का (जिसके अंतर्गत भाग 3 के उपबंध हैं) इस अनुच्छेद के अधीन [संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 55 के प्रारंभ से पहले या उसके पश्चात्] किया गया या किया गया तात्पर्यित कोई संशोधन किसी न्यायालय में किसी भी आधार पर प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।*

[3]*(5) शंकाओं को दूर करने के लिए यह घोषित किया जाता है कि इस अनुच्छेद के अधीन इस संविधान के उपबंधों का, परिवर्धन, परिवर्तन या निरसन के रूप में संशोधन करने के लिए संसद् की संविधायी शक्ति पर किसी प्रकार का निर्बन्धन नहीं होगा ।*[4]

संशोधन — 1. इस अनुच्छेद को पहली बार संविधान (चौबीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा

1. संविधान (चौबीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 5-8-1971 से खंड (1) अंतःस्थापित किया गया; पार्श्व टिप्पण प्रतिस्थापित किया गया; मूल अनुच्छेद को खंड (2) के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया और उसका कोष्ठक में दिए गए शब्दों के रूप में संशोधन किया गया; तथा खंड (3) अंतःस्थापित किया गया ।

2. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क और भाग ख में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।

3. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित (देखिए नीचे पाद-टिप्पण 7) ।

4. खंड (4) और (5) संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 55 द्वारा अंतःस्थापित किए गए थे । उच्चतम न्यायालय ने *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, (1980) 2 एस.सी.सी. 591, में इस धारा को अविधिमान्य घोषित किया है ।

संशोधित किया गया था । यह संशोधन 5-8-1971 को लागू हुआ और इसका उद्देश्य *गोलक नाथ* के बाद में उच्चतम न्यायालय के बहुमत के विनिश्चय को निष्प्रभाव करना था ।[4क]

2. किंतु इतने व्यापक संशोधन के होते हुए उच्चतम न्यायालय ने एक अधिष्ठायी आधार पर संविधान संशोधन अधिनियम को अविधिमान्य कर दिया । यह *केशवानंद*[5] और *राजनारायण*[6] के मामलों में हुआ ।

3. 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा खंड (4) और (5) अंतःस्थापित किए गए जिससे यह स्पष्ट किया गया कि किसी भी आधार पर (अनुच्छेद 368 की प्रक्रिया के पालन न किए जाने के आधार पर भी) कोई न्यायालय संविधान संशोधन अधिनियम को अविधिमान्य करने के लिए सक्षम नहीं होगा ।[7]

संशोधन का प्रभाव — 1949 के उपबंध में जो एक के बाद एक संशोधन किए गए हैं उनके प्रभाव को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है :

अनुच्छेद 368 जैसा वह 1949 में था	*अनुच्छेद 368 जैसा वह 1976 के पश्चात् है*
1. राष्ट्रपति संविधान संशोधन विधेयक को अनुमति देने के लिए बाध्य नहीं था ।	1. राष्ट्रपति अब इस बात के लिए बाध्य है कि वह अनुच्छेद 368 के अधीन पारित विधेयक को अनुमति दे [24वां संशोधन अधिनियम, 1971 द्वारा संशोधित खंड (2)] किंतु अन्य विधेयकों को वीटो करने की उसकी शक्ति यथावत बनी हुई है । यह शक्ति 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा यथासंशोधित अनुच्छेद 74(1) के अधीन मंत्रिमंडल की सलाह के अधीन है ।
2. संशोधन से क्या अभिप्रेत है यह बताया नहीं गया था ।	2 24वें संशोधन अधिनियम, 1971 द्वारा खंड (1) अंतःस्थापित करके यह स्पष्ट किया गया है कि संशोधन में संविधान के किसी उपबंध का परिवर्धन, परिवर्तन या निरसन आता है ।
3. विधेयक शब्द का अवलंब लेते हुए *गोलकनाथ* के वाद में[4] यह अभिनिर्धारित हुआ कि अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में पारित संविधान संशोधन अधिनियम भी विधि है और इसलिए अनुच्छेद 13(2) के अध्यधीन है ।	3 24वें संशोधन अधिनियम, 1971 ने अनुच्छेद 13 में खंड (4) और अनुच्छेद 368 में खंड (3) अंतःस्थापित करके इस सिद्धांत को विनष्ट कर दिया ।

4क. *गोलक नाथ* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1967 एस सी 1643 (मु. न्या. सुब्बा राव, न्या. सीकरी, शाह, शेलट, वैद्यलिंगम और हिदायतुल्ला, — न्या. वांचू, बछावत, रामास्वामी ने विसम्मति प्रकट की) ।

5. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 में, 13 की एक पूर्ण न्यायपीठ में 7:6 के बहुमत ने संविधान (पच्चीसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा अंतःस्थापित अनुच्छेद 31ग के दूसरे भाग को इस आधार पर अविधिमान्य ठहराया कि यह न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धांत को, जो संविधान का एक "आधारिक लक्षण" है, हटाना है । उन्होंने यह भी अभिनिर्धारित किया (*गोलक नाथ* के विरुद्ध निर्णय देते हुए) कि मूल अधिकार ऐसे आधारिक लक्षणों में से नहीं है, जिससे कि अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त संशोधनकारी शक्ति को नियंत्रित किया जा सके ।

6. *इन्दिरा* बनाम *राजनारायण*, ए. 1975 एस.सी. 2299, जिसमें बहुमत ने संविधान (उनतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा यथा अंतःस्थापित अनुच्छेद 329क के खंड (4) को इस आधार पर बातिल कर दिया कि इससे संविधान के कुछ आधारभूत लक्षणों को, परिवर्तित किया गया था जैसे, स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्वाचनों का सिद्धांत (पैरा 213); या विधि सम्मत शासन (पैरा 343, 682); या किसी निर्वाचन संबंधी विवाद के न्यायिक अवधारण को बिना किसी वैकल्पिक न्यायालय के समाप्ति (पैरा 213, 679) ।

7. किंतु उच्चतम न्यायालय ने *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 1789 में इस परिवर्धन को भी, खंड (4)-(5) को शून्य करके, इस आधार पर निष्प्रभावी बना दिया कि यह संशोधन न्यायिक पुनर्विलोकन को, जोकि संविधान का एक "आधारभूत लक्षण है", पूर्णतः अपवर्जित करता है ।

4. **अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त संशोधन करने की शक्ति पर कोई अभिव्यक्त मर्यादाएं नहीं है फिर भी *केशवानंद*[5] और *राजनारायण*[6] में यह अभिनिर्धारित हुआ कि वह अनुच्छेद 368 द्वारा अधिरोपित प्रक्रिया संबंधी शर्तों के अधीन है। साथ ही यह विवक्षित मर्यादा भी है कि संशोधन की शक्ति का प्रयोग करके संविधान के आधारभूत लक्षणों को परिवर्तित नहीं किया जा सकता या एक बिल्कुल नया संविधान नहीं बनाया जा सकता।**

4. **42वें संशोधन अधिनियम ने खंड (5) अंतःस्थापित करके इस सिद्धांत को विनष्ट किया। इस खंड में यह कहा गया कि अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त शक्ति पर कोई बंधन नहीं है। खंड (4) में यह कहा गया कि संविधान संशोधन अधिनियम का न्यायिक पुनर्विलोकन नहीं हो सकता चाहे वह किसी अधिष्ठायी आधार पर हो या प्रक्रियात्मक आधार पर किंतु उच्चतम न्यायालय ने इस संशोधन को बातिल कर दिया है।[7]**

संविधान के संशोधन से संबंधित सिद्धांत :

(क) अनुच्छेद 368 में अधिकथित विशेष प्रक्रिया के अधीन रहते हुए हमारे संविधान में संविधायी शक्ति संघ के सामान्य विधान मंडल को सौंपी गई है अर्थात् संसद् को। संविधान के संशोधन के लिए कोई पृथक् निकाय नहीं है जैसा कि कुछ अन्य संविधानों में है।[8]

(ख) अनुच्छेद 368 के उपबंधों के अधीन रहते हुए संविधान संशोधन विधेयक भी उसी रीति से पारित किए जाएंगे जैसे सामान्य विधेयक।[8]

(ग) संसद् संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 368 का भी संशोधन कर सकती है।[8]

(घ) पहले यह अभिनिर्धारित किया गया था कि न्यायालय संविधान संशोधन विधेयक की विधिमान्यता की परीक्षा करने के लिए यह देख सकते हैं कि क्या अनुच्छेद 368 के उपबंधों का अनुपालन किया गया है या नहीं। 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा जो खंड (4) और (5) जोड़े गए हैं उनसे इस आधार पर न्यायिक पुनर्विलोकन का निषेध किया गया है।

मूल अधिकारों का संशोधन — अ *गोलकनाथ* के मामले तक[9] उच्चतम न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता रहा कि हमारे संविधान का कोई भाग ऐसा नहीं है जिसका संसद् संशोधन न कर सके। संसद् अनुच्छेद 368 की अपेक्षाओं के अनुसार संविधान संशोधन अधिनियम पारित करके संविधान के प्रत्येक उपबंध का संशोधन कर सकती है। इसमें मूल अधिकार और अनुच्छेद 368 भी सम्मिलित है।[10]

आ. किंतु *गोलकनाथ* के बाद में[9] 11 न्यायाधीशों की एक विशेष न्यायपीठ ने छह न्यायाधीशों के बहुमत से इससे पहले के विनिश्चयों को उलट दिया[10] और यह मत अपनाया कि यद्यपि अनुच्छेद 368 की परिधि पर कोई अभिव्यक्त सीमा नहीं लगाई गई है किंतु संविधान के भाग 3 में जो मूल अधिकार दिए गए हैं वे प्रकृत्या अनुच्छेद 368 में दी गई संशोधन की प्रक्रिया के अधीन नहीं है। यदि उन अधिकारों का संशोधन किया जाना है तो नया संविधान बनाने के लिए या उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन करने के लिए नई संविधान सभा बुलानी होगी।

---

8. *शंकरी प्रसाद* बनाम *भारत संघ*, (1952) एस.सी.आर. 89, सज्जन *सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 845 — संविधान (चौबीसवां संशोधन) अधिनियम द्वारा पुनःस्थापित और संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा खंड (5) अंतःस्थापित।

9. *गोलक नाथ* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1967 एस.सी. 1643 (पैरा 39, 146, 163, 195 — मु. न्या. सुब्बाराव, न्या. — सीकरी, शाह, शेलट, वैद्यलिंगम और हिदायतुल्ला — न्या. वांचू, बछावत और रामास्वामी का विसम्मत निर्णय)।

10. *शंकरी प्रसाद* बनाम *भारत संघ*, ए. 1951 एस.सी. 458 (मु. न्या. कानिया, न्या. शास्त्री, मुखर्जी, दास और अय्यर — सर्वसम्मत); सज्जन *सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1965 एस.सी. 845 (मु. न्या. गजेन्द्रगडकर, न्या. वांचू और रघुबर दयाल — न्या. हिदायतुल्ला और मुधोलकर का विसम्मत निर्णय)।

इ. *गोलकनाथ* के वाद में[9] बहुमत के निर्णय को **संविधान (24वां संशोधन) अधिनियम, 1971** द्वारा अतिष्ठित कर दिया गया । ऐसा करने के लिए अनुच्छेद 13 में खंड (4) और अनुच्छेद 368 में खंड (1) अंतःस्थापित किया गया । इसके परिणामस्वरूप वह अनुच्छेद 368 के अनुसार पारित संविधान का संशोधन अनुच्छेद 13 के अर्थान्तर्गत विधि नहीं होगा और संविधान संशोधन अधिनियम की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं होगी कि वह मूल अधिकार को छीनती है या प्रभावित करती है । बाद में उच्चतम न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने *केशवानंद* के मामले में[11] *गोलकनाथ* को उलट दिया और इस संशोधन की विधिमान्यता की पुष्टि की ।

ई. *केशवानंद* के विनिश्चय से प्रोत्साहित होकर[11] 42वें संशोधन अधिनियम, 1976 द्वारा अनुच्छेद 368 में खंड (4) और (5) अंतःस्थापित किए गए । श्रीमती गांधी की सरकार ने यह *केशवानंद* के विनिश्चय के एक भाग को नियंत्रित करने के लिए किया जिसमें यह कहा गया था कि यद्यपि संशोधक शक्ति पर मूल अधिकार अंकुश नहीं लगाते हैं फिर भी कुछ विवक्षित परिसीमाएं हैं । अर्थात् संशोधन की शक्ति का प्रयोग करके संविधान के आधारभूत लक्षणों को परिवर्तित नहीं किया जा सकता है या नया संविधान नहीं बनाया जा सकता है । *केशवानंद* के मामले में यह जो मत अभिव्यक्त किया गया था उसका खंड (4) और (5) द्वारा अतिक्रमण करने का आशय था । उसमें यह कहा गया कि — (क) अनुच्छेद 368(1) के अधीन संशोधक शक्ति पर अभिव्यक्त या विवक्षित कोई परिसीमाएं नहीं हैं, यह शक्ति संविधायी शक्ति है, और (ख) संविधान संशोधन अधिनियम का किसी भी आधार पर न्यायिक पुनर्विलोकन नहीं किया जा सकता । किंतु संविधान (42वां संशोधन) अधिनियम, 1976 के उस भाग को जिसके द्वारा अनुच्छेद 368 में खंड (4) और (5) अंतःस्थापित किए गए थे *मिनर्वा मिल* के वाद में शून्य घोषित किया गया ।[7]

42वां संशोधन कहां तक संविधान संशोधन अधिनियमों के न्यायिक पुनर्विलोकन को रोक सकता है — सामान्य विधान के समान ही संविधान का संशोधन करने वाले अधिनियम की दशा में भी न्यायिक पुनर्विलोकन के दो मार्ग हैं — प्रक्रियात्मक और अधिष्ठायी ।[12]

अ. *प्रक्रियात्मक* — संविधान संशोधन अधिनियम की विधिमान्यता की प्रक्रिया के आधार पर पुनर्विलोकन के लिए 1971 में खंड (1) के अंतःस्थापन के पहले भी अनुच्छेद 368 के पार्श्व टिप्पण में यह स्पष्ट था कि अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त शक्ति इस अनुच्छेद में अधिकथित प्रक्रिया के अधीन है । अतएव "शक्ति बाह्य" के सामान्य सिद्धांत के आधार पर न्यायालय ऐसे संशोधन अधिनियम को शून्य घोषित कर सकता है जो अनुच्छेद 368 की प्रक्रिया संबंधी अपेक्षाओं को पूरा न करे ।[8] जैसे, —

(i) कि वह अनुच्छेद 368 में उपबंधित विशेष बहुमत से पारित नहीं किया गया है,

(ii) यदि वह उन उपबंधों से संबंधित है जिनका उस अनुच्छेद के परंतुक में निर्देश है तो उसका विनिर्दिष्ट संख्या में राज्यों के विधान मंडलों द्वारा अनुसमर्थन नहीं किया गया है ।

24वें संशोधन अधिनियम, 1971 द्वारा खंड (1) अंतःस्थापित करके इस मत की पुष्टि की गई । इसमें यह कहा गया कि "संसद् . इस संविधान के किसी उपबंध का परिवर्धन, परिवर्तन या निरसन के रूप में संशोधन इस अनुच्छेद में अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार कर सकेगी" ।

42वें संशोधन में, संविधान संशोधन अधिनियम को अविधिमान्य करने की न्यायालय

---

11 *केशवानंद बनाम केरल राज्य*, ए 1973 एस.सी. 1461 (पैरा 759, 850, 1174, 1282, 1395, 1840, 1916, 2079) ।

12 अधिक अध्ययन के लिए देखिए दुर्गादास बसु — *"लिमिटेड गवर्मेंट एंड जुडिशियल रिव्यू"*, पृ. 547 और आगे ।

की शक्ति को छीनने का प्रयत्न किया गया । खंड (4) में "किसी भी आधार पर" शब्दों का प्रयोग करके यह प्रयास किया गया कि अनुच्छेद 368 में अधिकथित प्रक्रिया के अनुसार इतना होने पर भी उसकी विधिमान्यता पर आक्षेप न हो । इसी प्रयोजन के लिए खंड (5) में "किसी भी प्रकार का निर्बन्धन नहीं होगा" शब्द प्रयोग किए गए । 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा जो दो खंड जोड़े गए वे प्रक्रिया के आधार पर न्यायिक पुनर्विलोकन का निषेध करने में असमर्थ हैं । इसके पक्ष में निम्नलिखित कारण दिए जा सकते हैं :

(i) खंड (5) एक घोषणात्मक उपबंध है जो शंकाओं को दूर करने के लिए है । यह अपने आप में नई विधि का सृजन नहीं करता या विद्यमान विधि में परिवर्तन नहीं करता । किसी भी प्रकार से यह नहीं कहा जा सकता कि यह विवक्षा द्वारा खंड (1) का निरसन करता है ।

(ii) खंड (4) एक अधिक प्रत्यक्ष अवरोध है । किंतु हमारा उच्चतम न्यायालय संविधान के अर्थान्वयन के लिए प्रारंभ से ही जो प्राथमिक नियम लागू कर रहा था वह यह था कि संविधान के सभी भागों को एक साथ पढ़ना चाहिए जिससे कि कोई भी भाग निष्प्रभावी या व्यर्थ का न हो जाए ।[13] अतएव खंड (4) और (5) के बारे में यह कहना उचित नहीं होगा कि वे उसी अनुच्छेद के खंड (1) का विवक्षित रूप से निरसन करते हैं ।[7] खंड (4) और (5) का अर्थान्वयन खंड (1) से संगति बैठाते हुए भी किया जा सकता है :

> **खंड (1) की प्रक्रियात्मक अपेक्षाओं को छोड़कर किसी और आधार पर संविधान संशोधन अधिनियम को कोई** *न्यायालय* **बातिल** *नहीं कर सकता ।*

आ. *अधिष्ठायी* — अधिष्ठायी आधार पर न्यायिक पुनर्विलोकन के प्रविषय के बारे में स्थिति अधिक जटिल है । *केशवानंद* के मामले में[14] उच्चतम न्यायालय ने पहली बार अधिष्ठायी आधार पर न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग किया । यह आधार इस प्रकार था, —

(I) अनुच्छेद 368 द्वारा संशोधन करने की शक्ति के कारण संसद् संविधान की मूल संरचना को (न्या. खन्ना) या आधारभूत लक्षणों को (न्या. हेगडे और मुखर्जी) परिवर्तित नहीं कर सकती क्योंकि संशोधन से यह विवक्षा है कि उसके उपबंधों में परिवर्धन, परिवर्तन या निरसन करके भी संशोधन करने पर मूल संविधान की अस्मिता बनी रहेगी (न्या. शैलत और ग्रोवर, रेड्डी, खन्ना, मु. न्या. सीकरी) । न्यायिक पुनर्विलोकन भी ऐसा ही आधारभूत लक्षण है ।

उस मामले में[14] अनुच्छेद 31ग के दूसरे भाग को, जो संविधान (25वां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा अंतःस्थापित किया गया था इस आधार पर अवैध घोषित किया गया कि वह विधान मंडल को यह निश्चित करने के लिए अन्तिम प्राधिकार दे देता है कि उसके द्वारा बनाई गई विधि अनुच्छेद 31ग में विनिर्दिष्ट निदेशक तत्वों को प्रभावी करने के लिए है या नहीं । इस प्रकार वह न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का प्रयोग करने से वर्जित करता है । न्यायालय यह जांच नहीं कर सकते कि क्या कोई अधिनियम जिसे अनुच्छेद 31ग का संरक्षण दिया जा रहा है वास्तव में निदेश को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से बनाया गया था या किसी अन्य प्रयोजन से ।

(II) अनुच्छेद 368 ने संशोधन करने की शक्ति संसद् को दी है [खंड (2) के परंतुक

---

13. तुलना कीजिए, *वेंकटरमन बनाम मैसूर राज्य*, ए. 1958 एस.सी. 255 (*268*); *शर्मा बनाम श्रीकृष्ण*, ए. 1959 एस.सी. 394; *नानावती बनाम मुंबई राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 112 (*123*); *असम राज्य बनाम रंगा मोहम्मद*, ए. 1967 एस.सी. 903; *बालाजी बनाम मैसूर राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 649 (*664*) ।

14. *केशवानंद बनाम केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 (मु. न्या. सीकरी, न्या. शेलट, ग्रोवर, हेगडे, मुखर्जी, रेड्डि, खन्ना) ।

में निर्दिष्ट मामलों में राज्य विधान मंडल का अनुसमर्थन एक अतिरिक्त आवश्यकता है। । अतएव संसद् प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से यह शक्ति किसी अन्य निकाय को प्रत्यायोजित नहीं कर सकती । यदि वह ऐसा करती है तो न्यायालय उस संविधान संशोधन अधिनियम को अविधिमान्य घोषित कर देगा ।[15]

केशवानंद के मामले में[14] अनुच्छेद 31ग का पिछला भाग बहुमत द्वारा अवैध घोषित किया गया । इस घोषणा का आधार यह था कि वह विधान मंडल को अनुच्छेद 14, 19 और 31 का उल्लंघन करने वाली विधि बनाने का प्राधिकार तो देता ही है साथ ही उस विधि में एक घोषणा करके उसे न्यायिक पुनर्विलोकन की परिधि के बाहर करके उसे उन्मुक्ति देने की शक्ति भी देता है । इस प्रकार संविधान का संशोधन करने की वास्तविक शक्ति का प्रत्यायोजन विधान मंडल को कर दिया गया है ।

अब प्रश्न यह है कि क्या 42वें संशोधन के पश्चात् किसी अधिष्ठायी आधार पर पुनर्विलोकन किया जा सकता है । इस प्रश्न का उत्तर अन्ततोगत्वा इस बात पर निर्भर होगा कि जब उच्चतम न्यायालय के समक्ष यह प्रश्न उपस्थित होगा तब इसमें कौन से न्यायाधीश वहां होंगे । *केशवानंद* के मामले में भी[14] न्यायालय आधारभूत प्रश्नों पर बंटा हुआ था । किंतु साहसी अधिवक्ता न्यायालय से निम्नलिखित आधार पर हस्तक्षेप करने का आग्रह कर सकता है :

(क) न्यायिक पुनर्विलोकन को वर्जित करने वाला कोई भी खंड "शक्ति बाह्य" के सिद्धांत को मिटा नहीं सकता ।[16]

(ख) खंड (1) में आने वाले शब्द "किया गया तात्पर्यित कोई संशोधन" बड़े भयंकर हैं ।[17] किंतु जब तक उच्चतम न्यायालय *केशवानंद* के अपने पूर्व निर्णय को उलटता नहीं है तब तक कुछ न्यायाधीश यह अवश्य कहेंगे कि न्यायिक पुनर्विलोकन के लिए आवश्यक प्रवेश द्वार 'संशोधन' शब्द के कारण बना हुआ है ।[18] और *केशवानंद* में बहुमत के अनुसार उसके अंतर्गत संविधान के आधारभूत लक्षण का संशोधन सम्मिलित नहीं है ।

(ग) जहां तक अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त संशोधन शक्तियों का संसद् द्वारा समर्पण या प्रत्यायोजन का प्रश्न है वह *दिल्ली लाज ऐक्ट, 1950*[19] में निर्दिष्ट सांविधानिक न्यास के सिद्धांत पर आधारित है । हमारे संविधान में इसकी जड़ें इतनी गहरी हैं कि *केशवानंद* के मामले में जो न्यायाधीश बहुमत में नहीं थे (जिन्होंने विसम्मत निर्णय दिया था) उन्होंने भी उस सिद्धांत को नहीं छोड़ा ।[14] यदि किसी विशेष मामले में न्यायालय यह अभिनिर्धारित करता है कि विधि की दृष्टि में कोई प्रत्यायोजन नहीं हुआ है तो बात वहीं समाप्त हो

15. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461, पैरा 445, 448, 472 (मु. न्या. सीकरी); 621 (न्या. शेलट और ग्रोवर); 744, 759(7), (न्या. हेगडे और मुखर्जी); 1537-38 (न्या. खन्ना) । कुछ अन्य न्यायाधीशों ने, जिन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि ऐसा कोई प्रत्यायोजन नहीं था; अपना निर्णय इस आधार पर दिया कि ऐसी विधि में ऐसी उद्घोषणा के होते हुए भी, न्यायालय यह जांच कर सकेंगे कि ऐसी विधि और निदेशक तत्व के बीच कोई संबंध है या नहीं । [न्या. पालेकर (पैरा 1338); न्या मैथ्यू (पैरा 1792-93, 1802); न्या बेग (पैरा 1868); न्या. द्विवेदी (पैरा 1993); न्या. चंद्रचुड (पैरा 2147)] (अतः लेखक की यह राय है कि इस प्रश्न पर सर्वसम्मति थी कि यदि संविधान संशोधन द्वारा संविधान का संशोधन करने की शक्ति वस्तुतः प्रत्यायोजित की गई तो उसे अविधिमान्य किया जा सकता है) ।

16. देखिए *सेक्रेटरी आफ स्टेट* बनाम *मास्क*, ए. 1940 पी.सी 105; *वाइन* बनाम *नेशनल डाक लेबर बोर्ड*, (1956) 3 आल.ई.आर 939 (*943*) एच.एल. ।

17. तुलना कीजिए, *अपर जिला मजिस्ट्रेट* बनाम *शुक्ला*, ए. 1976 एस.सी. 1207 (पैरा 103) ।

18. न्या. खन्ना द्वारा *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए 1975 एस.सी. 2299 (पैरा 251) में यह विचार संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया गया है ।

19. दिल्ली विधि अधिनियम, 1912, (1951) एस.सी.आर. 747 (पैरा 938-39, 972-73, 1114, 1121) के मामले में ।

जाएगी । किंतु यदि भविष्य में किसी मामले में अर्जीदार प्रत्यायोजन का अभिवाक् उठाता है और संविधान संशोधन अधिनियम की विधिमान्यता पर आक्षेप करता है तो न्यायालय इस आधार पर उस अभिवाक को नामंजूर नहीं कर सकता कि खंड (4) और (5) ने उसे वर्जित कर दिया है ।

बाद में *ए.डी.एम.* बनाम *शुक्ला*[17] के खंड न्यायापीठ में के एक न्यायाधीश (न्या. बेग) ने आधारभूत लक्षण के सिद्धांत से असहमति प्रकट की किंतु केशवानंद के बहुमत के विनिश्चय को उलटने के लिए 13 न्यायाधीशों की पूर्ण न्यायपीठ की आवश्यकता होगी । *राजनारायण* के मामले में[18] खंडपीड के बहुमत ने उसी का अनुसरण किया है (न्या. खन्ना, चंद्रचूड़ और मैथ्यू, पैरा 213, 329, 678, 682) ।

खंड (4) न्यायिक पुनर्विलोकन को तभी रोकता है जब संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा संशोधन की शक्ति का प्रयोग तात्पर्यित है अर्थात् संशोधनकारी शक्ति का प्रयोग किया गया है । अतएव जब तक *केशवानंद* को उलटा नहीं जाता है तब तक यदि यह दिखलाया जाता है कि कोई संविधान संशोधन अधिनियम संशोधन से अधिक कुछ कर रहा है तो वह अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त शक्ति से 'शक्ति बाह्य' होगा और उस मामले में अपवर्जन खंड के होते हुए भी न्यायालय उसे शून्य घोषित करेगा ।

अंग्रेजी में इस पुस्तक के पहले संस्करण के पृ 441-442 पर जो विचार अभिव्यक्त किए थे वे भविष्य में सही साबित हुए । उच्चतम न्यायालय ने *मिनर्वा मिल* बनाम *भारत संघ*[20] में 4·1 के अनुपात से *केशवानंद* के मत को कायम रखते हुए यह माना कि अनुच्छेद 368 में दी गई संशोधन की शक्ति के प्रयोग में संसद् सविधान के आधारभूत लक्षणों का संशोधन नहीं कर सकती । साथ ही यह अभिनिर्धारित किया कि न्यायिक पुनर्विलोकन हमारे संविधान का आधारभूत लक्षण है जिसे अनुच्छेद 368 में खड (4) और (5) अंतःस्थापित करके छीना नहीं जा सकता ।

आधारिक लक्षण के सिद्धांत की वर्तमान स्थिति — 1 *मिनर्वा मिल* के वाद में[20] आधारिक लक्षणों के या आधारिक संरचना के सिद्धांत के लागू होने की पुन पुष्टि और विस्तार हो जाने पर अब यह स्पष्ट हो गया है कि जब तक *केशवानंद*[21] के विनिश्चय को उच्चतम न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ उलटती नहीं है (जो कि असाधारण घटना होगी) संविधान के किसी भी संशोधन में न्यायालय इस आधार पर हस्तक्षेप कर सकेगा कि वह संविधान के किसी आधारभूत लक्षण को प्रभावित करता है ।

2. अभी तक अलग-अलग न्यायाधीशों ने विभिन्न मामलों में बहुत से लक्षणों को आधारभूत माना है । यद्यपि इस बारे में कोई एकमत नहीं है । इनमें से कुछ लक्षण निम्नलिखित हैं :

(क) सविधान की सर्वोच्चता,[22, 23]
(ख) विधिसम्मत शासन,[24]
(ग) शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धात,[22, 25]
(घ) संविधान की उद्देशिका में विनिर्दिष्ट उद्देश्य,[26]

20. *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1980 एस.सी. 1789 ।
21. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 ।
22. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461, मुख्य न्या. सीकरी ।
23. *राजस्थान राज्य* बनाम *भारत संघ*, ए. 1977 एस.सी. 1361 (पैरा 35, 44, मुख्य न्या. बेग) ।
24. *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए. 1975 एस.सी. 2299 (*2369-71*), न्या खन्ना, मुख्य न्या. रे, न्या. चंद्रचुड ।
25. *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए. 1975 एस.सी 2299 (*2369-71*) (*2742*, न्या चंद्रचुड, *2426-30, 2472*, न्या. बेग; *2320*, मुख्य न्या. रे) ।
26. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी. 1461 (*1565, 1609, 1648, 1860*), (मुख्य न्या. सीकरी, न्या. शेलट, ग्रोवर, हेगडे, मुखर्जी, रेड्डि और खन्ना) ।

(ङ) **अनुच्छेद 32 के** *अधीन न्यायिक* **पुनर्विलोकन,**[26-27]
(च) **परिसंघवाद,**[22, 28]
(छ) **पंथ निरपेक्षता,**[22, 24]
(ज) प्रभुता,[24, 29] लोकतंत्र[30-31] और गणतंत्र,[31]
(झ) व्यक्ति की स्वतंत्रता और गरिमा,[22]
(ञ) राष्ट्र की एकता और अखंडता,[32]
(ट) समता का सिद्धांत,[33-34]
(ठ) भाग 3 के अन्य मूल अधिकारों का सार
(ड) कल्याणकारी राज्य बनाने के लिए सामाजिक और आर्थिक न्याय की संकल्पना,[32, 36]
(ढ) भाग 3 और 4 के बीच संतुलन अर्थात् मूल अधिकार और निदेशक तत्वों के बीच,[27]
(ण) संसदीय शासन प्रणाली,[26]
(त) निष्पक्ष निर्वाचन,[37]
(थ) अनुच्छेद 368 द्वारा प्रदत्त संशोधनकारी शक्ति पर मर्यादा ।[38]

खंड (1) : संविधायी शक्ति — अनुच्छेद 368 के अधीन शक्ति संविधायी शक्ति है इसलिए यह आक्षेप नहीं किया जा सकता कि संविधान संशोधन अधिनियम पारित करके संसद् ऐसी राज्य विधि को विधिमान्य नहीं कर सकती जो अनुच्छेद 13 का उल्लंघन करती है ।[39] किंतु शर्त यह है कि उससे आधारिक लक्षणों पर प्रभाव नहीं पड़ना चाहिए ।[34-35]

खंड (2) : "संशोधित हो जाएगा" — 1. उच्चतम न्यायालय[40] ने इस अभिव्यक्ति और "प्रवृत्त होगा" अभिव्यक्ति मे अन्तर किया है । यद्यपि संविधान संशोधन विधेयक को राष्ट्रपति की अनुमति मिलने की तारीख से ही सविधान का संशोधन हो जाता है फिर भी उस संशोधन अधिनियम को प्रवृत्त करने की आवश्यकता वैसी ही होती है जैसी कि किसी अन्य अधिनियम के बारे में होती है । परिणामस्वरूप कोई संशोधन संविधान का भाग तभी होता है जब संशोधन अधिनियम प्रवृत्त किया जाए ।

2. संशोधन अधिनियम पारित करते समय संविधायी निकाय यह उपबंध कर सकता है कि (क) वह अधिनियम तुरंत प्रवृत्त होगा, या (ख) उसमें विनिर्दिष्ट तारीख को प्रवृत्त होगा, या (ग) ऐसी तारीख को प्रवृत्त होगा जो कार्यपालिका या किसी अन्य अंग द्वारा नियत किया जाए (सामान्य विधान मे इस प्रकार का सशर्त विधान एक सामान्य बात है) ।[40]

27. *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1980 एस सी 1789 (पैरा 26, 78, 91, 93), *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए 1975 एस सी 2299 (*2369-71*) ।

28. *गोलक नाथ* बनाम *पंजाब राज्य*, (1967) 2 एस सी आर 762 (*834*) न्या बछावत ।

29. *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए 1973 एस सी 1461 (*1565, 1609, 1648, 1860*) न्या मुखर्जी, न्या रेड्डि ।

30 *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1973 एस.सी 1461 (*1565, 1609, 1648, 1860*), मुख्य न्या सीकरी, न्या खन्ना, मैथ्यू, चंद्रचुड ।

31 *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए 1975 एस सी. 2299 (*2369-71*) (*2346-48*, न्या खन्ना; *2372, 2379, 2383*, न्या मैथ्यू) ।

32 *केशवानंद* बनाम *केरल राज्य*, ए 1973 एस सी 1461 (1565, *1608, 1648, 1860*), न्या. शेलट और ग्रोवर ।

33. *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए 1975 एस सी 2299 (*2369-71*), न्या चंद्रचुड (पैरा 680, 682) ।

34. *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1980 एस सी. 1789 (पैरा 31) ।

35. *वामन* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस.सी. 271 (पैरा 15, मुख्य न्या. चंद्रचुड़) ।

36. *भीम* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस.सी. 234 (पैरा 82) ।

37. *इंदिरा* बनाम *राजनारायण*, ए. 1975 एस.सी. 2299 (*2369-71*), न्या. खन्ना (*2351-52*); न्या मैथ्यू (*2372-73*) ।

38 *मिनर्वा मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1980 एस.सी. 1789 (पैरा 22, 91) ।

39 *शशांक* बनाम *भारत संघ*, ए 1981 एस.सी. 522 (पैरा 35) ।

40. *राय* बनाम *भारत संघ*, ए 1982 एस.सी 710 (पैरा 46-49) ।

भाग 21

अस्थायी, संक्रमणकालीन और विशेष उपबंध[1]

राज्य सूची के कुछ विषयों के संबंध में विधि बनाने की संसद् की इस प्रकार अस्थायी शक्ति मानो वे समवर्ती सूची के विषय हों ।

369. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, संसद् को इस संविधान के प्रारंभ से पांच वर्ष की अवधि के दौरान निम्नलिखित विषयों के बारे में विधि बनाने की इस प्रकार शक्ति होगी मानो वे विषय समवर्ती सूची में प्रगणित हों, अर्थात् : —

(क) सूती और ऊनी वस्त्रों, कच्ची कपास (जिसके अंतर्गत ओटी हुई रुई और बिना ओटी रुई या कपास है), बिनौले, कागज (जिसके अंतर्गत अखबारी कागज है), खाद्य पदार्थ (जिसके अंतर्गत खाद्य तिलहन और तेल हैं), पशुओं के चारे (जिसके अंतर्गत खली और अन्य सारकृत चारे हैं), कोयले (जिसके अंतर्गत कोक और कोयले के व्युत्पाद हैं), लोहे, इस्पात और अभ्रक का किसी राज्य के भीतर व्यापार और वाणिज्य तथा उनका उत्पादन, प्रदाय और वितरण;

(ख) खंड (क) में वर्णित विषयों में से किसी विषय से संबंधित विधियों के विरुद्ध अपराध, उन विषयों में से किसी के संबंध में उच्चतम न्यायालय से भिन्न सभी न्यायालयों की अधिकारिता और शक्तियां, तथा उन विषयों में से किसी के संबंध में फीस किंतु इसके अंतर्गत किसी न्यायालय में ली जाने वाली फीस नहीं है,

किंतु संसद् द्वारा बनाई गई कोई विधि, जिसे संसद् इस अनुच्छेद के उपबंधों के अभाव में बनाने के लिए सक्षम नहीं होती, उक्त अवधि की समाप्ति पर अक्षमता की मात्रा तक उन बातों के सिवाय प्रभावी नहीं रहेगी जिन्हें उस अवधि की समाप्ति के पहले किया गया है या करने का लोप किया गया है ।

जम्मू-कश्मीर राज्य के संबंध में अस्थायी उपबंध ।

370. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, —

(क) अनुच्छेद 238 के उपबंध जम्मू-कश्मीर राज्य के संबंध में लागू नहीं होंगे;

(ख) उक्त राज्य के लिए विधि बनाने की संसद् की शक्ति, —

(i) संघ सूची और समवर्ती सूची के उन विषयों तक सीमित होगी जिनको राष्ट्रपति, उस राज्य की सरकार से परामर्श करके, उन विषयों के तत्स्थानी विषय घोषित कर दे जो भारत डोमिनियन में उस राज्य के अधिमिलन को शासित करने वाले अधिमिलन पत्र में ऐसे विषयों के रूप में विनिर्दिष्ट हैं जिनके संबंध में डोमिनियन विधान मंडल उस राज्य के लिए विधि बना सकता है; और

(ii) उक्त सूचियों के उन अन्य विषयों तक सीमित होगी जो राष्ट्रपति, उस राज्य की सरकार की सहमति से, आदेश द्वारा, विनिर्दिष्ट करे ।

स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद के प्रयोजनों के लिए, उस राज्य की सरकार से वह व्यक्ति अभिप्रेत है जिसे राष्ट्रपति से, जम्मू-कश्मीर के महाराजा की 5 मार्च, 1948 की उद्घोषणा के अधीन तत्समय पदस्थ मंत्रिपरिषद् की सलाह पर कार्य करने वाले जम्मू-कश्मीर के महाराजा के रूप में तत्समय मान्यता प्राप्त थी;

(ग) अनुच्छेद 1 और इस अनुच्छेद के उपबंध उस राज्य के संबंध में लागू होंगे;

---

1 संविधान (तेरहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा तारीख 1-12-1963 से प्रतिस्थापित ।

(घ) इस संविधान के ऐसे अन्य उपबंध ऐसे अपवादों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए, जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा[3] विनिर्दिष्ट करे, उस राज्य के संबंध में लागू होंगे :

परंतु ऐसा कोई आदेश जो उपखंड (ख) के पैरा (i) में निर्दिष्ट राज्य के अधिमिलन पत्र में विनिर्दिष्ट विषयों से संबंधित है, उस राज्य की सरकार से परामर्श करके ही किया जाएगा, अन्यथा नहीं :

परंतु यह और कि ऐसा कोई आदेश जो अंतिम पूर्ववर्ती परंतुक में निर्दिष्ट विषयों से भिन्न विषयों से संबंधित है, उस सरकार की सहमति से ही किया जाएगा, अन्यथा नहीं ।

(2) यदि खंड (1) के उपखंड (ख) के पैरा (ii) में या उस खंड के उपखंड (घ) के दूसरे परंतुक में निर्दिष्ट उस राज्य की सरकार की सहमति, उस राज्य का संविधान बनाने के प्रयोजन के लिए संविधान सभा के बुलाए जाने से पहले दी जाए तो उसे ऐसी संविधान सभा के समक्ष ऐसे विनिश्चय के लिए रखा जाएगा जो वह उस पर करे ।

(3) इस अनुच्छेद के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति लोक अधिसूचना द्वारा घोषणा कर सकेगा कि यह अनुच्छेद प्रवर्तन में नहीं रहेगा या ऐसे अपवादों और उपांतरणों सहित ही और ऐसी तारीख से, प्रवर्तन में रहेगा, जो वह विनिर्दिष्ट करे :

परंतु राष्ट्रपति द्वारा ऐसी अधिसूचना निकाले जाने से पहले खंड (2) में निर्दिष्ट उस राज्य की संविधान सभा की सिफारिश आवश्यक होगी ।

खंड (1)(घ) : उपांतर — उपांतर करने की शक्ति के अंतर्गत विद्यमान उपबंध में परिवर्द्धन करने या उसमें कुछ जोड़ने की शक्ति है या आवश्यकतानुसार उसका निराकरण करने की शक्ति है । यह संशोधन करने की शक्ति के समान ही व्यापक है । केवल छोटे-छोटे परिवर्तनों तक ही सीमित नहीं है ।[2-3]

अनुच्छेद 370 एक विशेष उपबंध है जो जम्मू-कश्मीर राज्य को लागू होने में संविधान का संशोधन करने के लिए है । अनुच्छेद 368 द्वारा अनुच्छेद 370 के अधीन राष्ट्रपति की शक्ति पर कोई बंधन नहीं लगाया गया है ।[3]

[4]371. [5]***

*[5]*** महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों के संबंध में विशेष उपबंध ।*

(2) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति, [6][महाराष्ट्र या गुजरात राज्य] के संबंध में किए गए आदेश द्वारा

(क) यथास्थिति, विदर्भ, मराठवाड़ा [6][और शेष महाराष्ट्र या], सौराष्ट्र, कच्छ और शेष गुजरात के लिए पृथक् विकास बोर्डों की स्थापना के लिए, इस उपबंध सहित कि इन बोर्डों में से प्रत्येक के कार्यकरण पर एक प्रतिवेदन राज्य विधान सभा के समक्ष प्रतिवर्ष रखा जाएगा,

(ख) समस्त राज्य की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए, उक्त क्षेत्रों के विकास व्यय के लिए निधियों के साम्यापूर्ण आबंटन के लिए, और

(ग) समस्त राज्य की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए, उक्त सभी क्षेत्रों के संबंध में, तकनीकी शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए पर्याप्त सुविधाओं की और राज्य सरकार के नियंत्रण के अधीन सेवाओं में नियोजन के लिए पर्याप्त अवसरों की व्यवस्था करने वाली साम्यापूर्ण व्यवस्था करने के लिए,

राज्यपाल के किसी विशेष उत्तरदायित्व के लिए उपबंध कर सकेगा ।

2. *पूरनलाल बनाम भारत के राष्ट्रपति*, ए 1961 एस.सी 1519 (*1521*) ।
3. *संपत बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य*, ए. 1970 एस.सी 1118 (*1125*) ।
4. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।
5. संविधान (बत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1973 द्वारा 1-7-1974 से "आंध्र प्रदेश," शब्द और उपधारा (1) का लोप किया गया ।
6. मुंबई पुनर्गठन अधिनियम, 1960 द्वारा तारीख 1-5-1960 से प्रतिस्थापित ।

संशोधनों का प्रभाव — 1973 तक यथासंशोधित इस अनुच्छेद का उद्देश्य राष्ट्रपति को कुछ क्षेत्रों के विकास के लिए महाराष्ट्र और गुजरात के राज्यपालों को विशेष उत्तरदायित्व सौंपने के लिए समर्थ बनाना है । मूल अनुच्छेद द्वारा जो क्षेत्रीय समितियां बनाई गई थीं उन्हें समाप्त कर दिया गया है ।

नागालैंड राज्य के संबंध में विशेष उपबंध ।

[7]**371क.** *(1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, —*

(क) निम्नलिखित के संबंध में संसद् का कोई अधिनियम नागालैंड राज्य को तब तक लागू नहीं होगा जब तक नागालैंड की विधान सभा संकल्प द्वारा ऐसा विनिश्चय नहीं करती है, अर्थात् :

(i) नागाओं की धार्मिक या सामाजिक प्रथाएं;

(ii) नागा रूढ़िजन्य विधि और प्रक्रिया;

(iii) सिविल और दांडिक न्याय प्रशासन, जहां विनिश्चय नागा रूढ़िजन्य विधि के अनुसार होने हैं;

(iv) भूमि और उसके संपत्ति स्रोतों का स्वामित्व और अंतरण;

(ख) नागालैंड के राज्यपाल का नागालैंड राज्य में विधि और व्यवस्था के संबंध में तब तक विशेष उत्तरदायित्व रहेगा जब तक उस राज्य के निर्माण के ठीक पहले नागा पहाड़ी त्युएनसांग क्षेत्र में विद्यमान आंतरिक अशांति, उसकी राय में, उसमें या उसके किसी भाग में बनी रहती है और राज्यपाल, उस संबंध में अपने कृत्यों का निर्वहन करने में की जाने वाली कार्रवाई के बारे में अपने व्यक्तिगत निर्णय का प्रयोग, मंत्रिपरिषद् से परामर्श करने के पश्चात् करेगा :

परंतु यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई मामला ऐसा मामला है या नहीं जिसके संबंध में राज्यपाल से इस उपखंड के अधीन अपेक्षा की गई है कि वह अपने व्यक्तिगत निर्णय का प्रयोग करके कार्य करे तो राज्यपाल का अपने विवेक से किया गया विनिश्चय अंतिम होगा और राज्यपाल द्वारा की गई किसी बात की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि उसे अपने व्यक्तिगत निर्णय का प्रयोग करके कार्य करना चाहिए था या नहीं :

परंतु यह और कि यदि राज्यपाल से प्रतिवेदन मिलने पर या अन्यथा राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि अब यह आवश्यक नहीं है कि नागालैंड राज्य में विधि और व्यवस्था के संबंध में राज्यपाल का विशेष उत्तरदायित्व रहे तो वह, आदेश द्वारा, निदेश दे सकेगा कि राज्यपाल का ऐसा उत्तरदायित्व उस तारीख से नहीं रहेगा जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए;

(ग) अनुदान की किसी मांग के संबंध में अपनी सिफारिश करने में, नागालैंड का राज्यपाल यह सुनिश्चित करेगा कि किसी विनिर्दिष्ट सेवा या प्रयोजन के लिए भारत की संचित निधि में से भारत सरकार द्वारा दिया गया कोई धन उस सेवा या प्रयोजन से संबंधित अनुदान की मांग में, न कि किसी अन्य मांग में, सम्मिलित किया जाए;

(घ) उस तारीख से जिसे नागालैंड का राज्यपाल इस निमित्त लोक अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करे, त्युएनसांग जिले के लिए एक प्रादेशिक परिषद् स्थापित की जाएगी जो पैंतीस सदस्यों से मिलकर बनेगी और राज्यपाल निम्नलिखित बातों का उपबंध करने के लिए नियम अपने विवेक से बनाएगा, अर्थात् :

(i) प्रादेशिक परिषद् की संरचना और वह रीति जिससे प्रादेशिक परिषद् के सदस्य चुने जाएंगे :

7. संविधान (तेरहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा तारीख 1-12-1963 से अंतःस्थापित ।

परंतु त्युएनसांग जिले का उपायुक्त प्रादेशिक परिषद् का पदेन अध्यक्ष होगा और प्रादेशिक परिषद् का उपाध्यक्ष उसके सदस्यों द्वारा अपने में से निर्वाचित किया जाएगा;

(ii) प्रादेशिक परिषद् के सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य होने के लिए अर्हताएं;

(iii) प्रादेशिक परिषद् के सदस्यों की पदावधि और उनको दिए जाने वाले वेतन और भत्ते, यदि कोई हों;

(iv) प्रादेशिक परिषद् की प्रक्रिया और कार्य संचालन;

(v) प्रादेशिक परिषद् के अधिकारियों और कर्मचारिवृंद की नियुक्ति और उनकी सेवा की शर्तें; और

(vi) कोई अन्य विषय जिसके संबंध में प्रादेशिक परिषद् के गठन और उसके उचित कार्यकरण के लिए नियम बनाने आवश्यक हैं ।

(2) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, नागालैंड राज्य के निर्माण की तारीख से दस वर्ष की अवधि तक या ऐसी अतिरिक्त अवधि के लिए जिसे राज्यपाल, प्रादेशिक परिषद् की सिफारिश पर, लोक अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, —

(क) त्युएनसांग जिले का प्रशासन राज्यपाल द्वारा चलाया जाएगा;

(ख) जहां भारत सरकार द्वारा नागालैंड सरकार को, संपूर्ण नागालैंड राज्य की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोई धन दिया जाता है वहां, राज्यपाल अपने विवेक से त्युएनसांग जिले और शेष राज्य के बीच उस धन के साम्यापूर्ण आबंटन के लिए प्रबंध करेगा;

(ग) नागालैंड विधान मंडल का कोई अधिनियम त्युएनसांग जिले को तब तक लागू नहीं होगा जब तक राज्यपाल, प्रादेशिक परिषद् की सिफारिश पर, लोक अधिसूचना द्वारा, इस प्रकार निदेश नहीं देता है और ऐसे किसी अधिनियम के संबंध में ऐसा निदेश देते हुए राज्यपाल यह निदिष्ट कर सकेगा कि वह अधिनियम त्युएनसांग जिले या उसके किसी भाग को लागू होने में ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए, प्रभावी होगा जिन्हें राज्यपाल प्रादेशिक परिषद् की सिफारिश पर विनिर्दिष्ट करे

परंतु इस उपखंड के अधीन दिया गया कोई निदेश इस प्रकार दिया जा सकेगा कि उसका भूतलक्षी प्रभाव हो,

(घ) राज्यपाल त्युएनसांग जिले की शांति, उन्नति और सुशासन के लिए विनियम बना सकेगा और इस प्रकार बनाए गए विनियम उस जिले को तत्समय लागू संसद् के किसी अधिनियम या किसी अन्य विधि का, यदि आवश्यक हो तो भूतलक्षी प्रभाव से निरसन या संशोधन कर सकेंगे;

(ङ) (i) नागालैंड विधान सभा में त्युएनसांग जिले का प्रतिनिधित्व करने वाले सदस्यों में से एक सदस्य को राज्यपाल, मुख्यमंत्री की सलाह पर त्युएनसांग कार्य मंत्री नियुक्त करेगा और मुख्यमंत्री अपनी सलाह देने में पूर्वोक्त[1] सदस्यों की बहुसंख्या की सिफारिश पर कार्य करेगा;

(ii) त्युएनसांग कार्य मंत्री त्युएनसांग जिले से संबंधित सभी विषयों की बाबत कार्य करेगा और उनके संबंध में राज्यपाल के पास उसकी सीधी पहुंच होगी किंतु वह उनके संबंध में मुख्यमंत्री को जानकारी देता रहेगा;

(च) इस खंड के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, त्युएनसांग जिले से संबंधित सभी विषयों पर अंतिम विनिश्चय राज्यपाल अपने विवेक से करेगा;

(छ) अनुच्छेद 54 और अनुच्छेद 55 में तथा अनुच्छेद 80 के खंड (4) में राज्य की विधान सभा के निर्वाचित सदस्यों के या ऐसे प्रत्येक सदस्य के प्रति निर्देशों के अंतर्गत इस अनुच्छेद के अधीन स्थापित प्रादेशिक परिषद् द्वारा निर्वाचित नागालैंड विधान सभा के सदस्यों या सदस्य के प्रति निर्देश होंगे;

(ज) अनुच्छेद 170 में —

(i) खंड (1) नागालैंड विधान सभा के संबंध में इस प्रकार प्रभावी होगा मानो "साठ" शब्द के स्थान पर "छियालीस" शब्द रख दिया गया हो;

(ii) उक्त खंड में, उस राज्य में प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों से प्रत्यक्ष निर्वाचन के प्रति निर्देश के अंतर्गत इस अनुच्छेद के अधीन स्थापित प्रादेशिक परिषद् के सदस्यों द्वारा निर्वाचन होगा;

(iii) खंड (2) और खंड (3) में प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों के प्रति निर्देश से कोहिमा और मोकोकचुंग जिलों में प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों के प्रति निर्देश अभिप्रेत होंगे ।

(3) यदि इस अनुच्छेद के पूर्वगामी उपबंधों में से किसी उपबंध को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, कोई ऐसी बात (जिसके अंतर्गत किसी अन्य अनुच्छेद का कोई अनुकूलन या उपांतरण है) कर सकेगा जो उस कठिनाई को दूर करने के प्रयोजन के लिए उसे आवश्यक प्रतीत होती है :

परंतु ऐसा कोई आदेश नागालैंड राज्य के निर्माण की तारीख से तीन वर्ष की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद में, कोहिमा, मोकोकचुंग और त्युएनसांग जिलों का वही अर्थ है जो नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 में है ।

अनुच्छेद 371क का प्रविषय — दिल्ली में भारत सरकार ने नागा पीपुल्स कन्वेंशन के नेताओं से एक समझौता किया जिसके अनुसार यह तय हुआ कि नागा हिल, त्वानसांग एरिया (नागालैंड) जो उस समय असम राज्य के भीतर भाग ख जनजाति क्षेत्र था, भारत संघ में एक पृथक् राज्य बनाया जाएगा ।

यह अनुच्छेद उस करार को लागू करने के लिए 1962 में अंतःस्थापित किया गया और उसके पश्चात् नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 बनाया गया ।

असम राज्य के संबंध में विशेष उपबंध ।

[7क]371ख. *इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति, असम राज्य के संबंध में किए गए आदेश द्वारा, उस राज्य की विधान सभा की एक समिति के गठन और कृत्यों के लिए, जो समिति छठी अनुसूची के पैरा 20 से संलग्न सारणी के [8][भाग 1] में विनिर्दिष्ट जनजाति क्षेत्रों से निर्वाचित उस विधान सभा के सदस्यों से और उस विधान सभा के उतने अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगी जितने आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं तथा ऐसी समिति के गठन और उसके उचित कार्यकरण के लिए उस विधान सभा की प्रक्रिया के नियमों में किए जाने वाले उपांतरणों के लिए उपबंध कर सकेगा ।*

अनुच्छेद 371ख का प्रविषय — अनुच्छेद 371ख संविधान (22वें संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा 25-9-1969 से अंतःस्थापित किया गया था जिससे कि मेघालय का एक उपराज्य बनाया जा सके । बाद में पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा मेघालय को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया ।

मणिपुर राज्य के संबंध में विशेष उपबंध ।

[9]371ग. *(1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, राष्ट्रपति, मणिपुर राज्य के संबंध में किए गए आदेश द्वारा, उस राज्य की विधान सभा की एक समिति के गठन और कृत्यों के लिए, जो समिति उस राज्य के पहाड़ी क्षेत्रों से निर्वाचित उस विधान सभा के*

7क. संविधान (बाइसवां संशोधन) अधिनियम, 1969 द्वारा अंतःस्थापित ।

8. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 21-1-1972 से प्रतिस्थापित ।

9. संविधान (सत्ताईसवां संशोधन) अधिनियम, 1971 द्वारा तारीख 15-2-1972 से अंतःस्थापित

सदस्यों से मिलकर बनेगी, राज्य की सरकार के कामकाज के नियमों में और राज्य की विधान सभा की प्रक्रिया के नियमों में किए जाने वाले उपांतरणों के लिए और ऐसी समिति का उचित कार्यकरण सुनिश्चित करने के उद्देश्य से राज्यपाल के किसी विशेष उत्तरदायित्व के लिए उपबंध कर सकेगा ।

(2) राज्यपाल प्रतिवर्ष या जब कभी राष्ट्रपति ऐसी अपेक्षा करे, मणिपुर राज्य के पहाड़ी क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देगा और संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार उक्त क्षेत्रों के प्रशासन के बारे में राज्य को निदेश देने तक होगा ।

स्पष्टीकरण — इस अनुच्छेद में, "पहाड़ी क्षेत्रों" से ऐसे क्षेत्र अभिप्रेत हैं जिन्हें राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, पहाड़ी क्षेत्र घोषित करे ।

अनुच्छेद 371ग का प्रविषय — पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा मणिपुर अब राज्य हो गया है । उस राज्य के पहाड़ी क्षेत्रों के हितों के संरक्षण के लिए विधान सभा की एक समिति बनाई जाएगी ।

आंध्र प्रदेश राज्य के संबंध में विशेष उपबंध ।

[10]**371घ.** *(1) राष्ट्रपति, आंध्र प्रदेश राज्य के संबंध में किए गए आदेश द्वारा, संपूर्ण आंध्र प्रदेश राज्य की आवश्यकताओं का ध्यान रखते हुए, उस राज्य के विभिन्न भागों के लोगों के लिए लोक नियोजन के विषय में और शिक्षा के विषय में साम्यापूर्ण अवसरों और सुविधाओं का उपबंध कर सकेगा और राज्य के विभिन्न भागों के लिए भिन्न-भिन्न उपबंध किए जा सकेंगे ।*

(2) खंड (1) के अधीन किया गया आदेश विशिष्टतया —

(क) राज्य सरकार से यह अपेक्षा कर सकेगा कि वह राज्य की सिविल सेवा में पदों के किसी वर्ग या वर्गों का अथवा राज्य के अधीन सिविल पदों के किसी वर्ग या वर्गों का राज्य के भिन्न भागों के लिए भिन्न स्थानीय काडरों में गठन करे और ऐसे सिद्धांतों और प्रक्रिया के अनुसार जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, ऐसे पदों को धारण करने वाले व्यक्तियों का इस प्रकार गठित स्थानीय काडरों में आबटन करे;

(ख) राज्य के ऐसे भाग या भागों को विनिर्दिष्ट कर सकेगा जो —

(i) राज्य सरकार के अधीन किसी स्थानीय काडर में (चाहे उसका गठन इस अनुच्छेद के अधीन आदेश के अनुसरण में या अन्यथा किया गया है) पदों के लिए सीधी भर्ती के लिए,

(ii) राज्य के भीतर किसी स्थानीय प्राधिकारी के अधीन किसी काडर में पदों के लिए सीधी भर्ती के लिए, और

(iii) राज्य के भीतर किसी विश्वविद्यालय में या राज्य सरकार के नियन्त्रण के अधीन किसी अन्य शिक्षा संस्था मे प्रवेश के प्रयोजन के लिए,

स्थानीय क्षेत्र समझे जाएंगे ;

(ग) वह विस्तार विनिर्दिष्ट कर सकेगा जिस तक, वह रीति विनिर्दिष्ट कर सकेगा जिससे और वे शर्तें विनिर्दिष्ट कर सकेगा जिनके अधीन, यथास्थिति, ऐसे काडर, विश्वविद्यालय या अन्य शिक्षा संस्था के संबंध में ऐसे अभ्यर्थियों को, जिन्होने आदेश में विनिर्दिष्ट किसी अवधि के लिए स्थानीय क्षेत्र में निवास या अध्ययन किया है —

(i) उपखंड (ख) में निर्दिष्ट ऐसे काडर में जो इस निमित्त आदेश में विनिर्दिष्ट किया जाए, पदों के लिए सीधी भर्ती के विषय में;

(ii) उपखंड (ख) में निर्दिष्ट ऐसे विश्वविद्यालय या अन्य शिक्षा संस्था में जो इस निमित्त आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, प्रवेश के विषय में,

अधिमान दिया जाएगा या उनके लिए आरक्षण किया जाएगा ।

---

10. संविधान (बत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1973 द्वारा तारीख 1-7-1974 से अंतःस्थापित

(3) राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, आंध्र प्रदेश राज्य के लिए एक प्रशासनिक अधिकरण के गठन के लिए उपबंध कर सकेगा जो अधिकरण निम्नलिखित विषयों की बाबत ऐसी अधिकारिता, शक्ति और प्राधिकार का [जिसके अंतर्गत वह अधिकारिता, शक्ति या प्राधिकार है जो संविधान (बत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1973 के प्रारंभ से ठीक पहले (उच्चतम न्यायालय से भिन्न) किसी न्यायालय द्वारा अथवा किसी अधिकरण या अन्य प्राधिकारी द्वारा प्रयोक्तव्य था] प्रयोग करेगा जो आदेश में विनिर्दिष्ट किया जाए, अर्थात् :

(क) राज्य की सिविल सेवा में ऐसे वर्ग या वर्गों के पदों पर अथवा राज्य के अधीन ऐसे वर्ग या वर्गों के सिविल पदों पर अथवा राज्य के भीतर किसी स्थानीय प्राधिकारी के नियंत्रण के अधीन ऐसे वर्ग या वर्गों के पदों पर जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, नियुक्ति, आबंटन या प्रोन्नति;

(ख) राज्य की सिविल सेवा में ऐसे वर्ग या वर्गों के पदों पर अथवा राज्य के अधीन ऐसे वर्ग या वर्गों के सिविल पदों पर अथवा राज्य के भीतर किसी स्थानीय प्राधिकारी के नियंत्रण के अधीन ऐसे वर्ग या वर्गों के पदों पर जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, नियुक्त, आबंटित या प्रोन्नत व्यक्तियों की ज्येष्ठता;

(ग) राज्य की सिविल सेवा में ऐसे वर्ग या वर्गों के पदों पर अथवा राज्य के अधीन ऐसे वर्ग या वर्गों के सिविल पदों पर अथवा राज्य के भीतर किसी स्थानीय प्राधिकारी के नियंत्रण के अधीन ऐसे वर्ग या वर्गों के पदों पर नियुक्त, आबंटित या प्रोन्नत व्यक्तियों की सेवा की ऐसी अन्य शर्तें जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाएं ।

(4) खंड (3) के अधीन किया गया आदेश —

(क) प्रशासनिक अधिकरण को उसकी अधिकारिता के भीतर किसी विषय से संबंधित व्यथाओं के निवारण के लिए ऐसे अभ्यावेदन प्राप्त करने के लिए, जो राष्ट्रपति आदेश में विनिर्दिष्ट करे और उस पर ऐसे आदेश करने के लिए जो वह प्रशासनिक अधिकरण ठीक समझता है, प्राधिकृत कर सकेगा;

(ख) प्रशासनिक अधिकरण की शक्तियों और प्राधिकारों और प्रक्रिया के संबंध में ऐसे उपबंध (जिनके अंतर्गत प्रशासनिक अधिकरण की अपने अवमान के लिए दंड देने की शक्ति के संबंध में उपबंध है) अंतर्विष्ट कर सकेगा जो राष्ट्रपति आवश्यक समझे;

(ग) प्रशासनिक अधिकरण को उसकी अधिकारिता के भीतर आने वाले विषयों से संबंधित और उस आदेश के प्रारंभ से ठीक पहले (उच्चतम न्यायालय से भिन्न) किसी न्यायालय अथवा किसी अधिकरण या अन्य प्राधिकारी के समक्ष लंबित कार्यवाहियों के ऐसे वर्गों के, जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, अंतरण के लिए उपबंध कर सकेगा,

(घ) ऐसे अनुपूरक, आनुषंगिक और पा[illegible]
में और परिसीमा [illegible]

[illegible] जा राष्ट्रपति

[illegible] को अंतिम रूप से निपटाने वाला आदेश,
[illegible] किए जाने पर या आदेश किए जाने की तारीख से तीन
[illegible], इनमें से जो भी पहले हो, प्रभावी हो जाएगा :

परंतु राज्य सरकार, विशेष आदेश द्वारा, जो लिखित रूप में किया जाएगा और जिसमें उसके कारण विनिर्दिष्ट किए जाएंगे, प्रशासनिक अधिकरण के किसी आदेश को उसके प्रभावी

11. अनुच्छेद 371घ के खंड (5) और उसके परंतुक को उच्चतम न्यायालय ने इस आधार पर शून्य घोषित कर दिया है कि वह नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का विनाश करता है । पी. *सांबमूर्ति बनाम आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 663 ।

होने के पहले उपांतरित या रद्द कर सकेगी और ऐसे मामले में प्रशासनिक अधिकरण का आदेश, यथास्थिति, ऐसे उपांतरित रूप में ही प्रभावी होगा या वह निष्प्रभाव हो जाएगा ।

(6) राज्य सरकार द्वारा खंड (5) के परंतुक के अधीन किया गया प्रत्येक विशेष आदेश, किए जाने के पश्चात् यथाशक्य शीघ्र, राज्य विधान मंडल के दोनों सदनों के समक्ष रखा जाएगा ।

(7) राज्य के उच्च न्यायालय को प्रशासनिक अधिकरण पर अधीक्षण की शक्ति नहीं होगी और (उच्चतम न्यायालय से भिन्न) कोई न्यायालय अथवा कोई अधिकरण, प्रशासनिक अधिकरण की या उसके संबंध में अधिकारिता, शक्ति या प्राधिकार के अधीन किसी विषय की बाबत किसी अधिकारिता, शक्ति या प्राधिकार का प्रयोग नहीं करेगा ।

(8) यदि राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि प्रशासनिक अधिकरण का निरंतर बने रहना आवश्यक नहीं है तो राष्ट्रपति आदेश द्वारा प्रशासनिक अधिकरण का उत्सादन कर सकेगा और ऐसे उत्सादन से ठीक पहले अधिकरण के समक्ष लंबित मामलो के अंतरण और निपटारे के लिए ऐसे आदेश में ऐसे उपबंध कर सकेगा जो वह ठीक समझे ।

(9) किसी न्यायालय, अधिकरण या अन्य प्राधिकारी के किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के होते हुए भी, —

(क) किसी व्यक्ति की कोई नियुक्ति, पदस्थापना, प्रोन्नति या अंतरण की बाबत जो —

(i) 1 नवंबर, 1956 से पहले यथाविद्यमान हैदराबाद राज्य की सरकार के या उसके भीतर किसी स्थानीय प्राधिकारी के अधीन उस तारीख से पहले किसी पद पर किया गया था, या

(ii) संविधान (बत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1973 के प्रारंभ से पहले आंध्र प्रदेश राज्य की सरकार के अधीन या उस राज्य के भीतर किसी स्थानीय या अन्य प्राधिकारी के अधीन किसी पद पर किया गया था, और

(ख) उपखंड (क) मे निर्दिष्ट किसी व्यक्ति द्वारा या उसके समक्ष की गई किसी कार्रवाई या बात की बाबत,

केवल इस आधार पर कि ऐसे व्यक्ति की नियुक्ति, पदस्थापना, प्रोन्नति या अंतरण, ऐसी नियुक्ति, पदस्थापना, प्रोन्नति या अंतरण की बाबत, यथास्थिति, हैदराबाद राज्य के भीतर या आंध्र प्रदेश राज्य के किसी भाग के भीतर निवास के बारे मे किसी अपेक्षा का उपबंध करने वाली तत्समय प्रवृत्त विधि के अनुसार नही किया गया था, यह नही समझा जाएगा कि वह अवैध या शून्य है या कभी भी अवैध या शून्य रहा था ।

(10) इस अनुच्छेद के और राष्ट्रपति द्वारा इसके अधीन किए गए किसी आदेश के उपबंध इस संविधान के किसी अन्य उपबंध में या तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में किसी बात के होते हुए भी प्रभावी होंगे ।

अनुच्छेद 371घ का उद्देश्य — अनुच्छेद 371घ के अधिनियमित किए जाने का प्राथमिक उद्देश्य,[12] —

(i) आंध्र राज्य के पिछड़े हुए क्षेत्रों का त्वरित विकास करना जिससे समग्र राज्य का संतुलित विकास हो सके,

(ii) शिक्षा, लोकसेवा में नियोजन और भावी प्रोन्नति आदि की दृष्टि से राज्य के विभिन्न क्षेत्रों के बीच समान अवसर प्रदान करना ।[12]

प्रशासनिक अधिकरण पर उच्च न्यायालय की अधिकारिता का अपवर्जन — 1. इस अनुच्छेद के खंड (3) के आधार पर इस अनुच्छेद में विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए आंध्र प्रदेश राज्य के लिए एक प्रशासनिक अधिकरण का गठन किया गया है ।[13]

12. *मुख्य न्यायमूर्ति बनाम दीक्षितलु*, ए. 1979 एस.सी. 193 (पैरा 70, 73) ।
13. तुलना कीजिए, *भारत सरकार बनाम नेशनल टोबैको कंपनी*, ए. 1977 आंध्र प्रदेश 250 (पैरा 5) ।

2. अतएव खंड (7) के अधीन, — (i) खंड (3) के द्वारा जो विषय प्रशासनिक अधिकरण को सौंपे गए हैं उन पर उच्चतम न्यायालय को छोड़कर उच्च न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय को कोई अधिकारिता नहीं होगी । (ii) आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय को संविधान के अनुच्छेद 226 से 227 के अधीन उस अधिकरण पर अधीक्षण की शक्ति नहीं रहेगी ।

3. किंतु उच्च न्यायालय की अपने कर्मचारिवृंद पर और अधीनस्थ न्यायपालिका पर जो शक्ति अनुच्छेद 229 और 235 के अधीन हैं वह अनुच्छेद 371घ(3) द्वारा छीनी नहीं गई है क्योंकि इस अनुच्छेद का उद्देश्य न्यायपालिका की स्वतंत्रता को कम करना नहीं था ।[12]

आंध्र प्रदेश में केंद्रीय विश्वविद्यालय की स्थापना ।

[14]*371ङ. संसद् विधि द्वारा, आंध्र प्रदेश राज्य में एक विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए उपबंध कर सकेगी ।*

सिक्किम राज्य के संबंध में विशेष उपबंध ।

[15]*371च. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, —*

(क) सिक्किम राज्य की विधान सभा कम से कम तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी,

(ख) संविधान (छत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 के प्रारंभ की तारीख से (जिसे इस अनुच्छेद में इसके पश्चात् नियत दिन कहा गया है) —

(i) सिक्किम की विधान सभा, जो अप्रैल, 1974 में सिक्किम मे हुए निर्वाचनों के परिणामस्वरूप उक्त निर्वाचनों में निर्वाचित बत्तीस सदस्यो से (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् आसीन सदस्य कहा गया है) मिलकर बनी है, इस संविधान के अधीन सम्यक् रूप से गठित सिक्किम राज्य की विधान सभा समझी जाएगी,

(ii) आसीन सदस्य इस संविधान के अधीन सम्यक् रूप से निर्वाचित सिक्किम राज्य की विधान सभा के सदस्य समझे जाएंगे, और

(iii) सिक्किम राज्य की उक्त विधान सभा इस संविधान के अधीन राज्य की विधान सभा की शक्तियो का प्रयोग और कृत्यों का पालन करेगी;

(ग) खंड (ख) के अधीन सिक्किम राज्य की विधान सभा समझी गई विधान सभा की दशा में, अनुच्छेद 172 के खंड (1) में [16][पांच वर्ष] की अवधि के प्रति निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे [16][चार वर्ष] की अवधि के प्रति निर्देश है और [16][चार वर्ष] की उक्त अवधि नियत दिन से प्रारंभ हुई समझी जाएगी,

(घ) जब तक संसद् विधि द्वारा अन्य उपबंध नहीं करती है तब तक सिक्किम राज्य को लोक सभा मे एक स्थान आबंटित किया जाएगा और सिक्किम राज्य एक संसदीय निर्वाचन-क्षेत्र होगा जिसका नाम सिक्किम संसदीय निर्वाचन-क्षेत्र होगा;

(ङ) नियत दिन को विद्यमान लोक सभा में सिक्किम राज्य का प्रतिनिधि सिक्किम राज्य की विधान सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किया जाएगा;

(च) संसद्, सिक्किम की जनता के विभिन्न अनुभागों के अधिकारों और हितों की संरक्षा करने के प्रयोजन के लिए सिक्किम राज्य की विधान सभा में उन स्थानों की संख्या के लिए जो ऐसे अनुभागों के अभ्यर्थियों द्वारा भरे जा सकेंगे और ऐसे सभा निर्वाचन-क्षेत्रों के परिसीमन के लिए, जिनसे केवल ऐसे अनुभागों के अभ्यर्थी ही सिक्किम राज्य की विधान सभा के निर्वाचन के लिए खड़े हो सकेंगे, उपबंध कर सकेगी;

(छ) सिक्किम के राज्यपाल का, शांति के लिए और सिक्किम की जनता के विभिन्न

14. संविधान (बत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1973 द्वारा तारीख 1-7-1974 से अंतःस्थापित ।
15. संविधान (छत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा तारीख 26-4-1975 से अंतःस्थापित ।
16. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 द्वारा तारीख 6-9-1979 से प्रतिस्थापित ।

अनुभागों की सामाजिक और आर्थिक उन्नति सुनिश्चित करने के लिए साम्यापूर्ण व्यवस्था करने के लिए विशेष उत्तरदायित्व होगा और इस खंड के अधीन अपने विशेष उत्तरदायित्व का निर्वहन करने में सिक्किम का राज्यपाल ऐसे निदेशों के अधीन रहते हुए जो राष्ट्रपति समय-समय पर देना ठीक समझे, अपने विवेक से कार्य करेगा;

(ज) सभी संपत्ति और आस्तियां (चाहे वे सिक्किम राज्य में समाविष्ट राज्यक्षेत्रों के भीतर हों या बाहर) जो नियत दिन से ठीक पहले सिक्किम सरकार में या सिक्किम सरकार के प्रयोजनों के लिए किसी अन्य प्राधिकारी या व्यक्ति में निहित थीं, नियत दिन से सिक्किम राज्य की सरकार में निहित हो जाएंगी;

(झ) सिक्किम राज्य में समाविष्ट राज्यक्षेत्रों में नियत दिन से ठीक पहले उच्च न्यायालय के रूप में कार्यरत उच्च न्यायालय नियत दिन को और से सिक्किम राज्य का उच्च न्यायालय समझा जाएगा;

(ञ) सिक्किम राज्य के राज्यक्षेत्र में सर्वत्र सिविल, दांडिक और राजस्व अधिकारिता वाले सभी न्यायालय तथा सभी न्यायिक, कार्यपालक और अनुसचिवीय प्राधिकारी और अधिकारी नियत दिन को और से अपने-अपने कृत्यों को इस संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए, करते रहेंगे;

(ट) सिक्किम राज्य में समाविष्ट राज्यक्षेत्र में या उसके किसी भाग में नियत दिन से ठीक पहले प्रवृत्त सभी विधियां वहां तब तक प्रवृत्त बनी रहेंगी जब तक किसी सक्षम विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा उनका संशोधन या निरसन नहीं कर दिया जाता है;

(ठ) सिक्किम राज्य के प्रशासन के संबंध में किसी ऐसी विधि को, जो खंड (ट) में निर्दिष्ट है, लागू किए जाने को सुकर बनाने के प्रयोजन के लिए और किसी ऐसी विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाने के प्रयोजन के लिए राष्ट्रपति, नियत दिन से दो वर्ष के भीतर, आदेश द्वारा, ऐसी विधि में निरसन के रूप में या संशोधन के रूप में ऐसे अनुकूलन और उपांतरण कर सकेगा जो आवश्यक या समीचीन हों और तब प्रत्येक ऐसी विधि इस प्रकार किए गए अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगी और किसी ऐसे अनुकूलन या उपांतरण को किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा;

(ड) उच्चतम न्यायालय या किसी अन्य न्यायालय को, सिक्किम के संबंध में किसी ऐसी संधि, करार, वचनबंध या वैसी ही अन्य लिखत से, जो नियत दिन से पहले की गई . ना निष्पादित की गई थी और जिसमें भारत सरकार या उसकी पूर्ववर्ती कोई सरकार पक्षकार थी, उत्पन्न किसी विवाद या अन्य विषय के संबंध में अधिकारिता नहीं होगी, किंतु इस खंड की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह अनुच्छेद 143 के उपबंधों का अल्पीकरण करती है;

(ढ) राष्ट्रपति, लोक अधिसूचना द्वारा, किसी ऐसी अधिनियमिति का विस्तार, जो उस अधिसूचना की तारीख को भारत के किसी राज्य में प्रवृत्त है, ऐसे निर्बन्धनों या उपांतरणों सहित, जो वह ठीक समझता है, सिक्किम राज्य पर कर सकेगा;

(ण) यदि इस अनुच्छेद के पूर्वगामी उपबंधों में से किसी उपबंध को प्रभावी करने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, कोई ऐसी बात (जिसके अंतर्गत किसी अन्य अनुच्छेद का कोई अनुकूलन या उपांतरण है) कर सकेगा जो उस कठिनाई को दूर करने के प्रयोजन के लिए उसे आवश्यक प्रतीत होती है :

परंतु ऐसा कोई आदेश नियत दिन से दो वर्ष की समाप्ति के पश्चात् नहीं किया जाएगा;

(त) सिक्किम राज्य या उसमें समाविष्ट राज्यक्षेत्रों में या उनके संबंध में, नियत दिन को प्रारंभ होने वाली और उस तारीख से जिसको संविधान (छत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त करता है, ठीक पहले समाप्त होने वाली अवधि के दौरान

की गई सभी बातें और कार्रवाइयां, जहां तक वे संविधान (छत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा यथासंशोधित इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप हैं, सभी प्रयोजनों के लिए इस प्रकार यथासंशोधित इस संविधान के अधीन विधिमान्यतः की गई समझी जाएंगी ।

अनुच्छेद 371च का संक्षिप्त इतिहास – ब्रिटिशकाल में सिक्किम एक भारतीय राज्य था जिसका राजा चोग्याल कहलाता था । यह राज्य ब्रिटेन की सर्वोपरिता के अधीन था ।

जब भारत स्वतंत्र हुआ तो सिक्किम की जनता के एक भाग की यह राय थी कि उसका भारत में विलय हो जाना चाहिए । किंतु उस राज्य का राजा और उसकी सामरिक महत्व की स्थिति आड़े आई । इस कारण सर्वोपरिता समाप्त हो जाने के बाद भारत सरकार और सिक्किम के बीच एक संधि हुई जिसके अनुसार भारत ने सिक्किम की प्रतिरक्षा, विदेश कार्य और संचार का उत्तरदायित्व अपने ऊपर लिया । इस प्रकार सिक्किम भारत के द्वारा रक्षित राज्य हो गया ।

मई 1974 में सिक्किम कांग्रेस ने राजा के शासन को समाप्त करने का निर्णय किया । सिक्किम की विधान सभा ने सिक्किम शासन अधिनियम, 1974 पारित किया जिसका उद्देश्य सिक्किम में पूर्णतया उत्तरदायी सरकार की स्थापना था । और साथ ही भारत से अपने संबंध निकट बनाना भी था । सिक्किम शासन अधिनियम के अधीन सिक्किम की विधान सभा को जो शक्ति मिली थी उसके आधार पर एक संकल्प पारित करके उसने यह इच्छा अभिव्यक्त की कि वह भारत की राजनीतिक और आर्थिक संस्थाओं में सहयुक्त होना चाहते हैं और भारत की संसदीय प्रणाली में सिक्किम के लोगों के प्रतिनिधि भी भेजना चाहते हैं ।

इस संकल्प को पारित करने के लिए तुरंत ही संविधान (35वां सशोधन) अधिनियम, 1974 पारित किया गया । इस संशोधन अधिनियम के मुख्य उपबंधों में निम्नलिखित थे, –

(i) सिक्किम भारत के राज्यक्षेत्र का भाग नहीं होगा किंतु वह सहयुक्त राज्य होगा । इसके लिए संविधान में अनुच्छेद 2क और दसवीं अनुसूची अंतःस्थापित की गई ।

(ii) सिक्किम दोनों सदनों में दो प्रतिनिधि भेज सकेगा जिनके अधिकार और विशेषाधिकार वही होंगे जो संसद् के अन्य सदस्यों के हैं । इसका अपवाद यह होगा कि सिक्किम के प्रतिनिधि भारत के राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के निर्वाचन में मतदान करने के हकदार नहीं होंगे ।

इसमें संदेह नहीं कि 35वां संशोधन अधिनियम, 1974 ने भारत के संविधान की मूल स्कीम में कुछ नई बातें जोडी हैं । 1949 के संविधान में "सहयुक्त राज्य" के लिए कोई स्थान नहीं था ।

भारत परिसंघ की प्रणाली में सहयुक्त राज्य के निर्माण की आलोचना की गई । किंतु थोड़े ही समय बाद सिक्किम को संविधान की पहली अनुसूची में 22वें राज्य के रूप में प्रवेश दिया गया और 35वें संशोधन अधिनियम, 1974 द्वारा जो अनुच्छेद 2क और 10वीं अनुसूची जोड़ी गई थी उसे 36वें संशोधन अधिनियम, 1975 द्वारा निकाल दिया गया । यह 36वां संशोधन थोड़े ही समय बाद किया गया और उसे 26-4-1975 से भूतलक्षी प्रभाव दिया गया ।

जब भारत की संसद् संविधान (35वां संशोधन) अधिनियम बना रही थी तब चोग्याल ने इसका विरोध किया और अंतरराष्ट्रीय हस्तक्षेप कराने का प्रयत्न किया । इससे सिक्किम की जनता का प्रगतिशील भाग प्रकुपित हो गया और 10-4-1975 को सिक्किम की राज्यसभा ने एक संकल्प पारित करके यह घोषित किया कि चोग्याल की गतिविधियां सिक्किम के लोगों की प्रजातांत्रिक आकांक्षाओं के विपरीत हैं तथा चोग्याल द्वारा मई, 1974 को किए गए करार के विरुद्ध हैं । विधान सभा ने आगे यह घोषणा की और यह संकल्प किया कि

"चोग्याल के पद का उत्सादन किया जाता है और अब से सिक्किम भारत की एक संघटक इकाई होगा जिसमें प्रजातांत्रिक और उत्तरदायित्वपूर्ण शासन होगा ।"

विधान सभा का संकल्प सिक्किम के लोगों को अनुमोदन के लिए प्रस्तुत किया गया। मत संग्रह में बहुत अधिक बहुमत प्राप्त हुआ और सिक्किम के मुख्य मंत्री ने मंत्रिपरिषद् की ओर से भारत सरकार से यह अनुरोध किया कि वह मत संग्रह के परिणाम को लागू करे। इसके परिणामस्वरूप भारत की संसद् ने संविधान (36वां संशोधन) अधिनियम, 1975 बनाया जिसका अनुच्छेद 368(2) के परंतुक के अधीन आवश्यक संख्या में राज्यों ने अनुसमर्थन किया।

36वें संशोधन अधिनियम द्वारा सिक्किम को भारत संघ के राज्य के रूप में प्रवेश दिया गया है। इसके लिए पहली और चौथी अनुसूची का, अनुच्छेद 80 और 81 का संशोधन किया गया है और अनुच्छेद 2क तथा दसवीं अनुसूची का लोप किया गया है। अनुच्छेद 371च अंतःस्थापित करके सिक्किम के प्रशासन से संबंधित विशेष उपबंध किए गए हैं जो सिक्किम की विशेष आवश्यकताओं और परिस्थितियों के लिए आवश्यक हैं।

[17]**371छ.** *इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, —*

मिजोरम राज्य के संबंध में विशेष उपबंध।

(क) निम्नलिखित के संबंध में संसद् का कोई अधिनियम मिजोरम राज्य को तब तक लागू नहीं होगा जब तक मिजोरम राज्य की विधान सभा संकल्प द्वारा ऐसा विनिश्चय नहीं करती है, अर्थात् :

(i) मिजो लोगों की धार्मिक या सामाजिक प्रथाएं;

(ii) मिजो रूढ़िजन्य विधि और प्रक्रिया,

(iii) सिविल और दांडिक न्याय प्रशासन, जहां विनिश्चय मिजो रूढ़िजन्य विधि के अनुसार होने हैं;

(iv) भूमि का स्वामित्व और अंतरण :

परंतु इस खंड की कोई बात, संविधान (तिरपनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 के प्रारंभ से ठीक पहले मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र में प्रवृत्त किसी केंद्रीय अधिनियम को लागू नहीं होगी;

(ख) मिजोरम राज्य की विधान सभा कम से कम चालीस सदस्यों से मिलकर बनेगी।

संशोधन — यह अनुच्छेद संविधान (53वां संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा मिजोरम अधिनियम, 1986 के साथ अंतःस्थापित किया गया। मिजोरम राज्य अधिनियम द्वारा मिजोरम के संघ राज्यक्षेत्र को राज्य का दर्जा दिया गया। इस अनुच्छेद द्वारा मिजो लोगों की स्थानीय रूढ़ियों, सार्वजनिक और धार्मिक प्रथाओं को संसदीय विधान से संरक्षण दिया गया है जिससे मिजोरम की विधान सभा की संपत्ति के बिना उसमें परिवर्तन न किया जाए। यह परिवर्तन "मिजो समझौते" के अनुसरण में किए गए हैं।

[17क]**371ज.** *इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, —*

अरुणाचल प्रदेश राज्य के संबंध में विशेष उपबंध।

(क) अरुणाचल प्रदेश के राज्यपाल का अरुणाचल प्रदेश राज्य में विधि और व्यवस्था के संबंध में विशेष उत्तरदायित्व रहेगा और राज्यपाल, उस संबंध मे अपने कृत्यों का निर्वहन करने में की जाने वाली कार्रवाई के बारे में अपने व्यक्तिगत निर्णय का प्रयोग मंत्रिपरिषद् से परामर्श करने के पश्चात् करेगा :

परंतु यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई मामला ऐसा मामला है या नहीं जिसके संबंध में राज्यपाल से इस खंड के अधीन अपेक्षा की गई है कि वह अपने व्यक्तिगत निर्णय का प्रयोग करके कार्य करे तो राज्यपाल का अपने विवेक से किया गया विनिश्चय अंतिम होगा

17. संविधान (तिरपनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा तारीख 20-2-1987 से अंतःस्थापित।
17क. संविधान (पचपनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा तारीख 20-2-1987 से अंतःस्थापित।

और राज्यपाल द्वारा की गई किसी बात की विधिमान्यता इस आधार पर प्रश्नगत नहीं की जाएगी कि उसे अपने व्यक्तिगत निर्णय का प्रयोग करके कार्य करना चाहिए था या नहीं :

परंतु यह और कि यदि राज्यपाल से प्रतिवेदन मिलने पर या अन्यथा राष्ट्रपति का यह समाधान हो जाता है कि अब यह आवश्यक नहीं है कि अरुणाचल प्रदेश राज्य में विधि और व्यवस्था के संबंध में राज्यपाल का विशेष उत्तरदायित्व रहे तो वह, आदेश द्वारा, निदेश दे सकेगा कि राज्यपाल का ऐसा उत्तरदायित्व उस तारीख से नहीं रहेगा जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए;

(ख) अरुणाचल प्रदेश राज्य की विधान सभा कम से कम तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी ।

गोवा राज्य के संबंध में विशेष उपबंध ।

[17ख]371झ. *इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, गोवा राज्य की विधान सभा कम से कम तीस सदस्यों से मिलकर बनेगी ।*

विद्यमान विधियों का प्रवृत्त बने रहना और उनका अनुकूलन ।

372. (1) अनुच्छेद 395 में निर्दिष्ट अधिनियमितियों का इस संविधान द्वारा निरसन होने पर भी, किंतु इस संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत के राज्यक्षेत्र में सभी प्रवृत्त विधि वहां तब तक प्रवृत्त बनी रहेगी जब तक किसी सक्षम विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा उसे परिवर्तित या निरसित या संशोधित नहीं कर दिया जाता है ।

(2) भारत के राज्यक्षेत्र में किसी प्रवृत्त विधि के उपबंधों को इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाने के प्रयोजन के लिए राष्ट्रपति, आदेश द्वारा, ऐसी विधि में निरसन के रूप में या संशोधन के रूप में ऐसे अनुकूलन और उपांतरण कर सकेगा जो आवश्यक या समीचीन हों और यह उपबंध कर सकेगा कि वह विधि ऐसी तारीख से जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, इस प्रकार किए गए अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगी और किसी ऐसे अनुकूलन या उपांतरण को किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।

(3) खंड (2) की कोई बात —

(क) राष्ट्रपति को इस संविधान के प्रारंभ से [18][*तीन वर्ष*] की समाप्ति के पश्चात् किसी विधि का कोई अनुकूलन या उपांतरण करने के लिए सशक्त करने वाली, या

(ख) किसी सक्षम विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को, राष्ट्रपति द्वारा उक्त खंड के अधीन अनुकूलित या उपांतरित किसी विधि का निरसन या संशोधन करने से रोकने वाली,

नहीं समझी जाएगी ।

स्पष्टीकरण 1 — इस अनुच्छेद में, "प्रवृत्त विधि" पद के अंतर्गत ऐसी विधि है जो इस संविधान के प्रारंभ से पहले भारत के राज्यक्षेत्र में किसी विधान मंडल द्वारा या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित की गई है या बनाई गई है और पहले ही निरसित नहीं कर दी गई है, भले ही वह या उसके कोई भाग तब पूर्णतः या किन्हीं विशिष्ट क्षेत्रों में प्रवर्तन में न हों ।

स्पष्टीकरण 2 — भारत के राज्यक्षेत्र में किसी विधान मंडल द्वारा या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा पारित की गई या बनाई गई ऐसी विधि का, जिसका इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले राज्यक्षेत्रातीत प्रभाव था और भारत के राज्यक्षेत्र में भी प्रभाव था, यथापूर्वोक्त किन्हीं अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए, ऐसा राज्यक्षेत्रातीत प्रभाव बना रहेगा ।

17ख. संविधान (छप्पनवां संशोधन) अधिनियम, 1987 द्वारा तारीख 30-5-1987 से अंतःस्थापित

18. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा "दो वर्ष" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

स्पष्टीकरण 3 — **इस अनुच्छेद की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी अस्थायी प्रवृत्त विधि को, उसकी समाप्ति के लिए नियत तारीख से, या उस तारीख से जिसको, यदि यह संविधान प्रवृत्त न हुआ होता तो, वह समाप्त हो जाती, आगे प्रवृत्त बनाए रखती है ।**

स्पष्टीकरण 4 — **किसी प्रांत के राज्यपाल द्वारा भारत शासन अधिनियम, 1935 की धारा 88 के अधीन प्रख्यापित और इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले प्रवृत्त अध्यादेश, यदि तत्स्थानी राज्य के राज्यपाल द्वारा पहले ही वापस नहीं ले लिया गया है तो, ऐसे प्रारंभ के पश्चात् अनुच्छेद 382 के खंड (1) के अधीन कार्यरत उस राज्य की विधान सभा के प्रथम अधिवेशन से छह सप्ताह की समाप्ति पर प्रवर्तन में नहीं रहेगा और इस अनुच्छेद की किसी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह ऐसे किसी अध्यादेश को उक्त अवधि से आगे प्रवृत्त बनाए रखती है ।**

खंड (1) : संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए — विद्यमान विधि इस अनुच्छेद के अधीन प्रवृत्त तो बनी रहती है किंतु वह संविधान के किसी उपबंध का उल्लंघन नहीं कर सकती जैसे अनुच्छेद 226 या 227,[19] या 285 ।[20]

किंतु यदि कोई असंगतता है तो उसका अवधारण संविधान के अभिव्यक्त उपबंधों के प्रति निर्देश से किया जाएगा किसी अन्य बात से नहीं ।[19]

(क) सरकारी ऋणों को पूर्विकता का सिद्धांत प्रजातंत्रीय संविधान की किसी बात से असंगत नहीं है क्योंकि राज्य के उचित रूप से कार्य करने के लिए यह आवश्यक है कि सार्वजनिक निधि से जो ऋण दिए गए हैं उन्हें प्राइवेट व्यक्ति के ऋणों पर पूर्विकता प्राप्त हो ।[21]

(ख) विधि बनाने की विधान मंडल की क्षमता का अवधारण उस समय की विधि के प्रति निर्देश से किया जाना चाहिए जब कोई विधि बनाई जाती है । संविधान के उपबंधों के प्रति निर्देश से नहीं ।[22]

यदि कोई विधि जब वह बनाई गई थी तब भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन अविधिमान्य थी तो संविधान के पश्चात् वह बनी नहीं रह सकती । संविधान के उपबंधों के उल्लंघन का प्रश्न उसके संबंध में उपस्थित नहीं होता ।[23]

किंतु यदि संविधान पूर्व की विधि सक्षम प्राधिकारी द्वारा बनाई गई थी तो वह संविधान के पश्चात् केवल इस कारण अविधिमान्य नहीं हो जाएगी कि उस प्राधिकारी को अब उस विषय-वस्तु पर विधान बनाने का अधिकार नहीं है । किंतु विधायी शक्ति के वितरण को छोड़कर यदि वह विधि संविधान के किसी अन्य उपबंध का उल्लंघन करती है तो वह अविधिमान्य होगी ।[24] इसी कारण यदि कोई संविधान के पूर्व विद्यमान विधि अधिनियमित किए जाने के समय विधिमान्य थी और संविधान के प्रारंभ के पश्चात् प्रवृत्त बनी रही तो वह संविधान के पश्चात् किसी केन्द्रीय विधि से असंगतता के कारण अनुच्छेद 354 के अधीन शून्य नहीं होगी । राज्य विधि अनुच्छेद 372 के कारण तब तक बनी रहेगी जब तक सक्षम प्राधिकारी द्वारा निरसित न की जाए ।

"सभी प्रवृत्त विधियां" — इस अभिव्यक्ति में न केवल भारतीय विधान मंडल की अधिनियमितियां आती हैं बल्कि देश की वह सामान्य विधि भी आ जाती है जो न्यायालयों द्वारा प्रशासित की जाती थी । इसमें व्यक्तिगत विधि भी है अर्थात् हिंदु और मुस्लिम विधियां

19. *एस आई कारपोरेशन* बनाम *राजस्व बोर्ड*, ए 1964 एस.सी. 207 (*215*) ।
20. *भारत संघ* बनाम *बेल्लारी नगरपालिका*, ए. 1978 एस.सी. 1803 (पैरा 8) ।
21. *बिल्डर्स सप्लाई कारपोरेशन* बनाम *भारत संघ*, ए. 1965 एस.सी. 1061 ।
22. *पाटनकर* बनाम *शास्त्री*, ए. 1961 एस.सी. 272 ।
23. *उमेद मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1963 एस.सी 953 (*957-59*) ।
24. *एस आई. कारपोरेशन* बनाम *राजस्व बोर्ड*, ए. 1964 एस.सी. 207 (*215*) ।

और साथ ही इंग्लैंड के कॉमन लॉ के नियम भी, जैसे अपकृत्य की विधि ।[25] इसमें रूढ़िगत विधि और अधिनियमों के निर्वचन के नियम भी हैं ।[25]

अनुच्छेद 366(10) और अनुच्छेद 372 दोनों में "विधि" के अंतर्गत अधीनस्थ विधान है ।[26]

किंतु निर्वचन का नियम इस अनुच्छेद के अधीन विधि नहीं समझा जा सकता जैसे, यह नियम कि "सम्राट कानून से आबद्ध नहीं होता" ।[27]

देशी रियासतों का संविधान[28] और देशी रियासत के शासक द्वारा बनाई गई विधायी प्रकृति का प्रत्येक आदेश[29] विधि का बल रखता था और अनुच्छेद 372(1) के अधीन विद्यमान विधि था । ऐसे आदेश द्वारा प्रदत्त अधिकारों को विधान द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है ।[30]

किंतु ऐसे शासक द्वारा किए गए किसी कार्यपालिका कृत्य[31-32] या अनुदान[33] या संविदा को समुचित उत्तरवर्ती सरकार के कार्यपालिका कृत्य द्वारा उपांतरित किया जा सकता है ।[31] जैसे, जब शासक कुछ प्रशासनिक नियमों के अधीन कार्य कर रहा था जो उसने स्वयं बनाए थे और यह कार्य प्रभु शक्ति का प्रयोग नहीं था ।[32]

संविधान के अधीन बनाए गए अधीनस्थ विधान की विधिमान्यता — जब तक विद्यमान विधि अनुच्छेद 372 के आधार पर प्रवृत्त बनी रहती है, तब तक ऐसी विधि द्वारा प्रदत्त अधीनस्थ विधान बनाने की विधिमान्यता बनी रहती है । अतएव संविधान के प्रारंभ के पश्चात् भी ऐसी विधि के अधीन आदेश या अधिसूचना निकाली जा सकती है चाहे उस विधान मंडल की उस विषय से संबंधित नई विधि बनाने की शक्ति समाप्त हो गई हो ।[34]

"भारत के राज्यक्षेत्र में" — इस अभिव्यक्ति में वे सभी विधियां सम्मिलित हैं जो ब्रिटिश इंडिया के प्रांतों में विद्यमान थीं । और वे भी जो देशी रियासतों में विद्यमान थीं । इस संदर्भ में यह नहीं देखा गया है कि क्या वह राज्यक्षेत्र भारत के संविधान के प्रारंभ के पहले भारत का भाग था । बल्कि यह देखा गया है कि क्या वह राज्यक्षेत्र संविधान के प्रारंभ के पश्चात् भारत मे सम्मिलित है ।[35]

विधियों का अनुकूलन करने की राष्ट्रपति की शक्ति ।

[36]372क. (1) *संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 के प्रारंभ से ठीक पहले भारत में या उसके किसी भाग में प्रवृत्त किसी विधि के उपबंधों को उस अधिनियम द्वारा यथासंशोधित इस संविधान के उपबंधों के अनुरूप बनाने के प्रयोजनों के लिए,*

25. *राशन निदेशक* बनाम *कलकत्ता निगम*, (1961) 1 एस.सी.आर. 158 (*173*) ।
26. *एडवर्ड मिल्स* बनाम *अजमेर राज्य*, (1955) 1 एस.सी.आर. 735 (*746*) ।
27. *पश्चिमी बंगाल राज्य* बनाम *कलकत्ता निगम*, ए. 1967 एस.सी. 997 ।
28. *राजस्थान राज्य* बनाम *सज्जनलाल*, ए 1975 एस.सी. 706 (पैरा 16) ।
29. *देसाई* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1960 एस.सी. 1312; *जयवंत* बनाम *चन्द्रकांत*, (1970) 1 एस.सी.सी. 702; *धरम दास* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1975 एस.सी. 1069 (पैरा 20) ।
30. *माधवराव* बनाम *मध्य भारत राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 298; *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *जगदीश*, (1971) 3 एस.सी.सी. 804 (*807*) ।
31. *नरसिंह प्रताप* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1793 (*1799*); *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *रामपाल*, ए. 1968 एस.सी. 820 ।
32. *बंगाल नागपुर काटन मिल्स* बनाम *राजस्व बोर्ड*, ए. 1964 एस.सी. 888 ।
33. *मध्य प्रदेश राज्य* बनाम *आई.बी. सिंह*, ए. 1966 एस.सी. 704 ।
34. *इंदर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, (1957) एस.सी.आर. 605 (*620*) ।
35. *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *रेड्डि*, ए. 1973 एस.सी. 827 (पैरा 14) ।
36. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।

राष्ट्रपति, 1 नवंबर, 1957 से पहले किए गए आदेश द्वारा, ऐसी विधि में निरसन के रूप में या संशोधन के रूप में ऐसे अनुकूलन और उपांतरण कर सकेगा जो आवश्यक या समीचीन हों और यह उपबंध कर सकेगा कि वह विधि ऐसी तारीख से जो आदेश में विनिर्दिष्ट की जाए, इस प्रकार किए गए अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगी और किसी ऐसे अनुकूलन या उपांतरण को किसी न्यायालय में प्रश्नगत नहीं किया जाएगा ।

(2) खंड (1) की कोई बात, किसी सक्षम विधान मंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी को, राष्ट्रपति द्वारा उक्त खंड के अधीन अनुकूलित या उपांतरित किसी विधि का निरसन या संशोधन करने से रोकने वाली नहीं समझी जाएगी ।

अनुच्छेद 372क का प्रविषय — इस अनुच्छेद में अनुच्छेद 372(2) द्वारा प्रदत्त शक्ति के अतिरिक्त विधि के अनुकूलन की शक्ति है । अनुच्छेद 372(2), 1953 के बाद अस्तित्व में नहीं रहा । इस शक्ति के अधीन अनुकूलन के कारण 1956 में यथाअनुकूलित साधारण खंड अधिनियम में धारा 3(58) में दी गई "राज्य" की परिभाषा में "संघ राज्यक्षेत्र" सम्मिलित है ।[37]

[38]373. *निवारक निरोध में रखे गए व्यक्तियों के संबंध में कुछ दशाओं में आदेश करने की राष्ट्रपति की शक्ति ।*

[38]374. *फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों के और फेडरल न्यायालय में या सपरिषद् हिज मजेस्टी के समक्ष लंबित कार्यवाहियों के बारे में उपबंध ।*

[38]375. *संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए न्यायालयों, प्राधिकारियों और अधिकारियों का कृत्य करते रहना ।*

[38]376. *उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में उपबंध ।*

[38]377. *भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के बारे में उपबंध ।*

378. *लोक सेवा आयोगों के बारे में उपबंध ।*

[38]378क. *आंध्र प्रदेश विधान सभा की अवधि के बारे में विशेष उपबंध ।*

379-391. *संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 की धारा 29 और अनुसूची द्वारा निरसित ।*

कठिनाइयों को दूर करने की राष्ट्रपति की शक्ति ।

392. (1) **राष्ट्रपति किन्हीं ऐसी कठिनाइयों को, जो विशिष्टतया भारत शासन अधिनियम, 1935 के उपबंधों से इस संविधान के उपबंधों को संक्रमण के संबंध में हों, दूर करने के प्रयोजन के लिए आदेश द्वारा निदेश दे सकेगा कि यह संविधान उस आदेश में विनिर्दिष्ट अवधि के दौरान उपांतरण, परिवर्धन या लोप के रूप में ऐसे अनुकूलनों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगा जो वह आवश्यक या समीचीन समझे :**

परंतु ऐसा कोई आदेश भाग 5 के अध्याय 2 के अधीन सम्यक् रूप से गठित संसद् के प्रथम अधिवेशन के पश्चात् नहीं किया जाएगा ।

37. *एडवांस इंश्योरेंस कंपनी बनाम गुरुदासमल,* ए. 1970 एस.सी. 1126 ।
38. ये अनुच्छेद निष्प्रभाव हो गए हैं अतः उद्धृत नहीं किए गए ।

(2) खंड (1) के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश संसद् के समक्ष रखा जाएगा ।

(3) इस अनुच्छेद, अनुच्छेद 324, अनुच्छेद 367 के खंड (3) और अनुच्छेद 391 द्वारा राष्ट्रपति को प्रदत्त शक्तियां, इस संविधान के प्रारंभ से पहले, भारत डोमिनियन के गवर्नर जनरल द्वारा प्रयोक्तव्य होंगी ।

अनुकूलन करने की शक्ति का प्रविषय — खंड (1) द्वारा राष्ट्रपति को जो शक्ति दी गई वह बहुत व्यापक थी और विद्यमान उपबंधों का उपांतरण करके, परिवर्धन करके या लोप करके अनुकूलन करने के लिए सक्षम थी ।[39]

यह अभिनिर्धारित किया गया था कि "कठिनाई" शब्द बहुत व्यापक है और संविधान के संबंध में "विशिष्टतया" शब्द द्वारा उसे परिसीमित नहीं किया जा सकता ।[40]

39. *ग्रेवाल बनाम पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी. 512 (*516*) ।

40. *शंकरी प्रसाद बनाम भारत संघ*, ए. 1951 एस.सी. 458 (*462*) ।

भाग 22

संक्षिप्त नाम, प्रारंभ, [1][हिंदी में प्राधिकृत पाठ] और निरसन

संक्षिप्त नाम ।

393. इस संविधान का संक्षिप्त नाम भारत का संविधान है ।

प्रारंभ ।

394. यह अनुच्छेद और अनुच्छेद 5, 6, 7, 8, 9, 60, 324, 366, 367, 379, 380, 388, 391, 392 और 393 तुरंत प्रवृत्त होंगे और इस संविधान के शेष उपबंध 26 जनवरी, 1950 को प्रवृत्त होंगे जो दिन इस संविधान में इस संविधान के प्रारंभ के रूप में निर्दिष्ट किया गया है ।

हिंदी भाषा में प्राधिकृत पाठ ।

[1]**394क.** *(1) राष्ट्रपति—*

(क) इस संविधान के हिंदी भाषा में अनुवाद को, जिस पर संविधान सभा के सदस्यों ने हस्ताक्षर किए थे, ऐसे उपांतरणों के साथ जो उसे केंद्रीय अधिनियमों के हिंदी भाषा में प्राधिकृत पाठों में अपनाई गई भाषा, शैली और शब्दावली के अनुरूप बनाने के लिए आवश्यक हैं, और ऐसे प्रकाशन के पूर्व किए गए इस संविधान के ऐसे सभी संशोधनों को उसमें सम्मिलित करते हुए, तथा

(ख) अंग्रेजी भाषा में किए गए इस संविधान के प्रत्येक संशोधन के हिंदी भाषा में अनुवाद को,

अपने प्राधिकार से प्रकाशित कराएगा ।

(2) खंड (1) के अधीन प्रकाशित इस संविधान और इसके प्रत्येक संशोधन के अनुवाद का वही अर्थ लगाया जाएगा जो उसके मूल का है और यदि ऐसे अनुवाद के किसी भाग का इस प्रकार अर्थ लगाने में कोई कठिनाई उत्पन्न होती है तो राष्ट्रपति उसका उपयुक्त पुनरीक्षण कराएगा ।

(3) इस संविधान का और इसके प्रत्येक संशोधन का इस अनुच्छेद के अधीन प्रकाशित अनुवाद, सभी प्रयोजनों के लिए, उसका हिंदी भाषा में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।

निरसन ।

395. भारत स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 और भारत शासन अधिनियम, 1935 का, पश्चात् कथित अधिनियम की, संशोधक या अनुपूरक सभी अधिनियमितियों के साथ, जिनके अंतर्गत प्रिवी कौंसिल अधिकारिता उत्सादन अधिनियम, 1949 नहीं है, इसके द्वारा निरसन किया जाता है ।

---

1. संविधान (अठावनवां संशोधन) अधिनियम, 1987 द्वारा तारीख 9-12-1987 से अंतःस्थापित ।

[1]पहली अनुसूची

[अनुच्छेद 1 और अनुच्छेद 4]

1. राज्य

नाम	राज्यक्षेत्र
1. आंध्र प्रदेश	*[2][वे राज्यक्षेत्र जो आंध्र राज्य अधिनियम, 1953 की धारा 3 की उपधारा (1) में, राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 3 की उपधारा (1) में, आंध्र प्रदेश और मद्रास (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1959 की प्रथम अनुसूची में और आंध्र प्रदेश और मैसूर (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1968 की अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं, किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं है जो आंध्र प्रदेश और मद्रास (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1959 की द्वितीय अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं]।*
2. असम	*वे राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले असम प्रांत, खासी राज्यों और असम जनजाति क्षेत्रों में समाविष्ट थे, किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो असम (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1951 की अनुसूची में विनिर्दिष्ट है [3][और वे राज्यक्षेत्र भी उसके अंतर्गत नहीं हैं जो नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 की धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं] [4][और वे राज्यक्षेत्र] भी इसके अंतर्गत नहीं हैं [जो पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 की धारा 5, धारा 6 और धारा 7 में विनिर्दिष्ट हैं]।*
3. बिहार	*[5][वे राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले या तो बिहार प्रांत में समाविष्ट थे या इस प्रकार प्रशासित थे मानो वे उस प्रांत के भाग रहे हों और वे राज्यक्षेत्र जो बिहार और उत्तर प्रदेश (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1968 की धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (क) में विनिर्दिष्ट है, किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं है जो [6]बिहार और पश्चिमी बंगाल (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1956 की धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं और वे राज्यक्षेत्र भी उसके अंतर्गत नहीं हैं जो प्रथम वर्णित अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (ख) में विनिर्दिष्ट हैं ।*

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।
2. आंध्र प्रदेश और मैसूर (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1968 द्वारा (1-10-1968 से) प्रतिस्थापित ।
3. नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 द्वारा (1-12-1963 से) जोड़ा गया ।
4. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा (21-1-1972 से) जोड़ा गया ।
5. बिहार और उत्तर प्रदेश (सीमा परिवर्तन) अधिनियम, 1968 द्वारा (10-6-1970 से) जोड़ा गया ।
6. बिहार और पश्चिमी बंगाल (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1956 द्वारा जोड़ा गया [देखिए सी$_s$, जिल्द 8, पृष्ठ 1565] ।

नाम	राज्यक्षेत्र
[7][4. गुजरात	वे राज्यक्षेत्र जो मुंबई पुनर्गठन अधिनियम, 1960 की धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं ।]
5. केरल	वे राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 5 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं ।
6. मध्य प्रदेश	वे राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 9 की उपधारा (1) में [8][तथा राजस्थान और मध्य प्रदेश (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1959 की प्रथम अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं] ।
[9][7. तमिलनाडु]	वे राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले या तो मद्रास प्रांत में समाविष्ट थे या इस प्रकार प्रशासित थे मानो वे उस प्रांत के भाग रहे हों और वे राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 4 में [10][तथा आंध्र प्रदेश और मद्रास (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1959 की द्वितीय अनुसूची में] विनिर्दिष्ट हैं, किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो आंध्र राज्य अधिनियम, 1953 की धारा 3 की उपधारा (1) और धारा 4 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं और [11][वे राज्यक्षेत्र भी इसके अंतर्गत नहीं हैं जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 5 की उपधारा (1) के खंड (ख), धारा 6 और धारा 7 की उपधारा (1) के खंड (घ) में विनिर्दिष्ट हैं और वे राज्यक्षेत्र भी उसके अंतर्गत नहीं हैं जो आंध्र प्रदेश और मद्रास (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1959 की प्रथम अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं]।
[12][8. महाराष्ट्र	वे राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 8 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं, किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो मुंबई पुनर्गठन अधिनियम, 1960 की धारा 3 की उपधारा (1) में निर्दिष्ट हैं ।]
[13][9. कर्नाटक]	वे राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 7 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं, [14][किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो आंध्र प्रदेश और [15]मैसूर

7. मुंबई पुनर्गठन अधिनियम, 1960 द्वारा (1-5-1960 से) प्रतिस्थापित ।

8. राजस्थान और मध्य प्रदेश (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1959 द्वारा (1-10-1959 से) जोड़ा गया ।

9. मद्रास राज्य (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1968 द्वारा (14-1-1969 से) "मद्रास" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

10. आंध्र प्रदेश और मद्रास (सीमा परिवर्तन) अधिनियम, 1959 द्वारा (1-4-1960 से) प्रतिस्थापित ।

11. आंध्र प्रदेश और मद्रास (सीमा परिवर्तन) अधिनियम, 1959 द्वारा (1-4-1960 से) जोड़ा गया [देखिए सी$_8$, जिल्द 8, पृष्ठ 1608] ।

12. मुंबई पुनर्गठन अधिनियम, 1960 द्वारा (1-5-1960) से अंतःस्थापित [देखिए सी$_8$, जिल्द 8, पृष्ठ 1930] ।

13. मैसूर राज्य (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1973 द्वारा (1-11-1973 से) "मैसूर" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

14. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

15. आंध्र प्रदेश और मैसूर (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1968 द्वारा अंतःस्थापित ।

नाम	राज्यक्षेत्र
	(राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1968 की अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं] ।
10. उड़ीसा	वे राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले या तो उड़ीसा प्रांत में समाविष्ट थे या इस प्रकार प्रशासित थे मानो वे उस प्रांत के भाग रहे हों ।
11. पंजाब	वे राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 11 में विनिर्दिष्ट हैं [16][और वे राज्यक्षेत्र जो अर्जित राज्यक्षेत्र (विलयन) अधिनियम, 1960 की प्रथम अनुसूची के भाग 2 में निर्दिष्ट हैं,] [17][किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो संविधान (नवां संशोधन) अधिनियम, 1960 की पहली अनुसूची के भाग 2 में निर्दिष्ट हैं] [18][और वे राज्यक्षेत्र भी इसके अंतर्गत नहीं हैं जो पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 की धारा 3 की उपधारा (1), धारा 4 और धारा 5 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं] ।
12. राजस्थान	वे राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 10 में विनिर्दिष्ट हैं, [19][किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो राजस्थान और मध्य प्रदेश (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1959 की प्रथम अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं] ।
13. उत्तर प्रदेश	[20][वे राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले या तो संयुक्त प्रांत नाम से ज्ञात प्रांत में समाविष्ट थे या इस प्रकार प्रशासित थे मानो वे उस प्रांत के भाग रहे हों, वे राज्यक्षेत्र जो बिहार और उत्तर प्रदेश (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1968 की धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (ख) में विनिर्दिष्ट हैं और वे राज्यक्षेत्र जो हरियाणा और उत्तर प्रदेश (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1979 की धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (ख) में विनिर्दिष्ट हैं, किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो बिहार और उत्तर प्रदेश (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1968 की धारा 3 की उपधारा (1) के खंड (क) में विनिर्दिष्ट हैं और वे राज्यक्षेत्र भी इसके अंतर्गत नहीं हैं जो हरियाणा और उत्तर प्रदेश (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1979 की धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (क) में विनिर्दिष्ट हैं ।]
14. पश्चिमी बंगाल	वे राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले या तो पश्चिमी बंगाल प्रांत में समाविष्ट थे या इस प्रकार प्रशासित थे मानो वे उस प्रांत के भाग रहे हों और

16. अर्जित राज्यक्षेत्र (विलयन) अधिनियम, 1960 द्वारा (17-1-1961 से) अंतःस्थापित [देखिए सी$_{8}$, जिल्द 8, पृष्ठ 1675] ।

17. संविधान (नवां संशोधन) अधिनियम, 1960 द्वारा (17-1-1961 से) जोड़ा गया ।

18. पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 की धारा 7 द्वारा (1-11-1966 से) जोड़ा गया ।

19. राजस्थान और मध्य प्रदेश (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1959 द्वारा (1-10-1959 से) जोड़ा गया ।

20. हरियाणा और उत्तर प्रदेश (सीमा परिवर्तन) अधिनियम, 1979 द्वारा (15-9-1983 से) प्रतिस्थापित ।

नाम	राज्यक्षेत्र
	[21]चंद्रनगर (विलयन) अधिनियम, 1954 की धारा 2 के खंड (ग) में यथापरिभाषित चंद्रनगर का राज्यक्षेत्र और वे राज्यक्षेत्र भी जो [22]बिहार और पश्चिमी बंगाल (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1956 की धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं ।
15. जम्मू-कश्मीर	वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले जम्मू-कश्मीर देशी राज्य में समाविष्ट था ।
[23]16. नागालैंड	वे राज्यक्षेत्र जो नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 की धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं ।
[24]17. हरियाणा	[20]वे राज्यक्षेत्र जो पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 की धारा 3 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं और वे राज्यक्षेत्र जो हरियाणा और उत्तर प्रदेश (सीमा-परिवर्तन) अधिनियम, 1979 की धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (क) में विनिर्दिष्ट हैं, किंतु वे राज्यक्षेत्र इसके अंतर्गत नहीं हैं जो उस अधिनियम की धारा 4 की उपधारा (1) के खंड (ख) में विनिर्दिष्ट हैं ।
[25]18. हिमाचल प्रदेश	वे राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले इस प्रकार प्रशासित थे मानो वे हिमाचल प्रदेश और बिलासपुर के नाम से ज्ञात मुख्य आयुक्त वाले प्रांत रहे हों और वे राज्यक्षेत्र जो पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 की धारा 5 की उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट हैं ।
[26][19. मणिपुर	वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले इस प्रकार प्रशासित था मानो वह मणिपुर के नाम से ज्ञात मुख्य आयुक्त वाला प्रांत रहा हो ।
20. त्रिपुरा	वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले इस प्रकार प्रशासित था मानो वह त्रिपुरा के नाम से ज्ञात मुख्य आयुक्त वाला प्रांत रहा हो ।
[27]21. मेघालय	वे राज्यक्षेत्र जो पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 की धारा 5 में विनिर्दिष्ट हैं ।]
[28]22. सिक्किम	वे राज्यक्षेत्र जो संविधान (छत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 के प्रारंभ से ठीक पहले सिक्किम में समाविष्ट थे ।

21. देखिए सी$_5$, जिल्द 8, पृष्ठ 1510 ।

22. बिहार और पश्चिमी बंगाल (राज्यक्षेत्र अंतरण) अधिनियम, 1956 द्वारा जोड़ा गया [देखिए सी$_5$, जिल्द 6, पृष्ठ 1565] ।

23. नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 द्वारा (1-12-1963 से) अंतःस्थापित ।

24. पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 द्वारा (1-11-1966 से) जोड़ा गया ।

25. हिमाचल प्रदेश राज्य अधिनियम, 1970 द्वारा (25-1-1971 से) अंतःस्थापित ।

26. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा (21-1-1972 से) प्रविष्टियां 19-21 जोड़ी गईं ।

27. हिमाचल प्रदेश राज्य अधिनियम, 1970 द्वारा हिमाचल प्रदेश से संबंधित प्रविष्टि 2 का लोप किया गया और प्रविष्टियां 3-19 पुनःसंख्यांकित की गईं ।

पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा मणिपुर और त्रिपुरा को पूर्ण राज्य बना कर भाग 1 में अंतरित कर दिया गया तथा इन प्रविष्टियों का लोप करके शेष प्रविष्टियों को पुनःसंख्यांकित किया गया ।

28. संविधान (छत्तीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा (26-4-1975 से) अंतःस्थापित ।

नाम	राज्यक्षेत्र
[29]23. मिजोरम	वे राज्यक्षेत्र जो पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 की धारा 6 में विनिर्दिष्ट है ।
[30]24. अरुणाचल प्रदेश	वे राज्यक्षेत्र जो पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 की धारा 7 में विनिर्दिष्ट है ।
[31]25. गोवा	वे राज्यक्षेत्र जो गोवा, दमण और दीव पुनर्गठन अधिनियम, 1987 की धारा 3 में विनिर्दिष्ट है ।

2. संघ राज्यक्षेत्र

नाम	विस्तार
1. दिल्ली	वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले दिल्ली के मुख्य आयुक्त वाले प्रांत में समाविष्ट था ।
2. अंदमान और निकोबार द्वीप	वह राज्यक्षेत्र जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले अंदमान और निकोबार द्वीप के मुख्य आयुक्त वाले प्रांत में समाविष्ट था ।
[32]3. लक्षद्वीप	वह राज्यक्षेत्र जो राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की धारा 6 में विनिर्दिष्ट है ।
[33]4. दादरा और नागर हवेली	वह राज्यक्षेत्र जो 11 अगस्त, 1961 से ठीक पहले स्वतंत्र दादरा और नागर हवेली में समाविष्ट था ।
[34]5. दमण और दीव	वे राज्यक्षेत्र जो गोवा, दमण और दीव पुनर्गठन अधिनियम, 1987 की धारा 4 में विनिर्दिष्ट हैं ।
[35]6. पांडिचेरी	वे राज्यक्षेत्र जो 16 अगस्त, 1962 से ठीक पहले भारत में पांडिचेरी, कारिकल, माही और यनम के नाम से ज्ञात फ्रांसीसी बस्तियों में समाविष्ट थे ।
[36]7. चंडीगढ़	वे राज्यक्षेत्र जो पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 की धारा 4 में विनिर्दिष्ट हैं ।

29. मिजोरम का पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा एक संघ राज्यक्षेत्र के रूप में गठन किया गया था । उसके बाद संविधान (तिरपनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 से अनुच्छेद 371छ अंतःस्थापित किया गया और मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा उसे राज्य का दर्जा दिया गया ।

30. इसी प्रकार अरुणाचल प्रदेश को भी, अरुणाचल प्रदेश अधिनियम, 1986 [संविधान (पचपनवां संशोधन) अधिनियम, 1986] द्वारा अनुच्छेद 371ज अंतःस्थापित किया गया, द्वारा संघ राज्यक्षेत्र के दर्जे से उठाकर राज्य का दर्जा दे दिया गया ।

31. गोवा, संविधान (बारहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 से एक संघ राज्यक्षेत्र था । उसको दमण और दीव से पृथक् कर दिया गया है तथा संविधान (छप्पनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा अनुच्छेद 371झ अंतःस्थापित किया गया है । गोवा, दमण और दीव (पुनर्गठन) अधिनियम, 1986 द्वारा गोवा को राज्य का दर्जा दिया गया ।

32. लक्कादीव, मिनिकोय और अमीनदीवी द्वीप (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1973 द्वारा (1-11-1973 से) 'लक्कादीव, मिनिकोय और अमीनदीवी द्वीप' के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

33. संविधान (दसवां संशोधन) अधिनियम, 1961 द्वारा (11-8-1961 से) अंतःस्थापित ।

34. संविधान (बारहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा (20-12-1961 से) अंतःस्थापित ।

35. संविधान (चौदहवां संशोधन) अधिनियम, 1962 द्वारा (16-8-1962 से) अंतःस्थापित ।

36. पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 द्वारा (1-11-1966 से) अंतःस्थापित ।

दूसरी अनुसूची

[अनुच्छेद 59(3), 65(3), 75(6), 97, 125, 148(3), 158(3), 164(5), 186 और 221]

भाग क

राष्ट्रपति और [1]*** राज्यों के राज्यपालों के बारे में उपबंध

1. राष्ट्रपति और [1]*** राज्यों के राज्यपालों को प्रति मास निम्नलिखित उपलब्धियों का संदाय किया जाएगा, अर्थात् :—

राष्ट्रपति	[2]20,000 रुपए ।
राज्य का राज्यपाल	[3]11,000 रुपए ।

2. राष्ट्रपति और [1]*** राज्यों के राज्यपालों को ऐसे भत्तों का भी संदाय किया जाएगा जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले क्रमशः भारत डोमिनियन के गर्वनर जनरल को तथा तत्स्थानी प्रांतों के गवर्नरों को संदेय थे ।

3. राष्ट्रपति और [3क][*राज्यों*] के राज्यपाल अपनी-अपनी संपूर्ण पदावधि में ऐसे विशेषाधिकारों के हकदार होंगे जिनके इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले क्रमशः गर्वनर जनरल और तत्स्थानी प्रांतों के गवर्नर हकदार थे ।

4. जब उपराष्ट्रपति या कोई अन्य व्यक्ति राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन कर रहा है या उसके रूप में कार्य कर रहा है या कोई व्यक्ति राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन कर रहा है तब वह ऐसी उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का हकदार होगा जिनका, यथास्थिति, वह राष्ट्रपति या राज्यपाल हकदार है जिसके कृत्यों का वह निर्वहन करता है या, यथास्थिति, जिसके रूप में वह कार्य करता है ।

[4]* * *

भाग ग

लोक सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के तथा राज्य सभा के सभापति और उपसभापति के तथा [5]* * * [3क][*राज्य*] की विधान सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के तथा विधान परिषद् के सभापति और उपसभापति के बारे में उपबंध

7. लोक सभा के अध्यक्ष और राज्य सभा के सभापति को ऐसे वेतन और भत्तों का संदाय किया जाएगा जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अध्यक्ष को संदेय थे तथा लोक सभा के उपाध्यक्ष को और राज्य सभा के उपसभापति को ऐसे वेतन और भत्तों का संदाय किया जाएगा जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत डोमिनियन की संविधान सभा के उपाध्यक्ष को संदेय थे ।

---

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "पहली अनुसूची के भाग क में विनिर्दिष्ट" शब्दों का लोप किया गया ।
2. 1988 से पुनरीक्षित ।
3. 1987 से पुनरीक्षित ।

3क. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

4. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा भाग ख का लोप किया गया ।
5. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा लोप किया गया ।

8. [5]*** राज्य की विधान सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को तथा [3क][*राज्य*] की विधान परिषद् के सभापति और उपसभापति को ऐसे वेतन और भत्तों का संदाय किया जाएगा जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले क्रमशः तत्स्थानी प्रांत की विधान सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को तथा विधान परिषद् के सभापति और उपसभापति को संदेय थे और जहां ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रांत की कोई विधान परिषद् नहीं थी वहां उस राज्य की विधान परिषद् के सभापति और उपसभापति को ऐसे वेतन और भत्तों का संदाय किया जाएगा जो उस राज्य का राज्यपाल अवधारित करे ।

भाग घ

उच्चतम न्यायालय तथा [6]*** उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में उपबंध

9. (1) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताए समय के लिए प्रति मास निम्नलिखित दर से वेतन का संदाय किया जाएगा, अर्थात् :—

मुख्य न्यायमूर्ति	[7]*10,000* रुपए ।
कोई अन्य न्यायाधीश	[7]*9,000* रुपए ।

परंतु यदि उच्चतम न्यायालय का कोई न्यायाधीश अपनी नियुक्ति के समय भारत सरकार की या उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की अथवा राज्य की सरकार की या उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की पूर्व सेवा के संबंध में (निःशक्तता या क्षति पेंशन से भिन्न) कोई पेंशन प्राप्त कर रहा है तो उच्चतम न्यायालय में सेवा के लिए उसके वेतन में से [8]*निम्नलिखित को घटा दिया जाएगा, अर्थात् :*

(क) उस पेंशन की रकम; और

(ख) यदि उसने ऐसी नियुक्ति से पहले, ऐसी पूर्व सेवा के संबंध में अपने को देय पेंशन के एक भाग के बदले उसका संराशित मूल्य प्राप्त किया है तो पेंशन के उस भाग की रकम; और

(ग) यदि उसने ऐसी नियुक्ति से पहले, ऐसी पूर्व सेवा से संबंध में निवृत्ति-उपदान प्राप्त किया है तो उस उपदान के समतुल्य पेंशन ।

(2) उच्चतम न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश, बिना किराया दिए, शासकीय निवास के उपयोग का हकदार होगा ।

(3) इस पैरा के उपपैरा (2) की कोई बात उस न्यायाधीश को, जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले—

(क) फेडरल न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के रूप में पद धारण कर रहा था और जो ऐसे प्रारंभ पर अनुच्छेद 374 के खंड (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय या मुख्य न्यायमूर्ति बन गया है, या

(ख) फेडरल न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश के रूप में पद धारण कर रहा था और जो ऐसे प्रारंभ पर उक्त खंड के अधीन उच्चतम न्यायालय का (मुख्य न्यायमूर्ति से भिन्न) न्यायाधीश बन गया है,

उस अवधि में, जिसमें वह ऐसे मुख्य न्यायमूर्ति या अन्य न्यायाधीश के रूप में पद धारण करता है, लागू नहीं होगी और ऐसा प्रत्येक न्यायाधीश, जो इस प्रकार उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति या अन्य न्यायाधीश बन जाता है, यथास्थिति, ऐसे मुख्य न्यायमूर्ति या अन्य न्यायाधीश के रूप में वास्तविक सेवा में बिताए समय के लिए इस पैरा के उपपैरा (1) में विनिर्दिष्ट वेतन के अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी रकम प्राप्त करने का हकदार होगा जो इस प्रकार विनिर्दिष्ट वेतन और ऐसे वेतन के अंतर के बराबर है जो वह ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले प्राप्त कर रहा था ।

---

6. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा लोप किया गया ।
7. संविधान (चौवनवां संशोधन) अधिनियम, 1986 द्वारा (1-4-1986 से) परिवर्तन किए गए ।
8. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

(4) उच्चतम न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर अपने कर्तव्य पालन में की गई यात्रा में उपगत व्यय की प्रतिपूर्ति के लिए ऐसे युक्तियुक्त भत्ते प्राप्त करेगा और यात्रा संबंधी उसे ऐसी युक्तियुक्त सुविधाएं दी जाएंगी जो राष्ट्रपति समय-समय पर विहित करे ।

(5) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की अनुपस्थिति छुट्टी के (जिसके अंतर्गत छुट्टी भत्ते हैं) और पेंशन के संबंध में अधिकार उन उपबंधों से शासित होंगे जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को लागू थे ।

10. [8क]*(1) उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताए समय के लिए प्रति मास निम्नलिखित दर से वेतन का संदाय किया जाएगा, अर्थात् :—*

मुख्य न्यायमूर्ति	[7]*9,000 रुपए ।*
कोई अन्य न्यायाधीश	[7]*8,000 रुपए ।*

परंतु यदि किसी उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश अपनी नियुक्ति के समय भारत सरकार की या उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की अथवा राज्य की सरकार की या उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की पूर्व सेवा के संबंध में (निःशक्तता या क्षति पेंशन से भिन्न) कोई पेंशन प्राप्त कर रहा है तो उच्च न्यायालय में सेवा के लिए उसके वेतन में से निम्नलिखित को घटा दिया जाएगा, अर्थात् :

(क) उस पेंशन की रकम; और

(ख) यदि उसने ऐसी नियुक्ति से पहले, ऐसी पूर्व सेवा के संबंध में अपने को देय पेंशन के एक भाग के बदले में उसका संराशित मूल्य प्राप्त किया है तो पेंशन के उस भाग की रकम; और

(ग) यदि उसने ऐसी नियुक्ति से पहले, ऐसी पूर्व सेवा के संबंध में निवृत्ति-उपदान प्राप्त किया है तो उस उपदान के समतुल्य पेंशन ।

(2) (अनावश्यक हो गया है इसलिए छापा नहीं गया ।)

[9]*(3) ऐसा कोई व्यक्ति जो संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 के प्रारंभ से ठीक पहले, पहली अनुसूची के भाग ख में विनिर्दिष्ट किसी राज्य के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के रूप में पद धारण कर रहा था और जो ऐसे प्रारंभ पर उक्त अधिनियम द्वारा यथासंशोधित उक्त अनुसूची में विनिर्दिष्ट किसी राज्य के उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति बन गया है, यदि वह ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले अपने वेतन के अतिरिक्त भत्ते के रूप में कोई रकम प्राप्त कर रहा था तो, ऐसे मुख्य न्यायमूर्ति के रूप में वास्तविक सेवा में बिताए समय के लिए इस पैरा के उपपैरा (1) में विनिर्दिष्ट वेतन के अतिरिक्त भत्ते के रूप में वही रकम प्राप्त करने का हकदार होगा ।*

11. इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, —

(क) "मुख्य न्यायमूर्ति" पद के अंतर्गत कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति है और "न्यायाधीश" पद के अंतर्गत तदर्थ न्यायाधीश है;

(ख) "वास्तविक सेवा" के अंतर्गत—

(i) न्यायाधीश द्वारा न्यायाधीश के रूप में कर्तव्य पालन में या ऐसे अन्य कृत्यों के पालन में, जिनका राष्ट्रपति के अनुरोध पर उसने निर्वहन करने का भार अपने ऊपर लिया है, बिताया गया समय है;

(ii) उस समय को छोड़कर जिसमें न्यायाधीश छुट्टी लेकर अनुपस्थित है, दीर्घावकाश है; और

8क. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा उपपैरा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

9. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा उपपैरा (3) और (4) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(iii) उच्च न्यायालय से उच्चतम न्यायालय को या एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को अंतरण पर जाने पर पदग्रहण-काल है ।

भाग ङ

भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के बारे में उपबंध

12. (1) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को [10]चार हजार रुपए प्रति मास की दर से वेतन का संदाय किया जाएगा ।

(2) ऐसा कोई व्यक्ति, जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत के महालेखापरीक्षक के रूप में पद धारण कर रहा था और जो ऐसे प्रारंभ पर अनुच्छेद 377 के अधीन भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक बन गया है, इस पैरा के उपपैरा (1) में विनिर्दिष्ट वेतन के अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी रकम प्राप्त करने का हकदार होगा जो इस प्रकार विनिर्दिष्ट वेतन और ऐसे वेतन के अंतर के बराबर है जो वह ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले भारत के महालेखापरीक्षक के रूप में प्राप्त कर रहा था ।

(3) भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक की अनुपस्थिति छुट्टी और पेंशन तथा अन्य सेवा-शर्तों के संबंध में अधिकार उन उपबंधों से, यथास्थिति, शासित होंगे या शासित होते रहेंगे जो इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले भारत के महालेखापरीक्षक को लागू थे और उन उपबंधों में गवर्नर जनरल के प्रति सभी निर्देशों का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वे राष्ट्रपति के प्रति निर्देश हैं ।

---

10. 1971 के अधिनियम सं. 56 की धारा 3 द्वारा भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक को उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के बराबर वेतन का संदाय किया जाएगा । अतएव यह वेतन वर्तमान में, 9,000 रुपए प्रति मास हो गया है ।

तीसरी अनुसूची

[अनुच्छेद 75(4), 99, 124(6), 148(2), 164(3), 188 और 219]*

शपथ या प्रतिज्ञान के प्ररूप

1

संघ के मंत्री के लिए पद की शपथ का प्ररूप :

"मैं, अमुक, ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, [1]*मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा,* **मैं संघ के मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक और शुद्ध अंतःकरण से निर्वहन करूंगा तथा मैं भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना, सभी प्रकार के लोगों के प्रति संविधान और विधि के अनुसार न्याय करूंगा ।"**

2

संघ के मंत्री के लिए गोपनीयता की शपथ का प्ररूप :

"मैं, अमुक, ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि जो विषय संघ के मंत्री के रूप में मेरे विचार के लिए लाया जाएगा अथवा मुझे ज्ञात होगा उसे किसी व्यक्ति या व्यक्तियों को, तब के सिवाय जबकि ऐसे मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों के सम्यक् निर्वहन के लिए ऐसा करना अपेक्षित हो, मैं प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से संसूचित या प्रकट नहीं करूंगा ।"

[2]3

क

संसद् के लिए निर्वाचन के लिए अभ्यर्थी द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप :

"मैं, अमुक, जो राज्य सभा (या लोक सभा) में स्थान भरने के लिए अभ्यर्थी के रूप में नामनिर्देशित हुआ हूं ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा और मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा ।"

ख

संसद् के सदस्य द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप :

"मैं, अमुक, जो राज्य सभा (या लोक सभा) का सदस्य निर्वाचित (या नामनिर्देशित) हुआ हूं ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा तथा जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूं उसके कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक निर्वहन करूंगा ।"

---

* अनुच्छेद 84क और 173क भी देखिए ।

1. संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा जोड़ा गया ।
2. संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा प्ररूप 3 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

4

उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों और भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप :

"मैं, अमुक, जो भारत के उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति (या न्यायाधीश) (या भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक) नियुक्त हुआ हूं, ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, [3]*मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा* तथा मैं सम्यक् प्रकार से और श्रद्धापूर्वक तथा अपनी पूरी योग्यता, ज्ञान और विवेक से अपने पद के कर्तव्यों का भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना पालन करूंगा तथा मैं संविधान और विधियों की मर्यादा बनाए रखूंगा ।"

5

किसी राज्य के मंत्री के लिए पद की शपथ का प्ररूप :

"मैं, अमुक, ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, [3]*मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा,* मैं ____________ राज्य के मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक और शुद्ध अंतःकरण से निर्वहन करूंगा तथा मैं भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना, सभी प्रकार के लोगों के प्रति संविधान और विधि के अनुसार न्याय करूंगा ।"

6

किसी राज्य के मंत्री के लिए गोपनीयता की शपथ का प्ररूप :

"मैं, अमुक, ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि जो विषय ____________ राज्य के मंत्री के रूप में मेरे विचार के लिए लाया जाएगा अथवा मुझे ज्ञात होगा उसे किसी व्यक्ति या व्यक्तियों को, तब के सिवाय जबकि ऐसे मंत्री के रूप में अपने कर्तव्यों के सम्यक् निर्वहन के लिए ऐसा करना अपेक्षित हो, मैं प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से संसूचित या प्रकट नहीं करूंगा ।"

[4]7

क

किसी राज्य के विधान मंडल के लिए निर्वाचन के लिए अभ्यर्थी द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्ररूप :

"मैं, अमुक, ____________ जो विधान सभा (या विधान परिषद्) में स्थान भरने के लिए अभ्यर्थी के रूप में नामनिर्देशित हुआ हूं, ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा और मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा ।"

3. संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा जोड़ा गया ।
4. संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा प्ररूप 7 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

ख

किसी राज्य के विधान मंडल के सदस्य द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्रारूप :

"मैं, अमुक, जो विधान सभा (या विधान परिषद्) का सदस्य निर्वाचित (या नामनिर्देशित) हुआ हूं ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा तथा जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूं उसके कर्तव्यों का श्रद्धापूर्वक निर्वहन करूंगा ।"

8

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा ली जाने वाली शपथ या किए जाने वाले प्रतिज्ञान का प्रारूप :

"मैं, अमुक, जो ______ उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति (या न्यायाधीश) नियुक्त हुआ हूं ईश्वर की शपथ लेता हूं / सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूं कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूंगा, [5]*मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा* **तथा मैं सम्यक् प्रकार से और श्रद्धापूर्वक तथा अपनी पूरी योग्यता, ज्ञान और विवेक से अपने पद के कर्तव्यों का भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना पालन करूंगा तथा मैं संविधान और विधियों की मर्यादा बनाए रखूंगा ।"**

---

5. संविधान (सोलहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा जोड़ा गया ।

[1]चौथी अनुसूची

[अनुच्छेद 4(1) और अनुच्छेद 80(2)]

राज्य सभा में स्थानों का आबंटन

निम्नलिखित सारणी के पहले स्तंभ में विनिर्दिष्ट प्रत्येक राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को उतने स्थान आबंटित किए जाएंगे जितने उसके दूसरे स्तंभ में, यथास्थिति, उस राज्य या उस संघ राज्यक्षेत्र के सामने विनिर्दिष्ट हैं ।

सारणी

1.	*आंध्र प्रदेश*	*18*
2.	*असम*	*7*
3.	*बिहार*	*22*
4.	*गोवा*	*1*
[2]*5.*	*गुजरात*	*11*
[3]*6.*	*हरियाणा*	*5*
7.	*केरल*	*9*
8.	*मध्य प्रदेश*	*16*
[4]*9.*	*तमिलनाडु*	*18*[5]
[2]*10*	*महाराष्ट्र*	*19*
[6]*11.*	*कर्नाटक*	*12*
12.	*उडीसा*	*10*
13	*पंजाब*	*7*[7]
14	*राजस्थान*	*10*
15.	*उत्तर प्रदेश*	*34*
16	*पश्चिमी बंगाल*	*16*
17.	*जम्मू-कश्मीर*	*4*
[8]*18.*	*नागालैंड*	*1*
[9]*19.*	*हिमाचल प्रदेश*	*3*
20	*मणिपुर*	*1*

---

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा चौथी अनुसूची के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
2. मुंबई पुनर्गठन अधिनियम, 1960 द्वारा (1-5-1960 से) प्रतिस्थापित ।
3. पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 द्वारा (1-11-1966 से) अतःस्थापित ।
4. मद्रास राज्य (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1968 द्वारा (14-1-1969 से) मद्रास का नाम बदलकर "तमिलनाडु" कर दिया गया ।
5. आंध्र प्रदेश और मद्रास (सीमा परिवर्तन) अधिनियम, 1959 द्वारा (1-4-1960 से) प्रतिस्थापित ।
6. मैसूर राज्य (नाम परिवर्तन) अधिनियम, 1973 द्वारा (1-11-1973 से) "मैसूर" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।
7. पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 द्वारा (1-11-1966 से) प्रतिस्थापित ।
8. नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 द्वारा (1-12-1963 से) अतःस्थापित ।
9. हिमाचल प्रदेश राज्य अधिनियम, 1970 द्वारा (25-1-1971 से) अंतःस्थापित ।

21.	*त्रिपुरा*	*1*
22.	*मेघालय*	*1*
[10]23.	*सिक्किम*	*1*
24	*मिजोरम*	*1*
25	*अरुणाचल प्रदेश*	*1*
26.	*दिल्ली*	*3*
27.	*पाडिचेरी*	*1*
	योग	[11]*233*

10 संविधान (छत्तीसवा सशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा (26-4-1975 से) अंतःस्थापित ।

11 गोवा, दमण और पुनर्गठन अधिनियम, 1987 द्वारा (30-5-1987 से) "232" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

पांचवीं अनुसूची

[अनुच्छेद 244(1)]

अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण के बारे में उपबंध

भाग क

साधारण

निर्वचन ।

1. इस अनुसूची में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, "राज्य" पद के अंतर्गत [1]*** [2]*असम*, [3][[3क]*मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम*]] राज्य नहीं हैं ।

अनुसूचित क्षेत्रों मे किसी राज्य की कार्यपालिका शक्ति ।

2. इस अनुसूची के उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार उसके अनुसूचित क्षेत्रों पर है ।

अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में राष्ट्रपति को राज्यपाल द्वारा प्रतिवेदन ।

3. ऐसे प्रत्येक राज्य का राज्यपाल [4]***, जिसमें अनुसूचित क्षेत्र हैं, प्रतिवर्ष या जब भी राष्ट्रपति इस प्रकार अपेक्षा करे, उस राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में राष्ट्रपति को प्रतिवेदन देगा और संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार राज्य को उक्त क्षेत्रों के प्रशासन के बारे में निदेश देने तक होगा ।

भाग ख

अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों का प्रशासन और नियंत्रण

जनजाति सलाहकार परिषद् ।

4. (1) ऐसे प्रत्येक राज्य में, जिसमें अनुसूचित क्षेत्र हैं और यदि राष्ट्रपति ऐसा निदेश दे तो, किसी ऐसे राज्य में भी जिसमें अनुसूचित जनजातियां हैं किंतु अनुसूचित क्षेत्र नहीं हैं, एक जनजाति सलाहकार परिषद् स्थापित की जाएगी जो बीस से अनधिक सदस्यों से मिलकर बनेगी जिनमें से यथाशक्य निकटतम तीन चौथाई उस राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधि होंगे :

परंतु यदि उस राज्य की विधान सभा में अनुसूचित जनजातियों के प्रतिनिधियों की संख्या जनजाति सलाहकार परिषद् में ऐसे प्रतिनिधियों से भरे जाने वाले स्थानों की संख्या से कम है तो शेष स्थान उन जनजातियों के अन्य सदस्यों से भरे जाएंगे ।

---

1. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "प्रथम अनुसूची के भाग क या भाग ख में विनिर्दिष्ट राज्य अभिप्रेत है परंतु" शब्दों और अक्षरों का लोप किया गया ।
2. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 द्वारा (21-1-1972 से) प्रतिस्थापित ।
3. संविधान (उनचासवां संशोधन) अधिनियम, 1984 द्वारा प्रतिस्थापित ।

3क. मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा (20-2-1987 से) प्रतिस्थापित ।

4. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा "या राजप्रमुख" शब्दों का लोप किया गया ।

(2) जनजाति सलाहकार परिषद् का यह कर्तव्य होगा कि वह उस राज्य की अनुसूचित जनजातियों के कल्याण और उन्नति से संबंधित ऐसे विषयों पर सलाह दे जो उसको *राज्यपाल*[4क] द्वारा निर्दिष्ट किए जाएं ।

(3) राज्यपाल [4]*** —

(क) परिषद् के सदस्यों की संख्या को, उनकी नियुक्ति की और परिषद् के अध्यक्ष तथा उसके अधिकारियों और सेवकों की नियुक्ति की रीति को;

(ख) उसके अधिवेशनों के संचालन तथा साधारणतया उसकी प्रक्रिया को, और

(ग) अन्य सभी आनुषंगिक विषयों को,

यथास्थिति, विहित या विनियमित करने के लिए नियम बना सकेगा ।

अनुसूचित क्षेत्रों को लागू विधि ।

5. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, राज्यपाल [4]*** लोक अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि संसद् का या उस राज्य के विधान मंडल का कोई विशिष्ट अधिनियम उस राज्य के अनुसूचित क्षेत्र या उसके किसी भाग को लागू नहीं होगा अथवा उस राज्य के अनुसूचित क्षेत्र या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए लागू होगा जो वह अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे और इस उपपैरा के अधीन दिया गया कोई निदेश इस प्रकार दिया जा सकेगा कि उसका भूतलक्षी प्रभाव हो ।

(2) राज्यपाल [4]*** किसी राज्य में किसी ऐसे क्षेत्र की शांति और सुशासन के लिए विनियम बना सकेगा जो तत्समय अनुसूचित क्षेत्र है । विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे विनियम—

(क) ऐसे क्षेत्र की अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों द्वारा या उनमें भूमि के अंतरण का प्रतिषेध या निर्बन्धन कर सकेंगे;

(ख) ऐसे क्षेत्र की जनजातियों के सदस्यों को भूमि के आबंटन का विनियमन कर सकेंगे;

(ग) ऐसे व्यक्तियों द्वारा जो ऐसे क्षेत्र की अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को धन उधार देते हैं, साहूकार के रूप में कारबार करने का विनियमन कर सकेंगे ।

(3) ऐसे किसी विनियम को बनाने में जो इस पैरा के उपपैरा (2) में निर्दिष्ट है, राज्यपाल [4]*** संसद् के या उस राज्य के विधान मंडल के अधिनियम का या किसी विद्यमान विधि का, जो प्रश्नगत क्षेत्र में तत्समय लागू हो, निरसन या संशोधन कर सकेगा ।

(4) इस पैरा के अधीन बनाए गए सभी विनियम राष्ट्रपति के समक्ष तुरंत प्रस्तुत किए जाएंगे और जब तक वह उन पर अनुमति नहीं दे देता है तब तक उनका कोई प्रभाव नहीं होगा ।

(5) इस पैरा के अधीन कोई विनियम तब तक नहीं बनाया जाएगा जब तक विनियम बनाने वाले राज्यपाल [4]*** ने जनजाति सलाहकार परिषद् वाले राज्य की दशा में ऐसी परिषद् से परामर्श नहीं कर लिया है ।

भाग ग

अनुसूचित क्षेत्र

अनुसूचित क्षेत्र ।

6. (1) इस संविधान में, "अनुसूचित क्षेत्र" पद से ऐसे क्षेत्र अभिप्रेत हैं जिन्हें राष्ट्रपति आदेश द्वारा अनुसूचित क्षेत्र घोषित करे ।

(2) राष्ट्रपति किसी भी समय आदेश द्वारा —

4क संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

(क) निदेश दे सकेगा कि कोई संपूर्ण अनुसूचित क्षेत्र या उसका कोई विनिर्दिष्ट भाग अनुसूचित क्षेत्र या ऐसे क्षेत्र का भाग नहीं रहेगा;

[5]*(कक) किसी राज्य के किसी अनुसूचित क्षेत्र के क्षेत्र को उस राज्य के राज्यपाल से परामर्श करने के पश्चात् बढ़ा सकेगा,*

(ख) किसी अनुसूचित क्षेत्र में, केवल सीमाओं का परिशोधन करके ही, परिवर्तन कर सकेगा,

(ग) किसी राज्य की सीमाओं के किसी परिवर्तन पर या संघ में किसी नए राज्य के प्रवेश पर या नए राज्य की स्थापना पर ऐसे किसी क्षेत्र को, जो पहले से किसी राज्य में सम्मिलित नहीं है, अनुसूचित क्षेत्र या उसका भाग घोषित कर सकेगा,

[5]*(घ) किसी राज्य या राज्यों के संबंध में इस पैरा के अधीन किए गए आदेश या आदेशों को विखंडित कर सकेगा और संबंधित राज्य के राज्यपाल से परामर्श करके उन क्षेत्रों को, जो अनुसूचित क्षेत्र होंगे, पुनः परिनिश्चित करने के लिए नए आदेश कर सकेगा,*

और ऐसे किसी आदेश में ऐसे आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध हो सकेंगे जो राष्ट्रपति को आवश्यक और उचित प्रतीत हों, किंतु जैसा ऊपर कहा गया है उसके सिवाय इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन किए गए आदेश में किसी पश्चात्वर्ती आदेश द्वारा परिवर्तन नहीं किया जाएगा ।

भाग घ

अनुसूची का संशोधन

अनुसूची का संशोधन ।

7. (1) **संसद्, समय-समय पर विधि द्वारा, इस अनुसूची के उपबंधों में से किसी का, परिवर्धन, परिवर्तन या निरसन के रूप में, संशोधन कर सकेगी और जब अनुसूची का इस प्रकार संशोधन किया जाता है तब इस संविधान में इस अनुसूची के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह इस प्रकार संशोधित ऐसी अनुसूची के प्रति निर्देश है ।**

(2) **ऐसी कोई विधि, जो इस पैरा के उपपैरा (1) में उल्लिखित है, इस संविधान के अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जाएगी ।**

---

5. संविधान पांचवीं अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा अंतःस्थापित ।

छठी अनुसूची

[अनुच्छेद 244(2) और अनुच्छेद 275(1)]

[1][[2][*असम* [3][*, मेघालय, त्रिपुरा*] *और मिजोरम राज्यों*]] के जनजाति क्षेत्रों के प्रशासन के बारे में उपबंध

स्वशासी जिले और स्वशासी प्रदेश ।

1. (1) इस पैरा के उपबंधों के अधीन रहते हुए, इस अनुसूची के पैरा 20 से संलग्न सारणी के [4][[5][*भाग 1, भाग 2 और भाग 2क*] *की प्रत्येक मद के और भाग 3*] **के जनजाति क्षेत्रों का एक स्वशासी जिला होगा ।**

(2) यदि किसी स्वशासी जिले में भिन्न-भिन्न अनुसूचित जनजातियां हैं तो राज्यपाल, लोक अधिसूचना द्वारा, ऐसे क्षेत्र या क्षेत्रों को, जिनमें वे बसे हुए हैं, स्वशासी प्रदेशों में विभाजित कर सकेगा ।

(3) राज्यपाल, लोक अधिसूचना द्वारा, —

(क) उक्त सारणी के [5]*किसी भाग* **में किसी क्षेत्र को सम्मिलित कर सकेगा;**

(ख) उक्त सारणी के [5]*किसी भाग* **में से किसी क्षेत्र को अपवर्जित कर सकेगा;**

(ग) नया स्वशासी जिला बना सकेगा;

(घ) किसी स्वशासी जिले का क्षेत्र बढ़ा सकेगा;

(ङ) किसी स्वशासी जिले का क्षेत्र घटा सकेगा;

(च) दो या अधिक स्वशासी जिलों या उनके भागों को मिला सकेगा जिससे एक स्वशासी जिला बन सके;

[6]*(चच) किसी स्वशासी जिले के नाम में परिवर्तन कर सकेगा,*

(छ) किसी स्वशासी जिले की सीमाएं परिनिश्चित कर सकेगा :

परंतु राज्यपाल इस उपपैरा के खंड (ग), खंड (घ), खंड (ङ) और खंड (च) के अधीन कोई आदेश इस अनुसूची के पैरा 14 के उपपैरा (1) के अधीन नियुक्त आयोग के प्रतिवेदन पर विचार करने के पश्चात् ही करेगा, अन्यथा नहीं :

[7]*परंतु यह और कि राज्यपाल द्वारा इस उपपैरा के अधीन किए गए आदेश में ऐसे आनुषंगिक और पारिणामिक उपबंध (जिनके अंतर्गत पैरा 20 का और उक्त सारणी के किसी भाग की किसी मद का कोई संशोधन है) अंतर्विष्ट हो सकेंगे जो राज्यपाल को उस आदेश के उपबंधों को प्रभावी करने के लिए आवश्यक प्रतीत हों ।*

---

1 मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 (1986 का 34) की धारा 39 द्वारा कुछ शब्दों के स्थान पर (20-2-1987 से) प्रतिस्थापित ।

2. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "असम" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

3. संविधान (उनचासवां संशोधन) अधिनियम, 1984 की धारा 4 द्वारा (1-4-1985 से) "और मेघालय" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

4. संविधान (उनचासवां संशोधन) अधिनियम, 1984 की धारा 4 द्वारा (1-4-1985 से) "भाग 1 और भाग 2" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

5. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "भाग क" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

6 आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) अंतःस्थापित ।

7 पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) अंतःस्थापित ।

जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों का गठन ।

2. [8]*(1) प्रत्येक स्वशासी जिले के लिए एक जिला परिषद् होगी जो तीस से अनधिक सदस्यों से मिलकर बनेगी जिनमें से चार से अनधिक व्यक्ति राज्यपाल द्वारा नामनिर्देशित किए जाएंगे और शेष वयस्क मताधिकार के आधार पर निर्वाचित किए जाएंगे ।*

(2) इस अनुसूची के पैरा 1 के उपपैरा (2) के अधीन स्वशासी प्रदेश के रूप में गठित प्रत्येक क्षेत्र के लिए एक पृथक् प्रादेशिक परिषद् होगी ।

(3) प्रत्येक जिला परिषद् और प्रत्येक प्रादेशिक परिषद् क्रमशः "(जिले का नाम) की जिला परिषद्" और "(प्रदेश का नाम) की प्रादेशिक परिषद्" नामक निगमित निकाय होगी, उसका शाश्वत उत्तराधिकार होगा और उसकी सामान्य मुद्रा होगी और उक्त नाम से वह वाद लाएगी और उस पर वाद लाया जाएगा ।

(4) इस अनुसूची के उपबंधों के अधीन रहते हुए, स्वशासी जिले का प्रशासन ऐसे जिले की जिला परिषद् में वहां तक निहित होगा जहां तक वह इस अनुसूची के अधीन ऐसे जिले के भीतर किसी प्रादेशिक परिषद् में निहित नहीं है और स्वशासी प्रदेश का प्रशासन ऐसे प्रदेश की प्रादेशिक परिषद् में निहित होगा ।

(5) प्रादेशिक परिषद् वाले स्वशासी जिले में प्रादेशिक परिषद् के प्राधिकार के अधीन क्षेत्रों के संबंध में जिला परिषद् को, इस अनुसूची द्वारा ऐसे क्षेत्रों के संबंध में प्रदत्त शक्तियों के अतिरिक्त केवल ऐसी शक्तियां होंगी जो उसे प्रादेशिक परिषद् द्वारा प्रत्यायोजित की जाएं ।

(6) राज्यपाल, संबंधित स्वशासी जिलों या प्रदेशों के भीतर विद्यमान जनजाति परिषदों या अन्य प्रतिनिधि जनजाति संगठनों से परामर्श करके, जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों के प्रथम गठन के लिए नियम बनाएगा और ऐसे नियमों में निम्नलिखित के लिए उपबंध किए जाएंगे, अर्थात् :

(क) जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों की संरचना तथा उनमें स्थानों का आबंटन;

(ख) उन परिषदों के लिए निर्वाचनों के प्रयोजन के लिए प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों का परिसीमन;

(ग) ऐसे निर्वाचनों में मतदान के लिए अर्हताएं और उनके लिए निर्वाचक नामावलियों की तैयारी;

(घ) ऐसे निर्वाचनों में ऐसी परिषदों के सदस्य निर्वाचित होने के लिए अर्हताएं;

(ङ) [9]*प्रादेशिक परिषदों* **के सदस्यों की पदावधि;**

(च) ऐसी परिषदों के लिए निर्वाचन या नामनिर्देशन से संबंधित या संसक्त कोई अन्य विषय;

(छ) जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों की प्रक्रिया और उनका कार्य संचालन [10]*(जिसके अंतर्गत किसी रिक्ति के होते हुए भी कार्य करने की शक्ति है);*

(ज) जिला और प्रादेशिक परिषदों के अधिकारियों और कर्मचारिवृंद की नियुक्ति ।

[10]*(6क) जिला परिषद् के निर्वाचित सदस्य, यदि जिला परिषद् पैरा 16 के अधीन पहले ही विघटित नहीं कर दी जाती है तो, परिषद् के लिए साधारण निर्वाचन के पश्चात् परिषद् के प्रथम अधिवेशन के लिए नियत तारीख से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेंगे और नामनिर्देशित सदस्य राज्यपाल के प्रसादपर्यन्त पद धारण करेगा :*

परंतु पांच वर्ष की उक्त अवधि को, जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब या यदि ऐसी परिस्थितियां विद्यमान हैं जिनके कारण निर्वाचन कराना राज्यपाल की राय में असाध्य है तो, राज्यपाल ऐसी अवधि के लिए बढ़ा सकेगा जो एक बार में एक वर्ष से

8 आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) उपपैरा (1) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

9 आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) "ऐसी परिषदों" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

10. आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) अंतःस्थापित ।

अधिक नहीं होगी और जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब उद्घोषणा के प्रवृत्त न रह जाने के पश्चात किसी भी दशा में उसका विस्तार छह मास की अवधि से अधिक नहीं होगा :

परंतु यह और कि आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचित सदस्य उस सदस्य की, जिसका स्थान वह लेता है, शेष पदावधि के लिए पद धारण करेगा ।

(7) **जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् अपने प्रथम गठन के पश्चात्** [10]*राज्यपाल के अनुमोदन से* **इस पैरा के उपपैरा (6) में विनिर्दिष्ट विषयों के लिए नियम बना सकेगी और** [10]*वैसे ही अनुमोदन से —*

(क) अधीनस्थ स्थानीय परिषदों या बोर्डों के बनाए जाने तथा उनकी प्रक्रिया और उनके कार्य संचालन का, और

(ख) यथास्थिति, जिले या प्रदेश के प्रशासन विषयक कार्य करने से संबंधित साधारणतया सभी विषयों का,

विनियमन करने वाले नियम भी, बना सकेगी :

परंतु जब तक जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् द्वारा इस उपपैरा के अधीन नियम नहीं बनाए जाते हैं तब तक राज्यपाल द्वारा इस पैरा के उपपैरा (6) के अधीन बनाए गए नियम, प्रत्येक ऐसी परिषद् के लिए निर्वाचनों, उसके अधिकारियों और कर्मचारियों तथा उसकी प्रक्रिया और उसके कार्य संचालन के संबंध में प्रभावी होंगे ।

[11]* * *

विधि बनाने की जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों की शक्ति ।

3. (1) **स्वशासी प्रदेश की प्रादेशिक परिषद् को ऐसे प्रदेश के भीतर के सभी क्षेत्रों के संबंध में और स्वशासी जिले की जिला परिषद् को ऐसे क्षेत्रों को छोड़कर जो उस जिले के भीतर की प्रादेशिक परिषदों के, यदि कोई हों, प्राधिकार के अधीन हैं, उस जिले के भीतर के अन्य सभी क्षेत्रों के संबंध में निम्नलिखित विषयों के लिए विधि बनाने की शक्ति होगी, अर्थात् :**

(क) किसी आरक्षित वन की भूमि से भिन्न अन्य भूमि का, कृषि या चराई के प्रयोजनों के लिए अथवा निवास के या कृषि से भिन्न अन्य प्रयोजनों के लिए अथवा किसी ऐसे अन्य प्रयोजन के लिए जिससे किसी ग्राम या नगर के निवासियों के हितों की अभिवृद्धि संभाव्य है, आबंटन, अधिभोग या उपयोग अथवा अलग रखा जाना :

परंतु ऐसी विधियों की कोई बात, [12]*संबंधित राज्य की सरकार को* **अनिवार्य अर्जन प्राधिकृत करने वाली तत्समय प्रवृत्त विधि के अनुसार किसी भूमि का, चाहे वह अधिभोग में हो या नहीं, लोक प्रयोजनों के लिए अनिवार्य अर्जन करने से निवारित नहीं करेगी;**

(ख) किसी ऐसे वन का प्रबंध जो आरक्षित वन नहीं है;

(ग) कृषि के प्रयोजन के लिए किसी नहर या जलसरणी का उपयोग;

(घ) झूम की पद्धति का या परिवर्ती खेती की अन्य पद्धतियों का विनियमन;

(ङ) ग्राम या नगर समितियों या परिषदों की स्थापना और उनकी शक्तियां;

(च) ग्राम या नगर प्रशासन से संबंधित कोई अन्य विषय जिसके अंतर्गत ग्राम या नगर पुलिस और लोक स्वास्थ्य और स्वच्छता हैं;

(छ) प्रमुखों या मुखियों की नियुक्ति या उत्तराधिकार;

(ज) संपत्ति की विरासत;

11. आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) द्वितीय परंतुक का लोप किया गया ।

12. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[13]*(झ) विवाह और विवाह-विच्छेद;*

(ञ) सामाजिक रूढ़ियां ।

(2) इस पैरा में, "आरक्षित वन" से ऐसा क्षेत्र अभिप्रेत है जो असम वन विनियम, 1891 के अधीन या प्रश्नगत क्षेत्र में तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि के अधीन आरक्षित वन है ।

(3) इस पैरा के अधीन बनाई गई सभी विधियां राज्यपाल के समक्ष तुरंत प्रस्तुत की जाएंगी और जब तक वह उन पर अनुमति नहीं दे देता है तब तक प्रभावी नहीं होंगी ।

स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों में न्याय प्रशासन ।

4. (1) स्वशासी प्रदेश की प्रादेशिक परिषद् ऐसे प्रदेश के भीतर के क्षेत्रों के संबंध में और स्वशासी जिले की जिला परिषद् ऐसे क्षेत्रों से भिन्न जो उस जिले के भीतर की प्रादेशिक परिषदों के, यदि कोई हों, प्राधिकार के अधीन हैं, उस जिले के भीतर के अन्य क्षेत्रों के संबंध में, ऐसे वादों और मामलों के विचारण के लिए जो ऐसे पक्षकारों के बीच हैं जिनमें से सभी पक्षकार ऐसे क्षेत्रों के भीतर की अनुसूचित जनजातियों के हैं तथा जो उन वादों और मामलों से भिन्न हैं जिनको इस अनुसूची के पैरा 5 के उपपैरा (1) के उपबंध लागू होते हैं, उस राज्य के किसी न्यायालय का अपवर्जन करके ग्राम परिषदों या न्यायालयों का गठन कर सकेगी और उपयुक्त व्यक्तियों को ऐसी ग्राम परिषदों के सदस्य या ऐसे न्यायालयों के पीठासीन अधिकारी नियुक्त कर सकेगी और ऐसे अधिकारी भी नियुक्त कर सकेगी जो इस अनुसूची के पैरा 3 के अधीन बनाई गई विधियों के प्रशासन के लिए आवश्यक हों ।

(2) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, स्वशासी प्रदेश की प्रादेशिक परिषद् या उस प्रादेशिक परिषद् द्वारा इस निमित्त गठित कोई न्यायालय या यदि किसी स्वशासी जिले के भीतर के किसी क्षेत्र के लिए कोई प्रादेशिक परिषद् नहीं है तो, ऐसे जिले की जिला परिषद् या उस जिला परिषद् द्वारा इस निमित्त गठित कोई न्यायालय ऐसे सभी वादों और मामलों के संबंध में जो, यथास्थिति, ऐसे प्रदेश या क्षेत्र के भीतर इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन गठित किसी ग्राम परिषद् या न्यायालय द्वारा विचारणीय हैं तथा जो उन वादों और मामलों से भिन्न हैं जिनको इस अनुसूची के पैरा 5 के उपपैरा (1) के उपबंध लागू होते हैं अपील न्यायालय की शक्तियों का प्रयोग करेगा तथा उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय से भिन्न किसी अन्य न्यायालय को ऐसे वादों या मामलों में अधिकारिता नहीं होगी ।

(3) [14]* उच्च न्यायालय को, उन वादों और मामलों में जिनको इस पैरा के उपपैरा (2) के उपबंध लागू होते हैं, ऐसी अधिकारिता होगी और वह उसका प्रयोग करेगा जो राज्यपाल समय-समय पर आदेश द्वारा विनिर्दिष्ट करे ।**

(4) यथास्थिति, प्रादेशिक परिषद् या जिला परिषद् राज्यपाल के पूर्व अनुमोदन से निम्नलिखित के विनियमन के लिए नियम बना सकेगी, अर्थात् :

(क) ग्राम परिषदों और न्यायालयों का गठन और इस पैरा के अधीन उनके द्वारा प्रयोक्तव्य शक्तियां;

(ख) इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन वादों और मामलों के विचारण में ग्राम परिषदों या न्यायालयों द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया;

(ग) इस पैरा के उपपैरा (2) के अधीन अपीलों और अन्य कार्यवाहियों में प्रादेशिक परिषद् या जिला परिषद् अथवा ऐसी परिषद् द्वारा गठित किसी न्यायालय द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया;

(घ) ऐसी परिषदों और न्यायालयों के विनिश्चयों और आदेशों का प्रवर्तन;

(ङ) इस पैरा के उपपैरा (1) और उपपैरा (2) के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए अन्य सभी आनुषंगिक विषय ।

13 आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) खंड (झ) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

14. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "आसाम के" शब्दों का लोप किया गया ।

[15](5) उस तारीख को और से जो राष्ट्रपति [16][संबंधित राज्य की सरकार से परामर्श करने के पश्चात्] अधिसूचना द्वारा, इस निमित्त नियत करे, यह पैरा ऐसे स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश के संबंध में, जो उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट किया जाए, इस प्रकार प्रभावी होगा मानो —

(i) उपपैरा (1) में "जो ऐसे पक्षकारों के बीच हैं जिनमें से सभी पक्षकार ऐसे क्षेत्रों के भीतर की अनुसूचित जनजातियों के हैं तथा जो उन वादों और मामलों से भिन्न हैं जिनको इस अनुसूची के पैरा 5 के उपपैरा (1) के उपबंध लागू होते हैं," शब्दों के स्थान पर "जो इस अनुसूची के पैरा 5 के उपपैरा (1) में निर्दिष्ट प्रकृति के ऐसे वाद और मामले नहीं हैं जिन्हें राज्यपाल इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे," शब्द रख दिए गए हों;

(ii) उपपैरा (2) और उपपैरा (3) का लोप कर दिया गया हो,

(iii) उपपैरा (4) में —

(क) "यथास्थिति, प्रादेशिक परिषद् या जिला परिषद्, राज्यपाल के पूर्व अनुमोदन से, निम्नलिखित के विनियमन के लिए नियम बना सकेगी, अर्थात् —" शब्दों के स्थान पर "राज्यपाल निम्नलिखित के विनियमन के लिए नियम बना सकेगा, अर्थात् —" शब्द रख दिए गए हो; और

(ख) खंड (क) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रख दिया गया हो, अर्थात् :

"(क) ग्राम परिषदों और न्यायालयों का गठन, इस पैरा के अधीन उनके द्वारा प्रयोक्तव्य शक्तियां और वे न्यायालय जिनको ग्राम परिषदों और न्यायालयों के विनिश्चयों से अपीलें हो सकेंगी;";

(ग) खंड (ग) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रख दिया गया हो, अर्थात्

"(ग) प्रादेशिक परिषद् या जिला परिषद् अथवा ऐसी परिषद् द्वारा गठित किसी न्यायालय के समक्ष उपपैरा (5) के अधीन राष्ट्रपति द्वारा नियत तारीख से ठीक पहले लंबित अपीलों और अन्य कार्यवाहियों का अंतरण,"; और

(घ) खंड (ङ) मे "उपपैरा (1) और उपपैरा (2)" शब्दों, कोष्ठकों और अंको के स्थान पर "उपपैरा (1)" शब्द, कोष्ठक और अंक रख दिए गए हो ।

कुछ वादों, मामलों और अपराधों के विचारण के लिए प्रादेशिक परिषदों और जिला परिषदों को तथा किन्हीं न्यायालयों और अधिकारियों को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और दंड प्रक्रिया संहिता, 1898[17] के अधीन शक्तियों का प्रदान किया जाना ।

5. (1) **राज्यपाल, किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश में किसी ऐसी प्रवृत्त विधि से, जो ऐसी विधि है जिसे राज्यपाल इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे, उद्भूत वादों या मामलों के विचारण के लिए अथवा भारतीय दंड संहिता के अधीन या ऐसे जिले या प्रदेश में तत्समय लागू किसी अन्य विधि के अधीन मृत्यु से, आजीवन निर्वासन से या पांच वर्ष से अन्यून अवधि के लिए कारावास से दंडनीय अपराधों के विचारण के लिए, ऐसे जिले या प्रदेश पर प्राधिकार रखने वाली जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् को अथवा ऐसी जिला परिषद् द्वारा गठित न्यायालयों को अथवा राज्यपाल द्वारा इस निमित्त नियुक्त किसी अधिकारी को, यथास्थिति, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 या दंड प्रक्रिया संहिता, 1898[17] के अधीन ऐसी शक्तियां प्रदान कर सकेगा जो वह समुचित समझे और तब उक्त परिषद्, न्यायालय या अधिकारी इस प्रकार प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए वादों, मामलों या अपराधों का विचारण करेगा ।**

---

15 आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) अंतःस्थापित ।

16. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) कुछ शब्दों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

17. अब दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) देखें ।

(2) राज्यपाल, इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन किसी जिला परिषद्, प्रादेशिक परिषद्, न्यायालय या अधिकारी को प्रदत्त शक्तियों में से किसी शक्ति को वापस ले सकेगा या उपांतरित कर सकेगा ।

(3) इस पैरा में अभिव्यक्त रूप से यथा उपबंधित के सिवाय, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 और दंड प्रक्रिया संहिता, 1898[17] किसी स्वशासी जिले में या किसी स्वशासी प्रदेश में, जिसको इस पैरा के उपबंध लागू होते हैं, किन्हीं वादों, मामलों या अपराधों के विचारण को लागू नहीं होगी ।

[18]*(4) राष्ट्रपति द्वारा किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश के संबंध में पैरा 4 के उपपैरा (5) के अधीन नियत तारीख को और से, उस जिले या प्रदेश को लागू होने में इस पैरा की किसी बात के बारे में यह नही समझा जाएगा कि वह किसी जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् को या जिला परिषद् द्वारा गठित न्यायालयों को इस पैरा के उपपैरा (1) में निर्दिष्ट शक्तियों मे से कोई शक्ति प्रदान के लिए राज्यपाल को प्राधिकृत करती है ।*

प्राथमिक विद्यालय आदि स्थापित करने की जिला परिषद् की शक्ति ।

[19]*6 (1) स्वशासी जिले की जिला परिषद्, जिले में प्राथमिक विद्यालयों, औषधालयों, बाजारों, [20][कांजी हाउसों], फेरी, मीन क्षेत्रों, सड़कों, सड़क परिवहन और जल मार्गों की स्थापना निर्माण और प्रबंध कर सकेगी तथा राज्यपाल के पूर्व अनुमोदन से, उनके विनियमन और नियत्रण के लिए विनियम बना सकेगी और, विशिष्टतया, वह भाषा और वह रीति विहित कर सकेगी, जिससे जिले के प्राथमिक विद्यालयों में प्राथमिक शिक्षा दी जाएगी ।*

*(2) राज्यपाल, जिला परिषद् की सहमति से, उस परिषद् को या उसके अधिकारियों को कृषि, पशुपालन, सामुदायिक परियोजनाओ, सहकारी सोसाइटियों, समाज कल्याण, ग्राम योजना या किसी अन्य ऐसे विषय के संबंध में, जिस पर [21]*** राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है, कृत्य सशर्त या बिना शर्त सौंप सकेगा ।*

जिला और प्रादेशिक निधियां ।

7. (1) **प्रत्येक स्वशासी जिले के लिए एक जिला निधि और प्रत्येक स्वशासी प्रदेश के लिए एक प्रादेशिक निधि गठित की जाएगी जिसमें क्रमशः उस जिले की जिला परिषद् द्वारा और उस प्रदेश की प्रादेशिक परिषद् द्वारा इस संविधान के उपबंधों के अनुसार, यथास्थिति, उस जिले या प्रदेश के प्रशासन के अनुक्रम में प्राप्त सभी धनराशियां जमा की जाएंगी ।**

[22]*(2) राज्यपाल, यथास्थिति, जिला निधि या प्रादेशिक निधि के प्रबंध के लिए और उक्त निधि मे धन जमा करने, उसमे से धनराशियां निकालने, उसके धन की अभिरक्षा और पूर्वोक्त विषयो मे संबंधित या आनुषंगिक किसी अन्य विषय के संबंध मे अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया के लिए नियम बना सकेगा ।*

(3) यथास्थिति, जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् के लेखे ऐसे प्ररूप में रखे जाएंगे जो भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक राष्ट्रपति के अनुमोदन से, विहित करे ।

---

18. आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) अंतःस्थापित ।

19. आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) पैरा 6 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

20 निरसन और संशोधन अधिनियम, 1974 (1974 का 56) की धारा 4 द्वारा "कांजी हाउस" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

21 पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "यथास्थिति, आसाम या मेघालय" शब्दों का लोप किया गया ।

22 आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) उपपैरा (2) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(4) नियंत्रक-महालेखापरीक्षक जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों के लेखाओं की संपरीक्षा ऐसी रीति से कराएगा जो वह ठीक समझे और नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के ऐसे लेखाओं से संबंधित प्रतिवेदन राज्यपाल के समक्ष प्रस्तुत किए जाएंगे जो उन्हें परिषद् के समक्ष रखवाएगा ।

भू-राजस्व का निर्धारण और संग्रहण करने तथा कर का अधिरोपण करने की शक्तियां ।

8. (1) **स्वशासी प्रदेश के भीतर की सभी भूमियों के संबंध में ऐसे प्रदेश की प्रादेशिक परिषद् को और यदि जिले में कोई प्रादेशिक परिषद् हैं तो उनके प्राधिकार के अधीन आने वाले क्षेत्रों में स्थित भूमियों को छोड़कर जिले के भीतर की सभी भूमियों के संबंध में स्वशासी जिले की जिला परिषद् को ऐसी भूमियों की बाबत, उन सिद्धांतों के अनुसार राजस्व का निर्धारण और संग्रहण करने की शक्ति होगी जिनका** [23]*साधारणतया राज्य में भू-राजस्व के प्रयोजन के लिए भूमि के निर्धारण मे राज्य की सरकार द्वारा तत्समय अनुसरण किया जाता है ।*

(2) **स्वशासी प्रदेश के भीतर के क्षेत्रों के संबंध में ऐसे प्रदेश की प्रादेशिक परिषद् को और यदि जिले में कोई प्रादेशिक परिषद् हैं तो उनके प्राधिकार के अधीन आने वाले क्षेत्रों को छोड़कर जिले के भीतर के सभी क्षेत्रों के संबंध में स्वशासी जिले की जिला परिषद् को, भूमि और भवनों पर करों का तथा ऐसे क्षेत्रों में निवासी व्यक्तियों पर पथकर का उद्ग्रहण और संग्रहण करने की शक्ति होगी ।**

(3) **स्वशासी जिले की जिला परिषद् को ऐसे जिले के भीतर निम्नलिखित सभी या किन्हीं करों का उद्ग्रहण और संग्रहण करने की शक्ति होगी, अर्थात् :**

(क) **वृत्ति, व्यापार, आजीविका और नियोजन पर कर;**

(ख) **जीवजंतुओं, यानों और नौकाओं पर कर;**

(ग) **किसी बाजार में विक्रय के लिए माल के प्रवेश पर कर और फेरी से ले जाए जाने वाले यात्रियों और माल पर पथकर; और**

(घ) **विद्यालयों, औषधालयों या सड़कों को बनाए रखने के लिए कर ।**

(4) **इस पैरा के उपपैरा (2) और उपपैरा (3) में विनिर्दिष्ट करों में से किसी कर के उद्ग्रहण और संग्रहण का उपबंध करने के लिए, यथास्थिति, प्रादेशिक परिषद् या जिला परिषद् विनियम बना सकेगी** [24]*और ऐसा प्रत्येक विनियम राज्यपाल के समक्ष तुरंत प्रस्तुत किया जाएगा और जब तक वह उस पर अनुमति नहीं दे देता है तब तक उसका कोई प्रभाव नही होगा ।*

खनिजों के पूर्वेक्षण या निष्कर्षण के प्रयोजन के लिए अनुज्ञप्तिया या पट्टे ।

[25]9. (1) **किसी स्वशासी जिले के भीतर के किसी क्षेत्र के संबंध में** [26]*राज्य की सरकार* **द्वारा खनिजों के पूर्वेक्षण या निष्कर्षण के प्रयोजन के लिए दी गई अनुज्ञप्तियों या पट्टों से प्रत्येक वर्ष प्रोद्भूत होने वाले स्वामिस्व का ऐसा अंश, जिला परिषद् को दिया जाएगा जो उस** [26]*राज्य की सरकार* **और ऐसे जिले की जिला परिषद् के बीच करार पाया जाए ।**

---

23. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) कुछ शब्दो के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

24 आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) अंतःस्थापित ।

25. संविधान छठी अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 67) की धारा 2 द्वारा पैरा 9 त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों को लागू करने में निम्नलिखित रूप से संशोधित किया गया जिसके द्वारा उपपैरा (2) के पश्चात् निम्नलिखित उपपैरा अंतःस्थापित किया गया है, अर्थात् :—

"(3) राज्यपाल, आदेश द्वारा, यह निदेश दे सकेगा कि इस पैरा के अधीन जिला परिषद् को दिया जाने वाला स्वामित्व का अंश उस परिषद् को, यथास्थिति, उपपैरा (1) के अधीन किसी करार या उपपैरा (2) के अधीन किसी अवधारण की तारीख से एक वर्ष की अवधि के भीतर किया जाएगा ।" ।

26 पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71(i) और आठवी अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "असम सरकार" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

(2) यदि जिला परिषद् को दिए जाने वाले ऐसे स्वामित्व के अंश के बारे में कोई विवाद उत्पन्न होता है तो वह राज्यपाल को अवधारण के लिए निर्देशित किया जाएगा और राज्यपाल द्वारा अपने विवेक के अनुसार अवधारित रकम इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन जिला परिषद् को संदेय रकम समझी जाएगी और राज्यपाल का विनिश्चय अंतिम होगा ।

जनजातियों से भिन्न व्यक्तियों की साहूकारी और व्यापार के नियंत्रण के लिए विनियम बनाने की जिला परिषद् की शक्ति ।

[27]10. (1) स्वशासी जिले की जिला परिषद् उस जिले में निवासी जनजातियों से भिन्न व्यक्तियों की उस जिले के भीतर साहूकारी या व्यापार के विनियमन और नियंत्रण के लिए विनियम बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे विनियम —

(क) विहित कर सकेंगे कि उस निमित्त दी गई अनुज्ञप्ति के धारक के अतिरिक्त और कोई साहूकारी का कारोबार नहीं करेगा;

(ख) साहूकार द्वारा प्रभारित या वसूल किए जाने वाले ब्याज की अधिकतम दर विहित कर सकेंगे;

(ग) साहूकारों द्वारा लेखे रखे जाने का और जिला परिषदों द्वारा इस निमित्त नियुक्त अधिकारियों द्वारा ऐसे लेखाओं के निरीक्षण का उपबंध कर सकेंगे;

(घ) विहित कर सकेंगे कि कोई व्यक्ति, जो जिले में निवासी अनुसूचित जनजातियों का सदस्य नहीं है, जिला परिषद् द्वारा इस निमित्त दी गई अनुज्ञप्ति के अधीन ही किसी वस्तु का थोक या फुटकर कारबार करेगा, अन्यथा नहीं :

परंतु इस पैरा के अधीन ऐसे विनियम तब तक नहीं बनाए जा सकेंगे जब तक वे जिला परिषद् की कुल सदस्य संख्या के कम से कम तीन चौथाई बहुमत द्वारा पारित नहीं कर दिए जाते हैं :

परंतु यह और कि ऐसे किन्हीं विनियमों के अधीन किसी ऐसे साहूकार या व्यापारी को, जो ऐसे विनियमों के बनाए जाने के पहले से उस जिले के भीतर कारबार करता रहा है, अनुज्ञप्ति देने से इंकार करना सक्षम नहीं होगा ।

(3) इस पैरा के अधीन बनाए गए सभी विनियम राज्यपाल के समक्ष तुरंत प्रस्तुत किए जाएंगे और जब तक वह उन पर अनुमति नहीं दे देता है तब तक उनका कोई प्रभाव नहीं होगा ।

अनुसूची के अधीन बनाई गई विधियों, नियमों और विनियमों का प्रकाशन ।

11. जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् द्वारा इस अनुसूची के अधीन बनाई गई सभी विधियां, नियम और विनियम राज्य के राजपत्र में तुरंत प्रकाशित किए जाएंगे और ऐसे प्रकाशन पर विधि का बल रखेंगे ।

[28]*असम राज्य में स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों को संसद के और असम राज्य के विधान मंडल के अधिनियमों का लागू होना ।*

12. (1) इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी,—

(क) [29]*असम राज्य के विधान मंडल* का कोई अधिनियम, जो ऐसे विषयों में से किसी विषय के संबंध में है जिनको इस अनुसूची के पैरा 3 में ऐसे विषयों के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है, जिनके संबंध में जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् विधियां बना

---

27 संविधान छठी अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 67) की धारा 2 द्वारा पैरा 10 त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों को लागू करने में निम्नलिखित रूप से संशोधित किया गया है :

'(क) शीर्षक में से "जनजातियों से भिन्न व्यक्तियों की" शब्दों का लोप किया जाएगा,

(ख) उपपैरा (1) में से "जनजातियों से भिन्न" शब्दों का लोप किया जाएगा,

(ग) उपपैरा (2) में, खंड (घ) के स्थान पर, निम्नलिखित खंड रखा जाएगा, अर्थात् :

"(घ) विहित कर सकेंगे कि कोई व्यक्ति जो जिले में निवासी है जिला परिषद् द्वारा इस निमित्त दी गई अनुज्ञप्ति के अधीन कोई थोक या फुटकर व्यापार करेगा अन्यथा नहीं ।" ' ।

28. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) शीर्षक के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

29. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "राज्य का विधान मंडल" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

सकेगी और [29]*असम राज्य के विधान मंडल* **का कोई अधिनियम, जो किसी अनासुत ऐल्कोहाली लिकर के उपभोग को प्रतिषिद्ध या निर्बन्धित करता है,** [30]*उस राज्य मे* **किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को तब तक लागू नहीं होगा जब तक दोनों दशाओं में से हर एक में ऐसे जिले की जिला परिषद् या ऐसे प्रदेश पर अधिकारिता रखने वाली जिला परिषद्, लोक अधिसूचना द्वारा, इस प्रकार निदेश नहीं दे देती है और जिला परिषद् किसी अधिनियम के संबंध में ऐसा निदेश देते समय यह निदेश दे सकेगी कि वह अधिनियम ऐसे जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को लागू होने में ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगा जो वह ठीक समझती है;**

(ख) राज्यपाल, लोक अधिसूचना द्वारा, निदेश दे सकेगा कि संसद् का या [29]*असम राज्य के विधान मंडल* **का कोई अधिनियम, जिसे इस उपपैरा के खंड (क) के उपबंध लागू नहीं होते हैं,** [30]*उस राज्य मे* **किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को लागू नहीं होगा अथवा ऐसे जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए लागू होगा जो वह उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे ।**

(2) इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन दिया गया कोई निदेश इस प्रकार दिया जा सकेगा कि उसका भूतलक्षी प्रभाव हो ।

मेघालय राज्य मे स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों को संसद के और मेघालय राज्य के विधान मंडल के अधिनियमों का लागू होना ।

[31]12क. *इस संविधान मे किसी बात के होते हुए भी, —*

(क) यदि इस अनुसूची के पैरा 3 के उपपैरा (1) मे विनिर्दिष्ट विषयों मे से किसी विषय के संबंध मे मेघालय राज्य मे किसी जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् द्वारा बनाई गई किसी विधि का कोई उपबंध या यदि इस अनुसूची के पैरा 8 या पैरा 10 के अधीन उस राज्य मे किसी जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् द्वारा बनाए गए किसी विनियम का कोई उपबंध, मेघालय राज्य के विधान मंडल द्वारा उस विषय के संबंध मे बनाई गई किसी विधि के किसी उपबंध के विरुद्ध है तो, यथास्थिति, उस जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् द्वारा बनाई गई विधि या बनाया गया विनियम, चाहे वे मेघालय राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि से पहले बनाया गया हो या उसके पश्चात्, उस विरोध की मात्रा तक शून्य होगा और मेघालय राज्य के विधान मंडल द्वारा बनाई गई विधि अभिभावी होगी,

(ख) राष्ट्रपति, संसद् के किसी अधिनियम के संबंध मे, अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि वह मेघालय राज्य मे किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को लागू नहीं होगा अथवा ऐसे जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादो या उपांतरणों के अधीन रहते हुए लागू होगा जो वह अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे और ऐसा कोई निदेश इस प्रकार दिया जा सकेगा कि उसका भूतलक्षी प्रभाव हो ।

त्रिपुरा राज्य में स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों को संसद के और त्रिपुरा राज्य के विधान मंडल के अधिनियमों का लागू होना ।

[32]*12कक. इस संविधान मे किसी बात के होते हुए भी, —*

(क) त्रिपुरा राज्य के विधान मंडल का कोई अधिनियम, जो ऐसे विषयों मे से किसी विषय के संबंध मे है जिनको इस अनुसूची के पैरा 3 मे ऐसे विषयो के रूप में विनिर्दिष्ट किया गया है जिनके संबंध मे जिला परिषद् या

---

30 पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) अंतःस्थापित ।

31. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) पैरा 12क के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

32 संविधान छठी अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 67) की धारा 2 द्वारा पैरा 12कक और 12ख के स्थान पर प्रतिस्थापित । पैरा 12कक संविधान (उनचासवां संशोधन) अधिनियम, 1984 की धारा 4 द्वारा (1-4-1985 से) अंतःस्थापित किया गया था ।

प्रादेशिक परिषद् विधियां बना सकेगी, और त्रिपुरा राज्य के विधान मंडल का कोई अधिनियम जो किसी अनासुत ऐल्कोहाली लिकर के उपभोग को प्रतिषिद्ध या निर्बन्धित करता है, उस राज्य में किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को तब तक लागू नहीं होगा जब तक, दोनों दशाओं मे से हर एक में, उस जिले की जिला परिषद् या ऐसे प्रदेश पर अधिकारिता रखने वाली जिला परिषद्, लोक अधिसूचना द्वारा, इस प्रकार निदेश नहीं दे देती है और जिला परिषद् किसी अधिनियम के संबंध में ऐसा निदेश देते समय यह निदेश दे सकेगी कि वह अधिनियम उस जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को लागू होने में ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगा जो वह ठीक समझती है;

(ख) राज्यपाल, लोक अधिसूचना द्वारा, निदेश दे सकेगा कि त्रिपुरा राज्य के विधान मंडल का कोई अधिनियम, जिसे इस उपपैरा के खंड (क) के उपबध लागू नहीं होते हैं, उस राज्य में किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को लागू नहीं होगा अथवा ऐसे जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों या उपांतरणो के अधीन रहते हुए लागू होगा जो वह उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे;

(ग) राष्ट्रपति, संसद् के किसी अधिनियम के संबंध में, अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि वह त्रिपुरा राज्य मे किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को लागू नही होगा अथवा ऐसे जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों या उपांतरणो के अधीन रहते हुए लागू होगा जो वह अधिसूचना मे विनिर्दिष्ट करे और ऐसा कोई निदेश इस प्रकार दिया जा सकेगा कि उसका भूतलक्षी प्रभाव हो ।

मिजोरम राज्य में स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों को संसद् के और मिजोरम राज्य के विधान मंडल के अधिनियमों का लागू होना ।

12ख. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, —

(क) मिजोरम राज्य के विधान मंडल का कोई अधिनियम जो ऐसे विषयों में से किसी विषय के संबंध में है जिनको इस अनुसूची के पैरा 3 मे ऐसे विषयों के रूप मे विनिर्दिष्ट किया गया है जिनके संबंध मे जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् विधियां बना सकेगी, और मिजोरम राज्य के विधान मंडल का कोई अधिनियम, जो किसी अनासुत ऐल्कोहाली लिकर के उपभोग को प्रतिषिद्ध या निर्बन्धित करता है, उस राज्य में किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को तब तक लागू नही होगा जब तक, दोनों दशाओं मे से हर एक में, उस जिले की जिला परिषद् या ऐसे प्रदेश पर अधिकारिता रखने वाली जिला परिषद्, लोक अधिसूचना द्वारा, इस प्रकार निदेश नहीं दे देती है और जिला परिषद्, किसी अधिनियम के संबंध मे ऐसा निदेश देते समय यह निदेश दे सकेगी कि वह अधिनियम उस जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को लागू होने में ऐसे अपवादों या उपांतरणो के अधीन रहते हुए प्रभावी होगा जो वह ठीक समझती है,

(ख) राज्यपाल, लोक अधिसूचना द्वारा, निदेश दे सकेगा कि मिजोरम राज्य के विधान मंडल का कोई अधिनियम, जिसे इस उपपैरा के खंड (क) के उपबंध लागू नहीं होते हैं, उस राज्य में किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को लागू नहीं होगा अथवा ऐसे जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए लागू होगा जो वह उस अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे,

(ग) राष्ट्रपति, संसद् के किसी अधिनियम के संबंध में, अधिसूचना द्वारा निदेश दे सकेगा कि वह मिजोरम राज्य में किसी स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश को लागू नहीं होगा अथवा ऐसे जिले या प्रदेश या उसके किसी भाग को ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए लागू होगा जो वह अधिसूचना में विनिर्दिष्ट करे और ऐसा कोई निदेश इस प्रकार दिया जा सकेगा कि उसका भूतलक्षी प्रभाव हो ।

13. किसी स्वशासी जिले से संबंधित प्राक्कलित प्राप्तियां और व्यय, जो [33]* राज्य की संचित निधि में जमा होनी हैं या उसमें से किए जाने हैं, पहले जिला परिषद् के समक्ष विचार-विमर्श के लिए रखे जाएंगे और फिर ऐसे विचार-विमर्श के पश्चात् अनुच्छेद 202 के अधीन राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखे जाने वाले वार्षिक वित्तीय विवरण में पृथक् रूप से दिखाए जाएंगे ।**

स्वशासी जिलों से सबधित प्राक्कलित प्राप्तियों और व्यय का वार्षिक वित्तीय विवरण में पृथक् रूप से दिखाया जाना ।

14. (1) राज्यपाल, राज्य में स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों के प्रशासन के संबंध में अपने द्वारा विनिर्दिष्ट किसी विषय की, जिसके अंतर्गत इस अनुसूची के पैरा 1 के उपपैरा (3) के खंड (ग), खंड (घ), खंड (ङ) और खंड (च) में विनिर्दिष्ट विषय हैं, जांच करने और उस पर प्रतिवेदन देने के लिए किसी भी समय आयोग नियुक्त कर सकेगा, या राज्य में स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों के साधारणतया प्रशासन की और विशिष्टतया —

स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों के प्रशासन की जांच करने और उस पर प्रतिवेदन देने के लिए आयोग की नियुक्ति ।

(क) ऐसे जिलों और प्रदेशों में शिक्षा और चिकित्सा की सुविधाओं की और संचार की व्यवस्था की,

(ख) ऐसे जिलों और प्रदेशों के संबंध में किसी नए या विशेष विधान की आवश्यकता की, और

(ग) जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों द्वारा बनाई गई विधियों, नियमों और विनियमों के प्रशासन की,

समय-समय पर जांच करने और उस पर प्रतिवेदन देने के लिए आयोग नियुक्त कर सकेगा और ऐसे आयोग द्वारा अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया परिनिश्चित कर सकेगा ।

(2) संबंधित मंत्री, प्रत्येक ऐसे आयोग के प्रतिवेदन को, राज्यपाल की उससे संबंधित सिफारिशों के साथ, उस पर [34]*राज्य की सरकार* द्वारा की जाने के लिए प्रस्तावित कार्रवाई के संबंध में स्पष्टीकारक ज्ञापन सहित, राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखेगा ।

(3) राज्यपाल राज्य की सरकार के कार्य का अपने मंत्रियों में आबंटन करते समय अपने मंत्रियों में से एक मंत्री को राज्य के स्वशासी जिलों और स्वशासी प्रदेशों के कल्याण का विशेषतया भारसाधक बना सकेगा ।

[35]15. (1) यदि राज्यपाल का किसी समय यह समाधान हो जाता है कि जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् के किसी कार्य या संकल्प से भारत की सुरक्षा का संकटापन्न होना संभाव्य है [36]*या लोक व्यवस्था पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ना संभाव्य है* तो वह ऐसे कार्य या संकल्प को निष्प्रभाव या निलंबित कर सकेगा और ऐसी कार्रवाई (जिसके अंतर्गत परिषद् का निलंबन और परिषद् में निहित या उसके द्वारा प्रयोक्तव्य सभी या

जिला परिषदों और प्रादेशिक परिषदों के कार्यों और सकल्पों का निष्प्रभाव या निलबित किया जाना ।

33. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "असम" शब्द का लोप किया गया ।

34 पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "असम सरकार" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

35 संविधान छठी अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 67) की धारा 2 द्वारा पैरा 15 त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों को लागू करने में निम्नलिखित रूप से संशोधित किया गया है :

(क) आरंभिक भाग में, "राज्य के विधान मंडल द्वारा" शब्दों के स्थान पर "राज्यपाल द्वारा" शब्द रखे जाएंगे;

(ख) परंतुक का लोप किया जाएगा ।

36. आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) अंतःस्थापित ।

किन्हीं शक्तियों को अपने हाथ में ले लेना है) कर सकेगा जो वह ऐसे कार्य को किए जाने या उसके चालू रखे जाने का अथवा ऐसे संकल्प को प्रभावी किए जाने का निवारण करने के लिए आवश्यक समझे ।

(2) राज्यपाल द्वारा इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन किया गया आदेश, उसके लिए जो कारण हैं उनके सहित, राज्य के विधान मंडल के समक्ष यथासंभव शीघ्र रखा जाएगा और यदि वह आदेश, राज्य के विधान मंडल द्वारा प्रतिसंहृत नहीं कर दिया जाता है तो वह उस तारीख से, जिसको वह इस प्रकार किया गया था, बारह मास की अवधि तक प्रवृत्त बना रहेगा :

परंतु यदि और जितनी बार, ऐसे आदेश को प्रवृत्त बनाए रखने का अनुमोदन करने वाला संकल्प राज्य के विधान मंडल द्वारा पारित कर दिया जाता है तो और उतनी बार वह आदेश, यदि राज्यपाल द्वारा रद्द नहीं कर दिया जाता है तो, उस तारीख से, जिसको वह इस पैरा के अधीन अन्यथा प्रवर्तन में नहीं रहता, बारह मास की और अवधि तक प्रवृत्त बना रहेगा ।

जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् का विघटन ।

[37]16. [38][(1)] राज्यपाल, इस अनुसूची के पैरा 14 के अधीन नियुक्त आयोग की सिफारिश पर, लोक अधिसूचना द्वारा, किसी जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् का विघटन कर सकेगा, और —

(क) निदेश दे सकेगा कि परिषद् के पुनर्गठम के लिए नया साधारण निर्वाचन तुरंत कराया जाए; या

(ख) राज्य के विधान मंडल के पूर्व अनुमोदन से ऐसी परिषद् के प्राधिकार के अधीन आने वाले क्षेत्र का प्रशासन बारह मास से अनधिक अवधि के लिए अपने हाथ में ले सकेगा अथवा ऐसे क्षेत्र का प्रशासन ऐसे आयोग को जिसे उक्त पैरा के अधीन नियुक्त किया गया है या अन्य ऐसे किसी निकाय को जिसे वह उपयुक्त समझता है, उक्त अवधि के लिए दे सकेगा :

परंतु जब इस पैरा के खंड (क) के अधीन कोई आदेश किया गया है तब राज्यपाल प्रश्नगत क्षेत्र के प्रशासन के संबंध में, नया साधारण निर्वाचन होने पर परिषद् के पुनर्गठन के लंबित रहने तक, इस पैरा के खंड (ख) में निर्दिष्ट कार्रवाई कर सकेगा :

परंतु यह और कि, यथास्थिति, जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् को राज्य के विधान मंडल के समक्ष अपने विचारों को रखने का अवसर दिए बिना इस पैरा के खंड (ख) के अधीन कोई कार्रवाई नहीं की जाएगी ।

[39]*(2) यदि राज्यपाल का किसी समय यह समाधान हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें स्वशासी जिले या स्वशासी प्रदेश का प्रशासन इस अनुसूची के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता है तो वह, यथास्थिति, जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् में निहित या उसके द्वारा प्रयोक्तव्य सभी या कोई कृत्य या शक्तियां, लोक अधिसूचना द्वारा, छह मास से अनधिक अवधि के लिए अपने हाथ में ले सकेगा और यह घोषणा कर सकेगा कि ऐसे कृत्य या शक्तिया उक्त अवधि के दौरान ऐसे व्यक्ति या प्राधिकारी द्वारा प्रयोक्तव्य होगी जिसे वह इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे :*

37. संविधान छठी अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 67) की धारा 2 द्वारा पैरा 16 त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों को लागू करने में निम्नलिखित रूप से संशोधित किया गया है :

'(क) उपपैरा (1) के खंड (ख) में आने वाले "राज्य के विधान मंडल के पूर्व अनुमोदन से" शब्द और दूसरे परंतुक का लोप किया जाएगा;

(ख) उपपैरा (3) के स्थान पर निम्नलिखित उपपैरा रखा जाएगा, अर्थात् :

"(3) इस पैरा के उपपैरा (1) या उपपैरा (2) के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उसके लिए जो कारण हैं उनके सहित, राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखा जाएगा ।" ' ।

38. आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) पैरा 16 को उपपैरा (1) के रूप में पुनर्संख्यांकित किया गया ।

39. आसाम पुनर्गठन (मेघालय) अधिनियम, 1969 (1969 का 55) की धारा 74 और चौथी अनुसूची द्वारा (2-4-1970 से) अंतःस्थापित ।

परंतु राज्यपाल आरंभिक आदेश का प्रवर्तन, अतिरिक्त आदेश या आदेशों द्वारा, एक बार में छह मास से अनधिक अवधि के लिए बढ़ा सकेगा ।

(3) इस पैरा के उपपैरा (2) के अधीन किया गया प्रत्येक आदेश, उसके लिए जो कारण हैं उनके सहित, राज्य के विधान मंडल के समक्ष रखा जाएगा और वह आदेश उस तारीख से जिसको राज्य विधान मंडल उस आदेश के किए जाने के पश्चात् प्रथम बार बैठता है, तीस दिन की समाप्ति पर प्रवर्तन में नहीं रहेगा यदि उस अवधि की समाप्ति से पहले राज्य विधान मंडल द्वारा उसका अनुमोदन नहीं कर दिया जाता है ।

स्वशासी जिलों में निर्वाचन क्षेत्रों के बनाने में ऐसे जिलों से क्षेत्रों का अपवर्जन ।

17. राज्यपाल, [40]*असम या मेघालय* [41]*या त्रिपुरा* [42]*या मिजोरम की विधान सभा के* निर्वाचनों के प्रयोजनों के लिए, आदेश द्वारा, यह घोषणा कर सकेगा कि, [43]*यथास्थिति, असम या मेघालय* [41]*या त्रिपुरा* [42]*या मिजोरम राज्य में* किसी स्वशासी जिले के भीतर का कोई क्षेत्र ऐसे किसी जिले के लिए विधान सभा में आरक्षित स्थान या स्थानों को भरने के लिए किसी निर्वाचन-क्षेत्र का भाग नहीं होगा, किंतु विधान सभा में इस प्रकार आरक्षित न किए गए ऐसे स्थान या स्थानों को भरने के लिए आदेश में विनिर्दिष्ट निर्वाचन-क्षेत्र का भाग होगा ।

[44]* * *

संक्रमणकालीन उपबंध ।

19. (1) राज्यपाल, इस संविधान के प्रारंभ के पश्चात् यथासंभव शीघ्र, इस अनुसूची के अधीन राज्य में प्रत्येक स्वशासी जिले के लिए जिला परिषद् के गठन के लिए कार्यवाही करेगा और जब तक किसी स्वशासी जिले के लिए जिला परिषद् इस प्रकार गठित नहीं की जाती है तब तक ऐसे जिले का प्रशासन राज्यपाल में निहित होगा और ऐसे जिले के भीतर के क्षेत्रों के प्रशासन को इस अनुसूची के पूर्वगामी उपबंधों के स्थान पर निम्नलिखित उपबंध लागू होंगे, अर्थात् :

(क) संसद् का या उस राज्य के विधान मंडल का कोई अधिनियम ऐसे क्षेत्र को तब तक लागू नहीं होगा जब तक राज्यपाल, लोक अधिसूचना द्वारा, इस प्रकार निदेश नहीं दे देता है और राज्यपाल किसी अधिनियम के संबंध में ऐसा निदेश देते समय यह निदेश दे सकेगा कि वह अधिनियम ऐसे क्षेत्र या उसके किसी विनिर्दिष्ट भाग को लागू होने में ऐसे अपवादों या उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होगा जो वह ठीक समझता है;

(ख) राज्यपाल ऐसे किसी क्षेत्र की शांति और सुशासन के लिए विनियम बना सकेगा और इस प्रकार बनाए गए विनियम संसद् के या उस राज्य के विधान मंडल के किसी अधिनियम का या किसी विद्यमान विधि का, जो ऐसे क्षेत्र को तत्समय लागू है, निरसन या संशोधन कर सकेंगे ।

(2) राज्यपाल द्वारा इस पैरा के उपपैरा (1) के खंड (क) के अधीन दिया गया कोई निदेश इस प्रकार दिया जा सकेगा कि उसका भूतलक्षी प्रभाव हो ।

(3) इस पैरा के उपपैरा (1) के खंड (ख) के अधीन बनाए गए सभी विनियम राष्ट्रपति के

40. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) "असम की विधान सभा" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

41. संविधान (उनचासवां संशोधन) अधिनियम, 1984 की धारा 4 द्वारा (1-4-1985) से अंतःस्थापित ।

42. मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 (1986 का 34) की धारा 39 द्वारा (20-2-1987 से) अंतःस्थापित ।

43. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) अंतःस्थापित ।

44. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) पैरा 18 का लोप किया गया ।

समक्ष तुरंत प्रस्तुत किए जाएंगे और जब तक वह उन पर अनुमति नहीं दे देता है तब तक उनका कोई प्रभाव नहीं होगा ।

जनजाति क्षेत्र ।

[45]20. (1) **नीचे दी गई सारणी के भाग 1, भाग 2,** *भाग 2क*[46] **और भाग 3 में विनिर्दिष्ट क्षेत्र क्रमशः असम राज्य, मेघालय राज्य,** *त्रिपुरा राज्य*[46] **और मिजोरम** *राज्य*[47] **के जनजाति क्षेत्र होंगे ।**

(2) [48]*नीचे दी गई सारणी के भाग 1, भाग 2 या भाग 3 में* **किसी जिले के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 की धारा 2 के खंड (ख) के अधीन नियत किए गए दिन से ठीक पहले विद्यमान उस नाम के स्वशासी जिले में समाविष्ट राज्यक्षेत्रों के प्रति निर्देश है :**

परंतु इस अनुसूची के पैरा 3 के उपपैरा (1) के खंड (ङ) और खंड (च), पैरा 4, पैरा 5, पैरा 6, पैरा 8 के उपपैरा (2), उपपैरा (3) के खंड (क), खंड (ख) और खंड (घ) और उपपैरा (4) तथा पैरा 10 के उपपैरा (2) के खंड (घ) के प्रयोजनों के लिए, शिलांग नगरपालिका में समाविष्ट क्षेत्र के किसी भाग के बारे में यह नहीं समझा जाएगा कि वह *खासी पहाड़ी जिले*[49] **के भीतर है ।**

[46]*(3) नीचे दी गई सारणी के भाग 2क में "त्रिपुरा जनजाति क्षेत्र जिला" के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह त्रिपुरा जनजाति क्षेत्र स्वशासी जिला परिषद् अधिनियम, 1979 की पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट जनजाति क्षेत्रों में समाविष्ट राज्यक्षेत्र के प्रति निर्देश है ।*

सारणी

भाग 1

1. उत्तरी कछार पहाड़ी जिला ।
2. [50]कार्बी आंगलांग जिला ।

भाग 2

[49] *1. खासी पहाड़ी जिला ।*
2. जयंतिया पहाड़ी जिला ।
3. गारो पहाड़ी जिला ।

[46]भाग *2क*

त्रिपुरा जनजाति क्षेत्र जिला ।

---

45. पूर्वोत्तर क्षेत्र (पुनर्गठन) अधिनियम, 1971 (1971 का 81) की धारा 71 और आठवीं अनुसूची द्वारा (21-1-1972 से) पैरा 20 और 20क के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

46. संविधान (उनचासवां संशोधन) अधिनियम, 1984 की धारा 4 द्वारा (1-4-1985 से) अंतःस्थापित ।

47. मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 (1986 का 34) की धारा 39 द्वारा (20-2-1987 से) "संघ राज्यक्षेत्र" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

48. संविधान (उनचासवां संशोधन) अधिनियम, 1984 की धारा 4 द्वारा (1-4-1985 से) प्रतिस्थापित ।

49. मेघालय सरकार की अधिसूचना सं. डी.सी.ए. 31/72/11, तारीख 14 जून, 1973, मेघालय का राजपत्र, भाग Vक, तारीख 23-6-1973, पृष्ठ 200 द्वारा प्रतिस्थापित ।

50. असम सरकार द्वारा तारीख 14-10-1976 की अधिसूचना सं.टी.ए.डी./आर./115/74/47 द्वारा "मिकिर पहाड़ी जिला" के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

भाग 3

[51]* * *

[52]*1. चकमा जिला ।*

[53]*2. मारा जिला ।*

3. लई जिला ।

[54]**20क.** *(1) इस अनुसूची में किसी बात के होते हुए भी, विहित तारीख से ठीक पहले विद्यमान मिजो जिले की जिला परिषद् (जिसे इसमें इसके पश्चात् मिजो जिला परिषद् कहा गया है) विघटित हो जाएगी और विद्यमान नहीं रह जाएगी ।*

मिजो जिला परिषद् का विघटन ।

(2) मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासक, एक या अधिक आदेशों द्वारा, निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेगा, अर्थात् :

(क) मिजो जिला परिषद् की आस्तियों, अधिकारों और दायित्वों का (जिनके अंतर्गत उसके द्वारा की गई किसी संविदा के अधीन अधिकार और दायित्व हैं) पूर्णतः या भागतः संघ को या किसी अन्य प्राधिकारी को अंतरण;

(ख) किन्हीं ऐसी विधिक कार्यवाहियों में, जिनमें मिजो जिला परिषद् एक पक्षकार है, मिजो जिला परिषद् के स्थान पर संघ का या किसी अन्य प्राधिकारी का पक्षकार के रूप में रखा जाना अथवा संघ का या किसी अन्य प्राधिकारी का पक्षकार के रूप में जोड़ा जाना;

(ग) मिजो जिला परिषद् के किन्हीं कर्मचारियों का संघ को या किसी अन्य प्राधिकारी को अथवा उसके द्वारा अंतरण या पुनर्नियोजन, ऐसे अंतरण या पुनर्नियोजन के पश्चात् उन कर्मचारियों को लागू होने वाले सेवा के निबंधन और शर्तें;

(घ) मिजो जिला परिषद् द्वारा बनाई गई और उसके विघटन से ठीक पहले प्रवृत्त किन्हीं विधियों का, ऐसे अनुकूलनों और उपांतरणों के, चाहे वे निरसन के रूप में हों या संशोधन के रूप में, अधीन रहते हुए जो प्रशासक द्वारा इस निमित्त किए जाएं, तब तक प्रवृत्त बना रहना जब तक किसी सक्षम विधान मंडल द्वारा या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा ऐसी विधियों में परिवर्तन, निरसन या संशोधन नहीं कर दिया जाता है;

(ङ) ऐसे आनुषंगिक, पारिणामिक और अनुपूरक विषय जो प्रशासक आवश्यक समझे ।

स्पष्टीकरण — इस पैरा में और इस अनुसूची के पैरा 20ख में, "विहित तारीख" पद से वह तारीख अभिप्रेत है जिसको मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा का, संघ राज्यक्षेत्र शासन अधिनियम, 1963 के उपबंधों के अधीन और उनके अनुसार, सम्यक् रूप से गठन होता है ।

51. संघ राज्यक्षेत्र शासन (संशोधन) अधिनियम, 1971 (1971 का 83) की धारा 13 द्वारा (29-4-1972 से) "मिजो जिला" शब्दों का लोप किया गया ।

52. मिजोरम का राजपत्र, 1972, तारीख 5 मई, 1972, जिल्द 1, भाग II, पृष्ठ 17 में प्रकाशित, मिजोरम जिला परिषद् (प्रकीर्ण उपबंध) आदेश, 1972 द्वारा (29-4-1972 से) अंतःस्थापित ।

53. संविधान छठी अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 67) की धारा 2 द्वारा क्रम संख्यांक 2 और 3 और उनसे संबंधित प्रविष्टियों के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

54. संघ राज्यक्षेत्र शासन (संशोधन) अधिनियम, 1971 (1971 का 83) की धारा 13 द्वारा (29-4-1972 से) पैरा 20क के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

[55]20ख. *(1) इस अनुसूची में किसी बात के होते हुए भी, —*

मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र में स्वशासी प्रदेशों का स्वशासी जिले होना और उसके पारिणामिक संक्रमणकालीन उपबंध ।

(क) मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र में विहित तारीख से ठीक पहले विद्यमान प्रत्येक स्वशासी प्रदेश उस तारीख को और से उस संघ राज्यक्षेत्र का स्वशासी जिला (जिसे इसमें इसके पश्चात्, तत्स्थानी नया जिला कहा गया है) हो जाएगा और उसका प्रशासक, एक या अधिक आदेशों द्वारा, निदेश दे सकेगा कि इस अनुसूची के पैरा 20 में (जिसके अंतर्गत उस पैरा से संलग्न सारणी का भाग 3 है) ऐसे पारिणामिक संशोधन किए जाएंगे जो इस खंड के उपबंधों को प्रभावी करने के लिए आवश्यक है और तब उक्त पैरा और उक्त भाग 3 के बारे में यह समझा जाएगा कि उनका तदनुसार संशोधन कर दिया गया है;

(ख) मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र में विहित तारीख से ठीक पहले विद्यमान स्वशासी प्रदेश की प्रत्येक प्रादेशिक परिषद् (जिसे इसमें इसके पश्चात् विद्यमान प्रादेशिक परिषद् कहा गया है) उस तारीख को और से और जब तक तत्स्थानी नए जिले के लिए परिषद् का सम्यक् रूप से गठन नहीं होता है तब तक, उस जिले की जिला परिषद् (जिसे इसमें इसके पश्चात तत्स्थानी नई जिला परिषद् कहा गया है) समझी जाएगी ।

(2) विद्यमान प्रादेशिक परिषद् का प्रत्येक निर्वाचित या नामनिर्देशित सदस्य तत्स्थानी नई जिला परिषद् के लिए, यथास्थिति, निर्वाचित या नामनिर्देशित समझा जाएगा और तब तक पद धारण करेगा जब तक इस अनुसूची के अधीन तत्स्थानी नए जिले के लिए जिला परिषद् का सम्यक् रूप से गठन नहीं होता है ।

(3) जब तक तत्स्थानी नई जिला परिषद् द्वारा इस अनुसूची के पैरा 2 के उपपैरा (7) और पैरा 4 के उपपैरा (4) के अधीन नियम नहीं बनाए जाते हैं तब तक विद्यमान प्रादेशिक परिषद् द्वारा उक्त उपबंधों के अधीन बनाए गए नियम, जो विहित तारीख से ठीक पहले प्रवृत्त हैं, तत्स्थानी नई जिला परिषद् के संबंध में ऐसे अनुकूलनों और उपांतरणों के अधीन रहते हुए प्रभावी होंगे जो मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक द्वारा उनमें किए जाएं ।

(4) मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र का प्रशासक, एक या अधिक आदेशों द्वारा, निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध कर सकेगा, अर्थात् :

(क) विद्यमान प्रादेशिक परिषद् की आस्तियों, अधिकारों और दायित्वों का (जिनके अंतर्गत उसके द्वारा की गई किसी संविदा के अधीन अधिकार और दायित्व हैं) पूर्णतः या भागतः तत्स्थानी नई जिला परिषद् को अंतरण;

(ख) किन्हीं ऐसी विधिक कार्यवाहियों में, जिनमें विद्यमान प्रादेशिक परिषद् एक पक्षकार है, विद्यमान प्रादेशिक परिषद् के स्थान पर तत्स्थानी नई जिला परिषद् का पक्षकार के रूप में रखा जाना,

(ग) विद्यमान प्रादेशिक परिषद् के किन्हीं कर्मचारियों का तत्स्थानी नई जिला परिषद् को अथवा उसके द्वारा अंतरण या पुनर्नियोजन; ऐसे अंतरण या पुनर्नियोजन के पश्चात् उन कर्मचारियों को लागू होने वाले सेवा के निबंधन और शर्तें;

---

55. संविधान छठी अनुसूची (संशोधन) अधिनियम, 1988 (1988 का 67) की धारा 2 द्वारा त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों को लागू करने में, धारा 20ख के पश्चात् निम्नलिखित धारा अंतःस्थापित की गई है, अर्थात् :—

"20खख. *राज्यपाल द्वारा अपने कृत्यों के निर्वहन में वैवेकिक शक्तियों का प्रयोग* — राज्यपाल, इस अनुसूची के पैरा 1 के उपपैरा (2) और उपपैरा (3), पैरा 2 के उपपैरा (1) और उपपैरा (7), पैरा 3 का उपपैरा (3), पैरा 4 का उपपैरा (4), पैरा 5, पैरा 6 का उपपैरा (1), पैरा 7 का उपपैरा (2), पैरा 9 का उपपैरा (3), पैरा 14 का उपपैरा (1), पैरा 15 का उपपैरा (1) और पैरा 16 के उपपैरा (1) और उपपैरा (2) के अधीन अपने कृत्यों के निर्वहन में, मंत्रिपरिषद् से, और यदि वह आवश्यक समझे तो संबंधित जिला परिषद् या प्रादेशिक परिषद् से, परामर्श करने के पश्चात्, ऐसी कार्यवाही करेगा जो वह स्वविवेकानुसार आवश्यक समझे ।" ।

(घ) विद्यमान प्रादेशिक परिषद् द्वारा बनाई गई और विहित तारीख से ठीक पहले प्रवृत्त किन्हीं विधियों का, ऐसे अनुकूलनों और उपांतरणों के, चाहे वे निरसन के रूप में हों या संशोधन के रूप में, अधीन रहते हुए जो प्रशासक द्वारा इस निमित्त किए जाएं, तब तक प्रवृत्त बना रहना जब तक सक्षम विधान मंडल द्वारा या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा ऐसी विधियों में परिवर्तन, निरसन या संशोधन नहीं कर दिया जाता है;

(ङ) ऐसे आनुषंगिक, पारिणामिक और अनुपूरक विषय जो प्रशासक आवश्यक समझे ।

निर्वचन ।

20ग. *इस निमित्त बनाए गए किसी उपबंध के अधीन रहते हुए, इस अनुसूची के उपबंध मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र को उसके लागू होने में इस प्रकार प्रभावी होंगे —*

(1) मानो राज्य के राज्यपाल और राज्य की सरकार के प्रति निर्देश अनुच्छेद 239 के अधीन नियुक्त संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक के प्रति निर्देश हों; ("राज्य की सरकार" पद के सिवाय) राज्य के प्रति निर्देश मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र के प्रति निर्देश हों और राज्य विधान मंडल के प्रति निर्देश मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा के प्रति निर्देश हों;

(2) मानो —

(क) पैरा 4 के उपपैरा (5) में संबंधित राज्य की सरकार से परामर्श करने के उपबंध का लोप कर दिया गया हो;

(ख) पैरा 6 के उपपैरा (2) में, "जिस पर राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार है" शब्दों के स्थान पर "जिसके संबंध में मिजोरम संघ राज्यक्षेत्र की विधान सभा को विधियां बनाने की शक्ति है" शब्द रख दिए गए हों;

(ग) पैरा 13 में, "अनुच्छेद 202 के अधीन" शब्दों और अंकों का लोप कर दिया गया हो ।

अनुसूची का संशोधन ।

21. (1) संसद्, समय-समय पर विधि द्वारा, इस अनुसूची के उपबंधों में से किसी का, परिवर्धन, परिवर्तन या निरसन के रूप में संशोधन कर सकेगी और जब अनुसूची का इस प्रकार संशोधन किया जाता है तब इस संविधान में इस अनुसूची के प्रति किसी निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह इस प्रकार संशोधित ऐसी अनुसूची के प्रति निर्देश है ।

(2) ऐसी कोई विधि जो इस पैरा के उपपैरा (1) में उल्लिखित है, इस संविधान के अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों के लिए इस संविधान का संशोधन नहीं समझी जाएगी ।

सातवीं अनुसूची

[अनुच्छेद 246]

प्रविष्टियों के निर्वचन के लिए साधारण नियम — इन तीनों सूचियों में जो प्रविष्टियां हैं वे विधान बनाने की शक्ति नहीं हैं बल्कि विधान के क्षेत्र हैं ।[1-2] विधान बनाने की शक्ति अनुच्छेद 246 और संविधान के अन्य अनुच्छेदों द्वारा दी गई है ।[2] जैसे संपत्ति से वंचित करने के लिए प्राधिकार देने वाली विधि बनाने की शक्ति अनुच्छेद 31 द्वारा दी गई है । यह दलील नहीं दी जा सकती कि संपत्ति के वंचित करने के संबंध में इन सूचियों में कोई प्रविष्टि नहीं है इसलिए देश का कोई भी विधान मंडल ऐसी विधि बनाने के लिए सक्षम नहीं है । उदाहरण के लिए ऐसी विधि सूची 1 की प्रविष्टि 1 या सूची 2 की या सूची 3 की प्रविष्टि 1 के अधीन बनाई जा सकती है ।[3] सूचियों की जो प्रविष्टिया हैं वे केवल विधायी शीर्ष हैं । वे शक्ति प्रदान नहीं करती । उनका उद्देश्य संघ और राज्य के विधान मंडलों की विधायी क्षमता के क्षेत्र की सीमाओं को परिनिश्चित और सीमांकित करना है ।[4] अनुच्छेदों द्वारा जो विधायी शक्ति दी गई है उस पर वे कोई विवक्षित निर्बन्धन नहीं लगाते और न ही वे यह विहित करते हैं कि किस विधायी शक्ति का प्रयोग किस विशिष्ट रीति में किया जाएगा ।[4]

इन प्रविष्टियों की भाषा का इतना व्यापक अर्थ किया जाना चाहिए जितना संभव हो[5-6] क्योंकि वे सरकार के तंत्र की स्थापना करती हैं ।[7] प्रत्येक साधारण शब्द का विस्तार उन सभी अनुषंगी या समनुषंगी विषयों पर होगा जो युक्तियुक्त रूप से उसमें आ सकते हैं ।[7-10] उदाहरण के लिए किसी प्रविष्टि में निर्दिष्ट विषय से संबंधित किसी त्रुटिपूर्ण विधि[11] या कार्यपालिका आदेश का विधिमान्यकरण[8] या उत्पाद शुल्क के प्रभावी रूप से वसूल किए जाने के प्रयोजन के लिए बंधित भांडागार को अनुज्ञप्ति देना और उसका नियंत्रण करना[10] या कराधान विधि के प्रयोग में कर वचन को रोकना[12] या अधिरोपित कर का वापस किया जाना ।[13-14]

प्रगामी रीति में प्रविष्टि का निर्वचन करते समय उस प्रविष्टि की उसी सूची की

---

1. *कलकत्ता गैस कंपनी* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए 1962 एस सी 1044 (*1049*) ।
2. *हरकचंद* बनाम *भारत संघ*, (1970) 1 एस.सी.आर 479 (*489*); *भारत संघ* बनाम *ढिल्लों*, (1971) 2 एस.सी.सी. 779 (*792*) ।
3. *शामदासानी* बनाम *सेंट्रल बैंक आफ इंडिया*, (1952) एस सी आर. 391 ।
4. *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए 1962 एस सी 252 ।
5. *दुनीचंद* बनाम *भुवालका ब्रदर्स*, (1955) 1 एस सी आर. 1071 ।
6. *श्रीराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए 1959 एस सी 459 (*463*); *बनारसी* बनाम *धन-कर अधिकारी*, ए 1965 एस.सी. 1387 (*1389*) ।
7. *हंस मुल्लर* बनाम *अधीक्षक*, (1955) 1 एस.सी.आर. 1285 (*1289*) ।
8. *नवीन चंद्र* बनाम *मफतलाल*, ए 1955 एस.सी. 58 (*62*) ।
9. *आय-कर आयुक्त* बनाम *विनय*, ए 1957 एस.सी. 768 (*772*) ।
10. *चतुरभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस सी. 424 (*428*); *राजस्थान राज्य* बनाम *चावला*, ए. 1949 एस.सी. 544 (*546*); *रामकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1667 (*1673*) ।
11. *जादव* बनाम *नगरपालिका*, ए. 1961 एस.सी. 1486 ।
12. *बलदेव* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1961 एस.सी. 736 (*742*) ।
13. *उड़ीसा राज्य* बनाम *ओरियंट पेपर मिल्स*, ए. 1961 एस.सी. 1438 ।
14. *बर्मा कन्सट्रक्शन कंपनी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1320 (*1322*) ।

किसी अन्य प्रविष्टि से तुलना करके उस पर कोई मर्यादा लगाना युक्तियुक्त नहीं होगा ।[15]

किसी सूची में दी गई अनेक प्रविष्टियों द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए यदि विधान मंडल एक ही *अधिनियम* बनाता है तो यह करना उचित होगा ।[16] किंतु, —

(क) न्यायालय किसी विधिक या सांविधानिक सिद्धांत के पक्ष में अधिनियमिति की भाषा की खींचतान करने या उसे उलटने के लिए स्वतंत्र नहीं है, चाहे इसका उद्देश्य अधिकथित भूल को सुधारना हो ।[17]

(ख) अनुषंगी शक्ति के सिद्धांत से विधान मंडल को यह हक नहीं मिलता कि वह यह उपबंध करे कि कोई रकम जो सुसंगत विधायी प्रविष्टि के अधीन कर के रूप में शोध्य नहीं है, सरकार को संदत्त की जाएगी ।[18]

(ग) अर्थान्वयन का अत्यंत उदार नियम भी विधान मंडल को ऐसे विषय में विधि बनाने की शक्ति नहीं देता जिसका किसी प्रविष्टि की विषय-वस्तु से कोई तार्किक संबंध नहीं है ।[19] जैसे आय के रूप में किसी ऐसी बात पर कर लगाना जिसे किसी भी प्रकार से आय नहीं समझा जा सकता ।[19]

सूचियों में किसी भी प्रविष्टि द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग भविष्यलक्षी और भूतलक्षी दोनों प्रकार से किया जा सकता है (जब तक कि भूतलक्षी प्रभाव को वर्जित करने वाला कोई सांविधानिक उपबंध न हो) ।[20-21] विधेयक के उद्देश्यों और कारणों के कथन में गलत प्रविष्टि का निर्देश होने से न्यायालय उसकी विधिमान्यता की पुष्टि करने से वंचित नहीं हो जाते यदि न्यायालय यह पाता है कि वह ऐसे विषय से संबंधित है जिस पर वह विधान मंडल विधान बनाने के लिए सक्षम है और वह विषय किसी अन्य प्रविष्टि में आता है ।[22] सक्षम विधान मंडल किसी विषय से संबंधित अपनी विधायी शक्ति का प्रयोग करके पहले से पारित विधि को विधिमान्य कर सकता है यदि ऐसी विधि को न्यायालय ने किसी दोष के कारण अविधिमान्य घोषित कर दिया था ।[20] इसी प्रकार यदि अक्षम विधान मंडल ने कोई विधि बनाई है तो उसे भी विधिमान्य किया जा सकता है और भूतलक्षी प्रभाव भी दिया जा सकता है । इसमें शर्त यह होगी कि सांविधानिक उपबंधों के प्रयोजन के लिए ऐसा भूतलक्षी विधान युक्तियुक्त होना चाहिए जैसे अनुच्छेद 19 या 304ख ।[20-21, 23]

कराधान शक्ति से संबंधित प्रविष्टियों के निर्वचन के लिए साधारण सिद्धांत — यह अवधारित करने के लिए कि क्या कोई कर उस विधान मंडल की विधायी क्षमता के भीतर है या नहीं जिसने उसे अधिरोपित किया है, यह आवश्यक है कि उस कर की प्रकृति का अवलोकन किया जाए । जैसे, वह आय पर कर है या संपत्ति, कारबार आदि पर कर है । ऐसा करके वह प्रविष्टि खोजी जाती है जिसके अधीन विधायी शक्ति का प्रयोग किया गया है —

(क) इसके लिए प्राथमिक मार्गदर्शन प्रभारी धारा से प्राप्त होता है । कर की विषय-वस्तु की पहचान प्रभारी धारा में ही मिलती है ।[24] अर्थात् उस धारा में जिसमें कर का संदाय करने के दायित्व का सृजन होता है । निर्धारण का ढंग या निर्धारण का तंत्र इससे भिन्न है,

15. *बनारसी* बनाम *धन-कर अधिकारी*, ए. 1965 एस.सी. 1387 (*1390*) ।
16. *हरेकृष्ण* बनाम *भारत संघ*, ए. 1969 एस.सी. 619 (*622*); *भारत संघ* बनाम *ढिल्लों*, (1971) 2 एस.सी.सी. *779* (*808*) ।
17. सी.पी. एंड बरार मोटर स्पिरिट टैक्सेशन ऐक्ट, (1939) एफ.सी.आर 18 (*37*) के मामले में ।
18. *अब्दुल कादिर* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए. 1964 एस.सी. 922 ।
19. *नवनीत लाल* बनाम *आय-कर अपील सहायक आयुक्त*, ए. 1965 एस.सी. 1375 ।
20. *रामकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 1667 (*1673*) ।
21. *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, (1958) एस.सी.आर. 1355; *जे.के. जूट मिल्स* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 1534; *छोटाभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1006 ।
22. *के.एस.ई. बोर्ड* बनाम *इंडियन एल्युमीनियम कंपनी*, ए. 1976 एस.सी. 1031 (पैरा 13) ।
23. *सुंदरमय्यर* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, (1958) एस.सी.आर. 1422 ।
24. *रल्ला राम* बनाम *पूर्वी पंजाब प्रांत*, ए. 1949 एफ.सी. 81 ।

(ख) उद्ग्रहण की वस्तु से कर की प्रकृति का अवधारण होता है उसके प्ररूप से नहीं। विधान मंडल जो नाम देता है वह निश्चायक नहीं होता ।[25]

(ग) जब एक बार यह अभिनिर्धारित हो जाता है कि विधान मंडल को किसी विषय पर विधान बनाने की शक्ति है तो उसकी क्षमता पर, शक्ति के प्रयोग करने की रीति के बारे में, कोई मर्यादा नहीं लगाई जा सकती । जैसे कराधान अधिनियम का संशोधन वार्षिक वित्त अधिनियम में उपबंध रखकर किया जा सकता है ।[25]

(घ) कर की मूल प्रकृति का अवधारण कर की रकम के निर्धारण के लिए विहित तरीके या परिकलन की रीति से नहीं किया जा सकता ।[24] कराधान की शक्ति से संबंधित प्रविष्टियों के बारे में यह कहना उचित नहीं है कि दो विभिन्न कार्य या परिस्थितियों से उत्पन्न होने वाले दो स्वतंत्र कर लगाने की संविधान में अनुमति नहीं है ।[26] जैसे एक ही वस्तु पर केन्द्रीय उत्पाद-शुल्क लग सकता है और राज्य की चुंगी भी[27] या राज्य का कर लग सकता है और साथ ही नगरपालिका का भी ।[28]

कर और फीस में अंतर — कर और फीस के बीच अंतर हमारे संविधान में विशेष महत्व का है क्योंकि यह प्रश्न शक्ति से जुड़ा हुआ है । विभिन्न लाग लगाने की शक्ति विधायी सूची की विभिन्न प्रविष्टियों द्वारा विधारित की गई हैं जिससे किसी विशिष्ट विधान मंडल द्वारा लगाए गए कर की विधिमान्यता का अवधारण उन प्रविष्टियों के प्रति निदेश से किया जाना चाहिए । करों का विभाजन सूची 1 और सूची 2 में विनिर्दिष्ट रूप से किया गया है और उन सूचियों में गिनाए गए करों से बचे हुए कर का उद्ग्रहण करने की अवशिष्ट शक्ति संसद् को दी गई है । यह सूची 1 की प्रविष्टि 97 है । फीस का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है । प्रत्येक सूची के अंत में एक साधारण प्रविष्टि है जिससे उस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में फीस लगाने की शक्ति दी गई है । इसका परिणाम यह है कि विधान मंडल की फीस या कर लगाने की शक्ति का अवधारण करने के लिए अलग-अलग परीक्षण करने होंगे ।

(क) यदि कोई सेवा करने में जो व्यय होता है उससे बहुत अधिक मात्रा में उद्ग्रहण किया जाता है तो ऐसा उद्ग्रहण फीस नहीं होगा ।[29-30] जो सेवा प्रदान की जाती है उसके और उद्ग्रहण के बीच संबंध होना चाहिए । यह आवश्यक नहीं है कि वह गणित की रीति से बिल्कुल बराबर हो ।[30-32] यह भार राज्य पर होगा कि वह न्यायालय के समक्ष इस संबंध को दिखाने के लिए सामग्री प्रस्तुत करे ।[31]

(ख) साधारण राजस्व मे वृद्धि करने के लिए फीस का उद्ग्रहण नहीं किया जा सकता । किसी एक प्रयोजन के लिए लगाई गई फीस का उपयोग किसी दूसरे प्रयोजन के लिए नहीं किया जा सकता । उसका उपयोग उसी विधि के द्वारा स्वीकृत प्रयोजन के लिए ही किया जा सकता है ।[33]

---

25 *एम.डी सेंट्रल कोआपरेटिव बैंक* बनाम *तृतीय आय-कर अधिकारी*, ए. 1975 एस.सी 2016 (पैरा 12-14); *हरिकृष्ण* बनाम *भारत संघ*, ए 1966 एस सी 619 ।

26 *किशोरी* बनाम *किंग*, (1949) एफ.सी आर. 650 ।

27 *रामकृष्ण* बनाम *नगरपालिका*, (1950) एस सी आर. 15 (25) ।

28 *नंदलाल* बनाम *विक्रय-कर आयुक्त*, (1961) एस.सी. [याचिका 75/58] ।

29. *आयुक्त, एच.आर.ई* बनाम *लक्ष्मीन्द्र*, ए. 1954 एस.सी. 282; *रतिलाल* बनाम *मुंबई राज्य*, ए. 1954 एस.सी 388; *हिंगिर-रामपुर कंपनी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए 1954 एस.सी 388; *दिल्ली क्लाथ मिल्स* बनाम *मुल्य आयुक्त*, (1970) 2 एस.सी.सी. 172 ।

30. *नगरपालिक परिषद* बनाम *नम्बियार*, (1969) I एस.सी.डब्ल्यू.आर. 371 ।

31. *इंडियन माइका इडस्ट्रीज़* बनाम *बिहार राज्य*, (1971) 2 एस.सी.सी 236 ।

32 *दिल्ली क्लाथ मिल्स* बनाम *मुख्य आयुक्त*, ए. 1971 एस.सी. 344 ।

33. *मद्रास सरकार* बनाम *जेनिथ लैंप्स*, ए. 1973 एस.सी. 724 ।

(ग) जब कोई उद्ग्रहण किसी विशिष्ट सेवा से जुड़ा हुआ नहीं है तो वह फीस नहीं होगा । ऐसे मामलों में किसी नगरपालिका या अन्य स्थानीय निकाय की समस्त गतिविधियों के प्रति निर्देश करते हुए उसे उचित नहीं ठहराया जा सकता, किंतु, —

(i) यदि संगृहीत रकम को किसी अलग निधि में जमा नहीं किया जा सकता है[34-35] किंतु संचित निधि में जमा किया जाता है तो केवल इतने से यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि वह फीस नहीं है । यदि फीस की और शर्तें पूरी हो जाती है तो उसे फीस माना जाएगा ।

(ii) इसी प्रकार यदि फीस एक सी नहीं है किंतु सेवा को पाने वालों की संदाय करने वाली क्षमता को भी ध्यान में रखा गया है तो इसका यह अर्थ नहीं होगा कि वह फीस नहीं है ।[34]

सार और तत्व का सिद्धांत — इस सिद्धांत से यह अभिप्रेत है कि यदि कोई अधिनियम सारवान रूप से किसी विधान मंडल को संविधान द्वारा अभिव्यक्त रूप से प्रदत्त शक्ति के भीतर है तो उस अधिनियम को केवल इस कारण अविधिमान्य नहीं ठहराया जा सकता कि वह अनुषंगी रूप से किसी अन्य विधान मंडल को सौंपे गए विषय का अतिक्रमण करता है । दूसरे शब्दों में, जब किसी विधि पर शक्तिबाह्य होने का आक्षेप किया जाता है तो यह देखना चाहिए कि उस विधान की सही प्रकृति क्या है । यदि ऐसी परीक्षा किए जाने पर यह पाया जाता है कि विधान सारवान रूप से उस विधान मंडल को सौंपे गए विषय पर है तो वह पूर्ण रूप से विधिमान्य होगा चाहे अनुषंगी रूप से ऐसे विषय पर उसकी व्याप्ति हो जो उसकी क्षमता के बाहर है ।[36-37]

किसी अधिनियमिति की सही प्रकृति जानने के लिए उस अधिनियमिति पर समग्र रूप से विचार किया जाना चाहिए । उसके उद्देश्य, उसके प्रविषय और उसके उपबंधों के प्रभाव को देखना चाहिए । ऐसे अधिनियम को हिस्सों में बांटकर देखने से इस उपबंध की सही दृष्टिकोण से परीक्षा नहीं हो सकेगी । अधिनियमों का संग्रह केवल कुछ भागों का समुच्चय नहीं है । उसे विभाजित करके यह देखना उचित नहीं होगा कि विधान के वे भाग किस शीर्ष के अधीन आते हैं । इस प्रकार परीक्षा करके उसके हिस्सों को शक्तिबाह्य घोषित नहीं किया जा सकता ।[36]

दूसरे विधान मंडल के क्षेत्र में अतिक्रमण का उदाहरण सार को देखकर ही किया जा सकता है । वैसे इस प्रश्न का अवधारण करने के लिए अतिक्रमण की मात्रा भी ऐसी बात नहीं जो बिल्कुल असंगत हो । यद्यपि अधिनियम की विधिमान्यता अधिकरण की मात्रा के आधार पर अवधारित नहीं की जाएगी किंतु मात्रा से यह पता चलेगा कि आक्षेपित अधिनियम का सार और तत्व क्या है ।[38] जब एक बार किसी विधान का सार और तत्व तय हो जाता है और यह बताया जाता है कि वह विधान मंडल की शक्ति के भीतर है तो अन्य क्षेत्र में उसकी व्याप्ति होने से वह विधि अविधिमान्य नहीं होगी ।[39]

ऐसे सभी मामलों में विधान मंडलों ने आक्षेपित अधिनियम को जो नाम दिया है वह नाम उसकी क्षमता के प्रश्न का निश्चायक नहीं हो सकता । विधान का सार और तत्व ही इस विषय का निश्चायक है ।[39] और सार और तत्व का अवधारण अधिनियम के उपबंधों को देखकर ही किया जा सकता है ।[40]

34 *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *हिंदुस्तान मशीन टूल्स*, ए 1975 एस.सी. 2037 (पैरा 19-21) ।

35. *मद्रास राज्य* बनाम *सज्जन लाल*, ए 1975 एस.सी. 706 (725) ।

36. *मनमोहन* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1961 एस.सी 189, *कृष्ण* बनाम *मद्रास राज्य*, ए 1947 एस.सी. 297 ।

37. *के.एस.ई. बोर्ड* बनाम *इंडियन एल्यूमीनियम कंपनी*, ए. 1976 एस.सी. 1031 (पैरा 5) ।

38. *प्रफुल्ल* बनाम *बैंक आफ कामर्स*, ए. 1946 पी.सी 60 ।

39 *चतुरभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1960 एस.सी. 424 ।

40 *अमर सिंह* बनाम *राजस्थान राज्य*, (1955) 2 एस.सी.आर 303 ।

सूची 1 — संघ सूची

1. **भारत की और उसके प्रत्येक भाग की रक्षा, जिसके अंतर्गत रक्षा के लिए तैयारी और ऐसे सभी कार्य हैं, जो युद्ध के समय युद्ध के संचालन और उसकी समाप्ति के पश्चात् प्रभावी सैन्यवियोजन में सहायक हों ।**

2. **नौसेना, सेना और वायुसेना; संघ के अन्य सशस्त्र बल ।**

[41]2क. *संघ के किसी सशस्त्र बल या संघ के नियंत्रण के अधीन किसी अन्य बल का या उसकी किसी टुकड़ी या यूनिट का किसी राज्य में सिविल शक्ति की सहायता में अभिनियोजन; ऐसे अभिनियोजन के समय ऐसे बलों के सदस्यों की शक्तियां, अधिकारिता, विशेषाधिकार और दायित्व ।*

प्रविष्टि 2क का प्रविषय — देखिए अनुच्छेद 257क ।

3. **छावनी क्षेत्रों का परिसीमन, ऐसे क्षेत्रों में स्थानीय स्वशासन, ऐसे क्षेत्रों के भीतर छावनी प्राधिकारियों का गठन और उनकी शक्तियां तथा ऐसे क्षेत्रों में गृह वास-सुविधा का विनियमन (जिसके अंतर्गत भाटक का नियंत्रण है) ।**

छावनी — इस प्रविष्टि से संसद् को छावनी क्षेत्र में गृह वास-सुविधा का विनिर्माण करने की अनन्य शक्ति दी गई है । इसमें कोई विशेषक शब्द नहीं है इसलिए इस शक्ति के अंतर्गत सभी पहलू आ जाएंगे । जैसे, पट्टों का दिया जाना, पट्टेधारियों का बेदखल किया जाना, यह सुनिश्चित करना कि वास सुविधा उचित किराए पर उपलब्ध है आदि । छावनी क्षेत्र के बाहर के क्षेत्रों के लिए विधान बनाने की शक्ति राज्य विधान मंडलों में निहित हो सकती है ।[42] छावनी क्षेत्रों की बाबत यह शक्ति सैनिक प्रयोजनों के लिए वास सुविधा तक ही सीमित नहीं है । इसका विस्तार छावनी क्षेत्र की सभी गृह वास सुविधाओं पर है चाहे वह सैन्य या सिविल लोगों के स्वामित्व में हो या उनके अधिभोग में । संसद् की पूर्वगामी शक्ति के अंतर्गत यह निदेश देने या नियंत्रण करने की शक्ति भी है कि कोन निर्माण करेगा, किन शर्तों के अधीन निर्माण में परिवर्तन किया जा सकेगा और कौन उस वास सुविधा का और कितने समय तक उपभोग करेगा ।[42] छावनी क्षेत्रों में मकान मालिक और किराएदार के बीच गृह वास सुविधा की बाबत संबंध भी इसी प्रविष्टि के अंतर्गत आएगा । छावनी क्षेत्र के बाहर यह शक्ति सूची 2 की प्रविष्टि 18 में और सूची 3 की प्रविष्टि 6 तथा 7 में है ।[42]

4. **नौसेना, सेना और वायुसेना संकर्म ।**

5. **आयुध, अग्नयायुध, गोलाबारूद और विस्फोटक ।**

6. **परमाणु ऊर्जा और उसके उत्पादन के लिए आवश्यक खनिज संपत्ति स्रोत ।**

7. **संसद् द्वारा विधि द्वारा रक्षा के प्रयोजन के लिए या युद्ध के संचालन के लिए आवश्यक घोषित किए गए उद्योग ।**

8. **केंद्रीय आसूचना और अन्वेषण ब्यूरो ।**

41. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) अंतःस्थापित ।
42. *इंदुभूषण बनाम राम सुंदरी*, (1969) 2 एस.सी.सी. 289 (*292, 294, 296, 298*) ।

9. रक्षा, विदेश कार्य या भारत की सुरक्षा संबंधी कारणों से निवारक निरोध; इस प्रकार निरोध में रखे गए व्यक्ति ।

10. विदेश कार्य, सभी विषय जिनके द्वारा संघ का किसी विदेश से संबंध होता है ।

11. राजनयिक, कौंसलीय और व्यापारिक प्रतिनिधित्व ।

12. संयुक्त राष्ट्र संघ ।

13. अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों, संगमों और अन्य निकायों में भाग लेना और उनमें किए गए विनिश्चयों का कार्यान्वयन ।

14. विदेशों से संधि और करार करना और विदेशों से की गई संधियों, करारों और अभिसमयों का कार्यान्वयन ।

संधि करने के लिए विधान कहां तक आवश्यक है — भारत में संधि को प्रभावी करने के लिए निम्नलिखित मामलों में विधान की अपेक्षा होगी —

(क) जहां उसमें किसी विदेशी शक्ति को धन देने की व्यवस्था है जिसे भारत की संचित निधि से लिया जाएगा ।[43]

(ख) संधि से भारत के नागरिकों के ऐसे अधिकारों पर प्रभाव पड़ता है जिन पर विचार करने का अधिकार न्यायालय को है ।[44]

(ग) जहां उसके द्वारा संपत्ति ली जाती है [अनुच्छेद 5(1)]; जीवन या स्वतंत्रता छीनी जाती है [अनुच्छेद 21] या कोई कर अधिरोपित किया जाता है [अनुच्छेद 265] वहां यह विधान द्वारा ही किया जा सकता है ।

इन आपवादिक मामलों को छोड़कर भारत में कार्यपालिका ऐसी संधियां कर सकती हैं जो राज्य पर आबद्धकर होंगी ।[44]

भारत के राज्यक्षेत्र का किसी विदेशी राज्य को अध्यर्पण करने के लिए संविधान का संशोधन करना आवश्यक होगा । यह अनुच्छेद 1 के कारण है ।[45] किंतु किसी विदेशी राज्य से सीमा विवाद को निपटाने के लिए करार करने के लिए न तो संविधान का संशोधन आवश्यक है और न विधान बनाना । कारण यह है कि सीमा विवाद को निपटाना राज्यक्षेत्र का अध्यर्पण नहीं है । अतएव कार्यपालिका यह कर सकती है और इस प्रकार जो निपटारा होगा उसे देश के न्यायालय मान्यता देंगे ।[44]

15. युद्ध और शांति ।

16. वैदेशिक अधिकारिता ।

17. नागरिकता, देशीयकरण और अन्यदेशीय ।

18. प्रत्यर्पण ।

19. भारत में प्रवेश और उसमें से उत्प्रवास और निष्कासन; पासपोर्ट और वीजा ।

20. भारत से बाहर के स्थानों की तीर्थयात्राएं ।

43 *मोतीलाल* बनाम *उत्तर प्रदेश सरकार*, ए. 1961 इला. 257 (एफ.बी.) ।

44 *मगनभाई* बनाम *भारत संघ*, ए 1969 एस.सी 783 (*807*) ।

45 *बेरूबारी यूनियन*, ए 1960 एस.सी. 845 (*859*) ।

21. **खुले समुद्र या आकाश में की गई दस्युता और अपराध; स्थल या खुले समुद्र या आकाश में राष्ट्रों की विधि के विरुद्ध किए गए अपराध ।**

22. **रेल ।**

23. **ऐसे राजमार्ग जिन्हें संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन राष्ट्रीय राजमार्ग घोषित किया गया है ।**

24. **यंत्र नोदित जलयानों के संबंध में ऐसे अंतर्देशीय जलमार्गों पर पोतपरिवहन और नौपरिवहन जो संसद् द्वारा विधि द्वारा राष्ट्रीय जलमार्ग घोषित किए गए हैं; ऐसे जलमार्गों पर मार्ग का नियम ।**

25. **समुद्री पोतपरिवहन और नौपरिवहन, जिसके अंतर्गत ज्वारीय जल में पोतपरिवहन और नौपरिवहन है; वाणिज्यिक समुद्री बेड़े के लिए शिक्षा और प्रशिक्षण की व्यवस्था तथा राज्यों और अन्य अभिकरणों द्वारा दी जाने वाली ऐसी शिक्षा और प्रशिक्षण का विनियमन ।**

26. **प्रकाशस्तंभ, जिनके अंतर्गत प्रकाशपोत, बीकन तथा पोतपरिवहन और वायुयानों की सुरक्षा के लिए अन्य व्यवस्था है ।**

27. **ऐसे पत्तन जिन्हें संसद् द्वारा बनाई गई विधि या विद्यमान विधि द्वारा या उसके अधीन महापत्तन घोषित किया जाता है, जिसके अंतर्गत उनका परिसीमन और उनमें पत्तन प्राधिकारियों का गठन और उनकी शक्तियां हैं ।**

28. **पत्तन करंतीन, जिसके अंतर्गत उससे संबद्ध अस्पताल हैं; नाविक और समुद्रीय अस्पताल ।**

29. **वायुमार्ग, वायुयान और विमान चालन; विमानक्षेत्रों की व्यवस्था; विमान यातायात और विमानक्षेत्रों का विनियमन और संगठन; वैमानिक शिक्षा और प्रशिक्षण के लिए व्यवस्था तथा राज्यों और अन्य अभिकरणों द्वारा दी जाने वाली ऐसी शिक्षा और प्रशिक्षण का विनियमन ।**

30. **रेल, समुद्र या वायु मार्ग द्वारा अथवा यंत्र नोदित जलयानों में राष्ट्रीय जलमार्गों द्वारा यात्रियों और माल का वहन ।**

31. **डाक-तार; टेलीफोन, बेतार, प्रसारण और वैसे ही अन्य संचार साधन ।**

"वैसे ही अन्य संचार साधन" — इस प्रविष्टि में ध्वनि विस्तारकों के विनिर्माण और अनुज्ञापन का नियंत्रण आएगा किंतु स्वास्थ्य और परिशांति के हित में उनके उपयोग का नियंत्रण नहीं । उपयोग का नियंत्रण सूची 2 की प्रविष्टि 1 और 6 में आएगा ।[46]

32. **संघ की संपत्ति और उससे राजस्व, किंतु किसी [47]*** राज्य में स्थित संपत्ति के संबंध में, वहां तक के सिवाय जहां तक संसद् विधि द्वारा अन्यथा उपबंध करे, उस राज्य के विधान के अधीन रहते हुए ।**

[47]33. ***

34. **देशी राज्यों के शासकों की संपदा के लिए प्रतिपाल्य अधिकरण ।**

46. *राजस्थान राज्य बनाम चावला*, ए 1959 एस.सी. 544 (*546*) ।
47. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा (1-11-1956 से) लोप किया गया ।

35. संघ का लोक ऋण ।

36. करेंसी, सिक्का निर्माण और वैध निविदा, विदेशी मुद्रा ।

"विदेशी मुद्रा" — इस शक्ति के अधीन विदेशी मुद्रा के नियंत्रण की शक्ति तो है ही, देश के आर्थिक स्थायित्व के सुधार के लिए उसके अर्जन की शक्ति भी इसके अंतर्गत है,[48] जैसे, निर्यात संवर्द्धन द्वारा ।[48]

37. विदेशी ऋण ।

38. भारतीय रिजर्व बैंक ।

39. डाकघर बचत बैंक ।

40. भारत सरकार या किसी राज्य की सरकार द्वारा संचालित लाटरी ।

41. विदेशों के साथ व्यापार और वाणिज्य; सीमाशुल्क सीमांतों के आर-पार आयात और निर्यात; सीमाशुल्क सीमांतों का परिनिश्चय ।

आयात — आयात के अंतर्गत आयातित माल का विक्रय या कब्जा नहीं है ।[49]

42. **अंतरराज्यिक व्यापार और वाणिज्य** — देखिए अनुच्छेद 286(3) और 301 ।

43. व्यापार निगमों का, जिनके अंतर्गत बैंककारी, बीमा और वित्तीय निगम हैं किंतु सहकारी सोसाइटी नहीं हैं, निगमन, विनियमन और परिसमापन ।

44. विश्वविद्यालयों को छोड़कर ऐसे निगमों का, चाहे वे व्यापार निगम हों या नहीं, जिनके उद्देश्य एक राज्य तक सीमित नहीं हैं, निगमन, विनियमन और परिसमापन ।

45. बैंककारी ।

46. विनिमय-पत्र, चेक, वचनपत्र और वैसी ही अन्य लिखतें ।

47. बीमा ।

48. स्टाक एक्सचेंज और वायदा बाजार ।

49. पेटेंट, आविष्कार और डिजाइन; प्रतिलिप्यधिकार; व्यापार चिह्न और पण्य वस्तु चिह्न ।

50. बाटों और मापों के मानक नियत करना ।

51. भारत से बाहर निर्यात किए जाने वाले या एक राज्य से दूसरे राज्य को परिवहन किए जाने वाले माल की क्वालिटी के मानक नियत करना ।

52. वे उद्योग जिनके संबंध में संसद् ने विधि द्वारा घोषणा की है कि उन पर संघ का नियंत्रण लोकहित में समीचीन है ।

उद्योग — वर्तमान संदर्भ में उद्योग से अभिप्रेत है विनिर्माण या उत्पादन की प्रक्रिया ।

---

48. *कृष्णा शुगर मिल्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1959 एस.सी. 1124 ।
49. *मुंबई राज्य* बनाम *बलसारा*, ए 1951 एस.सी 318 ।

इसके अंतर्गत उद्योग में या उसके उत्पादों के वितरण में प्रयुक्त कच्ची सामग्री नहीं है ।[50] इसके अंतर्गत स्वर्ण आभूषण का विनिर्माण भी है ।[51]

"उद्योग" शब्द के सूची 1 की प्रविष्टि 52 और सूची 2 की प्रविष्टि 24 में अलग-अलग अर्थ नहीं हो सकते । किंतु सूची 2 की प्रविष्टि 24 में उद्योग में गैस और गैस संकर्म पूर्ण रूप से अपवर्जित हैं । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि गैस और गैस संकर्म अनन्य रूप से राज्य के विषय हैं और संघ, सूची 1 की प्रविष्टि 52 के अधीन घोषणा करके उन पर अधिकारिता प्राप्त नहीं कर सकता ।[52]

संसद् द्वारा विधि द्वारा घोषित — इस अभिव्यक्ति से अभिप्रेत है संविधान के प्रवृत्त होने के पश्चात् संसद् द्वारा की गई घोषणा । संविधान के प्रारंभ की विधि सूची 1 की प्रविष्टि 52, 53, 54 या 69 की अपेक्षाओं को पूरा नहीं करेगी ।[53] जब तक संसद् यह घोषणा नहीं करती तब तक राज्य विधान मंडल की सूची 2 की प्रविष्टि 27 के अधीन विधायी क्षमता उस उद्योग की बाबत समाप्त नहीं होती ।[53]

घोषणा हो जाने के बाद भी राज्य विधान मंडल को किसी स्वतंत्र प्रविष्टि से जो शक्ति मिली है वह बनी रहती है । किंतु यह तभी जब उस प्रविष्टि का घोषित उद्योग से कोई निकट का संबंध नहीं है । जैसे सूची 2 की प्रविष्टि 49 के अधीन भूमि पर उपकर या कर लगाने की शक्ति[54] या सूची 2 की प्रविष्टि 50 के अधीन निकाले हुए खनिज पर कर अधिरोपित करने की शक्ति,[54] या सूची 1 के अधीन संसदीय विधान के अध्यधीन रहते हुए सूची 2 की प्रविष्टि 23 के अधीन राज्य में खनिज का विकास करने के लिए उपबंध करना[55] या सूची 2 की प्रविष्टि 25 के अधीन गैस संकर्म के लिए संपत्ति अर्जित करना या अधिग्रहण करना[52] या माल के क्रय-विक्रय पर कर लगाना,[56] या सूची 3 की प्रविष्टि 33 के अधीन उद्योग के लिए कच्ची सामग्री के प्रदाय और क्रय को विनियमित करना ।[50]

53. **तेल क्षेत्रों और खनिज तेल संपत्ति स्रोतों का विनियमन और विकास, पेट्रोलियम और पेट्रोलियम उत्पाद, अन्य द्रव और पदार्थ जिनके विषय में संसद् ने विधि द्वारा घोषणा की है कि वे खतरनाक रूप से ज्वलनशील हैं ।**

54. **उस सीमा तक खानों का विनियमन और खनिजों का विकास जिस तक संघ के नियंत्रण के अधीन ऐसे विनियमन और विकास को संसद्, विधि द्वारा, लोकहित में समीचीन घोषित करे ।**

सूची 1 की प्रविष्टि 54 और सूची 2 की प्रविष्टि 23 — यदि इस प्रविष्टि द्वारा प्रदत्त शक्ति के प्रयोग में संसद् ने संविधान के बाद बनाई गई किसी विधि में कोई घोषणा नहीं की है[55] तो खानों के विनियमन और खनिज के विकास की शक्ति सूची 2 की प्रविष्टि 23 के अधीन राज्य विधान मंडल के पास है किंतु जैसे ही संसद् यह घोषणा कर देती है वैसे ही राज्य की विधायी शक्ति समाप्त हो जाएगी ।[57]

सूची 1 की प्रविष्टि 54 और सूची 2 की प्रविष्टि 49 — इस प्रविष्टि के अधीन घोषणा करने से राज्य विधान मंडल की सूची 2 की प्रविष्टि 49 के अधीन घोषित खान की भूमि और भवन पर कर लगाने की शक्ति समाप्त नहीं होगी ।[58]

50. *टीका रामजी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, (1956) एस.सी.आर 393 (*411, 420*) ।
51. *हरकचंद* बनाम *भारत संघ*, ए 1970 एस.सी. 1453 (*1460*) ।
52. *कलकत्ता गैस कंपनी* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1962 एस.सी. 1044 (*1051-52*) ।
53. *परेश* बनाम *असम राज्य*, (1962) 1 एस.सी.ए. 549 ।
54. *मूर्ति* बनाम *चित्तूर का कलक्टर*, (1964) एस.सी. [सिविल अपील 316ए/62] ।
55. *हिंगिर-रामपुर कोल कंपनी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1961 एस.सी. 459 (*472*) ।
56. *गंगा शुगर कारपोरेशन* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 286 (पैरा 28) ।
57. *उड़ीसा राज्य* बनाम *दुलोच*, ए. 1964 एस.सी. 1284 ।
58. *वेस्टर्न कोलफील्ड्स* बनाम *एस.ए.डी.ए.*, ए. 1982 एस.सी. 697 (पैरा 26) ।

55. खानों और तेलक्षेत्रों में श्रम और सुरक्षा का विनियमन ।

56. उस सीमा तक अंतरराज्यिक नदियों और नदी दूनों का विनियमन और विकास जिस तक संघ के नियंत्रण के अधीन ऐसे विनियमन और विकास को संसद्, विधि द्वारा, लोकहित में समीचीन घोषित करे ।

57. राज्यक्षेत्रीय सागरखंड से परे मछली पकड़ना और मीन क्षेत्र ।

58. संघ के अभिकरणों द्वारा नमक का विनिर्माण, प्रदाय और वितरण; अन्य अभिकरणों द्वारा किए गए नमक के विनिर्माण, प्रदाय और वितरण का विनियमन और नियंत्रण ।

59. अफीम की खेती, उसका विनिर्माण और निर्यात के लिए विक्रय ।

60. प्रदर्शन के लिए चलचित्र फिल्मों की मंजूरी ।

61. संघ के कर्मचारियों से संबंधित औद्योगिक विवाद ।

62. इस संविधान के प्रारंभ पर राष्ट्रीय पुस्तकालय, भारतीय संग्रहालय, इंपीरियल युद्ध संग्रहालय, विक्टोरिया स्मारक और भारतीय युद्ध स्मारक नामों से ज्ञात संस्थाएं और भारत सरकार द्वारा पूर्णतः या भागतः वित्तपोषित और संसद् द्वारा, विधि द्वारा, राष्ट्रीय महत्व की घोषित वैसी ही कोई अन्य संस्था ।

63. इस संविधान के प्रारंभ पर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय नामों से ज्ञात संस्थाएं; अनुच्छेद 371ङ के अनुसरण में स्थापित विश्वविद्यालय; संसद् द्वारा, विधि द्वारा, राष्ट्रीय महत्व की घोषित कोई अन्य संस्था ।

64. भारत सरकार पूर्णतः या भागतः वित्तपोषित और संसद् द्वारा, विधि द्वारा, राष्ट्रीय महत्व की घोषित वैज्ञानिक या तकनीकी शिक्षा संस्थाएं ।

65. संघ के अभिकरण और संस्थाएं जो —

(क) वृत्तिक, व्यावसायिक या तकनीकी प्रशिक्षण के लिए हैं जिसके अंतर्गत पुलिस अधिकारियों का प्रशिक्षण है; या

(ख) विशेष अध्ययन या अनुसंधान की अभिवृद्धि के लिए हैं; या

(ग) अपराध के अन्वेषण या पता चलाने में वैज्ञानिक या तकनीकी सहायता के लिए हैं ।

66. उच्चतर शिक्षा या अनुसंधान संस्थाओं में तथा वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थाओं में मानकों का समन्वय और अवधारण ।

"संस्थाओं में . . . " — जो विश्वविद्यालय किसी विशेष अधिनियम द्वारा नहीं बनाए गए हैं वे भी इस प्रविष्टि के अधीन आते हैं ।[59] किंतु यह प्रविष्टि राज्य की, ऐसी संस्थाओं में प्रवेश के लिए अतिरिक्त अर्हताएं अधिनियमित करने की, शक्ति छीनती नहीं है [सूची 2 की प्रविष्टि 25] के अधीन ।[60]

67. संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन [61]*राष्ट्रीय महत्व के घोषित* **प्राचीन और ऐतिहासिक संस्मारक और अभिलेख तथा पुरातत्वीय स्थल और अवशेष ।**

59 *प्रेम चंद* बनाम *छाबड़ा*, (1984) क्रिमिनल ला जरनल 668 (पैरा 8) एस.सी. ।

60. *अंबेश* बनाम *प्रधानाचार्य*, ए. 1957 एस.सी. 400 (पैरा 22); *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 1823; *राजेन्द्रन* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1968 एस.सी. 1012 ।

61. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।

68. भारतीय सर्वेक्षण, भारतीय भूवैज्ञानिक, वनस्पति विज्ञान, प्राणी विज्ञान और मानव शास्त्र सर्वेक्षण; मौसम विज्ञान संगठन ।

69. जनगणना ।

70. संघ लोक सेवाएं; अखिल भारतीय सेवाएं; संघ लोक सेवा आयोग ।

71. संघ की पेंशनें, अर्थात् भारत सरकार द्वारा या भारत की संचित निधि में से संदेय पेंशनें ।

72. संसद् के लिए, राज्यों के विधान मंडलों के लिए तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के पदों के लिए निर्वाचन; निर्वाचन आयोग ।

73. संसद् सदस्यों के, राज्य सभा के सभापति और उपसभापति के तथा लोक सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के वेतन और भत्ते ।

74. संसद् के प्रत्येक सदन की और प्रत्येक सदन के सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां; संसद् की समितियों या संसद् द्वारा नियुक्त आयोगों के समक्ष साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए व्यक्तियों को हाजिर कराना ।

75. राष्ट्रपति और राज्यपालों की उपलब्धियां, भत्ते, विशेषाधिकार और अनुपस्थिति छुट्टी के संबंध में अधिकार; संघ के मंत्रियों के वेतन और भत्ते; नियंत्रक-महालेखापरीक्षक के वेतन, भत्ते और अनुपस्थिति छुट्टी के संबंध में अधिकार और सेवा की अन्य शर्तें ।

76. संघ के और राज्यों के लेखाओं की संपरीक्षा ।

77. उच्चतम न्यायालय का गठन, संगठन, अधिकारिता और शक्तियां (जिनके अंतर्गत उस न्यायालय का अवमान है) और उसमें ली जाने वाली फीस; उच्चतम न्यायालय के समक्ष विधि-व्यवसाय करने के हकदार व्यक्ति ।

78. उच्च न्यायालयों के अधिकारियों और सेवकों के बारे में उपबंधों को छोड़कर उच्च न्यायालयों का गठन और संगठन [62]*(जिसके अंतर्गत दीर्घावकाश है)***; उच्च न्यायालयों के समक्ष विधि-व्यवसाय करने के हकदार व्यक्ति ।**

"विधि व्यवसाय करने के हकदार व्यक्ति" – संसद् ने इस शक्ति के प्रयोग में अधिवक्ता अधिनियम बनाया है । उपर्युक्त प्रविष्टि 77 और 78 को देखते हुए राज्य के विधान मंडल अधिवक्ता अधिनियम के विपरीत कोई विधि बनाकर किसी अधिवक्ता को किसी कानूनी अधिकरण के समकक्ष उपस्थित होने से रोक नहीं सकते ।[63]

[64]79. किसी उच्च न्यायालय की अधिकारिता का किसी संघ राज्यक्षेत्र पर विस्तारण और उससे अपवर्जन ।

80. किसी राज्य के पुलिस बल के सदस्यों की शक्तियों और अधिकारिता का उस राज्य से बाहर किसी क्षेत्र पर विस्तारण, किंतु इस प्रकार नहीं कि एक राज्य की पुलिस उस राज्य से बाहर किसी क्षेत्र में उस राज्य की सरकार की सहमति के बिना जिसमें ऐसा क्षेत्र स्थित है, शक्तियों और

62. संविधान (पंद्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1963 द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से अंतःस्थापित ।
63. *श्रीनिवास* बनाम *कर्नाटक राज्य*, ए. 1987 एस.सी. 1518 (पैरा 9) ।
64. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

अधिकारिता का प्रयोग करने में समर्थ हो सके; किसी राज्य के पुलिस बल के सदस्यों की शक्तियों और अधिकारिता का उस राज्य से बाहर रेल क्षेत्रों पर विस्तारण ।

81. ***अंतरराज्यिक प्रव्रजन; अंतरराज्यिक करंतीन ।***

82. **कृषि-आय से भिन्न आय पर कर ।**

आय पर कर — (अ) सूची 1 की प्रविष्टि 82 एक विधायी शक्ति का शीर्ष है जिसका व्याकरणिक निर्वचन नहीं किया जाना चाहिए । आय-कर अधिनियम या इंग्लैंड या अमेरिका की आय-कर से संबंधित विधि के प्रति निर्देश करते हुए इसका संकीर्ण अर्थान्वयन नहीं किया जाना चाहिए ।[65] संविधान में "आय" शब्द की कोई परिभाषा नहीं दी गई है । इस शब्द का निर्वचन उसके प्राकृतिक और व्याकरणिक अर्थ के अनुसार किया जाना चाहिए । इससे अभिप्रेत है आने वाली कोई वस्तु[66] और इस शब्द का अर्थ अत्यंत व्यापक है ।[67] इसके अंतर्गत वह सभी लाभ और अभिलाभ आ जाएगा जो वास्तव में प्राप्त होता है । इसके अंतर्गत निम्नलिखित आएंगे

(i) पूंजी अभिलाभ पर कर । जैसे, ऐसी संपत्तियों के विक्रय आगम जो किसी कारबार करने वाले समुत्थान की पूंजी थी ।

(ii) इसमें आय भी आ जाएगी जो वास्तव में उद्भूत हुई है और वह आय भी जिसे विधान मंडल ने उद्भूत हुई माना है ।[6]

(iii) इसमें किसी व्यक्ति की सकल प्राप्तियां भी आएंगी । यह आवश्यक नहीं है कि व्यय को घटाकर आने वाले लाभ या प्राप्ति को ही आय समझा जाए ।[69]

(iv) आय-कर के अपवंचन को रोकने की शक्ति भी इस प्रविष्टि में है ।[70]

(आ) उदार निर्वचन के सिद्धांत का यह अर्थ नहीं है कि संसद् किसी ऐसी मद पर आय के रूप में कर लगाए जो तर्क बुद्धि से विवेचन करने पर किसी प्रकार भी आय नहीं समझी जा सकती ।[68] आय-कर अधिनियम द्वारा विहित परीक्षणों को इस बात के लिए मार्गदर्शक नहीं माना जा सकता कि क्या निर्धारिती की आय और प्रभारित मद के बीच कोई युक्तिसंगत संबंध है या नहीं ।[71] "कल्पना" का आश्रय वहां लिया जा सकता है जहां कराधान से बचने की युक्तियों से निपटने का उद्देश्य हो ।

83. **सीमाशुल्क जिसके अंतर्गत निर्यात शुल्क है ।**

84. **भारत में विनिर्मित या उत्पादित तंबाकू और अन्य माल पर उत्पाद-शुल्क जिसके अंतर्गत** —

(क) मानवीय उपभोग के लिए एल्कोहाली लिकर,

(ख) अफीम, इंडियन हेंप और अन्य स्वापक औषधियां तथा स्वापक पदार्थ,

नहीं है, किंतु ऐसी औषधीय और प्रसाधन निर्मितियां हैं जिसमें एल्कोहल या इस प्रविष्टि के उपपैरा (ख) का कोई पदार्थ अंतर्विष्ट है ।

उत्पाद-शुल्क — उत्पाद-शुल्क प्राथमिक रूप से किसी विनिर्माता या उत्पादक पर

---

65 *नवीन चंद्र* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए 1955 एस.सी. (*61*) ।

66 तुलना कीजिए, *आय-कर आयुक्त* बनाम *शॉ वालेस*, (1932) 59 कलकत्ता 1343 (पी.सी) ।

67 *कामाख्या* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए 1943 पी.सी 153 ।

68 *आय-कर आयुक्त* बनाम *भागीलाल*, ए 1954 एस.सी. 155 ।

69 *त्रावनकोर रबड़ कंपनी* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1964 एस.सी. 572 ।

70 *पंजाब डिस्टिलिंग इंडस्ट्रीज* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए 1965 एस.सी. 1862 (*1865*) ।

71. *नवनीत लाल* बनाम *आय-कर अपील सहायक आयुक्त*, ए. 1965 एस.सी. 1375 (*1379, 1382*) ।

विनिर्मित या उत्पादित वस्तु की बाबत लगाया जाता है ।[72] यह माल पर कर है । माल के विक्रय पर या विक्रय के आगम पर नहीं है ।[73] उत्पाद-शुल्क की बाबत कराधान का आधार विनिर्माण या उत्पादन है ।[74] विद्युत ऊर्जा के उपभोग करने पर विद्युत ऊर्जा का उत्पादन करने वाला कर तभी देता है जब वह उसका उपभोग करता है । इसलिए यह उत्पाद-शुल्क नहीं है ।[74-75] इसके विपरीत किसी माल के विनिर्माण या उत्पादन पर अधिरोपित उत्पाद-शुल्क की प्रकृति वही रहती है चाहे वह विनिर्माण या उत्पादन के पश्चात्‌वर्ती चरण पर अधिरोपित किया जाए ।[76] उत्पाद-शुल्क अपने देश में उत्पादित विनिर्दिष्ट वर्ग या वर्णन के माल पर उद्‌गृहीत शुल्क है । यह शुल्क उत्पादित माल की मात्रा या मूल्य के अनुसार परिकलित किया जाता है । उसके संबंध में होने वाले वाणिज्यिक व्यवहार पर यह निर्भर नहीं करता ।[77]

यदि विनिर्माता या उत्पादक पर कोई कर लगाया जाता है तो केवल इस कारण यह नहीं कहा जा सकता कि वह उत्पाद-शुल्क नहीं है क्योंकि उसका संग्रह उस समय किया जाता है जब कि उत्पाद मिल के बाहर जाता है,[76] या उसे भूतलक्षी प्रभाव से अधिरोपित किया जाता है,[77] या क्रेता उसे उपभोक्ता को अंतरित नहीं कर सकता है ।[77] जब तक लाग की प्रकृति वही है, अर्थात्‌ वह उत्पादन या विनिर्माण पर शुल्क है, तब तक संग्रह की रीति के कारण उसकी प्रकृति में अंतर नहीं आएगा और वह उत्पाद-शुल्क ही बना रहेगा ।[78] किसी विशिष्ट मामले में जो कर लगाया गया था वह उत्पाद-शुल्क है या नहीं और उस शुल्क और जिस व्यक्ति पर वह लगाया गया है उसके बीच तर्क-संगत संबंध है या नहीं इसका विनिश्चय उस अधिनियम के उपबंधों का उचित अर्थान्वयन करके ही किया जा सकता है ।[78]

"उत्पादित" — विनिर्मित के साथ ही उत्पादित शब्द आया है जिससे यह प्रतीत होता है कि माल को उस दशा में लाने के लिए जिससे उस पर कर लग जाए कुछ मानवीय कौशल तथा श्रम किया गया है चाहे इससे कच्चा माल को रूपान्तरित करके ऐसी वस्तु नहीं बनाई गई हो जो बिल्कुल भिन्न हो ।[79]

"विनिर्मित" — विनिर्माण की प्रक्रिया के अनुषंगी उपोत्पाद जैसे स्क्रैप या अपशिष्ट भी इस प्रविष्टि के अधीन आएंगे ।[80]

85. **निगम कर ।**

86. **व्यष्टियों और कंपनियों की आस्तियों के, जिनके अंतर्गत कृषि भूमि नहीं है, पूंजी मूल्य पर कर, कंपनियों की पूंजी पर कर ।**

आस्तियों के पूंजी मूल्य पर कर — इससे अभिप्रेत है निर्धारिती के स्वामित्व में की सभी आस्तियो पर कर जो आस्तियों की विभिन्न मदों पर कर से भिन्न है ।[81]

---

72 सी.पी. एंड बरार मोटर स्पिरिट टैक्सेशन ऐक्ट, 1938, ए 1939 एफ.सी. 1 के मामले में ।

73. *गवर्नर-जनरल* बनाम *मद्रास प्रांत*, (1945) 49 सी.डब्ल्यू.एन. 381 (पी.सी.), *मद्रास प्रांत* बनाम *बोडू पैडन्ना*, ए 1942 एफ.सी. 33 की प्रविष्टि करते हुए ।

74. *जियाजीराव काटन मिल्स* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1959 एस.सी. 270 ।

75 *जगन्नाथ* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1963 एस.सी. 414 ।

76. *अब्दुल कादिर* बनाम *केरल राज्य*, ए 1962 एस.सी. 922 ।

77. *छोटाभाई* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1006 (*1018*) ।

78 *आर.सी. लाल* बनाम *भारत संघ*, ए. 1962 एस.सी. 1281 (*1287*) ।

79. *एम्पायर इंडस्ट्रीज़* बनाम *भारत संघ*, ए. 1986 एस.सी. 662 (पैरा 45-46) ।

80. *खंडेलवाल वर्क्स* बनाम *भारत संघ*, ए. 1985 एस.सी. 1211 (पैरा 39) ।

81. *एस.सी. नॉन* बनाम *धन-कर अधिकारी*, ए. 1969 एस.सी. 59; *सहायक आयुक्त* बनाम *बी. एंड सी. कंपनी लिमिटेड*, (1970) 1 एस.सी.आर. 268 (*277*) ।

सूची 1 की प्रविष्टि 86 और सूची 2 की प्रविष्टि 49 — यदि कोई कर किसी व्यक्ति की समस्त संपत्ति पर लगता है तो वह इस प्रविष्टि के अधीन आएगा और राज्य विधान मंडल की क्षमता के बाहर होगा ।[82] किंतु यदि कोई कर किसी व्यक्ति के भूमि और भवन पर लगाया जाता है तो वह इस प्रविष्टि के अंतर्गत नहीं आएगा ।[82]

जब संसद् किसी व्यक्ति की समस्त आस्तियों पर धन-कर लगाती है तो उस विषय-वस्तु में अदृश्य रूप से भवन भी आ जाएंगे । यह कर सूची 1 की प्रविष्टि 86 के अधीन आएगा ।[83] किंतु साथ ही राज्य विधान मंडल सूची 2 की प्रविष्टि 49 के अधीन भवनों पर कर लगा सकता है ।[82] ये दोनों कर एक-दूसरे पर व्याप्त होते हैं किंतु प्रत्येक अलग-अलग विधान मंडल की क्षमता के अंतर्गत है ।[82]

जब राज्य का विधान मंडल भवन पर कर लगाता है तो उसे यह स्वयं विनिश्चय करना होगा कि वह उसे किस प्रकार उद्गृहीत करे । यदि राज्य विधान मंडल कर के आधार का वर्णन "पूंजी मूल्य" के रूप में करता है या उसे वार्षिक मूल्य से जोड़ता है या वार्षिक भाटक के अनुसार परिकलित करता है तो इससे वह प्रविष्टि 86 के अधीन नहीं हो जाएगा ।[82]

दूसरे शब्दों में भूमि और भवन पर कर सीधे-सीधे भूमि और भवन पर अधिरोपित किया जाता है और उसका इनसे सुनिश्चित संबंध होता है । आस्तियों के पूंजी मूल्य पर कर का भूमि और भवन से सीधा संबंध नहीं होता । निर्धारिती की समस्त आस्तियों के अवयव के रूप में भूमि और भवन हो सकते हैं ।[81]

87. कृषि भूमि से भिन्न संपत्ति के संबंध में संपदा-शुल्क ।

88. कृषि भूमि से भिन्न संपत्ति के उत्तराधिकार के संबंध में शुल्क ।

89. रेल, समुद्र या वायुमार्ग द्वारा ले जाए जाने वाले माल या यात्रियों पर सीमा कर, रेल भाड़ों और माल भाड़ों पर कर ।

90. स्टाक एक्सचेंजों और वायदा बाजारों के संव्यवहारों पर स्टांप-शुल्क से भिन्न कर ।

91. विनिमयपत्रों, चेकों, वचनपत्रों, वहनपत्रों, प्रत्ययपत्रों, बीमा पालिसियों, शेयरों के अंतरण, डिबेंचरों, परोक्षियों और प्राप्तियों के संबंध में स्टांप-शुल्क की दर ।

92. समाचारपत्रों के क्रय या विक्रय और उनमें प्रकाशित विज्ञापनों पर कर ।

समाचारपत्रों पर विक्रय कर — इस अभिव्यक्त शक्ति के कारण समाचारपत्रों पर लगाया गया विक्रय-कर तभी असांविधानिक होगा जब कि वह युक्तियुक्त सीमा से अधिक हो, जिससे अनुच्छेद 19(1)(क) द्वारा प्रत्याभूत स्वतंत्रता का अतिलंघन हो जाए ।[84]

[85]92क. समाचारपत्रों से भिन्न माल के क्रय या विक्रय पर उस दशा में कर जिसमे ऐसा क्रय या विक्रय अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान होता है ।

[86]92ख. माल के परेषण पर (चाहे परेषण उसके करने वाले व्यक्ति को या किसी अन्य व्यक्ति को किया गया है), उस दशा में कर जिसमें ऐसा परेषण अंतरराज्यिक व्यापार या वाणिज्य के दौरान होता है ।

82. *गौस* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1980 एस.सी. 271 (पैरा 7-9, 12) ।
83. *सुधीर* बनाम *धन-कर अधिकारी*, ए 1969 एस.सी. 59 ।
84. *इंडियन इस्टर्न न्यूजपेपर्स* बनाम *भारत संघ*, ए 1986 एस.सी. 515 (पैरा 42, 63, 66) ।
85. संविधान (छठा संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा अंतःस्थापित ।
86. संविधान (छियालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1982 द्वारा (2-2-1983 से) अंतःस्थापित ।

93. इस सूची के विषयों में से किसी विषय से संबंधित विधियों के विरुद्ध अपराध ।

94. इस सूची के विषयों में से किसी विषय के प्रयोजनों के लिए जांच, सर्वेक्षण और आंकड़े ।

95. उच्चतम न्यायालय से भिन्न सभी न्यायालयों की इस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में अधिकारिता और शक्तियां; नावधिकरण विषयक अधिकारिता ।

96. इस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में फीस, किंतु इसके अंतर्गत किसी न्यायालय में ली जाने वाली फीस नहीं है ।

फीस — इस प्रविष्टि के अधीन विधान बनाने की शक्ति दो शर्तों के अधीन है, — (1) वह फीस होना चाहिए कर नहीं,[87] और (2) वह सूची 1 मे गिनाए गए विषयों में से किसी की बाबत फीस होनी चाहिए ।[88]

97. कोई अन्य विषय जो सूची 2 या सूची 3 में प्रगणित नहीं है और जिसके अंतर्गत कोई ऐसा कर है जो उन सूचियों में से किसी सूची में उल्लिखित नहीं है ।

अवशिष्ट प्रविष्टि के अंतर्गत आने वाली विधियों के उदाहरण — 1 न्यायालयों ने निम्नलिखित विषयों को इस प्रविष्टि के अधीन माना है, —

(i) स्थावर और जंगम संपत्ति पर (जिसके अंतर्गत भूमि है), दान-कर ।[89]

(ii) भवन निर्माण संविदा पर कर चाहे उसमें कोई विक्रय अंतर्वलित न हो ।[90]

(iii) किसी कारखाने के परिसर में गन्ने के प्रवेश पर उप कर ।[91]

(iv) अनुच्छेद 239(1) के अधीन भाग ग राज्य (जो अब संघ राज्यक्षेत्र हो गए हैं)[92] के लिए विधान मंडल का गठन ।

(v) करदाता से वार्षिकी निक्षेप प्राप्त करने के लिए उपबंध । यह निक्षेप उधार के रूप में था ।[93]

(vi) धन-कर,[94] व्यय-कर ।[95]

(vii) कुछ प्रतीकों का वाणिज्यिक प्रयोजनों के लिए अनुचित उपयोग का निवारण ।[96]

(viii) भूतलक्षी प्रभाव से ऐसे कर को विधिमान्य करना जिसे लगाने की शक्ति राज्य विधान मंडल को नहीं थी और अविधिमान्य राज्य विधि के अधीन संग्रह किए गए धन को संसद द्वारा भूतलक्षी प्रभाव से बनाई गई विधि के अधीन विधिमान्य संग्रह घोषित करना ।[97]

2. संसद्, सूची 1 या सूची 3 के अधीन किसी प्रविष्टि के साथ-साथ इस प्रविष्टि का अवलंब ले सकती है ।[94] इस पर कोई प्रतिबंध नहीं है । किंतु जब कोई विषय पूरी तरह से किसी विनिर्दिष्ट प्रविष्टि में आ जाता है तो सूची 1 की प्रविष्टि 97 की बात उठाने की आवश्यकता नहीं रहती है ।[98]

87 तुलना कीजिए, *मद्रास सरकार* बनाम *जेनिथ लैम्प्स*, ए 1973 एस.सी. 724 (पैरा 45) ।

88. *बार काउंसिल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1974 एस.सी 231 (पैरा 11, 13) ।

89 *द्वितीय दान-कर अधिकारी* बनाम *हजरत*, ए 1970 एस.सी 999 ।

90. *मिठन लाल* बनाम *दिल्ली राज्य*, (1959) एस.सी.आर 445 ।

91 *डायमंड शुगर मिल्स* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1961 एस.सी. 652 (658) ।

92 *जादव* बनाम *हिमाचल प्रदेश प्रशासन*, ए. 1960 एस.सी 1008 ।

93. *हरिकृष्ण* बनाम *भारत संघ*, ए. 1966 एस.सी 619 (622) ।

94 *भारत संघ* बनाम *ढिल्लों*, ए 1972 एस.सी 1061 ।

95 *आजम* बनाम *व्यय-कर अधिकारी*, (1971) 3 एस.सी.सी 621 (629) ।

96. *साबले* बनाम *भारत संघ*, ए. 1975 एस.सी. 1172 (पैरा 13) ।

97. *शेतकारी कारखाना* बनाम *कलक्टर*, ए 1979 एस.सी 1972 (पैरा 6); *जावरा शुगर मिल्स* बनाम *मध्य प्रदेश राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 416 ।

98. *गास्केट* बनाम *कर्मचारी राज्य बीमा निगम*, ए. 1985 एस.सी. 790 (पैरा 6) ।

सूची 2 — राज्य सूची

1. **लोक व्यवस्था (किंतु इसके अंतर्गत सिविल शक्ति की सहायता के लिए** [1]*नौसेना, सेना या वायु सेना या संघ के किसी अन्य सशस्त्र बल का या संघ के नियंत्रण के अधीन किसी अन्य बल का या उसकी किसी टुकडी या यूनिट का प्रयोग* **नहीं है)** ।

लोक व्यवस्था — देखिए अनुच्छेद 19(1)(2) ।

संघ के सैन्य बल का प्रयोग — देखिए अनुच्छेद 257क और सूची 1 की प्रविष्टि 2क ।

[2]*2. सूची 1 की प्रविष्टि 2क के उपबंधों के अधीन रहते हुए पुलिस (जिसके अंतर्गत रेल और ग्राम पुलिस है) ।*

3. [3]*** **उच्च न्यायालय के अधिकारी और सेवक; भाटक और राजस्व न्यायालयों की प्रक्रिया; उच्चतम न्यायालय से भिन्न सभी न्यायालयों में ली जाने वाली फीस** ।

4. **कारागार, सुधारालय, बोर्स्टल संस्थाएं और उसी प्रकार की अन्य संस्थाएं और उनमें निरुद्ध व्यक्ति; कारागारों और अन्य संस्थाओं के उपयोग के लिए अन्य राज्यों से ठहराव** ।

5. **स्थानीय शासन, अर्थात् नगर निगमों, सुधार न्यासों, जिला बोर्डों, खनन-बस्ती प्राधिकारियों और स्थानीय स्वशासन या ग्राम प्रशासन के प्रयोजनों के लिए अन्य स्थानीय प्राधिकारियों का गठन और शक्तियां** ।

6. **लोक स्वास्थ्य और स्वच्छता; अस्पताल और औषधालय** ।

7. **भारत से बाहर के स्थानों की तीर्थयात्राओं से भिन्न तीर्थयात्राएं** ।

8. **मादक लिकर, अर्थात् मादक लिकर का उत्पादन, विनिर्माण, कब्जा, परिवहन, क्रय और विक्रय** ।

यह प्रविष्टि राज्य विधान मंडल को मादक लिकर पर कर या उपकर लगाने के लिए प्राधिकृत नहीं करती है ।[4]

किंतु यह राज्य को सार्वजनिक नीलाम द्वारा या अन्यथा लिकर के विनिर्माण आदि के लिए अनुज्ञप्ति देने की शक्ति प्रदान करती है ।[5]

9. **निःशक्त और नियोजन के लिए अयोग्य व्यक्तियों की सहायता** ।

10. **शव गाड़ना और कब्रिस्तान, शव-दाह और श्मशान** ।

[5क]11. ***

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) प्रतिस्थापित ।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) कोष्ठक में दिए गए शब्द जोड़े गए ।
3. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) कुछ शब्दों का लोप किया गया और सूची 3 में प्रविष्टि 11क के रूप में स्थानांतरित कर दिए गए ।
4. *मैसूर राज्य बनाम कावसजी*, (1970) 3 एस.सी.सी. 710 (*714*) ।
5. *नौशेरवान बनाम मध्य प्रदेश राज्य*, ए 1975 एस.सी. 360 ।

5क. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) लोप किया गया ।

शिक्षा — 42वें संशोधन अधिनियम के पूर्व, सूची 1 की प्रविष्टि 63-66 तथा सूची 3 की प्रविष्टि 25 के अधीन रहते हुए शिक्षा प्रविष्टि 66 के अधीन राज्य का विषय था। इसमें सूची 1 की प्रविष्टि 63-66 के अधीन संघ की शक्ति और राज्य की अधिकारिता के प्रश्न पर विवाद हुआ।[6]

शिक्षा को पूरी तरह से सूची 3 की प्रविष्टि 25 में डालकर यह विवाद समाप्त कर दिया गया है। इसमें से वे विषय वर्जित हैं जो सूची 1 की प्रविष्टि 63-66 में आते हैं [देखिए सूची 3 की प्रविष्टि 25]।

12. **राज्य द्वारा नियंत्रित या वित्तपोषित पुस्तकालय, संग्रहालय या वैसी ही अन्य संस्थाएं,** [6क]*संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन* **राष्ट्रीय महत्व के** [6क]*घोषित किए गए* **प्राचीन और ऐतिहासिक संस्मारकों और अभिलेखों से भिन्न प्राचीन और ऐतिहासिक संस्मारक और अभिलेख।**

13. **संचार, अर्थात् सड़कें, पुल, फेरी और अन्य संचार साधन जो सूची 1 में विनिर्दिष्ट नहीं हैं; नगरपालिक ट्राम; रज्जुमार्ग; अंतर्देशीय जलमार्गों के संबंध में सूची 1 और सूची 3 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अंतर्देशीय जलमार्ग और उन पर यातायात, यंत्र नोदित यानों से भिन्न यान।**

14. **कृषि जिसके अंतर्गत कृषि शिक्षा और अनुसंधान, नाशक जीवों से संरक्षण और पादप रोगों का निवारण है।**[7]

15. **पशुधन का परिरक्षण, संरक्षण और सुधार तथा जीवजंतुओं के रोगों का निवारण, पशुचिकित्सा प्रशिक्षण और व्यवसाय।**

16. **कांजी हाउस और पशु अतिचार का निवारण।**

17. **सूची 1 की प्रविष्टि 56 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, जल, अर्थात् जल प्रदाय, सिंचाई और नहरें, जल निकास और तटबंध, जल भंडारकरण और जल शक्ति।**

18. **भूमि, अर्थात् भूमि में या उस पर अधिकार, भूधृति जिसके अंतर्गत भूस्वामी और अभिधारी का संबंध है और भाटक का संग्रहण; कृषि भूमि का अंतरण और अन्यसंक्रामण, भूमि विकास और कृषि उधार; उपनिवेशन।**

"भूमि" — इस प्रविष्टि का प्रारंभिक भाग [illegible] है।[8] इसके अंतर्गत सभी प्रकार की भूमि आती है।[9] "भूमि में या उस पर अधिकार" शब्द [illegible] के रूप में है।

यह प्रविष्टि इतनी व्यापक है कि इसके अंतर्गत निम्नलिखित आ जाएंगे

(i) भूमि सुधार और भूधृतियों में परिवर्तन।[10] भूमि का अर्जन इसके अंतर्गत नहीं आएगा [illegible]

---

6 *गुजरात विश्वविद्यालय* बनाम *कृष्ण*, ए 1963 एस सी 703 (*716-17*); *चित्रलेखा* बनाम *मैसूर राज्य*, ए 1964 एस सी 1828, *कटरा शिक्षा सोसाइटी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1966 एस सी 1307 (*1311*)।

6क. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित।

7. स्वर्ण सिंह समिति की यह सिफारिश, कि कृषि (जैसे शिक्षा) को समवर्ती सूची में अंतरित कर दिया जाए, अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी द्वारा नामंजूर कर दी गई (*स्टेट्समैन*, 30-5-1976)।

8. *मेघराज* बनाम *अल्ला रक्खा*, ए 1947 पी.सी. 72।

9. *भारत संघ* बनाम *बासावय्या*, ए 1979 एस सी 1415 (पैरा 28)।

10. *आत्मा राम* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1959 एस.सी 519 (*522*)।

3 की प्रविष्टि 42 में है ।[11] यदि भूमि अर्जन भूमि सुधार की स्कीम का अनुषंगी है तो वह इसी में गिना जाएगा ।[12] इस प्रविष्टि के अधीन अभिधारियों के अधिकारों को विस्तृत किया जा सकता है या अभिधारियों द्वारा जोते जाने के लिए उपलब्ध भूमि को बढ़ाया जा सकता है । इसके लिए भूस्वामियों के कब्जे की भूमि पर सीमा भी लगाई जा सकती है[12-13] या मध्यवर्तियों को समाप्त किया जा सकता है । मध्यवर्तियों के लिए विधान बनाया जाएगा इसका अनुमान लगाकर जो पट्टे दिए गए थे उन्हें रद्द किया जा सकता है ।[14] जिस भूमि की भूस्वामियों को अपनी निजी कृषि के लिए आवश्यकता नहीं है उसका अनिवार्य रूप से क्रय करके अभिधारियों को कब्जा अंतरित किया जा सकता है ।[12-16]

(ii) भूमि के विद्यमान हितों पर निर्बन्धन या उनकी समाप्ति जिसके अंतर्गत भूस्वामियों के स्वामित्वाधीन भूमियों का अभिधारियों द्वारा कानूनी क्रय के बारे में उपबंध भी सम्मिलित है ।[13, 15]

(iii) भूमि पर अधिकतम सीमा लगाना जिससे आधिक्य में पाई जाने वाली भूमि भूमिहीनों को या अधिकतम सीमा से कम धारण करने वालों को दी जा सके,

(iv) जागीर समाप्त करने के और उसके अनुषंगी उपबंध,[17] या पुराने शासकों द्वारा दिए गए पट्टों को रद्द करना ।[14]

(v) स्थावर संपत्ति पर अधिकतम सीमा लगाना जिसके अंतर्गत रिक्त भूमि, भवन या नगर भूमि भी है ।[9]

क्या भूमि के अंतर्गत भवन हैं? — भूस्वामी और अभिधारी की बाबत विधान बनाने की राज्य विधान मंडल की शक्ति सूची 3 की प्रविष्टि 6, 7 और 13 में है । सूची 2 की प्रविष्टि 18 में नहीं क्योंकि "भूधृति" अभिव्यक्ति के अंतर्गत भवन या गृह वास सुविधा की अभिधृति नहीं आएगी ।[18]

"भूस्वामी और अभिधारी का संबंध" — यह अभिव्यक्ति और इसके बाद की अभिव्यक्ति "भाटक का संग्रहण" दोनों प्रकार की भूमियो को लागू होती है — कृषि भूमि और गैर कृषि भूमि ।[19] यह अभिव्यक्ति उन व्यक्तियों से संबंधित विधान को भी लागू होती है जिनके भूधृति अधिकार विद्यमान हैं और उनको भी जिनके भूधृति के अधिकार समाप्त होने के पश्चात् भी कब्जा बना हुआ है । दूसरे शब्दों में इसमें पूर्व भूस्वामी और पूर्व अभिधारी दोनों ही आते हैं ।

कृषिकेतर संपत्ति के पट्टे और उससे संबंधित सभी विषय सूची 3 की प्रविष्टि 6 और 7 में आते हैं ।

"भाटक का संग्रहण" — ये शब्द राज्य विधान मंडल को भाटक की माफी या उसे घटाने की बाबत शक्ति देते हैं । इन्हीं शब्दों से उसके निर्धारण, संग्रहण या वसूली की शक्ति भी मिलती है । उदाहरण के लिए यह उपबंध किया जा सकता है कि भाटक की डिक्रियों का किसी विशिष्ट रीति से निष्पादन[20] किया जाएगा या भाटक के बकाया को[21] किसी विशेष प्रकार से वसूल किया जाएगा ।

---

11 *बिहार राज्य* बनाम *कामेश्वर*, ए 1952 एस.सी. 252 (*283*), *कामेश्वर* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1951 पटना 91 (*96*) की पुष्टि करते हुए ।

12 *जगन्नाथ* बनाम *प्राधिकृत अधिकारी*, ए 1972 एस.सी. 425 (*436*) ।

13 *श्रीराम* बनाम *मुंबई राज्य*, ए 1959 एस.सी. 459 (*463*) ।

14. *रघुबीर* बनाम *अजमेर राज्य*, ए 1959 एस.सी. 475 (*477*) ।

15. *आत्माराम* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1959 एस.सी. 519 (*523*) ।

16. *कुन्हीकोमन* बनाम *केरल राज्य*, ए 1962 एस.सी. 723 (*727*) ।

17 *विंध्य प्रदेश राज्य* बनाम *मोरध्वज*, ए. 1960 एस.सी. 796 (*799-800*), *अमरसरजीत* बनाम *पंजाब राज्य*, ए 1962 एस.सी. 1305 ।

18. *इंदुभूषण* बनाम *रामसुंदरी*, (1969) 2 एस.सी.सी. 289 (*299*) ।

19. *मेघराज* बनाम *अल्ला रक्खा*, (1947) एफ.सी.आर. 77 (*86*) पी.सी. ।

20. *संयुक्त प्रांत* बनाम *अतिका*, ए 1941 एफ.सी. 16 (*25*), *उदय चंद* बनाम *समरेन्द्र*, (1947) 82 सी.एल.जे. 1 (एफ.सी.) ।

21. *ख्वाजामियां वक्फ एस्टेट्स* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 161 ।

कृषि भूमि का अंतरण और संक्रमण — 1. इस प्रविष्टि के पूर्ववर्ती विषय कृषि भूमि और कृषिकेतर भूमि दोनों को लागू होते हैं । प्रांतीय विधान मंडल को कृषि भूमि के अंतरण की अनन्य शक्ति है । कृषि भूमि से भिन्न संपत्ति का अंतरण सूची 3 के अधीन समवर्ती विषय है (प्रविष्टि 6) । कृषि भूमि के अंतरण से संबंधित राज्य विधि संपत्ति अंतरण अधिनियम के उपबंधों का अध्यारोहण कर सकती है । जैसे कृषि भूमि के बंधक के बारे में भिन्न उपबंध हो सकता है ।[22]

2. किसी अनुसूचित जनजाति के सदस्य द्वारा किसी ऐसे व्यक्ति को जो उस जनजाति का नहीं है कृषि भूमि के अंतरण के बारे में विधान की शक्ति इसी प्रविष्टि में है ।[23]

सूची 2 की प्रविष्टि 18 और 45 — ये दोनों प्रविष्टिया मिलकर जागीरों को समाप्त करने के बारे में विधान बनाने की शक्ति देती हैं ।[24]

[25]19 * * *

[25]20 * * *

वन और वन्य जीवों का संरक्षण — ये दो विषय संविधान 42वें संशोधन अधिनियम 1976 द्वारा समवर्ती विषय बना दिए गए है । प्रविष्टि 19 और 20 को सूची 3 की प्रविष्टि 17क और 17ख बना दिया गया है ।

21. **मात्स्यिकी ।**

22. **सूची 1 की प्रविष्टि 34 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, प्रतिपाल्य-अधिकरण; विल्लंगमित और कुर्क की गई संपदा ।**

23. **संघ के नियंत्रण के अधीन विनियमन और विकास के संबंध में सूची 1 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, खानों का विनियमन और खनिज विकास ।**

24. **सूची 1 की** [25क]*प्रविष्टि 7 और प्रविष्टि 52* **के उपबंधों के अधीन रहते हुए, उद्योग ।**

25. **गैस और गैस संकर्म ।**

26. **सूची 3 की प्रविष्टि 33 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के भीतर व्यापार और वाणिज्य ।**

27. **सूची 3 की प्रविष्टि 33 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, माल का उत्पादन, प्रदाय और वितरण ।**

28. **बाजार और मेले ।**

[26]29. * * *

30. **साहूकारी और साहूकार; कृषि ऋणिता से मुक्ति ।**

22. तुलना कीजिए, *मेघराज* बनाम *अल्ला रक्खा*, (1947) 51 सी डब्ल्यू एन 532 (*528*) पी सी. ।
23. *लिंगप्पा* बनाम महाराष्ट्र राज्य, ए 1985 एस.सी. 389 (पैरा 26) ।
24. *अमरसरजीत* बनाम पंजाब राज्य, ए 1962 एस.सी. 1305 (*1313*) ।
25. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) लोप किया गया ।
25क. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।
26. प्रविष्टि 29 का लोप किया गया और इस विषय से संबंधित प्रविष्टि नई प्रविष्टि 33 के अधीन अंतरित की गई (सूची 3); देखिए आगे ।

कृषि ऋणिता — यहां कृषकों से शोध्य ऋणों के प्रति निर्देश है जो भाटक के बकाया से भिन्न वस्तु है । भाटक का बकाया सूची 2 की प्रविष्टि 18 में आता है ।[27]

31. पांथशाला और पांथशालापाल ।

32. ऐसे निगमों का, जो सूची 1 से विनिर्दिष्ट निगमों से भिन्न हैं और विश्वविद्यालयों का निगमन, विनियमन और परिसमापन, अनिगमित व्यापारिक, साहित्यिक, वैज्ञानिक, धार्मिक और अन्य सोसाइटियां और संगम, सहकारी सोसाइटियां ।[28]

निगमन — इससे अभिप्रेत है किसी विधायी अधिनियमिति द्वारा निगमित निकाय की स्थापना ।[29] "निगम" शब्द का व्यापक अर्थ में प्रयोग किया गया है ।[28]

33. नाट्यशाला और नाट्यप्रदर्शन; सूची 1 की प्रविष्टि 60 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, सिनेमा; खेलकूद, मनोरंजन और आमोद ।

34. दांव और द्यूत ।[30]

35. राज्य में निहित या उसके कब्जे के संकर्म, भूमि और भवन ।

[31]36. * * *

37. संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि के उपबंधों के अधीन रहते हुए, राज्य के विधान मंडल के लिए निर्वाचन ।

38. राज्य के विधान मंडल के सदस्यों के, विधान सभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के और, यदि विधान परिषद् है तो, उसके सभापति और उपसभापति के वेतन और भत्ते ।

39. विधान सभा की और उसके सदस्यों और समितियों की तथा, यदि विधान परिषद् है तो, उस विधान परिषद् की और उसके सदस्यों और समितियों की शक्तियां, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियां; राज्य के विधान मंडल की समितियों के समक्ष साक्ष्य देने या दस्तावेज पेश करने के लिए व्यक्तियों को हाजिर कराना ।

40. राज्य के मंत्रियों के वेतन और भत्ते ।

41. राज्य लोक सेवाएं, राज्य लोक सेवा आयोग ।

42. राज्य की पेंशनें, अर्थात् राज्य द्वारा या राज्य की संचित निधि में से संदेय पेंशन ।

43. राज्य का लोक ऋण ।

44. निखात निधि ।

45. भू-राजस्व जिसके अंतर्गत राजस्व का निर्धारण और संग्रहण, भू-अभिलेख रखना, राजस्व के प्रयोजनों के लिए और अधिकारों के अभिलेखों के लिए सर्वेक्षण और राजस्व का अन्यसंक्रामण है ।

---

27 *ख्वाजामियां वक्फ एस्टेट्स* बनाम *मद्रास राज्य*, ए. 1971 एस.सी. 161 ।
28 *दमण* बनाम *पंजाब राज्य*, ए. 1985 एस.सी. 973 (पैरा 4-8) ।
29. *बाबूलाल* बनाम *कुलपति*, ए. 1976 मध्य प्रदेश 98 (पैरा 5) ।
30. *अनराज* बनाम *महाराष्ट्र राज्य*, ए. 1984 एस.सी. 781 (पैरा 4-5) ।
31. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा लोप किया गया ।

46. कृषि-आय पर कर

47. कृषि भूमि के उत्तराधिकार के संबंध में शुल्क ।

48. कृषि भूमि के संबंध में संपदा-शुल्क ।

49. भूमि और भवनों पर कर ।

भूमि और भवनों पर कर — 1. यह प्रविष्टि राज्य विधान मंडल को भूमि और भवनों पर कर लगाने की शक्ति देती है । कर उद्ग्रहण करने की रीति के बारे में कोई बंधन नहीं है । यदि भवन पर कर उसके वार्षिक मूल्य के आधार पर उद्गृहीत किया जाता है तो उससे वह आय पर कर नहीं बन जाता ।[32]

इसी प्रकार अभिधृति पर कर भी इसी प्रविष्टि के अधीन आएगा चाहे वह अभिधृति के वार्षिक मूल्य पर क्यों न आधारित हो और ऐसे वार्षिक मूल्य खनिज भूमि की दशा में सरकार को सदेय स्वामित्व के आधार पर परिकलित किए जाते हों ।[33] या उसे भूमि उपकर कहा जाता हो ।[33]

2. "भूमि" के अंतर्गत भूमि की सतह और उसके नीचे का क्षेत्र भी आता है जिससे विद्युत प्रदाय लाइन के अधिभोग की भूमि पर कर लगाया जा सकता है ।[34]

3. इस प्रविष्टि में कारखाने के अधिभोग में का भवन भी आएगा (किंतु उसके मशीन और फर्नीचर नहीं) ।[35]

4. किंतु निम्नलिखित कर इस प्रविष्टि के अंतर्गत नहीं है, —

(i) भवन पर कर, यदि भवन के क्षेत्रफल को कर का आधार बनाया जाता है, या प्रभारित व्यक्ति के स्वामित्वाधीन भवनों की संख्या के अनुसार उसमें परिवर्तन किया जाता है ।[36]

(ii) किसी भूमि या भवन में स्थित मशीनरी पर कर चाहे वह मशीनरी किसी विशेष प्रयोजन के लिए उस भवन के उपयोग के लिए ही क्यों न हो ।[37, 38]

(iii) दान-कर या धन-कर[35] जो सूची 1 की प्रविष्टि 97 के अधीन आते हैं ।

(iv) भूमि और भवन के पूंजी मूल्य पर कर ।[37]

(v) भवन के निर्माण की अनुमति के लिए फीस ।[38]

50. संसद् द्वारा, विधि द्वारा, खनिज विकास के संबंध में अधिरोपित निर्बन्धनों के अधीन रहते हुए खनिज संबंधी अधिकारों पर कर ।

51. राज्य में विनिर्मित या उत्पादित निम्नलिखित माल पर उत्पाद-शुल्क और भारत में अन्यत्र विनिर्मित या उत्पादित वैसे ही माल पर उसी दर या निम्नतर दर से प्रतिशुल्क —

(क) मानवीय उपभोग के लिए एल्कोहाली लिकर,

(ख) अफीम, इंडियन हैंप और अन्य स्वापक औषधियां तथा स्वापक पदार्थ,

किंतु जिसके अंतर्गत ऐसी औषधियां और प्रसाधन निर्मितियां नहीं हैं जिनमें एल्कोहल या इस प्रविष्टि के उपपैरा (ख) का कोई पदार्थ अंतर्विष्ट है ।

उत्पाद-शुल्क — प्रविष्टि 51 और 54 द्वारा प्रदत्त शक्तियां अलग-अलग हैं । राज्य

32. *सहायक आयुक्त* बनाम *बी एंड सी कंपनी*, ए 1970 एस सी 169 ।

33. *मूर्ति* बनाम *चित्तूर का कलक्टर*, ए 1965 एस सी 177 (*180*) ।

34. *अनंत मिल्स* बनाम *गुजरात राज्य*, ए 1975 एस.सी 1234 (पैरा 44, 47) ।

35. *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *हिंदुस्तान मशीन टूल्स*, ए 1975 एस.सी. 2037 (पैरा 13-14) ।

36. *द्वितीय दान-कर अधिकारी* बनाम *हजरत*, ए 1970 एस.सी. 999 ।

37. *भारत संघ* बनाम *ढिल्लों*, (1971) 2 एस.सी.सी. 779 (*807*); *सुधीर* बनाम *धन-कर अधिकारी*, ए. 1969 एस.सी. 59 ।

38. *आंध्र प्रदेश सरकार* बनाम *हिंदुस्तान मशीन टूल्स*, ए 1975 एस.सी. 2037 (पैरा 22) ।

विधान मंडल वन-कर लगा सकता है[39] या पुल-कर[40-41] या जल-कर[42] या भूमि उपकर[43] लगा सकता है ।

कराधान का आधार लिकर का उत्पादन या विनिर्माण होना चाहिए, यदि ऐसा नहीं होगा तो उस उद्ग्रहण को उत्पाद-शुल्क नहीं कहा जा सकता । कुछ दुकानों से ताड़ी बेचने के विशेषाधिकार के लिए जो शुल्क उद्गृहीत किया जाता है उसे इस प्रविष्टि के अधीन उत्पाद-शुल्क नहीं माना जाएगा ।[44] जिन पेड़ों से ताड़ी का उत्पादन होता है उस पर लगाए गए कर या उपकर को भी उत्पाद-शुल्क कहना उचित नहीं होगा ।[45]

प्रतिशुल्क — 1. इस प्रविष्टि से विधान मंडल को निम्नलिखित शक्ति मिलती है, —

(क) एल्कोहाली लिकर पर उत्पाद-शुल्क अधिरोपित करने की शक्ति जहां ऐसे माल राज्य में विनिर्मित हैं,

(ख) भारत में अन्यत्र विनिर्मित वैसे ही माल पर उसी दर या निम्नतर दर से प्रतिशुल्क उद्गृहीत करने की शक्ति ।

2 प्रतिशुल्क का उद्देश्य राज्य के बाहर से आयातित एल्कोहाली लिकर पर पड़ने वाले भार और राज्य में उत्पादित एल्कोहाली लिकर पर पडने वाले उत्पाद-शुल्क के भार को बराबर करना है । लिकर पर प्रतिशुल्क तभी लगाया जा सकता है जब उस प्रकार के माल कर लगाने वाले राज्य में वास्तव में विनिर्मित या उत्पादित होते हैं ।[46]

3 इस उपबंध का अपवाद ऐसा शुल्क है जो संविधान के प्रारंभ के पहले से विद्यमान था और राज्य के बाहर से लाए गए माल पर लगाया जाता था और जो अनुच्छेद 372 के आधार पर चालू हैं । किंतु यदि संविधान के प्रारंभ के पश्चात् विद्यमान शुल्क को बढ़ाया जाता है तो यह संरक्षण समाप्त हो जाएगा ।[46]

खंड (क) — यह आवश्यक नहीं है कि लिकर का उपभोग उसी राज्य में किया जाए जो उत्पाद-शुल्क अधिरोपित करता है ।[47]

खंड (ख) : स्वापक पदार्थ — स्वापक पदार्थों के बारे में विधान बनाने की शक्ति सूची 3 की प्रविष्टि 19 के अधीन समवर्ती विषय है किंतु यदि कोई पदार्थ स्वापक पदार्थ है तो राज्य विधान मंडल को उस पर उत्पाद-शुल्क अधिरोपित करने की अनन्य शक्ति है ।[48]

52. **किसी स्थानीय क्षेत्र में उपभोग, प्रयोग या विक्रय के लिए माल के प्रवेश पर कर ।**

53. **विद्युत के उपभोग या विक्रय पर कर ।**

[48क] *54. सूची 1 की प्रविष्टि 92क के उपबधों के अधीन रहते हुए समाचारपत्रों से भिन्न माल के क्रय या विक्रय पर कर ।*

अनुच्छेद 54 का प्रविषय — इस प्रविष्टि में अनुच्छेद 286 में अधिकथित शर्तों के

39 *सुधीर* बनाम *धन-कर अधिकारी*, ए. 1969 एस.सी. 59 (*62*) ।
40 *मूर्ति* बनाम *चित्तूर का कलक्टर*, ए. 1965 एस.सी. 177 (*182*) ।
41 *लेवनथल* बनाम *डेविड*, ए. 1930 पी.सी. 129 (*132*) ।
42 *रजा बुलंद शुगर कंपनी* बनाम *रामपुर नगरपालिका*, ए. 1962 इला. 83 ।
43. *रवि वर्मा* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1964 केरल 31 ।
44. शिंदे ब्रदर्स, ए. 1967 एस.सी. 1512 (*1521*) ।
45. *मैसूर राज्य* बनाम *कावसजी*, (1970) 3 एस.सी.सी. 710 (*714*) ।
46. *कल्याणी स्टोर्स* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 1686 (*1690*) ।
47. *एम.एम. ब्रूवरीज* बनाम *ई. एंड टी. आयुक्त*, ए. 1976 एस.सी. 2020 (पैरा 11) ।
48. *इंडियन सी. एंड पी. वर्क्स* बनाम *आंध्र प्रदेश राज्य*, ए. 1966 एस.सी. 713 (*712*) ।
48क. संविधान (छठा संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।

अधीन रहते हुए[49] या संविधान के किसी अन्य उपबंध के अधीन रहते हुए विक्रय पर कर लगाने की शक्ति दी गई है ।

इस प्रविष्टि के अधीन कर लगाने की शक्तियों का प्रयोग तभी किया जा सकता है जब साधारण विधि के अनुसार कोई विक्रय हुआ हो[50-52] अन्यथा वह कर शक्ति बाह्य हो जाएगा ।[50]

राज्य का विधान मंडल विक्रय की परिभाषा को बढ़ाकर उसके अंतर्गत ऐसे संव्यवहार को विक्रय कर के अंतर्गत ला सकता है जो संविदा विधि के अधीन विक्रय की सुस्थापित कल्पना के अनुसार विक्रय नहीं है[52] या जो माल विक्रय अधिनियम, 1930 के अनुसार विक्रय नहीं है ।[51-53] यदि राज्य विधान मंडल इस प्रकार विक्रय की परिभाषा में वृद्धि करने का प्रयास करता है तो वह शक्ति बाह्य होगा ।[54-55] राज्य विधान मंडल यह उपबंध नहीं कर सकता कि ऐसी रकम जो गलत रूप से संगृहीत की गई थी या जो माल के क्रय या विक्रय पर कर नहीं था या जो विधि के अधीन संदेय कर के आधिक्य में था वह भी ऐसे कर के रूप में संगृहीत किया जाए ।[55-56]

किंतु —

(क) जहां उचित अर्थ में विक्रय हुआ है वहां विधान मंडल उस विक्रय के स्थान की बाबत विधान बना सकता है यदि अन्य प्रकार से वह उसकी अधिकारिता में है ।[57]

(ख) इस प्रविष्टि के अधीन खडे हुए पेड़ों को काटने के करार पर कर नहीं लगाया जा सकता किंतु खड़े हुए पेड़ो के क्रय पर, जिनके काटने का करार किया गया है, लगाया गया कर इस प्रविष्टि के अधीन उचित होगा ।[58]

अनुषंगी शक्तियां — यह प्रविष्टि निम्नलिखित के बारे में विधान बनाने की शक्ति देती है, —

(i) अनुचित रूप से और अवैध रूप से संगृहीत कर को अनिवार्य रूप से लौटाने के लिए[59] या उसके अधिहरण के लिए ।[60]

(ii) ऐसे कर की वसूली के लिए किसी कल्पना के सृजन के लिए जो अन्यथा विधिमान्य है । जैसे, किसी अरजिस्ट्रीकृत व्यौहारी को रजिस्ट्रीकृत व्यौहारी मानना[61] या नीलामीकर्ता को व्यौहारी मानना ।[62]

49 *त्रावनकोर कोचीन राज्य* बनाम *कैश्यूनट फैक्टरी*, ए 1953 एस सी 333 ।

50 *जे के जूट मिल्स* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1961 एस सी 1534 (*1539*) ।

51 *मद्रास राज्य* बनाम *डकरले*, ए 1958 एस सी 560 (*567, 570, 577*) ।

52. *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *बुध प्रकाश*, ए 1954 एस सी. 459 ।

53. *जार्ज ओक्स* बनाम *मद्रास राज्य*, ए 1962 एस सी 1037 (*1040*); *महाराष्ट्र राज्य* बनाम *मोहता*, (1970) 1 एस सी सी 611 ।

54 *भोपाल शुगर इंडस्ट्रीज* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए 1964 एस.सी 1037 (*1039*); *उप वाणिज्य-कर अधिकारी* बनाम *एनफील्ड*, ए. 1968 एस सी. 838 (*841*) ।

55 *अब्दुल कादिर* बनाम *विक्रय-कर अधिकारी*, ए. 1964 एस.सी. 922 (*924*) ।

56. *अशोक मार्केटिंग* बनाम *बिहार राज्य*, ए. 971 एस.सी. 946; *विक्रय-कर अधिकारी* बनाम *टाटा आयल मिल्स*, ए. 1975 एस सी 1991 (पैरा 8. 11) ।

57. *टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी* बनाम *बिहार राज्य*, (1958) एस.सी.आर. 1355 ।

58. *उड़ीसा राज्य* बनाम *टी.पी.एम.*, ए. 1985 एस.सी. 1293 (पैरा 54-58, 127) ।

59. *बर्मा कंस्ट्रक्शन कंपनी* बनाम *उड़ीसा राज्य*, ए 1962 एस.सी. 1320 (*1322*) ।

60. *अशोक मार्केटिंग* बनाम *बिहार राज्य*, (1970) एस सी.सी. 354 (*361*) ।

61. *पपय्या* बनाम *उत्पाद-शुल्क आयुक्त*, ए 1975 एस.सी. 1006 (पैरा 26-27) ।

62. *सी.एस. ब्यूरो* बनाम *आय-कर आयुक्त*, ए. 1974 एस.सी. 376 (पैरा 10) ।

(iii) किसी व्यौहारी द्वारा विक्रय-कर के रूप में दोषपूर्ण रीति से वसूल की गई रकम के वितरण के लिए ।[63]

(iv) कर के अपवचन को रोकने के लिए ।[64]

किंतु अनुषंगी शक्ति में, निम्नलिखित नहीं आते, —

(i) कोई रकम जिसका संग्रह भूल से या अन्यथा किया गया है माल के क्रय या विक्रय पर कर नहीं है फिर भी उसे इस प्रकार संगृहीत किया जाएगा मानो वह ऐसा कर हो ।[55]

(ii) किसी यान में वहन किए गए माल के अधिहरण की शक्ति ।[65]

55. समाचारपत्रों में प्रकाशित [66]*और रेडियो या दूरदर्शन द्वारा प्रसारित विज्ञापनों* **से भिन्न विज्ञापनों पर कर ।**

56. सड़कों या अंतर्देशीय जलमार्गों द्वारा ले जाए जाने वाले माल और यात्रियों पर कर ।

माल और यात्रियों पर कर — 1 यदि माल या यात्रियों पर कर है तो वह इसलिए अविधिमान्य नहीं होगा कि वह संचालकों द्वारा संगृहीत किया जाता है और संचालक उसे किराए के साथ वसूल करते है ।[67] उसे भूतलक्षी प्रभाव से वसूल किया जा सकता है शर्त यह है कि भूतलक्षी प्रभाव से विधिमान्य करने वाली विधि मूल विधान की प्रकृति में परिवर्तन न करे ।[68]

57. सूची 3 की प्रविष्टि 35 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, सड़कों पर उपयोग के योग्य यानों पर कर, चाहे वे यंत्र नोदित हों या नहीं, जिनके अंतर्गत ट्रामकार हैं ।

58. जीवजंतुओं और नौकाओं पर कर ।

59. पथकर ।

60. वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजन पर कर ।

61. प्रतिव्यक्ति कर ।

62 विलास वस्तुओं पर कर, जिसके अंतर्गत मनोरंजन, आमोद, दांव और द्यूत पर कर हैं ।

63. स्टांप-शुल्क की दरों के संबंध में सूची 1 के उपबंधों में विनिर्दिष्ट दस्तावेजों से भिन्न दस्तावेजों के संबंध मे स्टांप-शुल्क की दर ।

64. इस सूची के विषयों में से किसी विषय से संबंधित विधियों के विरुद्ध अपराध ।

65. उच्चतम न्यायालय से भिन्न सभी न्यायालयों को इस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में अधिकारिता और शक्तियां ।

63 *कस्तूरी* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1987 एस.सी 27 (पैरा 4) सी.बी.; *जोशी* बनाम *अजीत मिल्स*, ए. 1977 एस.सी 2279, *उडीसा राज्य* बनाम *उडीसा सीमेंट*, ए. 1986 एस.सी 178 ।

64 *सोढी ट्रांसपोर्ट* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए 1986 एस.सी 1099 (पैरा 9) ।

65 *चेक पोस्ट अधिकारी* बनाम *अब्दुल्ला*, (1970) 3 एस.सी.सी 355 (*358*) ।

66 संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) अंत:स्थापित ।

67 *कार्तिकेयन* बनाम *केरल राज्य*, ए. 1974 एस.सी 436 (पैरा 43, 45); *श्रीकातय्या* बनाम *क्षेत्रीय परिवहन प्राधिकारी*, ए. 1971 एस.सी 1705 ।

68 *रामकृष्ण* बनाम *बिहार राज्य*, ए 1963 एस.सी. 1667 ।

66. इस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में फीस, किंतु इसके अंतर्गत किसी न्यायालय में ली जाने वाली फीस नहीं है ।

फीस — यदि कोई उद्ग्रहण उसका सही-सही अर्थान्वयन करने पर फीस नहीं बल्कि कर है तो वह इस प्रविष्टि के शक्ति बाह्य होगा और विखंडित किया जा सकेगा ।[69]

सूची 3 — समवर्ती सूची

1. दंड विधि जिसके अंतर्गत ऐसे सभी विषय हैं जो इस संविधान के प्रारंभ पर भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आते हैं, किंतु इसके अंतर्गत सूची 1 या सूची 2 में विनिर्दिष्ट विषयों में से किसी विषय से संबंधित विधियों के विरुद्ध अपराध और सिविल शक्ति की सहायता के लिए नौसेना, सेना या वायुसेना अथवा संघ के किसी अन्य सशस्त्र बल का प्रयोग नहीं है ।

2. दंड प्रक्रिया जिसके अंतर्गत ऐसे सभी विषय हैं जो इस संविधान के प्रारंभ पर दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत हैं ।

3. किसी राज्य की सुरक्षा, लोक व्यवस्था बनाए रखने या समुदाय के लिए आवश्यक प्रदायों और सेवाओं को बनाए रखने संबंधी कारणों से निवारक निरोध; इस प्रकार निरोध में रखे गए व्यक्ति ।

4. बंदियों, अभियुक्त व्यक्तियों और इस सूची की प्रविष्टि 3 में विनिर्दिष्ट कारणों से निवारक निरोध में रखे गए व्यक्तियों का एक राज्य से दूसरे राज्य को हटाया जाना ।

5. विवाह और विवाह-विच्छेद; शिशु और अवयस्क; दत्तक-ग्रहण, विल, निर्वसीयतता और उत्तराधिकार; अविभक्त कुटुंब और विभाजन, वे सभी विषय जिनके संबंध में न्यायिक कार्यवाहियों में पक्षकार इस संविधान के प्रारंभ से ठीक पहले अपनी स्वीय विधि के अधीन थे ।

6. कृषि भूमि से भिन्न संपत्ति का अंतरण; विलेखों और दस्तावेजों का रजिस्ट्रीकरण ।

7. संविदाएं जिनके अंतर्गत भागीदारी, अभिकरण, वहन की संविदाएं और अन्य विशेष प्रकार की संविदाएं हैं, किंतु कृषि भूमि संबंधी संविदाएं नहीं हैं ।

8. अनुयोज्य दोष ।

9. शोधन अक्षमता और दिवाला ।

10. न्यास और न्यासी ।

11. महाप्रशासक और शासकीय न्यासी ।

[70]*11क. न्याय प्रशासन; उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों से भिन्न न्यायालयों का गठन और संगठन ।*

न्याय प्रशासन — इस व्यापक अभिव्यक्ति के अंतर्गत (i) सिविल या दांडिक प्रकृति के वाद और कार्यवाहियों का विचारण करने की, और (ii) न्यायालयों की अधिकारिता निश्चित करने की शक्ति है ।[71]

69 *ओम प्रकाश* बनाम *गिरि*, ए. 1986 एस.सी. 726 (पैरा 7, 11) ।

70. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) अंतःस्थापित ।

71. *मुंबई राज्य* बनाम *नरोत्तम*, ए. 1951 एस.सी. 69; *इंदु* बनाम *पश्चिमी बंगाल राज्य*, ए. 1986 एस.सी. 1783 (पैरा 3) ।

न्यायालयों का गठन — इस प्रविष्टि के कारण संसद् को विशेष वर्ग के अपराधों के विचारण के लिए विशेष न्यायालय स्थापित करने की समवर्ती शक्ति है ।[72]

12. **साक्ष्य और शपथ; विधियों, लोक कार्यों और अभिलेखों और न्यायिक कार्यवाहियों को मान्यता ।**

13. **सिविल प्रक्रिया जिसके अंतर्गत ऐसे सभी विषय हैं जो इस संविधान के प्रारंभ पर सिविल प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आते हैं, परिसीमा और माध्यस्थम् ।**

14. **न्यायालय का अवमान, किंतु इसके अंतर्गत उच्चतम न्यायालय का अवमान नहीं है ।**

15. **आहिंडन; यायावरी और प्रव्राजी जनजातियां ।**

16. **पागलपन और मनोवैकल्य, जिसके अंतर्गत पागलों और मनोविकल व्यक्तियों को ग्रहण करने या उनका उपचार करने के स्थान हैं ।**

17. **पशुओं के प्रति क्रूरता का निवारण ।**

[73]*17क. वन ।*

[73]*17ख. वन्य जीवजंतुओ और पक्षियों का सरक्षण ।*

18. **खाद्य पदार्थों और अन्य माल का अपमिश्रण ।**

19. **अफीम के संबंध में सूची 1 की प्रविष्टि 59 के उपबंधों के अधीन रहते हुए मादक द्रव्य और विष ।**

20. **आर्थिक और सामाजिक योजना ।**

[73]*20क जनसंख्या नियत्रण और परिवार नियोजन ।*

21. **वाणिज्यिक और औद्योगिक एकाधिकार, गुट और न्यास ।**

प्रविष्टि 21 का प्रविषय — इसके अंतर्गत एकाधिकार का सृजन करने की और उसका नियंत्रण करने की दोनो ही प्रकार की शक्तियां हैं ।[74]

22. **व्यापार संघ; औद्योगिक और श्रम विवाद ।**

23. **सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक बीमा; नियोजन और बेकारी ।**

24. **श्रमिकों का कल्याण जिसके अंतर्गत कार्य की दशाएं, भविष्य निधि, नियोजक का दायित्व, कर्मकार प्रतिकर, अशक्तता और वार्धक्य पेंशन तथा प्रसूति सुविधाएं हैं ।**

प्रविष्टि 22-24 — ये प्रविष्टियां विधान मंडल को श्रमिकों के कल्याण के लिए व्यापक शक्तियां देती हैं । ये उद्योग के विनियमन से भिन्न है जो सूची 1 की प्रविष्टि 52 और सूची 2 की प्रविष्टि 24 में आता है ।[75]

---

72. विशेष न्यायालय विधेयक, 1978, ए. 1979 एस.सी. 478 (पैरा 44) के मामले में ।
73. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) अंतःस्थापित ।
74. *नारायणप्पा बनाम मैसूर राज्य*, ए 1960 एस.सी. 1073 (*1078*) ।
75. *एम.जी. बीडी वर्क्स बनाम भारत संघ*, ए 1974 एस.सी 1832 (पैरा 25, 28) ।

श्रमिकों के कल्याण के अंतर्गत उद्योग में नियोजन की शर्तों का विनियमन आएगा। इसमें मजदूरी, छुट्टी, भविष्य निधि, कर्मकार प्रतिकर, वार्द्धक्य पेंशन, प्रसूति प्रसुविधा, काम की दशाएं, सुरक्षा की व्यवस्था आदि भी हैं।[75] यह उपबंध और उनके अधीन बनाई गई विधियां अल्पसंख्यक संस्थाओं को भी लागू होती हैं। इनसे अनुच्छेद 30 का उल्लंघन नहीं होता।[75क]

[76]25. सूची 1 की प्रविष्टि 63, 64, 65 और 66 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, शिक्षा जिसके अंतर्गत तकनीकी शिक्षा, आयुर्विज्ञान शिक्षा और विश्वविद्यालय हैं, श्रमिकों का व्यावसायिक और तकनीकी प्रशिक्षण।

26. **विधि वृत्ति, चिकित्सा वृत्ति और अन्य वृत्तियां।**

सूची 3 की प्रविष्टि 26 और सूची 1 की प्रविष्टि 77-78 — उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के समक्ष विधि व्यवसाय के हकदार व्यक्तियों के बारे में विधान बनाने की शक्ति सूची 1 की प्रविष्टि 77-78 के अधीन अनन्य रूप से संसद् को है। अन्य न्यायालयों के समक्ष विधि व्यवसाय करने के बारे मे यह प्रविष्टि है।[77]

27. **भारत और पाकिस्तान डोमिनियनों के स्थापित होने के कारण अपने मूल निवास-स्थान से विस्थापित व्यक्तियों की सहायता और पुनर्वास।**

28. **पूर्त कार्य और पूर्त संस्थाएं, पूर्त और धार्मिक विन्यास और धार्मिक संस्थाएं।**

29. **मानवों, जीवजंतुओं या पौधों पर प्रभाव डालने वाले संक्रामक या सांसर्गिक रोगों अथवा नाशकजीवों के एक राज्य से दूसरे राज्य में फैलने का निवारण।**

30. **जन्म-मरण सांख्यिकी, जिसके अंतर्गत जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण है।**

31. **संसद् द्वारा बनाई गई विधि या विद्यमान विधि द्वारा या उसके अधीन महापत्तन घोषित पत्तनों से भिन्न पत्तन।**

32. **राष्ट्रीय जलमार्गों के संबंध में सूची 1 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, अंतर्देशीय जलमार्गों पर यंत्र नोदित जलयानों के संबंध में पोतपरिवहन और नौपरिवहन तथा ऐसे जलमार्गों पर मार्ग का नियम और अंतर्देशीय जलमार्गों द्वारा यात्रियों और माल का वहन।**

[78]33. (क) जहां संसद् द्वारा विधि द्वारा किसी उद्योग का संघ द्वारा नियंत्रण लोकहित में समीचीन घोषित किया जाता है वहां उस उद्योग के उत्पादों का और उसी प्रकार के आयात किए गए माल का ऐसे उत्पादों के रूप में,

(ख) खाद्य पदार्थों का जिनके अंतर्गत खाद्य तिलहन और तेल हैं,

(ग) पशुओं के चारे का जिसके अंतर्गत खली और अन्य सारकृत चारे हैं,

(घ) कच्ची कपास का, चाहे वह ओटी हुई हो या बिना ओटी हो, और बिनौले का, और

(ङ) कच्चे जूट का,

व्यापार और वाणिज्य तथा उनका उत्पादन, प्रदाय और वितरण।

75क. *सी.एम.सी.एच यूनियन* बनाम *सी.एम कालेज*, ए. 1988 एस.सी 37।

76. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) प्रतिस्थापित।

77. *बार काउंसिल* बनाम *उत्तर प्रदेश राज्य*, ए. 1974 एस.सी 231, *मोहिन्दू* बनाम *बार काउंसिल*, ए 1968 एस.सी. 888।

78. संविधान (तीसरा संशोधन) अधिनियम, 1954 द्वारा प्रतिस्थापित।

[79]33क. बाट और माप, जिनके अंतर्गत मानकों का नियत किया जाना नहीं है ।

34. कीमत नियंत्रण ।

35. यंत्र नोदित यान जिसके अंतर्गत वे सिद्धांत हैं जिनके अनुसार ऐसे यानों पर कर उद्गृहीत किया जाना है ।

36. कारखाने ।

37. बायलर ।

38. विद्युत ।

39. समाचारपत्र, पुस्तकें और मुद्रणालय ।

40. *[80]संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन* **राष्ट्रीय महत्व के** *[80]घोषित* **पुरातत्वीय स्थलों और अवशेषों से भिन्न पुरातत्वीय स्थल और अवशेष ।**

41. ऐसी संपत्ति की (जिसके अंतर्गत कृषि भूमि है) अभिरक्षा, प्रबंध और व्ययन जो विधि द्वारा निष्क्रांत संपत्ति घोषित की जाए ।[81]

42. संपत्ति का अर्जन और अधिग्रहण ।[80]

अर्जन और अधिग्रहण — राज्य परिवहन उपक्रम को प्राइवेट सड़क परिवहन उपक्रमों का अर्जन करने की शक्ति प्रदान करना इस प्रविष्टि के अंतर्गत आएगा चाहे उसका आनुषंगिक संबंध सूची 1 की प्रविष्टि 43 से हो ।[82]

43. किसी राज्य में, उस राज्य से बाहर उद्भूत कर से संबंधित दावों और अन्य लोक मांगों की वसूली जिनके अंतर्गत भू-राजस्व की बकाया और ऐसी बकाया के रूप में वसूल की जा सकने वाली राशियां हैं ।

44. न्यायिक स्टांपों के द्वारा संगृहीत शुल्कों या फीसों से भिन्न स्टांप-शुल्क, किंतु इसके अंतर्गत स्टांप-शुल्क की दरें नहीं हैं ।

45. सूची 2 या सूची 3 में विनिर्दिष्ट विषयों में से किसी विषय के प्रयोजनों के लिए जांच और आंकड़े ।

46. उच्चतम न्यायालय से भिन्न सभी न्यायालयों की इस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में अधिकारिता और शक्तियां ।

47. इस सूची के विषयों में से किसी विषय के संबंध में फीस, किंतु इसके अंतर्गत किसी न्यायालय में ली जाने वाली फीस नहीं है ।

79. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा (3-1-1977 से) अंतःस्थापित ।
80. संविधान (सातवां संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा प्रतिस्थापित ।
81. *ग्राम पंचायत* बनाम *मलविन्द्र*, ए. 1985 एस.सी. 1394 (पैरा 9-14) ।
82. *सीता राम* बनाम *राजस्थान राज्य*, ए. 1974 एस.सी 1373 (पैरा 16)

आठवीं अनुसूची

[अनुच्छेद 344(1) और अनुच्छेद 351]

भाषाएं

1. असमिया ।
2. बंगला ।
3. गुजराती ।
4. हिंदी ।
5. कन्नड़ ।
6. कश्मीरी ।
7. मलयालम ।
8. मराठी ।
9. उड़िया ।
10. पंजाबी ।
11. संस्कृत ।

[1]12. *सिंधी ।*

[2]13. तमिल ।

[2]14. तेलुगू ।

[2]15. उर्दू ।

---

1. संविधान (इक्कीसवां संशोधन) अधिनियम, 1967 की धारा 2 द्वारा जोड़ा गया ।

2. संविधान (इक्कीसवां संशोधन) अधिनियम, 1967 की धारा 2 द्वारा प्रविष्टि 12 से 14 तक को प्रविष्टि 13 से 15 तक के रूप में पुनःसंख्यांकित किया गया ।

[1]नवीं अनुसूची

[अनुच्छेद 31ख]

कुछ अधिनियमों और विनियमों का विधिमान्यकरण

1. **बिहार भूमि सुधार अधिनियम,** 1950 (1950 **का बिहार अधिनियम सं.** 30) ।

2. **मुंबई अभिधृति और कृषि भूमि अधिनियम,** 1948 (1948 **का मुंबई अधिनियम** 67) ।

3. **मुंबई मालिकी भूधृति उत्सादन अधिनियम,** 1949 (1949 **का मुंबई अधिनियम** 61) ।

4. **मुंबई तालुकदारी भूधृति उत्सादन अधिनियम,** 1949 (1949 **का मुंबई अधिनियम** 62) ।

5. **पंच महल मेहवासी भूधृति उत्सादन अधिनियम,** 1949 (1949 **का मुंबई अधिनियम** 63)

6. **मुंबई खोती उत्सादन अधिनियम,** 1950 (1950 **का मुंबई अधिनियम** 6) ।

7. **मुंबई परगना और कुलकर्णी वतन उत्सादन अधिनियम,** 1950 (1950 **का मुंबई अधिनियम** 60) ।

8. **मध्य प्रदेश सांपत्तिक अधिकार (संपदा, महल, अन्यसंक्रांत भूमि) उत्सादन अधिनियम,** 1950 **(मध्य प्रदेश अधिनियम क्रमांक** 1 सन् 1951) ।

9. **मद्रास संपदा (उत्सादन और रैय्यतवाड़ी में संपरिवर्तन) अधिनियम,** 1948 (1948 **का मद्रास अधिनियम** 26) ।

10. **मद्रास संपदा (उत्सादन और रैय्यतवाड़ी में संपरिवर्तन) संशोधन अधिनियम,** 1950 (1950 **का मद्रास अधिनियम** 1) ।

11. 1950 **ई. का उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि-व्यवस्था अधिनियम (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या** 1, 1951) ।

12. **हैदराबाद (जागीर उत्सादन) विनियम,** 1358फ (1358 **फसली का सं.** 69) ।

13. **हैदराबाद जागीर (परिवर्तन) विनियम,** 1359फ (1359 **फसली का सं.** 25) ।

[2][*14. बिहार विस्थापित व्यक्ति पुनर्वास (भूमि अर्जन) अधिनियम, 1950 (1950 का बिहार अधिनियम सं. 38) ।*

15. संयुक्त प्रांत के शरणार्थियों को बसाने के लिए भूमि प्राप्त करने का ऐक्ट, 1948 ई. (संयुक्त प्रांतीय ऐक्ट संख्या 26, 1948) ।

16. विस्थापित व्यक्ति पुनर्वास (भूमि अर्जन) अधिनियम, 1948 (1948 का अधिनियम 60)।

1. संविधान (पहला संशोधन) अधिनियम, 1951 द्वारा नवीं अनुसूची जोड़ी गई ।
2. संविधान (चौथा संशोधन) अधिनियम, 1955 द्वारा प्रविष्टि 14-20 जोड़ी गईं ।

17. बीमा (संशोधन) अधिनियम, 1950 (1950 का अधिनियम 47) की धारा 42 द्वारा यथा अंतःस्थापित बीमा अधिनियम, 1938 (1938 का अधिनियम 4) की धारा 52क से धारा 52छ ।

18. रेल कंपनी (आपात उपबंध) अधिनियम, 1951 (1951 का अधिनियम 51) ।

19. उद्योग (विकास और विनियमन) संशोधन अधिनियम, 1953 (1953 का अधिनियम 26) की धारा 13 द्वारा यथा अंतःस्थापित उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 (1951 का अधिनियम 65) का अध्याय 3क ।

20. 1951 के पश्चिमी बंगाल अधिनियम 29 द्वारा यथा संशोधित पश्चिमी बंगाल भूमि विकास और योजना अधिनियम, 1948 (1948 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 21) ।

[3][21. आंध्र प्रदेश अधिकतम कृषि जोत सीमा अधिनियम, 1961 (1961 का आंध्र प्रदेश अधिनियम 10) ।

22. आंध्र प्रदेश (तेलंगाना क्षेत्र) अभिधृति और कृषि भूमि (विधिमान्यकरण) अधिनियम, 1961 (1961 का आंध्र प्रदेश अधिनियम 21) ।

23. आंध्र प्रदेश (तेलंगाना क्षेत्र) इजारा और कौली भूमि अनियमित पट्टा रद्दकरण और रियायती निर्धारण उत्सादन अधिनियम, 1961 (1961 का आंध्र प्रदेश अधिनियम 36) ।

24. असम राज्य लोक प्रकृति की धार्मिक या पूर्त संस्था भूमि अर्जन अधिनियम, 1959 (1961 का असम अधिनियम 9) ।

25. बिहार भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1953 (1954 का बिहार अधिनियम सं. 20) ।

26. बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा निर्धारण और अधिशेष भूमि अर्जन) अधिनियम, 1961 (1962 का बिहार अधिनियम सं. 12) (जिसके अंतर्गत इस अधिनियम की धारा 28 नहीं है) ।

27. मुंबई तालुकदारी भूधृति उत्सादन (संशोधन) अधिनियम, 1954 (1955 का मुंबई अधिनियम 1) ।

28. मुंबई तालुकदारी भूधृति उत्सादन (संशोधन) अधिनियम, 1957 (1958 का मुंबई अधिनियम 18) ।

29. मुंबई इनाम (कच्छ क्षेत्र) उत्सादन अधिनियम, 1958 (1958 का मुंबई अधिनियम 98) ।

30. मुंबई अभिधृति और कृषि भूमि (गुजरात संशोधन) अधिनियम, 1960 (1960 का गुजरात अधिनियम 16) ।

31. गुजरात कृषि भूमि अधिकतम सीमा अधिनियम, 1960 (1961 का गुजरात अधिनियम 26) ।

---

3. संविधान (सत्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1964 द्वारा प्रविष्टि 21-64 जोड़ी गई ।

32. सगबारा और मेहवासी संपदा (सांपत्तिक अधिकार उत्सादन, आदि) विनियम, 1962 (1962 का गुजरात विनियम 1) ।

33. गुजरात शेष अन्यसंक्रामण उत्सादन अधिनियम, 1963 (1963 का गुजरात अधिनियम 33), वहां तक के सिवाय जहां तक यह अधिनियम इसकी धारा 2 के खंड (3) के उपखंड (घ) में निर्दिष्ट अन्यसंक्रामण के संबंध में है ।

34. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) अधिनियम, 1961 (1961 का महाराष्ट्र अधिनियम 27) ।

35. हैदराबाद अभिधृति और कृषि भूमि (पुनः अधिनियमन, विधिमान्यकरण और अतिरिक्त संशोधन) अधिनियम, 1961 (1961 का महाराष्ट्र अधिनियम 45) ।

36. हैदराबाद अभिधृति और कृषि भूमि अधिनियम, 1950 (1950 का अधिनियम 21)।

37. जन्मीकरम संदाय न) अधिनियम, 1960 (1961 का केरल अधिनियम 3) ।

38. केरल भूमि-कर अधिनियम, 1961 (1961 का केरल अधिनियम 13) ।

39. केरल भूमि सुधार अधिनियम, 1963 (1964 का केरल अधिनियम 1) ।

40. मध्य प्रदेश भू-राजस्व संहिता, 1959 (मध्य प्रदेश अधिनियम, क्रमांक 20 सन् 1959) ।

41. मध्य प्रदेश कृषिक जोत सीमा अधिनियम, 1960 (मध्य प्रदेश अधिनियम, क्रमांक 20 सन् 1960) ।

42 मद्रास खेतिहर अभिधारी संरक्षण अधिनियम, 1955 (1955 का मद्रास अधिनियम 25) ।

43. मद्रास खेतिहर अभिधारी (उचित लगान संदाय) अधिनियम, 1956 (1956 का मद्रास अधिनियम 24) ।

44. मद्रास अधिभोगी (बेदखली से संरक्षण) अधिनियम, 1961 (1961 का मद्रास अधिनियम 38) ।

45. मद्रास लोक न्यास (कृषि भूमि प्रशासन विनियमन) अधिनियम, 1961 (1961 का मद्रास अधिनियम 57) ।

46. मद्रास भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) अधिनियम, 1961 (1961 का मद्रास अधिनियम 58) ।

47. मैसूर अभिधृति अधिनियम, 1952 (1952 का मैसूर अधिनियम 13) ।

48. कोड़गू अभिधारी अधिनियम, 1957 (1957 का मैसूर अधिनियम 14) ।

49. मैसूर ग्राम-पद उत्सादन अधिनियम, 1961 (1961 का मैसूर अधिनियम 14) ।

50. हैदराबाद अभिधृति और कृषि भूमि (विधिमान्यकरण) अधिनियम, 1961 (1961 का मैसूर अधिनियम 36) ।

51. मैसूर भूमि सुधार अधिनियम, 1961 (1962 का मैसूर अधिनियम 10) ।

52. उड़ीसा भूमि सुधार अधिनियम, 1960 (1960 का उड़ीसा अधिनियम 16) ।

53. उड़ीसा विलीन राज्यक्षेत्र (ग्राम-पद उत्सादन) अधिनियम, 1963 (1963 का उड़ीसा अधिनियम 10) ।

54. पंजाब भू-धृति सुरक्षा अधिनियम, 1953 (1953 का पंजाब अधिनियम 10) ।

55. राजस्थान अभिधृति अधिनियम, 1955 (1955 का राजस्थान अधिनियम सं. 3) ।

56. राजस्थान जमींदारी और बिस्वेदारी उत्सादन अधिनियम, 1959 (1959 का राजस्थान अधिनियम सं. 8) ।

57. कुमायूं तथा उत्तराखड जमींदारी विनाश तथा भूमि-व्यवस्था अधिनियम, 1960 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 17, 1960) ।

58. उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत-सीमा आरोपण अधिनियम, 1960 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 1, 1961) ।

59. पश्चिमी बंगाल संपदा अर्जन अधिनियम, 1953 (1954 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 1) ।

60. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार अधिनियम, 1955 (1956 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 10)।

61. दिल्ली भूमि सुधार अधिनियम, 1954 (1954 का दिल्ली अधिनियम 8) ।

62. दिल्ली भूमि जोत (अधिकतम सीमा) अधिनियम, 1960 (1960 का केंद्रीय अधिनियम 24) ।

63. मणिपुर भू-राजस्व और भूमि सुधार अधिनियम, 1960 (1960 का केंद्रीय अधिनियम 33) ।

64. त्रिपुरा भू-राजस्व और भूमि सुधार अधिनियम, 1960 (1960 का केंद्रीय अधिनियम 43) ।]

[4][65. केरल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1969 (1969 का केरल अधिनियम 35) ।

66. केरल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1971 (1971 का केरल अधिनियम 25) ।]

4 संविधान (उनतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1972 द्वारा प्रविष्टि 65-66 जोड़ी गई ।

[5][67. आंध्र प्रदेश भूमि सुधार (अधिकतम कृषि जोत सीमा) अधिनियम, 1973 (1973 का आंध्र प्रदेश अधिनियम 1) ।

68. बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा निर्धारण और अधिशेष भूमि अर्जन) (संशोधन) अधिनियम, 1972 (1973 का बिहार अधिनियम सं. 1) ।

69. बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा निर्धारण और अधिशेष भूमि अर्जन) (संशोधन) अधिनियम, 1973 (1973 का बिहार अधिनियम सं. 9) ।

70. बिहार भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1972 (1972 का बिहार अधिनियम सं. 5) ।

71. गुजरात अधिकतम कृषि भूमि सीमा (संशोधन) अधिनियम, 1972 (1974 का गुजरात अधिनियम 2) ।

72. हरियाणा भूमि-जोत की अधिकतम सीमा अधिनियम, 1972 (1972 का हरियाणा अधिनियम 26) ।

73. हिमाचल प्रदेश अधिकतम भूमि जोत सीमा अधिनियम, 1972 (1973 का हिमाचल प्रदेश अधिनियम 19) ।

74. केरल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1972 (1972 का केरल अधिनियम 17) ।

75. मध्य प्रदेश कृषिक जोत उ[illegible] सीमा (सशोधन) अधिनियम, 1972 (मध्य प्रदेश अधिनियम क्रमांक 12 सन् 1974) ।

76. मध्य प्रदेश कृषिक जोत उच्चतम सीमा (द्वितीय सशोधन) अधिनियम, 1972 (मध्य प्रदेश अधिनियम क्रमांक 13 सन् 1974) ।

77. मैसूर भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1973 (1974 का कर्नाटक अधिनियम 1) ।

78. पंजाब भूमि सुधार अधिनियम, 1972 (1973 का पंजाब अधिनियम 10) ।

79. राजस्थान कृषि जोतों पर अधिकतम सीमा अधिरोपण अधिनियम, 1973 (1973 का राजस्थान अधिनियम सं. 11) ।

80. गुडलूर जन्मम् संपदा (उत्सादन और रैय्यतवाड़ी में संपरिवर्तन) अधिनियम, 1969 (1969 का तमिलनाडु अधिनियम 24) ।

81. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1972 (1972 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 12) ।

82. पश्चिमी बंगाल संपदा अर्जन (संशोधन) अधिनियम, 1964 (1964 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 22) ।

5. संविधान (चौंतीसवां संशोधन) अधिनियम, 1974 द्वारा प्रविष्टि 67-86 जोड़ी गईं ।

83. पश्चिमी बंगाल संपदा अर्जन (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1973 (1973 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 33) ।

84. मुंबई अभिधृति और कृषि भूमि (गुजरात संशोधन) अधिनियम, 1972 (1973 का गुजरात अधिनियम 5) ।

85. उड़ीसा भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1974 (1974 का उड़ीसा अधिनियम 9) ।

86. त्रिपुरा भू-राजस्व और भूमि सुधार (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1974 (1974 का त्रिपुरा अधिनियम 7) ।]

[6][[6क]87. * * *

88. उद्योग (विकास और विनियमन) अधिनियम, 1951 (1951 का केंद्रीय अधिनियम 65) ।

89. स्थावर संपत्ति अधिग्रहण और अर्जन अधिनियम, 1952 (1952 का केंद्रीय अधिनियम 30) ।

90. खान और खनिज (विनियमन और विकास) अधिनियम, 1957 (1957 का केंद्रीय अधिनियम 67) ।

91. एकाधिकार तथा अवरोधक व्यापारिक व्यवहार अधिनियम, 1969 (1969 का केंद्रीय अधिनियम 54) ।

[6क]92. * * *

93. कोककारी कोयला खान (आपात उपबंध) अधिनियम, 1971 (1971 का केंद्रीय अधिनियम 64) ।

94. कोककारी कोयला खान (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 (1972 का केंद्रीय अधिनियम 36) ।

95. साधारण बीमा कारबार (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1972 (1972 का केंद्रीय अधिनियम 57) ।

96. इंडियन कॉपर कारपोरेशन (उपक्रम का अर्जन) अधिनियम, 1972 (1972 का केंद्रीय अधिनियम 58) ।

97. रुग्ण कपड़ा उपक्रम (प्रबंध-ग्रहण) अधिनियम, 1972 (1972 का केंद्रीय अधिनियम 72) ।

98. कोयला खान (प्रबंध-ग्रहण) अधिनियम, 1973 (1973 का केंद्रीय अधिनियम 15) ।

---

6. संविधान (उनतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1975 द्वारा 10-8-1975 से प्रविष्टि 87 से 124 जोड़ी गई ।

6क. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 की धारा 44 द्वारा (20-6-1979 से) प्रविष्टि 87 और 92 का लोप किया गया ।

99. कोयला खान (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1973 (1973 का केंद्रीय अधिनियम 26)।

100. विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1973 (1973 का केंद्रीय अधिनियम 46)।

101. एलकाक एशडाउन कंपनी लिमिटेड (उपक्रमों का अर्जन) अधिनियम, 1973 (1973 का केंद्रीय अधिनियम 56)।

102. कोयला खान (संरक्षण और विकास) अधिनियम, 1974 (1974 का केंद्रीय अधिनियम 28)।

103. अतिरिक्त उपलब्धियां (अनिवार्य निक्षेप) अधिनियम, 1974 (1974 का केंद्रीय अधिनियम 37)।

104. विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, 1974 (1974 का केंद्रीय अधिनियम 52)।

105. रुग्ण कपड़ा उपक्रम (राष्ट्रीयकरण) अधिनियम, 1974 (1974 का केंद्रीय अधिनियम 57)।

106. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1964 (1965 का महाराष्ट्र अधिनियम 16)।

107. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1965 (1965 का महाराष्ट्र अधिनियम 32)।

108. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1968 (1968 का महाराष्ट्र अधिनियम 16)।

109. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1968 (1968 का महाराष्ट्र अधिनियम 33)।

110. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1969 (1969 का महाराष्ट्र अधिनियम 37)।

111. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1969 (1969 का महाराष्ट्र अधिनियम 38)।

112. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1970 (1970 का महाराष्ट्र अधिनियम 27)।

113. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1972 (1972 का महाराष्ट्र अधिनियम 13)।

114. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1973 (1973 का महाराष्ट्र अधिनियम 50)।

115. उड़ीसा भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1965 (1965 का उड़ीसा अधिनियम 13)।

116. उड़ीसा भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1966 (1967 का उड़ीसा अधिनियम 8) ।

117. उड़ीसा भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1967 (1967 का उड़ीसा अधिनियम 13) ।

118. उड़ीसा भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1969 (1969 का उड़ीसा अधिनियम 13) ।

119. उड़ीसा भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1970 (1970 का उड़ीसा अधिनियम 18) ।

120. उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत सीमा आरोपण (संशोधन) अधिनियम, 1972 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 18, 1973) ।

121. उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत सीमा आरोपण (संशोधन) अधिनियम, 1974 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 2, 1975) ।

122. त्रिपुरा भू-राजस्व और भूमि सुधार (तीसरा संशोधन) अधिनियम, 1975 (1975 का त्रिपुरा अधिनियम 3) ।

123. दादरा और नागर हवेली भूमि सुधार विनियम, 1971 (1971 का 3) ।

124. दादरा और नागर हवेली भूमि सुधार (संशोधन) विनियम, 1973 (1973 का 5) ।

[7]125. मोटर यान अधिनियम, 1939 (1939 का केंद्रीय अधिनियम 4) की धारा 66क और अध्याय 4क ।

126. आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का केंद्रीय अधिनियम 10) ।

127. तस्कर और विदेशी मुद्रा छलसाधक (संपत्ति समपहरण) अधिनियम, 1976 (1976 का केंद्रीय अधिनियम 13) ।

128. बंधित श्रम पद्धति (उत्सादन) अधिनियम, 1976 (1976 का केंद्रीय अधिनियम 19) ।

129. विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का केंद्रीय अधिनियम 20) ।

[7क]130 * * *

131. लेवी चीनी समान कीमत निधि अधिनियम, 1976 (1976 का केंद्रीय अधिनियम 31) ।

132. नगर-भूमि (अधिकतम सीमा और विनियमन) अधिनियम, 1976 (1976 का केंद्रीय अधिनियम 33) ।

---

7. संविधान (चालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 द्वारा प्रविष्टि 125 से 188 जोड़ी गई ।

7क. संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम 1978 की धारा 44 द्वारा (20-6-1979 से) प्रविष्टि 130 का लोप किया गया ।

133. संघ लेखा विभागीकरण (कार्मिक अंतरण) अधिनियम, 1976 (1976 का केंद्रीय अधिनियम 59) ।

134. असम अधिकतम भूमि जोत सीमा नियतन अधिनियम, 1956 (1957 का असम अधिनियम 1) ।

135. मुंबई अभिधृति और कृषि भूमि (विदर्भ क्षेत्र) अधिनियम, 1958 (1958 का मुंबई अधिनियम 99) ।

136. गुजरात प्राइवेट वन (अर्जन) अधिनियम, 1972 (1973 का गुजरात अधिनियम 14) ।

137. हरियाणा भूमि-जोत की अधिकतम सीमा (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का हरियाणा अधिनियम 17) ।

138. हिमाचल प्रदेश अभिधृति और भूमि सुधार अधिनियम, 1972 (1974 का हिमाचल प्रदेश अधिनियम 8) ।

139. हिमाचल प्रदेश ग्राम शामिलाती भूमि निधान और उपयोजन अधिनियम, 1974 (1974 का हिमाचल प्रदेश अधिनियम 18) ।

140. कर्नाटक भूमि सुधार (दूसरा संशोधन और प्रकीर्ण उपबंध) अधिनियम, 1974 (1974 का कर्नाटक अधिनियम 31) ।

141. कर्नाटक भूमि सुधार (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का कर्नाटक अधिनियम 27) ।

142. केरल बेदखली निवारण अधिनियम, 1966 (1966 का केरल अधिनियम 12) ।

143. तिरुप्पुवारम् संदाय (उत्सादन) अधिनियम, 1969 (1969 का केरल अधिनियम 19) ।

144. श्री पादम् भूमि विमुक्ति अधिनियम, 1969 (1969 का केरल अधिनियम 20) ।

145. श्रीपणडारवका भूमि (निधान और विमुक्ति) अधिनियम, 1971 (1971 का केरल अधिनियम 20) ।

146. केरल प्राइवेट वन (निधान और समनुदेशन) अधिनियम, 1971 (1971 का केरल अधिनियम 26) ।

147. केरल कृषि कर्मकार अधिनियम, 1974 (1974 का केरल अधिनियम 18) ।

148. केरल काजू कारखाना (अर्जन) अधिनियम, 1974 (1974 का केरल अधिनियम 29) ।

149. केरल चिट्टी अधिनियम, 1975 (1975 का केरल अधिनियम 23) ।

150. केरल अनुसूचित जनजाति (भूमि के अंतरण पर निर्बन्धन और अन्य-संक्रांत भूमि का प्रत्यावर्तन) अधिनियम, 1975 (1975 का केरल अधिनियम 31) ।

151. केरल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का केरल अधिनियम 15) ।

152. काणम् अभिधृति उत्सादन अधिनियम, 1976 (1976 का केरल अधिनियम 16) ।

153. मध्य प्रदेश कृषिक जोत उच्चतम सीमा (संशोधन) अधिनियम, 1974 (मध्य पदेश अधिनियम क्रमांक 20 सन् 1974) ।

154. मध्य प्रदेश कृषिक जोत उच्चतम सीमा (संशोधन) अधिनियम, 1975 (मध्य प्रदेश अधिनियम क्रमांक 2 सन् 1976) ।

155 पश्चिमी खानदेश मेहवासी संपदा (सांपत्तिक अधिकार उत्सादन, आदि) विनियम, 1961 (1962 का महाराष्ट्र विनियम 1) ।

156. महाराष्ट्र अनुसूचित जनजातियों को भूमि का प्रत्यावर्तन अधिनियम, 1974 (1975 का महाराष्ट्र अधिनियम 14) ।

157. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा घटाना) और (संशोधन) अधिनियम 1972 (1975 का महाराष्ट्र अधिनियम 21) ।

158 महाराष्ट्र प्राइवेट वन (अर्जन) अधिनियम, 1975 (1975 का महाराष्ट्र अधिनियम 29) ।

159. महाराष्ट्र कृषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा घटाना) और (संशोधन) संशोधन अधिनियम, 1975 (1975 का महाराष्ट्र अधिनियम 47) ।

160. महाराष्ट्र कषि भूमि (अधिकतम जोत सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1975 (1976 का महाराष्ट्र अधिनियम 2) ।

161 उडीसा संपदा उत्सादन अधिनियम, 1951 (1952 का उड़ीसा अधिनियम 1) ।

162. राजस्थान उपनिवेशन अधिनियम, 1954 (1954 का राजस्थान अधिनियम सं. 27) ।

163. राजस्थान भूमि सुधार तथा भू-स्वामियों की संपदा का अर्जन अधिनियम, 1963 (1964 का राजस्थान अधिनियम सं. 11) ।

164. राजस्थान कृषि जोतों पर अधिकतम सीमा अधिरोपण (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का राजस्थान अधिनियम सं. 8) ।

165. राजस्थान अभिधृति (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का राजस्थान अधिनियम सं. 12) ।

166. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा घटाना) अधिनियम, 1970 (1970 का तमिलनाडु अधिनियम 17) ।

167. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1971 (1971 का तमिलनाडु अधिनियम 41) ।

168. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1972 (1972 का तमिलनाडु अधिनियम 10) ।

169. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) दूसरा संशोधन अधिनियम, 1972 (1972 का तमिलनाडु अधिनियम 20) ।

170. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) तीसरा संशोधन अधिनियम, 1972 (1972 का तमिलनाडु अधिनियम 37) ।

171. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) चौथा संशोधन अधिनियम, 1972 (1972 का तमिलनाडु अधिनियम 39) ।

172. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) छठा संशोधन अधिनियम, 1972 (1974 का तमिलनाडु अधिनियम 7) ।

173. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) पांचवा संशोधन अधिनियम, 1972 (1974 का तमिलनाडु अधिनियम 10) ।

174. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1974 (1974 का तमिलनाडु अधिनियम 15) ।

175. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) तीसरा संशोधन अधिनियम, 1974 (1974 का तमिलनाडु अधिनियम 30) ।

176. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) दूसरा संशोधन अधिनियम, 1974 (1974 का तमिलनाडु अधिनियम 32) ।

177. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1975 (1975 का तमिलनाडु अधिनियम 11) ।

178. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) दूसरा संशोधन अधिनियम, 1975 (1975 का तमिलनाडु अधिनियम 21) ।

179. उत्तर प्रदेश भूमि-विधि (संशोधन) अधिनियम, 1971 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 21, 1971) तथा उत्तर प्रदेश भूमि-विधि (संशोधन) अधिनियम, 1974 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 34, 1974) द्वारा 1950 ई. का उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश और भूमि-व्यवस्था अधिनियम (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 1, 1951) में किए गए संशोधन ।

180. उत्तर प्रदेश अधिकतम जोत-सीमा आरोपण (संशोधन) अधिनियम, 1976 (उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 20, 1976) ।

181. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1972 (1972 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 28) ।

182. पश्चिमी बंगाल अन्यसंक्रांत भूमि का प्रत्यावर्तन अधिनियम, 1973 (1973 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 23) ।

183. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1974 (1974 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 33) ।

184. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1975 (1975 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 23) ।

185. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 12) ।

186. दिल्ली भूमि जोत (अधिकतम सीमा) संशोधन अधिनियम, 1976 (1976 का केंद्रीय अधिनियम 15) ।

187. गोवा, दमण और दीव मुंडकार (बेदखली से संरक्षण) अधिनियम, 1975 (1976 का गोवा, दमण और दीव अधिनियम 1) ।

188. पांडिचेरी भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) अधिनियम, 1973 (1974 का पांडिचेरी अधिनियम 9) ।]

[8][*189. असम (अस्थायी रूप से व्यवस्थापित क्षेत्र) अभिधृति अधिनियम, 1971 (1971 का असम अधिनियम 23) ।*

190. असम (अस्थायी रूप से व्यवस्थापित क्षेत्र) अभिधृति (संशोधन) अधिनियम, 1974 (1974 का असम अधिनियम 18) ।

191. बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा निर्धारण और अधिशेष भूमि अर्जन) (संशोधन) संशोधी अधिनियम, 1974 (1975 का बिहार अधिनियम 13) ।

192. बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा निर्धारण और अधिशेष भूमि अर्जन) (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का बिहार अधिनियम 22) ।

193. बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा निर्धारण और अधिशेष भूमि अर्जन) (संशोधन) अधिनियम, 1978 (1978 का बिहार अधिनियम 7) ।

194. भूमि अर्जन (बिहार संशोधन) अधिनियम, 1979 (1980 का बिहार अधिनियम 2) ।

195. हरियाणा (भूमि-जोत की अधिकतम सीमा) (संशोधन) अधिनियम, 1977 (1977 का हरियाणा अधिनियम 14) ।

196. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1978 (1978 का तमिलनाडु अधिनियम 25) ।

197. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1979 (1979 का तमिलनाडु अधिनियम 11) ।

8. संविधान (सैंतालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1984 द्वारा (26-8-1984 से) प्रविष्टि 189-202 जोड़ी गई ।

198. उत्तर प्रदेश जमींदारी विनाश विधि (संशोधन) अधिनियम, 1978 (1978 का उत्तर प्रदेश अधिनियम 15) ।

199. पश्चिमी बंगाल अन्यसंक्रांत भूमि का प्रत्यावर्तन (संशोधन) अधिनियम, 1978 (1978 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 24) ।

200. पश्चिमी बंगाल अन्यसंक्रांत भूमि का प्रत्यावर्तन (संशोधन) अधिनियम, 1980 (1980 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 56) ।

201. गोवा, दमण और दीव कृषि अभिधृति अधिनियम, 1964 (1964 का गोवा, दमण और दीव अधिनियम 7) ।

202. गोवा, दमण और दीव कृषि अभिधृति (पांचवां सशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का गोवा, दमण और दीव अधिनियम 17) ।]

[9][203. आंध्र प्रदेश अनुसूचित क्षेत्र भूमि अंतरण विनियम, 1959 (1959 का आंध्र प्रदेश विनियम 1) ।

204. आंध्र प्रदेश अनुसूचित क्षेत्र विधि (विस्तारण और संशोधन) विनियम, 1963 (1963 का आंध्र प्रदेश विनियम 2) ।

205. आंध्र प्रदेश अनुसूचित क्षेत्र भूमि अंतरण (संशोधन) विनियम, 1970 (1970 का आंध्र प्रदेश विनियम 1) ।

206. आंध्र प्रदेश अनुसूचित क्षेत्र भूमि अंतरण (संशोधन) विनियम, 1971 (1971 का आंध्र प्रदेश विनियम 1) ।

207. आंध्र प्रदेश अनुसूचित क्षेत्र भूमि अंतरण (संशोधन) विनियम, 1978 (1978 का आंध्र प्रदेश विनियम 1) ।

208. बिहार काश्तकारी अधिनियम, 1885 (1885 का बिहार अधिनियम 8) ।

209. छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम, 1908 (1908 का बंगाल अधिनियम 6) (अध्याय 8—धारा 46, धारा 47, धारा 48, धारा 48क और धारा 49, अध्याय 10—धारा 71, धारा 71क और धारा 71ख; और अध्याय 18—धारा 240, धारा 241 और धारा 242) ।

210. संथाल परगना काश्तकारी (पूरक प्रावधान) अधिनियम, 1949 (1949 का बिहार अधिनियम 14) धारा 53 को छोड़कर ।

211. बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियम, 1969 (1969 का बिहार विनियम 1) ।

212. बिहार भूमि सुधार (अधिकतम सीमा निर्धारण और अधिशेष भूमि अर्जन) (संशोधन) अधिनियम, 1982 (1982 का बिहार अधिनियम 55) ।

213. गुजरात देवस्थान इनाम उत्सादन अधिनियम, 1969 (1969 का गुजरात अधिनियम 16) ।

9. संविधान (छियासठवां संशोधन) अधिनियम, 1990 द्वारा प्रविष्टि 203 से 257 जोड़ी गईं ।

214. गुजरात अभिधृति विधि (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का गुजरात अधिनियम 37) ।

215. गुजरात अधिकतम कृषि भूमि सीमा (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का राष्ट्रपति अधिनियम 43) ।

216. गुजरात देवस्थान इनाम उत्सादन (संशोधन) अधिनियम, 1977 (1977 का गुजरात अधिनियम 27) ।

217. गुजरात अभिधृति विधि (संशोधन) अधिनियम, 1977 (1977 का गुजरात अधिनियम 30) ।

218. मुंबई भू-राजस्व (गुजरात दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1980 (1980 का गुजरात अधिनियम 37) ।

219. मुंबई भू-राजस्व संहिता और भूधृति उत्सादन विधि (गुजरात संशोधन) अधिनियम, 1982 (1982 का गुजरात अधिनियम 8) ।

220. हिमाचल प्रदेश भूमि अंतरण (विनियमन) अधिनियम, 1968 (1969 का हिमाचल प्रदेश अधिनियम 15) ।

221. हिमाचल प्रदेश भूमि अंतरण (विनियमन) (संशोधन) अधिनियम, 1986 (1986 का हिमाचल प्रदेश अधिनियम 16) ।

222. कर्नाटक अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (कतिपय भूमि अंतरण प्रतिषेध) अधिनियम, 1978 (1979 का कर्नाटक अधिनियम 2) ।

223. केरल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1978 (1978 का केरल अधिनियम 13) ।

224. केरल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1981 (1981 का केरल अधिनियम 19) ।

225. मध्य प्रदेश भू-राजस्व संहिता (तृतीय संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का मध्य प्रदेश अधिनियम 61) ।

226. मध्य प्रदेश भू-राजस्व संहिता (संशोधन) अधिनियम, 1980 (1980 का मध्य प्रदेश अधिनियम 15) ।

227. मध्य प्रदेश अकृषिक जोत उच्चतम सीमा अधिनियम, 1981 (1981 का मध्य प्रदेश अधिनियम 11) ।

228. मध्य प्रदेश कृषिक जोत उच्चतम सीमा (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1976 (1984 का मध्य प्रदेश अधिनियम 1) ।

229. मध्य प्रदेश कृषिक जोत उच्चतम सीमा (संशोधन) अधिनियम, 1984 (1984 का मध्य प्रदेश अधिनियम 14) ।

230. मध्य प्रदेश कृषिक जोत उच्चतम सीमा (संशोधन) अधिनियम, 1989 (1989 का मध्य प्रदेश अधिनियम 8) ।

231. महाराष्ट्र भू-राजस्व संहिता, 1966 (1966 का महाराष्ट्र अधिनियम 41) धारा 36, धारा 36क और धारा 36ख ।

232. महाराष्ट्र भू-राजस्व संहिता और महाराष्ट्र अनुसूचित जनजाति भूमि प्रत्यावर्तन (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1976 (1977 का महाराष्ट्र अधिनियम 30) ।

233. महाराष्ट्र कतिपय भूमि में खानों और खनिजों के विद्यमान सांपत्तिक अधिकारों का उत्सादन अधिनियम, 1985 (1985 का महाराष्ट्र अधिनियम 16) ।

234. उड़ीसा अनुसूचित क्षेत्र (अनुसूचित जनजातियों द्वारा) स्थावर संपत्ति अंतरण विनियम, 1956 (1956 का उड़ीसा विनियम 2) ।

235. उड़ीसा भूमि सुधार (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1975 (1976 का उड़ीसा अधिनियम 29) ।

236. उड़ीसा भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का उड़ीसा अधिनियम 30) ।

237. उड़ीसा भूमि सुधार (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1976 (1976 का उड़ीसा अधिनियम 44) ।

238. राजस्थान उपनिवेशन (संशोधन) अधिनियम, 1984 (1984 का राजस्थान अधिनियम 12) ।

239. राजस्थान अभिधृति (संशोधन) अधिनियम, 1984 (1984 का राजस्थान अधिनियम 13) ।

240. राजस्थान अभिधृति (संशोधन) अधिनियम, 1987 (1987 का राजस्थान अधिनियम 21) ।

241. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) दूसरा संशोधन अधिनियम, 1979 (1980 का तमिलनाडु अधिनियम 8) ।

242. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1980 (1980 का तमिलनाडु अधिनियम 21) ।

243. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) संशोधन अधिनियम, 1981 (1981 का तमिलनाडु अधिनियम 59) ।

244. तमिलनाडु भूमि सुधार (अधिकतम भूमि सीमा नियतन) दूसरा संशोधन अधिनियम, 1983 (1984 का तमिलनाडु अधिनियम 2) ।

245. उत्तर प्रदेश भूमि विधि (संशोधन) अधिनियम, 1982 (1982 का उत्तर प्रदेश अधिनियम 20) ।

246. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1965 (1965 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 18) ।

247. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1966 (1966 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 11) ।

248. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (दूसरा संशोधन) अधिनियम, 1969 (1969 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 23) ।

249. पश्चिमी बंगाल संपदा अर्जन (संशोधन) अधिनियम, 1977 (1977 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 36) ।

250. पश्चिमी बंगाल भूमि जोत राजस्व अधिनियम, 1979 (1979 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 44) ।

251. पश्चिमी बंगाल भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1980 (1980 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 41) ।

252. पश्चिमी बंगाल भूमि जोत राजस्व (संशोधन) अधिनियम, 1981 (1981 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 33) ।

253. कलकत्ता ठेका अभिधृति (अर्जन और विनियमन) अधिनियम, 1981 (1981 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 37) ।

254. पश्चिमी बंगाल भूमि जोत राजस्व (संशोधन) अधिनियम, 1982 (1982 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 23) ।

255. कलकत्ता ठेका अभिधृति (अर्जन और विनियमन) (संशोधन) अधिनियम, 1984 (1984 का पश्चिमी बंगाल अधिनियम 41) ।

256. माहे भूमि सुधार अधिनियम, 1968 (1968 का पांडिचेरी अधिनियम 1) ।

257. माहे भूमि सुधार (संशोधन) अधिनियम, 1980 (1981 का पांडिचेरी अधिनियम 1) ।।

[10]*स्पष्टीकरण* — **राजस्थान अभिधृति अधिनियम, 1955 (1955 का राजस्थान अधिनियम सं. 3) के अधीन, अनुच्छेद 31क के खंड (1) के दूसरे परंतुक के उल्लंघन में किया गया अर्जन उस उल्लंघन की मात्रा तक शून्य होगा ।।**

नवीं अनुसूची में किसी अधिनियम के सम्मिलित किए जाने का प्रभाव — 1. (देखिए अनुच्छेद 31ख) अनुच्छेद 31ख को देखते हुए नवीं अनुसूची में किसी अधिनियम को सम्मिलित करने से वह अधिनियमित किए जाने की तारीख से भूतलक्षी प्रभाव से विधिमान्य हो जाता है । किसी मूल अधिकार से उसके असंगत होने का अर्थ उस आधार पर किसी न्यायालय द्वारा उसे असांविधानिक घोषित किए जाने का कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।[11]

2. नवीं अनुसूची के अधीन संरक्षण ऐसे अधिनियमों और विनियमों तक ही सीमित है जो नवीं अनुसूची की विभिन्न प्रविष्टियों में विनिर्दिष्ट हैं । यह संरक्षण उन अधिनियमों या विनियमों के अधीन निकाले गए आदेश और अधिसूचनाओं को नहीं मिलता ।[12]

---

10. संविधान (सत्रहवां संशोधन) अधिनियम, 1964 द्वारा 20-6-1964 से जोड़ा गया । (देखिए पीछे प्रविष्टि 55) ।

11. *जगन्नाथ बनाम प्राधिकृत अधिकारी*, ए. 1972 एस.सी. 425 (435) ।

12. *प्राग मिल्स बनाम भारत संघ*, ए. 1978 एस.सी. 1296 (पैरा 44-45) ।

[1]दसवीं अनुसूची

[अनुच्छेद 102(2) और अनुच्छेद 191(2)]

दल परिवर्तन के आधार पर निरर्हता के बारे में उपबंध

निर्वचन ।

1. *इस अनुसूची में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, —*

(क) "सदन" से, संसद् का कोई सदन या किसी राज्य की, यथास्थिति, विधान सभा या, विधान मंडल का कोई सदन अभिप्रेत है;

(ख) सदन के किसी ऐसे सदस्य के संबंध में जो, यथास्थिति, पैरा 2 या पैरा 3 या पैरा 4 के उपबंधों के अनुसार किसी राजनीतिक दल का सदस्य है, "विधान दल" से, उस सदन के ऐसे सभी सदस्यों का समूह अभिप्रेत है जो उक्त उपबंधों के अनुसार तत्समय उस राजनीतिक दल के सदस्य हैं,

(ग) सदन के किसी सदस्य के संबंध में, "मूल राजनीतिक दल" से ऐसा राजनीतिक दल अभिप्रेत है जिसका वह पैरा 2 के उपपैरा (1) के प्रयोजनों के लिए सदस्य है;

(घ) "पैरा" से इस अनुसूची का पैरा अभिप्रेत है ।

दल परिवर्तन के आधार पर निरर्हता ।

2. *(1) पैरा 3, पैरा 4 और पैरा 5 के उपबंधों के अधीन रहते हुए, सदन का कोई सदस्य, जो किसी राजनीतिक दल का सदस्य है, सदन का सदस्य होने के लिए उस दशा में निरर्हित होगा जिसमें —*

(क) उसने ऐसे राजनीतिक दल की अपनी सदस्यता स्वेच्छा से छोड़ दी है, या

(ख) वह ऐसे राजनीतिक दल द्वारा जिसका वह सदस्य है अथवा उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति या प्राधिकारी द्वारा दिए गए किसी निदेश के विरुद्ध, ऐसे राजनीतिक दल, व्यक्ति या प्राधिकारी की पूर्व अनुज्ञा के बिना, ऐसे सदन में मतदान करता है या मतदान करने से विरत रहता है और ऐसे मतदान या मतदान करने से विरत रहने को ऐसे राजनीतिक दल, व्यक्ति या प्राधिकारी ने ऐसे मतदान या मतदान करने से विरत रहने की तारीख से पंद्रह दिन के भीतर माफ नहीं किया है ।

स्पष्टीकरण — इस उपपैरा के प्रयोजनों के लिए, —

(क) सदन के किसी निर्वाचित सदस्य के बारे में यह समझा जाएगा कि वह ऐसे राजनीतिक दल का, यदि कोई हो, सदस्य है जिसने उसे ऐसे सदस्य के रूप में निर्वाचन के लिए अभ्यर्थी के रूप में खड़ा किया था;

(ख) सदन के किसी नामनिर्देशित सदस्य के बारे में, —

(i) उस दशा में, जिसमें वह ऐसे सदस्य के रूप में अपने नामनिर्देशन की तारीख को किसी राजनीतिक दल का सदस्य है, यह समझा जाएगा कि वह ऐसे राजनीतिक दल का सदस्य है;

(ii) किसी अन्य दशा में, यह समझा जाएगा कि वह उस राजनीतिक दल का सदस्य है जिसका, यथास्थिति, अनुच्छेद 99 या अनुच्छेद 188 की अपेक्षाओं का अनुपालन करने

---

1. संविधान (बावनवां संशोधन) अधिनियम, 1985 द्वारा (1-3-1985 से) दसवीं अनुसूची जोड़ी गई (देखिए पूर्व अनुच्छेद 101, 102, 190 191) ।

के पश्चात् अपना स्थान ग्रहण करने की तारीख से छह मास की समाप्ति के पूर्व वह, यथास्थिति, सदस्य बनता है या पहली बार बनता है ।

(2) सदन का कोई निर्वाचित सदस्य, जो किसी राजनीतिक दल द्वारा खड़े किए गए अभ्यर्थी से भिन्न रूप में सदस्य निर्वाचित हुआ है, सदन का सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा यदि वह ऐसे निर्वाचन के पश्चात् किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो जाता है ।

(3) सदन का कोई नामनिर्देशित सदस्य, सदन का सदस्य होने के लिए निरर्हित होगा यदि वह, यथास्थिति, अनुच्छेद 99 या अनुच्छेद 188 की अपेक्षाओं का अनुपालन करने के पश्चात् अपना स्थान ग्रहण करने की तारीख से छह मास की समाप्ति के पश्चात् किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो जाता है ।

(4) इस पैरा के पूर्वगामी उपबंधों में किसी बात के होते हुए भी, किसी ऐसे व्यक्ति के बारे में जो, संविधान (बावनवां संशोधन) अधिनियम, 1985 के प्रारंभ पर, सदन का सदस्य है (चाहे वह निर्वाचित सदस्य हो या नामनिर्देशित) —

(i) उस दशा में, जिसमें वह ऐसे प्रारंभ से ठीक पहले किसी राजनीतिक दल का सदस्य था वहां, इस पैरा के उपपैरा (1) के प्रयोजनों के लिए, यह समझा जाएगा कि वह ऐसे राजनीतिक दल द्वारा खड़े किए गए अभ्यर्थी के रूप में ऐसे सदन का सदस्य निर्वाचित हुआ है;

(ii) किसी अन्य दशा में, यथास्थिति, इस पैरा के उपपैरा (2) के प्रयोजनों के लिए, यह समझा जाएगा कि वह सदन का ऐसा निर्वाचित सदस्य है जो किसी राजनीतिक दल द्वारा खड़े किए गए अभ्यर्थी से भिन्न रूप में सदस्य निर्वाचित हुआ है या, इस पैरा के उपपैरा (3) के प्रयोजनों के लिए, यह समझा जाएगा कि वह सदन का नामनिर्देशित सदस्य है ।

दल परिवर्तन के आधार पर निरर्हता का दल विभाजन की दशा में लागू न होना ।

3. जहां सदन का कोई सदस्य यह दावा करता है कि वह और उसके विधान दल के कोई अन्य सदस्य ऐसे गुट का प्रतिनिधित्व करने वाला समूह गठित करते हैं जो उसके मूल राजनीतिक दल के विभाजन के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुआ है और ऐसे समूह में ऐसे विधान दल के कम से कम एक तिहाई सदस्य हैं वहां —

(क) वह पैरा 2 के उपपैरा (1) के अधीन इस आधार पर निरर्हित नहीं होगा कि —

(i) उसने अपने मूल राजनीतिक दल की अपनी सदस्यता स्वेच्छा से छोड़ दी है; या

(ii) उसने ऐसे दल द्वारा अथवा उसके द्वारा इस निमित्त प्राधिकृत किसी व्यक्ति या प्राधिकारी द्वारा दिए गए किसी निदेश के विरुद्ध, ऐसे दल, व्यक्ति या प्राधिकारी की पूर्व अनुज्ञा के बिना, ऐसे सदन में मतदान किया है या वह मतदान करने से विरत रहा है और ऐसे मतदान या मतदान करने से विरत रहने को ऐसे दल, व्यक्ति या प्राधिकारी ने ऐसे मतदान या मतदान करने से विरत रहने की तारीख से पंद्रह दिन के भीतर माफ नहीं किया है; और

(ख) ऐसे दल विभाजन के समय से, ऐसे गुट के बारे में यह समझा जाएगा कि वह, पैरा 2 के उपपैरा (1) के प्रयोजनों के लिए, ऐसा राजनीतिक दल है जिसका वह सदस्य है और वह इस पैरा के प्रयोजनों के लिए उसका मूल राजनीतिक दल है ।

दल परिवर्तन के आधार पर निरर्हता का विलय की दशा में लागू न होना ।

4. (1) सदन का कोई सदस्य पैरा 2 के उपपैरा (1) के अधीन निरर्हित नहीं होगा यदि उसके मूल राजनीतिक दल का किसी अन्य राजनीतिक दल में विलय हो जाता है और वह यह दावा करता है कि वह और उसके मूल राजनीतिक दल के अन्य सदस्य —

(क) यथास्थिति, ऐसे अन्य राजनीतिक दल के या ऐसे विलय से बने नए राजनीतिक दल के सदस्य बन गए हैं; या

(ख) उन्होंने विलय स्वीकार नहीं किया है और एक पृथक् समूह के रूप में कार्य करने का विनिश्चय किया है,

और ऐसे विलय के समय से, यथास्थिति, ऐसे अन्य राजनीतिक दल या नए राजनीतिक दल या समूह के बारे में यह समझा जाएगा कि वह, पैरा 2 के उपपैरा (1) के प्रयोजनों के लिए, ऐसा राजनीतिक दल है जिसका वह सदस्य है और वह इस उपपैरा के प्रयोजनों के लिए उसका मूल राजनीतिक दल है ।

(2) इस पैरा के उपपैरा (1) के प्रयोजनों के लिए, सदन के किसी सदस्य के मूल राजनीतिक दल का विलय हुआ तभी समझा जाएगा जब संबंधित विधान दल के कम से कम दो-तिहाई सदस्य ऐसे विलय के लिए सहमत हो गए हैं ।

छूट ।

5. इस अनुसूची में किसी बात के होते हुए भी, कोई व्यक्ति, जो लोक सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष अथवा राज्य सभा के उपसभापति अथवा किसी राज्य की विधान परिषद् के सभापति या उपसभापति अथवा किसी राज्य की विधान सभा के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के पद पर निर्वाचित हुआ है, इस अनुसूची के अधीन निरर्हित नहीं होगा, —

(क) यदि वह, ऐसे पद पर अपने निर्वाचन के कारण ऐसे राजनीतिक दल की जिसका वह ऐसे निर्वाचन से ठीक पहले सदस्य था, अपनी सदस्यता स्वेच्छा से छोड़ देता है और उसके पश्चात् जब तक वह पद धारण किए रहता है तब तक, उस राजनीतिक दल में पुनः सम्मिलित नहीं होता है या किसी दूसरे राजनीतिक दल का सदस्य नहीं बनता है; या

(ख) यदि वह, ऐसे पद पर अपने निर्वाचन के कारण, ऐसे राजनीतिक दल की जिसका वह ऐसे निर्वाचन से ठीक पहले सदस्य था, अपनी सदस्यता छोड देता है और ऐसे पद पर न रह जाने के पश्चात् ऐसे राजनीतिक दल में पुनः सम्मिलित हो जाता है ।

दल परिवर्तन के आधार पर निरर्हता के बारे में प्रश्नों का विनिश्चय ।

6. (1) यदि यह प्रश्न उठता है कि सदन का कोई सदस्य इस अनुसूची के अधीन निरर्हता से ग्रस्त हो गया है या नहीं तो वह प्रश्न, ऐसे सदन के, यथास्थिति, सभापति या अध्यक्ष के विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जाएगा और उसका विनिश्चय अंतिम होगा :

परंतु जहां यह प्रश्न उठता है कि सदन का सभापति या अध्यक्ष निरर्हता से ग्रस्त हो गया है या नहीं वहां वह प्रश्न सदन के ऐसे सदस्य के विनिश्चय के लिए निर्देशित किया जाएगा जिसे वह सदन इस निमित्त निर्वाचित करे और उसका विनिश्चय अंतिम होगा ।

(2) इस अनुसूची के अधीन सदन के किसी सदस्य की निरर्हता के बारे में किसी प्रश्न के संबंध में इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन सभी कार्यवाहियों के बारे में यह समझा जाएगा कि वे, यथास्थिति, अनुच्छेद 122 के अर्थ में संसद् की कार्यवाहियां हैं या अनुच्छेद 212 के अर्थ में राज्य के विधान मंडल की कार्यवाहियां हैं ।

न्यायालयों की अधिकारिता का वर्जन ।

[2]7. इस संविधान में किसी बात के होते हुए भी, किसी न्यायालय को इस अनुसूची के अधीन सदन के किसी सदस्य की निरर्हता से संबंधित किसी विषय के बारे में कोई अधिकारिता नहीं होगी ।

2. श्री किहोतो बनाम श्री जचिल्हू, जे.टी 1992 (1) एस.सी. 600 में उच्चतम न्यायालय ने पैरा 7 को शून्य घोषित कर दिया ।

नियम ।

8. (1) इस पैरा के उपपैरा (2) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, सदन का सभापति या अध्यक्ष, इस अनुसूची के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम बना सकेगा तथा विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :

(क) सदन के विभिन्न सदस्य जिन राजनीतिक दलों के सदस्य हैं, उनके बारे में रजिस्टर या अन्य अभिलेख रखना;

(ख) ऐसा प्रतिवेदन जो सदन के किसी सदस्य के संबंध में विधान दल का नेता, उस सदस्य की बाबत पैरा 2 के उपपैरा (1) के खंड (ख) में निर्दिष्ट प्रकृति की माफी के संबंध में देगा, वह समय जिसके भीतर और वह प्राधिकारी जिसको ऐसा प्रतिवेदन दिया जाएगा ।

(ग) ऐसे प्रतिवेदन जिन्हें कोई राजनीतिक दल सदन के किसी सदस्य को ऐसे राजनीतिक दल में प्रविष्ट करने के संबध में देगा और सदन का ऐसा अधिकारी जिसको ऐसे प्रतिवेदन दिए जाएंगे, और

(घ) पैरा 6 के उपपैरा (1) मे निर्दिष्ट किसी प्रश्न का विनिश्चय करने की प्रक्रिया जिसके अंतर्गत ऐसी जांच की प्रक्रिया है, जो ऐसे प्रश्न का विनिश्चय करने के प्रयोजन के लिए की जाए ।

(2) सदन के सभापति या अध्यक्ष द्वारा इस पैरा के उपपैरा (1) के अधीन बनाए गए नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, सदन के समक्ष, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखे जाएंगे । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । वे नियम तीस दिन की उक्त अवधि की समाप्ति पर प्रभावी होंगे जब तक कि उनका सदन द्वारा परिवर्तनों सहित या उनके बिना पहले ही अनुमोदन या अननुमोदन नहीं कर दिया जाता है । यदि वे नियम इस प्रकार अनुमोदित कर दिए जाते हैं तो वे, यथास्थिति, ऐसे रूप में जिसमें वे रखे गए थे या ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होंगे । यदि नियम इस प्रकार अननुमोदित कर दिए जाते हैं तो वे निष्प्रभाव हो जाएंगे ।

(3) सदन का सभापति या अध्यक्ष, यथास्थिति, अनुच्छेद 105 या अनुच्छेद 194 के उपबंधों पर और किसी ऐसी अन्य शक्ति पर जो उसे इस संविधान के अधीन प्राप्त है, प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, यह निदेश दे सकेगा कि इस पैरा के अधीन बनाए गए नियमों के किसी व्यक्ति द्वारा जानबूझकर किए गए किसी उल्लंघन के बारे में उसी रीति से कार्रवाई की जाए जिस रीति से सदन के विशेषाधिकार के भंग के बारे में की जाती है ।

परिशिष्ट

संविधान (चवालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1978 से उद्धरण

1. (1) * * * *

संक्षिप्त नाम और प्रारंभ । (2) यह उस तारीख को प्रवृत्त होगा जो केंद्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे और इस अधिनियम के विभिन्न उपबंधों के लिए विभिन्न तारीखें नियत की जा सकेंगी ।

* * * *

3. संविधान के अनुच्छेद 22 में,—

अनुच्छेद 22 का संशोधन । (क) खंड (4) के स्थान पर निम्नलिखित खंड रखा जाएगा, अर्थात् :—

'(4) निवारक निरोध का उपबंध करने वाली कोई विधि किसी व्यक्ति का दो मास से अधिक की अवधि के लिए निरुद्ध किया जाना प्राधिकृत नहीं करेगी जब तक कि समुचित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति की सिफारिश के अनुसार गठित सलाहकार बोर्ड ने उक्त दो मास की अवधि की समाप्ति से पहले यह प्रतिवेदन नहीं दिया है कि उसकी राय में ऐसे निरोध के लिए पर्याप्त कारण है :

परंतु सलाहकार बोर्ड एक अध्यक्ष और कम से कम दो अन्य सदस्यों से मिलकर बनेगा और अध्यक्ष समुचित उच्च न्यायालय का सेवारत न्यायाधीश होगा और अन्य सदस्य किसी उच्च न्यायालय के सेवारत या सेवानिवृत्त न्यायाधीश होंगे :

परंतु यह और कि इस खंड की कोई बात किसी व्यक्ति का उस अधिकतम अवधि के लिए निरुद्ध किया जाना प्राधिकृत नहीं करेगी जो खंड (7) के उपखंड (क) के अधीन संसद् द्वारा बनाई गई विधि द्वारा विहित की जाए ।

स्पष्टीकरण — इस खंड में, "समुचित उच्च न्यायालय" से अभिप्रेत है —

(i) भारत सरकार या उस सरकार के अधीनस्थ किसी अधिकारी या प्राधिकारी द्वारा किए गए निरोध आदेश के अनुसरण में निरुद्ध व्यक्ति की दशा में, दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र के लिए उच्च न्यायालय;

(ii) (संघ राज्यक्षेत्र से भिन्न) किसी राज्य सरकार द्वारा किए गए निरोध आदेश के अनुसरण में निरुद्ध व्यक्ति की दशा में, उस राज्य के लिए उच्च न्यायालय; और

(iii) किसी संघ राज्यक्षेत्र के प्रशासक या ऐसे प्रशासक के अधीनस्थ किसी अधिकारी या प्राधिकारी द्वारा किए गए निरोध आदेश के अनुसरण में निरुद्ध व्यक्ति की दशा में वह उच्च न्यायालय जो संसद् द्वारा इस निमित्त बनाई गई विधि द्वारा या उसके अधीन विनिर्दिष्ट किया जाए ।'

(ख) खंड (7) में, —

(i) उपखंड (क) का लोप किया जाएगा;

(ii) उपखंड (ख) को उपखंड (क) के रूप में पुनःअक्षरांकित किया जाएगा; और

(iii) उपखंड (ग) को उपखंड (ख) के रूप में पुनःअक्षरांकित किया जाएगा और इस प्रकार पुनःअक्षरांकित उपखंड में "खंड (4) के उपखंड (क)" शब्दों, कोष्ठकों, अंक और अक्षर के स्थान पर "खंड (4)" शब्द, कोष्ठक और अंक रखे जाएंगे ।

* * * *

अनुक्रमणिका

अ

ए

क

ख

ग

ज

त

द

ध

न

ब

भ

म

य

र

श

भारत की सांविधानिक विधि

डा. दुर्गा दास बसु

सरस्वती, विद्यावारिधि, प्रज्ञाभारती, न्यायरत्नाकर, नीतिभास्कर, एम.ए., एलएल. डी (कलकत्ता), डी. लिट. (बर्दवान), डी. लिट (रवीन्द्र भारती); सेवानिवृत्त न्यायाधीश, कलकत्ता उच्च न्यायालय, पूर्व सदस्य, संघ लोक सेवा आयोग; टैगोर ला प्रोफेसर, आशुतोष लेक्चरर, कलकत्ता विश्वविद्यालय; मानद आचार्य, काशी हिंदू विश्वविद्यालय; पद्मभूषण के राष्ट्रीय अलंकरण से विभूषित, भारत के राष्ट्रीय अनुसंधान आचार्य ।

अनुवादक **ब्रजकिशोर शर्मा** *एलएलएम*

अपर सचिव, विधि न्याय और कंपनी कार्य मंत्रालय, भारत सरकार

डा. दुर्गादास बसु को सांविधानिक विधि के लेखक के रूप में जो ख्याति और प्रतिष्ठा मिली है वह सर्वविदित है । प्रत्येक न्यायालय, विश्वविद्यालय और महाविद्यालय में उनकी कृतियां उपलब्ध हैं । न्यायाधीश, अधिवक्ता, अध्यापक और अध्येता सभी उनके द्वारा लिखे गए ग्रंथों का लाभ उठाते हैं ।

उनकी पुस्तक **"भारत का संविधान — एक परिचय"** हिंदी में मे प्रकाशित हुई । अल्प समय में ही उसका दूसरा संस्करण निकालना पड़ा और अब तीसरा संस्करण प्रैस में है । इस पुस्तक की विषय वस्तु और भाषा की सर्वत्र प्रशंसा हुई ।

हिंदी भाषी लोगों की मांग पर डा. बसु की "कांस्टिट्यूशनल ला आफ इंडिया" को भी हिंदी में प्रकाशित किया जा रहा है ।

प्रमुख विशेषताएं

पुस्तक की विशेषता यह है कि इसमें संविधान का अद्यतन पाठ है (जून, तक) और न्यायालयों के निर्णयों के आधार पर उन उपबंधों के अर्थ पर प्रकाश डाला गया है । मई तक के निर्णयों को इसमें स्थान दिया गया है ।

सांविधानिक विधि के अध्यापकों और विद्यार्थियों के लिए यह पुस्तक विशेष रूप से उपयोगी है । एलएल.बी और एलएल.एम दोनों कक्षाओं के छात्र इससे लाभ उठा सकेंगे । सिविल सेवा की विभिन्न परीक्षाओं के लिए यह पुस्तक वरदान है ।

न्यायाधीश और अधिवक्ता इसे उपयोगी पाएंगे क्योंकि इसमें विधि का विवेचन थोड़े से शब्दों में सीमित कर दिया गया है । यह पुस्तक तो गागर में सागर है ।

राजनेता, प्रबुद्ध नागरिक और पत्रकार भी इस पुस्तक को आवश्यकतानुसार पढ़कर संविधान का सही और प्रामाणिक अर्थ ग्रहण कर सकेंगे ।

पुस्तक के प्रारंभ में निर्णय सूची और अंत में एक विस्तृत अनुक्रमणिका दी गई है जिससे आवश्यक उपबंध की खोज तुरंत हो सके ।

श्री ब्रजकिशोर शर्मा को हिंदी में विधिक लेखन और अनुवाद का दीर्घ अनुभव है । डा. बसु और श्री शर्मा के सहयोग से यह पुस्तक हिंदी में विधि साहित्य के लिए नया मानक है ।

ISBN-0-87692-717-7